माणिकचन्द्र-दिगम्बर-जैनग्रन्थमाला, पुष्प ४६.

जैन-शिलालेखसंग्रह

(तृतीय भाग)

संग्रहकर्त्ता

पं० विजयमूर्ति एम० ए० शास्त्राचार्य

प्रस्तावना (द्वितीय-तृतीय भाग की) लेखक

डा० गुलाबचन्द्र चौधरी एम० ए०, पी-एच० डी०, आचार्य

पुस्तकाध्यक्ष एवं प्राध्यापक

नवनालन्दा महाविहार, नालन्दा (पटना)

प्रकाशिका

श्रीमाणिकचन्द्र-दिगम्बर-जैनग्रन्थमाला समिति

मुम्बई

विक्रम संवत् २०१३

वीर नि० सं० २४८३

मूल्य······

प्रकाशक—

मंत्री, माणिकचन्द्र-जैनग्रन्थमाला

हीराबाग, बम्बई ४

मार्च १९५७

मुद्रक—

शारदा मुद्रण

ठठेरी बाजार, वाराणसी

विषय-सूची

प्राक्-कथन

जैन-शिलालेखसंग्रह, भाग १, का जब मैंने आज से कोई बत्तीस वर्ष पूर्व सम्पादन किया था, तब मुझे यह आशा थी कि शेष प्राप्य जैन शिलालेखों के संग्रह भी शीघ्र ही क्रमशः प्रस्तुत किये जा सकेंगे। किन्तु वह कार्य शीघ्र सम्पन्न न हो सका। तथापि इस योजना की चिन्ता माणिकचन्द्र ग्रंथमाला के कर्णधार श्रद्धेय पं० नाथूराम जी प्रेमी को बनी ही रही। उसी के फलस्वरूप गेरीनो की शिलालेख सूची के अनुसार अब यह संग्रह कार्य भाग दूसरे और तीसरे में पूरा हो गया है। गेरीनो की सूची बनने के पश्चात् जो जैन लेख प्रकाश में आये हैं, तथा जो महत्त्वपूर्ण लेख उस सूची में उल्लिखित होने से छूट गये हैं उनका संकलन करना अब भी शेष रहा है।

यह तो मानी हुई बात है कि देश, धर्म और समाज के इतिहास में पाषाण, ताम्रपट आदि लेख सर्वोपरि प्रामाणिक होते हैं। भारत का प्राचीन इतिहास तभी से विधिवत् प्रस्तुत किया जा सका है जब से कि इन शिला आदि लेखों के अध्ययन अनुशीलन की ओर ध्यान दिया गया है। जितने शिलालेख प्रस्तुत संग्रह में समाविष्ट हैं वे सभी गत सौ वर्षों में समय समय पर यथास्थान पत्रिकाओं आदि में प्रकाशित हो चुके हैं और उनसे प्राप्य राजनीतिक वृत्तान्त का उपयोग भी प्रायः किया जा चुका है। किंतु जैन इतिहास के निर्माण में उनका पूर्णतः उपयोग करना अभी भी शेष है। इस संग्रह में जो मौर्य सम्राट् अशोक से लेकर कुषाण, गुप्त, चालुक्य, गंग, कदम्ब, राष्ट्रकूट आदि राजवंशों के काल के जैन लेख संकलित हैं उनमें भारतीय इतिहास और विशेषतः जैन धर्म के प्राचीन इतिहास की बड़ी बहुमूल्य सामग्री बिखरी हुई पड़ी है जिसका अध्ययन कर जैन इतिहास को परिष्कृत करना आवश्यक है।

शिलालेखसंग्रह के प्रथम भाग की भूमिका में मैंने वहाँ संकलित लेखों का विभिन्न दृष्टियों से एक अध्ययन प्रस्तुत किया था। अब इस भाग के साथ

तब से आगे प्रकाशित दोनों भागों का सुविस्तृत और सूक्ष्म अध्ययन डॉ० गुलाब चन्द्र चौधरी द्वारा प्रस्तुत किया गया है जो बहुत महत्त्वपूर्ण है। मुझे भरोसा है कि डॉ० चौधरी के इस परिश्रम से जैन इतिहास का बड़ा उपकार होगा। इनकी प्रस्तावना से प्रकाश में आने वाली कुछ विशेष बातें निम्न प्रकार हैं:—

(१) मथुरा की खुदाई से प्रकाश में आई मूर्तियों में प्रमाणित हुआ कि आज से लगभग दो हजार वर्ष पूर्व जैन प्रतिमायें नग्न ही बनाई जाती थीं। मूर्तियों में वस्त्रों का प्रदर्शन लगभग पाँचवीं शती से पूर्व नहीं पाया जाता।

(२) प्राचीन काल की प्रतिमाओं में तीर्थंकरों के बैल आदि विशेष चिह्न बनाने की प्रथा नहीं थी। केवल आदिनाथ के केश (जटा) तथा पार्श्व और सुपार्श्व के सर्पफण मूर्तियों में दिखलाये जाते थे।

(३) तीर्थंकरों के साथ साथ यक्ष यक्षिणियों की पूजा का भी प्राचीन काल से ही प्रचार था और उनकी भी मूर्तियाँ स्थापित की जाती थीं।

(४) मथुरा से जो जैन मूर्तियों की प्रतिष्ठा संबंधी लेख मिले हैं उनमें गणिकायें, गणिकापुत्रियाँ, नर्तकियाँ और लुहार, सुनार, गंधीगिर आदि जातियों के लोग भी पूजा प्रतिष्ठादि धार्मिक कार्यों में भाग लेते हुए पाये जाते हैं।

(५) मथुरा के लेखों से सिद्ध होता है कि उत्तर भारत में भी मातृपरम्परा के उल्लेख की प्रथा थी। वात्सीपुत्र, गोतिमीपुत्र, मोगलिपुत्र, कौशिकीपुत्र आदि जैसे नाम पाये जाते हैं।

(६) मथुरा के लेखों में जो जैन मुनियों के गणों, कुलों और शाखाओं के उल्लेख मिलते हैं उनसे कल्पसूत्र की स्थविरावली की प्रामाणिकता सिद्ध होती है।

(७) कदंब वंशी लेखों के अनुसार ४-५ वीं शती के लगभग दक्षिण भारत में निर्ग्रन्थ महाश्रमण, श्वेतपट महाश्रमण तथा यापनीय और कूर्चक संघों का अस्तित्व पाया जाता है। ये सब सम्प्रदाय प्रायः मिल जुल कर रहते थे।

(८) मूलसंघ का सर्व प्रथम उल्लेख गंग वंश के माधव वर्मा द्वितीय और उसके पुत्र अविनीत (सन् ४००-४२५ के लगभग) के लेखों में पाया जाता है। किन्तु इन लेखों से किसी गण, गच्छ, अन्वय आदि का कोई उल्लेख

नहीं है। गण गच्छादि के उल्लेख सन् ६८७ और उसके पश्चात्कालीन लेखों में उत्तरोत्तर बढ़ते हुए पाये जाते हैं।

(६) पाँचवीं छठी शती के लेखों में नन्दिसंघ और नन्दिगच्छ तथा श्री मूलमूलगण और पुन्नागवृक्षमूलगण के उल्लेख यापनीय संघ के अन्तर्गत मिलते हैं। ग्यारहवीं शती से नन्दि संघ का उल्लेख द्रविड संघ के साथ तथा बारहवीं शती से मूलसंघ के साथ दिखाई पड़ता है।

(१०) यापनीय संघ के अन्तर्गत बलहारि या बलगार गण के उल्लेख दशवीं शती तक पाये जाते हैं। ग्यारहवीं शती से बलात्कार गण मूलसंघ से संबद्ध प्रकट होता है।

(११) मर्करा के जिस ताम्रपत्र लेख के आधार पर कोण्डकुन्दान्वय का अस्तित्व पाँचवीं शती में माना जाता है वह लेख परीक्षण करने पर बनावटी सिद्ध होता है, तथा देशीय गण की जो परम्परा उस लेख में दी गई है वही लेख नं० १५० (सन् ९३१) के बाद की मालुम होता है।

(१२) कोण्डकुन्दान्वय का स्वतंत्र प्रयोग आठवीं नौवीं शती के लेख में देखा गया है तथा मूलसंघ कोण्डकुन्दान्वय का एक साथ सर्व प्रथम प्रयोग लेख नं० १८० (लगभग १०४४ ई०) में हुआ पाया जाता है।

डॉ० चौधरी की प्रस्तावना में प्रकट होने वाले ये तथ्य हमारी अनेक सांस्कृतिक और ऐतिहासिक मान्यताओं को चुनौती देने वाले हैं। अतएव उनपर गंभीर विचार करने तथा उनसे फलित होने वाली बातों को अपने इतिहास में यथोचित रूप से समाविष्ट करने की आवश्यकता है। इस दृष्टि से इन शिलालेखों तथा डॉ० चौधरी की प्रस्तावना का यह प्रकाशन बड़ा महत्त्वपूर्ण है।

मुजफ्फरपुर,
१४-३-१९५७

हीरालाल जैन
डायरेक्टर, प्राकृत जैन विद्यापीठ,
मुजफ्फरपुर (विहार)

प्रकाशकीय निवेदन

जैन-शिलालेख संग्रह का पहला भाग सन् १९२८ में निकला था। दूसरा भाग उसके चौबीस वर्ष बाद सन् १९५२ में और यह तीसरा भाग उसके लगभग पाँच वर्ष बाद प्रकाशित हो रहा है। अर्थात् सब मिलाकर इन तीन भागों के प्रकाशन में कोई तीस वर्ष लग गये।

पहले भाग के साथ में सुहृद्वर डा० हीरालाल जी ने उसके लेखों का १६२ पृष्ठों का एक सुविस्तृत अध्ययन लिखा था। दूसरे भाग के साथ उसके लेखों का परिचय देने का कोई प्रबन्ध न हो सका, इसलिए अब इस तीसरे भाग में दोनो भागों के लेखों का अध्ययन करके डा० गुलाबचन्द्र जी चौधरी, एम० ए०, पी-एच० डी०, आचार्य ने १७५ पृष्ठों की भूमिका लिख दी है जिसमें जैन सम्प्रदाय के संघों, गणों, गच्छों, राजवंशों, सामन्तों, श्रेष्ठियों, जैन-तीर्थों आदि पर विस्तृत प्रकाश डाला है।

डा० चौधरी स्याद्वाद विद्यालय काशी के स्नातक हैं और इस समय नालन्दा के पाली बौद्ध विद्यापीठ में पुस्तकाध्यक्ष एवं प्राध्यापक हैं। दो वर्ष पहले इन्हें हिन्दूविश्वविद्यालय से "पोलिटिकल हिस्ट्री ऑफ नादर्न इण्डिया फ्राम जैन सोर्सेज़" से (जैन स्रोतों से प्राप्त किया गया उत्तर भारत का राजनीतिक इतिहास) महानिबन्ध पर 'डाक्टरेट' की उपाधि मिली थी। चूँकि जैन साधनों से उक्त महानिबन्ध तैयार किया गया था, और इसके लिए इन्हें अनेक शिलालेखों की भी छान-बीन करनी पड़ी थी, इस लिए इस ग्रंथ की यह भूमिका लिखने के लिए वही उपयुक्त समझे गये और उन्होंने भी मेरे आग्रह को स्वीकार कर लिया। मुझे बड़ी प्रसन्नता है कि उन्होंने यह काम एक इतिहास-संशोधक की दृष्टि से बड़ी लगन के साथ परिश्रमपूर्वक किया है। इसके लिए वे धन्यवाद के पात्र हैं।

इसमें ऐसी अनेक बातों पर प्रकाश डाला गया है जो अभी तक अन्धकार में थीं और जिनकी ओर ध्यान देना इतिहासज्ञों के लिए परम आवश्यक है। इनमें से कुछ बातों की तरफ डा० हीरालाल जी ने 'प्राक्कथन' में हमारा ध्यान आकर्षित किया है।

इन तीन भागों में वे सब लेख आ गए हैं जिनकी सूची डा० गेरिनां ने संकलित की थी और जिसका नाम Repertoire de Epigraphie Jaina है।

उक्त सूची के प्रकाशित होने के बाद और भी सैकड़ों लेख प्रकाश में आये हैं और उनका प्रकाशित होना भी आवश्यक है। परन्तु माणिक्यचन्द्र ग्रन्थमाला का फण्ड समाप्त हो गया है और इधर दीर्घकालव्यापिनी अस्वस्थता के कारण मेरी शक्तियों ने भी जवाब दे दिया है, इसलिए अब यह आशा तो नहीं है कि उक्त लेख-संग्रह भी चौथे भाग के रूप में प्रकाशित कर सकूँगा। फिर भी विश्वास तो रखना ही चाहिए कि किसी न किसी इतिहास प्रेमी के द्वारा यह आवश्यक कार्य अविलम्ब पूरा होगा। मुझे सन्तोष है कि मेरी एक बहुत बड़ी आशा इन तीस वर्षों में किसी तरह पूरी हो गयी।

दूसरे भाग के समान इस भाग का संकलन भी श्री विजयमूर्ति जी एम० ए०, शास्त्राचार्य ने किया है। इसमें उन्हें भी बहुत परिश्रम करना पड़ा है। विभिन्न लाइब्रेरियों में जाकर 'इण्डियन एण्टीक्वेरी', 'एपीग्राफिया इंडिका' आदि की पुरानी फाइलों में से प्रत्येक लेख को ढूँढ़ना, उन्हें रोमन लिपि से नागरी में उतारना और फिर उनका सारांश लिखना समयसाध्य और श्रमसाध्य तो है ही। इसके लिए वे भी धन्यवाद के पात्र हैं।

बम्बई
२५-३-५७

नाथूराम प्रेमी
मंत्री

प्रस्तावना

१. जैनों का अभिलेख साहित्यः एक परिचय

भारतीय इतिहास के विविध अंगों के ज्ञान के लिए अभिलेख साहित्य बड़ा ही प्रामाणिक साधन है। यह साधन भारतवर्ष में प्रचुर मात्रा में उपलब्ध भी है और विशेष कर दक्षिण भारत में। जैनों का अभिलेख साहित्य बड़ा ही विशाल है। वैसे तो जैनों के ये लेख भारतवर्ष के प्रत्येक कोने से प्राप्त हुए हैं। पर इनका प्राचुर्य दक्षिण और पश्चिम भारत में विशेषतः देखा जाता है।

ये लेख जल्दी न नष्ट होने वाले पाषाण एवं धातु द्रव्यों पर उत्कीर्ण पाये जाते हैं। इसलिए इनमें कालान्तर में सम्भावित संशोधन और परिवर्तन की वैसी कम गुंजाइश होती है जैसी कि अन्य साहित्यिक कृतियों में देखी जाती है। इसलिए इनसे प्राप्त होने वाले तथ्यों को प्रथम श्रेणी का महत्व दिया जाता है।

पाषाणनिर्मित द्रव्यों पर पाये जाने वाले जैनों के लेख कई प्रकार के हैं, जैसे चट्टानों एवं गुफाओं में मिलने वाले लेख, उदाहरण के रूप में लेख नं० २,७,६१ एवं एलोरा, पञ्चपाण्डवमलै, वल्लीमलै और तिरुमलै से प्राप्त लेख; मंदिरों से प्राप्त लेख, जैसे श्रवण बेल्गोल, हुम्मच एवं अन्य तीर्थ स्थानों के कई लेख; मूर्तियों के पादुका पट्ट पर उत्कीर्ण लेख जैसे श्रवण बेल्गोल, आबू, गिरनार, शत्रुंजय, महोबा, खजुराहो, ग्वालियर से प्राप्त होने वाले कतिपय प्रतिमा-लेख; स्तम्भों पर उत्कीर्ण लेख, जैसे मथुरा से प्राप्त लेख नं० ४३,४४ एवं कहायूं का लेख तथा दक्षिण भारत से प्राप्त मानस्तम्भों एवं सल्लेखना मरण के स्मारक स्वरूप निर्मित निषिधिकलसों पर के लेख; मथुरा से प्राप्त कतिपय लेख स्तूपों पर तथा शिलापट्टों पर, मथुरा के आयागपटों के लेख और शासन पत्र के रूप में लेख नं० २२८,३३२,३७४ आदि प्राप्त हुए हैं।

ताम्रादि धातुओं पर भी उत्कीर्ण अनेकों जैन लेख पाये जाते हैं, उदाहरण के रूप में मर्करा का ताम्रपत्र एवं कदम्ब वंश के कतिपय लेख समझने चाहिये।

इन लेखों में अधिकांश पर काल निर्देश देखा गया है, चाहे वह शासन करने वाले राजा का संवत् हो, चाहे वह शक संवत्, विक्रम संवत् या ज्योतिष् शास्त्रप्रणीत प्लवङ्ग, खर आदि संवत् हो। ये संवत् राजनीतिक, धार्मिक, एवं सांस्कृतिक इतिहास की दृष्टि से बड़े महत्त्व के हैं।

जैन लेखों की प्रकृति समझने के लिये, हम उन्हें अनेक दृष्टियों से विभक्त कर सकते हैं, जैसे उत्तर भारत के लेख, दक्षिण भारत के लेख, दिगम्बर सम्प्रदाय के, श्वेताम्बर सम्प्रदाय के, राजनीतिक, धार्मिक तथा भाषावार संस्कृत, प्राकृत, कन्नड़, तामिल आदि, इसी तरह लिपि के अनुसार भी। पर वास्तव में इनके दो ही भेद करना ठीक है, एक तो राजनीतिक शासन पत्रों के रूप में या अधिकारिवर्ग द्वारा उत्कीर्ण और दूसरे सांस्कृतिक, जनवर्ग से सम्बन्धित। राजनीतिक एवं अधिकारिवर्ग से सम्बंधित लेख प्रायः प्रशस्तियों के रूप में होते हैं। इनमें राजाओं की अनेक विरुदावली, सामरिक विजय, वंश परिचय आदि के साथ मंदिर, मूर्ति या पुरोहित आदि के लिए भूमिदान, ग्रामदानादि का वर्णन होता है। सांस्कृतिक एवं जनवर्ग से सम्बंधित लेखों का क्षेत्र बहुत विस्तृत है। ये लेख अपनी धार्मिक मान्यता के लिए भक्त एवं श्रद्धालु पुरुष या स्त्रीवर्ग द्वारा लिखाये जाते थे। ऐसे लेख १-२ पंक्ति के रूप में मूर्ति के पादुकापट्टों पर तथा कुटुम्ब एवं व्यक्ति की प्रशंसा में उच्च कोटि के काव्य रूप में भी पाये जाते हैं। इनसे अनेक जातियों के सामाजिक इतिहास और जैनाचार्यों के संघ, गण, गच्छ, पट्टावली के रूप में धार्मिक इतिहास के अतिरिक्त सांस्कृतिक एवं राजनीतिक इतिहास का परिचय मिलता है। इन लेखों में प्रायः मूर्तियों, धर्मस्थानों, और मंदिरों के निर्माण का काल अङ्कित रहता है। जिससे कला और धर्म के विकास-क्रम को समझने में बड़ी सहायता मिलती है, और सामाजिक स्थिति का परिज्ञान—एक देश से दूसरे देश में जैन कब फैले और वहाँ जैन धर्म का प्रसार अधिकाधिक कब हुआ—भी हो जाता है। अनेक जैन भक्त पुरुषों और महिलाओं के नाम भी इन लेखों से

ज्ञात होते हैं जो कि भाषाशास्त्र की दृष्टि से बड़े महत्व के हैं। अधिकांश नाम अपभ्रंश और तत्कालीन लोक भाषा के रूप को प्रकट करते हैं।

प्रस्तुत लेख संग्रह से ज्ञात सांस्कृतिक इतिहास का एक छोटा चित्र यहाँ दिया जाता है। लोग अपने कल्याण के लिए, माता, पिता, भाई, बहिन आदि के कल्याण के लिए, गुरु के स्मृत्यर्थ, राजा, महामण्डलेश्वर आदि के सम्मानार्थ मंदिर या मूर्ति का निर्माण कराते थे और उनकी मरम्मत, पूजा, ऋषियों के आहार, पुजारी की आजीविका, नये कार्यों के लिये तथा शास्त्र लिखने वालों के भोजन के लिए दान देते थे। दातव्य वस्तुओं में ग्राम, भूमि, खेत, तालाब, कुँआ, दुकान, भवन, कोल्हू, हाथ के तेल की चक्की, चावल, सुपारी का बगीचा, साधारण बगीचे, चुंगी से प्राप्त आमदनी, तथा निष्क, पण, गद्याण, होन्नु (ये सब एक प्रकार के सिक्के हैं) घी एवं मुफ्त श्रम आदि हैं। एक लेख (१६८) में ब्राह्मण को कुमारिकाओं की भेंट का उल्लेख है जो देवदासी प्रथा की याद दिलाता है। ग्राम या भूमि के दान में प्रायः यह ध्यान रखा जाता था कि वे दान सब करों से मुक्त कराकर दिये जाँय (२२६, ४०४ आदि)। उत्सवों पर ही दान देने की प्रथा थी। बहुत से लेखों से ज्ञात होता है कि दानादि द्रव्य, चंद्र ग्रहण, सूर्य ग्रहण, उत्तरायण-संक्रांति या पूर्णिमा आदि के दिन दान दिये जाते थे (१०२, १२७, ३०१, ६४६ आदि)। मूर्तियों के निर्माण में हम देखते हैं कि लोग प्रायः तीर्थंकरों की मूर्तियाँ बनवाते थे—उनमें विशेषतः आदिनाथ, शान्तिनाथ, चंद्रप्रभ, कुंथुनाथ, पार्श्वनाथ एवं वर्धमान की मूर्तियाँ होती थीं। तीर्थंकरों के अतिरिक्त हम दक्षिण भारत में बाहुबली की मूर्ति भी देखते हैं। भक्त या शिष्यगण अपने आचार्यों की मूर्तियाँ या पादुका (चरण) भी बनवाते थे। यक्ष-यक्षिणियों की पूजा भी प्रचलित थी। हुम्मच पद्मावती की पूजा का प्रमुख केन्द्र था। लेखों में अम्बिका देवी (३४६) और ज्वालामालिनी (७५८) की मूर्तियों का भी उल्लेख मिलता है। प्रतिमाएँ प्रायः पाषाण और धातु की बनती थीं, पर एक लेख (१६७) में पंच धातु की प्रतिमा का उल्लेख है। मंदिर प्रायः पाषाण या ईंट के बनते थे, पर कुछ लेखों (२७७, २०४) में लकड़ी

के मंदिर का भी उल्लेख है। पूजा के अनेक प्रकार होते थे (३३८)।

धर्मप्राण महिलावर्ग एवं पुरुषवर्ग सारे जीवन को धर्म की आराधना में व्यतीत कर अन्तिम क्षणों में समाधिमरण पूर्वक देहोत्सर्ग करता था। चौदहवीं शताब्दी के लगभग दक्षिण प्रांत में जैन महिलावर्ग के बीच सतीप्रथा का भी प्रवेश हो गया था (५५६,५७४,६०५)। राजघराने की महिलाएँ अपने पति के शासन में हाथ बटाती थीं।

जमीन प्रायः नापकर दान में दी जाती थी। लेखों में विविध प्रकार की नापों का उल्लेख है जैसे निवर्तन (लेख नं० १०१,१६०२) मेरुण्ड दण्ड (१८१) मत्तर (२१०) कम्म (२४१) कुण्डिदेश दण्ड (३३४) हाथ (३२०) तथा स्तम्भ (३३४) आदि। चावल आदि की नाप के लिए मत्त (१८१) तथा तेल की नाप के लिए करघटिका (२२८) का भी उल्लेख मिलता है।

विविध प्रकार के आय करों के नाम भी लेखों से ज्ञात होते हैं। जैसे अन्नि-याय वावदण्ड विरै (१६७, तामिल देश में ; सिद्धाय कर (३१२) नमल (२१०) हालदारे (६७३)। तत्कालीन अनेकों सिक्कों के नाम भी लेखों में मिलते हैं, जैसे गुप्त कालीन कार्षापण (६४) निष्क (४६४) सुवर्ण गद्याण (१६७) लोकिक गद्याण (२५३) गद्याण (१६७,६७३) होन्नु (४११,६७३) विंशो-पक (२२८) आदि।

गाँव के अधिकारी के रूप में सेनबोव (पटवारी, २१०,२२६,२५१) महा महत्तु, (७१०) एवं हेग्गडे या पेर्गडे (२०८) के नाम पाते हैं। पटवारी लोग अच्छे पढ़े लिखे होते थे। एक लेख (२५१) में एक पटवारी को लेख रचने वाला लिखा है।

यह एक छोटा सा चित्र है। विस्तृत के लिए भूमिका के विविध प्रकरणों को देखना चाहिये।

लेख पद्धतिः—प्रत्येक पाषाण लेख या ताम्र लेख, यदि वह बहुत ही छोटा केवल नाम मात्र का या छोटा-सा दानपत्र नहीं हुआ तो, प्रायः देखा गया

है कि उसमें एक निश्चित शैली का अनुसरण किया जाता है। प्रारम्भ में बहुधा मंगलाचरण होता है। वह छोटे वाक्य के रूप में 'सर्वज्ञाय नमः, ॐ नमः सिद्धेभ्यः' आदि या पद्य के रूप में जिनशासन को नमस्कार या किसी देवता या अनेक देवताओं को नमस्कार आदि। इसके बाद प्रशस्ति प्रारम्भ होती है जिसमें राजा के नाम युद्ध में विजय आदि तथा वंशपरम्परा का वर्णन होता है। यह वर्णन कभी कभी ऐसे सांचे में ढले हुए के समान होता है कि एक राजा के शासनकाल के सभी लेखों में एकसा विवरण मिलता है। लेख का यही हिस्सा राजनीतिक इतिहास के विद्यार्थी के लिए बड़े महत्त्व का होता है। इस अंश के बाद राजा से भिन्न अगर कोई दाता है तो उसका, उसके वंश एवं वैभव आदि का वर्णन आता है। बाद में देय पात्र का वर्णन आता है। यदि वह मुनि व आचार्य हुआ तो उसकी गुरुपरम्परा संघ, कुल, गण, गच्छ, अन्वय आदि का वर्णन होता है। यदि वह मंदिर आदि धर्मस्थान हुआ तो उसका भी वर्णन होता है। इसके बाद देय वस्तु- धन, ग्राम, भूमि, शुल्क, तेल आदि जो होता है उसका भी खुलासा वर्णन मिलता है। जमीन के दान में उसकी चारों परिधियों का वर्णन होता है। इसके बाद दान की रक्षा के लिए विशेष अनुरोध किया जाता है। इसमें दान को जो क्षति पहुंचाते हैं उनकी भर्त्सना और जो रक्षा करते हैं उनके प्रशंसावाक्य दिये जाते हैं। अंत में लेख को उत्कीर्ण करने वाले का या निर्माता का नाम होता है।

जैन लेख संग्रह:—जैन शिला लेखों की संख्या इतनी अधिक है कि उनका संग्रह एक जगह करना कठिन है। इधर माणिकचंद्र दिगम्बर जैन ग्रन्थमाला से दिगम्बर सम्प्रदाय से सम्बंधित लेखों का संग्रह तीन भागों में निकला है। बाबू कामताप्रसाद ने एक छोटा प्रतिमालेख संग्रह निकाला है। वैसे ही श्वेताम्बर जैन शिलालेखों के संग्रह स्वर्गीय बाबू पूरणचंद्र नाहर ने जैन लेख संग्रह नाम से तीन भाग में, मुनि जयंतविजय जी ने अर्बुद प्राचीन लेख संग्रह पांच भाग में, विजयधर्म सूरि के प्राचीन लेख संग्रह और जैन धातु प्रतिमा लेख संग्रह एवं मुनि कांति-सागर जी का जैन प्रतिमा लेख दो भाग तथा उपाध्याय विनयसागर जी का प्रतिष्ठा लेख संग्रह आदि प्रकाशित हो चुके हैं।

जैन धर्म और जैन समाज के इतिहास निर्माण में इन लेखों का जितना महत्व है वैसा ही भारतीय इतिहास के लिखने में भी है। भारतीय इतिहास के अनेक परिच्छेदों के निर्माण करने में, उन्हें संशोधित एवं प्राप्त तथ्यों को दृढ़ करने में इन लेखों का बड़ा उपयोग है। भारतीय इतिहास के निर्माण में जैन साहित्यिक उपादानों की भले ही अब तक उपेक्षा हुई हो पर वर्षा, सर्दी एवं गर्मी के आघातों से सुरक्षित इन लेखों से प्राप्त अटल तथ्यों को अस्वीकार नहीं किया जा सकता।

प्रस्तुत लेख संग्रह:—प्रस्तुत लेखों का संग्रह श्रद्धेय पं० नाथूराम जी प्रेमी की सत्कृपा एवं प्रेरणा का फल है। इसके प्रथम भाग का संकलन एवं सम्पादन डा० हीरालाल जी जैन ने २८-२९ वर्ष पहले किया था। उक्त भाग में ५००लेख श्रवण वेलगोल और उसके आस पास के कुछ स्थानों के हैं। इसके बहुत वर्षों वाद श्रद्धेय प्रेमी जी ने पं०विजयमूर्ति जी एम० ए० शास्त्राचार्य से द्वितीय एवं तृतीय भाग का संकलन कराया। इन दो भागों में ८४६लेख संगृहीत हैं। इसके संकलन में प्रसिद्ध फ्रेन्च विद्वान् स्व० ए० गेरीनो द्वारा प्रकाशित जैन शिलालेखों की एक विस्तृत तालिका Repertoire Epigraphie Jaina की सहायता ली गई है। वह तालिका सन् १९०८ में प्रकाशित हुई थी, इसलिए इस संग्रह में उक्त सन् या उससे पहले तक के प्रकाशित लेख ही आ सके हैं, वाद का एक भी लेख नहीं। सभी लेखों का संग्रह तिथिक्रम से किया गया है। उनमें प्रथम भाग में प्रकाशित लेखों का एवं श्वेताम्बर लेखों का यथास्थान निर्देश मात्र कर दिया गया है इससे ग्रन्थ का कलेवर बढ़ नहीं सका।

सन् १९०८ से अब तक अनेक जैन लेख प्रकाश में आ चुके हैं। उनका भी तिथिक्रम से संकलन आवश्यक है। ग्रन्थमाला को चाहिये कि उन लेखों को भी संग्रह कराकर प्रकाशित करे।

२ मथुरा के लेख: एक अध्ययन

प्रस्तुत संग्रह में मथुरा से प्राप्त ८५ लेख संगृहीत हैं। इनमें नं० ४ से लेकर १६ तक के लेखों को अक्षरों की वनावट की दृष्टि से डा० वूल्हर ने ईसा

प्रकार की हिन्दू और बौद्ध सामग्री भी प्राप्त हुई है जिससे ज्ञात होता है कि जैन धर्म की बढ़ती देखकर, हिन्दुओं और बौद्धों ने भी मथुरा को अपना केन्द्र बना लिया था। यह स्थान प्राचीन काल में जैनियों का अतिशय क्षेत्र था।

डा० फ्यूरर को इसी टीले से एक जैन स्तूप भी मिला था। स्तूप की एक ओर विशाल मन्दिर दिगम्बर सम्प्रदाय का और दूसरा श्वेताम्बर सम्प्रदाय का मिला, पर वे खनन कार्य की असावधानी से छिन्न भिन्न हो गये। खोदने के समय के फोटुओं में ये तथ्य अब भी मौजूद हैं। लेख नं० ५६ से ज्ञात होता है कि इस स्तूप का नाम 'देवनिर्मित बौद्ध स्तूप' था। लेख एक प्रतिमा की चौकी पर पाया गया है जो उक्त स्तूप पर प्रतिष्ठित की गई थी। लेख में कुषाण संवत् ७६ दिया गया है। इस संवत् में कुषाण नरेश वासुदेव का राज्य था। ईस्वी सन् की गणना में इस मूर्ति की प्रतिष्ठा ७६ + ७८=१५७ ईस्वी में हुई थी। उस समय भी यह स्तूप इतना पुराना हो गया था कि लोग इसके वास्तविक बनाने वाले को एकदम भूल गये थे और उसे देवों का बनाया (देवनिर्मित) हुआ मानते थे। इससे प्रतीत होता है कि 'बौद्ध स्तूप' बहुत ही प्राचीन स्तूप था जिसका कि निर्माण कम से कम ईसा पूर्व ५-६ वीं शताब्दी में हुआ होगा। इस अनुमान की पुष्टि का दूसरा प्रमाण यह भी है कि तिब्बतीय विद्वान् तारनाथ ने लिखा है कि मौर्य-काल की कला यक्ष-कला कहलाती थी और उससे पूर्व की कला देवनिर्मित-कला। अतः सिद्ध है कि कंकाली टीले का स्तूप कम से कम मौर्य-काल से पहले अवश्य बना था। जिनप्रभ सूरि (१३ वीं १४ वीं १ नं०) ने विविधतीर्थकल्प में लिखा है कि पहले यह स्तूप स्वर्ण का बना था, इसमें रत्न जड़े थे, इसे मुनि धर्मरुचि और धर्मघोष की इच्छा से कुबेरा देवी ने सातवें तीर्थंकर सुपार्श्वनाथ की पुण्यस्मृति में बनवाया था। तत्पश्चात् २३ वें तीर्थंकर श्री पार्श्वनाथ के समय में इसका निर्माण ईंटों से हुआ था और पाषाण का एक मन्दिर इसके बाहर बनाया गया था। पुनः वीर भगवान् के केवलज्ञान प्राप्त करने के १३०० वर्ष बाद बप्पभट्टि सूरि ने इस स्तूप को भग० पार्श्वनाथ के नाम पर अर्पण करने के लिए इसकी मरम्मत कराई थी। भग० महावीर को केवलज्ञान की

पूर्व १५० से लेकर ईसा की प्रथम शताब्दी के बीच का सिद्ध किया है। नं० १७ से ८६ तक के लेख कुषाणकालीन हैं जिनमें कुछेक पर सम्राट् कनिष्क, हुविष्क एवं वासुदेव के राज्यसंवत्सर दिये गये हैं और कुछेक बिना संवत्सर के हैं। शेष लेख गुप्तकाल से लेकर ११वीं शताब्दी तक के हैं।

इनमें से ८ लेख तो आयागपटों[1] पर, २ लेख ध्वज[2] स्तम्भों पर, ३ लेख तोरणों[3] पर, १ लेख नेगमेष[4] (यक्षप्रतिमा) पर, १ लेख सरस्वती[5] की मूर्ति पर, ५ लेख सर्वतोभद्र[6] प्रतिमाओं पर, और शेष लेख प्रतिमापट्ट या मूर्तियों की चौकियों पर उत्कीर्ण मिले हैं।

उक्त तथा अन्य मथुरा के कंकाली टीले से प्राप्त हुई थी। इस टीले पर कंकाली देवी का एक मन्दिर है। मन्दिर भी एक छोटी-सी झोपड़ी के रूप में है, जिसमें नक्काशीदार एक स्तम्भ का टुकड़ा रखा गया है, जिसे लोग कंकाली देवी मानकर पूजते हैं। इस तरह देवी के नाम से इस टीले का नाम कंकाली पड़ गया।

इसकी सर्व प्रथम खुदाई सन् १८७१ में जनरल कनिंघम ने की थी जिसमें उन्हें तीर्थंकरों की अनेक मूर्तियाँ मिलीं जिनमें कुछ पर कुषाण वंशी प्रतापी सम्राट् कनिष्क के ५ वें वर्ष से लेकर वासुदेव के राज्य के कुषाण संवत् ९८ तक के लेख खुदे। दूसरी खुदाई सन् १८८८-९१ में डा० फ्यूरर ने विस्तृत रूप से की जिससे ७३७ मूर्तियाँ तथा अन्य शिल्पसामग्री प्राप्त हुई। उसके पश्चात् पं० राधाकृष्ण ने भी यहाँ की खुदाई की और अनेक महत्वपूर्ण सामग्री प्राप्त की। इस तरह कंकाली टीला जैन सामग्री के लिए एक निधान सिद्ध हुआ। यहाँ से अनेक

१—नं० ५,८,९,१५,१७,७१,७३,८१
२—नं० ४३,४४
३—नं० ४,१४,६८
४—नं० १३
५—नं० ५५
६—नं० २२,२६,२७,४१,१७३

ठोस था और गृहनिर्माण की मितव्ययिता के कारण भीतर को ओर केवल ये दीवारें ही वना दी गई थीं। इस कारण भीतर के कुछ हिस्से में ईंट चिनने की जरूरत न रहीं। स्तूप के वाहर की ओर तीर्थंकरों की प्रतिमाएँ वनी थीं।

यहाँ एक और जैन स्तूप था, उस पर का वहुत छोटा सा लेख मिला है। वह ईसा की तीसरी या चौथी शताब्दी का मालूम होता है।

इन स्तूपों के अतिरिक्त यहाँ कई आयागपट्ट मिले हैं। जिनसे ८ लेख प्रस्तुत संग्रह में संकलित हुए हैं। ये आयागपट्ट पत्थर के वे चौकोर पटिये होते हैं जो अनेकों प्रकार के माङ्गलिक चिन्हों से अंकित करके किसी तीर्थंकर को चढ़ाये जाते थे। मथुरा के इन आयाग पट्टों का जैन कला में विशेष स्थान है। एक आयाग-पट्ट (जिस पर लेख नं० ७१ उत्कीर्ण है) पर १ मीन मिथुन, २ देव विमान गृह, ३ श्रीवत्स, ४ वर्धमानक, ५ त्रिरत्न, ६ पुष्पमाला, ७ वैजयन्ती और ८ पूर्णघट ये अष्ट मांगालिक चिह्न मिले हैं। दूसरे अन्य आयागपट्टों पर नंद्यावर्त स्वस्तिक, कमल आदि चिह्न अङ्कित हैं।

इन पर उत्कीर्ण लेखों से ज्ञात होता है कि ये मन्दिरों में अर्हन्तों की पूजा के लिए रखे जाते थे। अधिकांश में अर्हन्तों की प्रतिमाएँ हैं, कुछ में चरणचिह्न हैं। तीन आयागपट्टों पर स्तूपों के चित्र अङ्कित मिले हैं। लेख नं० ८ और १५ वाले आयागपट्ट इनमें से ही हैं। लेख नं० ८ वाला आयागपट्ट (मथुरा संग्रहालय २) अधिक महत्व का है। अनुमान किया जाता है कि उक्त आयाग-पट्ट पर उत्कीर्ण तोरण और वेदिका मण्डित स्तूप मथुरा के विशाल जैन स्तूप की प्रतिकृति है। लेख के अनुसार श्रमणों की श्राविका गणिका लोणशोभिका की पुत्री गणिका वासु ने अपनी माता, पुत्री, पुत्र और अपने समस्त कुटुम्ब के साथ अर्हत् का एक मन्दिर एक आयागसभा, पानीगृह और एक पाषाणासन वनवाये।

इसके अतिरिक्त कंकाली टीले से स्तूप को प्रतिकृति और पूजन आदि के महोत्सव को चित्रित करनेवाले कुछ इमारतों के अंश भी मिले हैं। लेख नं०

६८ ऐसे ही एक तोरण के अंशरूप से लिया गया है। इस तोरण पर एक नग्न साधु चित्रित है जिसकी कलाई पर एक खण्ड वस्त्र लटका हुआ[1] है।

यहाँ से सैकड़ों जैन तीर्थंकरों एवं यक्ष-यक्षिणियों की मूर्तियाँ मिली हैं। ये मूर्तियाँ बड़े सादे ढंग से बनाई गई हैं। तीर्थंकरों की मूर्तियाँ खड्गासन एवं पद्मासन दोनों प्रकार की मिली हैं। प्रारम्भिक शताब्दियों की मूर्तियाँ नग्न हैं। इनमें अधिकांश मूर्तियाँ आदिनाथ, अजितनाथ, सुपार्श्वनाथ, शान्तिनाथ, अरिष्टनेमि और वर्धमान की मिली हैं। उस काल में तीर्थंकर के चिन्हों—लाञ्छनों—का आविष्कार न होने के कारण मूर्तियों में प्रायः एक दूसरे से भेद नहीं है। हाँ, आदिनाथ के केश (जटाएं) तथा पार्श्व और सुपार्श्व के सर्पफण इनको पहचानने में सहायता देते हैं। जैन तीर्थंकरों की मूर्तियाँ नग्न होने के कारण, वक्षस्थल पर श्रीवत्स चिन्ह होने से और शिर पर उष्णीष न होने कारण इस काल की बौद्ध मूर्तियों से अलग आसानी से पहचानी जा सकती हैं।

मथुरा से इसी समय की चौमुखी मूर्तियाँ मिली हैं जो सर्वतोभद्रिका प्रतिमा अर्थात् वह शुभ मूर्ति जो चारों ओर से देखी जा सके, कहलाती थीं। इन प्रतिमाओं में चारों ओर एक तीर्थंकर की मूर्ति बनी होती है। चौमुखी मूर्तियों में आदिनाथ, महावीर और सुपार्श्वनाथ अवश्य होते हैं। ऐसी मूर्तियाँ कुषाण और गुप्त काल में बहुतायत से बनती थीं। ईस्वी सन् ४७५ के लगभग उत्तर भारत पर हूणों के भयानक आक्रमणों से मथुरा के स्थापत्य को बड़ा धक्का लगा। अतः ईस्वी ६वीं के पश्चात् मथुरा से जो नमूने हमें मिले हैं वे थोड़े और भद्दे हैं। उनमें पहले की सी सजीवता नहीं है। इसी काल के लगभग जिन बननेवाली मूर्तियों में कपड़े दिखाये जाने लगे, और सर्वप्रथम धर्मसिंहासन, यक्ष यक्षिणी, त्रिछत्र एवं गजेन्द्र आदि प्रदर्शित होने लगे जो उत्तर गुप्तकाल और उसके बाद की जैन मूर्तियों के विशेष लक्षण हैं। इन्हीं के साथ मध्यकाल में मथुरा के शिल्पियों ने यक्ष यक्षिणियों और जैन मातृकाओं की भी पृथ

१—बाबू कामताप्रसाद जैन इसे जैनों के अर्धफालकसम्प्रदाय से संबंधित बताते हैं, देखो जैन सि० भास्कर भाग ८ अंक २ पृष्ठ ६३-६६

मूर्तियाँ बनाना प्रारम्भ कीं। जैन मातृकाओं में आदिनाथ की यक्षिणी चक्रेश्वरी, तथा नेमिनाथ की अम्बिका देवी की मूर्तियाँ यहाँ मिली हैं। यक्ष धरणेन्द्र की मूर्ति भी मिली है।

इन मूर्तियों के सिवाय यहाँ नैगमेष नामक एक यक्ष की भी मूर्ति मिली है। नैगमेष या हरि नैगमेष जैन मान्यता के अनुसार सन्तानोत्पत्ति के प्रमुख देवता थे। इनकी पुरुष और स्त्री दोनों विग्रहों में मूर्तियाँ मिली हैं। संभवतः पुरुषशरीर की मूर्तियाँ पुरुषों के पूजने के लिए और स्त्रीशरीर की मूर्तियाँ स्त्रियों के लिए थीं। इनका मुख बकरी के आकार का होता है। इनके हाथों या कन्धों पर खेलते हुए बच्चे चिन्हित किये गये हैं। गले में लम्बी मोती की माला भी है जो कि इनका विशेष चिह्न है। कुषाणकाल में इन मूर्तियों की विशेष पूजा होती थी। लेख नं० १३ ऐसी ही एक मूर्ति पर से लिया गया है।

मथुरा से प्राप्त ये लेख ऐतिहासिक, धार्मिक एवं सामाजिक दृष्टि से बड़े महत्त्व के हैं। इनमें उल्लिखित शक एवं कुषाण राजाओं के नाम तथा तिथियों से हमें उनके क्रमिक इतिहास तथा राज्य काल की अवधि का पता चलता है।

लेख नं ५ वें म स्वामी महाक्षत्रप शोडास का संवत्सर ४२ तथा मास दिन दिये हुए हैं। शोडास, महाक्षत्रप रंजुवुल का पुत्र एवं उत्तराधिकारी था। रंजुवुल शक नरेश मोअ के अधीन मथुरा का महाशासक था। यह मोअ ईसा पूर्व ६० के लगभग अफगानिस्तान एवं पंजाब का शासक था। उसके अधीन मथुरा का शासक रंजुवुल पीछे स्वतंत्र हो गया था जैसा कि उसकी शाही उपाधियों से मालूम होता है। लेख में शोडास की स्वामी एवं महाक्षत्रप उपाधियाँ दी गई हैं जो कि उसके स्वतन्त्र शासक होने की परिचायक हैं। यदि उक्त लेख का संवत्सर ४२ विक्रम-संवत् माना जाय जैसा कि स्टीन कोनो सा० का मत है, तो शोडास ईसा पूर्व १७-१६ में राज्य करता था।

शकों के राज्य पर अधिकार करनेवाले थे कुषाणवंशी राजा। इनका राज्य भारत वर्ष पर ईसा की प्रथम शताब्दी के मध्य से स्थापित हुआ था। इस वंश का सबसे बड़ा प्रतापी राजा कनिष्क हुआ, जिसने अपने राज्याभिषेक के समय

से एक संवत् चलाया था जो कि विद्वानों के मत से सन् ७८ ई० से प्रारम्भ होता है। इतिहासज्ञों के अनुसार कनिष्क ने सन् १०० ई० तक अर्थात् २२ वर्ष राज्य किया। इसके बाद उसके उत्तराधिकारी वासिष्क ने सन् १०८ तक, तत्पश्चात् उसके उत्तराधिकारी हुविष्क ने सन् १३८ तक तथा उसके उत्तराधिकारी वासुदेव ने सन् १७६ तक राज्य किया।

प्रस्तुत संग्रह में लेख नं० १६ में देवपुत्र कनिष्क लिखा है और राज्य सं० ५ दिया है। इसी तरह लेख नं०२४ में महाराज राजातिराज देवपुत्र षाहि कनिष्क तथा राज्य सं० ७ दिया है और लेख नं० २५ में महाराज कनिष्क तथा सं० ६ दिया गया है। इन लेखों के सिवाय लेख नं० १७,१८,१६,२०,२१,२६,२८, २६,३०,३३ और ३४ में राजा का नाम तो अंकित नहीं है पर राज्य संवत्सर से मालूम होता है कि ये कनिष्क के ४थे वर्ष से लेकर २२वें तक के लेख हैं। लेख नं ३५-३८ तक कुषाण सं० २५ से २६ तक के हैं जो कि वासिष्क के के राज्य काल के होते हैं। यद्यपि इनमें राजा का नाम या तो दिया ही नहीं गया या स्पष्ट उत्कीर्ण नहीं हो पाया है। लेख नं० ४० से ५६ तक के लेख कुषाण सं० ३१ से ६० के भीतर के हैं जो कि हुविष्क के शासनकाल के हैं। इनमें लेख नं० ४३,४५,४८,५० और ५६ में तो हुविष्क का नाम दिया हुआ है। लेख नं० ५८ से ७० तक कुषाण सं० ६२ से ६८ के अन्तर्गत हैं जो कि वासुदेव के राज्यकाल में पड़ते हैं उनमें से ६२,६५ और ६६ में तो वासुदेव का नाम भी दिया हुआ है। इतिहासज्ञों के मत से लेख नं० ६६ वासुदेव के राज्य की अन्तिम अवधि का द्योतक है।

यहाँ लेखों के सम्बन्ध में यह सब विस्तार पूर्वक इस लिए लिखना पड़ा कि इस संग्रह में भूल से कतिपय लेखों पर दूसरे राजाओं का नाम दिया गया है जो कि इतिहासज्ञों के लिये भ्रम उत्पन्न कर सकता है। इन राजाओं में कनिष्क वासिष्क एवं हुविष्क तो बौद्ध धर्म प्रतिपालक थे और वासुदेव शैव मत का, पर अपने शासन में वे लोग अन्य धर्मों के प्रति बड़े उदार थे। इनके राज्यकाल में जैन धर्म का हित सुरक्षित था और वह खूब समृद्ध स्थिति में था।

सामाजिक इतिहास की दृष्टि से भी ये लेख बड़े महत्व के हैं। इन लेखों में गणिका (८) नर्तकी (१५) लुहार (३१,५४) गन्धिक (४१,४२,६२,६६) सुनार (६७), ग्रामिक (४४) तथा श्रेष्ठी (१६,२६,४३) आदि जातियों या वर्ग के लोगों के नाम मिलते हैं जिन्होंने मूर्ति आदि का निर्माण, प्रतिष्ठा एवं दान कार्य किये थे। इनसे विदित होता है कि २ हजार वर्ष पहले जैन संघ में सभी व्यवसाय के लोग बराबरी से धर्माराधन करते थे। अधिकांश लेखों में दातावर्ग के रूप में स्त्रियों की प्रधानता है जो बड़े गर्व के साथ अपने पुण्य का भागधेय अपने माता-पिता सास-ससुर पुत्र-पुत्री, भाई आदि आत्मीयों को बनाती थीं (१४)। इन स्त्रियों में बहुतसी विधवाएं थीं जो वैधव्य के शोक से घर गृहस्थी छोड़कर विरक्त हो जैन संघ में आर्यिका हो गयीं थीं। लेख नं० ४२ में ऐसी ही स्त्री कुमारमित्रा थी जिसे लेख में आर्या कुमारमित्रा लिखा है तथा उसे संशित, मखित एवं बोधित कहा गया है।

इन लेखों से एक और महत्व की बात सूचित होती है कि उस समय लोग अपने व्यक्तिवाचक नाम के साथ माता का नाम जोड़ते थे जैसे वात्सीपुत्र, तेवणीपुत्र, वैहिदरीपुत्र, गोतिपुत्र, मोगलिपुत्र एवं कौशिकिपुत्र आदि। ऐसे नाम सांस्कृतिक-इतिहास निर्माण की दृष्टि से मूल्यवान् हैं।

जैन धर्म के प्राचीन इतिहास की दृष्टि से मथुरा के ये लेख और भी बड़े महत्त्व के हैं। इन लेखों में मूर्ति के संस्थापक ने न केवल अपना ही नाम उत्कीर्ण कराया है बल्कि अपने धर्मगुरुओं का नाम भी, जिनके कि सम्प्रदाय का वह था। इनमें आचार्यों की उपाधियाँ—आर्य, गणी, वाचक, महावाचक, आतपिक आदि जो कि उस समय प्रचलित थीं, दी गई हैं। लेखों में अनेक गणों, कुलों और शाखाओं के नाम भी दिये गये हैं। ठीक इस प्रकार के गण, कुल एवं शाखा, श्वेताम्बर आगम 'कल्पसूत्र' की स्थावरावली में तथा कुछ वाचक आचार्यों के नाम नन्दिसूत्र की पट्टावली में मिलते हैं। महत्त्व की बात तो यह है कि लेखों का कुछ हिस्सा छिप जाने या पत्थर के कारीगर द्वारा गलत ढंग से उत्कीर्ण

प्राप्ति ईसा से लगभग ५५० वर्ष पहले हुई थी, अतः इस स्तूप की मरम्मत १३०० वर्ष बाद अर्थात् सन् ७५० के लगभग में हुई होगी। और पार्श्वनाथ के समय में इसके ईंटों से बनाये जाने का काल ईसा से ६०० वर्ष से भी पूर्व निश्चित होता है। संभव है देवनिर्मित शब्द यही द्योतित करता है। यदि यह संभावना ठीक है तो भारत वर्ष के जितने स्तूप एवं इमारतें हैं उनमें यह स्तूप सबसे प्राचीन समझना चाहिये।

स्तूप का मूल अभी तक विद्वानों के विवाद का विषय है। किन्हीं का मत है कि यह प्राचीन यज्ञशालाओं का अनुकरण है जब कि दूसरे इसे भग० बुद्ध के उलटकर रखे गये भिक्षापात्र के आधार पर निर्मित मानते हैं। कभी कभी विशिष्ट पुरुषों के स्मारक रूप में भी स्तूप बनते थे और उसमें उनके अस्थिफूल रखे जाते थे। पर यह आवश्यक नहीं कि सभी स्तूप ऐसे हों। सारनाथ के धमेख स्तूप और चौखण्डी स्तूप में कनिंघम को कुछ भी प्राप्त नहीं हुआ।

स्तूप का तलभाग गोल होता है। नीचे एक गोल चबूतरा, उसके ऊपर ढोल या कुएं के आकार की इमारत और उसके भी ऊपर एक अर्ध गोलाकार गुंबज (छतरी) होती है। चबूतरे पर स्तूप के चारों ओर एक प्रदक्षिणा पथ छोड़कर पत्थर को लम्बी खड़ी और आड़ी पटरियों का एक घेरा (Railing) बना रहता है। इस घेरे में अधिकतर चारों दिशाओं में तोरण (gate way) बने होते हैं। ये तोरण बड़े ही सुन्दर बनाये जाते हैं। पत्थर के दो स्तम्भ खड़े करके उनके ऊपर के शिरों पर तीन आड़ी पटरियां लगा देते हैं। उन्हीं के नीचे से आने जाने क रास्ता रहता है। तोरण तक जाने के लिए सीढ़ियां रहती हैं। ये स्तूप पोले और ठोस दोनों तरह के मिले हैं।

मथुरा के जैन स्तूप का वर्णन इस प्रकार है:—इस स्तूप के तले का व्यास ४७ फीट था। यह ईंटों का बना था, ईंटें आपस में बराबर न थी किन्तु छोटी बड़ी थीं। इसकी भूमि का ढाँचा इक्के गाड़ी के आकार का था। केन्द्र से बाहर की दीवार तक आठ व्यासार्ध, जिनपर आठ दीवारें स्तूप के भीतर-भीतर ऊपर तक बनी थीं। इन दीवारों के बीच में मिट्टी भरी हुई मिली है। कदाचित् यह स्तूप

अनेक लेखों से प्रात ठानिय कुल के रूप में प्राप्त हुआ है। इसी तरह चतुर्थ 'पण्हवाहय' तो पण्हवणय कुल (६६) मालुम होता है। उक्त गण की चार शाखायें थीं। प्रथम 'उच्चानगरि' तो अनेक लेखों की उच्छेनगरी ही है। द्वितीय 'विजाहरी' शाखा लेख नं० ६२ की विद्याधरी शाखा मालूम होती है। तृतीय 'वइरी' शाखा को हम अनेक लेखों में वेरिय, वेर, वैर, वइर के रूप में देख सकते हैं। चतुर्थ 'मज्झिमिल्ला' शाखा लेख नं० ६६ की मज्झम शाखा ही समझना चाहिये

आर्य श्रीगुप्त गणी से 'चारण' गण निकला था जो कि मथुरा के अनेक लेखों में वारण गण के रूप में पढ़ा गया है। उससे सम्बन्धित ७ कुलों में से 'पीइ-धम्मिअ' लेख नं० ३४ एवं ४७ का पेतवमिक मालुम होता है। 'हालिज्ज' कुल लेख नं० १७,४४ एवं ८० का आर्य हाटिकिय प्रतीत होता है। 'पूसमित्तिज्ज' लेख नं० ३७ का पुश्यमित्रीय तथा 'अज्जवेडय' कुल लेख नं० ४५ का आर्यचेटिय एवं नं० ५२ का अय्यमित्त (?) और 'कण्हसय' लेख नं० ७६ का कनियसिक विदित होते हैं। इसी तरह उक्त गण की चार शाखाओं में 'हारियमालागारी' लेख नं० ४५ की 'हरीतमालकाधी,' 'वज्जनागरी' लेख नं० ११,४४ एवं ८० की वाज-नगरी, 'संकासीआ' लेख नं० ५२ की सं (कासिया) तथा 'गवेधुका' लेख नं० ७६ में ओद (संभव गोदुक) के रूप में पढ़ी गयी है।

इस तरह ३ गण, १२ कुल एवं १० शाखाओं के नाम लेखों और कल्पसूत्र स्थविरावली में बराबर मिल जाते हैं। केवल लेख नं० ८२ के वारण गण के नाडिक कुल का मिलान नहीं हो सका है। संभव है यह नाम अन्य नामों के समान लिखने की अशुद्धियों के कारण अज्ञात सा प्रतीत होता है।

कल्पसूत्र स्थविरावली के अनुसार काल की दृष्टि से इन गणों, कुलों और शाखाओं का आविर्भाव वीर सं० २४५-२६१ अर्थात् ई० पूर्व २८२-२३६ के बीच हुआ था और मथुरा के लेखों से मालूम होता है कि ये गुप्त संवत् ११३ अर्थात् सन् ४३४ तक बराबर चलते रहे।

मथुरा के इन लेखों में उक्त गणों, कुलों एवं शाखाओं के सिवाय अनेकों आचार्यों के नाम आते हैं जो कि वाचक आदि पद से विभूषित थे। श्वेताम्बर आगम नन्दिसूत्र में एक वाचक वंश की पट्टावली दी हुई है, जिसके अनेकों नामों का मिलान शिलालेखों के नामों से किया जा सकता है। उक्त पट्टावली में सुधर्म गणधर की परम्परा को आगे बढ़ाते हुए ७वें आर्य स्थूलभद्र के शिष्य सुहस्ति से चलने वाले वाचक वंश का वर्णन है जो कि वीर निर्वाण सं० २४५ से लेकर ६६४ तक अर्थात् ई० पूर्व २८२ से लेकर सन् ४६७ तक चलता रहा। उक्त वंश में ही आर्य देवर्धि क्षमाश्रमण हुए थे जिन्होंने वर्तमान श्वेताम्बर आगमों को अन्तिम रूप दिया था। उक्त पट्टावली में गण, कुल एवं शाखाओं का नाम बिल्कुल नहीं दिया। संभव है वहाँ गण, कुल शाखादि को महत्त्व न दे वाचक पदधारी आचार्यों का नाम ही गिनाया गया है। जो भी हो, यहाँ उक्त पट्टावली और लेखों के कुछ नामों में काल दृष्टि से साम्य प्रकट किया जाता है।

१३—आर्य समुद्र,	वीर नि० सं०...	महावाचक, गणि समदि	(ले० नं० ५२)
१४—आर्य मंगु[1],	,, ४६७[2]	गणि मंगुहस्ति	(,, ५४)
१५—आर्य नन्दिल क्षमण		आर्य नन्दिक	(,, ४१)
		गणी नन्दी	(,, ६७)
१६—आर्य नागहस्ति	(,, ६२०[3]-६८६)	वाचक आर्य घस्तुहस्ति	(,, ५४)

१—मुनि दर्शनविजय, पट्टावली समुच्चय, भा० १ पृष्ठ १३ पर आर्य मंगुकी गाथा के अनन्तर दो प्रक्षिप्त गाथाएं आती हैं, जिनमें अज्जधम्म, भद्रगुप्त, अज्जवयर, अज्जरक्खित के नाम आते हैं।

२—वही, पृष्ठ ४७, तपागच्छपट्टावली। इस पट्टावली का रचना काल विक्रम सं० १६४६ है।

३—वही, पृष्ठ १६, 'सिरि दुषमाकाल समणसंघथयं' नामक पट्टावली का

एवं हस्तहस्ति[1] (ले० नं० ५५)

२२—भूतदिन्न (वी० नि० ६०४–६८३[2]) दन्तिल (,, ६२)

लेख नं० ५२ पर जिसमें कि महावाचक गणि समदि का नाम आता है, कुषाण संवत् ५० अंकित है जो कि गणना में वीर निर्वाण सं० ६५५ आता है[3]। नन्दिसूत्र पट्टावली में आर्य समुद्र का नाम आर्य मंगु से पहले आता है। आर्य मंगु का समय पट्टावली के अनुसार वीर नि० सं० ४६७ है। यदि यह ठीक है तब तो आर्य समुद्र का समय भी आर्य मंगु से पहले होना चाहिये। लेख में दिया गया कुषाण सं० ५० (वी०नि० सं० ६५५) यदि आर्य समदि का समय है तो इस हिसाब से पट्टावली के समय और लेख के समय में लगभग १८८ वर्ष का अन्तर आता है। पर वास्तव में लेख नं० ५२ में आर्य समदि का समय नहीं दिया गया बल्कि वह आर्य दिनर (?) आदि की एक शिष्या द्वारा मूर्ति स्थापना का समय है। उक्त लेख में समदि शब्द के बाद कई अक्षर घिस गये हैं। यदि

रचना काल वि० सं० १३२७ है।

१. शुद्ध नाम हस्ति-हस्ति प्रतीत होता है। हस्ति का पर्यायवाची नाग होता है। यह संभव है कि नागहस्ति को लेख मे हस्ति-हस्ति लिखा गया है। संभव है लेख को उत्कीर्ण करने वाले की भूल से हस्ति शब्द ग्रस्त हो गया हो, और दूसरे लेख में हस्ति का हस्त हो गया हो।

२. वही, पृष्ठ १८, दिन्न और दत्तिल दोनों शब्द दत्त शब्द के प्राकृत रूप होते हैं।

३. जैन परम्परा के अनुसार वीर निर्वाण का समय विक्रम सं० से ४७० वर्ष पूर्व है, अतः ई० सन् पूर्व ५२७ होगा। कुषाण संवत् ईस्वी सन् ७८ से प्रारंभ होता है अतः कुषाण संवत् के प्रारंभ में ५२७+७८= ६०५ वीर निर्वाण सं० समझना चाहिये। डा० याकोबी के मतानुसार वीर निर्वाण ई० सन् पूर्व ४६७ में होता है।

अक्षरों की पूर्ति श्राद्धचर या श्राद्धचर्य[1] शब्द से की जाय तो यह कहा जा सकता है कि वह शिष्य या उसके गुरु, महावाचक समदि के श्राद्धचर्य या श्राद्धचर थे। आद्धचर शब्द का यदि यह अर्थ मान लिया जाय कि उक्त आचार्य की परम्परा में विश्वास करने वाला तो यह संभावना करनी पड़ेगी कि महावाचक समदि की परम्परा १८८ वर्ष या उसके कुछ अधिक वर्षों तक चलती रही[3]। इसी हालत में लेख और पट्टावली के आर्य समदि और आर्य समुद्र का समीकरण संभव है।

इसी तरह गणि आर्य मंगुहस्ति का उल्लेख करने वाले लेख नं० ५४ का समय कुषाण सं० ५२ दिया गया है जो कि वी० नि० सं० ६५७ होता है। इस लेख में जो समय दिया गया है वह है वाचक आर्य हस्तुहस्ति के शिष्य एवं गणी आर्य मंगुहस्ति के आद्धचर वाचक आर्य दिदिन का। पट्टावली में आर्य मंगु का समय वी० नि० सं० ४६७ दिया गया है। लेखगत समय वी० नि० सं० ६५७ (कुषाण सं० ५२) से संगति बैठाने के लिए यहाँ यह समझना चाहिए कि आर्य मंगु की परम्परा कम से कम १९० वर्ष तक चलती रही।

---

१. मथुरा के लेख नं० १७ में सद्धचर्य, ४२ में सद्धचरि, ५४ में सद्धचरो तथा ५५ में श्रद्धचरो शब्द आते हैं।

२. यह संभावना इसलिए करनी पड़ी कि उस काल में एक समय में ही आचार्यों की कई परम्परायें चलती थीं। श्वेताम्बर जैन पट्टावलियों के देखने से यह बात भली भाँति विदित होती है कि आर्य सुहस्ति के बाद ऐसी अनेक परम्पराओं का उद्गम हुआ था। कोई वाचक परम्परा थी, कोई युगप्रधान परम्परा थी तथा कोई गुरु परम्परा थी आदि, तथा उन आचार्यों से कई गण, कुल और शाखा निकले थे। जिन परम्पराओं की स्मृति रही उनका अंकन तो हो गया, शेष कालदोष से लुप्त हो गईं।

किये जाने या लेखों का गलत छापा लेने तथा नकल को गलत पढ़े जाने पर भी उक्त दोनों पट्टावलियों के कई नामों के साथ साम्य स्थापित किया जा सकता है।

संभव है सम्प्रदाय का नाम गण, उसके विभाग का नाम कुल तथा उसके उपविभाग का नाम शाखा था। ये नाम जैन श्रमणों के उन विभिन्न संघों की ओर संकेत करते हैं जो कि ईसा पूर्व की कुछ शताब्दियों में जैन श्रमणों में अपनी अपनी आचार्य परम्परा और पर्यटन भूमि की विभिन्नता के कारण पैदा होना शुरु हुए थे।

कल्पसूत्र स्थविरावली के अनुसार वर्धमान स्वामी की परम्परा में ६ वीं पीढ़ी में आर्य सुहस्ति हुए जो कि आर्य स्थूलभद्र के अन्तेवासी थे। इन आर्य सुहस्ति के १२ अन्तेवासी थे। इनमें से आर्य रोहण,आर्य कामर्धि,आर्य सुस्थित तथा सुप्रतिबुद्ध एवं आर्य श्रीगुप्त से निकलने वाले गण, कुल एवं शाखाओं के कई एक नाम लेखों में पहिचाने जा सके हैं।

तदनुसार आर्य रोहण गणी से 'उद्देह' गण निकला जो कि हमारे लेख २४ एवं ६६ का 'उद्दकिय' गण समझना चाहिये। उक्त गणके ६ कुल थे जिनमें से केवल दो की पहिचान हो सकी है। 'नागभूय' कुल हमारे लेख नं० २४ का 'नागभूतिय' होना चाहिये। 'परिहासक' गलत रूप से लिखा या पढ़ा जाकर लेख नं० ६६ में पुरिध के रूप में प्रतीत होता है। उक्त गण की चार शाखायें थीं जिनमें एक शाखा 'पुण्ण पत्तिका' लेख नं० ६६ की पेतपुत्रिका होना चाहिये।

आर्य कामर्धि गणी से वेसवाडिय गण निकला। यद्यपि यह नाम लेखों में स्पष्ट रूपसे उत्कीर्ण नहीं मिला लेकिन उक्त गणके चारकुलों में से एक 'मेहियकुल' मेहिक के रूप में २६ और ६३ वें लेख में प्राप्त हुआ है।

आर्य सुस्थित एवं सुप्रतिबुद्ध गणी से 'कोडिय' गण निकला जो कि अनेकों लेखों में कोट्टिय के रूप में मिलता है। इस गण के चार कुलों में पहले कुल 'बंभलिज' को तो अनेकों लेखों का ब्रह्मदासिक कुल ही समझना चाहिये। दूसरा 'वत्थलिज' भी लेख नं० २७ कावच्छलिय प्रतीत होता है। तृतीय 'वाणिज' कुल

दोनों आचार्यों को क्षमाश्रमण और महावाचक भी लिखा है[1]। इन्हें उक्त ग्रन्थों में यतिवृषभ का गुरु कहा है[2]।

इसी तरह लेख नं० ६२ के आर्य दत्तिल, नन्दिसूत्र पट्टा० के २२ वें वाचक आर्य भूतदिन्न मालूम होते हैं। दन्तिल का समय गुप्त संवत् ११३ अर्थात् सन् ४३४ ई० होता है जो कि वीर नि० सं० ६६१ है। पट्टावली में भूतदिन्न का समय भी वीर नि० सं० ६०४से ६८३ दिया गया है। इस समय के अन्तर्गत लेख का समय आ जाता है।

यद्यपि लेखों के तथा नन्दिसूत्र पट्टावली के एवं कल्पसूत्र थेरावली के अन्य कुछ नामों में साम्य सा प्रतीत होता है—जैसे न० पट्टा० के स्कन्दिल या षंडिल्ल का लेख नं० २४, ३२ एवं ३६ के आर्य संधिक या संधि से तथा सिंहसूरि का लेख नं० ३१, ३२ के सिंह या सीह से और कल्पसूत्र थे० के २७ वें पट्टधर वृद्ध का नाम लेख नं० ५६ एवं ५८ के वृद्धहस्ति से तथा २३ वें पट्टधर गेहिल या ज्येष्ठ का लेख नं० २३ के गाढक व ज्येष्ठ हस्ति से— पर कालक्रम के विचार से यह समीकरण व्यर्थ सा है। यहाँ पट्टावली और लेखों के इन नामों से इतना तो अवश्य ज्ञात होता है कि ईसा की प्रारम्भिक शताब्दियों में जैन मुनियों के प्रायः ऐसे नाम होते थे।

जो भी हो, पर मथुरा के शिलालेखों के आचार्यों और उनके गणों, कुलों और शाखाओं के नाम जैनधर्म के इतिहास की दृष्टि से बड़े महत्त्व के हैं। हम इन गणों आदि के अस्तित्व से उस महान् युग का, उसके जीवन की गति विधि

१—पुरातन जैन वाक्य सूची, भूमिका, पृष्ठ ३०.

२—यतिवृषभ का समय अभी तक ठीक रूप से निश्चित नहीं हुआ। विद्वान् लोग इन्हें सन् ४७८ के लगभग का मानते हैं, पर श्रद्धेय प्रेमी जी की संभावना कि वे और पहले के आचार्य हैं (जैन सा० और इति० द्वि० सं०, पृष्ठ २१)। विद्वानों का ध्यान मैं अपनी संभावना की ओर खींचता हूँ।

का तथा साथ ही सम्प्रदायों की परम्परा को रखने में विशेष सावधानी का अनुमान कर सकते हैं[1]।

३. जैन संघ का परिचय

मथुरा के प्राचीन लेखों की चर्चा के प्रसंग में हम देख चुके हैं कि कल्पसूत्र स्थविरावली और नन्दिसूत्र पट्टावली में अङ्कित कुछ गण, कुल और शाखाओं का अस्तित्व गुप्तकाल (ले० नं० ६२) तक अवश्य था। इसके बाद हमें ऐसे लेख नहीं मिले जिनसे कहा जाय कि उक्त परम्परा चलती रही हो। गुप्तकाल

---

१. इस अध्याय के लिखने में सहायक ग्रन्थों का निर्देश—

जी० बूलर, इण्डियन सेक्ट आफ जैन्स, लन्दन, १६०३.

जे० इ० लोजेन्डे, सीथियन पीरियड, लीडन, १६४६.

इ० जे० रेप्सन, केम्ब्रिज हिस्ट्री आफ इंडिया, भाग १, दिल्ली, १६५५.

ह० याकोबी, कल्पसूत्र, अंग्रेजी अनुवाद (से० बु० ई० भाग २२) आक्सफोर्ड, १८८४.

जे० फर्युसन एण्ड जे० बर्जेस, हिस्ट्री आफ इंडियन एण्ड ईस्टर्न आर्किटेक्चर, भाग २, १६१०.

उमाकान्त प्रेमचन्द शाह, स्टडीज इन जैन आर्ट, बनारस, १६५५.

पं० नाथूराम प्रेमी, जैन साहित्य और इतिहास, बम्बई, १६४२, १६५६.

डा० हीरालाल जैन, षट्खण्डागम, प्रथम, द्वितीय पुस्तक।

मजूमदार और पुसलकर, एज आफ इम्पीरियल यूनिटी, बम्बई।

मुनि दर्शनविजय जी, पट्टावली समुच्चय, प्रथम भाग, वीरमगाम १६२३.

त्रिपुटी महाराज, जैन परम्परानो इतिहास अहमदाबाद १६५२.

प्रेमी अभिनन्दन ग्रन्थ।

जैन हितैषी भाग, १०, १३.

जैन सिद्धान्त भास्कर।

अनेकान्त।

के ही कुछ लेखों से तथा बाद के सैकड़ों लेखों पर सरसरी दृष्टि डालने से हमें दक्षिण भारत में कुछ नये संघों और उनकी नई शाखाओं — गण, गच्छ, अन्वय एवं बलियों के नाम दिखाई पड़ते हैं। ऐसा मालूम होता है कि दक्षिण भारत में उत्तर भारत की परम्परा शायद उसी रूप में चालू न रही थी। हम श्रवण बेल्गोल के एक लेख (प्र० भा० नं० १) से जानते हैं कि दक्षिण भारत में सर्व प्रथम भद्रबाहु द्वितीय आये थे और वहाँ जैन धर्म की प्रतिष्ठा इनसे ही हुई थी, पर कदम्ब वंशी नरेशों के एक लेख (६८) से मालूम होता है कि ईसा की ४-५ वीं शताब्दी में जैन संघ के वहाँ विशाल दो सम्प्रदाय—श्वेतपट महाश्रमण संघ और निर्गन्थ महाश्रमण संघ—का अस्तित्व था। इसी तरह इस वंश के कई लेखों में जैनों के यापनीय[1] और कूर्चक[2] नामक संघों का उल्लेख मिलता है जो कि एक प्रकार से उक्त दोनों से भिन्न थे।

दक्षिण भारत में निर्ग्रन्थ सम्प्रदाय एवं यापनीय तथा कूर्चक तथा सम्प्रदायों की स्थापना किसने की यह बात स्पष्ट रूप से हमें लेखों से विदित नहीं होती, पर यह कहने में शायद आपत्ति न होगी कि निर्ग्रन्थ सम्प्रदाय वहां भद्रबाहु (द्वितीय) द्वारा स्थापित हुआ था। लेख नं० ६८ और ६६ (सन् ४७०-४६० के लगभग) में इस सम्प्रदाय का उल्लेख है पर इसके बाद इस नाम से नहीं। वैसे तो प्राचीन काल में निग्रन्थ या निगण्ठ (लेख नं० १) शब्द भग० महावीर और उनके अनुयायी सम्प्रदाय मात्र के लिए प्रयुक्त होता था पर इन लेखों

---

१. यह सम्प्रदाय सिद्धांत दृष्टि से श्वेताम्बर सम्प्रदाय से अधिक मिलता जुलता था, परन्तु संघ के साधु नग्न रहते एवं अनुयायी नग्न मुर्तियों की स्थापना करते एवं पूजते थे। इसका अस्तित्व १५-१६ वीं शताब्दी तक दक्षिण भारत में था। परिचय आगे दिया गया है।

२. कूर्चक सम्प्रदाय का परिचय आगे दिया गया है।

में श्वेताम्बर और यापनीय सम्प्रदाय से भिन्न अर्थ में प्रयुक्त होने के कारण इसे दिगम्बर सम्प्रदाय अर्थ में ही लेना सयुक्तिक होगा। । इस संघ का प्रारंभिक रूप क्या था यह तो ईसा से पूर्व तथा ईसा के बाद ४-५ वीं शताब्दियों के लेखों से विदित नहीं होता पर कदम्ब नरेश मृगेशवर्मा के उपर्युक्त लेख नं० ६८-६६ से ज्ञात होता है कि इस सम्प्रदाय के मुनियों के नाम पर दान में ग्राम और भूमि आदि दी जाती थी।

लेख नं० ६८ से ज्ञात होता है कि देवगिरि नामक स्थान में श्वेताम्बर और दिगम्बर सम्प्रदाय मिल जुल कर रहते थे और शायद उनका एक ही मन्दिर था। इसके बाद हम निर्ग्रन्थ सम्प्रदाय का नाम तो लेखों में नहीं पाते पर गंग-वंश के नरेश माधववर्म द्वितीय (सन् ४०० के लगभग) और उसके पुत्र अविनीत (सन् ४२५ या उसके बाद) के लेखों (६० और ६४) में सर्व प्रथम मूल संघ का उल्लेख पाते हैं जो कि ६-१० वीं शताब्दी के लेखों में और उसके बाद के लेखों में प्रचुर मात्रा में निर्दिष्ट है। विद्वानों की धारणा है कि दक्षिण भारत में श्वेता० सम्प्रदाय से दिगम्बर सम्प्रदाय को पृथक् बतलाने के लिए ही संभवतः मूलसंघ का प्रयोग किया गया है। यदि यह बात ठीक है तो कहना होगा कि निर्ग्रन्थ सम्प्रदाय ही उस समय से मूलसंघ कहलाने लगा हो[१]। प्रस्तुत

---

१. श्रद्धेय पं० नाथूराम जी प्रेमी मूलसंघ के नाम को तीसरी चौथी शताब्दि के लेखों में न देख संभावना करते हैं कि मूलसंघ यह नामकरण अपने से अतिरिक्त दूसरों को अमूल—जिनका कोई मूल आधार नहीं—बतलाने के लिए ही किया गया है। और यह तो वह स्वयं ही उद्घोषित कर रहा है कि उस समय उसके प्रतिपक्षी दूसरे दलों का अस्तित्व था। (जैन साहित्य और इति० द्वि० संस्करण, पृष्ठ ४८५)

लेख नं० ४१ एवं ६७ के आर्य नन्दिक या गणी नन्दिय, नन्दिसूत्र पट्टावली के १५ वें आर्य नन्दिल खमण प्रतीत होते हैं। लेखों में उनका समय कुषाण सं० ३२ तथा ९३ दिया हुआ है जो कि गणना में वीर नि० ६३७ तथा ६९८ होता है। इस तरह उनका समय ६१ वर्ष आता है। पर पट्टावली की गणना में उक्त समय आर्य नागहस्ति को दिया गया है तथा नन्दिल के समय का कोई उल्लेख नहीं। यद्यपि यहाँ लेख और पट्टावली के समय को देखते हुए एक समय में दो वाचक आचार्य-नन्दिल और नागहस्ति-के होने का आपत्ति दोष आता है पर मथुराके लेखों में तो एक एक, दो दो वर्ष के बीच या एक ही समय में अनेक वाचक आचार्यों को होता देख उक्त दोनों आचार्यों को एक समय में संभावना कोई बाधक सी प्रतीत नहीं होती।

लेख नं० ५४ एवं ५५ के आर्य घस्तुहस्ति तथा हस्तहस्ति तो काल की दृष्टिसे भी पट्टावली के १६ वें पट्टधर नागहस्ति मालूम होते हैं। लेखों से ज्ञात समय और पट्टावली में दिये गये उन के समय में कोई गड़बड़ी पैदा नहीं होती। लेखों के कुषाण संवत् ५२ और ५४ अर्थात् वीर नि०सं० ६५७ और ६५९, पट्टावली में दिये गये नागहस्ति के समय वीर नि० ६२०-६८९ के अन्तर्गत आ जाते हैं। इस तरह लेखगत यह समकालीन उल्लेख अद्भुत है।

लेख नं० ५४ और ५५ की एक और बात विशेष उल्लेखनीय है। लेख नं० ५४ में आर्य नागहस्ति (घस्तुहस्ति) और मंगुहस्ति का तथा लेख नं० ५५ में नागहस्ति (हस्तहस्ति) और माघहस्ति का एक साथ उल्लेख है। माघहस्ति संभव है मंगु,मंखु या मंक्षु का नामान्तर या शब्दान्तर हो या शिल्पी की असावधानी से ऐसा उत्कीर्ण होगया हो। यदि यह अनुमान सही है तो दोनों लेखों में इन दोनों आचार्यों का एक साथ उल्लेख कुछ विशेष अर्थ रखता है। दिगम्बर परम्परा के धवलादि ग्रन्थों में आर्य मंखु और नागहस्ति को सहपाठी कहा गया है.[1] । मंगु और मंखु एकार्थक हैं। धवला और जयधवला इन दोनों में इन

१— षट्खंडागम की भूमिका,पुस्तक २ पृष्ठ३८

लाभ देते थे, तो दूसरी ओर सैद्धान्तिक मान्यता में श्वेताम्बरों के समान स्त्रीमुक्ति, केवलीकवलाहार और सग्रन्थावस्था आदि भी मानते थे। वे प्राचीन जैनागम ग्रन्थों का पठन-पाठन करते थे पर उनके आगम शायद श्वेताम्बरों के वर्तमान आगमों से पाठभेद को लिए हुए कुछ भिन्न थे। संभव है यह सम्प्रदाय श्वेताम्बर दिगम्बरों के बीच की एक कड़ी था। इस सम्प्रदाय में अनेकों प्रतिभाशाली विद्वान, आचार्य एवं कवि हुए हैं जिन्होंने संस्कृत प्राकृत और कन्नड भाषा में सैकड़ों प्रतिष्ठित ग्रन्थ लिखे हैं। श्रद्धेय पण्डित नाथूराम जी प्रेमी ने खोजकर बतलाया है कि इन विद्वानों में शिवार्य, अपराजित, पाल्यकीर्ति शाकटायन, महावीर और स्वयम्भू कवि थे। वे संभावना करते हैं कि उमास्वाति, वट्टकेरि, यतिवृषभ आदि भी शायद यापनीय हों[1]।

प्रस्तुत संग्रह में इस संघ का प्रकट या अप्रकट रूप से उल्लेख करने वाले अनेकों लेख हैं जिनसे इनके गणों एवं गच्छों का परिचय मिलता है। इस संघ के कतिपय गणों के सम्बन्ध में, लेखों के तिथिक्रम से अध्ययन करने पर मालूम होता है कि वे पीछे दिगम्बर सम्प्रदाय के अन्य दूसरे संघों द्वारा आत्मसात् कर लिये गये, या उनका पुनः संस्कार किया गया, या वे काल के थपेड़े में लुप्त हो गये। लेखों के विश्लेषण से यह बात स्पष्ट हो जाती है। यह सम्प्रदाय बड़ा ही राज्य-मान्य था। लेखों से विदित होता है कि कदम्ब, चालुक्य, गंग, राष्ट्रकूट और रट्ट वंश के राजाओं ने इस संघ को और इसके साधुओं को अनेकों भूमिदानादि किये थे।

कदम्ब वंश के लेख नं० ९९, १०० तथा १०५ से ज्ञात होता है कि उस वंश के प्रारम्भिक राजाओं के काल में यह संघ बड़ा ही प्रभावक था। कदम्ब नरेश मृगेशवर्मा (सन् ४७०-४९०) ने पलासिका स्थान में इस संघ को अन्य दूसरे संघों—निर्ग्रन्थ एवं कूर्चकों के साथ भूमिदान द्वारा सत्कृत किया था (९९)। उक्त नरेश के पुत्र रविवर्मा ने इस संघ के प्रमुख आचार्य कुमारदत्त को पुरखेटके

१—देखिए, जैन साहित्य और इतिहास, द्वितीय संस्करण के अनेक स्थल

ग्राम दान में दिया था (१००)। इसी तरह कदम्ब वंश की दूसरी शाखा के युवराज देववर्मा ने भी यापनीय संघ को कुछ क्षेत्रों का दान देकर सत्कृत किया था (१०५)। लेख नं० १०५ में 'यापनीयसंघेभ्य:' यह बहुवचन प्रयोग द्योतित करता है कि यापनीय संघ के कई अवान्तर भेद थे।

यद्यपि इन लेखों से इस सम्प्रदाय पर विशेष प्रकाश नहीं मिलता पर लेख नं० १०६,१२१, १२४, १४३ आदि से इसके गणों और गच्छों का साधारण परिचय मिलता है। इन लेखों से ज्ञात होता है कि इस सम्प्रदाय में नन्दिसंघ नन्दि गच्छ) प्राचीन तथा प्रमुख था। इस संघ के आचार्यों का नाम विशेषत: नन्द्यन्त और कीर्त्यन्त (१२४) होता था। नन्दिसंघ कई गणों में विभक्त था या संघ की व्यवस्था की दृष्टि से कल्पित भेदों में बांट दिया गया था। उनमें कनकोपलसम्भूत वृक्षमूलगण[1] (१०६) श्रीमूलमूलगण (१२१) तथा पुन्नागवृक्षमूलगण प्रमुख (१२४) थे। हम देखते हैं कि गणों के ये नाम कतिपय वृक्षों के नामों से सम्बन्धित हैं। वृक्षों के ये नाम भी या तो विभिन्न साधु समुदाय का चिह्न रहे होंगे जैसे विभिन्न राजवंशों के सिंह, वन्दर आदि चिह्न होते हैं या वे लोग अमुक अमुक वृक्ष विशेष वाले स्थान से शुरू शुरू में सम्बन्धित रहे होंगे और

१—लेख में मूलगुण लिखा है जो कि अशुद्ध प्रतीत होता है। पं० नाथूराम जी प्रेमी लेख नं० १०६ के मूल गण को मूलसंघ समझ बैठे हैं (जै०सा०इति० द्वि० सं० पृ० ४८५-) पर मूलसंघ को मूलगण कहीं नहीं लिखा गया और न वह उस अर्थ में ही प्रयुक्त हुआ है। मूलगण उक्त लेखों में तीन जगह आया है जो कि कुछ वृक्षान्त नामों से विशेषित है। चूँकि ले० नं० १२१ और १२४वें वृक्षमूलपरक गण नन्दिसंघ से सम्बन्धित हैं इसलिए ले० नं० १०६ के कनकोपल सम्भूत मूलगण की भी नन्दि संघ से सम्बन्धित होने की संभावना है। लेखों से ज्ञात होता है कि नन्दिसंघ आठवीं और नवीं शता० में सर्वप्रथम यापनीय सम्प्रदाय के अन्तर्गत था तो नन्दिसंघ से सम्बद्ध उस काल के गणों को उस सम्प्रदाय से ही सम्बद्ध समझना चाहिए।

तत्कालीन सुविधा की दृष्टि से नामकरण किया गया होगा पर पीछे वही नाम रूढ़िगत हो गया। इनमें पुन्नाग=नागकेशर के समीप से आने वाले साधु पुन्नागवृक्षमूलगण, श्रीमूल=शाल्मलि=सेमर के वृक्ष के पास से आने से श्रीमूल, मूलगण तथा कनक=चम्पा, पलाश या धतूरा, उपल=पाषाण या रत्न अर्थात् उक्त वृक्षों से घिरे पाषाणों के पास से आने या वहाँ बैठने आदि के कारण कनकोपलसम्भूत मूलगण[1] नाम पड़ा होगा, ऐसा प्रतीत होता है।

उक्त लेखों में लेख नं० १०६ (सन् ४८८ ई०) से कनकोपलसम्भूतवृक्ष मूलगण के आचार्यों की गुरुपंक्ति इस प्रकार है—सिद्धनन्दि,[2] चितकाचार्य (जिनके पाँच सो शिष्य थे), नागदेव और जिननन्दि। जिननन्दि के लिए चालुक्य नरेश जयसिंह के एक सामन्त सेन्द्रक वंशी सामियार ने एक जैन मन्दिर बनवा कर, एक गाँव और कुछ जमीन दान में दी थी। इसी तरह ले० नं० १२१ में चन्द्रनन्दि, कुमारनन्दि, कीर्तिनन्दि और विमलचन्द्राचार्य के उल्लेख के सिवाय उसका संक्षिप्त वर्णन है। लेख में श्रीमूल मूलगण के अन्तर्गत एरेगित्तूर गण और पुलिकल गच्छ का उल्लेख है जो प्रतीत होता है कि कोई स्थानीय भेद रहा होगा। उक्त गणों के विमलचन्द्राचार्य के उपदेश से गङ्ग नरेश श्रीपुरुष के ५०वें वर्ष में उसके एक सामन्त निगुन्दराज परमगूल ने जैन मन्दिर बनवाकर सर्व करों से मुक्त करा कर एक गाँव दान में दिया था। इसी प्रकार पुन्नाग वृक्ष मूलगण के आचार्यों की परम्परा लेख नं० १२४ में इस प्रकार दी गई— श्री कित्याचार्य (चितकाचार्य ?), इनके बाद अनेकों आचार्य होने पर कूविलाचार्य, विजयकीर्ति और अर्ककीर्ति। अर्ककीर्ति के लिए राष्ट्रकूट नरेश प्रभूतवर्ष गोविन्द तृतीय ने अपने सामन्त चाकिराज की प्रार्थना पर सन् ८१२

---

१. लेख नं० १०६ में उसे काक्रोपलाम्नाय भी लिखा है। संभव है यह उसका दूसरा नाम हो या उसकी अवान्तर शाखा हो।

२. ये बड़े वैयाकरण थे, इनके मत का उल्लेख शाकटायन व्याकरण में किया गया है।

ई० में शिला ग्राम के जैन मन्दिर के प्रबन्ध के लिए जलमङ्गल नाम का गाँव दान में दिया था। उक्त मुनि ने चाकिराज के भानजे विमलादित्य की शनिबाधा को दूर किया था। यह लेख गोविन्द तृतीय के पुत्र अमोघवर्ष प्रथम के राज्यपद पाने के केवल एक वर्ष पहले का है। अमोघवर्ष के समय ही यापनीय संघ में शाकटायन व्याकरण के कर्ता आचार्य पाल्यकीर्ति (शाकटायन) हुए हैं। श्रद्धेय प्रेमी जी सम्भावना करते हैं कि पाल्यकीर्ति इस लेख के अर्ककीर्ति के या तो शिष्य थे या सधर्मा थे।[1]

यापनीय नन्दिसंघ के कनकोपलादि गणों का अस्तित्व बाद के लेखों से नहीं मालूम होता इसलिए यह कहना कठिन है कि उनका क्या हुआ। पर लेख नं० २५० (सन् ११०८) में पुन्नागवृक्ष मूलगण को हम मूल संघ के अन्तर्गत संमिलित पाते हैं। संभव है पीछे वह मूलसंघ द्वारा आत्मसात् कर लिया गया हो।

उपर्युक्त लेखों से कर्नाटक प्रान्त में यापनीय सम्प्रदाय का परिचय मिलता है। कर्नाटक के समान ही तामिल प्रान्त में भी यापनीय सम्प्रदाय का अच्छा प्रचार था, यह बात हमें लेख नं० १४३-१४४ से विदित होती है। लेख नं० १४३ में यापनीय सम्प्रदाय के नन्दि गच्छ (संघ) के कोटिमडुवगण का उल्लेख है और उसके आचार्यों—जिननन्दि, दिवाकर, श्रीमान्दिर देव (चीरदेव)—का नाम दिया गया है। चीरदेव कटकाभरण जिनालय के अधिष्ठाता थे। इस जिनालय के लिए पूर्वीय चालुक्यवंश के अम्मराज द्वितीय ने सेनापति (कटकराज) दुर्गराज की प्रार्थना पर उक्त संघ के लिए एक गांव दान में दिया था। इसी राजा के दूसरे एक लेख नं० १४४ में अड्डकलिगच्छ वलहारिगण के आचार्यों की गुरु पंक्ति इस प्रकार दी गई है—सकलचन्द्र, अय्यपोटि और अर्हनन्दि। अर्हनन्दि मुनि को अम्मराज द्वितीय ने सर्वलोकाश्रय जिनालय की भोजनशाला की मरम्मत कराने के लिए अत्तिलिनाण्डु प्रान्त के कलुचुम्बर्रु नामक ग्राम को दान में दिया था। यद्यपि उक्त लेख में स्पष्ट रूप से यापनीय या नन्दिसंघ का उल्लेख नहीं है पर अड्डकलिगच्छ वलहारि गण का अन्य संघों के साथ निर्देश न देख तथा एक

१. जैन साहित्य और इतिहास (द्वि० सं०) पृष्ठ १६७.

ही नरेश से उक्त दोनों लेखों को सम्बद्ध देख ऐसा प्रतीत होता है कि वलहारि गण और अड्डकलिगच्छ भी यापनीय सम्प्रदाय के थे। इस सम्बन्ध में हमें इसलिए और विश्वास करना पड़ता है कि लेख नं० १८१ (सन् १६४८ ई०) में केवल वलगार गण[1] (वलहारि गण) का उल्लेख है और नन्यन्त नाम वाले मेत्रनन्दि और केशवनन्दि (अष्टोपवासी) मुनियों का नाम दिया गया है। इस तरह किसी और संघ के साथ उल्लेख न देख तथा नन्यन्त नाम के कारण, उक्त गण को यापनीय मानने में हमें कोई आपत्ति नहीं दिखती।

इस सम्प्रदाय के नन्दिसंघ और वलहारि या वलगार गण का पीछे क्या हुआ सो तो मालूम नहीं क्योंकि इससे सम्बन्धित पीछे की शताब्दियों के कोई लेख नहीं मिले। हाँ, ११ वीं शताब्दी के (लेखों १८८ सन् १०५८ आदि) से नन्दि संघ को द्रविड गण या द्रविड संघ के साथ विशेष रूप से तथा १२ वीं शताब्दी के लेखों (२५५ प्रथम भाग ४७ सन् १११५ ई० आदि) से मूल संघ के साथ कतिपय लेखों में उल्लेख देख हम यह अनुमान करते हैं कि प्रारम्भ में द्रविड संघ को चलाने वाले या तो इस संघ के साधु थे या ११ वीं शताब्दी में नव संगठित द्रविड संघ ने इस संघ को अपना आधार बनाया था। पीछे मूल संघ का पुनर्गठन करने वाले साधु समूह ने इस संघ को अपने अन्तर्गत भी मान्यता प्रदान की। इसी तरह वलहारि या वलगार गण का उल्लेख ११वीं शताब्दी के उत्तरार्ध (२०८) से बलात्कार गण के रूप में मूल संघ से सम्बद्ध मिलता है। यह सम्भव है कि वलिहारि एवं वलगार शब्द का ही परिवर्तित एवं सुसंस्कृत रूप (बलात्कार[2]) हो और यापनीय संघ के उक्त गण को मूल संघ के संघटन कर्ताओं ने पीछे अधीन कर लिया हो।

---

१. वलगार शब्द स्थान विशेष का द्योतक है। उस स्थान से निकले साधु समुदाय का नाम वलगार गण पड़ा। वलगार नामक एक ग्राम भी था (मेडीवल जैनिज्म, पृ० २२७)।

२. बलात्कार शब्द स्थानविशेष का द्योतक नहीं प्रतीत होता। स्थान-विशेष के अर्थ में संभव है, वह शब्दानुकरण मात्र हो।

रट्ट वंशी नरेशों के लेखों से इस संप्रदाय के दो और नये गणों पता चलता है। वे हैं कारेय गण और कण्डूर गण। लेख नं० १३० से ज्ञात होता है कि रट्टवंश के प्रथम नरेश पृथ्वीराम के गुरु इन्द्रकीर्ति (गुणकीर्ति के शिष्य) मैलाप तीर्थ कारेय गण के थे। कारेय गण निश्चित रूप से यापनीय था यह बात हमें जैन एन्टीक्वेरी भाग ६, अंक २, पृष्ठ ६८, ६९ में अङ्कित दो लेखों (५३-५५) से मालूम होती है। लेख नं० १३० के सिवाय लेख नं० १८७ में भी कारेय गण का उल्लेख है और वहाँ मैलापतीर्थ के स्थान में मैलापान्वय लिखा है तथा गुरुपरम्परा लेख नं० १३० के गुणकीर्ति से प्रारम्भ की गई है। दोनों लेखों को मिलाकर कारेय गण मैलाप अन्वय की परम्परा इस प्रकार बनती है—मूल भट्टारक, गुणकीर्ति, इन्द्रकीर्ति, नागचन्द्र (गुणकीर्ति के शिष्य) जिनचन्द्र, शुभकीर्ति, देवकीर्ति। देवकीर्ति मुनि को किसी अमोघवर्ष नरेश के सामन्त ने जैन मन्दिर बनवाकर एक गाँव दान में दिया था। लेख में शक संवत् २३१ दिया गया है जो कि अशुद्ध प्रतीत होता है। कारेयगण का इस संग्रह के अन्य लेखों में और कोई उल्लेख नहीं है।

इस सम्प्रदाय के कण्डूर गण का अस्तित्व रट्ट नरेशों के दो लेखों नं० १६० और २०५ से विदित होता है। लेख नं० १६० (सन् ९८० ई०) में यापनीय कण्डूर गण की गुरुपरम्परा इस प्रकार है—देवचन्द्र, देवसिंह, रविचन्द्र अर्हणन्दि, शुभचन्द्र, मौनि देव और प्रभाचन्द्र देव। लेख नं० २०५ में कण्डूर गण के रविचन्द्र और अर्हणन्दि (१६०) का उल्लेख है। इस गण का ११ वीं शताब्दी में क्या हुआ सो तो मालूम नहीं पर मूल संघके ११ वीं शताब्दी के उत्तरार्ध से मिलने वाले लेखों (२०७, २०९ आदि) में क्राणूर गण[1] के रूप में उल्लेख देख ऐसा लगता है कि यापनीय कण्डूर गण ही मूल संघ द्वारा आत्मसात् कर लिया गया है।

इस तरह लेखगत प्रमाणों से हम देखते हैं कि यह संघ ४ थी से १० वीं

---

१. कण्डूर से काडूर और बाद में क्राणूर का प्रचलन हुआ, ऐसा प्रतीत होता है।

शताब्दी या उसके कुछ बाद तक अच्छा संगठित था इसमें कई प्रभावशाली गण थे जिन में से पुन्नागवृक्ष मूलगण, बलहारि गण और कण्डूर गण मूलसंघ में शामिल कर लिए गये और नन्दिसंघ को द्रविड संघ और पीछे मूलसंघ ने अपना लिया।

कूर्चकसंघ

कर्नाटक प्रान्त में ईस्वी पांचवीं शताब्दी या उसके पहले जैनों का एक सम्प्रदाय कूर्चक नाम से था और कदम्बवंशी राजाओं के लेखों (६८, ६९) से ज्ञात होता है कि वह निर्ग्रन्थ संघ, श्वेतपट (श्वेताम्बर) संघ एवं यापनीय संघ से पृथक् था। श्रद्धेय प्रेमी जी का अनुमान है कि यह कूर्चक जैन साधुओं का ऐसा सम्प्रदाय होना चाहिये जो दाढ़ी-मूंछ रखता हो। प्राचीनकाल में जटाधारी, शिखाधारी, मुड़िया, कूर्चक, वस्त्रधारी और नग्न आदि अनेक प्रकार के अजैन साधु थे। जान पड़ता है कि इसी तरह जैनों में भी साधुओं का ऐसा सम्प्रदाय था जो दाढ़ी-मूंछ (कूर्चक) रखने के कारण कूर्चक[1] कहलाता होगा। वरांगचरित्र के कर्ता जटाचार्य सिंहनन्दि सम्भव है ऐसे ही साधुओं में थे जिनकी जटाओं का वर्णन (जटाः प्रचलवृत्तयः) आचार्य जिनसेन ने अपने आदिपुराण में किया है।

कदम्बवंशी राजाओं के एक लेख (९९) में इस सम्प्रदाय का यापनीय और निर्ग्रन्थों के साथ उल्लेख है। लेख में 'यापनीयनिर्ग्रन्थकूर्चकानां' बहुवचनान्त पद सूचित करता है कि यापनीय, निर्ग्रन्थ और कूर्चक तीन पृथक् सम्प्रदाय थे। कूर्चक सम्प्रदाय के भी कई संघ थे इससे उक्त सम्प्रदाय का लेख नं० १०३ में बहुवचन (कूर्चकानान्) प्रयोग किया है। यदि लेख नं० ९९ के कूर्चक पद को बहुवचनान्त मान निर्ग्रन्थ पद को उसका विशेषण मान लें, तो कहना होगा कि वह संघ निर्ग्रन्थ अर्थात् दिगम्बर सम्प्रदाय का ही एक भेद था। कदम्ब मृगेशवर्मा ने अन्य दो जैन सम्प्रदायों के समय इसे भी भूमिदान देकर सत्कृत किया था। दूसरे एक लेख (१०३) में इस संघ के अवान्तर वारिषेणाचार्य संघ का उल्लेख

है। साथ में लिखा है कि उक्तसंघ के प्रधान मुनि चन्द्रक्षान्त को कदम्ब नरेश हरिवर्मा ने अपने पितृव्य शिवरथ के उपदेशसे सिंह सेनापति के पुत्र मृगेश द्वारा निर्मापित जैन मन्दिर की अष्टाह्निका पूजा के लिए तथा सर्व संघ के भोजन के लिए वसुन्तवाटक नामक ग्राम दान में दिया था। लेख नं० १०४ में अहरिष्टि नामक एक और श्रमण संघ का उल्लेख है जिसे सेन्द्रक सामन्त भानुशक्ति की प्रार्थना पर कदम्ब नरेश हरिवर्मा ने मरदे नामक ग्राम दान में दिया था। उक्त संघ के आचार्य धर्मनन्दि को यह दान में भेंट किया गया था ताकि वे अपने अधीन चैत्यालय की पूजा आदि का प्रबन्ध कर सकें और उस दान का उपयोग साधुओं के लिए भी कर सकें। यद्यपि इस लेख में कूर्चक सम्प्रदाय का उल्लेख नहीं है तथापि जान पड़ता है कि वारिषेणाचार्य संघ के समान ही अहरिष्टि श्रमण संघ भी कूर्चकों का एक भेद था।

द्राविड़ संघ

द्रविड़ देश में रहने वाले जैन साधु समुदाय का नाम द्राविड़ संघ है। इस संघ के अनेकों लेख प्रस्तुत संग्रह में हैं। इन लेखों में इसे द्रमिड़, द्रविड़, द्रविण, द्रविड, द्राविड, दविल, दरविल या तिवुल नाम से उल्लिखित किया गया है। नामगत ये सब भेद लेखक या उत्कीर्णक के कारण हुए प्रतीत होते हैं। द्रविड़ देश वास्तव में वर्तमान आन्ध्र और मद्रास प्रान्त का कुछ हिस्सा है जिसे सुविधा की दृष्टि से तामिल देश भी कह सकते हैं। इस देश में जैनधर्म पहुँचने का समय बहुत प्राचीन है। उस देश के प्राचीन साधु समुदाय का कोई संघ रहा होगा, उसका क्या नाम था यह हमें मालुम नहीं पर देवसेनाचार्य ने अपने दर्शनसार में अन्य संघों के उत्पत्ति के वर्णन में द्राविड़ संघ के सम्बन्ध में लिखा है कि पूज्यपाद के शिष्य वज्रनन्दि ने वि० सं० ५२६ में दक्षिण मथुरा (मदुरा) में द्राविड़संघ की स्थापना की। इस संघ को वहाँ जैनाभासों में गिनाया गया है और वज्रनन्दि के

१. जैन साहित्य और इतिहास (द्वितीय संस्करण) पृष्ठ ५५८-५६२

विषय में लिखा है कि उस दुष्ट ने कछार, खेत, वसदि और वाणिज्य से जीविका निर्वाह करते हुए शीतल जल से स्नान करते हुए प्रचुर पाप अर्जित किया।[1] इस कथन में सच्चाई कहां तक है यह तो हम नहीं कह सकते पर इन लेखों में इस संघ के अनेक प्रतिष्ठित और विद्वान् आचार्यों को देखते हुए ऐसा लगता है कि शायद संघीय विद्वेष के कारण मूलसंघ के उक्त आचार्य ने एक प्राचीन आचार्य के सम्बन्ध में ऐसी कटूक्ति कह दी हो।

इस संघ से सम्बन्धित इस संग्रह के सभी लेख ईस्वी १०–११वीं शताब्दी या उसके ही बाद के हैं। इससे पहले इसकी प्राचीनता का द्योतक शायद ही कोई लेख मिला हो, तथा दसवीं शताब्दी से पहले का ऐसा कोई ग्रन्थ भी नहीं जो इस संघ के इतिहास पर प्रकाश डाले।

इस संघ के प्रायः सभी लेख कोङ्गाल्ववंशी, शान्तरवंशी तथा होय्सल-वंशी राजाओं के राज्यकाल के हैं जिससे ज्ञात होता है कि उन वंशों के नरेशों का इस संघ को संरक्षण प्राप्त था। अधिकांश लेख होय्सल नरेशों के हैं। इन लेखों से यह भी ज्ञात होता है कि इस संघ के आचार्यों ने पद्मावती देवी की पूजा एवं प्रतिष्ठा के प्रसार में बड़ा योग दिया था। इस संघ के कई लेखों में शान्तर और होय्सलवंश के आदि राजाओं द्वारा राज्य सत्ता पाने में पद्मावती के चमत्कार या प्रभाव की सहायता दिखायी गई है। लेखों से यह भी ज्ञात होता है कि इस संघ के साधु वसदि या जैन मन्दिरों में रहते थे। उनका जीर्णोद्धार और ऋषियों को आहार दान, तथा भूमि, जागीर आदि का प्रबन्ध करते थे।

---

१. सिरिपुज्जपादसीसो दाविडसंघस्स कारगो दुट्ठो।
णामेण वज्जणंदी पाहुडवेदी महासत्थो॥ २५॥
पञ्चसए छव्वीसे विक्कमरायस्स मरणपत्तस्स।
दक्खिणमहुरा जादो दाविडसंघो महामोहो॥ २६॥
कच्छं खेत्तं वसहिं वाणिज्जं कारिऊण जीवन्तो।
ण्हंतो सीयलनीरे पावं पउरं च संचेदि॥ २७॥

इस संघ के आदि एवं प्राचीन कुछ लेख होय्सलों के उत्पत्ति स्थान अङ्गदि (सोसेदूर) से ही प्राप्त हुए हैं। इस स्थान के एक लेख नं० १६६ (सन् ६६० के लगभग) में इस संघ को द्रविड संघ कोण्डकुन्दान्वय, तथा दूसरे लेख नं० १७८ (सन् १०४० ई० ?) में मूलसंघ द्रविडान्वय लिखा है। पर ई० ११ वीं शताब्दी के उत्तरार्ध के लेख नं० १८८,१८६,१६०,१६२,२०२, २१४,२१५,२१६ और २२६ में इसका द्रविड़ गण के रूप में नन्दिसंघ इरुङ्गलान्वय या अरुङ्गलान्वय के साथ उल्लेख किया गया है। इन निर्देशों से यह अनुमान होता है कि प्रारम्भ में नव संगठित द्रविड़ संघ ने अपना आधार या तो मूलसंघ को या कुन्दकुन्दान्वय को बनाया होगा पर पीछे यापनीय सम्प्रदाय के विशेष प्रभावशाली नन्दिसंघ में इस सम्प्रदाय ने अपना व्यावहारिक रूप पाने के लिए उससे विशेष सम्बन्ध रखा या द्रविड़ गण के रूप में उक्त संघ के अन्तर्गत हो गया। पीछे यह द्रविड़ गण इतना प्रभावशाली हुआ कि उसे ही संघ का रूप दे दिया गया और साथ में कुछ लेखों (२१३-२१५) में नन्दिसंघ को नन्दिगण के रूप में निर्दिष्ट किया गया पर पीछे उसको उसी रूप (नन्दिसंघ) में उल्लेख किया गया है। दर्शनसार (१० वीं शता०) में द्रविड़ संघ को यापनीयों के साथ जो जैनाभास कहा गया है, वह संभव है, इस ओर ही संकेत कर रहा है।

होय्सलों के उत्पत्तिस्थान अङ्गदि (सोसेवूर) से इस संघ के आदि एवं प्राचीन लेखों की प्राप्ति से हम अनुमान करते हैं कि इस संघ के प्रारम्भिक आचार्यों ने जैन धर्म संरक्षक होय्सल नरेशों को ऊपर उठाने में अवश्य सहायता की होगी, अथवा प्रगतिशील दोनों–राज्य एवं संघ–ने एक दूसरे को बढ़ाने की कोशिश की होगी[१]। होय्सल वंश के अनेकों नरेश और सेनापति इस संघ के

१. बहुत संभव है कि होय्सल वंश के समुद्धारक सुदत्तमुनि (४५७) या वर्धमान मुनि (६६७) लेख नं० १६६ में आये त्रिकाल मौनि देव हों या विमलचन्द्राचार्य के सधर्मा कोई और मुनि हों।

भक्त थे हालां कि उन्होंने अपनी भक्ति एवं आदर दूसरे जैन संघों के प्रति भी प्रदर्शित किया है। धार्मिक उदारता सचमुच में उस युग की देन थी।

इसके बाद इस नवीन संघ के एक प्रमुख आचार्य के रूप में वज्रपाणि पण्डित का नाम आता है। लेख नं० १७८ में इन्हें द्रविड़ान्वय मूलसंघ क तथा नं० १८५ में सूरस्थ गण का लिखा है। पिछले लेख में उनकी एक गृहस्थ शिष्या के दान का उल्लेख है। लेख नं० १७८ की शुरू की पंक्तियां भग्न हैं पर 'तर्कान्चालित' आदि विशेषणों से प्रतीत होता है कि थे बड़े तार्किक थे ये होय्सल नरेश राचमल्ल भूपाल (नृपकाम) के गुरु थे और इन्होंने होय्सलों के उत्पत्तिस्थान सोसेवूर में अपना जीवन बिता कर संन्यास मरण किया था लेख में यद्यपि काल निर्देश नहीं है फिर भी उनका समय द्रविड़ संघ का प्रथम साहित्यिक उल्लेख करने वाले ग्रन्थ दर्शनसार और होय्सल नृपकाल के समय के आसपास होना चाहिये। देवसेनाचार्य के दर्शनसार में जिस वज्रनन्दि क वर्णन किया गया है और उनके द्वारा प्रवृत्त जिस शिथिलाचार की ओर संकेत किया गया है, उससे प्रतीत होता है कि इस संघ की स्थापना देवसेन के समय (१० वीं शता०) या उससे कुछ पूर्व हुई है। वि० सं० ५२६ के जिस वज्रनन्दि को ग्रन्थकर्ता ने शिथिलाचार फैलाने का दोषी ठहराया है, उसका उल्लेख किसी लेख या उससे पूर्व किसी ग्रन्थ में नहीं मिलता। फिर जिन कटुशब्दों द्वारा एक संघ के अनुयायी द्वारा दूसरे संघ के प्रतिष्ठापक आचार्य की भर्त्सना की गई इससे प्रतीत होता है कि वे समकालीन या कुछ ही समय पूर्ववर्ती रहे होंगे। संभव है इस लेख के वज्रपाणि ही वज्रनन्दि हों, पर इस अनुमान की पुष्टि के लिए अभी और प्रमाणों की आवश्यकता है।

वज्रपाणि पण्डित की आगे पीछे की गुरुपरम्परा का वर्णन हमें किसी लेख से प्राप्त नहीं हुआ। इसके बाद इस संघ के लेखों में नन्दिसंघ के आचार्यों की परम्परा चलने लगती है। इस संघ के अनेकों ऐसे लेख हैं जो कि पट्टावली कहे जा सकते हैं पर उनमें गुरुपरम्परा का क्रम व्यवस्थित न होने से कम से कम प्राचीन आचार्यों के क्रम पर विश्वास नहीं किया जा सकता। अनेकों लेखों

(२१३-२१४ आदि) में वर्धमान, एवं गौतमस्वामी के उल्लेख पूर्वक कतिपय प्रसिद्ध आचार्यों का निर्देश किया गया है—जैसे कोण्डकुन्दाचार्य, भद्रबाहु, समन्तभद्र-स्वामी, सिंहनन्दि, अकलंक देव, वज्रनन्दि, पूज्यपाद स्वामी आदि। इन लेखों में यह दिखाने का प्रयत्न किया गया है कि प्रायः सभी प्रतिष्ठित प्राचीन आचार्य द्रविड़ संघ के नन्दिसंघ के अन्तर्गत थे। हम पहले संभावना कर चुके हैं कि नन्दि संघ द्रविड़ संघ में यापनीय संघ से आया है। नन्दिसंघ की एक प्राचीन प्राकृत पट्टावली भी है[1] जिसमें भगवान् महावीर के बाद ६८३ वर्षों तक की परम्परा दी गई है। उसके बाद के क्रम का उल्लेख करने वाली कोई प्रामाणिक पट्टावली उपलब्ध नहीं होती। संभव है द्रविड़ संघ में आकर नन्दिसंघ के पश्चात्कालीन आचार्यों ने अपनी स्मृति से कुछ परम्परा को सुरक्षित रखने के लिए लेखों में उक्त आचार्यों का निर्देश किया हो। यह निर्देश सूचित करता है कि उक्त आचार्य उस नन्दिसंघ के अन्तर्गत थे जो कि प्रारम्भिक शताब्दियों में यापनीय था।

इस संघ के अन्तर्गत नन्दिसंघ के साथ प्रत्येक लेख में अरुङ्गलान्वय का उल्लेख मिलता है। अरुङ्गलान्वय किसी स्थानविशेष की अपेक्षा सूचित करता है। अरुङ्गल नाम का स्थान भी तामिल प्रान्त के गुडियपत्तन तालुका में है जो कि एक प्राचीन जैन स्थान था। हम यापनीय संघ के वर्णन में देख चुके हैं कि तामिल प्रान्त में यापनीय नन्दिसंघ का अस्तित्व पूर्वीय चालुक्यों के राज्य में था। द्रविड़ संघ, नन्दिसंघ, अरुङ्गलान्वय इन तीनों शब्दों का एकत्र प्रयोग हमें निःसन्देह सूचित करता है कि वह तामिल प्रान्त का नन्दिसंघ था जो कि अरुङ्गल स्थान से उद्भूत हुआ था। इससे अब हमें यह कहने में संकोच न होना चाहिये कि तामिल प्रान्त के यापनीयों के नन्दिसंघ से ही द्रविड़ संघ के नन्दिसंघ को उत्तराधिकार मिला था।

---

१. षट्खंडागम, पुस्तक १, पृ० २४-२७। संभव है यह पट्टावली प्राचीन यापनीय नन्दिसंघ की हो।

११-१२ वीं शताब्दी में इस संघ के मुनियों की गद्दियाँ कोङ्गाल्व राज्य के मुल्लूर तथा शान्तर राजाओं की राजधानी हुम्मच में थीं। हुम्मच से प्राप्त लेख नं० २१३-२१६ में इस संघ के अनेकों आचार्यों का परिचय मिलता है। इनमें श्रेयांस पण्डित, उनके सधर्मा कमलभद्र और वादीभसिंह अजितसेन पण्डित के पूर्ववर्ती और समकालीन आचार्यों की परम्परा दी गई है। जो इस प्रकार है:—
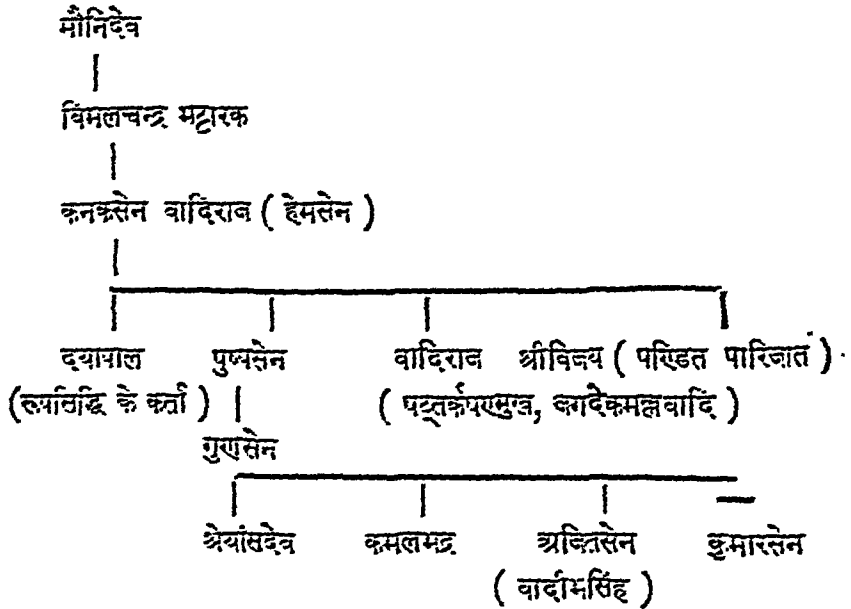
इनमें मौनिदेव और विमलचन्द्र भट्टारक वे ही मालुम होते हैं जिनका उल्लेख अंगदि से प्राप्त लेख नं० १६६ (लगभग ९९० ई०) में द्रविड़ संघ कुन्दकुन्दान्वय के आचार्य के रूप में किया गया गया है। शायद ये ही द्रविड़ संघ के आदि प्रवर्तक आचार्य रहे हों। कनकसेन वादिराज का दूसरा नाम लेख नं० २१३ और २१५ में हेमसेन दिया गया है। संस्कृत में कनक और हेम का अर्थ भी एक होता है। इन्हें श्रीविजय, वादिराज, दयापाल आदि के गुरु के रूप में कहा गया है। वादिराज की उपाधियाँ षट्तर्कषण्मुख और

जगदेकमल्लवादी थी। वादिराज भी हमें एक उपाधि मालुम होती है, क्योंकि लेख नं० ३४७ में इनका अपरनाम श्री वर्धमान जगदेकमल्ल वादिराज दिया गया है। इनके सधर्मा रूपसिद्धि नामक व्याकरण ग्रन्थ के कर्ता दयापाल थे। मल्लिषेण प्रशस्ति (२९०, प्रथम भाग ५४) में उपर्युक्त पट्टावली के अनेकों आचार्यों का उल्लेख तथा प्रशंसावाक्य दिये गये हैं। उसमें वादिराज के गुरु का नाम मतिसागर दिया गया है और दयापाल को उनका सधर्मा माना गया है। उसी प्रशस्ति के ३५ वें पद्य में मतिसागर की प्रशंसा के बाद ३६-३७वें पद्य में हेमसेन मुनि की प्रशंसा की गई है, पर दोनों आचार्यों का कोई सम्बन्ध नहीं बतलाया गया। हेमसेन तो निःसन्देह हुम्मच के उक्त दोनों लेखों के कनकसेन वादिराज (हेमसेन) ही हैं। पर वादिराज के गुरु मतिसागर भी थे, यह बात हमें उनकी षट्तर्कषण्मुख प्रतिभा के परिचायक उनके न्यायशास्त्र के ग्रन्थ न्यायविनिश्चयविवरण की प्रशस्ति से मालुम होती है। लेखों से यह सिद्ध होता है कि मतिसागर और हेमसेन (कनकसेन) दो व्यक्ति थे। संभव है एक तो वादिराज के दीक्षागुरु और दूसरे विद्यागुरु रहे हों। हमारे इस आशय का समर्थन न्यायविनिश्चयविवरण की प्रशस्ति के दूसरे पद्य से भी होता है जहाँ श्लेषात्मक ढंग से जिनेन्द्र की स्तुति करते हुए वादिराज ने 'सन्मतिसागरकनकसेनाराध्यम्' लिखा है। वादिराज बड़े ही विद्वान्, लेखक एवं वादी आचार्य थे। इन्हें चालुक्य नरेश जयसिंह तृतीय जगदेकमल्ल (सन् १०१६-१०४४) ने जगदेकमल्लवादि नामक उपाधि दी थी (२९० पद्य ४२, प्रथम भाग ५४)। लेख नं० २१५ में इन्हें अकलंक, धर्मकीर्ति और अक्षपाद के प्रतिनिधिरूप माना गया है।

वादिराज के अन्य सधर्माओं में पुष्पसेन और श्रीविजय पण्डित थे। पुष्पसेन हमें वे ही प्रतीत होते हैं जिनकी पादुकाओं की स्थापना का स्मारक लेख नं० १७७ (सन् १०२० के लगभग) में है। इनके शिष्य का नाम गुणसेन था जिनके कई लेख मुल्लूर से प्राप्त हुए हैं। ये कोङ्गाल्व नरेश राजेन्द्र चोल के कुलगुरु थे (१८८-१९२)। लेख नं० २०१ में इन्हें पोय्सलाचारि लिखा

है जिससे ज्ञात होता है कि इनका प्रभाव होय्सल राजाओं पर भी था। लेख नं० २०२ (सन् १०६४ ई०) इनके समाधिमरण का स्मारक है और उन्हें द्रविल गण, नन्दिसंघ, अरुङ्गलान्वय का नाथ तथा अनेक शास्त्रों का वेत्ता लिखा है। लेख नं० १७७ और लेख नं० २०२ में अंकित वर्षों से ज्ञात होता है कि वे ३४ वर्षों (१०३० ई०–१०६४ ई०) तक बराबर जिनशासन की प्रभावना करते रहे। हुम्मच के लेख नं० २१३ में इनका नाम वादिराज के बाद की पीढ़ी के आचार्यों में दिया गया है और मल्लिषेण प्रशस्ति के पद्य ५३ में इनकी प्रशंसा की गयी है।

श्रीविजय पण्डित के सम्बन्ध में लेख नं० २१३ से विदित होता है कि वे अनेक प्रतिष्ठित आचार्यों के गुरु थे। उनका दूसरा नाम वोडेयदेव या ओडेयदेव था जो कि तिर्यंगुडि के निडुम्बरे तीर्थ, अरुङ्गलान्वय, नन्दिगण के अधीश्वर थे। इन्हें तामिल प्रान्त (तामिल्लरु) से सम्बन्धित बताया गया है (२१४) पर इनका अधिक समय हुम्मच में बीता था ऐसा उक्त स्थान से प्राप्त लेखों से मालुम होता है। इनके गृहस्थ शिष्यों में नन्नि शान्तर एवं प्रसिद्ध जैन महिला चट्टलदेवी प्रमुख थे।

श्रीविजय के शिष्यों में श्रेयांसदेव को लेख नं० २१३ में उर्वीतिलक जिनालय का प्रतिष्ठापक लिखा है। दूसरे शिष्य कमलभद्र लेख नं० २१४ और २१६ के अनुसार भुजबल शान्तर आदि तथा चट्टल देवी द्वारा सम्मानित थे। तीसरे शिष्य अजितसेन,[1] बड़े ही विद्वान् थे। उनकी कई उपाधियाँ थीं—जैसे शब्द-

---

१. कुछ विद्वान् इन अजितसेन वादीभसिंह का गद्यचिन्तामणि और क्षत्रचूडामणि के कर्ता वादीभसिंह अजितसेन से साम्य स्थापित करते हैं, पर यह ठीक नहीं क्योंकि ग्रन्थकर्ता अजितसेन के गुरु का नाम पुष्पसेन था। इस लेख के अजितसेन के गुरु सधर्मा एक पुष्पसेन अवश्य थे पर वे ग्रन्थकर्ता अजितसेन के गुरु थे यह लेखो से नहीं ज्ञात होता।

चतुर्मुख, तार्किकचक्रवर्ती एवं वादीभसिंह (२१४)। लेख नं० २४८ में इन्हें वादिघरट्ट, तार्किक चक्रवर्ती एवं वादीभपञ्चानन कहा गया है। ये विक्रम शान्तर द्वारा पूजित थे। उसने पञ्चबसदि जिनालय के लिए इन्हें ग्रामादि भेंट में दिये थे (२२६)। पीछे विक्रम शान्तर के पुत्र त्रिभुवनमल्ल शान्तर ने अपनी दादी की स्मृति में इन्हीं गुरु का स्मरण कर एक मन्दिर का शिलान्यास किया था (२४८)। इन मुनि के अन्तिम समय का स्मारक लेख नं० १३२ है जिसका समय लगभग १०६० ई० दिया गया है। लेख नं० २१४ में इनके सधर्मा मुनि कुमारसेन का नाम दिया गया है जो कि वैद्यगजकेशरी थे। लेख नं० २१३ में इनके समकालीन शान्तिदेव और दयापाल नामक दो मुनियों का उल्लेख है। शान्तिदेव के सम्बन्ध में मल्लिषेण प्रशस्ति में लिखा है कि इनके पवित्र पादकमलों की पूजा होय्सल विनयादित्य द्वितीय (सन् १०४७ से, ११०० ई०) करता था। लेख नं० २०० से भी यह बात समर्थित होती है। इस लेख के अनुसार सन् १०६२ में इनकी मृत्यु के उपलक्ष्य में एक स्मारक खड़ा किया गया था। दयापाल के सम्बन्ध में मल्लिषेण प्रशस्ति में केवल प्रशंसा पद दिये गये हैं।

कुन्दकुन्द के लेखों से प्राप्त इतिवृत्त के बाद इस संग्रह के अनेकों लेखों से[1] जो संघ की आचार्यपरम्परा ज्ञात होती है वह इस प्रकार है—

१—इस संग्रह के अन्य लेख हैं—२६४, २६५, २७४, २८७, २८८, २९० ३०५, ३१६, ३२६, ३२७, ३४७, ३५१, ३७३, ३७५, ३७६, ३८०, ४१०, ४२५ और ४९६.
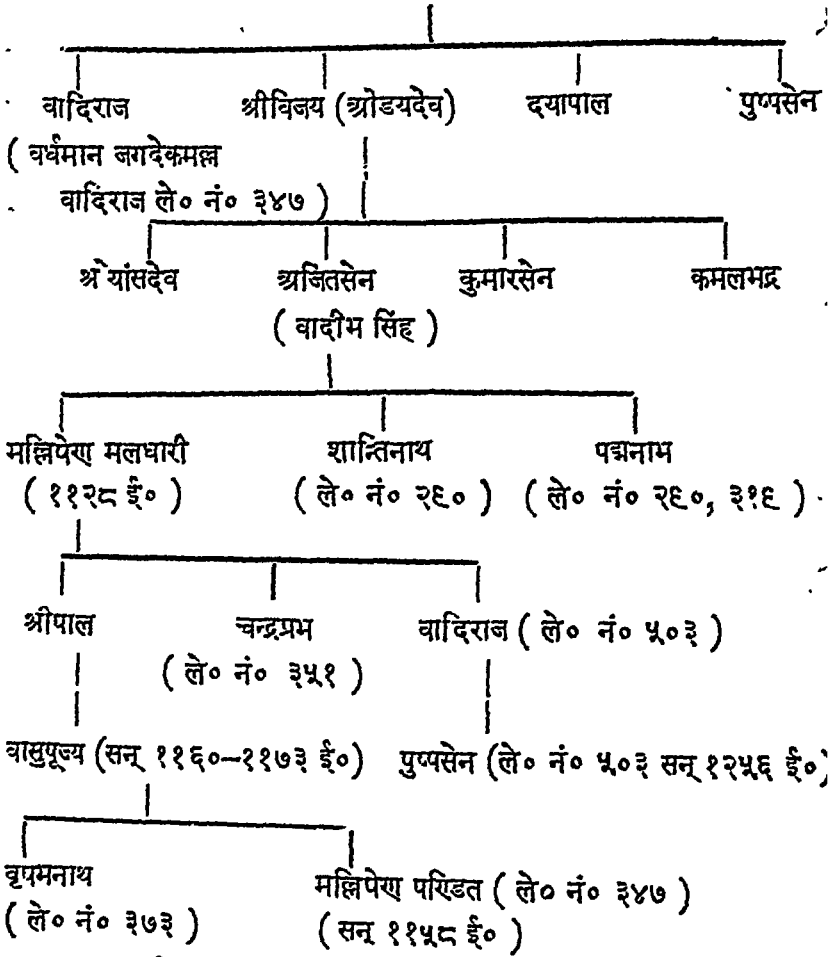
मूलसंघ के गण, गच्छ एवं अन्वय

हम पहले लिख चुके हैं कि यापनीय और द्रविड संघ के वर्णन के बाद मूलसंघ के गण गच्छादि का लेखों से प्राप्त होने वाले वाला परिचय देंगे। इसके सम्बन्ध में ११ वीं शताब्दी के आचार्य इन्द्रनन्दि के श्रुतावतार में और उसके

अनुकरण पर पीछे १४ वीं शताब्दी में लिखे गये लेखों (५६६ प्रथम भा० १०५ और ६२५ प्रथम भाग० १०८) में लिखा है कि अर्हद्बलि आचार्य ने आपसी द्वेष को घटाने के लिए सेन, नन्दि, देव और सिंह नाम से चार संघों की रचना की थी अथवा अकलंक देव के स्वर्गवास के बाद संघ, देश भेद से उक्त चार भेदों में विभाजित हो गया, इनमें कोई चरित्रभेद नहीं है आदि, पर ऊपर जैन संघ के विकासक्रम को दिखाते हुए हमें यह लगता है कि यह बहुत कुछ मूलसंघ कुन्दकुन्दान्वय को नव संगठित करने वाले आचार्यों की कल्पना थी इसके पीछे ऐतिहासिक आधार कम है।

देवगण—लेखों के निर्देशानुसार मूलसंघ के अन्य गणों से देवगण कुछ प्राचीन है यह हम कह आये हैं। इस गण का अस्तित्व लक्ष्मेश्वर से प्राप्त चार लेखों (१११,११३,११४ और १४६) से तथा कडवन्ति से प्राप्त ११ वीं शताब्दी के एक लेख (१६३) से मालुम होता है। इसके पश्चात् और लेखों में इसका उल्लेख नहीं मिलता। देवगण यह नाम कैसे पड़ा यह तो तत्कालीन लेखों से ज्ञात नहीं होता पर उक्त गण के सभी आचार्यों के नाम देवान्त देख यह लगता है कि इससे ही देवगण नाम पड़ा हो। आचार्यों के नाम इस प्रकार हैं—पूज्यपाद, उदयदेव, (११३) रामदेव, जयदेव, विजयदेव (११४) एकदेव, जयदेव (१४६) अङ्कदेव, महीदेव (१६३)। इनमें पूज्यपाद को कुछ इतिहासज्ञ अकलंकदेव पूज्यपाद मानते हैं। यदि यह सत्य है तो कहना होगा कि अकलंकदेव ही इस गण के प्रतिष्ठापक थे।

सेनगण—देवगण के समान सेनगण भी प्राचीन है। एक दृष्टि से तो उससे भी प्राचीन है। यद्यपि लेखों में इसका सर्वप्रथम उल्लेख मूलगुण्ड से प्राप्त लेख नं० १३७ (सन् ९०३) में हुआ है पर इसके पहले नवमी शताब्दी के उत्तरार्ध (सन् ८९८ के पहले) में उत्तरपुराण के रचयिता गुणभद्र ने अपने गुरु जिनसेन और दादागुरु वीरसेन को सेनान्वय का कहा है। पर जिनसेन

और वीरसेन ने जयधवला और धवला टीका में अपने वंश को पञ्चस्तूपान्वय[1] लिखा है। यह पञ्चस्तूपान्वय ईसा की पांचवीं शताब्दी में निर्ग्रन्थ सम्प्रदाय के साधुओं का एक संघ था यह बात पहाड़पुर (जिला राजशाही, बंगाल) से प्राप्त एक लेख से मालूम होती है[2]। पञ्चस्तूपान्वय का सेनान्वय के रूप में सर्वप्रथम उल्लेख गुणभद्र ने, संभव है अपने गुरुओं के सेनान्त नाम को देखते हुए किया है। इससे हम कह सकते हैं कि गुणभद्र के गुरु जिनसेनाचार्य इस गण के आदि आचार्य थे।

मूलगुण्ड के लेख नं० १३७ में सेनगण को सेनान्वय लिखा है और किसी आसार्य नाम के व्यक्ति द्वारा उक्त वंश के कनकसेन मुनि को एक खेत दान देने का उल्लेख है। लेख में कनकसेन को वीरसेन का शिष्य लिखा है और वीरसेन के आगे दो नाम—पूज्यपाद और कुमारसेन–दिये हैं पर उनसे वीरसेन का संबन्ध नहीं बतलाया। हमारी समझ में पूज्यपाद देवगण के अकलंक देव पूज्यपाद थे जिनकी कृतियों का मर्म वीरसेन स्वामी ने अच्छी तरह समझा था और काल की दृष्टि से भी वीरसेन (सातवीं का उत्तरार्ध और आठवीं का पूर्वार्ध) अकलंकदेव (सातवीं शताब्दी) से दूर नहीं है। कुमारसेन का उल्लेख द्वितीय जिनसेन (पुन्नाटसंघीय) ने अपने हरिवंशपुराण में वीरसेन गुरु से पहले किया है और उनके शिष्य के रूप में प्रभाचन्द्राचार्य को लिखा है।

इसके बाद इस गण के लेखों में सेनगण के साथ पोगरि गच्छ का उल्लेख है जो कि १३ वीं शताब्दी तक के लेखों में मिलता है। इन लेखों में जिस तरह आचार्यों का निर्देश है। उससे इस वंश की कोई गुरुपरम्परा नहीं निर्मित की जा सकती। लेख नं० १८६ (सन् १०५४ ई०) २१७ (१०७७ई०) तथा ५११ (सन् १२७१ ई०) में एक महासेन नामक मुनि का नाम आता है।

---

१. पञ्चस्तूपान्वय का मूल कुछ विद्वान् पूर्वीय बंगाल से और कुछ मथुरा के पञ्चस्तूपों से, जिनका उल्लेख हरिषेण के कथाकोष में है, मानते हैं।

२. जैन सिद्धान्तभास्कर भाग १६, किरण १, पृष्ठ १–६।

उन्हें ब्रह्मसेन का प्रशिष्य और आर्यसेन का शिष्य लिखा है तथा लेख नं० २१७ में गुणभद्र के सहधर्मी के रूप में लिखा है और उनके किसी विद्वान् शिष्य धर्मसेन का नाम दिया है पर लेख नं० ५११ में वीरसेन, जिनसेन और गुणभद्र का उल्लेख कर बिना कोई सम्बन्ध बताये महासेन और उसके बाद उनके शिष्य पद्मसेन का नाम है। इन सबसे यह मालुम होता है कि तीनों लेखों के महासेन जुदे २ व्यक्ति थे। हिरे आवलि से इस गण के पाँच लेख प्राप्त हुए हैं जो कि १२ वीं से १५ वीं शताब्दी के बीच के हैं। जिनसे प्रतीत होता है कि यह स्थान इस गण के साधुओं का प्रमुख केन्द्र रहा है। लेख नं० ५३८ (१३ वीं शताब्दी का उत्तरार्ध) में सेनगण के साथ कुन्दकुन्दान्वय जुड़ा है और किन्हीं कनकसेन का उल्लेख है, तथा लेख नं० ६१४ (सन् १४२१ ई०) में इस गण के मुनिभद्र स्वामी का नाम दिया गया है। संभव है १५ वीं शताब्दी से इस गण का प्रभाव क्षीण होने लगा था।

देशिय गण और कोण्डकुन्दान्वयः—देशिय गण इस संग्रह के अनेकों लेखों में देशिय, देशिक, देशिग, देसिय, देसिग एवं महादेशिगण नाम से कहा गया है। इन नामों से ऐसा लगता है कि देशिय शब्द देश शब्द से निकला है। देश का साधारण अर्थ प्रान्त होता है। दक्षिण भारत में कन्नड प्रान्त के उस हिस्से को, जो कि पश्चिमी घाट के उच्चभूमि भाग (बालाघाट) और गोदावरी नदी के बीच में है, एक समय देश नाम से कहते थे। वहाँ के ब्राह्मण अब भी देशस्थ ब्राह्मण कहलाते हैं। संभव है कि देश नामक प्रान्त में में रहने वाले साधु समुदाय को शुरू में देशिय कहा जाता हो और पीछे वही एक प्रमुख गण के रूप में परिणत हुआ हो[1]।

प्रचलित कुन्दकुन्दान्वय का लेखगत प्राचीन नाम कोण्डकुन्दान्वय है। जिसका अर्थ होता है कोण्डकुन्दपुर से निकला मुनि वंश जैसे अरुङ्गलान्वय, ?ऊरान्वय कित्तूरान्वय आदि। पर जहाँ वह किसी गण या संघ के विशेषण रूप में

१—देशीगण, जैन एन्टीक्वेरी, भाग १ अं० ३, पृष्ठ ६३-६६.

प्रयुक्त हुआ है वहाँ उस परम्परा से सम्बद्ध गण या संघ समझना चाहिये। कुछ विद्वान् साहित्यिक आधारों के बल पर सिद्ध करते हैं कि मूलसंघ और कोण्ड-कुन्दान्वय पर्यायवाची हैं, आचार्य कुन्दकुन्द ही मूलसंघ के आदि प्रवर्तक हैं आदि, पर यह बात ११ वीं शताब्दी के पहले किसी लेख से सिद्ध नहीं होती। मूलसंघ कोण्डकुन्दान्वय का एक साथ सर्व प्रथम प्रयोग लेख नं० १८० (लगभग सन् १०४४ ई०) में हुआ है। हाँ, कोण्डकुन्दान्वय का स्वतन्त्र प्रयोग ८-९ वीं शताब्दी के लेख नं० १२२, १२३ और १३२ में देखा गया है। लेख नं० १२३ (सन् ८०२ ई०) में कोण्डकुन्दान्वय को गण भी माना गया है। लेख नं० १३२ में इस अन्वय के एक आचार्य मौनि सिद्धान्तदेव भटार का नाम दिया गया है। लेख नं० १२२-१२३ में इस वंश के तीन आचार्यों-तोरणाचार्य, पुष्पनन्दि और प्रभाचन्द्र-के नाम दिये गये हैं। लेख नं० १२२ से ज्ञात होता है कि गङ्गनरेश मारसिंह प्रथम के प्रभावक सेनापति श्रीविजय ने मण्णे में एक विशाल जिनालय बनाकर प्रभाचन्द्र मुनि की वसदि के लिये एक गाँव और कुछ भूमियाँ दान में दीं। इसी तरह लेख नं० १२३ से ज्ञात होता है कि उक्त श्रीविजय द्वारा निर्मापित जिनभवन के लिए प्रभाचन्द्र मुनि के शिष्य वप्पय्य ने एक गाँव दान में दिया। पुष्पनन्दि के शिष्य प्रभाचन्द्र कौन थे, यह अन्य आधारों से पता नहीं लगता। लेख में इन्हें चन्द्रमा के समान निर्मल चारित्र वाला लिखा है। पुष्पनन्दि को गणाग्रणी (१२२) और उपशम भावना से कल्मष हीन (१२३) तथा इनके गुरु तोरणाचार्य को कोण्डकुन्दान्वय में उत्पन्न तथा शाल्मलि ग्राम का निवासी बतलाया गया है। लेख नं० १२२ में इनके सम्बन्ध में लिखा है कि उन्होंने अज्ञान अन्धकार को नष्ट कर सत्पथ में लोगों को स्थापित किया था तथा अपने तेज से पृथ्वी को प्रकाशित करते हुए वे सूर्य के समान सुशोभित थे।

कोण्डकुन्दान्वय के साथ देशीय गण का सर्वप्रथम प्रयोग लेख नं० १५० (सन् ९३१ ई०) में हुआ है। कुछ विद्वान् मर्करा के ताम्रपत्रों (९५) को प्राचीन (सन् ४६६ ई०) मानकर देशीयगण कोण्डकुन्दान्वय का अस्तित्व एवं

उल्लेख बहुत प्राचीन मानते हैं पर परीक्षण करने पर उक्त लेख बनावटी सिद्ध होता है[१], तथा देशीयगण की जो परंपरा वहाँ दी गई है वह लेख नं० १५० के बाद की मालुम होती है।

---

१. मर्करा के ताम्रपत्र सन् १८७२ में इण्डियन एण्टीक्वेरी भाग १, पृष्ठ ३६३-३६५ में स्व० बी० एल० राइस महोदय ने मूल तथा अनुवाद के साथ प्रकाशित करवाये थे। ये ताम्रपत्र ८ इञ्च लंबे तथा ३.२ इञ्च चौड़े हैं पर मोटाई में एक से नहीं। इनमें गङ्गवंशी नरेश कोंगुणि प्रथम से लेकर अविनीत तक की वंशावली दी गई है और लिखा है कि अकालवर्ष पृथुवीवल्लभ के मंत्री (जिसका नाम नहीं दिया गया) ने (किसी) संवत् ३८८ के माघ महीने की शुक्ल ५, सोमवार, स्वातिनक्षत्र में बदणेगुप्पे नामक ग्राम तलवन नगर के श्रीविजय जिनालय के लिए देशिगण, कोण्डकुन्द अन्वय के चन्द्रणन्दि भट्टार (जिनकी गुरुपरम्परा लेख में दी गई है) को भेंट में दिया।

लेख का परिचय देते हुए बर्जेस महोदय ने लेख के संवत् को विल्सन सा० के 'मैकेन्जी कलेक्शन' के आधार पर शक संवत् माना है पर ज्योतिष शास्त्र के आधार पर उक्त संवत् के दिन और नक्षत्र को ठीक नहीं बतलाया। तदनुसार सोमवार, स्वाति नक्षत्र के स्थान में वहाँ बुधवार उत्तरा भाद्रपद नक्षत्र होना चाहिए था।

दूसरी एक और बात कि, लेख में आगे 'अविनीत महाधिराजेन दत्तेन' आदि शब्द लिखकर अविनीत और अकालवर्ष के मंत्री के बीच क्या संबन्ध था यह स्पष्ट नहीं किया गया।

लेख की आगे की पंक्तियों से द्योतित होता है कि 'उसने (मंत्री ने) आस पास के ६ गाँवों पर आतङ्क फैलाकर उन पर अधिकार करके सन्धि द्वारा उयम्बलि एवं तलवनपुर को लेकर तथा पिरिकेरे में राजकीय अधिकारों को संचालित कर (राजमान अनुमोदन) एक मनोहर ग्राम 'बदणेगुप्पे' दान में दिया था' (अनुवाद इ० ए० भाग, पृष्ठ ३६५)। उपर्युक्त

वर्णन हमें बलात् राष्ट्रकूट वंश के इतिहास की ओर ले जाता है। इस वंश में अकाल वर्ष उपाधिधारी तीन नरेश हुए हैं। उन सभी का नाम कृष्ण था। कृष्ण प्रथम का समय सन् ७५८ से ७७८ ई० के लगभग, द्वितीय का सन् ७७९ से ६१४ के लगभग, तथा तृतीय का सन् ९३७ से ९६८ ई० के लगभग बतलाया जाता है।

लेख का तलवनपुर वर्तमान तलकाड नामक ग्राम ही है जो कि मैसूर से २८ मील दूर कावेरी के बायें किनारे पर स्थित है। गङ्ग वंश की राजधानी यहीं थी। बदणेगुप्पे, तलकाड से ५-६ मील दक्षिण में नदी के दूसरे किनारे 'वदनकूपम्' नामक ग्राम के रूप में पहिचाना गया है (दि० च० सरकार-सक्शेसर आफ सातवाहनाज, पृष्ठ २६८)। गंग राज्य के एक प्रान्त गङ्गवाडी पर, जिसमें कि तलवनपुर, मण्णे (मान्यपुर) आदि अवस्थित हैं, राष्ट्रकूट कृष्ण प्रथम (अकालवर्ष) ने आधिपत्य स्थापित किया था यह हमें मन्ने से प्राप्त तलेगांव-ताम्रपत्रों से विदित होता है (अल्तेकर-राष्ट्रकूटाज, पृ० ४४)। इसके बाद राष्ट्रकूट साम्राज्य के अन्त होने तक गङ्ग-प्रान्त राष्ट्रकूट नरेशों के अधीन था। अतएव मर्करा के ताम्रपत्रों के अकाल वर्ष पृथुवीवल्लभ को उक्त वंश के तीन अकालवर्ष उपाधिधारी नरेशों में से एक होना चाहिए।

यह कौन नरेश था इस बात का पता हमें यदि लेख में मंत्री का नाम दिया होता तो कुछ हद तक लग सकता था पर दुर्भाग्य से वह नहीं दिया गया। फिर भी श्रीविजय जिनालय का नाम (जिसके लिए दान दिया गया था) हमें इस सम्बन्ध में कुछ सहायता देता दिखाई देता है। इस संग्रह के मन्ने से प्राप्त दो लेखों (१२२-१२३) में एक श्रीविजय का उल्लेख है जो कि सन् ७९७ ई० में गङ्ग नरेश मारसिंह के प्रभावक सेनापति के रूप में और सन् ८०२ में राष्ट्रकूट गोविन्द तृतीय (सन् ७८३-८१४ ई०) के ज्येष्ठ भ्राता एवं गङ्गवाडी प्रान्त के उपशासक (Viceroy) कम्भ (स्तम्भ-रणावलोक) के अधीन तथा मन्ने के आसपास के क्षेत्र का महासामन्त एवं

शासक के रूप में बतलाया गया है। यह श्रीविजय बड़ा ही जिनभक्त था। इसने मण्णे में एक विशाल जिनालय बनवाया था (१२२, १२३)। इस संग्रह के बाहर के एक जैन लेख (मै० आ० रि० १६२१, पृष्ठ ३१) से ज्ञात होता है कि राष्ट्रकूट कम्भ ने सन् ८०७ ई० में अपने पुत्र की प्रार्थना पर तलवनपुर के श्रीविजय जिनालय के लिए कोण्डकुन्दान्वय के कुमारनन्दि भटार के प्रशिष्य एवं एलवाचार्य के शिष्य वर्धमान गुरु को वदणेगुप्पे ग्राम दान में दिया। यह श्रीविजय जिनालय बहुत कर जिनभक्त महासामन्त श्रीविजय द्वारा ही निर्मापित हुआ था (सालेतोरे-'मेडीवल जैनिज्म' पृष्ठ ३८)।

उपर्युक्त विवेचन से ऐसा प्रतीत होता है कि तलवननगर में श्रीविजय जिनालय का निर्माण राष्ट्रकूट नरेश गोविन्द तृतीय के शासनकाल में हुआ था इसलिए उक्त ताम्रपत्रों का अकालवर्ष राष्ट्रकूट कृष्ण प्रथम तो हो नहीं सकता, क्योंकि वह गोविन्द तृतीय का पितामह था। तब उसे कृष्ण द्वितीय या तृतीय में से कोई होना चाहिए।

अब हम मर्करा के ताम्रपत्रों के उस वक्तव्य की ओर ध्यान देते हैं जिसमें अकालवर्ष के मन्त्री द्वारा आसपास के गांवों पर आतंक या आक्रमण आदि की चर्चा है। तलवनपुर पर आक्रमण का संकेत हमें कृष्ण तृतीय के राज्यकाल में मिलता है। उक्त नरेश ने अपने बहनोई एवं सामन्त गङ्ग नृप बुतुग द्वितीय का पक्ष लेकर तलवनपुर पर चढ़ाई की (संभव है मन्त्री द्वारा की) और उसके ज्येष्ठ भ्राता राचमल्ल तृतीय का वध कर गङ्गवंश की राजगद्दी पर उसे बैठाया (अल्तेकर, राष्ट्रकूटाज, पृ० ११२-११३)। यह एक घरेलू झगड़ा रहा होगा, इसीलिए मर्करा के ताम्रपत्रों में इसका संक्षिप्त में आभास दिया गया है। कृष्ण तृतीय को 'अकालवर्ष पृथुवीवल्लभ' इस समूचे नाम से कहा जाता था, यह बात हरसोल ताम्रपत्रों से भी समर्थित होती है (अल्तेकर, राष्ट्रकूटाज, पृ० १२०)।

यदि किन्हीं कारणों से मर्करा के तांम्रपत्रों को प्राचीन भी मान लिया जाय तो उस लेख के सन् ४६६ के वाद और लेख नं० १५० के सन् ९३१ के पहले ४-५ सौ वर्षों तक वीच के समय में कोण्डकुन्दान्वय और देशिय गण का एक साथ लेखगत कोई प्रयोग न मिलना आश्चर्य की वात है और इतने पहले उस लेख में उक्त दोनों का एकाकी प्रयोग मर्करा के ताम्रपत्रों की स्थिति को अजीब सी वना देता है।

कोण्डकुन्दान्वय के साथ प्रयुक्त होने के पहले देशिय गण का मूलसंघ के साथ प्रयोग एक लेख[1] (१२७ सन् ८६० ई०) में देखा गया है, पर उस लेख की अपनी कहानी है। वह वहुत समय तक ताम्रपत्र के रूप में था पर पीछे (लगभग १२ वीं शता०) मुनि मेघचन्द्र त्रैविद्य के शिष्य वीरनन्दि मुनि ने कुछ लोगों के आग्रह पर उसे पाषाण पर उत्कीर्ण कराया था। इन मेघचन्द्र और वीरनन्दि की शिष्यपरम्परा लेख नं० ५५२ (प्र० भा० ४१ = सन् १३१३) में दी गई है जहां उन्हें मूलसंघ देशीगण पुस्तक गच्छ कोण्डकुन्दान्वय का लिखा गया है। देशियगण की एक शाखा पुस्तक गच्छ थी यह वात हमें ई० ११वीं शताव्दी के प्रारम्भ के लेखों से ज्ञात होती है। मूलसंघ के साथ उसका प्रयोग भी ११ वीं शता० (लेख १८०) से होने लगता था पर इसके पहले और लेख नं० १२७ (सन् ८६० ई०) के वाद के करीव १५० वर्षों से ऊपर के समय में एक भी लेख में मूलसंघ के साथ देशियगण, पुस्तक गच्छ के प्रयोग को न देख; और

इस सवसे हमें लगता है कि मर्करा के प्राचीन ताम्रपत्रों को उक्त राजा के काल में पुनः नये रूप में उत्कीर्ण किया गया है तभी इन नामों एवं घटना आदि के साथ दान से सम्वन्धित देशीय गण, कोण्डकुन्दान्वय के आचार्यों के नाम लिखे गये हैं।

१—लेख में राष्ट्रकूट वंशावली दी गई है जो अन्य लेखों से भिन्न है, पर इसमें अमोघवर्ष के सम्वन्ध में जो घटनायें वर्णित हैं उनको इतिहासज्ञ महत्त्व देते हैं।

केवल उक्त लेख (१२७) में देख सन्देह सा होने लगता है। ऐसा प्रतीत होता है कि पीछे उत्कीर्ण करते समय उस लेख में संशोधन कर मूलसंघ ला दिया गया है और वह भी, संभव है, यह समझ कर लाया गया है कि लेख के उत्कीर्णन काल १२ वीं शता० में कोण्डकुन्दान्वय और मूलसंघ पर्यायवाची या एक हो गये थे।

इस संबन्ध में लेखीय आधारों से ऐसा प्रतीत होता है कि कोण्डकुन्दान्वय का प्रचलन ई० ७ वीं के उत्तरार्ध से प्रारम्भ हुआ था और उसने ८-९ वीं शताब्दी में प्रभावशाली बनने के प्रयत्न किये थे। उसका प्रथम प्रभाव कर्नाटक प्रान्त के देशस्थ साधुओं पर पड़ा जिसके सम्पर्क से वे कोण्डकुन्दान्वय देशियगण के कहलाने लगे। कोण्डकुन्दान्वय का कुछ प्रभाव द्रविड संघ पर भी पड़ा था ऐसा लेख नं० १६६-से ज्ञात होता है पर संभव है वह प्रभाव स्थायी न था क्योंकि और किसी लेख में द्रविड संघ कोण्डकुन्दान्वय नहीं दिया गया।

हम पहले देख चुके हैं कि मूलसंघ ४-५ वीं शताब्दी में दक्षिण भारत में विद्यमान था। उसकी धारा देवान्त और सेनान्त मुनियों के बीच देवगण और सेनगण के रूप में चल रही थी पर पिछली शताब्दियों जैसा उसका न तो संघटन था और न प्रभाव। ई० सन् ११ वीं शताब्दी के प्रारम्भ से ही उसके पुनर्गठन एवं प्रभाव का क्रम चला ऐसा लेखों से ज्ञात होता है (१८० आदि)। द्रविड संघ के कुछ साधु भी एक बार उसके प्रभाव में थे (१७८)। मूलसंघ के बढ़ते हुए प्रभाव के भीतर यापनीय संघ के कतिपय गण भी इन्हीं शताब्दियों में आये थे, इस ओर हम संकेत कर चुके हैं। संभवतः उस समय नवोदित इतर जैन संघों—द्रविड संघ, काष्ठा संघ—के संघटनों (गण, गच्छ आदि) ने जैन जनता पर विशेष प्रभाव डालना शुरू किया था इसलिए मूलानुगामी मूलसंघ के साधु समूह ने मूल जैनत्व की रक्षा के लिये शायद आन्दोलन कर अपने पुनर्गठन के क्रम में इतर संघों के तत्कालीन अनुकूल गणों को अपने में मिलाने की चेष्टा की हो। वह प्रयत्न पिछली शताब्दियों तक जारी रहा और हम देखते हैं कि १२वीं शताब्दी में द्रविड संघ का एक मात्र आधार नन्दिसंघ- भी मूलसंघ कोण्ड-

कुन्दान्वय के संरक्षण में आने लगा (२५५, प्रथम भाग ४७ आदि) और इस तरह १२वीं शताब्दी के बाद द्रविड संघ का नाम शेष रह गया। काष्ठासंघ उत्तर भारत में आकर अपने अस्तित्व को ईसा की १६वीं शताब्दी तक बनाये रखा यह लेखों से मालूम होता है।

इस चर्चा को हम आगे के अनुसंधान कर्ताओं पर छोड़ अपने प्रकृत विषय देशिय गण पर आते हैं। यह बात पहले कही गयी है कि इस गण के इतिहास की दृष्टि से लेख नं० १५० प्रथम है और मर्करा के ताम्रपत्र द्वितीय हैं। लेख नं० १२७ को हमने सन्देह की दृष्टि से देखा है पर उक्त लेख में दिए गए-देशिय गण के आदि आचार्य के रूप में देवेन्द्र मुनि का नाम लेख नं० १५० और बाद के कई लेखों—२०४, २३३ (प्र० भा० ४९२) २५६ (प्र० भा० ५५)—से भी ज्ञात होता है। इसलिए गण की आचार्यपरम्परा की दृष्टि से और उसमें अंकित समय की दृष्टि से भी यदि हम उसे ही देशिय गण का प्रथम लेख मानकर लेख नं० १५० और मर्करा के ताम्रपत्रों को दूसरा एवं तीसरा नम्बर दें तो कोई आपत्ति न होगी। उक्त लेखों से निम्न लिखित गुरुपरम्परा बनती है :—

त्रैकाल योगीश (१२७)
|
देवेन्द्र मुनि (सिद्धान्त भट्टार) (१२७, १५०)
|
चान्द्रायणदं भट्टार (१५०)
|
गुणचन्द्र ,, (१५०, ६५)
|
अभयणन्दि ,, (१५०–६५)
|
शीलभद्र भटार (६५)
|
जयणन्दि ,, (६५)
|
गुणणन्दि ,, (६५)
चन्दणन्दि ,, (६५)
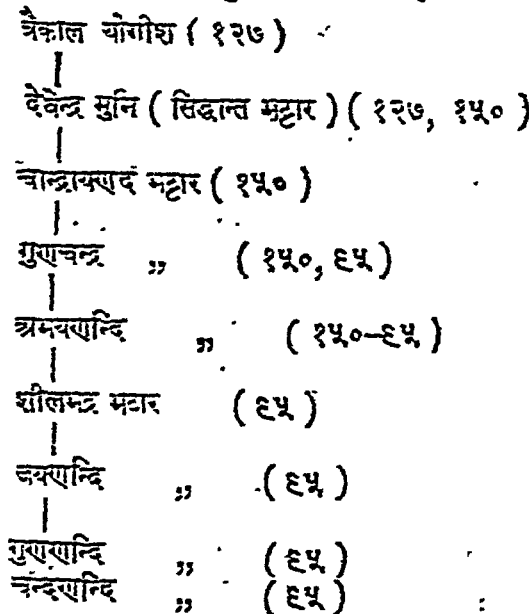
इस परम्परा में आदि मुनि त्रैकाल योगीश हैं जिनके सम्बन्ध में विशेष मालुम नहीं। देवेन्द्र सिद्धान्त के सम्बन्ध में कई लेखों को सूचित कर चुके हैं। इनका समय लेख नं० १२७ का ही समय सन् ८६० दिया गया है। १२वीं शताब्दी के द्वितीय, तृतीय और बाद के दशकों के लेखों—नं० २५५ (प्र० भा० ४७) २८५ (प्र० भा० ४३) ३२३ (प्र० भा० ५०) एवं ३८८ (प्र० भा० ४२) आदि—में देवेन्द्र मुनि का नाम तो अवश्य है पर उन्हें एक बड़े विद्वान् मुनि गुणनन्दि के तीन सौ शिष्यों में उत्कृष्टतम ७२ शिष्यों में से एक बताया गया है पर इस बात का उक्त लेखों से पहले के लेखों से समर्थन नहीं होता।

उक्त गुरुवंश में देवेन्द्र मुनि के बाद चान्द्रायणद भट्टार का नाम आता है जो कि आचार्य का नाम न मालुम होकर उपाधि मालुम होती है। लेख नं० २५६ में देवेन्द्र मुनि के शिष्य का नाम चतुर्मुखदेव दिया है और लिखा है कि वे चारों दिशाओं की ओर प्रस्तुत मुख होकर अष्टोपवास व्रत करते थे इससे चतुर्मुख कहलाये। चान्द्रायणद उपाधि भी चान्द्रायण व्रत को सूचित करती है जो कि अष्टोपवास हो जैसा है। शेष दूसरे मुनियों के सम्बन्ध में हमें विशेष मालुम नहीं। लेख नं० १२७ के अनुसार देवेन्द्र मुनि को अमोघवर्ष प्रथम ने तलेयूर ग्राम तथा दूसरे गाँवों की जमीनें दान में दी थीं। लेख नं० १५० में अभयणन्दि की व्रतपरायणा शिष्या नाणब्बे कन्ति का उल्लेख है तथा लेख नं० ६५ (मर्करा ताम्रपत्र) में चन्दणन्दि भटार को श्रीविजय जिनालय के लिए अकालवर्ष नृप (कृष्ण तृतीय) के मंत्री द्वारा बदणेगुप्पे नामक गांव के दान का उल्लेख है।

इस गण के आदिम आचार्यों के नाम के साथ भट्टार पद जुड़ा है। यह हमें उपर्युक्त केवल तीन लेखों से ही नहीं मालूम होता बल्कि लेख नं० १५८ और २७४ से भी ज्ञात होता है। यथार्थ में ९ वीं-१० वीं शताब्दी के अनेकों लेखों (१३१, १३२, १३४, १३५, १३६, १४४, १४९ आदि) में मुनियों की उपाधि भट्टार दी गई है। पीछे के लेखों में इस गण के आचार्यों की उपाधि सिद्धान्तदेव, सैद्धान्तिक तथा त्रैविद्य दी गई है।

प्रस्तुत संग्रह में देशियगण से संबन्धित ६५-७० लेख हैं पर कुछ ऐसे लेख हैं जिनसे ७-८ आचार्यों का एक गुरुवंश बन सकता है और कुछ से गण की विभिन्न पट्टावलियां। लेखों के पर्यालोडन से विदित होता है कि कर्नाटक प्रान्त के कई स्थानों में इस गण के केन्द्र थे। उन स्थानों में हनसोगे (चिक हनसोगे) प्रमुख था। यहाँ के आचार्यों से ही पीछे इस गण की हनसोगे बलि या गच्छ निकले हैं। गच्छ का साधारण अर्थ होता है शाखा और बलि (कन्नड शब्द वलय या वलग) का अर्थ होता है परिवार = आध्यात्मिक परिवार या समुदाय।

चिक हनसोगे से प्राप्त लेख नं० १७५, १६५, १६६ और २२३ से विदित होता है कि यहाँ इस गण की अनेक वसदियाँ (मन्दिर) थीं, जिन्हें चङ्गाल्व नरेशों द्वारा संरक्षण प्राप्त था। हनसोगे (पनसोगे) बलि या गच्छ के आचार्यों की लेख नं० २२३, २३२, २३६, २४१, २५३, २६६, २८४ एवं २८५ कीसहायता से प्राप्त एक परम्परा अगले पृष्ठ पर दी गई है। इसका बहुत कुछ समर्थन धवला के अन्त में दी गई आचार्य शुभचन्द्र सिद्धान्तदेव की ग्रन्थप्रशस्ति से भी होता है[१]।

लेखों से प्राप्त इस गुरुपरम्परा में और प्रशस्ति में दी गई परम्परा में कुछ अन्तर है। प्रशस्ति में गुरुवंश कुन्दकुन्द, गृद्धपिच्छ और बलाकपिच्छ से चला है और इस परम्परा के पूर्णचन्द्र को देशिय गण के प्रतिष्ठापक देवेन्द्र सिद्धान्त से जोड़ने का प्रयत्न हुआ है। उनके बीच में वसुनन्दि और रविचन्द्र सिद्धान्तदेव नामक दो आचार्यों का नाम दिया गया है। देवेन्द्र सिद्धान्त के पहले गुणनन्दि पण्डित का नाम भी रखा गया है। मालुम होता है कि प्रशस्ति के आधार १२वीं शताब्दी के द्वितीय, तृतीय दशकों के लेख (२५५, २८५ आदि) रहे होंगे। प्रशस्ति के तथा अन्य लेखों के द्वितीय शुभचन्द्र सिद्धान्त देव प्रसिद्ध सेनापति गंगराज के गुरु थे।

---

१. षट्खण्डागम, पुस्तक पृष्ठ ७–१०।

इस गण की एक और शाखा का नाम इंगुलेश्वर बलि है जिसके आचार्य गण प्रायः कोल्हापुर के आस पास रहते थे (४११ एवं ५७१ आदि)। इस से सम्बन्धित अनेकों लेख (४११,४६५, ५१४, ५२१, ५२४, ५२८, ५७१, ५८४, ५६६, ६००, ६२५ और ६७३) हैं पर इन लेखों से इस गण की ठीक गुरुपरम्परा नहीं दी जा सकती। १२-१३ वीं शताब्दी के लेखों में माघनन्दि आचार्य का नाम प्रथम दिया गया है (४११, ४६५, ५१४ आदि)। १४ वीं-१५ वीं शताब्दी लेखों में अभयचन्द्र और उसके शिष्य श्रुतमुनि का नाम आगे आता है तथा १६ वीं शताब्दी के लेखों में चारुकीर्ति का नाम।

लेख ४७८ में इस गण की एक वाणद वलिय का नाम दिया गया है।

इस गण का प्रसिद्ध एवं प्रमुख गच्छ पुस्तक गच्छ है। जिसका कि उल्लेख अधिकांश लेखों में है। इसी गच्छ का दूसरा नाम वक्रगच्छ है (२५६, प्रथम भा० ५५ और ४२६)।

नन्दिगणः—मूलसंघ, कोण्डकुन्दान्वय, देशियगण, पुस्तक गच्छ से सम्बन्धित तथा सन् १११५ से ११७६ ई० के बीच के श्रवणबेल्गोल से प्राप्त लेख नं० २५५ (४७) २८५ (४३) ३३२ (५०) ३६२ (४०) और ३८८ (४२) में आचार्यों की कई पट्टावलियां दी गई हैं। इनमें बीच या अन्त में आचार्यों के साथ मूलसंघ देशियगण आदि लिखा है पर आदि में दो चार मंगलाचरण के श्लोकों के बाद केवल नन्दिगण का उल्लेख कर एक सामान्य परम्परा दी गई है जो इस प्रकार है:—

पद्मनन्दि (कोण्डकुन्द)
उनके अन्वय में
|
उमास्वाति (गृद्धपिच्छ)
|
बलाकपिच्छ
|
गुणनन्दि
|
देवेन्द्र सैद्धान्तिक
|
कलधौतनन्दि

लेख नं० ३६२ की थोड़ी विशेषता यह है कि बलाकपिच्छ के बाद समन्तभद्र, देवनन्दि (पूज्यपाद) और अकलंक का नाम दिया गया है। इनमें गुणनन्दि,

देवेन्द्र सिद्धान्त आदि देशियगण की परम्परा से सम्बन्धित हैं यह हम पहले देख चुके हैं पर उनके पहले के कोण्डकुन्दाचार्य, उमास्वाति, समन्तभद्र आदि आचार्यों के नाम द्रविड संघ से सम्बन्धित नन्दिगण के ११ वीं शताब्दी के लेखों (२१३, २१४, २८७ आदि) में भी दिखाई देते हैं। इस तरह मूलसंघ और द्रविडसंघ के लेखों में नन्दिगण के प्राचीन आचार्यों के प्रायः एक से नामों को देखकर ऐसा लगता है कि इन दोनों संघों में कोई प्राचीन नन्दिगण (संघ) बाहर से शामिल किया गया होगा, तथा ये सब आचार्य उसी गण के रहे होंगे और इस विषय में हम संकेत भी कर आये हैं कि यापनीय संघ के नन्दिसंघ को ही द्रविड संघ और मूलसंघ ने अपनाया था। यापनीय संघ के साथ नन्दिसंघ के प्रगट या अप्रगट रूप से किये गये कतिपय उल्लेखों से यह ज्ञात होता है कि यापनीयों में नन्दिसंघ महत्त्वपूर्ण था (१०६, १२१, १२४, १४३)। प्राकृत भाषा में नन्दिसंघ की जो प्राचीन पट्टावली उपलब्ध है वह संभव है इसी संघ की थी[1]। उसमें वीर निर्वाण सं० ६८३ तक की वंशपरम्परा दी गई है। संस्कृत में नन्दिसंघ की एक और पट्टावली उपलब्ध है[2] पर वह मूलसंघ के पश्चात्कालीन आचार्यों की है उसका प्राकृत पट्टावलि से कोई सम्बन्ध नहीं।

इस सम्भावना के बाद उपर्युक्त मूलसंघ के लेखों में जो पट्टावलियाँ दी गई हैं उन पर हम संक्षिप्त में कह देना चाहते हैं कि लेख नं० २५५ (४७) और ३२२ (५०) में प्रायः एकसी गुरुपरम्परा दी गई है पर वह कलधौतनन्दि के बाद देशिय गण के उपर्युक्त निर्दिष्ट अन्य लेखों से नहीं मिलती। लेख नं० ३६२ (४०) में देशिय गण को नन्दि गण का प्रभेद कहा गया है और उसमें जो पट्टावली दी गई है वह जैन शिलालेखसंग्रह के प्रथम भाग की भूमिका के पृष्ठ सं० १३२ में अङ्कित है। लेख नं० २८५ (४३) में कलधौतनन्दि एवं रविचन्द्र के बाद जो गुरुपरम्परा मिलती है वह देशिय गण हनसोगे वलि की पट्टा-

१. षट्खण्डागम, पुस्तक १, पृष्ठ २४-२७
२. जैन सिद्धान्त भास्कर, भाग १, किरण ४ पृष्ठ ७१, ८१.

वली में हमने जो दी है वही है। लेख नं० ३८८ (४२) में इनसोगे वलि के मलधारि देव के बाद एक दूसरी गुरुपरम्परा दी गई है जो उक्त लेख से जान लेना चाहिये।

इसके बाद लेख नं० ५८६ (१०५, १४वीं शताब्दी) और ६२५ (१०८, १५ वीं शताब्दी) में नन्दिगण को नन्दिसंघ कहा गया है और उसे मूलसंघ के अर्थ में प्रयुक्त किया है। इन दोनों लेखों में सेन, नन्दि, देव और सिंह संघों का एक काल्पनिक इतिहास दिया गया है। लेख नं० १०५ के ऐतिहासिक महत्त्व के लिए प्रथम भाग की भूमिका के पृष्ठ १२४-१२७ देखें। ये दोनों लेख एक सुन्दर काव्य कहे जा सकते हैं।

सूरस्थगण:—मूलसंघ का एक गण सूरस्थ गण नाम से प्रसिद्ध था यह लेख नं० १८५ २३४, २६६, ३१८, ४६० और ५४१ से ज्ञात होता है। लेखों में इसका सूरस्त, सुराष्ट्र एवं सूरस्थ नाम से उल्लेख है। इन लेखों में इसके अन्वय गच्छ आदि का निर्देश नहीं है पर इस संग्रह के बाहर के कुछ लेखों से ज्ञात होता है कि इसमें चित्रकूट अन्वय या गच्छ था[1]। सूरस्थ एवं सूरस्त नाम कैसे पड़े यह कहना कठिन है। सुराष्ट्र नाम से प्रतीत होता है कि इस गण के साधु शुरू में सुराष्ट्र देश में रहते रहे होंगे, पर सुराष्ट्र का प्राकृत या अपभ्रंश रूप तो सुरट्ठ होता है सूरस्थ नहीं। संभव है उत्कीर्णक ने सुरट्ठ का पुनः संस्कृत रूप देने के प्रयत्न में सूरस्थ कर दिया हो पर यह भी एक दो लेख में सम्भव था सब में नहीं। इस तरह सूरस्थ गण की व्युत्पत्ति अब भी भ्रान्त है। हो सकता है कि कोई सूरस्त नाम का दक्षिण भारत में क्षेत्र हो जहाँ से इस गण के मुनियों ने अपना नाम ग्रहण किया हो।

सूरस्थ गण का सर्वप्रथम उल्लेख सन् ९६४ के एक जैन लेख में मिलता है। कहा जाता है कि सूरस्थ गण प्रारम्भ में मूल संघ के सेनगण से सम्बन्धित था[2]।

१. जैन एन्टीक्वेरी, भाग ११, अंक २, पृष्ठ ६३, ६५
२. जैनिज्म इन साउथ इण्डिया, लेख नं० ४६ पृष्ठ ३६७-३७४ (जीवराज ग्रन्थमाला सोलापुर)

इसके बाद प्रस्तुत संग्रह के ११ वीं शताब्दी के पूर्वार्ध के लेख नं० १८५ में इसका उल्लेख है जहाँ यह मूलसंघ के साथ द्रविड़ान्वय से युक्त है। इस पर हम अनुमान करते हैं कि द्रविड़ संघ के आदि गठन काल में, संभव है, इस गण के साधुओं ने भाग लिया हो या उस संघ के साधुगण मूलसंघ सूरस्थ गण में सम्मिलित रहे हों। इस गण के लेख, ११ वीं के पूर्वार्ध से लेकर १३ वीं शता० के अन्त तक के मिलते हैं। सभी लेख छोटे हैं केवल लेख नं २६६ को छोड़कर। इसमें सौभाग्य से इस गण की एक छोटी पट्टावली दी गई है जो इस प्रकार है:— अनन्तवीर्य, बालचन्द्र, प्रभाचन्द्र, कल्नेलेय देव (रामचन्द्र), अष्टोपवासि, हेमनन्दि, विनयनन्दि, एकवीर और उनके सधर्मा पल्लपण्डित (अभिमानदानिक)। लेख में पल्ल पण्डित की बड़ी प्रशंसा है। इनका समय सन् १११८ ई० (२६६) दिया गया है। इस गण के किसी भी लेख में कुन्दकुन्दान्वय का उल्लेख नहीं है। संभव है यह गण मूलसंघ की प्रभावशालिनी कुन्दकुन्दान्वय धारा में स्थान न पाने के कारण पिछली शताब्दियों में अपनी स्थिति को न सम्हाल सका हो।

क्राणूर गण:—क्राणूर गण के सम्बन्ध में यापनीय संघ के विवेचन में हम संभावना प्रकट कर आये हैं कि क्राणूर गण यापनीयों के कण्डूर गण के नाम का शब्दानुकरण है। कण्डूर या क्राणूर दोनों किसी स्थान विशेष को सूचित करते हैं जहाँ से कि उक्त गण के साधु समुदाय ने नाम ग्रहण किया है। इस गण के ११ वीं शताब्दी के उत्तरार्ध (२०७, सन् १०७४ ई०) से लेकर १४ वीं शताब्दी के अन्त तक लेख मिलते हैं। इस संग्रह में १७-१८ लेख इस गण से सम्बन्धित हैं जिनसे मालुम होता है कि इसमें प्रसिद्ध दो गच्छ थे–मेषपाषाण गच्छ (२१६, २६७, २७७, २६६, ३५३) तथा तिन्त्रिणीक गच्छ (२०६, २६३, ३१३, ३७७, ३८६, ४०८, ४३१, ४५६, ५८२)। मेषपाषाण का अर्थ है मेषों के लड़ने का पाषाण। यह कोई स्थल विशेष होना चाहिए जहाँ से इस गण के साधुओं का शुरू शुरू में सम्बन्ध रहा होगा। तिन्त्रिणीक एक वृक्ष का नाम है। ये पाषाणान्त और वृक्ष परक नाम इस गण के यापनीय संघ के साथ पूर्व सम्बन्ध

की स्मृति दिलाते हैं[1]।

लेख नं० २६७, २७७ और २६६ से मेषपाषाणगच्छ की इस प्रकार गुरु-परम्परा प्राप्त होती है (तिथिक्रम के अनुसार लेख नं० २६६ (पुरले) को सबसे पहले होना चाहिए)।

सिंहनन्दि आदि अनेकों आचार्यों के नाम बिना किसी सम्बन्ध को दिखाये
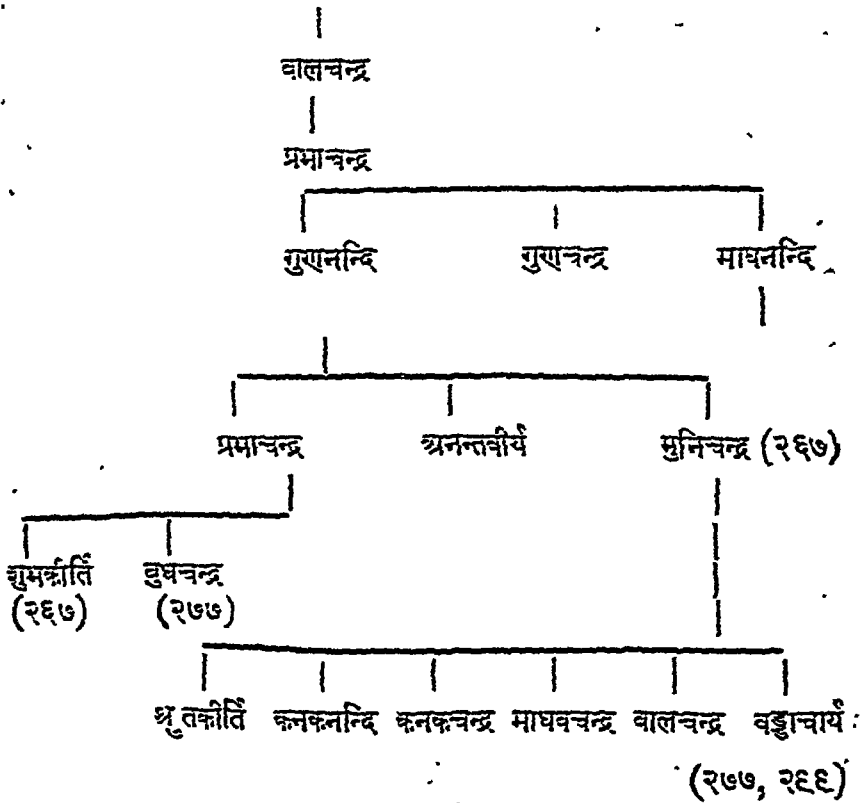
१. यापनीयों में श्रीमूलमूलगण पुन्नागवृक्षमूलगण तथा कनकोपल (कनकपाषाण) आदि गण थे। गण एवं गच्छ पीछे एकार्थ में भी प्रयुक्त हुए हैं।

इन लेखों में मूलसंघ कुन्दकुन्दान्वय के साथ स्वरूप सिंहनन्दि आचार्य का उल्लेख है जिन्हें गंग महामण्डलिककुलसंवरण या समुद्धरण कहा गया है। लेख नं २७७ में अर्हद्बलि, बेट्टद-दामनन्दि भट्टारक, बालचन्द्र भट्टारक, नेमचन्द्र त्रैविद्य आदि आचार्यों के नाम बिना किसी सम्बन्ध बताये दिए गये हैं।

इन लेखों से ज्ञात होता है कि ११-१२ वीं शताब्दी के गंगनरेश भुजबल गंग वर्मदेव उसकी रानी गंग महादेवी तथा चार पुत्र नारसिंग, नन्नियं गंग, रक्कस गंग और भुजबल गंग चौथी और पांचवी पीढ़ी के आचार्यों के भक्त थे और उन्हें दानादि से सम्मानित किया था।

क्राणूर गण के तिन्त्रिणीक गच्छ की आचार्य परम्परा लेख नं० ३१३, ३७७ ३८६, ४०८ और ४३१ से इस प्रकार मालूम होती है।
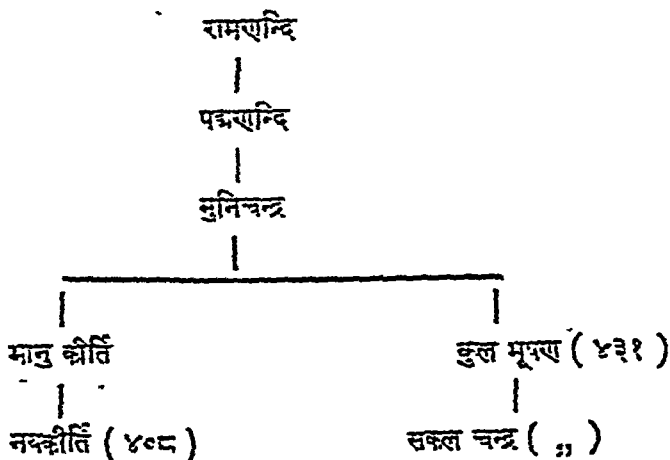
इनमें मुनिचन्द्र और उनके शिष्य की लेखों में बड़ी प्रशंसा है। वे बनवासी के चालुक्यों के अधीन सामन्तों के गुरु थे। भानुकीर्ति यंत्र, तंत्र, मंत्र में प्रवीण थे। वे बन्दणिकापुर के अधिपति थे (३७७) तथा मण्डलाचार्य कहलाते थे और इस पद पर करीब ४० वर्ष तक रहे (३१३, ४०८)।

मूलसंघ के देशिय गण और क्राणूर गण की अपनी वसदियाँ होती थीं और उन दोनों में वास्तविक भेद था यह बात हमें दडिग से प्राप्त एक लेख से मालुम् होती है जिसमें लिखा है कि होय्सल सेनापति मरियाने और भरत ने दडिगण-केरे स्थान में पाँच वसदियाँ बनवायी थीं उनमें चार तो देशिय गण के लिए और एक क्राणूर गण के लिए[1]।

१४ वीं शताब्दी के बाद क्राणूर गण का प्रभाव बलात्कार गण के प्रभावशाली भट्टारकों के आगे क्षीण हो गया। इसके बाद इसके विरले ही उल्लेख मिलते हैं।

बलात्कार गणः—इस गण के सम्बन्ध में हम कह चुके हैं कि नामसाम्य को देखते हुए यह यापनीयों के बलिहारि या बलगार गण से निकला है। बलिहारि और बलगार, सम्भव है, स्थान विशेष के सूचक हैं[2] पर उससे निकले बलात्कार शब्द से ऐसा सूचित नहीं होता। बलात्कार शब्द का अर्थ पीछे १६ वीं शताब्दी के विद्वानों ने बतलाया है कि : चूंकि इस गण के आदि नायक पद्मनन्दि आचार्य ने सरस्वती को बलात्कार से बुलाया था इसलिए बलात्कार गण और सरस्वती गच्छ नाम प्रसिद्ध हुआ[3]। जो हो, लेखों से बलात्कार के इस अर्थ की कोई सूचना नहीं मिलती।

बलात्कार गण का सर्व प्रथम नाम ले० नं० २०८ (सन् १०७५ ई० के लगभग) में मिलता है जिसमें इस गण के चित्रकूटाम्नाय के मुनि मुनिचन्द्र और उनके शिष्य अनन्तकीर्ति का उल्लेख है। लेख २२७ (सन् १०८७ ई०) में इस गण के कुछ मुनियों की परम्परा दी गई है जो निम्न प्रकार है:—

---

१. जैन एण्टीक्वेरी भाग ६, अंक २; पृष्ठ ६६, नं० ५८
२. दक्षिण भारत में बलगारे नामक एक गांव था (मेडीवल जैनिज्म, पृष्ठ ३२७)
३. जैन साहित्य और इतिहास (प्र० सं०) पृष्ठ ३४३।

लेख के अन्त में गण का नाम बालकृकार गण दिया गया है। इसके बाद लेख नं० २४६ और ४४४ में इस गण के मुनि कुमुदचन्द्र भट्टारक व कुनुदेन्दु का नाम तथा उन्हें कुछ सेट्टियों द्वारा दान का उल्लेख है। लेखों में कोई समय नहीं दिया गया। इसके बाद चौदहवीं शताब्दी के पूर्वार्ध तक इस गण के कोई लेख नहीं है। चौदहवीं शता० के उत्तरार्ध के लेखों से इस गण का विशेष प्रभाव द्योतित होता है। विजयनगर साम्राज्य के नरेश इनका सम्मान करते थे। लेख नं० ५६६ में वीर बुक्कराय के राज्यकाल में इस गण के एक अग्रणी आचार्य सिंहनन्दि का उल्लेख है। उनकी उपाधियाँ–राय, राजगुरु तथा मण्डलाचार्य थीं। उक्त लेख उनकी गृहस्थ शिष्या का समाधिमरण स्मारक है।

लेख नं० ५७२ (प्रथम भाग १११) और ५८५ में इस गण की निम्न प्रकार की परम्परा मिलती है :—

कीर्ति (वनवासि के)
|
देवेन्द्र विशालकीर्ति
|
शुभकीर्ति देव भट्टारक
|
धर्मभूषण (प्रथम)
|
अमरकीर्ति आचार्य
├── धर्मभूषण (द्वितीय)
│ |
│   वर्धमान स्वामी (सिंहनन्दि के चरणसेवक)
│ |
│   धर्मभूषण (तृतीय)
└── सिंहनन्दि

लेख नं० ५८५ बड़े महत्त्व का है। इसमें मूलसंघ के साथ नन्दिसंघ का तथा बलात्कार गण के सारस्वत गच्छ का उल्लेख है। साथ ही इस गण के आदि आचार्य के रूप में पद्मनन्दि को लिखा है और उनके कुन्दकुन्द, वक्रग्रीव, एलाचार्य, गृध्रपिच्छ नाम दिए हैं। हमें लेखों से इस परम्परा के आचार्य अमरकीर्ति तक केवल प्रशंसा के अतिरिक्त विशेष कुछ नहीं मालुम होता है। लेख नं० ५७२ (सन् १३७२) से धर्मभूषण द्वितीय की। उनके शिष्य वर्धमान मुनि द्वारा निषद्या निर्माण का उल्लेख है। लेख नं० ५८५ में सिंहनन्दि आचार्य को सेनापति इरुगप का गुरु लिखा है। ये सिंहनन्दि वे ही प्रतीत होते हैं जिनका उल्लेख हमें लेख नं० ५६६ में मिला है। धर्मभूषण तृतीय का कुछ विद्वान् वर्तमान न्यायदीपिका ग्रंथ के कर्ता से साम्य स्थापित करते हैं[१]। ये विजयनगर सम्राट् देवराय के गुरु थे, यह बात हमें लेख नं० ६६७ के एक श्लोक से विदित होती है। देवराय प्रथम का समय सन् १४०६ ई० से १४२२ तक है। लेख में धर्मभूषण तृतीय का समय सन् १३८६ दिया गया है जो संभव है उनके पट्टारोहण के आस पास का समय हो।

लेख नं० ६६७ (सन् १५५४ के लगभग) और ६६१ (सन् १६०८ ई०) में इस गण की एक गुरुपरम्परा इस प्रकार दी गई :—

सिंहकीर्ति
|
मेरुनन्दि, वर्धमान आदि अ
⋮
विशालकीर्ति (सन् १४६७–१५५४ ई०)
|
विद्यानन्द (सन् १५०२–१५३० ई०)
|
देवेन्द्रकीर्ति (सन् १५३०–१५५० ई)
|
विशालकीर्ति द्वितीय (सन् १५५०–१६०८ ई०)

---

१. पं० दरबारीलाल न्यायाचार्य, न्यायदीपिका, प्रस्तावना, पृष्ठ ६२–६६।

लेख नं० ६६७ में जैनधर्म की प्रभावना करने वाले अनेकों आचार्यों का नाम शुरू में दिया गया है जो कि विभिन्न संघों एवं गणों से सम्बन्धित हैं। सिंहकीर्ति से पहले धर्मभूषण तृतीय का भी उल्लेख है पर उन दोनों के बीच कोई सम्बन्ध का निर्देश नहीं है। हो सकता है कि ये सिंहकीर्ति, धर्मभूषण तृतीय से जुदी किसी और गुरुपरम्परा के हों। उन्होंने दिल्ली के बादशाह मुहम्मद सुरित्राण की सभा में बौद्धादि वादियों को जीता था। इस बादशाह का समय सन् १३२६ से १३३७ तक था। मेरुनन्दि आदि के विषय में हमें कुछ नहीं मालुम। विशाल कीर्ति ने विजयनगर नरेश विरूपाक्ष के दरबार में विजय पत्र प्राप्त किया था तथा सिकन्दर सुरित्राण (सुल्तान सिकन्दर सूर सन् १५५४ ई०) के दरबार में विरोधियों को जीता था। इससे विशालकीर्ति का ८०-९० वर्ष का दीर्घ जीवन मालुम होता है। विद्यानंद की उपाधि वादी थी इन्होंने अनेकों दरबारों में विरोधियों को वाद में परास्त किया था। इनकी अनेक यशस्वी विजयों का वर्णन लेख में दिया गया[1] है। इसी तरह उनके शिष्य देवेन्द्रकीर्ति थे। लेख में तिथिका निर्देश नहीं है तथा वर्णन व्यतिक्रम से आचार्यपरम्परा ठीक नहीं मालुम हो पाती।

लेख नं० ६१७ में उत्तर भारत में बलात्कार गण के मदसारद गच्छ की गुरुपरम्परा दी गई है वह निम्न प्रकार है—

धर्म चन्द्र
|
रत्न कीर्ति
|
प्रभा चन्द्र
|
पद्मनन्दि
|
शुभचन्द्र

---

१. जैन एन्टीक्वेरी भाग ४ पृ० १-२१ तथा मेडोवल जैनिज्म, पृष्ठ ३७१-३७५।

इसी तरह लेख नं० ७०२ में पश्चिम भारत के बलात्कार गण सरस्वती गच्छ कुन्दकुन्दान्वय की भट्टारक परम्परा दी गई है जो इस प्रकार है—सकलकीर्ति, भुवनकीर्ति, ज्ञानभूषण, विजयकीर्ति, शुभचंद्र, सुमतिकीर्ति, गुणकीर्ति, वादिभूषण, रामकीर्ति तथा पद्मनन्दि।

काष्ठासंघ

काष्ठासंघ की उत्पत्ति के सम्बन्ध में अनेक विवाद हैं। दसवीं शताब्दी में देवसेनाचार्यकृत दर्शनसार ग्रन्थ में लिखा है कि दक्षिण प्रांत में आचार्य जिनसेन के सतीर्थ्य विनयसेन के शिष्य कुमारसेन ने उत्तर पुराण के रचयिता गुणभद्र के दिवंगत (संवत् ९५३) होने के पश्चात् काष्ठासंघ की स्थापना की थी, पर यह उल्लेख कालक्रम आदि अनेक दृष्टियों से युक्तियुक्त नहीं प्रतीत होता है[1]। १७ वीं शताब्दी के एक ग्रन्थ वचनकोश में इस संघ की उत्पत्ति के सम्बन्ध में लिखा है कि उमास्वामी के पट्टाधिकारी लोहाचार्य ने इस संघ की स्थापना उत्तर भारत के अमरोहा नगर में की थी। इस कथन में सचाई जो हो पर १९-२० वीं शताब्दी के लेखों में काष्ठासंघ के अन्तर्गत लोहाचार्य अन्वय का उल्लेख मिलता है। प्रस्तुत संग्रह के एक लेख नं० ७५६ (सं० १८८१) में यही बात हम पाते हैं।

इस संग्रह में इस संघ से सम्बन्धित सभी लेख उत्तर और पश्चिम भारत से ही प्राप्त हुए हैं। लेख नं० ६३३ और ६४० में इसका नाम काञ्चीसंघ लिखा है, जो कि माथुरान्वय (मयूरान्वय) एवं पुष्करगण के साथ होने से लगता है कि यह काष्ठासंघ का ही अपर नाम होना चाहिए। इस संघ के प्रमुख गच्छ या शाखायें चार थीं:— नन्दितट, माथुर, बागड़ और लाटबागड़। ये चारों नाम बहुतकर स्थानों और प्रदेशों के नामों पर रखे गये हैं। नन्दितट से संबन्धित एक ले० नं० ११९ इस संग्रह के प्रथम भाग में है जिसमें कि नन्दितट को भूलकर मण्डित-तट लिखा गया है। संभव है इस गच्छ का संबन्ध दक्षिण से था। माथुर गच्छ

---

१. जैन साहित्य और इतिहास, पृष्ठ २७७ (द्वि० सं०)।

या अन्वय से संबन्धित ६ लेख प्रस्तुत संग्रह में हैं। अथूंणा से प्राप्त लेख नं० ३०५ क में यद्यपि काष्ठासंघ का उल्लेख नहीं है फिर भी उसके प्रसिद्ध अन्वय माथुरान्वय का निर्देश है और लेख से इस संघ के एक आचार्य छत्रसेन का नया नाम मालूम होता है। लेख नं० ५८६ में मसार से प्राप्त तीन प्रतिमालेखों में इस संघ के आचार्य कमलकीर्ति का नाम देकर एक लेख में उन्हें माथुरान्वय का लिखा है। ग्वालियर से प्राप्त दो लेख नं० ६३३ और ६४० में तोमरवंशीय नरेश डूंगरसिंह और उसके पुत्र कीर्तिसिंह (१५ वीं शता०) के समय इस संघ के कतिपय प्रतिष्ठित भट्टारकों के नाम मिलते हैं। लेख नं० ६३३ में भट्टा० गुणकीर्ति और उनके शिष्य यशःकीर्ति का उल्लेख है, साथ में प्रतिष्ठाचार्य श्री पण्डित रइधू का भी। भट्टा० यशःकीर्ति वे ही हैं जिन्होंने अपभ्रंश भाषा में पाण्डवपुराण (वि० सं० १४९७) और हरिवंशपुराण (वि० सं० १५००) की रचना की थी। अपभ्रंश चंदप्पहचरिउ भी इनकी रचना है। इन्होंने ...सिद्ध कवि स्वयम्भू के हरिवंशपुराण की जीर्ण-शीर्ण खण्डित प्रति का समुद्धार भी किया था। ये गुणकीर्ति भट्टारक के अनुज तथा शिष्य भी थे। प्रतिष्ठाचार्य रइधू, प्रसिद्ध कवि रइधू ही हैं जिन्होंने बीसों ग्रन्थों की रचना की थी। ये महान् कवि होने के साथ साथ भट्टारकीय पण्डित थे, प्रतिष्ठा आदि में भाग लेते थे इसलिए प्रतिष्ठाचार्य कहलाते थे। ग्वालियर से प्राप्त ले० नं० ६४० में और बाबा गंज से प्राप्त लेख नं० ६४३ में इस संघ के कुछ दूसरे भट्टारकों के नाम गुरुपरम्परा पूर्वक मिलते हैं, वे हैं— क्षेमकीर्ति, हेमकीर्ति, विमलकीर्ति (६४०) तथा क्षेमकीर्ति, हेमकीर्ति, कमलकीर्ति एवं रत्नकीर्ति (६४३)। संभव है इन दोनों लेखों के भट्टारक एक परम्परा से सम्बन्धित थे और लेख नं० ६३३ की परम्परा से जुदे थे, क्योंकि ज्ञानार्णव की लेखक-प्रशस्ति से मालुम होता है कि उक्त लेख के भट्टारक यशः-कीर्ति के बाद उनकी गद्दी पर उनके शिष्य मलय कीर्ति और प्रशिष्य गुणभद्र भट्टारक हुए थे[1]। ले० नं० ६४३ में भट्टारक रत्नकीर्ति को मण्डलाचार्य लिखा

---

१. जैन साहित्य और इतिहास, पृष्ठ ५३५ (प्रथम संस्करण)।

है। माथुर गच्छ (अन्वय) पुष्कर गण का उल्लेख करने वाला सं० १८८१ का एक लेख पभोसा (कौशाम्बी) से प्राप्त हुआ है जिसमें भट्टारक जगत्कीर्ति और उनके शिष्य ललितकीर्ति का निर्देश है।

माथुर गच्छ या संघ का इतना प्रभाव था कि आचार्य देवसेन को अपने ग्रन्थ दर्शनसार में इसकी गणना अलग करना पड़ी। माथुर संघ नाम भी स्थान के कारण पड़ा है—मथुरा नगर या प्रान्त का जो मुनिसंघ है वह माथुर संघ। मथुरा प्राचीन काल से जैन धर्म का प्रमुख स्थान रहा है यह हम मथुरा से प्राप्त बहुसंख्यक लेखों से जान चुके हैं। स्थान सापेक्षिकता के कारण संघों, गणों एवं गच्छों के नाम को लेकर बाबू कामताप्रसाद जी जैन ने काष्ठासंघ की उत्पत्ति के सम्बन्ध में कल्पना की है कि यह संघ मथुरा के निकट जमुना तट पर स्थित काष्ठा ग्राम से निकला[1] है, या हो सकता है कि काष्ठासंघ जैन मुनियों के उस साधुसमुदाय का नाम पड़ा जिसका मुख्य स्थान काष्ठा नामक स्थान[2] था।

काष्ठासंघ माथुरान्वय के प्रसिद्ध आचार्यों में सुभाषितरत्नसन्दोह आदि अनेक ग्रन्थों के रचयिता आ० अमितगति हो गये हैं जो परमार नरेश मुंज और भोज के समकालीन थे (वि० सं० १०२० से १०७३)।

काष्ठासंघ, की दूसरी शाखा लाट वागट से भी सम्बन्धित दो लेख प्रस्तुत संग्रह में हैं और वे हैं दूबकुण्ड से प्राप्त ले० नं० २२८ और २३५ । सन् १०८८ ई० के लेख नं० २२८ में इस शाखा (गण) के देवसेन, कुलभूषण, दुर्लभसेन, शान्तिषेण एवं विजयकीर्ति नामक आचार्यों के नाम गुरु-शिष्यपरम्परा के रूप में दिये गये हैं। अन्तिम आचार्य विजयकीर्ति उक्त प्रशस्ति के रचयित थे। यदि पूर्ववर्ती चार आचार्यों का समय १०० वर्ष मान लिया जाय

---

१. जैन सिद्धान्त भास्कर भा० २, किरण ४, पृष्ठ २८-२९ ।

२. पं० नाथूराम जी प्रेमी ने बतलाया है कि दिल्ली के उत्तर में जमुना के किनारे काष्ठा नगरी थी जिस पर नागवंशियों की एक शाखा का राज्य था १४वीं शताब्दी में 'मदनपारिजात' निबन्ध यहीं लिखा गया था।

तो उसे सन् १०८८ में से घटाने पर देवसेन का समय सन् ९८८ ई० के करीब आ जाता है। देवसेन अपने गण के उन्नत रोहणाद्रि थे। कुलभूषण, दुर्लभसेन निर्मल चरित्रवान् आचार्य थे। शान्तिषेण ने राजा भोज की सभा में अम्बरसेन आदि सैकड़ों वादियों को हराया था। लेख नं० २३५ में काष्ठासंघ के महाचार्य श्री देवसेन की पादुकाओं की स्थापना का उल्लेख है। यह लेख प्रथम लेख के ठीक सात वर्ष बाद का है। संभव है इस संघ के प्रमुख आचार्य देवसेन की स्मृति को बनाये रखने के लिए उनकी परम्परा के शिष्यों ने स्थापना की हो।

लाट बागड संघ में प्रद्युम्नचरित्र काव्य के कर्ता आचार्य महासेन हो गये हैं जो कि परमार राजा मुंज के समय वि० सं० १०५० के लगभग हुए हैं।

इस संघ के अन्य गणों गच्छों के विषय में इन लेखों से विशेष कुछ ज्ञान नहीं होता है।

---

४. राज वंश और जैन धर्म

जैन संघ का विस्तृत परिचय जानने के बाद अब हम इन लेखों से प्राप्त होने वाले उत्तर भारत और दक्षिण भारत के राज वंशों का परिचय तथा उनके समय में जैन धर्म की स्थिति का यथाशक्य वर्णन करते हैं।

अ. उत्तर भारत के राज वंश

यद्यपि इस संग्रह में दक्षिण भारत के लेख अधिक हैं फिर भी उत्तर भारत के जो भी लेख हैं उनसे प्राप्त राज वंशों का परिचय उन वंशों के इतिहास के लिए पूरक का काम देता है। इतना ही नहीं कुछ लेख तो ऐसे हैं जो कि कतिपय वंशों का परिचय देने में एक मात्र साधन समझे जाते हैं। उदाहरण के लिए उदयगिरि (उड़ीसा) से प्राप्त ले० नं० २ कलिंग सम्राट खारवेल के इतिहास पर, दूबकुण्ड से प्राप्त ले० नं० २२८ दूबकुण्ड के कच्छपघातों पर तथा ले० नं० ३०५ के अर्थूणा की परमार शाखा पर प्रकाश डालते हैं।

प्रस्तुत संग्रह का सर्वप्रथम लेख मौर्य सम्राट् अशोक का है जो कि उसके धर्म

शासनों में सातवाँ माना जाता है। इसका समय लगभग २४२ ई० पूर्व है। यह एक स्तम्भ पर खुदा हुआ है। शिलालेखों में जैनियों का सर्व प्रथम उल्लेख इसी लेख में निगण्ठ नाम से हुआ है। पाली भाषा में, जिससे कि इस लेख की भाषा बहुत कुछ मिलती है भगवान् महावीर का निगण्ठ नाटपुत्त शब्द से और जैनियो का निगण्ठ (निर्ग्रन्थ) नाम से बीसों जगह उल्लेख किया गया है। उक्त लेख से प्रगट होता है कि बौद्ध सम्राट् अशोक की धार्मिक नीति बड़ी उदार थी। उसने अन्य सम्प्रदायों के समान जैनों का भी अनेकविध उपकार करने के लिए धर्म महामात्य नियुक्त किये थे।

इस संग्रह का दूसरा लेख एक महत्त्वपूर्ण एवं प्रनिविधि लेख है। इसमें कलिंग के जैन सम्राट् खारवेल का इतिहास दिया गया है जो कि तत्कालीन राजनीतिक एवं धार्मिक इतिहास की दृष्टि से बड़े महत्त्व का है। यह लेख सन् १८२७ या उसके पूर्व स्टर्लिंग महोदय को मिला था। इसके बाद उसकी पाण्डुलिपि बनाने और उसे पढ़ने में उच्चकोटि के अनेकों विद्वानों ने अथक परिश्रम किया। उनमें जेम्स प्रिन्सेप, जनरल कनिंघम, राजेन्द्रलाल मित्र, भगवानलाल इन्द्र जी, राखालदास बनर्जी, और काशीप्रसाद जायसवाल के नाम प्रमुख रूप से उल्लेखनीय है। डा० वेणीमाधव वरुआ ने इस लेख का महत्त्व आंकते हुए करीब ३०० पृष्ठों का एक ग्रन्थ ओल्ड ब्राह्मी इन्स्क्रिप्सन्स, नाम से लिखा है और अनेक तथ्यों के आधार से यह नया पाठ प्रस्तुत किया है। उन्होंने उक्त लेख का अध्ययन, खारवेल वंश से सम्बन्धित अन्य १४ जैन लेखों के साथ करके उक्त वंश का एक अच्छा परिचय दिया है। इस तरह इस महत्त्वपूर्ण लेख के अध्ययन में विद्वानों ने १०० से अधिक वर्ष लगाये। अशोक के लेखों के सिवाय, शायद ही अन्य किसी लेख का इस प्रकार अध्ययन किया गया हो। प्रस्तुत संग्रह में जो पाठ दिया है वह सन् १९२१ तक निर्धारित पाठों में से एक है। इस पर से जो निष्कर्ष निकले थे वे अब बहुत कुछ पुराने एवं भ्रामक कहे जा सकते हैं।

जो हो, खारवेल चेदि (महा मेघवाहन) वंश का तृतीय नरेश था। उदयगिरि से प्राप्त एक लेख से उसके पिता का नाम वक्रदेव ज्ञात होता है। उसने

अपने प्रारम्भिक जीवन के १५ वर्ष कुमारावस्था में और ६ वर्ष युवराज के रूप में बिताये। २४ वें वर्ष में उसका राज्याभिषेक हुआ। उसने लालाक वंश के हस्तिसिंह के प्रपौत्र की पुत्री से विवाह किया था। वह जैनधर्म का परम भक्त था इसलिए वह भिक्षुराजा एवं धर्मराजा कहलाता था। पर वह अन्धभक्त न था। अशोक के समान ही अन्य धर्म वालों (पाषण्ड) का भी आदर करता था। राजगद्दी सम्हालते ही उसने दिग्विजय प्रारम्भ की। अपने राज्य के दूसरे वर्ष में उसने दक्षिण भारत पर चढ़ाई की। उस समय उस देश का राजा सातवाहन वंश का सातकर्णि प्रथम था। राज्य के चतुर्थ वर्ष में उसने किसी विद्याधर नरेश की राजधानी पर अधिकार कर लिया तथा उसी वर्ष वरार प्रान्त के राष्ट्रिक और भोजकों को भी परास्त किया। आठवें वर्ष में उसने गोरथगिरि नामक पहाड़ी किले (गया जिले की 'बराबर' की पहाड़ियां) को नष्ट कर राजगृह पर चढ़ाई की, इस समाचार से मथुरा के यवन राजा के मन में भय का संचार हो गया। ग्यारहवें वर्ष में उसने मसुलीपट्टम् प्रदेश (मद्रास प्रान्त) के राजा की राजधानी पिथुड को नष्ट कर दिया और बारहवें वर्ष में मगधनरेश बहसतिमित्र[1] पर चढ़ाई कर नन्दराजा द्वारा कलिंग से लायी गयी एक जिनमूर्ति को छीन कर ले गया। उसी वर्ष उसने सुदूर दक्षिण के पाण्ड्य नरेश को भी हराया था।

लेख में उसके १४ वर्षों के कार्यों का वर्णन है जिससे ज्ञात होता है कि वह बड़ा ही प्रजाहितैषी था, अनेकों कलाओं में प्रवीण था तथा उसने अनेकों निर्माण कार्य कराये थे। अन्त में लिखा है कि जिनधर्म भक्त उस राजा ने जैन साधुओं के लिए कुमारी पर्वत (खण्डगिरि) पर ११७ गुफायें बनवायी थीं और पाभार स्थान में एक जैन मठ का निर्माण कराया तथा अनेक स्तम्भ, चैत्यादि भी बनवाये थे।

अनेक प्रमाणों के आधार से इस राजा का समय इतिहासज्ञ ईसा पूर्व प्रथम शताब्दी के लगभग मानते हैं।

---

१. इस नरेश का मामा आषाढसेन जैनधर्म भक्त था यह बात प्रमोसा से प्राप्त ले० नं० ६ से ज्ञात होती है।

इस संग्रह में उदयगिरि खंडगिरि की गुफाओं से प्राप्त केवल तीन लेख दिए गये हैं। दो (२,३) तो खारवेल के वंश से सम्बन्धित हैं। तीसरा लेख (२४५, लग० ११ वीं शताब्दी) केसरीवंश के नरेश उद्योतकेसरी के समय का है।

इसके वाद कालक्रम से मथुरा के लेख आते हैं जिनसे हमें शकों के क्षत्रप तथा कुषाणवंशी राजाओं का परिचय मिलता है। उनका वर्णन पहले किया जा चुका है।

कुषाणों के वाद गुप्तवंश का राज्य आता है। इस वंश के केवल तीन लेख (६१,६२ एवं ६३) दिये गये हैं। लेख ६१ के प्रथम श्लोक में गुप्त संवत्सर १०६ दिया गया है। लेख ६२ में कुमारगुप्त का नाम एवं गुप्त संवत् ११३ दिया गया है। इस लेख की विशेषता यह है कि वह सूचित करता है कि उस समय में भी कल्पसूत्र की पट्टावली में निर्दिष्ट प्राचीन गण एवं शाखादि विद्यमान थे। लेख नं० ६३ स्कन्दगुप्त के राज्यकाल का है उसमें आदिकर्ता पंच तीर्थंकरों की प्रतिमा के स्थापन का उल्लेख है।

उत्तर भारत में गुप्तवंश के वाद ४०० वर्षों में होने वाले किसी राजवंश से संबंधित जैन लेख इस संग्रह में नहीं हैं। हाँ, हर्षवर्धन (सन् ६०६-६४७ ई०) का उल्लेख हमें एहोले से प्राप्त चालुक्य पुलकेशि के एक लेख (१०८) में मिलता है जिसमें लिखा है कि वह पुलकेशिद्वारा विगलितहर्ष किया गया था (हार गया था)। इसी तरह उसी लेख में कलचूरि वंश का उल्लेख है जिसे पुलकेशि के चाचा मंगलीश ने हराया था।

इसके वाद ६ वीं शताब्दी के गुर्जर प्रतिहार वंश के प्रतापी राजा मिहिर-भोज के समय का एक लेख (१२८) देवगढ़ से प्राप्त होता है जिसमें ६१६ विक्रम सं० अङ्कित है। वहाँ उक्त नरेश को सम्राट् की उपाधि से भूषित पाते हैं। उसके महासामन्त विष्णुराम के शासन में आचार्य कमलदेव के शिष्य श्रीदेव ने शान्तिनाथ का एक मन्दिर वनवाया था। लेख से मालुम होता है कि समय देवगढ़ या उस क्षेत्र का नाम लुअच्छगिरि था।

गुर्जर प्रतिहार साम्राज्य के पतन के बाद उत्तर भारत में अनेक छोटे छोटे राज्य उदित होते हैं। उनमें चन्देल, परमार, कच्छपघात उल्लेखनीय हैं। इस संग्रह में दुबकुण्ड से प्राप्त लेख (नं० २२८) में दुबकुण्ड शाखा के कच्छवाहों की वंशावली एवं प्रत्येक राजा का महत्त्व बतलाया गया है। इस वंश का द्वितीय नरेश अर्जुन, चन्देल नरेश विद्याधर के अधीन था तथा उसने गुर्जर प्रतिहार नरेश राज्यपाल को युद्ध में मार डाला था तृतीय नरेश अभिमन्यु के शस्त्र प्रयोग से परमार नरेश भोज भी डरता था। यह लेख इस वंश के पांचवें नरेश विक्रमसिंह के समय का है। उक्त नरेश के नगर चन्दोभ (दुबकुण्ड) में कुछ जैन व्यापारियों ने काष्ठासंघ के मुनि विजयकीर्ति की प्रेरणा से एक मन्दिर का निर्माण कराया था। विक्रमसिंह ने उस मन्दिर के लिए कई प्रकार के दान भी दिये। उक्त लेख में काष्ठासंघ के महाचार्य देवसेन से लेकर विजयकीर्ति तक की पट्टावली दी गयी है।

कच्छपघातों की एक शाखा ग्वालियर से भी राज्य करती थी। उसके एक नरेश वज्रदाम के नाम एवं समय को सूचित करने वाला सुहानियाँ से प्राप्त एक लेख नं० १५३ है।

महोबे और खजुराहो से प्राप्त कतिपय लेखों में चन्देल नरेशों के नाम एवं संवत् दिये गये हैं। उनसे उनके राजनीतिक इतिहास पर कोई विशेष प्रकाश नहीं पड़ता, पर जैन धर्म की अच्छी स्थिति का पता अवश्य लगता है।

परमार वंश की मुख्य शाखा के जैन लेख इस संग्रह में नहीं है पर उसकी बांसवाड़ा एवं चन्द्रावती शाखा को बतलाने वाले लेख इस संग्रह में आ सके हैं। लेख नं० ३०५ क से बांसवाड़ा शाखा के मण्डलीक, चामुण्डराज एवं विजयराज का पता चलता है। इस लेख में काष्ठासंघ माथुरान्वय के एक नये आचार्य छत्रसेन का नाम दिया गया है जो कि अच्छे वक्ता थे। लेख में उल्लेख है कि विजयराज के राज्य में भूषण नामक एक जैन ने एक मूर्ति की स्थापना की थी।

चन्द्रावती के परमारों पर प्रकाश डालने वाले आबू से प्राप्त दो लेख

(४७१-७२) हैं। चूँकि उन लेखों का मूल उद्धृत नहीं हो सका इसलिए उनका महत्व बतलाने में कठिनाई है।

गुजरात के चौलुक्य वंश के प्रसिद्ध जैन सम्राट् कुमारपाल के राज्य का केवल एक लेख न० ३३२ इस संग्रहमें लिया गया है। यद्यपि यह लेख किसी जैन घटना या दानादि से सम्बन्धित नहीं है पर चूँकि यह दिगम्बराचार्य रामकीर्ति की रचना है इसलिए संग्रह में आ सका है। यह लेख कुमारपाल के चित्तौड़ आगमन पर लिखाया गया था तथा उसमें उक्त नरेश द्वारा शाकम्भरीश की पराजय और सपादलक्ष देश को मर्दन करने का उल्लेख है। उस समय शाकम्भरी का पति अर्णोराज चौहान था जिसे कुमारपाल ने हराया था और पीछे उसकी बेटी से विवाह किया था। उक्त लेख से यह भी ज्ञात होता है कि उस समय तक कुमारपाल शिवभक्त था। उसने वहाँ समिधेश्वर के मन्दिर के लिए एक गाँव प्रदान किया था।

राजस्थान के चाहमानो (चोहानों) की विविध शाखाओं को द्योतन करने वाले भी कुछ लेख इस संग्रह में निर्दिष्ट हैं पर खेद है कि उनका मूल पाठ नहीं दिया गया जिससे उनका महत्त्व बतलाना कठिन है। बिजोली से प्राप्त सन् ११७० ई० का लेख नं० ३७४ शाकम्भरी के चोहानों के इतिहास के लिए प्रमुख लेख है। यद्यपि यह सोमेश्वर चौहान के राज्यकाल का है पर इस विशाल लेख में उसके पूर्व के २६ नरेशों की वंशावली एवं प्रत्येक का वर्णन दिया गया है।

इसी तरह लेख नं० ३५७-३५८ नडोले के चोहान अल्हणदेव के समय के हैं जिससे उक्त शाखा के चौहानों का परिचय मिलता है। सुन्ध पर्वत से प्राप्त लेख नं० ५०७ में जालौर की चौहान शाखा के कई नरेशों का वर्णन है। गुजरात के अन्तिम हिन्दू शासक वंश—बघेल वंश के लवणप्रसाद वीरधवल तथा उनके प्रसिद्ध मंत्री वस्तुपाल, तेजपाल की गतिविधियां एवं धार्मिक कार्यों का वर्णन भी हमारे संग्रह के एक लेख नं ४७६ से मिलता है।

१५ वीं शताब्दी में ग्वालियर स्थान से राज्य करने वाले तोमरवंशी डूङ्गरेन्द्र के समय दो लेख (६३३ और ६४०) मिले हैं। ये लेख ग्वालियर के

संग्रह में मूलसंघ के प्रथम दो लेखों में हमें आचार्य वीरदेव[1] और चन्द्रनन्दि आचार्य का नाम मिलता है। उक्त आचार्यों ने जैन मन्दिरों की प्रतिष्ठा करायी थी और गङ्ग नरेश माधव द्वितीय और अविनीत ने कुछ भूमि और ग्रामादि दान में दिये थे।

उपर्युक्त लेखों में मूलसंघ के पश्चात्कालीन लेखों में दिखने वाले किसी गण, गच्छ एवं अन्वय तथा बलि का निर्देश नहीं है। उनका उल्लेख सातवीं के उत्तरार्ध (लेख नं० १११ सन् ६८७ ई०) से ही मिलता है। लेखों से प्राप्त होने वाले इस संघ के प्रमुख गणों का नाम इस प्रकार हैं:— देवगण, सेनगण, देशिय गण, सूरस्थगण, क्राणूरगण और बलात्कार गण। इन गणों का नाम-करण प्रायः मुनियों के नामान्त शब्दों को लेकर या प्रान्त विशेष अथवा स्थान विशेष को लेकर किया गया है। इनमें लेखों के क्रमानुसार देवगण प्राचीन (७ वीं शता०) है। इसके बाद सेन, देशिय और सूरस्थ गण हैं। शेष का उल्लेख ११ वीं १२ वीं शताब्दी से ही मिलता है, इसके पहले नहीं। इन गणों और उनके अवान्तर भेदों का परिचय देने के पहले इनके समकालीन दूसरे जैन संघों—विशेष कर यापनीय, कूर्चक और द्रविड संघ—का परिचय देना आवश्यक है।

यापनीय संघ

यह संघ दक्षिण भारत की अपनी देन है। वहाँ के जलवायु और कठोर जीवन बिताने के प्रति आग्रह ने इस संघ को भग० महावीर द्वारा उपदिष्ट यथा-वत् जैनधर्म पालन करने में प्रेरणा दी। इस संघ के साधु एक ओर दिगम्बर साधुओं के समान उग्र चर्या के रूप में नग्न रहते, मोर की पिच्छी रखते तथा पाणितल भोजी थे एवं नग्न मूर्तियाँ पूजते थे और वन्दना करने वालों को धर्म-

१—संभव है ये वीरदेव राजगृह (विहार) के सोन भण्डार से प्राप्त एक एक लेख (नं० ८७ ३री४थी श०) के आचार्य वैरदेव ही हों। देखो 'प्रसिद्ध जैन केन्द्र' प्रकरण।

नरेश का नाम, दडिग कोङ्गुणि देते हैं और उसका समय सन् १८८-२०० के लगभग मानते हैं[1]।

प्रस्तुत संग्रह में इस वंश का सबसे प्राचीन ले० नं० ६० है, जिसे गुप्त काल के प्रारंभ का होना चाहिये। इसमें कोङ्गुणिवर्मा प्रथम से माधववर्मा द्वितीय तक पाँच नरेशों की वंशावली दी गई है यदि प्रथम राजा के राज्य का प्रारंभ समय ई० सन् २०० के लगभग मान लिया जाय और प्रत्येक नरेश को ३५-४० वर्ष या उससे कुछ अधिक वर्ष का राज्यकाल दिया जाय (जो कि संभव है) तो लेख के अन्तिम राजा माधव द्वितीय का समय ई० सन् ३७५-४०० के लगभग या कुछ बाद आता है। उक्त लेख में इस बात का उल्लेख नहीं है कि कोङ्गुणि-वर्मा और उसके बाद के दो नरेश किस धर्म के प्रतिपालक थे। पर इस बात का वहाँ स्पष्ट निर्देश है कि तृतीय नरेश हरिवर्मा महाधिराज का उत्तराधिकारी विष्णु-गोप नारायण भक्त था और उसका उत्तराधिकारी माधववर्मा त्र्यम्बकभक्त था[2]। माधववर्मा द्वितीय ने चिर प्रनष्ट देवभोग, ब्रह्मदेय आदि को फिर से संचालित किया था और कलियुग में धर्मोद्धार किया था (६४)। इसका विवाह कदम्बवंशी नरेश काकुस्थवर्मा की बेटी से हुआ था क्योंकि गंगवंश के अनेक लेखों में इसके बेटे अविनीत को कदम्बनरेश कृष्णवर्मा (संभव है प्रथम) का प्रिय भागिनेय लिखा है[3] (६५, १२१, १२२)। कृष्णवर्मा काकुस्थवर्मा का द्वितीय पुत्र था। त्र्यम्बकभक्त होते हुए भी माधववर्मा द्वितीय की धार्मिक नीति बड़ी उदार थी।

---

१. मैसूर एण्ड कुर्ग इन्स्क्रिप्सन्स पृष्ठ, ३२, ४६.

२. लुइस राइस महोदय सन्देह करते हैं कि इन ताम्रपत्रों में प्रत्येक राजा के साथ पूर्व निर्धारित या सांचे में ढले हुए के समान जो विवरणात्मक वाक्य दिये हैं, वे संभव है, तथ्य नहीं हैं। वे मानते हैं कि ब्राह्मण प्रभाव के कारण ताम्रपत्र उत्कीर्ण करने वाले ने स्वेच्छा पूर्वक तथ्यों को विकृत कर उनके जैन होने पर पर्दा डाला है।

[3] पीछे कदम्बों का परिचय भी देखिये।

किले में जैन मूर्तियों के निर्माण कराने वाले जैन हितैषी नरेश डूंगरसिंह और कीर्तिसिंह के राज्य में जैन धर्म की स्थिति के सूचक हैं। नं० ६३६ (सन् १४५३ ई०) टोंक से प्राप्त एक लेख में लूंगरेन्द्र नरेश का उल्लेख है। लेख उक्त तोमरवंशी राजाओं के समकालीन है। लूंगरेन्द्र संभव है डूंगरेन्द्र (तोमरवंशी) का ही नाम है जो अशुद्ध रूप से उत्कीर्ण हो गया या पढ़ा गया है।

लेख नं० ६१७ (सन् १४२४) में मुस्लिम सरदार अलपखां के शासनकाल में देवगढ़ तीर्थ में जैन प्रवृत्तियों का निर्देश है।

आ. दक्षिण भारत के राजवंश

१. गङ्गवंश—दक्षिण भारत के प्राचीन राजवंशों में से एक गंग वंश माना जाता है। इस वंश का जैन धर्म से ईसा की प्रारम्भिक शताब्दियों से ही सम्बंध रहा है। ले० नं० २७७ (सन् ११२१ ई०) में इस वंश की दक्षिण भारत में स्थापना की कहानी दी गई जिससे ज्ञात होता कि उत्तर भारतवासी इक्ष्वाकुवंशीय किसी गंगदत्त से चलने वाले गंगवंश के दो राजकुमार दडिग और माधव ने इस की स्थापना काणूर गण (?) के जैनाचार्य सिंहनन्दि की सहायता से गंगवाडि ९६००० प्रान्त में की थी। उक्त लेख में सिंह नन्दि को 'गंगराज्य-समुद्धरणम्' कहा गया है। यद्यपि यह बहुत पश्चात्कालीन निर्देश है इसलिए इस लेख का वक्तव्य कहाँ तक सच है हम नहीं कह सकते। हाँ, इस वंश के शुरू के लेखों में ऐसा कोई कथन नहीं है। पर जैन गुरु ने इस वंश के आदि राजाओं की सहायता की थी यह बात ईस्वी सातवीं शताब्दी और उसके बाद के गंग वंशी तथा अन्य वंशों के लेखों से पुष्ट होती है[1]। इस वंश के प्रारम्भिक लेखों में गंगनरेशों को जाह्नवेय कुल एवं काण्वायन सगोत्र का कहा गया है (९०,९४) तथा प्रथम नरेश का नाम कोङ्गुणि महाधिराज दिया गया है। लु० राइस महोदय इस

---

१. भास्कर आनन्द सालेतोरे, मेडीवल जैनिज्म, पृष्ठ ९-१०

अविनीत का उत्तराधिकारी एवं पुत्र दुर्विनीत संस्कृत और कन्नड भाषा का बड़ा विद्वान् था। उसे एक ताम्रपत्र में 'शब्दावतारकार, देवभारतीनिबद्ध बृहत्कथा' आदि कहा गया है। राइस महोदय एवं डा० सालेतोरे आदि विद्वान् इस पद की व्याख्या कर यह सूचित करते हैं दुर्विनीत जैन वैय्याकरण पूज्यपाद का शिष्य था और उसने पूज्यपाद द्वारा लिखे शब्दावतार को कन्नड भाषा में परिवर्तित किया था[1]। उसने भारवि के किरातार्जुनीय काव्य के १५ सर्गों पर संस्कृत टीका भी लिखी थी (१२१-१२२)। इसके समय का उल्लेख किया जा चुका है। हां, इसके समकालीन कोई जैन लेख हमारे संग्रह में नहीं है।

इसके बाद इस वंश के राजाओं का वर्णन ई० सन् ७५० के लेख नं० ११९ तथा बाद के लेखों (१२०-१२२) में मिलता है। इससे ज्ञात होता है कि गङ्ग वंश एक स्वतन्त्र राज्य था, उसने किसी की पराधीनता स्वीकार न की थी। इन लेखों से दुर्विनीत के बाद के नरेशों—मुष्कर, श्रीविक्रम, भूविक्रम, शिवमार प्रथम (नवकाम) श्रीपुरुष, शिवमार द्वितीय एवं मारसिंह प्रथम तक वर्णन मिलता है। लेख नं० १२१ और १२२ में इन राजाओं की राजनीतिक सफलताओं और सामरिक विजयों का उल्लेख है।

शिवमार द्वितीय के पुत्र मारसिंह प्रथम के सम्बन्ध में उसके समकालीन लेख नं० १२२ से ज्ञात होता है कि ई० सन् ७९७ में वह युवराज ही था। उसके राज्यकाल का ऐसा कोई लेख नहीं मिला जिससे कहा जाय कि वह राजा हो सका हो।

इसके बाद ईस्वी सन् ७९७ से ८८६ तक इस वंश का कोई लेख इस संग्रह में नहीं आ सका।

मण्णे से प्राप्त सन् ८०२ ई० के एक लेख (१२३) से ज्ञात होता है कि राष्ट्रकूट गोविन्द तृतीय के समय में राष्ट्रकूट वंश दूसरे वंश की प्रतियोगिता में

---

[1] मेडीवल जैनिज्म, पृष्ठ १९–२३।

ऊपर उठ गया था। उसने गङ्गों को बहुत समय से पराधीन देख उन्हें मुक्त किया पर उनके उद्धत स्वभाव के कारण पुनः बांध दिया। गङ्ग वंश के पराधीन होने की बात सन् ८६० के कोन्नूर से प्राप्त एक लेख (१२७) से भी ज्ञात होती है। इतिहासज्ञों का अनुमान है कि गङ्ग वंश के इन बुरे दिनों में शिवमार द्वितीय उक्त वंश की गद्दी पर था। उसने राष्ट्रकूट वंश की अधीनता मान ली थी। इस राजा के सम्बन्ध में लेख नं० १८२ में लिखा है कि यह राष्ट्रकूट नरेश अमोघवर्ष प्रथम (८१४-८७७ ई०) का पञ्चमहाशब्दधारी महामण्डलेश्वर था। इसने कल्भावी में एक जैन मन्दिर बनवाकर उसके लिए एक गांव दान में दिया था।

इसके बाद भी जैनधर्म की परम्परा इस वंश के नरेशों में बराबर चलती रही। लेख नं० १३१ से ज्ञात होता है कि सन् ८८७ में सत्यवाक्य कोंगुणिवर्मा ने अपने राज्याभिषेक के १८ वें वर्ष में एक जैन मन्दिर के उद्देश से भट्टारक सर्वनन्दि के लिए १२ गांव दान में दिए थे। इतिहासज्ञ इस राजा को राचमल्ल द्वितीय मानते हैं जिसे राष्ट्रकूट नृप कृष्ण द्वितीय ने हराया था। इस लेख में और इसके बाद के लेखों में इस वंश की राजधानी का नाम कुवलालपुर (वर्तमान कोलार) और किले का नाम उच्च नन्दगिरि नाम दिया गया है। लेख नं० १३८ से विदित होता है कि सत्यवाक्य (राचमल्ल द्वितीय) तथा उनके भतीजे एरेयप्परस (चतुर्थ) ने कुमारसेन भट्टारक को दान दिया था। ले० नं० १३६ के अनुसार एरेयप्परस के पुत्र नीतिमार्ग अर्थात् राचमल्ल तृतीय का राज्य उत्तरोत्तर बढ़ रहा था। उसने कनकगिरि तीर्थबसदि को दुगुना कर भट्टारक कनकसेन को दान दिया।

सूदी से प्राप्त सन् ९३८ का एक लेख (१४२) इस वंश के इतिहास की दृष्टि से बड़े महत्त्व का है। इसमें गंगवंश की आदि से लेकर बूतुग द्वितीय तक सारे राजाओं की वंशावली दी गई है तथा कहीं कहीं उनके राजनीतिक महत्त्व के कार्यों का भी उल्लेख किया गया है। इस लेख में लिखा है कि बूतुग द्वितीय ने अपनी पत्नी द्वारा निर्मापित एक जैन मन्दिर के लिए कुछ भूमि दान में दी।

बूतुग, राचमल्ल तृतीय का भाई एवं उत्तराधिकारी था, तथा राष्ट्रकूट नरेश कृष्ण तृतीय अकालवर्ष (९३८-९६६ ई०) का बहनोई और सामन्त राजा था।

बूतुग द्वितीय का पुत्र मारसिंह तृतीय इस वंश का बड़ा प्रतापी राजा हुआ है। लेख नं० १४९ और १५२[1] में इसकी जो अनेक उपाधियाँ दी गई हैं और उसके लिए जो प्रशंसात्मक वाक्य प्रयुक्त हुए हैं उनसे इसके प्रतापी होने में कोई संदेह नहीं रह जाता। लेख नं० १४९ के अनुसार उसने पुलिगेरे नामक स्थान में एक जिन मन्दिर बनवाया जो कि इसके नाम पर 'गंगकंदर्प जिनेन्द्र मन्दिर' कहलाता था। लेख न० १५२ के उल्लेखानुसार इसने अनेक पुण्य कार्य किए थे, और जैन धर्म के उत्थान में बड़ा योग दिया था। इसी लेख में उसकी अनेक सामारिक विजयों का उल्लेख है। उक्त लेख के अनुसार इस राजा ने अन्त में राज्य का परित्याग कर अजितसेन भट्टारक के समीप तीन दिवस तक सल्लेखना व्रत का पालन कर बंकापुर में देहोत्सर्ग किया था। यह राजा राष्ट्रकूट नरेशों का महासामन्त था और इसने कृष्ण तृतीय के लिए अनेक देश जीत कर दिये थे तथा इन्द्र चतुर्थ का राज्याभिषेक कराया था। इसका और इसके बेटे राचमल्ल चतुर्थ का मंत्री और सेनापति प्रसिद्ध चामुण्डराय था।

राचमल्ल चतुर्थ के समय का केवल एक लेख (१५४) प्रस्तुत संग्रह में है। उसने श्रवणबेल्गोल निवासी श्रीमत् अनन्तवीर्य के लिए पेर्गदूर नामक ग्राम तथा कुछ और दान दिये थे। इसके राज्यकाल में सेनापति चामुण्डराय ने श्रवणबेल्गोल स्थान में बाहुबलि की एक विशालमूर्ति का निर्माण कराया था।

गंग वंश के राजाओं में अन्तिम उल्लेखनीय नाम है रक्कसगंग पेर्म्मानडि राचमल्ल पंचम का जो कि सन् ९८४ में सिंहासनारूढ हुआ था। उसका असली नाम अरुमुलि देव था। वह बूतुग द्वितीय की दूसरी पत्नी रेवकन्निम्मदि से पुत्र वासव का पुत्र था। इसने अपनी कन्याओं के विवाह द्वारा पल्लवों

[1] ...न शिलालेख संग्रह, प्रथम भाग, लेख नं० ३८.

और शान्तरवंश से संबन्ध स्थापित किया था। हुम्मच से प्राप्त लेख नं० २१३ से विदित होता है कि नन्नि आदि शान्तर राजकुमारों की अभिभाविका प्रसिद्ध जैन महिला चट्टल देवी इसी की पुत्री थी। इसके गुरु द्रविड संघ के विजय देव भट्टारक थे। इस राजा ने अपने वंश की गिरती हुई हालत को सुधारने का प्रयत्न किया पर सफल न हो सका।

यद्यपि इस वंश का अन्त सन् १००४ में राज राज चोल प्रथम की लड़ाई में हो गया, तो भी यह यत्र तत्र शाखाओं के रूप में जीवित बना रहा।

ऊपर निर्दिष्ट इस वंश के लेखों के अतिरिक्त दूसरे वंश के लेखों (नं० १७२, २२२, २५१, २५३, २६७, २७७, २९९, ३१४, ४३१) में गंगवंश के अनेकों महामण्डलेश्वरों एवं राजाओं का नाम आता है। ले० नं० २६७, २७७ एवं २९९ में तो इस वंश की प्रारम्भ से अन्त तक की वंशावली दी गई है, पर पीछे के राजाओं के सम्बन्ध में बहुत ही कम बातें मालुम होती हैं जिनसे क्रमबद्ध इतिहास नहीं लिखा जा सकता।

प्रस्तुत शिलालेख संग्रह के देखने से इस बात में तनिक भी सन्देह नहीं रह जाता कि इस वंश के राजा प्रारम्भ से ही जैन धर्म और साहित्य के उपासक एवं संरक्षक साथ ही अपनी उदारनीति के कारण दूसरे सम्प्रदायों को भी दान आदि द्वारा संरक्षण प्रदान करते थे। इस वंश के संरक्षण में जैन धर्म ने अपना स्वर्णयुग देखा है।

२. कदम्बवंशः—प्रस्तुत संग्रह में कदम्ब वंश से सम्बन्धित १० लेख (९६, ९७, ९८, ९९, १००, १०१, १०२, १०३, १०४ और १०५) संग्रहीत हैं जिनमें कतिपय तो संस्कृत भाषा की सुन्दर काव्यात्मक शैली के नमूने हैं। यद्यपि इन लेखों में कोई काल-निर्देश नहीं है पर जिन राजाओं के ये लेख हैं उनका समय अन्य प्रमाणों से ज्ञात होता है इसलिए हमें इन्हें लगभग सन् ३९९ से ५५० के भीतर के मानना चाहिए।

इन लेखों से कदम्ब नरेशों के गोत्रादि विदित होते हैं। तदनुसार वे मानव्य गोत्र एवं हारितीपुत्र अंगिरस के वंशज तथा काकुस्थान्वयी थे। यद्यपि यह वंश

ब्राह्मणधर्मानुयायी था पर इसके कतिपय नरेशों की धार्मिक नीति बड़ी ही उदार थी और कुछ तो जैनधर्म प्रतिपालक भी थे। इस वंश का आदि नरेश मयूर-शर्मा माना जाता है पर उपर्युक्त लेखों में उसका तथा उसके बाद के चार नरेशों का नाम नहीं दिया गया। प्रस्तुत लेखों में इस वंश के पांचवें नरेश काकुस्थवर्मा से ही वंश परम्परा का उल्लेख है।

काकुस्थवर्मा के समय का केवल एक लेख (९६) अबतक उपलब्ध हुआ है। इसमें काकुस्थ वर्मा को कदम्बयुवराज लिखा है तथा उल्लेख है कि उसने ८० वें वर्ष में अपने एक जैन सेनापति श्रुतकीर्ति के लिए अर्हन्तों के खेट ग्राम में, बदोवर क्षेत्र दान में दिया था। लेख के ८० वाँ वर्ष को इतिहासज्ञ गुप्त संवत् का मानते हैं। इस मान्यता का आधार यह है कि कदम्बों का अपना कोई संवत् नहीं चला था तथा काकुस्थवर्मा की कुछ कन्याओं में से एक का विवाह गुप्त नरेश चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य द्वितीय (सन् ३७५-४१५ ई०) के एक पुत्र से हुआ[1] था। गुप्त संवत् के लेखा के अनुसार युवराज काकुस्थवर्मा का समय ३१९ +८०=३९९ ई० होना चाहिए। इसके बाद काकुस्थवर्मा ने राजा के रूप में कुछ वर्ष अवश्य राज्य किया होगा। हम गंग अविनीत के सम्बन्ध में लिख आये हैं कि उसे काकुस्थवर्मा की एक पुत्री विवाही गई थी। समय की दृष्टि से अविनीत (लग० सन् ४०० ई० के बाद) और काकुस्थवर्मा प्रायः समकालीन भी थे। काकुस्थ वर्मा पलासिका में राज्य करता था, पर उसके पुत्र और प्रपौत्र वैजयन्ती से राज्य करते थे। सम्भव है पलासिका, कुछ समय के लिये उनसे छिन गई थी।

काकुस्थवर्मा का पुत्र शान्तिवर्मा था (९९) उसके सम्बन्ध का इस संग्रह में कोई लेख नहीं है। ले० नं० ९९ में इसके सम्बन्ध में लिखा है कि जैसे दुर्जन किसी स्त्री को बलात् खींचता है उसी तरह उसने शत्रु के गृह से लक्ष्मी को आकृष्ट किया था। यह उल्लेख उसके किसी संघर्ष का द्योतक है। उसका बेटा मृगेश

---

[1] दि० च० सरकार, सक्सेसर आफ् सातवाहनाज, पृष्ठ २५६

वर्मा हुआ जिसके राज्य काल के तीन लेख (९७, ९८, ९९) प्रस्तुत संग्रह में हैं। लें० नं० ९७ से ज्ञात होता है कि उसने अपने राज्य के तीसरे वर्ष में अर्हन्तदेव के अभिषेक, उपलेपन एवं पूजनादि के लिए भूमिदान किया था। उसने अपने राज्य के चतुर्थ वर्ष में एक गाँव को तीन भागों में विभाजित कर एक भाग अर्हन्महाजिनेन्द्र के लिए, दूसरा भाग श्वेताम्बर श्रमण संघ तथा तीसरा भाग दिगम्बर श्रमण के उपभोग के लिए दान में दिया था (९८)। आठवें वर्ष में उसने पलाशिका नामक स्थान में एक जिनालय बनवाकर ३३ निवर्तन प्रमाण भूमि को यापनीयों के लिए तथा निर्ग्रन्थ सम्प्रदाय के कूर्चकों के उपभोग के लिए दान में दे दिया (९९)। ले० नं० ९९ में उसे एक धर्मविजयी नृप लिखा है। यह लेख राजनीतिक इतिहास की दृष्टि से महत्त्व का है। इसमें उसे उन्नत गंग कुल को नष्ट करने वाला तथा पल्लव वंश के लिए प्रलयाग्नि लिखा है[1]। इस लेख से मालुम होता है मृगेशवर्मा पलाशिका से राज्य कर रहा था।

मृगेशवर्मा के तीन बेटे थे रविवर्मा, भानुवर्मा और शिवरथ। उनमें रविवर्मा उसका उत्तराधिकारी हुआ। उसके राज्यकाल के तीन लेख (१००, १०१, १०२) इस संग्रह में हैं। ले० नं० १०० के अनुसार सेनापति श्रुतकीर्ति के पौत्र जयकीर्ति ने कदम्ब राजाओं द्वारा परम्परा से प्राप्त पुरुखेटक ग्राम को रविवर्मा की आज्ञा से अपने माता पिता के कल्याणार्थ यापनीय संघ के कुमारदत्त प्रमुख आचार्यों को दान में दे दिया। ले० नं० १०१ राजनीतिक इतिहास की दृष्टि से महत्त्व का है। इसमें लिखा है कि विष्णुवर्मा प्रभृति राजाओं को नष्ट कर तथा कांचीपति चण्डदण्ड को पराजित कर रविवर्मा पलाशिका में समवस्थित था। इतिहासज्ञ इस लेख के विष्णुवर्मा को काकुस्थवर्मा के द्वितीय पुत्र कृष्णवर्मा (प्रथम) का इस नाम वाला ज्येष्ठ पुत्र मानते हैं, जिसने सम्भव है, मुख्य शाखा के विरुद्ध विद्रोह खड़ा किया

---

1. इस लेख में गंगकुल के जिस नरेश से मतलब है वह पेरूर शाखा का गंग नृप अय्यवर्म या माधव प्रथम होना चाहिये। पल्लव नृप को सिंहवर्म का पुत्र स्कन्दवर्मा होना चाहिये। (सक्सेसर आफ सातवाहनाज, पृष्ठ २६४)।

था; तथा काञ्चीपति चण्डदण्ड को नन्दिवर्मा पल्लव या उसका कोई एक उत्तराधिकारी मानते हैं[1]। इस ले० के अनुसार दामकीर्ति (श्रुतकीर्ति का पुत्र) के अनुज श्रीकीर्ति ने अपनी माता के कल्याणार्थ अपने स्वामी रविवर्मा से चार निवर्तन भूमि लेकर जिनेन्द्र के लिए दान में दी। ले० नं० १०२ से ज्ञात होता है कि रविवर्मा के ११ वें राज्य वर्ष में उसके अनुज भानुवर्मा से किसी पण्डर भोजक ने १५ निवर्तन भूमि प्राप्त कर जिनेन्द्र के लिए दान में दे दी। रविवर्मा का राज्यकाल साधारणतः सन् ४७८ से ५१३ ई० के लगभग माना जाता है।

रविवर्मा का उत्तराधिकारी उसका पुत्र हरिवर्मा हुआ। इसके राज्य के दो लेख (१०३–१०४) इस संग्रह में हैं। ले० नं० १०३ से ज्ञात होता है कि उसने अपने राज्य के चतुर्थ वर्ष में अपने चाचा शिवरथ के उपदेश से पलाशिका में सिंह सेनापति के पुत्र मृगेश द्वारा निर्मापित जैन मन्दिर की अष्टाह्निका पूजा के लिए तथा सर्व संघ के भोजन के हेतु कूर्चकों के वारिषेणाचार्य संघ के हाथ में चन्द्रक्षान्त को प्रमुख बनाकर वसुन्तवाटक ग्राम दान में दिया। इसी तरह ले० नं० १०४ से ज्ञात होता है कि उक्त नरेश ने अपने राज्य के पांचवें संवत्सर में सेन्द्रक राजा भानुवर्मा की प्रार्थना पर अहिरिष्टि नामक दूसरे श्रमण संघ के लिए मरदे नामक ग्राम दान में दिया। हरिवर्मा का राज्य काल सन् ५१३ से ५३४ ई० में माना जाता है।

कदम्बों की एक शाखा और थी जिसके कुछ नरेशों ने मुख्य शाखा से विद्रोह किया था यह हमें ले० नं० १०१ से ज्ञात होती है। इस शाखा से सम्बन्धित इस संग्रह में केवल एक लेख (१०५) है। जो कि कृष्णवर्मा प्रथम के राज्यकाल का है। इतिहासज्ञों ने इस कृष्णवर्मा को शान्तिवर्मा का अनुज एवं काकुत्स्थवर्मा का पुत्र माना[2] है। ले० नं० १०५ में उसके अश्वमेधयाजिन्, समरार्जित विपुल ऐश्वर्य, एकातपत्र आदि विशेषण दिये हैं जो कि इसके प्रताप

---

१. सक्सेसर आफ सातवाहनाज, पृष्ठ २७२–२७३।
२. सक्सेसर आफ सातवाहनाज, पृष्ठ २८२।

ले० नं० ६० के अनुसार उसने अपने राज्य के १३ वें वर्ष में आचार्य वीरदेव[1] की सम्मति से मूलसंघ द्वारा प्रतिष्ठापित जिनालय के लिए कुछ भूमि और कुमारपुर गाँव दान में दिया था।

माधव द्वितीय का पुत्र एवं उत्तराधिकारी कोङ्गुणिवर्म धर्ममहाधिराज अविनीत था। ले० नं० ६४ में इसके प्रतापी होने का वर्णन है। लेख से ज्ञात होता है कि यह जैनधर्मानुयायी था। इसने अपने गुरु परमार्हत विजयकीर्ति के उपदेश से अपने राज्य के प्रथम वर्ष में ही मूलसंघ के चन्द्रनन्दि आदि द्वारा प्रतिष्ठापित उरनूर के जैन मन्दिर के लिए एक गाँव प्रदान किया था तथा एक दूसरे जिनमन्दिर के लिए चुंगी से प्राप्त धन का चतुर्थ भाग दान में दिया था। लु० राइस महोदय उक्त लेख का समय सन् ४२५ के लगभग मानते हैं। यदि उनका यह अनुमान सच है तो कहना होगा कि अविनीत सन् ४२५ के लगभग गद्दी पर बैठा था। अविनीत ने बहुत समय तक शासन किया था क्योंकि उसके बेटा दुर्विनीत का समय अनेक प्रमाणों के आधार पर लगभग सन् ४८० और ५२० ई० के बीच बैठता है[2]। अविनीत जैनधर्मानुयायी था यह बात मर्करा से प्राप्त ताम्रपत्रों (९५) से भी सिद्ध होती है[3]।

---

१. जैन धर्म के केन्द्र प्रकरण में हमने इन वीरदेव और सोनभण्डार के वैरदेव मुनि में साम्य स्थापित किया है।

२. प्रो० ज्योतिप्रसाद जैन, 'गङ्गनरेश' दुर्विनीत का समय', जैन एन्टीक्वेरी, भाग १८, अंक २, पृष्ठ १–११।

३. मर्करा से प्राप्त ताम्रपत्र असली नहीं है क्योंकि उनमें पश्चात्कालीन अकालवर्ष पृथ्वीवल्लभ (राष्ट्रकूट नरेश) का निर्देश है तथा जो आचार्यपरम्परा दी गई है वह ई० ९–१० वीं शताब्दी की मालुम होती है। लेख में समयोल्लेख के साथ यह निर्देश नहीं है कि वह किस (शक या विक्रम) संवत् का है।

आदि मण्डलीक राजाओं को दण्डित किया था। लेख का उद्देश्य है कि उक्त नरेश के शासनकाल में सेन्द्रकवंशी सामन्त सामियार ने अलक्तक नगर में एक जैन मन्दिर बनवाया था और राजाज्ञा लेकर चन्द्र ग्रहण के समय कुछ जमीनें और गाँव दान मे दिये। इस लेख के समय के सम्बन्ध में इतिहासज्ञ एकमत नहीं है। डा० रा० गो० भण्डारकर प्रभृति विद्वानों की धारणा है कि पुलकेशि प्रथम के सिंहासनारूढ होने का समय ई० सन् ५५० से पहले नहीं हो सकता, पर यह लेख उस नरेश के राज्यकाल को ६२ वर्ष पहले ले जाता है। जो हो, इस लेख में पुलकेशि प्रथम के वंश गोत्रादि के निर्देश के अतिरिक्त पितामह का नाम जयसिंह और पिता का नाम रणराग दिया गया है। ले० नं० १०६ से ज्ञात होता है कि रणराग के शासनकाल में उसके एक सेन्द्रक सामन्त दुर्गशक्ति ने पुलिगेरे के प्रसिद्ध शंख जिनालय के लिए भूमिदान दिया था।

पुलकेशि प्रथम का उत्तराधिकारी उसका बेटा कीर्तिवर्मा प्रथम था। उसके शासन काल के एक लेख (१०७) के कन्नड अंश से ज्ञात होता है कि कीर्तिवर्मा ने कुछ सरदारों के निवेदन पर जिनेन्द्र मन्दिर के पूजा विधान के लिए कुछ खेत प्रदान किये थे। इसी तरह उक्त लेख के संस्कृत अंश से ज्ञात होता है कि उसने अपने सरदारों द्वारा निर्मापित जिनालय एवं दानशाला आदि के लिए भी कुछ खेतों का दान दिया था।

कीर्तिवर्मा प्रथम का बेटा पुलकेशि द्वितीय हुआ जिसके काल का एक प्रसिद्ध लेख एहोले (१०८) से प्राप्त हुआ है, जिसे कविता के क्षेत्र में कालिदास एवं भारवि की कीर्ति पाने वाले जैन कवि रविकीर्ति ने रचा था। भारतवर्ष के तत्कालीन राजनीतिक इतिहास जानने के लिए यह लेख बड़े महत्त्व का है। इसमें पुलकेशि द्वितीय के पिता कीर्तिवर्मा और चाचा मंगलीश की सामरिक विजयों के उल्लेख के बाद पुलकेशि द्वारा राज्य प्राप्ति और उसकी विस्तृत दिग्विजय का वर्णन मिलता है। उक्त लेख के अनुसार पुलकेशि उत्तर भारत के सम्राट् हर्षवर्धन का समकालीन था और उसने दक्षिण की ओर बढ़ते हुए हर्ष का ह[illegible] (उत्साह) विगलित कर दिया था। लेख के अन्त में लिखा है कि प्रतापी पुल

केशि के आश्रित कवि रविकीर्ति ने पाषाण का एक जैन मन्दिर शक सं० ५५६ में बनवाया था।

इस वंश के अन्य ले० नं० १११, ११३, ११४ से ज्ञात होता है कि चालुक्य नरेश प्रारम्भ से लेकर जैन धर्म और उसके उपास्य स्थानों को संरक्षण देते आये हैं। ले० नं० १११ पुलकेशि द्वितीय के पौत्र विनयादित्य के राज्य-काल का है और नं० ११३ विजयादित्य तथा नं० ११४ विक्रमादित्य द्वितीय के राज्यकाल का है। इनसे विक्रमादित्य द्वितीय तक की वंशावली के अतिरिक्त हमें इन राजाओं के राजनीतिक इतिहास की कोई सूचना नहीं मिलती। ये लेख छोटे दान पत्र के रूप हैं। ले० नं० ११३ से मालुम होता है कि विजयादित्य ने अपने पिता के पुरोहित उदय देव पण्डित अर्थात् निरवद्य पण्डित को एक गाँव दान में दिया था। इसी तरह ११४ वें लेख से मालुम होता है कि विक्रमादित्य द्वितीय ने पुलिगेरे नगर में धवल जिनालय की मरम्मत एवं सजावट करायी थी। तथा मूलसंघ देवगण के विजयदेव पण्डिताचार्य के लिए जिनपूजा प्रबन्ध के हेतु भूमिदान दिया था।

विक्रमादित्य द्वितीय के वाद चालुक्य कुल के बुरे दिन आते हैं। यह बात हमें ले० नं० १२२, १२३, १२४, एवं १२७ से सूचित होती है। गंग और राष्ट्रकूट राजाओं ने इस साम्राज्य को तहस नहस कर दिया और लगभग २०० वर्षों तक यह फिर न पनप सका। इस बीच काल में इसका स्थान राष्ट्रकूट वंश को मिला।

इस राजवंश का इतिहास पढ़ने से मालुम होता है कि सन् ९७४ के आस पास तैलप द्वितीय ने इस वंश का पुनरुद्धार किया तथा कल्याणी नामक स्थान को राजधानी बनाया। नूतन शक्ति-प्राप्त इस वंश के कतिपय राजाओं ने यद्यपि उतने उत्साह के साथ तो नहीं, फिर भी जैनधर्म की यथाशक्ति सेवा की। कवि-चरिते नामक ग्रन्थ से मालुम होता है कि तैलप द्वितीय महान् कन्नड जैन कवि रन्न का आश्रयदाता था। यह धारा नरेश मुंज और भोज का समकालीन था।

इसके हाथ ही मुंज की मृत्यु हुई थी[1]।

इसका पुत्र और उत्तराधिकारी सत्याश्रय इरिव वेडेंग हुआ जिसने सन् ६६७ से १००६ ई० तक शासन किया। इस नरेश के जैन गुरु द्रविडसंघ कुन्दकुन्दान्वय के विमलचन्द्र पण्डित देव थे (१६६)।

सत्याश्रय के दो उत्तराधिकारियों के सम्बन्ध में जैन लेखों से हमें विशेष कुछ नहीं विदित होता, पर जयसिंह तृतीय के सम्बन्ध में कुछ विवाद है। इस नरेश का राज्य सन् १०१५ से १०४२ ई० तक रहा। यह तैलप द्वितीय का पौत्र एवं सत्याश्रय का भतीजा था। कुछ विद्वानों का विश्वास है कि इसने अपनी पत्नी के प्रभाव में धर्म परिवर्तन कर वीर शैवमत अपना लिया था और वसवपुराण के कथनानुसार[2] उसकी पत्नी ने जैन श्रावकों को अनेक प्रकार की क्षति पहुँचाई थी। कुछ इतिहासज्ञों का यह अनुमान है कि यह नरेश अनेक जैन विद्वानों का आश्रयदाता था[3]। इसके राज्य में अनेक हिन्दू और जैन विद्वान् हुए हैं। उसके अनेक विरुदों में एक था मल्लिकामोद। श्रवणबेल्गोल के एक लेख[4] से ज्ञात होता है कि वलिपुर के मल्लिकामोद शान्तीश के चरण अर्चक थे मलधारि गुणचन्द्र। संभव है उक्त मन्दिर को इस राजा ने बनवाया हो या इसके नाम पर किसी दूसरे ने। जयसिंह तृतीय के उत्तराधिकारी सोमेश्वर प्रथम के राज्य में भी उक्त मन्दिर की प्रसिद्धि का उल्लेख ले० नं० २०४ में है।

इस राजा के समय के प्रमुख विद्वान् थे द्रविडसंघ के वादिराज, दयापाल एवं पुष्पषेण सिद्धान्त देव। लेख नं० २१३, २१६ एवं २४८ से ज्ञात होता है कि वादिराज की उपाधि षट्तर्कषण्मुख थी। इनकी एक उपाधि जगदेकमल्लवादि भी थी जिसके सम्बन्ध में कतिपय लेखों से ज्ञात होता है कि यह उपाधि जयसिंह

---

१. इण्डियन एण्टीक्वेरी, भाग २१, पृष्ठ १६७-६८.

२. शर्मा, जैनिज्म एण्ड कर्नाटक कल्चर, पृष्ठ २५.

३. सालेतोरे, मेडीवल जैनिज्म, पृष्ठ ४३.

४. जैन शिलालेख संग्रह, प्रथम भाग, लेख नं० ५५, श्लोक नं० २०.

तृतीय जगदेकमल्ल ने अपने दरबार में किसी वादविजय के प्रसंग में उन्हें दी थी[1]।

उक्त नरेश का पुत्र एवं उत्तराधिकारी सोमेश्वर प्रथम हुआ जिसकी उपाधियाँ आहवमल्ल एवं त्रैलोक्यमल्ल थीं। इसने सन् १०४२ से १०६८ ई० तक राज्य किया। इसके राज्यकाल के ६ लेख (१८१, १८६, १८७, १९८, २०३, २०४) प्रस्तुत संग्रह में है, जो कि इसके अधीन नरेशों के हैं तथा जिनमें इसे अधिराजा के रूप में स्मरण किया गया है। लेख नं० १८६ से ज्ञात होता है कि इसकी रानी केतलदेवी के अधीन कर्मचारी चांकिराज ने त्रिभुवनतिलक जिनालय में तीन वेदियाँ बनवाई और उक्त राजा और रानी की आज्ञा से अनेक प्रकार के दान दिए। ले० नं० २९०[2] से ज्ञात होता है कि इस आहवमल्ल विरुदधारी नृप ने अजितसेन भट्टारक को 'शब्दचतुर्मुख' की उपाधि दी थी। ले० नं० २१३ और ३२६ में अजितसेन भट्टारक की अन्य उपाधियां—वादीभसिंह और तार्किकचक्रवर्ती-के साथ उक्त उपाधि का भी उल्लेख है। ले० नं० २०४ सोमेश्वर प्रथम के राज्य के अन्तिम वर्ष का है इसमें उक्त राजा के राजनीतिक प्रभाव का अच्छी तरह परिचय दिया गया है तथा लिखा है कि इसने शक स० ९९० में प्रधान योग का उत्सव कर तुंगभद्रा में जलसमाधि ले ली थी। इसी लेख में इस नरेश के ज्येष्ठ पुत्र सोमेश्वर (द्वितीय) भुवनैकमल्ल का उल्लेख है, जिसका कि राज्य उसी वर्ष से प्रारम्भ होता है।

सोमेश्वर द्वितीय ने भी जैन धर्म का संरक्षण किया था। ले० नं० २०५ में यह नरेश रट्ट राजाओं के अधिपति राजा के रूप में स्मरण किया गया है। ले० नं० २०७ से ज्ञात होता है कि इस नरेश ने सन् १०७४ ई० में शान्तिनाथ मन्दिर के लिए मूलसंघान्वय तथा क्राणूर गण के कुलचन्द्र देव को नागरखण्ड में भूमिदान दिया था। ले० नं० २१० में प्रसंगवश भुवनैकमल्ल शान्तिनाथदेव मन्दिर

१. लेख नं० २१३ तथा ले० नं० २९० (प्रथम भाग का ५४ वां लेख)
२. जैन शिल लेख संग्रह, प्रथम भाग, ले० ५४

का उल्लेख है। संभव है भुवनैकमल्ल विरुदधारी उक्त नृप ने वह मन्दिर बनवाया था या उसमें शान्तिनाथ की प्रतिमा प्रतिष्ठित करायी थी।

सोमेश्वर द्वितीय के बाद उसके भाई विक्रमादित्य षष्ठ का राज्य सन् १०७६ से ११२६ तक आता है। यह एक बड़ा प्रतापी राजा था। इसके चरित्र को चित्रित करते हुए प्रसिद्ध कवि बिल्हण ने विक्रमाङ्कदेवचरित काव्य लिखा है। इस संग्रह से इस राजा के राज्यकाल के २२ लेख संगृहीत हैं[1]। ये भी इस नरेश के अधीन सामन्त राजाओं द्वारा दानपत्र के रूप में हैं जो प्रायः सामन्त राजाओं के वंशों पर प्रकाश डालते हैं। इन लेखों में कुछ तो गंग वंश से, कुछ शान्तरों से कुछ रट्ट वंशसे, तथा कुछ होय्सल वंश से और कुछ सेना पतियों से संबंधित हैं। ये सब सामन्त घराने जैन धर्म प्रतिपालक थे और अपने लेखों तथा दानपत्रों में त्रिभुवनमल्ल विक्रमादित्य षष्ठ को सम्राट् के रूप में स्मरण करते हैं। ये लेख इस नरेश के द्वितीय वर्ष से ४८ वें वर्ष तक के हैं। ले० नं० २१७ से ज्ञात होता है कि उक्त नरेश ने अपने द्वितीय वर्ष में धारानाथ (परमार), सौराष्ट्र, अंग, कलिङ्ग, मगध, आन्ध्र, अवन्ति एवं पान्चाल को वश में किया था। उसकी एक उपाधि गंगपेर्मानडि थी क्योंकि उसकी माँ गंग वंश की राजकुमारी थी। उसने चालुक्य गंग पेर्म्मानडि चैत्यालय बनवाया था और एक समय अपने दण्डनाथ के अनुरोध पर उस मन्दिर के प्रबन्धादि के लिए एक गांव मूलसंघ, सेनगण और पोगरिगच्छ के रामसेन मुनि को दान में दिया था। हमें कुछ ऐसे लेखों से मालुम होता है जो कि इस संग्रह में नहीं आये, कि इस राजा ने बेल्गोल प्रदेश में कई जिनालय बनवाये थे जिन्हें राजाधिराज चोल ने जला दिया था[2]। श्रवणबेलगोल की कत्तं

---

१. ले० नं० २१३, २१४, २१६, २१७, २१८, २१९, २२१, २२७, २३० २४३, २४७, २४८, २५१, २५३, २६७, २७३ २७६, २७७, २८०, २८० २९९, ३०८.

२. सालेतोरेः मेडीवल जैनिज्म, पृष्ठ १९४.

बसदि से प्राप्त एक लेख[1] से ज्ञात होता है कि इस नरेश ने जैन मुनि वासवचन्द्र को बालसरस्वती की उपाधि दी थी।

ले० नं० २२७ में इसके एक प्रिय पुत्र का नाम जयकर्ण दिया गया है जो कि ज्ञात होता है उसके राज्यकाल में ही दिवंगत हो गया था। ले० नं० २६६ में इसके राज्य का शक सं० १०५४ दिया गया है जो कि ठीक न होने से १०३४ अर्थात् सन् १११२ ई० किया गया है।

विक्रमादित्य षष्ठ का उत्तराधिकारी उसका दूसरा बेटा सोमेश्वर तृतीय भूलोकमल्ल हुआ। इसका राज्यकाल सन् ११२६ से लेकर ११३८ तक है। ले० नं० २१८ (शक सं० १००० = १०७८ ई०) में जो कि विक्रमादित्य षष्ठ के द्वितीय वर्ष का है, भूलोकमल्ल सोमेश्वर का नाम एवं उसकी महाराजाधिराज उपाधि दी गई है। पर इससे पहले अपने पिता के राज्यकाल में उसका इस रूप में होना शंका का विषय है। यह लेख जाली सा मालुम होता है। ले० नं० २९२ इस नरेश के छठवें वर्ष का है जिसमें उल्लेख है कि इसके सामन्त नरेश नारसिंह ने कोडनपूर्व्वदवल्लि गांव के पार्श्वनाथदेव की पूजा के लिए बहुत से क्षेत्र दान में दिये थे।

सोमेश्वर तृतीय का उत्तराधिकारी उसका ज्येष्ठ पुत्र पेर्म्म जगदेकमल्ल हुआ। इसका शासन सन् ११३८-११५१ तक था। इसके शासनकाल के ६ लेख प्रस्तुत संग्रह में हैं जो कि उसके दण्डनायकों एवं सामन्तों से सम्बन्धित हैं। ये सभी दानपत्र के रूप में हैं।

जगदेकमल्ल के बाद इस वंश के राजाओं के ५ और लेख हैं। ३४९ वें लेख (सन् ११५९) में त्रिभुवनमल्ल नाम चालुक्य का उल्लेख या उक्त वर्ष में इस नाम के राजा का अस्तित्व अब तक अन्य स्रोतों से ज्ञात नहीं हुआ। ३५६ वें लेख (सन् ११६१) में भूवल्लभराय पेर्म्माडि का नाम आता है। संभव है यह

---

1. जैन शिलालेख संग्रह, प्रथम भाग, ले० नं० ५५, प्रस्तुत संग्रह का ५६ वां लेख।

भूलोकमल्ल का दूसरा नाम हो जो कि तैल तृतीय का पुत्र था। यह नरेश कलचूरि राजा बिज्जल के अधीन सन् ११६०–६१ में शासन करता था। ले० नं० ४०८ (सन् ११८२) इस वंश की पश्चात्कालीन वंशावली की दृष्टि से बड़े महत्त्व का है। इसमें ले० नं० ३१३ के समान ही चालुक्य वश की वंशावली तैल द्वितीय से दी गई है और जगदेकमल्ल के अनुज नूर्म्मडि तैल का उल्लेख है, तथा लिखा है कि चालुक्य राज्य की लक्ष्मी कलचूरि-तिलक बिज्जल के हाथ आ गई थी। यह नूर्म्मडि तैल, तैलप तृतीय ही था जिसने सन् ११५१–११५६ में राज्य किया था और जिसे बिज्जल कलचूरि ने राज्य से हटा दिया था। ले० नं० ४३५ में इस वंश के अन्तिम नरेश सोमेश्वर चतुर्थ का उल्लेख है जो कि तैलप तृतीय का तीसरा पुत्र था। ये लेख विशेषतः शान्तर, कलचूरि और होयसल राजाओं से सम्बन्धित हैं। इनके विषय का वर्णन उन राजाओं के साथ किया जायगा।

(ख) पूर्वीय चालुक्यः—इस वंश की एक और शाखा पूर्वीय या वेंगी के चालुक्य नाम से प्रसिद्ध थी। इस शाखा की परम्परा पुलकेशि द्वितीय के भाई कुब्ज विष्णुवर्धन से चलती है। इसने सन् ६१५ से ६२३ ई० तक राज्य किया था। इस वंश के केवल तीन लेख हमारे संग्रह में हैं। ले० नं० १४३ (सन् ९४५) में कुब्ज विष्णुवर्धन से लेकर उस वंश के २३वें राजा अम्म द्वितीय (विजयादित्य षष्ठ) तक की वंशावली दी गई है। यह लेख बड़े महत्त्व का है। इसमें प्रत्येक राजाओं का शासनकाल तथा उत्तराधिकारक्रम अच्छी तरह दिया गया है। इस वंश के कतिपय नरेशों ने जैन धर्म का अच्छी तरह संरक्षण किया था। लेख का विषय है कि कटकाभरण जिनालय की पूजादि के हेतु अम्मराज विजयादित्य ने यापनीय संघ, नन्दि गच्छ के धीरदेव (श्रीमान्दिरदेव) मुनि को मलियपूण्डि नामक ग्राम दान में दिया। इसी तरह ले० नं० १४४ में, जो कि पूर्व लेख के समान ही वंशावली के परिचय की दृष्टि से महत्त्व का है तथा सुन्दर संस्कृत काव्य के रूप में है, उल्लेख है कि अम्मराज ने सर्वलोकाश्रय जिनभवन ...म्मत आदि के लिए वलहारि गण, अड्डकलि गच्छ के अर्हनन्दि मुनि को

कलुचुम्बरु नामक ग्राम दान में दिया। उक्त लेख में लिखा है कि यह दान पट्टवर्धिक कुल की तिलकभूता गणिकाजन में प्रमुख चामेकाम्बा[1] नामकी दान-दयाशीलयुत् श्राविका की प्रेरणा से दिया गया था। ले० नं० २१० (सन् १०७६) में चालुक्य चक्रवर्ती विजयादित्यवल्लभ और उसकी बहिन कुंकुमदेवी का उल्लेख है। इस लेख के काल निर्देश को देखते हुए ऐसा प्रतीत होता है कि उसे इस वंश का विजयादित्य सप्तम होना चाहिये जो कि अपने भतीजे चालुक्य राजेन्द्र द्वितीय (पीछे कुलोत्तुंग चोल नाम से प्रसिद्ध) के अधीन वेंगी का शासक था। उक्त लेख में लिखा है पुलिगेरी में कुंकुमदेवी ने एक जैनमन्दिर बनवाया था और श्रानन्दि पण्डित ने कतिपय खेतों का दान दिया था।

इस वंश की कुछ और स्वतन्त्र शाखायें थीं। उनमें से एक ले० नं० १२५ से मालुम होती है। उक्त लेख में राष्ट्रकूट गोविन्द तृतीय के राज्यकाल (सन् ८१२) में चालुक्य वंशी किसी विमलादित्य नृप का नाम आता है जो कि यशोवर्मा का पुत्र और बलवर्मा का प्रपौत्र था। उसने शनि की बाधा हटाने के लिए अपने जैनधर्मावलम्बी मामा गंगवंशी चाकिराज के कहने से एक जैन मन्दिर के लिए एक गाँव दान में दिया था। इस राजा का नाम चालुक्यों की किसी वंशावली में नहीं मिलता। डा० भण्डारकर की मान्यता है कि पीछे ऐसे राजवंशों की कई शाखाएं स्वतन्त्र रूप से राज्य करती थीं।

४. चोलवंशः—दक्षिण भारत के सबसे प्राचीन वंशों में से चोल वंश एक था। समय समय पर इससे अनेक शाखायें निकली थीं। कोङ्गाल्व और निडुगल वंश ऐसे ही शाखाओं में से हैं जिनका परिचय इस भूमिका में दिया गया है। चोलवंश की प्रमुख शाखा के राजाओं का उल्लेख अन्य राजाओं के प्रसंग में जैन लेखों में कई बार आया है जो कि अनुक्रमणिका एवं लेखों से जाना जा सकता है। प्रस्तुत संग्रह में १० वें और ११ वें चोल नरेशों के राज्यकाल

---

१. श्रीराजचालुक्यान्वयपरिवारित पट्टवर्धिकान्वयतिलका। गणिकाजनमुखकमलद्युमणिद्युतिरिहं चामेकाम्बाभूत्।

के ३ लेख हैं जिनसे विदित होता है कि उक्त साम्राज्य में जैनधर्म सुरक्षित था। चोल परिवार के लोग जैन धर्म में रुचि रखते थे।

ले० नं० १६७ दशवें चोल नरेश राजराज प्रथम के राज्य के ८ वें वर्ष का है। इस लेख से ज्ञात होता है कि उसके अधीनस्थ लाटराज वीर चोल ने अपनी जैन पत्नी की प्रार्थना पर तिरुप्पानमलै देवता के पल्लिच्चन्दम् (जैन चैत्यालय) को एक गाँव की आमदनी बाँध दी थी। यह ले० नं० ९९२ ई० का है। इसी तरह ले० नं० १७१ उक्त राजा के २१ वें वर्ष का है। इस लेख में उल्लेख है कि तिरुमलै नामक पवित्र पर्वत पर किसी गुणवीर मामुनिवन् ने अपने उपाध्याय के नाम एक नहर या मोरी बनवायी थी। ले० नं० १७४ राजराज चोल के उत्तराधिकारी राजेन्द्र चोल प्रथम का है। लेख की महत्ता उसके हिन्दी सार में दे दी गई है। लेख में तिरुमलै पर्वत का वर्णन है तथा उसके ऊपर निर्मित कुन्दव्वे जिनालय के लिए दिये दान का उल्लेख है। उक्त जिनालय कुन्दव्वे नामक जैन महिला ने बनवाया था। कुन्दव्वे राजराज चोल की पुत्री एवं राजेन्द्र चोल की बहिन थी। यह पूर्वीय चालुक्य वंश के नरेश विमलादित्य को विवाही गई थी। इतिहासज्ञ मानते हैं कि विमलादित्य (सन् १०११-१०१४ ई०) अपने अन्तिम वर्षों में जैन हो गया[1] था।

५. राष्ट्रकूट वंशः—राष्ट्र कूट वंश के हमारे संग्रह में बहुत गिने चुने लेख संगृहीत हैं, जिनसे इस वंश की उत्पत्ति के सम्बंध में कुछ भी पता नहीं चलता। कुछ लोग राष्ट्रकूट शब्द की व्युत्पत्ति रट्ट शब्द से मानते हैं और राष्ट्रकूटों को लट्टलूरपुरवराधीश्वर अर्थात् 'श्रेष्ठ नगर लट्टलूर के स्वामी' मानते हैं। पर रट्ट वंश को स्वतन्त्र माना जाता है और इस संग्रह में उनके अनेकों लेख संगृहीत हैं जिनमें उन्हें भी लट्टलूरपुरवराधीश्वर लिखा है।

राष्ट्रकूटों का राज्य आठवीं शताब्दी के मध्य भाग प्रारम्भ से होता है। इस वंश के ६ वें राजा दन्तिदुर्ग ने चालुक्य कीर्तिवर्मा द्वितीय से राज्य छीन कर राष्ट्र

---

[1] वेंकटरमनय्य ईस्टर्न चालुक्याज आफ वेंगी, पृष्ठ २८८.

कूट साम्राज्य की नींव डाली थी। इस राजा के सम्बंध में कहा जाता है कि इसने महान् आचार्य अकलङ्क का अपने दरबार में सम्मान किया था। श्रवणबेलगोल से प्राप्त एक लेख (२६०) में उल्लेख है कि अकलंक ने साहसतुंग के समक्ष उसकी प्रशंसा कर उसे अपनी विद्वत्ता से परिचित कराया था। इतिहासज्ञों के मत से साहसतुंग, दन्तिदुर्ग (द्वितीय) का ही विरुद था।

उसके उत्तराधिकारी कृष्ण प्रथम (सन् ७६८-७७२) ने चालुक्यों के सारे प्रदेशों को अपने अधीन कर लिया। कृष्ण के पश्चात् गोविन्द द्वितीय और उसके पुत्र ध्रुव ने राज्य किया। इस संग्रह के ले० नं० १२३ में कृष्ण प्रथम से ही वंशावली प्रारम्भ होती है। लेख में कृष्ण का दूसरा नाम वल्लभ दिया गया है और लिखा है कि उसने चालुक्य कुल से लक्ष्मी छीन ली थी। इस लेख के अनुसार उसका पुत्र धोर हुआ जिसने अपने ज्येष्ठ भाई से लक्ष्मी छीन ली थी। उस की सामरिक विजयों के सम्बन्ध में लिखा है कि उसने गंग, पल्लव, गौड एवं लाव को पराजित किया था। धोर ध्रुव का द्वितीय नाम था। उसी लेख में उसको निरुपम और कलिवल्लभ, दो उपाधियाँ दी गई हैं।

उक्त लेख में आगे लिखा है कि इसके पुत्र एवं उत्तराधिकारी गोविन्द तृतीय के राज्य भार सम्हालते ही राष्ट्रकूट वंश दूसरों से अलंघनीय हो गया उसने अकेले ही तत्कालीन विख्यात बारह नरेशों की शक्ति को नष्ट कर दिया था, तथा गुर्जर, मालव, विन्ध्याद्रि, पल्लव एवं वेंगी के चालुक्य राजाओं को जीत लिया था, गंगवंशी शिवमार द्वितीय को अपने अधीन कर लिया था। इसका दूसरा नाम प्रभूतवर्ष और निरुपम भी था। इसी लेख में लिखा है कि रणावलोक श्रीकम्भ देव, गोविन्दराज का बड़ा भाई था। इस कम्भदेव ने अपने भाई राजाधिराज प्रभूतवर्ष की आज्ञा से पेर्ब्बडियूर नामक ग्राम को सर्व करों से मुक्त कर महासामन्त श्रीविजय द्वारा निर्मापित मन्दिर के लिए दान में दे दिया। लेख

---

१. जैन शिला ले० प्रथम भाग ले० न० ५४ (६७). पद्य २१.

२. डा० अ० स० अल्तेकर : राष्ट्रकूट और उनका समय, पृष्ठ ४०६.

नं० २६०[1] में लिखा है कि आचार्य परवादिमल्ल ने अपने नाम की सार्थकता कृष्णराज को समझाई थी। उक्त लेख में साहसतुंग और कृष्ण के बीच एक शत्रुभयंकर विरुद वाले राजा का उल्लेख है। विद्वानों का अनुमान है कि उक्त लेख में तिथिक्रम का व्यतिक्रम किया गया है और उक्त लेख के शत्रु भयंकर को गोविन्द तृतीय होना चाहिए जिसने अपने पराक्रमसे राष्ट्रकूट वंशके गौरवको बढ़ाया था। कृष्ण को कृष्ण द्वितीय होने का अनुमान किया गया है जो कि गोविन्द तृतीय का पूर्ववर्ती नरेश था[2]। लेख नं० १२४ में प्रभूतवर्ष गोविन्द तृतीय के पूर्वज राजाओं की वंशावली उत्तम संस्कृत काव्य में गोविन्द प्रथम से लेकर उस तक दी गई है। इस गोविन्दराज ने अपने गंगवंशीय सामन्त चाकिराज की प्रार्थना पर शक सं० ७३५ में जालमंगल नामक ग्राम को यापनीय संघ के अन्तर्गत नन्दिसंघ के पुन्नागवृक्षमूलगण के अर्ककीर्ति मुनि को दान में दिया था।

प्रस्तुत संग्रह में इस वंश के तीसरे लेख (नं० १२७) में, जो गोविन्द तृतीय के पुत्र अमोघवर्ष प्रथम का है, राष्ट्रकूट वंश की एक वंशावली दी गई है जो कि दूसरी वंशावलियों से कुछ भिन्न है। लेख के हिन्दी सार में यह अन्तर दे दिया गया है। डा० दे० रा० भण्डारकर इस अन्तर को विशेष महत्त्व नहीं देते और इस लेख में वर्णित कुछ महत्त्वपूर्ण घटनाओं की ओर संकेत करते हैं इसके पद्य १७–३४ से ज्ञात होता है कि अमोघ वर्ष के समय में अनेक आन्तरिक विद्रोह हुए थे। और सन् ८६० के पहले शाही ताकत को चुनौती देने के लिए कम से कम तीन ऐसे विद्रोह अवश्य हुए थे। पहला उस समय हुआ था जब कि अमोघवर्ष बालक था, दूसरा जब कि वह गुजरात के अपने चचेरे भाइयों से लड़ रहा था और तीसरा इसके कुछ बाद हुआ था। यद्यपि इन विद्रोहों का वह विस्तृत विवरण नहीं दिया गया पर मालुम होता है कि तीसरा विद्रोह बड़ा उग्र

१. जैन शिलालेख प्रथम भाग, ले० नं० ५४.

२. सालेतोरे, मेडीवल जैनिज्म, पृष्ठ ३६.

था और वनवासी के शासक बंकेय ने समय पर पहुँच कर उस परिस्थिति का सामना किया। जान पड़ता है कि अमोघवर्ष के उत्तराधिकारी कृष्ण द्वितीय ने भी विद्रोहियों का साथ दिया था, पर जब उसने उनका साथ छोड़ दिया तो उस अकेले ने उन्हें नष्ट कर दिया। लेख का उद्देश्य है कि शक सं० ७२० में चन्द्रग्रहण के समय राजा अमोघवर्ष ने बंकेय की महत्त्वपूर्ण सेवा के उपलक्ष्य में, कोलनूर में उसके द्वारा स्थापित जैन मन्दिर के लिए तलेयूर नामक ग्राम तथा कुछ ग्रामों की भूमियाँ दान में दीं। यह बंकेय वह है जिसके नाम से बंकापुर राजधानी बनाई गई थी। इसी बंकेय के पुत्र सामन्त लोकादित्य के समय में जब कि अमोघवर्ष का पुत्र कृष्ण द्वितीय (अकालवर्ष) सार्वभौम था, गुणभद्र कृत उत्तरपुराण की पूजा हुई थी। उत्तरपुराण से हमें मालुम होता है कि अमोघवर्ष परम जैन भक्त था। उसके गुरु महापुराण, जयधवलादि ग्रन्थों के प्रणेता जिनसेनाचार्य थे[1]।

कृष्ण द्वितीय (अकालवर्ष) के राज्य काल का निर्देश करने वाले प्रस्तुत संग्रह में तीन लेख (१३०, १३७, १४०) हैं। १३० वें लेख के अनुसार रट्टवंशीय पृथ्वीराम को प्रमुख अधिपति होने का पद राष्ट्रकूट राजा कृष्ण की अधीनता में मिला था। ऐसा जान पड़ता है कि लेख कृष्णराज के समय में उत्कीर्ण न होकर परवर्ती समय में उत्कीर्ण किया गया है क्योंकि उसमें पृथ्वीराम की ५-६ पीढ़ी बाद के वंशज राजा कन्न के दान का उल्लेख किया गया है। दूसरा लेख (१३७) मूलगुन्द से सन् ९०३ का मिला है। यह लेख अधूरा है इसमें कृष्ण द्वितीय के राज्यकाल में एक जैन मन्दिर के निर्माण एवं भूमिदान का उल्लेख है। ले० नं० १४० से ज्ञात होता है कि सन् ९१२ ई० में भी इस नरेश का राज्य था। इसके नागार्जुन नामक एक सामन्त की पत्नी सामन्त की मृत्यु के बाद राजा की आज्ञा से शासन करती थी और सन् ९१८ में एक बीमारी के कारण उसने समाधिमरण से देहोत्सर्ग किया था।

---

1. जैन साहित्य और इतिहास द्वितीय संस्करण (१९५६), पृष्ठ १५०

ले० नं० १८२ में अमोघवर्ष के उल्लेख के बाद गंगनरेश शिवमार सैगोट्ट का नाम दिया गया है जिससे मालुम होता है कि यह अमोघवर्ष प्रथम (सन् ८१४–८७७ ई०) के समय का है। पर लेख में गलत रूप से शक सं० २६१ दिया गया है और किसी कन्नरस सैगोट्ट गग का उल्लेख है जिससे लेख जाली मालुम होता है। फ्लीट महोदय इसके उत्तरार्ध भाग को सच्चा मानते हैं।

कृष्ण तृतीय (अकालवर्ष) के पौत्र इन्द्र चतुर्थ के सम्बन्ध में ले० नं०१६३ (सन् ६८२) से ज्ञात होता है कि वह पोलो के खेल में बड़ा निपुण था। उसने श्रवणबेलगोल में सल्लेखनापूर्वक मरण किया था। इस लेख में इन्द्र के अनेक विशे-ण दिये गये हैं और कहा गया है कि वह गंग गगेय (बुतुग द्वितीय) का कन्यापुत्र एवं राजचूड़ामणि का दामाद था। ले० नं० १५२[1] से ज्ञात होता है कि राष्ट्रकूट नरेश कृष्ण तृतीय के लिए गंग नरेश मारसिंह तृतीय ने गुर्जरप्रदेश को जीता था एवं और कृष्ण तृतीय के पौत्र इन्द्र चतुर्थ का राज्याभिषेक किया था। इन लेखों से ज्ञात होता है कि उस काल में इन दोनों राजवंशों में घनिष्ठता थी।

६. कलचूरि वंश:—ले० नं० ४०८ से हमें ज्ञात होता है कि चालुक्य नूर्म्मडि तैल (तैल तृतीय) के बाद चालुक्य राज्य की लक्ष्मी कलचूरितिलक त्रिज्जल के हाथ चली आई। कलचूरि वंश बहुत प्राचीन है इसका उल्लेख हम एहोले के लेख (१०८) में पाते हैं जहाँ चालुक्य मंगलीश द्वारा उनके परास्त होने का उल्लेख है। कलचूरि वंश के अन्य लेखों से तथा इस संग्रह के लेख नं० ४०८, ४३५ से ज्ञात होता है कि ये अपनी उत्पत्ति उत्तर भारत के कालञ्जर नामक स्थान से मानते थे। लेख नं० ४०८ में त्रिज्जल की शूर वीरता का वर्णन है। उसका भाई मैलुगिदेव था। लेख से त्रिज्जल के तीन पुत्रों—सोयिदेव (राय-मुरारि), शंकम (निःशंकमल्ल), आहवमल्ल (रायनारायण)—और पौत्र कन्दार का नाम एवं परिचय मिलता है। उक्त लेख में लिखा है कि राजा बिज्जल को सप्ताङ्ग सम्पत्ति दिलाने वाला उसका एक जैन सेनापति रेचि था जो,

१. जैन शिलालेख, सं० भाग १, ले० नं० ३८।

'वसुधैकबान्धव' कहलाता था। लेख का विषय है कि आहवमल्ल (रायनारायण) कलचूरि के शासनकाल में उक्त सेनापति ने मागुडि गाँव के रत्नत्रय चैत्यालय के लिए भानुकीर्ति सिद्धान्त देव को तलवे गांव दान में दिया था।

लेख नं ४३५ से मालुम होता है कि बिज्जल के शासनकाल में वीरशैव मत का बोलवाला था। उक्त मत का आचार्य एकान्तदरामय्य जैनों पर अत्याचार कर रहा था (४३५, ४३६)। यद्यपि कलचूरि जैन धर्मानुयायी थे, उनके शासन पत्रों पर तीर्थंकर की पद्मासन मूर्ति, इन्द्रादि सेवकों के साथ बनायी जाती थी, पर बिज्जल समय की गति देखते हुए वीर शैवों की ओर झुका, और कहा जाता है है कि उन्हीं के द्वारा उसकी मृत्यु भी हुई। लेख नं० ४६५ से ज्ञात होता है कि उसके सेनापति रेचि ने उसे छोड़ कर जैन धर्मावलम्बी होय्सल नरेश वीर बल्लाल द्वितीय का आश्रय लिया था। लेख नं० ४४८ में उल्लेख है कि कुन्तल देश से बिज्जल के शासन को हटाकर बल्लाल होय्सल ने उसे अपने अधीन कर लिया था। इस तरह दक्षिण भारत में इस वंश का शीघ्र ही अन्त हो गया।

७. होय्सल वंश:—चालुक्यों के पतन के बाद दक्षिण भारत में दो नई शक्तियों का जन्म होता है। ये दोनों अपने को यादव वंश से उत्पन्न मानते हैं। उनमें चालुक्य साम्राज्य के दक्षिण भाग पर अधिकार करने वाले होय्सल थे और उत्तर भाग पर यादव (सेऊण)।

गङ्ग वंश के समान होय्सल वंश के अभ्युदय में जैन प्रतिभा का बड़ा भारी हाथ रहा। जैन गुरुओं ने इस वंश के उत्थान में योग देकर अहिंसा और अनेकान्त की दुन्दुभि को फिर एक बार दक्षिण प्रान्त में बजाया। इस वंश का उत्पत्ति स्थान सोसेवूर (सं० शशकपुर) था जिसे राइस सा० ने वर्तमान अङ्गडि (मुडगेरे तालुका, कडूर जिला, मैसूर राज्य) माना है। अंगडि से इस वंश से सम्बन्धित अनेकों लेख भी प्राप्त हुए हैं। यहीं इस वंश की कुलदेवता वासन्तिका देवी का मन्दिर अब भी विद्यमान है। संभव है यहीं इस वंश की उत्पत्ति से संबंधित एक महत्त्वपूर्ण घटना हुई थी जिसका उल्लेख कतिपय जैन

लेखों में मिलता है। श्रवणबेल्गोल से प्राप्त सन् ११२३ के एक लेख[1] से ज्ञात होता है कि एक समय इस वंश के प्रवर्तक प्रथम पुरुष सल से एक जैन मुनि ने एक कराल व्याघ्र को देखकर कहा कि–पोय्सल–हे सल! इसे मारो। लेख नं० ४५७ के अनुसार यह घटना इस प्रकार है:— कुन्तल आदि देशों का अधिपति, यदुकुल के सल को वनवास देश का मुख्य क्षेत्र दान में देना चाहता था। उस समय सुदत्त मुनिप ने पद्मावती को एक चीते के रूप में प्रकट करवाया। पद्मावती को चीते के रूप में देखते ही उन्होंने सल से कहा— पोय्सल (सल, मारो)। जिस पर उसने चीते को सल (डण्डे) से मारा और देवी पद्मावती के समक्ष उसके साहस का प्रदर्शन कराया। इससे राजा का नाम पोय्सल पड़ा।

इस घटना के उल्लेख से इतना तो मालुम होता है कि सल उस समय एक होनहार। सरदार था जैन प्रतिभा को राज्याश्रय से वंचित होते समय यह आवश्यक प्रतीत हुआ कि वह किसी उदीयमान सरदार को आगे बढाये जो जिनधर्म को पुनः संरक्षण प्रदान करे। इतिहास हमें बताता है कि सचमुच ही इस वंश ने अपने अन्तिम दिनों तक जैन धर्म को आश्रय प्रदान किया था।

इस वंश के उद्गम होने के पहले अंगडि एक जैन केन्द्र था यह बात हमें लेख नं० १६६ से ज्ञात होती है। लेख नं० २०१ तथा अन्य लेखों से ज्ञात होता होता है कि इस वंश के शासक अपने को मले परोल गण्ड (पहाड़ी सामन्तों में मुख्य) मानते थे, जिससे मालुम होता है कि वे लोग पहाड़ी जाति के थे। यद्यपि प्रस्तुत संग्रह के लेखों से वंश के प्रारम्भ के तीन नरेश—सल, विनयादित्य प्रथम एवं नृपकाम—के सम्बन्ध में विशेष नहीं मालूम होता है पर अन्यत्र उल्लेखों से अनुमान किया जाता है कि ये तीनों नरेश सुदत्त मुनि के प्रभाव में थे[2]। नृपकाम के सम्बन्ध में ले० नं० ३४७ से ज्ञात होता है कि वह विनयादित्य

---

१. जै० शि० सं० प्रथम भाग, ५६; प्रस्तुत संग्रह का २८२ या २८३ वां लेख।

२. सालेतोरे, मेडीवल जैनिज्म, पृष्ठ ६४–७३

द्वितीय का पिता था। लेख नं० २७८[1] में नृपकाम होयसल का जैन सेनापति गग-पन के पिता एचि के संरक्षक के रूप में उल्लेख है। लेख नं० १७८ के आधार पर कुछ इतिहासज्ञ इस नरेश का समय सन् १०२२ या १०४० (?) के लगभग निर्धारित करते हैं, तदनुसार इनका दूसरा नाम राचमल्ल पेर्मानडि था जो कि गंगवाडी के मुनियों में प्रसिद्ध था[2]। इनके गुरु द्रविड़संघ के वज्रपाणि ने सोसेवूर (अङ्गडि) में अपना जीवन व्यतीत कर अन्त में सन्यासपूर्वक देह त्यागा था। नृपकाम का पुत्र विनयादित्य द्वितीय हुआ जिसने सन् १०४७—११०० के लगभग शासन किया। लेख नं० २९०[3] से ज्ञात होता है कि इनके गुरु शान्तिदेव थे, जिन की चरणसेवा से उसे राज्यलक्ष्मी प्राप्त हुई थी। लेख नं० २९९[4] में उल्लेख है कि उसने अनेक तालाब एवं जैन मन्दिर बनवाये थे। लेख नं० १२५ से ज्ञात होता है कि विनयादित्य के राज्यकाल में अङ्गडि में मकर जिनालय नाम से एक प्रसिद्ध चैत्यालय था। ले० नं० २०० के अनुसार उक्त नरेश के गुरु शान्तिदेव सन् १०६२ ई० में दिवंगत हुए थे। उक्त अवसर पर उस नरेश ने और सभी नगरवासियों ने मिलकर उनकी स्मृति में एक स्मारक बनवाया था। यह नरेश चालुक्य नृप विक्रमादित्य षष्ठ का सामन्त था। उसका बेटा एरेयङ्ग (त्रिभुवनमल्ल) सोमेश्वर तृतीय भूलोकमल्ल चालुक्य का सामन्त था (२१८)। ले० नं० ४०३[5] और ३६३[6] में उसे चालुक्य नरेश का बलद (दक्षिण) भुजादण्ड कहा गया है। ले० नं० ३४८ में कई पद्यों द्वारा इसकी सामरिक वीरता की प्रशंसा

---

१. जै० शि० सं० प्रथम भाग लेख नं० ४४

२. रावर्ट सेवल, हिस्टोरिकल इन्स्क्रप्शन्स आफ सदर्न इण्डिया, पृष्ठ ३५२

३. जै० शि० सं० प्रथम भाग, ले० नं० ५४

४. वहीं—ले० नं० ५३.

५. वहीं—ले० नं० १२४.

६. वहीं—ले० नं० १३७ (?)

की गई है और अनेकों उपाधियाँ दी गई हैं। लेख नं० २३३[1] से, जो कि एरेयंग के राज्यकाल का ही है, ज्ञात होता है कि वह गंग मण्डल पर राज्य करता था। उसने अपने गुरु जैनतार्किक गोपनन्दि को श्रवणबेल्गोल को बसदियों के जीर्णोद्धार के हेतु कुछ ग्राम दान में दिये थे।

इतिहासज्ञों का अन्य लेखों के आधार पर विश्वास है कि एरेयंग अपने अन्तिम दिनों तक युवराज बना रहा और उसका वृद्ध पिता विनयादित्य गद्दी पर बैठा रहा। होय्सल वंश में एरेयंग प्रथम व्यक्ति था जिसने वीर गङ्ग उपाधि धारण की। पीछे इसके उत्तराधिकारियों ने यह उपाधि बड़ी प्रिय समझी गई।

लेख नं० २६५ से ज्ञात होता है कि एरेयङ्ग की रानी एचलदेवी से बल्लाल, विष्णुवर्धन (बिट्टिग) एवं उदयादित्य नामक तीन पुत्र हुए। लेख नं० २६६ में इसके एक दामाद का उल्लेख है जिसका नाम हेम्माडिदेव था, यह गंगवंशोत्पन्न एवं जैन धर्मानुयायी था। लेख नं० २१८ के अनुसार मालुम होता है कि उसके ज्येष्ठ पुत्र बल्लाल ने कुछ समय के लिए शासन किया था यद्यपि उक्त लेख का शक संवत् १००० सन्देहास्पद है। इस लेख में बल्लाल के शौर्य की प्रशंसा भी है। लेख नं० ५६६ तथा ६२५ [2] से ज्ञात होता है कि उसके जैन गुरु चारुकीर्ति मुनि थे जिन्होंने इसे असाध्य बीमारी से बचाया था। बल्लाल का शासन काल सन् ११०० से ११०६ ईस्वी तक माना जाता है।

बल्लाल का उत्तराधिकारी उसका भाई विष्णुवर्धन हुआ। यह इस वंश का सबसे बड़ा प्रतापी राजा था। इस राजा ने कर्नाटक देश को चोल आधिपत्य से मुक्त किया था। इस संग्रह में उसके राज्य के अनेकों लेख संग्रहीत हैं। लेख

---

१. वही—ले० नं० ४६२।

२. वही—ले० नं० १०५, १०८

नं० २६३, २६४, २८३, २८७, २८६, ३०४, ३४८, ३६३ एवं ४०३[1] में विष्णुवर्धन के अनेकों विरुदों तथा प्रतापादि का उल्लेख है। उसके आठ जैन सेनापतियों—गङ्गराज, बोप्प, पुणिस, बलदेव, मरियाने, भरत, ऐच एवं विष्णु ने अनेकों महत्व के युद्धों में उसे विजय प्रदान कर उसके राज्य को मजबूत बनाया था। डा० राइस महोदय की मान्यता है कि सन् १११६ ई० के पहले विष्णुवर्धन ने जैन धर्म को छोड़कर रामानुजाचार्य के प्रभाव में आकर वैष्णव धर्म ग्रहण कर लिया था। सत्य जो हो पर उसके मन पर जैन प्रभाव और कृतज्ञता इतनी अधिक थी कि जैनत्व के प्रति श्रद्धा एवं भक्ति में उसने कमी नहीं की थी। लेख नं० २८७ और ३०१ से ज्ञात होता है कि सन् ११२५ और ११३३ ई० में भी जैन धर्म के प्रति श्रद्धालु था। २८७ वें लेख के अनुसार उसने चोल सामन्त अदियम, पल्लव नरसिंह वर्म, कोङ्ग, कलपाल तथा अङ्गरस के राजाओं को पराजित किया था तथा पीछे बसदियों के जीर्णोद्धार के हेतु तथा ऋषियों को आहार दान देने के लिए अपने जैन गुरु द्रविड़ संघ के श्रीपाल त्रैविद्य देव को शल्य (शल्य) नामक ग्राम दान में दिया था। लेख नं० ३०१ (सन् ११३३) से विदित होता है कि उसके एक सेनापति बोप्पदेव द्वारा हलसोगेबलि के द्रोहघरट्ट जिनालय की स्थापना के बाद जिस समय पुरोहित लोग चढ़ाये हुए भोजन (शेषा) को विष्णुवर्धन के पास बङ्कापुर ले गये, उसी समय वह एक शत्रु पर विजय प्राप्त कर आया था, तथा उसकी रानी लक्ष्मी महादेवी से पुत्ररत्न उत्पन्न हुआ था। उसने उनका स्वागत कर प्रणाम किया और यह समझकर कि इन्हीं पार्श्वनाथ भग० की स्थापना से उसे युद्ध में विजय, पुत्रोत्पत्ति एवं सुख समृद्धि मिली है, उसने देवता का नाम विजयपार्श्व तथा पुत्र का नाम विजय नरसिंह देव रखा था। ले० नं० २८३[2] से ज्ञात होता है कि उसकी एक पत्नी शान्तलदेवी जैन धर्म परायणा थी। उसकी एक उपाधि थी उद्वृत्तसवतिगन्धवारणे अर्थात् उच्छृङ्खल सौतों के लिए मत्त हाथी। उसने श्रवणबेलगोल में 'सवति गन्धवारण' बसदि भी बनवायी थी। उसके अनेक

१. वही—(२८३ से क्रमशः) ले० नं० ५६, ४९३, ५३, १४४, १३८, १२४, १३७।
२. वही—ले० नं० ५६

दानादि कार्यों का वर्णन जैन महिलाओं के प्रकरण में दिया गया है। विष्णुवर्धन से सम्बन्धित प्रायः सभी लेखों में उसके जैन सेनापतियो मन्त्रियों एवं अफसरों की शूर वीरता, दानादि कार्यों का वर्णन है जो कि प्रसगानुसार पृथक् किया गया है।

यद्यपि विष्णुवर्धन ने होय्सल वंश को दक्षिण भारत की राजनीति में समुन्नत बनाया था और अपने वंश के पूर्व अधिपति चालुक्य वंश से बहुत कुछ स्वतंत्र कर लिया था, पर वह सम्राट् का पद धारण न कर सका। लेख नं० २६५ से सिद्ध होता है कि वह चालुक्याभरण त्रिभुवनमल्ल (विक्रमादित्य षष्ठ) का आधिपत्य स्वीकार किया था। उसके अन्तिम वर्षों के लेखों (३१८ आदि) में भी उसे महामण्डलेश्वर कहा गया है।

इतिहासज्ञों की मान्यता है कि विष्णुवर्धन सन् ११४० ई० में दिवंगत हुआ और उसका बेटा नरसिंह (प्रथम) गद्दी पर आरूढ़ हुआ। यद्यपि विष्णुवर्धन के राज्यकाल का उल्लेख करने वाले लेख सन् ११४६ ई० तक के मिलते हैं पर या तो वे पुराने लेखों की पुनरावृत्ति हैं या जाली हैं। जैन लेखों में ऐसा ही एक लेख (३१८) उसकी मृत्यु के दो वर्ष बाद का है। विष्णुवर्धन को नरसिंह के अतिरिक्त एक और पुत्र था। ले० नं० २६३ (सन् ११३० ई०) से ज्ञात होता है कि उसका ज्येष्ठ पुत्र श्रीमन् त्रिभुवनकुमार बल्लालदेव राज्य कर रहा था। उसकी बहिनों में सबसे बड़ी हरियब्बरसि थी जो जैन धर्मपरायण थी। उक्त राजकुमार के संबंध में इससे अधिक और कुछ ज्ञात नहीं।

नरसिंह प्रथम के राज्यकाल के भी अनेकों लेख इस संग्रह में दिये गये हैं (३२४, ३२८, ३३३, ३३६, ३४७, ३४८, ३५१, ३५२, ३५६, ३६३, ३६७)। ये सामन्तों, सेनापतियों एवं अफसरों से सम्बन्धित हैं। लेख नं० ३४८[1] से ज्ञात होता है कि उक्त नरेश के भाण्डागारिक एवं मंत्री हुल्ल ने

१. वही-ले० नं० १३८.

श्रवणबेल्गोल में चतुर्विंशति जिन मन्दिर निर्माण कराया। यह मन्दिर आजकल भी भण्डारिबस्ति कहलाता है। उक्त लेख में लिखा है कि एक समय नरसिंह अपनी दिग्विजय के समय श्रवणबेल्गोल आये और उक्त जिनालय को देख प्रसन्न हो उसका नाम भव्य चूड़ामणि रखा। नरसिंह ने उस समय मन्दिर के पूजादि प्रबन्ध के लिए 'सवणेरु' नामक ग्राम दान में दिया। यही बात ले० नं० ३४८ में भी लिखी है। अन्य लेखों से प्राप्त इसके सेनापतियों एवं महाप्रधानों का वर्णन दूसरे प्रकरण में दिया गया है। इन लेखों से ज्ञात होता है कि उक्त नरेश ने अपने शासनकाल में होय्सल वंश की समृद्धि के लिए कोई विशेष प्रयत्न नहीं किये। केवल अपने पिता द्वारा अर्जित राज्य वैभव और उसके यश का ही उपयोग करता रहा। लेख नं० ३३६ में इसकी एक उपाधि 'जगदेकमल्ल' दी गई है जो सूचित करती है कि यह चालुक्यों का आधिपत्य स्वीकार करता था।

नरसिंह का उत्तराधिकारी उसका प्रतापी बेटा बल्लाल द्वितीय हुआ जिसे लेखों में वीर बल्लाल कहा गया है। यह बड़ा बहादुर राजा था। इसने होय्सल वंश को स्वतन्त्र बनाया और राज्य में शान्ति एवं सुख समृद्धि स्थापित की। इसका राज्य सन् ११७३ से १२२० ई० तक अर्थात् ४८ वर्ष के लगभग रहा। इस नरेश के राज्यकाल के भी अनेकों लेख इस संग्रह में दिये गये हैं। लेख नं० ३७३ (सन् ११६८) इसकी युवराज अवस्था का है जिससे ज्ञात होता है कि यह अपने पिता के शासनकाल में सक्रिय सहयोग देता था। इसके जैन गुरु का नाम वासुपूज्य सिद्धान्त देव था। लेख नं० ३७६ और ३८१[1] इसके राज्य के प्रथम वर्ष के हैं। ले० नं० ३७६ से विदित होता है कि अपने पट्टबन्धोत्सव में महादान दिये थे। शक सं० १०६५ की श्रावण शुक्ला एकादशी (दशमी) रविवार को उसका राज्याभिषेक हुआ था। उस दिन उक्त लेखा-

१. वही—ले० नं० ४६१.

नुसार उसके महासांधिविग्रहिक मंत्री बूचिमय्य ने त्रिकूट जिनालय बनवा कर, उसकी पूजादि के लिए द्रविड संघ के वासुपूज्य सिद्धान्तदेव को मरिकली गाँव भेंट किया। इसी तरह लेख नं० ३८१ से विदित होता है कि उसका दण्डाधिप हुल्ल था। यह हुल्ल उसके पितामह विष्णुवर्धन के समय से ही उक्त वंश की सेवा में था। वल्लाल देव ने उस वर्ष भानुकीर्ति व्रतीन्द्र को पार्श्व और चतुर्विंशति तीर्थंकर की पूजा हेतु मारुहल्लि ग्राम दान में दिया तथा हुल्ल के अनुरोध से वेक्क गाँव भी भेंट में दिया। ले० नं० ३९६[1] में लिखा है कि वल्लाल ने अपने पिता द्वारा दिये गये तीन गाँवों के दान को हुल्ल मंत्री द्वारा पूरा कराया।

इस राजा के इस संग्रह के अनेक लेख उसके सेनापतियों, मंत्रियों एवं सेठों से संबंधित है जिनका वर्णन पीछे प्रकरणों में दिया गया है। उसकी सामूहिक विजयों के सम्बन्ध में ले० नं० ३९४ में लिखा है कि इसने उच्चंगि के किले को जीता था, तथा ले० नं० ४३१ से विदित होता है कि उसने सेउुण राजा को हराया और ले० नं० ४४८ से ज्ञात होता है कि उसने कुन्तल देश पर कलचूरि बिज्जल के शासन को हटाकर अपने अधीन किया था। ले० नं० ४६५ से मालुम होता है कि इसका एक जैन दण्डनायक रेचि था जो कि ४०८ वें ले० में कलचूरि वंश का दण्डाधिनाथ बतलाया गया है। दोनों लेखों का अध्ययन करने से मालुम होता है कलचूरि नरेश के धर्म परिवर्तन के कारण तथा वल्लाल द्वारा अपने स्वामी के परास्त होने पर संभव है वह उसका सेनापति हो गया हो।

वल्लाल द्वितीय के पुत्र नरसिंह द्वितीय के राज्य का केवल एक लेख (४७५)[2] हमारे संग्रह में है जिसमें उसकी पृथ्वीवल्लभ, महाराजाधिराज, सर्वज्ञचूड़ामणि आदि उपाधियाँ दी गई हैं। लेख में उक्त नरेश के राज्य में एक सेठ द्वारा गोम्मटेश्वर की पूजा के हेतु किये गए दान का उल्लेख है।

---

१ वही—ले० नं० ९०.

२. वही—ले० नं० ८१.

हमें नरसिंह द्वितीय के पुत्र सोमेश्वर के समय के दो लेख (४९५[1] एवं ४९६) मिलते हैं। ले० नं० ४९५ में सोमेश्वर की विजय एवं कीर्ति का परिचय उनकी उपाधियों से ज्ञात होता है। उक्त नरेश के सेनापति शान्त और उसके पुत्र सातण्ण ने मनलकेरे में जैनमन्दिर का जीर्णोद्धार कराया था। द्वितीय लेख में वीर बल्लाल तक तो ठीक रूप से वंशावली दी गई पर पीछे की वंशावली नहीं। लेख में काल निर्देशको देखते हुए कहा जा सकता है कि यह उसके समय का है।

सोमेश्वर के राज्य के उत्तराधिकारी उसकी दो रानियों के दो पुत्र, नरसिंह तृतीय एवं रामनाथ हुए। नरसिंह तृतीय के चार लेख प्रस्तुत संग्रह में दिए गये हैं। ले० नं० ४९९ के अन्तर्गत दो लेखों से ज्ञात होता है कि सोमेश के पुत्र नरसिंह ने अपने बीरा द्वारा बनवायी गई चहार दीवारी एवं मकान की मरम्मत कराकर विजयपार्श्वदेव की सेवा में अर्पण किया था तथा कुछ महीने बाद अपने उपनयन संस्कार के समय उक्त देव की पूजादि के निमित्त दान दिया था। ले० नं० ५१२[2] में उक्त नरेश द्वारा तथा होळलगेरे के सम्भुदेव द्वारा भूमिदान का उल्लेख है। ले० नं० ५२८[3] में होय्सलराय शब्द से इस नरेश का निर्देश इसके गुरु महामण्डलाचार्य माघनन्दि का उल्लेख तथा बेल्गोल के जौहरियों द्वारा भूमिदान का कथन है। चूँकि लेख का समय उक्त नरेश के राज्यकाल में पड़ता है इसलिए होय्सलराय से नरसिंह तृतीय ही समझना चाहिये।

अन्यत्र उल्लेखों से ज्ञात होता है कि रामनाथ तथा नरसिंह के उत्तराधिकारी बल्लाल तृतीय ने भी जैन धर्म को संरक्षण प्रदान किया था[4]।

इस तरह हम देखते हैं कि इस वंश के आदि पुरुष से लेकर अन्तिम राजा तक सभी जैन धर्म के प्रति श्रद्धालु, भक्त एवं उसे संरक्षण प्रदान करने वाले थे।

---

१. वही–ले० नं० ४९६.
२. ,, ले० नं० ६६.
३. ,, ले० नं० १२९.
४. सालेतोरे, मेडीवल जैनिज्म, पृष्ठ ८५–८६

८. विजय नगर राज्य:—होय्यसल साम्राज्य १३ वीं शताब्दी तक दक्षिण भारत में विद्यमान रहा पर मुसलमानों के दो तीन हमलों से वह ध्वस्त हो गया। उसका अन्तिम राजा बल्लाल तृतीय, मदुरा के सुल्तान गियासुद्दीन द्वारा मार डाला गया। दक्षिण के अन्य हिन्दू साम्राज्य भी खतरे में थे। वे सब सचेत हो विजय नगर के नायकों के झण्डे के नीचे आये।

विजय नगर साम्राज्य के संस्थापक अपने को यादव वंश का मानते हैं (५८५ श्लो० १५)। इस वंश का संस्थापक था संगमेश्वर या संगम (५६१) जिसके संबंध में हमें विशेष कुछ मालुम नहीं। इसके दो बेटों ने मिलकर हिन्दू शक्ति को नेतृत्व प्रदान किया। हरिहर प्रथम जिसके सम्बन्ध में कहा जाता है कि वह सन् १३३६ में गद्दी पर बैठा था सन् १३५५ तक जीवित रहा। प्रस्तुत सग्रह में उसके समय के दो ले० नं० ५५८, ५५६ हैं जिनमें उसे महामण्डलेश्वर, हिन्दुवराय, सुरताल श्री वीर कहा गया है। उसका उत्तराधिकारी उसका भाई बुक्कराय हुआ जिसने सन् १३५५ से १३७७ ई० तक राज्य किया। इसके राज्य के ६–७ ले० प्रस्तुत संग्रह में दिए गये हैं, जिनमें उसे महामण्डलेश्वर कहा गया है। ले० नं ५६६ में उसे पूर्व दक्षिण पश्चिम समुद्राधीश्वर तथा ले० नं० ५६२ में अभिनव बुक्कराय कहा गया है। ले० नं० ५६१ में उसके एक पुत्र विरुपण्ण वोडेयर का उल्लेख है। ले० नं० ५६१, ५६५[1] एवं ५६६ में उक्त नरेश की धार्मिक नीति का निरूपण है। तदनुसार वह अपने राज्य में जैन और वैष्णवों में कोई भेद नहीं देखता था और जब कभी विवाद के प्रश्न उठते थे तो दोनों के पारस्परिक मेल मिलाप कराने में उद्यत रहता था। उसके राज्य के शेष लेख प्राय: समाधिमरण के स्मारक हैं।

बुक्कराय का उत्तराधिकारो उसका पुत्र वोर हरिहरराय द्वितोय हुआ जिसने सन् १३७७ से १४०४ ई० तक शासन किया। इसके राज्यकाल के करीब १३

१. जैन शि० सं०, प्रथम भाग, ले० नं० १३६.

लेख इस संग्रह में हैं जो कि प्रायः साधारण जनता, सरदारों एवं सेनापतियों से सम्बंधित हैं। ले० नं० ५३९ में उसके एक जैन सेनापति वैचप का उल्लेख है जो कि उसके पिता के समय से उक्त पद पर था। उक्त लेख में उसकी कोंकण देश से लड़ाई का वर्णन है जिसमें वैचप की जीत हुई थी। ले० नं० ५८१ में हरिहर द्वितीय के पुत्र बुक्कराय द्वितीय तथा वैचप सेनापति के पुत्र इरुगप्प महामंत्री का उल्लेख है। ले० नं० ५८४ में वैच (वैचप) और इरुगप्प की प्रशंसा के साथ बुक्क और हरिहर की प्रशंसा है। सन् १३८६ में इरुगप्प ने विजयनगर में एक मन्दिर बनवाया और उसमें कुन्थु जिननाथ की स्थापना की थी। ले० नं० ५८९ में और उसके बाद के लेखों में महामण्डलेश्वर के स्थान में उक्त राजा की अरदनि, नरपति आदि तथा महाराजाधिराज उपाधियाँ मिलती हैं। ले० नं० ६०३[1] में हरिहरराय की मृत्यु का उल्लेख है। उक्त लेखानुसार वह सन् १४०४ (शक सं० १३२६ भाद्रपद कृष्ण १० सोमवार) में दिवंगत हुआ था।

हरिहर द्वितीय का उत्तराधिकारी उसका बेटा बुक्क द्वितीय हुआ जिसने १४०४ से १४०६ ई० के बीच राज्य किया था पर उसके राज्य का एक भी जैन लेख प्रस्तुत संग्रह में नहीं है। उसका उत्तराधिकारी देवराय हुआ जो कि उसका भ्राता था। इसने १४०६ से १४२२ ई० तक राज्य किया। इसके राज्य के ९ लेख प्रस्तुत संग्रह में हैं। ले० नं० ६०४ में उसकी अधिराट् जैसी उपाधियाँ दी गई हैं तथा ६०५ में इसकी प्रशंसा की गई है। ले० नं० ६०९ में उसकी अनेक उपाधियों के साथ उसके जैन सेनापति गोप का उल्लेख है। लेख नं० ६१५ के अन्तर्गत दो लेखों से विदित होता है कि उसका एक बेटा हरिहरराय था जो कि जैन धर्मानुयायी था। उसने कनकगिरि के विजयनाथ देव की उपासना आदि के लिए मलेयूर ग्राम दान में दिया था।

ले० नं० ६१९ एवं ६२० में इस वंश की वंशावली दी गई है जिससे

---

१. वही—ले० नं० १२६

विदित होता है कि देवराय का उत्तराधिकारी विजय अर्थात् बुक्क तृतीय था जिसने कुछ ही महीने राज्य किया था। ले० नं० ६१८ में विजय बुक्कराय के सम्बंध में लिखा है कि उसने स्वर्ग प्राप्ति के लिए गुम्मटनाथ स्वामी की पूजा एवं सजावट के लिए तोटहल्लि गांव भेंट में दिया था। वह भगवद् अर्हत् परमेश्वर का आराधक था। उसका उत्तराधिकारी उसका पुत्र देवराय द्वितीय हुआ। ले० नं० ६१९ और ६२० में इस वंश की देवराय द्वितीय तक वंशावली दी गई है। ले० नं० ६१९ के अनुसार उक्त ताम्रपत्रों का दाता यही देवराय था। ६२० में इस वंश के प्रत्येक राजा की प्रशंसा में एक एक शार्दूलविक्रीडित छन्द दिया गया है। देवराय द्वितीय की प्रशंसा में अनेक छन्द हैं और कहा गया है कि उसने अपने पान सुपारी बगीचे में एक चैत्यालय बनवाया था और मन्दिर में श्री पार्श्वनाथ स्वामी की प्रतिमा विराजमान की थी। इस नरेश ने सन् १४२२ से १४४६ तक राज्य किया। ले० नं० ६३५[1] (सन् १४४६ ई०) में इसकी मृत्यु का संवत् दिया गया है।

देवराय द्वितीय का उत्तराधिकारी उसका बेटा मल्लिकार्जुन हुआ पर उसका एक भी लेख प्रस्तुत संग्रह में नहीं है। इसकी मृत्यु के बाद सन् १४६५ में उसका भाई विरूपाक्ष तृतीय गद्दी पर बैठा। उसका राज्य सन् १४८५ तक था। उसके समय का एक लेख नं० ६४३ (सन् १४७२) है जिसमें उसकी अनेक उपाधियाँ—पृथ्वीमनोवल्लभ, महाराजाधिराज, राजपरमेश्वर आदि–दी गई हैं। यह संगम वंश का अन्तिम राजा था। इसके मंत्री सालुव नरसिंह ने इसे मार कर राज्य छीन लिया और इस तरह सन् १४८५ में इस वंश का अन्त हो गया। इस वंश के बाद विजयनगर पर शासन करने वाले अन्य वंश भी हुए हैं। उनमें तुलुव और आरवीडु वंश ख्यात हैं। तुलुव वंश के तृतीय नृप कृष्णदेव राय का नाम इतिहास में विशेष प्रसिद्ध है। अन्य उल्लेखों से ज्ञात होता है कि इसने

---

१. वही—ले० नं० १२५

जैन धर्म को अच्छी तरह संरक्षण प्रदान किया था[1]। उसका उत्तराधिकारी उसका भाई अच्युत राय हुआ था। लेख नं० ६६७ में लिखा है कि वादि विद्यानन्द ने नरसिंह के कुमार कृष्णराय के दरबार में परमतवादियों को अपने वाग्बल से परास्त किया था तथा उनके चरण कमलों को कृष्णराय के भाई अच्युतराय अपने मुकुट से पूजते थे।

विजय नगर राज्य पर शासन करने वाले आरवीडु वंश के दो नरेशों के राज्य काल के दो लेख नं० ६८१ (सन् १६०८) और ७१० (सन् १६३७) भी इस संग्रह में उपलब्ध हैं। प्रथम लेख वेङ्कटाद्रि प्रथम के समय का है। जिसमें उसे राजाधिराज आदि उपाधियां दी गई हैं और उल्लेख है कि मेलिगे नामक स्थान में बोम्मण श्रेष्ठी ने जिन मन्दिर बनवाकर अनन्त जिन की प्रतिष्ठा की थी। इसी तरह दूसरे लेख में वेङ्कटाद्रि द्वितीय का अनेक उपाधियों के साथ उल्लेख है। उसे कलिकाल अष्टम चक्रवर्ती कहा गया है। इस लेख में लिंगायत और जैनों के बीच उठे धार्मिक विवाद पर आपसी समझौता होने का उल्लेख है।

विजय नगर राज्य के लेखों को देखने से हमें भली भांति ज्ञात होता है कि जनता के बीच विशेषतः नायकों और गौडों के बीच जैन धर्म प्रिय था। वे उसका विधिवत् पालन करते, दान देते तथा अन्त में समाधि विधि पूर्वक देहत्याग करते थे। हिरियावलि एवं नव निधि आदि ऐसे स्थान थे कि जहाँ समाधि विधि साधक आचार्य रहते थे। स्त्रियां अपने पति के मरने के बाद या तो सहगमन[1] (सती होकर) या समाधि विधि से मरण करती थीं। सती प्रथा के दो तीन दृष्टान्तों से ज्ञात होता है कि जैन समाज हिन्दू संस्कारों से प्रभावित होने लगा था। उनके धार्मिक मामलों में वैष्णवों की ओर से भी समय समय पर बाधाएं आने लगी थीं।

६. मैसूर राज्यवंशः—मैसूर राज्य के सम्बंध के इस संग्रह में प्रायः वे ही लेख हैं जो कि जैनशिलालेख संग्रह प्रथम भाग में वर्णित हैं। केवल दो लेख नं० ७५८

---

१. देखो, लेख नं० ५५६, ५७४, ६०५,

(सन् १८२८ केलसुरु से प्राप्त) एवं नं० ७६४ (सन् १८२९) नरसीपुर से प्राप्त नये हैं, जो कि मुम्मुडि कृष्णराज चतुर्थ के राज्यकाल के हैं। इसका राज्य सन् १७९९ से १८३१ ई० तक था। पहले भाग के लेख नं० ४३३, ९८ एवं ४३४ इस संग्रह में लेख नं० ७५२, ७५७ एवं ७६६ के रूप में संगृहीत हैं, जो कि इसी नरेश के समय के समझने चाहिये, कृष्ण राज तृतीय (राज्य काल ई० १७३४–१७६१) के नहीं।

ई. दक्षिण भारत के छोटे राजवंश एवं सामन्त गण।

१. सेन्द्रक कुलः—इस कुल की उत्पत्ति नागवंश से कही जाती है। लेख नं० १०९ में इन्हें भुजगेन्द्रान्वय का कहा गया है। इनका देश नागरखण्ड था जो कि वनवासि प्रान्त का एक भाग था। पहले ये कदम्बों के सामन्त थे पर पीछे कदम्बों के पतन के बाद बादामी के चालुक्यों के सामन्त हो गये। प्रस्तुत संग्रह के लेख नं० १०४, १०६ एवं १०९ से ज्ञात होता है कि ये जैन धर्मानुयायी थे। इस वंश के सामन्त भानुशक्ति राजा ने कदम्ब हरिवर्मा से जैनमन्दिर की पूजा के लिए दान दिलाया था (१०४) तथा चालुक्य जयसिंह (प्रथम) के राज्य में सामन्त सामियार ने एक जैन मन्दिर बनवाया था (१०६)। लेख नं० १०९ से ज्ञात होता है कि चालुक्य रणराग के शासन काल में विजयशक्ति के पौत्र एवं कुन्दशक्ति के पुत्र दुर्गशक्ति ने पुलिगेरे के प्रसिद्ध शंख जिनालय के लिए भूमिदान दिया था।

२. नीगुन्द वंशः—इस वंश का उल्लेख गंगवंश के एक लेख नं० १२१ में मिलता है। वहां लिखा है कि बाणकुल को भयभीत करने वाला दुण्डु नाम का एक नीगुन्द नामक युवराज हुआ। उसका बेटा परगूल पृथवी नीगुन्द राज हुआ उसकी पत्नी कुन्दाच्चि थी जिसकी माता पल्लव नरेश की पुत्री थी तथा उसका पिता सगर कुल का मरुवर्मा था। परगूल और उसका पिता दुण्डु दोनों जैन थे। पत्नी कुन्दाच्चि ने लोक तिलक नामक जैन मन्दिर बनवाया। जिसके लिए

परगूल ने अपने अधिपति नरेश से एक ग्राम दान में दिलाया था। उक्त लेख में दुग्गुडु के जैन गुरु विमलचन्द्राचार्य का उल्लेख है।

३. शान्तर वंश—दक्षिण भारत में जैन धर्म को शक्तिशाली बनाने में शान्तरवंशी राजाओं का बड़ा भारी हाथ था। प्रस्तुत संग्रह के अनेक जैन लेख इस बात के प्रमाण हैं।

शान्तर राजाओं के वंश का नाम उग्रवंश था और सातवीं शताब्दी के लगभग पश्चिमी चालुक्य नरेश विनयादित्य के शासनकाल में यह वंश हमारे सामने आता है। राज्य के रूप में इस वंश को स्थापित करने वाले प्रथम पुरुष का नाम जैन लेखों में, जिनदत्तराय मिलता है। लेख नं० १४६ के अनुसार यह जिनदत्तराय कलस राजाओं के खानदान कनककुल में उत्पन्न हुआ था। उसने जिनाभिषेक के लिए कुन्वसेपुर नामक गांव दान में दिया था। जिनदत्तराय के प्रताप का वर्णन ले० नं० १९८ में दिया गया है जिससे विदित होता है कि उसने पद्मावती देवी के प्रसाद को प्राप्त कर एक राक्षस के पुत्र को अपने भुजबल से भयभीत कर दिया था। ले० नं० २१३ और २४८ से जिनदत्तराय और उसके वंश के सम्बन्ध की अनेक सूचनायें मिलती हैं। इनसे मालुम होता है कि इस वंश की उत्पत्ति उत्तर भारत के मथुरा नगर में हुई थी और जिनदत्तराय ने पद्मावती के प्रसाद से पट्टिपोम्बुच्चपुर (वर्तमान हुम्मच) में अपना शासन स्थापित किया था। इसके बाद शान्तर लोगों की राजधानी बहुत समय तक हुम्मच ही रही। इस वंश के अनेकों लेख भी हुम्मच से ही प्राप्त हुए हैं।

जिनदत्तराय के वंश में कुछ समय बाद तोलापुरुष विक्रमशान्तर हुआ जिसने मौनिभट्टारक के लिए एक पाषाणवसदि (१३२) बनवाई थी। ले० नं० २१३ से विदित होता है कि विक्रम शान्तर ने एक महादान देकर सान्तलिगे हजार नाड् नाम का एक भिन्न राज्य स्थापित किया, इससे वह कन्दुकाचार्य, दानविनोद, विक्रमशान्तर इन तीन नामों से प्रसिद्ध हुआ। उसका पुत्र चागि शान्तर हुआ जिसने चागि समुद्र का निर्माण कराया था। उक्त लेख से ज्ञात होता है कि चागि के बाद क्रमशः वीर, कन्नर, कामदेव, त्यागि, नन्नि, राय, चिक्कवीर अम्मन

तथा तैल (सन् ८५० ई० के लगभग से १०२५ ई० के लगभग तक) इस वंश में उत्पन्न हुए। दुर्भाग्य से इन सबके सम्बन्ध में कोई लेख नहीं मिलते।

तैल (प्रथम) के तीन पुत्र थे उनमें वीर शान्तर (द्वितीय) ज्येष्ठ था। वही राज्य का अधिकारी हुआ। उसके राज्य के इस संग्रह में दो लेख हैं। ले० नं० १९७ में उसके अनेक विरुद दिये गये हैं। ले० नं० १९८ से ज्ञात होता है कि उसने समस्त विरोधियों को नष्ट कर अपने राज्य को निष्कण्टक कर दिया था। इस लेख में उसकी पत्नी चागलदेवी द्वारा निर्मापित तोरण एवं मन्दिर आदि कार्यों तथा दानों की प्रशंसा है। वीरशान्तर का अधिराजा त्रैलोक्यमल्ल चालुक्य (सोमेश्वर प्रथम-सन् १०४२–१०६८ ई०) था इसके नाम पर ही वीर शान्तर का दूसरा नाम त्रैलोक्यमल्ल पड़ा (१९७, १९८)। ले० नं० २१२ से ज्ञात होता है कि इसका विवाह जिन भक्त कुल गंगवंश में हुआ था। उसका ससुर रक्कस गंग था। उसकी पत्नी कञ्चलदेवी (वीर महादेवी) से उसे चार पुत्र उत्पन्न हुए—तैल, गोग्गिग, ओड्डुग और बर्म्म। ये सब जैन धर्म के परम भक्त थे। इन भाइयों ने अपनी जैन धर्मपरायणा मौसी चट्टलदेवी के सहयोग से जैन धर्म की प्रभावना के अनेक महत्वपूर्ण कार्य किये थे। इस संग्रह में तैल-शान्तर के राज्यकाल के ७ लेख (२०३, २१२, २१३, २१४, २१५, २१६, २२६) हैं जो सभी हुम्मच से प्राप्त हुए हैं। ले० नं० २०३ से ज्ञात होता है कि तैल द्वितीय ने सन् १०६६ में अपनी राजधानी पोम्बुच्चपुर में एक जिनालय बनवाया था, जिसका नाम भुजबल शान्तर जिनालय था। अन्य लेखों में उसके भाइयों के धार्मिक कार्यों का उल्लेख है। तैल द्वितीय भी अपने पिता के समान चालुक्य त्रिभुवन मल्ल (विक्रमादित्य षष्ठ) के अधीन था। उसका विरुद भी था त्रिभुवन मल्ल। उसने अपनी माता वीरब्बरसि की स्मृति में, वौदिघरट्ट अजित सेन पण्डितदेव का नाम लेकर एक बसदि की नींव रखी थी।

ले० नं० २४८ और ३२६ से ज्ञात होता है कि तैल शान्तर के पम्पादेवी नाम की एक पुत्री तथा श्रीवल्लभ नाम का पुत्र था तथा ओड्डुग शान्तर के तैल

(इरिव) नामका पुत्र था। अन्यत्र उल्लेखों से ज्ञात होता है कि तैल तृतीय श्रीवल्लभ का उत्तराधिकारी हुआ[1]। ले० नं० ३४८ में इस वंश के अन्तिम अंश का वर्णन है। यह लेख तैल चतुर्थ के वर्णन से प्रारम्भ होता है। तैल चतुर्थ, श्रीवल्लभ सान्तर का पुत्र था। इनकी पत्नी अवलादेवी थी जिससे काम, सिंह और अम्मण ये तीन पुत्र हुए। काम से वादेव और सिंगिदेव दो पुत्र तथा अलिया देवी पुत्री हुई। काम, तैल चतुर्थ का उत्तराधिकारी हुआ और वादेव कामदेव का। उक्त लेख में अलियादेवी के दान कार्यों का वर्णन है। यह देवी गंगवंश के मण्डलेश्वर होन्नेयरस की पत्नी थी।

यद्यपि पीछे के सान्तर नरेश वीर शैवधर्म की ओर झुक गये थे तो भी जैन धर्म की कृतज्ञता के भाव उनके मन में बराबर थे। २-३ शताब्दी बाद भी इस वंश के नायकों को अपने पूर्वजों के धर्म की याद बनी रही। कारकल से प्राप्त दो लेखों (६२४ और ६२७) से हमें ज्ञात होता है कि जिनदत्तराय के वंशज भैरव के पुत्र वीर पाण्ड्य ने कारकल में बाहुबलि की प्रतिमा बनाकर प्रतिष्ठित कराई थी तथा वहीं जिनकुल ब्रह्म (क्षेत्रपाल) की प्रतिमा भी प्रतिष्ठापित की थी।

४. कोङ्गाल्ववंशः—कोङ्गाल्ववंश राजाओं का शासन कोङ्गलनाड ८००० प्रान्त पर था जो कि वर्तमान कुर्ग के उत्तरभाग येलुसावीर प्रान्त और मैसूर के हसन जिले के दक्षिणभाग अर्कलगुड तालुका को शामिल किये था। यहाँ के पूर्व इतिहास का हमें पता नहीं पर ११वीं शताब्दी इस्वी से कोङ्गाल्व नरेशों के शिलालेखों से ज्ञात होता है कि उस समय यह क्षेत्र महत्त्वपूर्ण था।

इस वंश के जो भी लेख प्रस्तुत संग्रह में हैं उनसे उनके राजवंश का विशे परिचय नहीं मिलता पर उनकी जैन धर्मपरायणता का परिचय अवश्य मिलता है। सन् १०५८ ई० के लेखों (१८८, १८९, १९०) से मालूम होता है कि राजेन्द्र कोङ्गाल्व ने अपने पिता द्वारा निर्मापित बसदि के लिए भूमिदान दिया था। उसकी माँ ने भी एक बसदि बनवाई थी और उसने अपने गुरु गुणसेन

१—राबर्ट सेवेल, हिस्टोरिकल इन्स्क्रिप्शन्स आफ़ सदर्न इण्डिया, पृष्ठ ३२०

पण्डित देव की प्रतिमा प्रतिष्ठित की थी। ले० नं० १६० में राजेन्द्र का पूरा नाम राजेन्द्र चोल कोङ्गाल्व दिया गया है। सन् १०७० के एक त्रुटित लेख (२०६) में पृथुवि कोङ्गाल्व नाममात्र मिलता है उसके आगे का अंश नहीं पर ले०-नं०-२२०[1] में उसका पूरा नाम राजेन्द्र पृथ्वी कोङ्गाल्व अदटरादित्य दिया गया है। इसने अदटरादित्य नामक चैत्यालय निर्माण कराया था। पहले के उद्धृत लेखों और इस लेख से ज्ञात होता है कि उसका शासन काल कम से कम सन् १०५६ से १०७६ ई० तक अवश्य था। उक्त लेख में राजेन्द्र कोङ्गाल्व की महत्त्वपूर्ण अनेकों उपाधियाँ दी गई हैं जिनसे मालुम होता है कि वे सूर्यवंशी थे और चोलवंश से उनकी उत्पत्ति हुई थी। उन्हें ओरेयूर पुरवराधीश्वर कहा गया है। ओरेयूर व उरगपुर चोलराज्य की प्राचीन राजधानी थी। इस वंश के नरेश प्रारंभ से ही होय्सल राजाओं के अधीन सामन्त थे तथा पीछे विजय नगर राज्य के अधीन बने रहे।

प्रस्तुत संग्रह में इस वंश के और राजाओं के लेख नहीं आ सके। ले० नं० ५६० (सन् १३६१) में कोङ्गाल्ववंशी किसी राजा की रानी सुगुण देवी द्वारा प्रतिमा स्थापना एवं दानादि कार्यों का उल्लेख है। इससे विदित होता कि इस वंशके नरेश चौदहवीं शताब्दी या उसके बाद तक जैन धर्म पालन करते रहे।

५. चङ्गाल्व वंशः—कोङ्गाल्वों के दक्षिण में चंगाल्व वंश का राज्य था। पहले वे चंगनाड् (मैसूर रियासत का वर्तमान हुणसूर तालुका) के अधिपति थे। पश्चात् इनका राज्य पश्चिम मैसूर और कुर्ग में फैला था। यद्यपि ये शैव सम्प्रदाय के थे पर प्रस्तुत संग्रह के कुछ लेख यह सिद्ध करते हैं कि ११ वीं शताब्दी के अन्तिम एवं १२वीं के प्रथम दशकों में वे जैन धर्मावलम्बी थे। ले० नं० १७५, १६५, १६६ एवं २२३ से ज्ञात होता है कि वीर राजेन्द्र चोल नन्नि चंगाल्व ने देशियगण, पुस्तक गच्छ के लिए कुछ बसदियाँ बनवायी थीं। लेख नं० २४० और २४१ में कथन है कि उसी राजेन्द्र चंगाल्व ने सन् ११०० में

१—जैन शिलालेख संग्रह, प्रथम भाग, ले० नं० ५००

चन्द्र-तीर्थ की बसदि को, जिसे पहले राम ने बनवाया था और जिसको गंगोंने दान में दिया था, फिर से बनवाया।

ले० नं० ३७७ में उल्लेख है कि कदम्बवंशी सोविदेव ने किसी चंगाल्व राजाको हरा दिया था और ४५२ में लिखा है कि होय्सल सेनापति ने चंगाल्व नृप को मार भगाया था। पर इन राजाओं का क्या नाम है, हमें मालुम नहीं। ले० नं० ६६१ में सूचना है कि सन् १५१० के लगभग इस वंश के एक नरेश के मंत्री पुत्र ने गोम्मटेश्वर की ऊपरी मञ्जिल का जीर्णोद्धार कराया था।

६. निडुगल वंशः—१३ वीं शताब्दी ईस्वी में इस वंश का राज्य उत्तर मैसूर प्रान्त के कुछ हिस्से पर था। ये अपने को चोल महाराज तथा ओरेयूर पुरवराधीश्वर कहते थे। इस वंश के दो लेख (४७८ और ५२१) हमारे संग्रह में हैं जिनसे मालुम होता है कि इस वंश के कुछ नरेश जिनधर्म भक्त थे। ले० नं० ४७८ में इस वंश की एक वंशावली दी गई है जो कि तीसरे वंशधर से प्रारंभ होती है, यथा—चोल राजाओं में हुआ मंगि, उससे बम्रि, उससे गोविन्द, उसका पुत्र हुआ इरुङ्गोल (प्रथम)। इरुङ्गोल का पुत्र हुआ भोगनृप जिससे बर्म्म (ब्रह्म) नृप हुआ। उस बर्म्म नृप की रानी बाचालदेवी से इरुंगोल द्वितीय हुआ। इस नरेश ने अपने आश्रित एक जैन व्यक्ति गंगेयन मारेय के अनुरोध पर पार्श्व जिनबसदि के लिए कुछ भूमियों का दान दिया। उक्त बसदि का निर्माण उक्त जैन ने कराया था। उस बसदि की पूजा आदि के लिए कुछ किसानों ने चन्दा एवं तैलादि दान की व्यवस्था की थी। ले० नं० ५२१ में उसकी अनेक उपाधियाँ दी गई हैं तथा उक्त जिन बसदि का नाम ब्रह्म जिनालय दिया गया है जो कि सम्भव है उसके पिता के नाम पर रखा गया था। उक्त बसदि के लिए सन् १२७८ ई० में मल्लि सेट्टि ने सुपारी के २००० पेड़ों के २ हिस्से दान में दिये थे। इरुंगोल द्वितीय के सम्बन्ध में इतिहासज्ञों की मान्यता है कि वह जैन धर्मावलम्बी था[१]।

१—राबर्ट सेवेल, हिस्टोरिकल इन्स्क्रिप्सन्स आफ सदर्न इण्डिया, पृष्ठ ३६६

इरुंगोल प्रथम के सम्बंध में श्रवण बेल्गोल से प्राप्त दो लेखों (३४८, ३७८[२]) से ज्ञात होता है वह भी जैन था। उसके गुरु नयकीर्ति सिद्धान्त देव थे तथा वह होय्सल विष्णुवर्धन द्वारा पराजित हुआ था।

७. चेर वंश—चेर वंश की एक शाखा अदिगैमान् का एक लेख (४३४) हमारे संग्रह में है, जिससे उस वंश का थोड़ा परिचय मिलता है। उक्त लेख में एलिनि उर्फ यवनिका नामक एक अदिगैमान् सरदार का उल्लेख है। दूसरा सरदार राजराज था। उसका पुत्र विडुगादलगिय पेरुमाल अर्थात् व्यामुक्त श्रवणोज्ज्वल था, जिसे लेख में तकटानाथ कहा गया है। अन्यत्र उल्लेखों से मालुम होता है कि वह सन् ११६८–१२०० ई० में जीवित था। उक्त लेख के अनुसार व्यामुक्त श्रवणोज्ज्वल ने अपने पूर्वज यवनिका द्वारा नूरटीर मण्डल के अर्हत्सुगिरि पर प्रतिष्ठापित यक्ष-यक्षिणी की प्रतिमाओं का जीर्णोद्धार कराया तथा एक घण्टा दान में दिया और एक नाली भी बनवायी थी। लेख से ज्ञात होता है कि इस शाखा के तीनों पुरुष जैन धर्म में रुचि रखते थे।

८. शिलाहार वंश—शिलाहार अपने को जीमूतवाहन का वंशज मानते हैं। प्रस्तुत संग्रह में पश्चात्कालीन शिलाहारों के केवल तीन लेख संगृहीत हैं, जो कि कोल्हापुर और उसके आसपास प्रदेश में राज्य करते थे। ले० नं० ३२० और ३३४ में इस वंश की वंशावली दी गई है जिसमें जतिग से इस वंश का प्रारम्भ माना गया है। जतिग को नरेन्द्र, क्षितीश कहा गया है। जतिग के चार बेटे थे—गोङ्कल, गूवल, कीर्तिराज और चन्द्रादित्य। इनमें गोङ्कल का पुत्र मारसिंह हुआ जिसके पाँच पुत्र थे:—गूवल, गंगदेव, बल्लाल, भोजदेव, गण्डरादित्य। उक्त दोनों लेख गण्डरादित्य के पुत्र विजयादित्य के राज्य के हैं जो कि भूमिदान संबंधी हैं। इन लेखों में उसके जो विरुद दिये गये हैं उनसे ज्ञात होता है कि वह अपने समय का बड़ा प्रतापी मण्डलेश्वर था। बल्लालदेव और

२—जैन शिलालेख संग्रह, प्रथम भाग, ले० नं० १३८, ४२

गण्डरादित्य के सम्बन्ध में ले० नं० २५० में उल्लेख है कि उसने जैन मुनियों के लिए एक भवन दान में दिया था। उसको 'महामण्डलेश्वर उपाधि थी। भोजदेव के सम्बन्ध में अन्यत्र उल्लेख से मालुम होता है कि उसके दरबार में रहकर सोमदेव ने शब्दार्णव चन्द्रिका बनायी थी।

६. रट्ट वंश—इस वंश के अनेक लेख इस संग्रह में दिखाई देते हैं। इस वंश के राजे जैन धर्म के संरक्षक राष्ट्रकूट एवं चालुक्य नरेशों के सामन्त थे। हुल्त्स महोदय की मान्यता है कि इस वंश का व्यवहारी नाम रट्ट था जब कि राष्ट्रकूट अलंकारिक एवं शाही रूप था। जो भी हो, रट्ट लोग राष्ट्रकूट कृष्ण तृतीय के समय से प्रभाव में आये थे। सौंदत्ति से प्राप्त एक लेख (१३०) से मालुम होता है कि रट्टों में प्रथम जिसने प्रमुख अधिकारी होने का पद पाया था वह था मेरड का पुत्र पृथ्वीराम। उसे यह पद राष्ट्रकूट कृष्ण तृतीय की अधीनता में मिला था। उससे पहले वह मैलाप तीर्थ के कारेयगण के इन्द्रकीर्ति स्वामी का शिष्य था। ले० नं० १६० में पृथ्वीराम के पुत्र, प्रपौत्र एवं उनकी पत्नियों के नाम दिए गए हैं। संभव है ये सब सामन्त या महासामन्त थे। इसके बाद इस वंश की परम्परा का क्रम कुछ भंग हो गया है।

वंशावली का द्वितीय अंश २०५ और २३७ वें लेख में वर्णित है, जिसमें नन्न से सेन द्वितीय तक वंश परम्परा दी गई है। इन लेखों में तथा पीछे के लेखों में कार्तवीर्य को लत्तलुपुरवराधीश्वर तथा महामण्डलेश्वर आदि कहा गया है। ले० नं० ३६६, ४४८, ४४९, ४५३, ४५४ और ४७० इसी वंश से संबंधित है जिनमें सेन द्वितीय से ४–५ पीढ़ी तक अर्थात् कार्तवीर्य चतुर्थ, मल्लिकार्जुन और लक्ष्मीदेव द्वितीय तक की वंशावली दी गई है। ज्ञात होता है कि इस वंश का अभ्युदय ई० सन् ९७८ के लगभग से १२२९ ई० तक रहा। इस वंश के प्रथम पुरुष पृथ्वीराम ने राष्ट्रकूट वंश की अधीनता में वृद्धि की पर उसके उत्तराधिकारी शान्तिवर्मा से लेकर सेन द्वितीय तक कल्याणी के चालुक्यों की

अधीनता में रहे। सेन द्वितीय पीछे स्वतन्त्र हो जाता है और संभव है कि उसके बाद के सभी वंशधर स्वतन्त्र थे।[१]

वंश के आदि पुरुष पृथ्वीराम के सम्बन्ध में ले० नं० १३० में कहा गया है वह एक जैन मुनि का विनीत छात्र था। उपर्युक्त लेखों से मालुम होता है कि कार्तवीर्य और मल्लिकार्जुन ने अपने दानों द्वारा जैन धर्म को अच्छी तरह संरक्षित किया था।

१०. यादव वंशः—यह वंश अपनी उत्पत्ति विष्णु से मानता है (३१७) पर इसके प्रारम्भिक इतिहास के विषय में हमें कुछ नहीं मालुम। इस संग्रह के जैन लेखों से ज्ञात होता है कि वे राष्ट्रकूटों के तथा पीछे कल्याणी के चालुक्यों के सामन्त थे। ईस्वी १२ वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में यह शक्ति कुछ स्वतन्त्र होती दिखती है। प्रारम्भिक यादवों को सेउण देश के यादव भी कहते हैं। पीछे इन्होंने देवगिरि में अपने राज्य को स्थापित किया था।

प्रस्तुत संग्रह में इस वंश के राजा सेउणचन्द्र तृतीय से लेकर रामदेव या रामचन्द्र तक के शिला लेख संग्रहीत हैं। ले० नं० ३१७ से ज्ञात होता है कि राजा सेउणचन्द्र तृतीय ने चन्द्रप्रभ भगवान् के मन्दिर के खर्चे के लिए अंजनेरी में तीन दुकानें दान में दी थीं पर उसकी राजनीतिक स्थिति का पता नहीं चलता। ४२१ वें लेख में उल्लेख है कि होय्सल नृप वीरबल्लाल द्वितीय ने, सन् ११६८ के लगभग सेऊणदेश के किसी राजा को जिसके पास अगणित हाथी घोड़े तथा वीर योद्धा थे, युद्ध में अकेले ही हराया। इतिहास को देखने से पता चलता है कि उस समय वहाँ भिल्लम पञ्चम का बेटा जैत्रपाल (जैतुगि) प्रथम शासन कर रहा था। उसके शौर्यसम्पन्न विशेषणों से ज्ञात होता है कि उस समय तक यादवों का प्रभाव एवं स्थिति अच्छी हो गई थी। जैत्रपाल प्रथम का बेटा सिंहण हुआ जिसका राज्य सन् ११९१ ई० से १२४७ ई० तक था।

---

१. विशेष इतिहास के लिए देखो, दिनकर देसाई, महामण्डलेश्वराज अण्डर द चालुक्याज आफ कल्याणी, बम्बई, १९५१

इसके ३७ वें वर्ष को द्योतन करने वाला एक समाधिमरण स्मारक लेख (४९०) प्रस्तुत संग्रह में दिया गया है। इसी तरह सिंहण के पौत्र कन्हार देव या कन्धार देव के समय का वैसा ही एक लेख (५०२) इसी संग्रह में है। इस वंश से सम्बन्धित ले० नं० ५११ में वंशावली वाला भाग त्रुटित है, तो भी इससे इतना ज्ञात होता है कि कन्धार देव का सहोदर महदेव था तथा कन्धार-राय का पुत्र रामदेव (रामचन्द्र) था। उक्त लेख के अनुसार दण्डेश कूचिराज ने अपने स्वामी महदेव के करकमलों द्वारा अपनी पत्नी के नाम पर निर्मापित लक्ष्मी जिनालय को कुछ दान दिलवाया था। रामचन्द्र या रामदेव के राज्य काल के ५ लेख (५१३, ५३५, ५३८, ५४०, ५४१) इस संग्रह में हैं जो कि दाताओं द्वारा दिये दान के स्मारक हैं। सन् १२९२-९५ के बीच के ले० नं० ५३८, ५४०, ५४१ में उक्त राजा की भुजबल प्रौढ प्रताप चक्रवर्ती आदि उपाधियाँ दी गयी हैं।

होय्सल वंश के समान ही इनका राज्य मुसलमानों ने नष्ट कर दिया।

११. संगीतपुर के सालुव मण्डलेश्वरः—१५ वीं ई० के उत्तरार्ध से लेकर १६ वीं के उत्तरार्ध तक संगीतपुर के शासक जैन धर्म के नेता के रूप में हमारे सामने आते हैं। तौलव देश (उत्तर कनारा जिला) में संगीतपुर, जिसे हाडुहल्लि भी कहते हैं, एक समृद्ध नगर था। उस नगर के शासक काश्यप गोत्र तथा सोमवंश के कहलाते थे। ले० नं० ६५४ में इस नगर का बड़ा सुन्दर वर्णन है। वहाँ का शासक महामण्डलेश्वर सालुवेन्द्र था जोकि चन्द्रप्रभ भगवान् का भक्त था। लेख में उक्त राजा के अनेक विशेषण दिये गये हैं जिससे विदित होता है कि वह राज्य और जैनधर्म दोनों को अच्छी तरह पालन कर रहा था। उसके मंत्री का नाम पद्म या पद्मण था जो कि शाही खान्दान का था। उसे सन् १४८८ में सालुवेन्द्र महाराज ने एक ग्राम भेंट दिया जिसे उसने जिनधर्म की उन्नति के लिए दान में दे दिया (६५४)। इसी मंत्री ने १० वर्ष बाद सन् १४९८ में पद्माकरपुर में एक चैत्यालय बनवाकर पार्श्व जिन की स्थापना की तथा अनेक दान दिये (६५८)।

महामण्डलेश्वर सालुवेन्द्र के पिता का नाम संगिराय था तथा अनुज का नाम कुमार इन्दगरस वोडेयर था। इन्दगरस का दूसरा नाम इम्मडि सालुवेन्द्र था जो कि अपनी शूर वीरता के लिए प्रसिद्ध था (६५६)। वह जैनधर्म का भक्त था और उसने विदिरू में वर्धमान स्वामी की पूजा के निमित्त दान की व्यवस्था की थी।

आगे इस वंश के सालुव मल्लिराय, सालुव देवराय, सालुव कृष्णराय के नाम मिलते हैं जिन्होंने जैनधर्म को संरक्षण प्रदान किया था। सालुव कृष्णराय, सालुव देवराय की वहिन पद्मामम्बा का पुत्र था। ले० नं० ६६७ से ज्ञात होता है कि ये तीनों शासक प्रसिद्ध जैन वादी विद्यानन्द मुनि के भक्त थे। सालुव मल्लिराय और देवराय के दरबारों में उक्त मुनि ने अनेकों प्रतिवादियों को परास्त किया था। ले० नं० ६७४ में तीनों राजाओं के पूर्वजों का परिचय तथा एक दूसरे के सम्बन्ध का परिचय दिया गया है। वहाँ उन्हें क्षेमपुर का शासक भी कहा गया है।

५. जैन सेनापति एवं मन्त्रिगण

इन लेखों पर दृष्टिपात करने से यह निश्चय रूप से मालुम होता है कि दक्षिण भारत में जैन धर्म ने अपना व्यावहारिक रूप अच्छी तरह पा लिया था। जैन सन्तों के उपदेश से न केवल व्रत नियमादि पालन कर अन्त में समाधि से देहोत्सर्ग करने वाले व्यक्ति ही प्रभावित थे वल्कि विशाल सेनाओं के नायक दण्डाधिपति एवं राज्यसंचालक मंत्रिगण भी प्रभावित हुए थे। अहिंसा का सन्देश केवल उनकी श्रद्धा का विषय न था, वह तो देश की प्रगति में वाधक होने की जगह साधक था। उसके विना चाहे धार्मिक क्षेत्र हो या राजनीतिक, स्वतन्त्रता संभव न थी।

इन लेखों में अनेकों वीर सेनानियों की अमर कहानियाँ भरी पड़ी हैं। उनमें मुख्य कुछ का संक्षिप्त परिचय यहाँ प्रस्तुत किया जाता है।

१. श्रुतकीर्तिः—जैन धर्म के आश्रयदाता कदम्बों के सेनापति श्रुतकीर्ति और उसके वंशजों की भक्ति उल्लेखनीय है। ये लोग यापनीय संघ के आचार्यों के भक्त थे। पलाशिका (हल्सी) और देवगिरि से प्राप्त लेखों में इस वंश का चरित चित्रित है। ले० नं० ९६ से विदित होता है कि श्रुतकीर्ति सेनापति ने अपने कल्याण के लिए बदोवर क्षेत्र को अर्हन्तों के लिए दे दिया था जो कि उसने अपने स्वामी कदम्ब काकुत्स्थवर्मा से खेटक ग्राम में प्राप्त किया था। लेख नं० १०० में इसके गुणों की प्रशंसा है और इसे भोजवंश का या भोजक लिखा है। वह काकुत्स्थवर्मा का विशेष कृपापात्र था। उक्त लेख के अनुसार काकुत्स्थ वर्मा के बेटे शान्तिवर्मा के पुत्र मृगेश ने श्रुतकीर्ति की पत्नी एवं दामकीर्ति की मां को खेटग्राम धर्मार्थ दे दिया था। उसी लेख में लिखा है उस दामकीर्ति का ज्येष्ठ पुत्र जयकीर्ति था जिसके गुरु आचार्य बन्धुषेण थे। उसने अपने माता पिता के पुण्यार्थ खेटक ग्राम को यापनीय संघ के आचार्य कुमारदत्त को दे दिया था। लेख नं० १०१ में दामकीर्ति के छोटे भाई का नाम श्रीकीर्ति था जो कि अपने कुल के अनुरूप धर्मात्मा था। ले० नं० ९७ और ९९ में दामकीर्ति का उल्लेख है जिनसे ज्ञात होता है कि वह कदम्ब शान्तिवर्मा की धार्मिक प्रवृत्तियों का प्रेरक था। उन दिनों पलाशिका (हल्सी) यापनीय संघ का केन्द्र था और श्रुतकीर्ति के वंशज उक्त संघ के अनुयायी थे।

२. चामुण्डरायः—इसका प्रिय नाम 'राय' भी था। इतना शूरवीर, इतना दृढ़ भक्त एवं इतना स्वामिभक्त मंत्री कर्नाटक के इतिहास में दूसरा और कोई नहीं दिखाता। उसके समय के अनेकों लेखों और उसकी कन्नड भाषा में कृति चामुण्डराय पुराण से उसके जीवन का परिचय मिलता है। ले० नं० १६५ (प्रथम भाग, नं० १०९) से ज्ञात होता है कि वह ब्रह्मक्षत्र कुल में पैदा हुआ था। वहाँ उसे 'ब्रह्मक्षत्रकुलोदयाचलशिरोभूषामणि' कहा गया है। वह गंग नरेश राचमल्ल चतुर्थ का सेनापति था पर मालुम होता है कि वह उसके पिता मारसिंह तृतीय के समय भी सेनापति था। मारसिंह के विषय में लिखा जा चुका है कि वह उस वंश का बड़ा प्रतापी नरेश था। वह राष्ट्रकूट नरेश कृष्ण तृतीय

का महासामन्त था। श्रवणवेल्गोला से प्राप्त ले० नं० १५२ (प्रथम भाग, ३८) और १६५ (प्रथम भाग, १०६) में इसकी अनेक विजयों का वर्णन किया गया है। ले० नं० १५५ (प्रथम भाग, ६१) में वर्णित अनेक विजयों का श्रेय राजा मारसिंह को दिया गया है पर उक्त लेख के कथन को ले० नं० १६५ और चामुण्डराय पुराण के सहारे पढ़ने से वास्तविकता समझ में आ जाती है। राचमल्ल को 'जगदेकवीर' उपाधि सूचित करती है कि ये सब विजयें उसके राज्य में सम्पन्न हो सकी थीं। मारसिंह और राचमल्ल ने ये सब युद्ध अपने अधिराट् राष्ट्रकूट कृष्ण तृतीय और इन्द्र चतुर्थ के लिए सेनापति चामुण्ड राय के द्वारा जीते थे।

उपर्युक्त लेखों में चामुण्डराय की शूरवीरता को सूचित करने वाली अनेक उपाधियाँ दी गई हैं। खेद है कि ले० नं० १६५ छः पद्यों के बाद अकस्मात् समाप्त हो जाता है जिससे हमें उसके सम्बन्ध की पूरी जानकारी नहीं हो पाती। उसके जीवन के अन्य पहलुओं को उसकी अमरकृति चामुण्डराय पुराण और उसके आचार्यों के ग्रन्थो से जाना जा सकता है।

उसकी अमर कीर्ति की प्रतीक श्रवणवेल्गोल में बाहुबलि की जगद्विख्यात एक विशाल मूर्ति (५७ फुट ऊँची) प्रतिष्ठित है। इस मूर्ति के निर्माण का हेतु ले० नं० ३६५ में वर्णित है जिसका कि अन्यत्र उल्लेख किया गया[1] है। चामुण्डराय के दो गुरु थे एक का नाम था अजितसेन और दूसरे का नाम नेमिचन्द्र सिद्धान्त चक्रवर्ती। श्रवण वेलगोल के एक लेख (प्रथम भाग, १२२) से ज्ञात होता है कि इस सेनापति ने चिक्क बेट्ट पर एक वसदि बनवाई थी तथा ले० नं० १५७ (प्रथम भाग, ६७) से ज्ञात होता है कि उसके पुत्र जिनदेवण्ण ने भी जो कि अजितसेन मुनि का शिष्य था, एक वसदि बनवाई थी।

चामुण्डराय की जैन धर्म के प्रति की गई सेवाओं की छाप दक्षिण भारत में

---

[1] देखो, 'जैनधर्म के केन्द्र' प्रकरण।

शताब्दियों तक रही। ले० नं० ३६३ (प्रथम भाग, १३७) में एक प्रसंग में लिखा है कि जिन शासन के स्थिर उद्धार करने में प्रथम कौन है ? तो उत्तर होगा, राचमल्ल भूपति के वरमंत्री राय (चामुण्डराय) (पद्य २२)।

३. शान्तिनाथ—इसके सम्बन्ध में ले० नं० २०४ में लिखा है कि वह सहजकवि, चतुरकवि, निस्सहायकवि... नुनमहाकवीन्द्र था। उसकी उपाधि सरस्वतीमुखमुखर थी। उसका यश अति विशद था और वह जिन शासन रूपी सत्सरोजिनी का कलहंस था। उसने अपने राजा लक्ष्मनृप से प्रार्थना कर बलि-नगर में लकड़ी के बने जैन मन्दिर को पाषाण का बनवाया। इस मन्दिर का नाम मल्लिकामोद शान्तिनाथ था।

१२ वीं शताब्दी में होय्सल वंश से सम्बन्धित हम अनेक जैन सेनापतियों को देखते हैं। इस वंश का प्रतापी नरेश विष्णुवर्धन था। उसकी अनेक विस्तृत विजयों का श्रेय उस नरेश के आठ जैन सेनापतियों को था। ये सेनापति थे— गंगराज, बोप्प, पुणिस, बलदेवण्ण, मरियाने, भरत, ऐच और विष्णु। इन सेना-पतियों के कारण ही होय्सल राज्य दक्षिण भारत की प्रधान शक्तियों में गिना जाने लगा।

४. गंगराज—इन सेनापतियों में प्रधान था गंगराज। इसके सम्बन्ध में जैन शिलालेखसंग्रह प्रथम भाग की भूमिका में पर्याप्त लिखा गया है। इसके जीवन वृत्त को जानने के लिए इस संग्रह में दो दर्जन से अधिक लेख हैं। प्रस्तुत द्वितीय तृतीय भाग में इस सेनापति से सम्बन्धित केवल ले० नं० २६३, २६६, २६६, ३०१ और ४११ के मूल पाठ हैं। शेष २८५ (४३) २७८ (४४) २५४ (४६) २५५ (४७) २६० (६५) २८१ (४४६) २८३ (४८६) ३६६ (६०) के मूल पाठ प्रथम भाग में दिए गये हैं, कोष्ठक में उन लेखों की संख्या दी गई है। प्रथम भाग के ले० नं० ७५, ७६, ४४७ और ४७८ इन भागों के लेखों की संख्या से नहीं पहिचाने जा सके। लेख २६३, २६६ और २६६ में उसकी अनेक सामरिक विजयों का उल्लेख तथा जैन मुनियों और

मन्दिरों को अनेक प्रकार के दानों का उल्लेख है। इन लेखों में उसके दो जैन गुरुओं–मेघचन्द्र सिद्धान्त देव एवं शुभचन्द्र सिद्धान्त देव–का नाम मिलता है। ले० नं० ३०१ में गंगराज की बड़ी प्रशंसा की गई है। उसकी मृत्यु के स्मारक स्वरूप उसके पुत्र बोप्प सेनापति ने दोर समुद्र में एक जिनालय बनवाकर पार्श्वनाथ की मूर्ति स्थापित की थी। उक्त लेख में लिखा है कि अनेक उपाधियों से विभूषित गंगराज ने अगणित ध्वस्त जैन मन्दिरों का पुनर्निर्माण कराया था। अपने अनवधि दानों से उसने गंगवाडि ९६००० को कोपण के समान चमकाया था। गंगराज के मत से ये ७ नरक थे—झूठ बोलना, युद्ध में भय दिखाना, परदारारत रहना, शरणार्थियों को शरण न देना, अधीनस्थों को अपरितृप्त रखना, जिनको पास में रखना चाहिए उन्हें छोड़ देना और स्वामी से द्रोह करना।

उक्त जिनालय का नाम गङ्गराज की एक विशिष्ट उपाधि पर से द्रोहघरट्ट जिनालय पड़ा था। इसी जिनालय की स्थापना को अपनी सुख समृद्धि के वर्धन में हेतु मानकर होय्सल विष्णुवर्धन ने इसे ग्रामादि दान दिये थे" (३०१)।

५. बोप्प—गंगराज का पुत्र दण्डेश बोप्प देव भी बड़ा ही शूरवीर एवं धर्मिष्ठ था। उसने उपर्युक्त द्रोहघरट्ट जिनालय के सिवाय दो और मन्दिर बनवाये थे, कम्बदहल्लि से शान्तीश्वर बसदि तथा सन् ११३८में त्रैलोक्यरञ्जन बसदि जिसका दूसरा नाम बोप्पण चैत्यालय था (३०३)। इसे ले० नं० ३०३ में बुधबन्धु, सतां बन्धुः कहा गया है। इसी तरह ले० ३०१ और ४११ में उसके अनेक विशेषणों के साथ उसकी वीरता की प्रशंसा की गई है। ले० नं० ३०४ में उल्लेख है कि सन् ११३४ में उसने शत्रु पर आक्रमण किया और उनकी प्रबल सेना को खदेड़कर अपने भुजबल से कोङ्गों को परास्त किया था।

६. पुणिसः—गंगराज के बहादुर साथियो में पुणिस भी था। उसके पूर्वज अमात्य होते आये थे। उसका पितामह पुणिसम्म चमूप था जो कि सकल शास्त्र-वाचक चक्रवर्ति था। उसके ज्येष्ठ पुत्र चामण का पुत्र पुणिस था। यह होय्सल नरेश विष्णुवर्धन का सान्धिविग्रहिक था। ले० नं० २९४ में उसकी सामरिक शूर

वीरता के कार्यों का वर्णन है। उसने अनेकों देश जीतकर होय्सल विष्णुवर्धन को दिये। पुणिस, गंगराज के समान ही विशाल हृदय का था। उसने धर्म और मानवता की समान दृष्टि से सेवा की। ले० नं० २६४ में लिखा है कि युद्ध के कारण जो व्यापारी बिगड़ गये थे, जिन किसानों के पास बीज बोने को नहीं था, जो किरात सरदार हार जाने से अधिकार वंचित हो नौकर हो गए थे, उन्हें तथा उन सबको जिनका जो नष्ट हो गया था, वह सब पुणिस ने दिया और उनके पालन पोषण में मदद की। उक्त लेख में यह भी उल्लेख है कि उसने एरेगनाड् के अरकोट्टार स्थान में अपने द्वारा बनवाई गई त्रिकूट बसदि से संलग्न बसदियों के लिए भूदान दिया तथा निर्भय होकर गंगों की तरह गंगवाडि की बसदियों को शोभा से सज्जित किया।

७. बलदेवण्ण:—विष्णुवर्धन का चौथा सेनापति बलदेवण्ण था। ले० नं० २६६ में इसके सम्बन्ध में थोड़ा परिचय मिलता है। वह राजा अरसादित्य और आचाम्बिके का तृतीय पुत्र था। उसके दो बड़े भाइयों का नाम पम्पराय और हरिदेव था। लेख में उसके 'मंत्रिचूडामणि, धुर्या, सकलसचिवनाथ एवं जिनपादाम्बुज सेवक' आदि विशेषण दिये गए हैं।

८-९. मरियाने और भरत:—होय्सल विष्णुवर्धन के सेनानायकों में दो भाई-दण्डनायक मरियाने और भरत या भरतेश्वर भी थे। इनके वंश का परिचय ले० नं० ३०७, ३०८ और ४११ में दिया गया है जिससे ज्ञात होता है कि इनके वंशज होय्सल राजवंश से सम्बन्ध रखते थे। इस कारण इन दोनों भाइयों का पद सर्वाधिकारी, माणिक्यभाण्डारी तथा प्राणाधिकारी था। विष्णुवर्धन ने मरियाने दण्डनायक को अपना पट्टदाने (राज्य गजेन्द्र) समझकर ही उसे सेनापति बनाया था। ये दोनों भाई जैसे शूर वीर थे वैसे ही धर्मिष्ठ थे। लेख में इन्हें 'निरवद्य-स्याद्वादतर्कागमनकुशल, नित्याभिषेकनिरत, जिनपूजामहोत्साहजनितप्रमोद, चतुर्विधदानविनोद' आदि कहा गया है। ले० नं० ३०७ में भरत के अनेक गुणों की प्रशंसा की गई है। वहाँ लिखा है कि उसका धन जिनमन्दिरों के लिए था, दया सभी प्राणियों के लिए थी, उसका अच्छा मन जिनराज की पूजा

में था, औदार्य सज्जन वर्ग के लिए तथा दान सन्मुनीन्द्रों के लिए था। श्रवण-वेल्गोल से प्राप्त ले० नं० २५४[1] और २५५[2] से विदित होता है कि उसने श्रवणवेल्गोल में ८० नई बसदियाँ बनवायीं और गंगवाडि की २०० पुरानी बसदियों का जीर्णोद्धार कराया था। इन दोनों भाइयों के गुरु थे देशीगण, पुस्तक गच्छ के आचार्य माघनन्दि के शिष्य गण्डविमुक्त व्रती। ले० नं० ४११ से ज्ञात होता है कि ये दोनों भाई विष्णुवर्धन के बेटे नारसिंह के समय में भी विद्यमान थे। इन दोनों ने ५०० होन्नु देकर उक्त नरेश से सिन्दगेरी आदि तीन गाँवों का प्रभुत्व प्राप्त किया था।

१०. ऐचः—गंगराज का भतीजा एवं उसके बड़े भाई का पुत्र ऐच भी विष्णुवर्धन के सेनापतियों में था। उसकी शूरवीरता आदि के सम्बन्ध में विशेष तो नहीं मालुम पर ले० नं० ३०४ (प्रथम भाग १४४) में लिखा है कि उसने कोपण, वेल्गुल आदि स्थानों में अनेक जिन मन्दिर बनवाये और सन् ११३५ में संन्यासविधि से प्राणोत्सर्ग किया। गंगराज के पुत्र बोप्प ने अपने चचेरे भाई की स्मृति में निषद्या बनवाई थी।

११. विष्णु दण्डाधिप—ले० नं० ३०५ से ज्ञात होता है कि विष्णुवर्धन होय्सल का एक और सेनापति था जिसका नाम विष्णु दण्डाधिप या इम्मडि दण्डनायक बिट्टियण्ण था। इसने आधे महीने में ही दक्षिण प्रान्त की विजय कर ली थी। विष्णुवर्धन होय्सल का यह दाहिना हाथ था। यह बचपन से ही उक्त नरेश का प्यारा था। लेख में लिखा है कि किशोरावस्था प्राप्त होने पर नरेश ने इसका बड़े उत्सव के साथ स्वयं ही उपनयन संस्कार कराया, सात आठ वर्ष की आयु के बाद जब वह समस्त शास्त्र विज्ञान में पारंगत हुआ तब उसको अपने प्रधान मंत्री की सर्व लक्षण सम्पन्न पुत्री ब्याह दी और १०-११ वर्ष की उम्र में महाप्रचण्ड दण्डनाथ तथा सर्वाधिकारी का पद दिया।

---

१. प्रथम भाग, ३६८.

२. वही, ११५,

यह सेनापति बड़ा ही धर्मिष्ठ एवं दानी था। इसने कई सार्वजनिक कार्य कराये थे तथा राजधानी दोरसमुद्र में एक जिनालय बनवाया था। इसके गुरु का नाम श्रीपाल त्रैविद्यदेव था जिन्हें उक्त जिनालय के प्रबन्ध और ऋषियों के आहार दान के हेतु उसने एक ग्राम और भूमियां दान में दी थीं।

१२. मादिराज—विष्णु वर्धन का एक जैन मंत्री महाप्रधान मादिराज था। ले० नं० ३१६ में उसके धार्मिक गुणोंकी बड़ी प्रशंसा की गई है। वह श्रीकरण का अधिपति था और अपनी वक्तृता से सभा भवन को प्रभावित किये था। वह कोष का लेखा रखता था। उसके भी गुरु श्रीपाल त्रैविद्यदेव थे। विष्णुवर्धन के उत्तराधिकारी नरसिंह के भी चार सेनापति जैन धर्मावलम्बी थे। वे थे देवराज, हुल्ल, शान्तियण्ण और ईश्वर चमूप।

१३. देवराज—ले० नं० ३२४ में देवराज का उल्लेख है। इसका गोत्र-कौशिक था। लेख में इसे 'श्रीजिनधर्मनिर्मलाम्बरहिमकर' एवं 'श्रीहोय्सल महीशराज्यभूभृन्निलय मणिप्रदीपकलश' कहा गया है। राजा नरसिंह ने उसकी धर्मबुद्धि और स्वामिभक्ति से प्रसन्न होकर उसे सूरनहल्लि गाँव दिया जहाँ उसने जिन चैत्यालय बनवाया जिसके लिए होय्सलदेव ने अष्टविधार्च्चन और आहार दान के निमित्त १० होन्नु दान में दिये और गाँव का नाम पार्श्वपुर रख दिया। उक्त ले० में उसके गुरु मुनिचन्द्र का नाम दिया है। उन गुरु की पट्टावली भी उक्त ले० में दी गई है।

१४. हुल्ल—नरसिंह होय्सल का द्वितीय सेनापति हुल्ल या हुल्लप था। उस युग में जैन धर्म के उद्धारकों में चामुण्डराय और गंगराज के बाद हुल्लप का ही नाम आता है। इसके सम्बन्ध में जैन शिलालेख संग्रह प्रथम भाग की भूमिका में पर्याप्त लिखा गया है। इस संग्रह में ये ले० नं० ३४८, (१३८) ३६२ (४०) ३६३ (१३७) ३८१ (४६१) ३६६ (६०) इस सेनापति से सम्बन्धित हैं। कोष्ठक में प्रथम भाग के लेखों की संख्या दी गई है। इस सेना-

पति ने होय्सल विष्णुवर्धन, नरसिंह और बल्लाल द्वितीय के राज्य में होय्सल वंश की सेवा की थी।

१५. शान्तियण्ण—ले० नं० ३४७ में उक्त नरेश के एक और जैन सेनापति शान्तियण्ण का नाम मिलता है। वह पारिसण्ण और बम्मलदेवी का पुत्र था। पारिसण्ण मरियाने दण्डनायक का दामाद था। लेख में उसे महा-प्रधान, पट्टिस भण्डारि (भालों का अध्यक्ष) कहा गया है। उसने युद्ध में शत्रुओं को परास्त कर अन्त में अपने प्राण दे दिये। उस पर नरसिंह ने उसके पुत्र शान्तियण्ण को करुगुण्ड का स्वामी तथा सेना का दण्डनायक बना दिया। उक्त स्थान में शान्तियण्ण ने अपने पिता की स्मृति में एक बसदि बनवायी और उसकी सुरक्षा के लिए दान दिया। उसके गुरु मल्लिषेण पण्डित थे।

१६. ईश्वर चमूपः—ले० नं० ३५२में उक्त नरेश के राज्य में एक जैन सेना-पति का और उल्लेख है। वह है महाप्रधान, सर्वाधिकारी, दण्डनायक एरेयङ्ग का पादोपजीवी ईश्वर चमूप। ये दोनों श्वसुर दामाद थे। ईश्वर चमूपति ने जिना-लयों की मरम्मत करवायी और उसकी पत्नी माचियक्क ने मध्दबोलल नामक पवित्र तीर्थ में एक जिन मन्दिर एवं एक तालाब बनवाया। उसके गुरु का नाम गण्डविमुक्त मुनिप था।

नरसिंह के उत्तराधिकारी बल्लाल द्वितीय के समय भी होय्सल राज्य का भाग्य निर्माण करने वाले कुछ जैन सेनापति थे।

१७. रेचरसः—ले० नं० ४६५में उल्लेख हैकि बल्लालदेवकी रत्नत्रय और धर्म में दृढ़ता सुनकर कलचूर्य कुल के सचिवोत्तम रेचरस ने बल्लालदेव के चरणों में आश्रय पाकर अरसियकेरे में सहस्रकूट जिन की प्रतिमा स्थापित की और मन्दिर की व्यवस्था के लिए राजा बल्लाल से हन्दरहालु ग्राम प्राप्त कर अपने वंश के गुरु सागरनन्दि सिद्धान्त देव को सौंप दिया। उक्त जिनालय का नाम एल्कोटि जिना-लय था। इस रेचरस के सम्बन्ध में ले० नं० ४०८ में लिखा है कि वह २६ वर्ष पहले सन् ११८२ में कलचूरिवंश के नरेश बिज्जल का दण्डाधिनाथ था। लेख में इसकी अनेक विध प्रशंसा एवं वंश का परिचय दिया गया है।

उत लेख में लिखा है कि रेचण को कलचुरि नरेशों से बहुत से देश मिले थे उनमें नागर खण्ड था। वहाँ मागुडि नामक स्थान में, शान्तिनाथ जिनालय के लिए उसने दानादि दिये थे। श्रवणबेल्गोल से प्राप्त एक लेख नं० ४२६ (प्रथम भाग ४७१) से ज्ञात होता है कि उसने सन् १२०० के लगभग शान्तिनाथ भगवान् की प्रतिष्ठा करायी और वसदि को कोल्हापुर के सागरनन्दि को सौंप दिया। लेख में उसे 'वसुधैकबान्धव' कहा गया है।

१८. बूचिराजः—होय्सल बल्लाल द्वितीय का दूसरा सेनापति बूचिराज था। ले० नं० ३७६ में उसे मन्त्रीश्वर एवं सांधिविग्रहिक कहा गया है। उसमें चतुर्विध पाण्डित्य था तथा वह संस्कृत और कन्नड दोनों भाषाओं में कविता कर सकता था। इसके अतिरिक्त उसकी धर्मिष्ठता की अनेक विध प्रशंसा की गई है। उसने सन् ११७३ में राजा बल्लाल के पट्टबन्धोत्सव के समय सीगेनाड के मारिकलि स्थान में त्रिकूट जिनालय बनवाया और मन्दिर की पूजा, जीर्णोद्धार एवं आहार दान आदि के लिए अपने गुरु वासुपूज्य सिद्धान्त देव को मारिकलि ग्राम भेंट में दिया।

१९. चन्द्रमौलिः—उक्त बल्लाल नरेश के राज्य में जैनधर्म के प्रति उदारता दिखलाने वाला एक शैव मंत्री चंद्रमौलि था। ले० नं० ४०६ (प्रथम भाग ४९४) में वह भारत शास्त्र, आगम, तर्कव्याकरण, उपनिषद्, नाटक, काव्य आदि में विद्वन्मान्य था तथा बल्लालनृप के दाहिने हाथ का दण्डस्वरूप था। यद्यपि वह स्वयं कट्टर शैव था पर उसकी पत्नी आचलदेवी परम जैन धर्मावलम्बिनी थी। उस देवी ने श्रवणबेल्गोल तीर्थपर बड़ी भक्ति के साथ पार्श्वनाथ का मन्दिर निर्माण कराया और मंत्री चंद्रमौलि ने राजा बल्लाल से स्वयं प्रार्थना कर उक्त जिनालय की पूजादि के लिए बम्मेयनहल्लि नामक गाँव दान में दिलाया।

२०. नागदेवः—बल्लाल द्वितीय के मंत्रियों में एक जैन मंत्री नागदेव भी था। वह बोम्मदेव सचिव का पुत्र था। ले० नं० ४२८ (प्रथम भाग १३०) में लिखा है कि वह जैन मन्दिरों का प्रतिपालक था तथा राजा ने उसे पट्टन-

स्वामी वनाया था। उसके गुरु का नाम नयकीर्ति सिद्धान्तदेव था। उसने सन् ११९५ में श्रवणबेल्गोल तीर्थ पर पार्श्वदेव के आगे नृत्यरंगशाला एवं शिला-कुट्टिम बनाकर अपने दिवंगत गुरु की स्मृति में एक निषिधि बनवायी थी। जिनधर्म के लिए नागदेव की स्थायी कृति थी श्रवणबेल्गोल में 'श्रीनिलय' नगर-जिनालय का निर्माण तथा उसके लिए भूमिदान। उसके प्रतिपालन के लिए उसने खण्डलि और मूलभद्र के वंशज श्रवणबेल्गोलवासी वणिजों को नियुक्त किया था।

२१. महादेव दण्डनाथ:—जैन मंत्रियों में उस मंत्री का नाम भी उल्लेखनीय है। वह वल्लाल द्वितीय के महामण्डलेश्वर एक्कलरस का महाप्रधान था। उसके गुरु का नाम सकलचन्द्र भट्टारक था। लेख नं० ४३१ में लिखा है कि उसने सन् ११९८ में उद्धरे नामक स्थान में एक अनुपम जिनालय बनवाया और उसका नाम एरग जिनालय रखा और उक्त जिनालय की पूजा, जीर्णोद्धार के हेतु स्वयं बहुत प्रकार के दान दिये तथा एक्कलरस आदि से भी विविधदान दिलाये।

२२. कम्मट माचय्य:—सन् १२०० के लगभग के कुम्बेयनहल्लि ग्राम से प्राप्त एक ले० नं० ४३७ (प्रथम भाग ४९५) में एक और जैन मंत्री का उल्लेख है। वह है महाप्रधान, सर्वाधिकारी, तन्त्राधिष्ठायक, कम्मट मान्चय्य। उसने उक्त सन् में अपने श्वसुर के साथ कुम्बेयनहल्लि नामक ग्राम में परिवादि-मल्ल जिनालय के लिए दान दिया था। उक्त लेख में यह भी लिखा है कि महा-प्रधान, सर्वाधिकारी हरियण्ण ने कुम्बेयनहल्लि के देव की प्रतिष्ठा की थी।

२३. अमृत:—ले० नं० ४५२ से विदित होता है कि वल्लाल द्वितीय के अमृत नाम का एक और दण्डनायक था जो कि महाप्रधान, सर्वाधिकारी, महाप-सायस (आभूषणाध्यक्ष) एवं भेरुदन मोत्तदिष्टायक (उपाधिधारियों का अध्यक्ष) था। लेख में उसे कविकुलज और चतुर्थवर्ण (शूद्र) का कहा गया है। उसे धार्मिक, शुभमति, पुण्याधिक, मंत्रिचूडामणि, सौम्यरम्याकृति कहा गया है। उसने लोक्कुलगेरे में सन् १२०३ में एक्कोटि नामक जिनालय बनवाया और समी-

नायकों, नागरिकों और किसानों के समक्ष शान्तिनाथ भगवान् की अष्टविधपूजन और मुनियों को आहारदान देने के लिए भूमि प्रदान की। उसने अपने जन्म स्थान लोक्कुण्डी में अपने भाइयों के साथ एक मंदिर, एक बड़ा तालाब एक सत्र स्थापित किया, एक अग्रहार और एक प्याऊ बैठायी। वह अजैनों के प्रति भी बड़ा उदार था। उसने अपने जन्मस्थान में अमृतेश्वर का एक मन्दिर बनवाया।

२४. ईचणः—सन् १२०५ के एक ले० नं० ४५१ में हम ईचण का नाम पाते हैं। इसने होय्सल बल्लाल द्वितीय के राज्यकाल में बेलगवत्तिनाड में एक ऐसा जिनालय बनवाया जैसा कि उस प्रदेश में न था और इस तरह उस स्थान को भूषण बना दिया।

२५. माधवः—ले० नं० ५४० में माधव दण्डनायक का उल्लेख मिलता है। इसे वीरनहदेवण्ण के कुल का बतलाया गया है। उसके गुरु माधवचन्द्र भट्टारक थे। उसने समस्त कौटुम्बिक बन्धनों को छोड़कर, जिनमन्दिर बँधवाकर समाधिमरण पूर्वक स्वर्ग को प्रयाण किया। उक्त लेख में दूसरे दण्डनायक माचि-गौड का भी उल्लेख है। उसके गुरु भी माधवचन्द्र भट्टारक थे। उसने भी समाधिविधि से स्वर्ग प्राप्त किया।

२६. कूचिराजः—ले० नं० ५११ देवगिरि के यादव नरेश महादेव के एक जैन मंत्री कूचिराज का उल्लेख है। वह मल्लसेन मुनि के शिष्य पद्मसेन का शिष्य था। लेख में उक्त मंत्री के वंश का परिचय दिया गया है। उसने अपनी पत्नी लक्ष्मीदेवी के स्वर्गस्थ होने पर उसके नाम पर एक जिनालय बनाकर सेन-गण के पोगरि गच्छ को दे दिया तथा अपने नरेश से उक्त जिनालय के प्रबन्ध आदि के लिए एक ग्राम दिलाया और स्थानीय गौड लोगों से मिलकर स्वयं दान दिया और दिलाया।

२७. इरुगप्पः—विजयनगर साम्राज्यके उपासकों को भी जैनमंत्रियों और सेनापतिओं ने अपनी सेवा से उपकृत किया था। उनमें इरुगप्पका नाम विशेष उल्लेखनीय है। इसके सम्बन्ध में प्रथम भाग की भूमिका में पर्याप्त लिखा गया है। इस संग्रह

में इससे सम्बन्धित तीन ले० नं० ५८१, ५८५ तथा ५८७ और द्रष्टव्य है। इन लेखों से विदित होता है कि वह महामंत्री और सेनापति दोनों था। ले० नं० ५८५ उसके पिता चैच (वैचप्प) दण्डेश और उसका परिचय है तथा उसके गुरु सिंहनन्दि की पट्टावली दी गई है। उक्त लेख में उसके द्वारा कुन्थुनाथ जिनालय की स्थापना का उल्लेख है। अन्यत्र उन लेखों से मालुम होता है कि इस मंत्रिवर ने नानार्थनाममाला की रचना की थी। काञ्जीवरम् के समीप तिरुप्प रुत्तिक्कुण्रु से प्राप्त दो लेखों (५८१ और ५८७) में उसके दान एवं मण्डप निर्माण का उल्लेख है।

२८. गोप—देवराय प्रथम का एक जैन सेनापति गोप था (६०६)। ले० नं० ६१० में इसके वंश का परिचय तथा उसे नागरखण्ड का शासक लिखा है। उसके दो जैन गुरु थे पण्डिताचार्य और श्रुत मुनिप, इनमें से एक उसको अनीति के मार्ग से हटाता था तो दूसरा अच्छे मार्ग पर लगाता था। लेख में लिखा है कि गोप ने समाधिविधि से शरीर त्याग किया और मुक्ति प्राप्त की।

इस तरह और भी कितने जैन धर्म भक्त सेनापतियों और मंत्रियों के चरित्र इन लेखों में छिपे पड़े हैं।

६. जनवर्ग एवं जैनधर्म

दक्षिण में जैन धर्म का जब से आगमन हुआ था तब से जैनाचार्यों ने जितना अपने धर्म के प्रसार के लिए प्रयत्न किया उतना ही देशहित के लिए भी। इस कार्य में उन्होंने बुद्धिमत्ता पूर्वक ऐसी नीति अपनायी कि जो जनता की प्रत्येक श्रेणी के लिए उपादेय एवं कल्याण कर थी। उन्होंने कई राज्यवंशों के उदय होने में सहायक बनकर राजाओं का उदार राजकीय संरक्षण प्राप्त किया था। सामन्तों और सेनापतियों को अपने धर्म से प्रभावित कर प्रान्तीय केन्द्रों में जैन धर्म की नींव दृढ़ कर ली थी। इसी तरह जन वर्ग को भी जैनधर्म की परिधि के भीतर लाकर जैनधर्म की आधार शिला मजबूत कर दी थी। मध्यमवर्गीय

वाणिज्य संघ-वीर वणिज, मुम्मुरिदण्डनायक, एवं उभय देशीय—तथा प्रकीर्णक वैश्य समाज की प्रचुर धन राशि ने अनेक विशाल जैन मन्दिरों, मठों एवं मूर्तियों के निर्माण में सहायता दी, जहां से जैनधर्म की जयगाथायें चारों ओर प्रध्वनित हो सकीं। जैन मुनियों ने सर्व साधारण के हितार्थ शास्त्र, आहार, औषधि और अभय दानों की मांग की जिससे जनता पर बड़ा प्रभाव पड़ा।

उत्तर भारत में यद्यपि जैनों को राज्यश्रय बहुत कम मिला है फिर भी जैनधर्म को जागृत करने में जैनाचार्य प्रारम्भ से सचेष्ट थे यह वात मथुरा से प्राप्त अनेकों लेखों से तथा उत्तर एवं पश्चिम भारत से प्राप्त लेखों से भलीभांति विदित होती है। पर दक्षिण भारत में ८वीं ६वीं शताब्दी से जैन धर्म का प्रचार कार्य द्रुतगति से चला था ऐसा प्रस्तुत संग्रह के अनेकों लेखों से ज्ञात होता है।

६ वीं शताब्दी के बाद ऐसे अनेक लेख हैं जिनमें जनवर्ग द्वारा जैनधर्म की सहायता के उदाहरण भरे पड़े हैं। पर इसके पहले भी जनवर्ग का सहयोग था, जिसके २–४ उदाहरण लेखों से प्राप्त होते हैं। ले० नं० १०७ से विदित होता है कि दोण गामुण्ड और एल गामुण्ड ने एक जिनालय निर्मापित किया था और पूजा के लिये कुछ खेत आदि लगा दिये थे। ले० नं० ११५ और १२० में भी ऐसे उदाहरण मिलते हैं।

ई० सन् ६०३ के एक ले० नं० १३७ में वैश्यजाति के चन्द्राय के पुत्र चीकार्य का उल्लेख है जिसने मन्दिर बनवाकर भूमिदान दिया था। ले०नं० १६३ से विदित होता है कि एक निरवद्य नामक गृहस्थ ने मेलस चट्टान पर निरवद्य जिनालय खड़ा किया और उसके संरक्षण के लिए, राजा की कृपा से प्राप्त एक गांव लगा दिया तथा एडेमले हजार प्रान्त के कुछ किसानों ने अपने प्रत्येक खेत की फसल से कुछ धान्य दान रूप में उक्त जिनालय को हमेशा के लिए दे दिया।

दक्षिण भारत में जैन धर्म की उच्च स्थिति का वास्तविक रूप हमें वणिक् वर्ग की उक्त धर्म के प्रति उत्कंठा, आस्था एवं भक्ति में दिखता है। इस तरह हम देखते हैं कि वैश्यवर्ग के एक मुखिया पट्टनस्वामी नोक्कय्यसेट्टि ने सन् १०६२

(१६७) में हुम्मन्त्र नामक स्थान में एक जिनालय बनवाया और १०० गद्याण में राजा से एक गांव खरीद उक्त मन्दिर की सुरक्षा के लिये लगा दिया। उक्त ले० में तथा लेख नं० २१२ में नोक्कय्य द्वारा जैन धर्म की सेवाओं का अच्छी तरह वर्णन है।

वणिक् वर्ग का महत्त्व इस बात से भी मालुम होता है कि वे जैन मंदिरों के संरक्षक भी थे। श्रवणबेल्गोल का नगर जिनालय सन् ११६५ में मंत्री नाग देव ने बनवाकर खण्डलि और मूलभद्र के वंशज वीर वणिजों (एक व्यापारी संघ) के प्रतिपालन में दे दिया था (४२८)। यह जिनालय एक सौ वर्षों से अधिक इन्हीं व्यापारियों के प्रतिपालन में बराबर रहा यह बात हमें ले० नं० ५२७, ५३३ से मालुम होती है।

ये सेठ लोग केवल व्यापारी ही न थे, उनमें से बहुत से अच्छे विद्वान होते थे। कुछ ऐसे विद्वान् सेठों का उल्लेख ले० नं० २१८ में है। उक्त लेख का माचिसेट्टि तर्क व्याकरण में प्रवीण व्याख्या करने में चतुर, धर्म ग्रन्थों के मर्म को जानने वाला तथा धर्म कार्यों में व्यय करने वाला था। इसी तरह उसक छोटा भाई कालिसेट्टि था।

कुछ शिलालेखों में ऐसे उदाहरण मिलते हैं जहाँ कि जैन लोग ब्राह्मणों को भी दान देते थे। ले० नं० २२१ में ऐसे ही एक विशेय बम्मि सेट्टि हैं जिन्होंने इसूर नामक स्थान में एक जिनालय बनवाकर उसे दान दिया औ अग्रहार के हजारों ब्राह्मणों के लिए एक सत्र खोल दिया।

दान के ऐसे कार्यों में राज्यकी ओर से भी प्रोत्साहन मिलता था। ले० नं० (सन् १०८५) में लिखा है कि एक दानी सेठ नोकय्य को त्रिभुवन मह गंग पेर्म्माडि देव ने तट्टकेरे स्थान में आकर उस नगर का सम्पूर्ण शासन उरे सौंप दिया। वहाँ उक्त सेठ ने जैन मन्दिर, तालाब और सत्र बनवाये। उस अन्य स्थानों में भी दो मन्दिर बनवाये थे। राजा ने उक्त सेठ के इन कार्यों रे प्रसन्न होकर उसे राज्य सम्मान से संम्मानित किया और ८ गाँवों का मुखिर —ा दिया। इससे उक्त सेठ का उत्साह और बढ़ा और उसने ४ मन्दिर औ

बनवाये। राजा ने इस कार्य के लिए अपनी आय का कुछ हिस्सा उसे दे दिया।

दान के ऐसे कार्यों में राजघराने के व्यापारी और दूसरे पदाधिकारी भी उत्साहपूर्वक भाग लेते थे। ले० नं० २५१ से ज्ञात होता है कि सन् ११११ में शिनोगा के एक जिनालय के लिए बम्म गावुण्ड तथा नाकु प्रभु ने ६ मत्तल १ तेल की चक्की और कुछ दान दिया था। इसी तरह होय्सल नरेश के राज सेठ पोय्सलसेट्टि और नेमिसेट्टि ने भी अनेक दान दिये थे (२६८)। ले० नं० ३२४ में एक राज अधिकारी द्वारा दान का उल्लेख है।

मध्यकालीन दक्षिण भारत में जैन गौंडों की अपेक्षा वीर वणिजों की धार्मिकता बड़े महत्त्व की थी। ये लोग अपने संगठन के कारण राज के विश्वासपात्र होते थे और जनता के लिए दोनों के संरक्षक भी यह हमें ले० नं० ४२८ (प्र० भू० १३०) से विदित होता है। अपने व्यापार प्रसंग में वे जहां जाते वहां दान देते थे। ले० नं० ४०८ से विदित होता है कि चिक्कमागडि के एक मन्दिर के लिए सन् ११८२ में अनेक देशों में व्यापार करने वाले मल्लु और सुन्दरिदण्ड व्यापारियों ने अपने माल पर की चुंगी दान में दे दी थी।

इस युग में जैन धर्म का उपासक केवल वणिक् वर्ग ही न था बल्कि कृषक वर्ग भी भक्त श्रावक था। ले० नं० ४२६ में लिखा है कि शान्तिनाथ बसदि के दान की रक्षा कोल्लुकेरे के किसानों और गाँव के ६० कुटुम्बों ने की थी। इसी तरह ले०नं० ४३८ में उल्लेख है कि बसदि के दानादि की प्रबंधक १८ जातियाँ थीं। ले० नं० ३३८, ३२४ और ५२५ में गौड किसानों द्वारा दानादि का उल्लेख है। ले० नं० ४३८ में गाँव के किसानों द्वारा जिन पूजा के लिए सुपारी, पान एवं तेल के दान का उल्लेख है।

जन साधारण में जैन धर्म के प्रति प्रेम एवं भक्ति के परिचायक अनेक लेख प्रस्तुत संग्रह में हैं। ले० नं० २०१ (सन् १०६३) से ज्ञात होता है कि छेनी और कन्नी को पकड़ने वालों में प्रधान अर्थात् पाषाण शिल्पियों में प्रधान विद्यावान् पोय्सलाचारि ने एक बसदि बनवायी थी। ले० नं० ३०१ में उल्लेख है कि

तेलीदास गौण्ड ने भगवान के लिए पुरोहित शान्तिदेव को भूमिदान दिया।
इसी तरह ले० नं० ७२४ में एक जैन श्रावक तेली का उल्लेख है। ले०नं० ३३४
में गोलोज नामक एक सुनार को जैन श्रावक बतलाया गया है। ले० नं० १४४
में चामेकाम्बा नामक गणिका को श्राविका के रूप में लिखा है।

भूमियों को खरीदना तथा उन्हें सब प्रकार के दान से मुक्त कराके जैन संस्थाओं को दान रूप में दे देना, उस युग की विशेषता थी। श्रवणबेल्गोल से प्राप्त ले० नं० ५१२ (प्रथम भाग ६६) में उल्लेख है कि किसी शम्भुदेव ने चन्द्रप्रभ मुनि से कर मुक्त जमीन खरीदकर गोम्मटदेव और चौवीस तीर्थंकरों की दुग्ध पूजा के लिए भेंट में दे दी। इस तरह ले० नं० ५२८ (प्र० भाग १२६) से ज्ञात होता है कि बेल्गोल के समस्त जौहरियों ने नगर जिनालय के आदिदेव की पूजा के लिए सब करों से मुक्त कराकर जमीनें दान में दीं।

दान पूजन के अतिरिक्त जनता के जैन धर्म पर श्रद्धा के और दूसरे उदाहरण मिलते हैं। पुरुष वर्ग तथा स्त्री वर्ग दोनों अपने धार्मिक जीवन को उचित रीति से व्यतीत कर जीवन के अन्तिम क्षणों को जैनधर्म विहित समाधि विधि से समाप्त करते थे। इस विषय को प्रकट करने वाले अनेकों लेख इस संग्रह में हैं उनकी स्मृति में स्मारकपाषाण पर वे लेख उत्कीर्ण पाये गये हैं। ऐसे निमित्तों पर भूमि आदि के दानों का उल्लेख भी इन लेखों में रहता है।

९७. जैनधर्म प्रतिपालक महिलाएँ

जैन धर्म पर असीम एवं दृढ़ श्रद्धा और भक्ति रखने वाली दक्षिण भारत की अनेक जैन महिलाओं का इतिहास इन लेखों में सुरक्षित पड़ा है। ये महिलाएँ सामान्य वर्ग के सिवाय बड़े बड़े राजघरानों, सामन्त परिवारों, महामंत्रियों और सेनापतियों की गृहलक्ष्मियाँ थीं।

ये महिलाएँ जिनालय बनवाती थीं और उनके इस पुण्य कार्य में उनको आदि सहायता करते थे। ले० नं० १२१ से ज्ञात होता है कि निरुगुण्ड

परिवार की एक महिला कुन्दाच्चि ने पुण्य वृद्धि के लिए लोक तिलक नाम का एक जिनालय बनवाया था और उसके लिए उसके पति ने दान दिया था। कुन्दाच्चि पल्लव नरेश की नातिन तथा सगर कुल के राजा मरुवर्मा की पुत्री थी।

इन महिलाओं द्वारा अनेक प्रकार के प्रभावनात्मक कार्यों का उल्लेख भी मिलता है। सन् १०७७ में कदम्ब वंश के राजा कीर्तिदेव की पट्टमहिषी मालल देवी ने कुप्पटूर में पार्श्वदेव चैत्यालय का पद्मनन्दि सिद्धान्त देव से सुसंस्कार कराकर तथा यम, नियम, ध्यान, धारणा, शील, गुण सम्पन्न ब्राह्मणों को बुलाकर उनकी पूजाकर उक्त चैत्यालय का नाम ब्रह्म जिनालय रखा। उक्त रानी ने न केवल उन्हीं से दान दिलवाया बल्कि कोटीश्वर मूल स्थान के पुरोहितों से और कुप्पटूर के पड़ोस के १८ मन्दिरों के पुरोहितों से उक्त चैत्यालय के लिए दान दिलवाया तथा रानी ने राजा कीर्ति देव से भी एक गांव दान में दिलवाया (२०६)।

ऐसे प्रभावनात्मक कार्यों को करने में शान्तरकुल से सम्बन्धित चट्टल देवी का नाम विशेष उल्लेखनीय है। वह जैन नृप रक्कसगंग की बेटी तथा पल्लवराज काडुवेट्टि की पत्नी थी। लेखों से मालुम होता है कि उसके जीवन काल में उसके पति पुत्रादि मर चुके थे। उसने अपनी मृत छोटी बहिन के पुत्रों को, जो कि शान्तरकुल के राजकुमार थे, अपना स्नेह भाजन बनाया था। उन शान्तर कुमारों के साथ उसने पोम्बुच्चपुर (हुम्मच) में अनेक जिनालय बनवाये, उनमें से एक पंचकूट बसदि था जिसका दूसरा प्रसिद्ध नाम 'उर्वीतिलक जिनालय' था। यह जिनालय उसने उन दिवंगत आत्माओं की स्मृति में बनवाया था। चट्टल देवी के अनेक गुणों और बहुविध दानों की प्रशंसा ले० नं० २१३, २१४, २१५ और २१६ में की गई है। ले० नं० २४८ में उल्लेख है कि सन् ११०३ में उक्त चट्टल देवी ने, जिसे लेख में 'जिन समय कामधेनु, जिनसमयनिदान-दीपवर्ति' कहा गया है, अपने तथाकथित पुत्रों के साथ पञ्चबसदि के लिए एक

गाँव दान में दिया तथा अपनी बहिन वीरब्बरसि की स्मृति में एक बसदि की नींव का पत्थर जमवाया।

ले० नं० ३२६ में शान्तर वंश से सम्बन्धित पम्पादेवी नामक एक महिला का उल्लेख है। उसने एक ही महीने के भीतर उर्वीतिलक जिनालय के समीप शासन देवता का मन्दिर बनवाकर तैयार कराया था। उसकी पुत्री का नाम बाचल देवी था जो दान देने में बहुत उदार थी। उक्त पम्पा देवी, उसके भाई श्रीवल्लभ एवं बाचल देवी ने पञ्च बसदि के उत्तरीय पट्टसाले का निर्माण कराया था।

गंग वंश की महिलाएँ भी जिन धर्म के लिए उदार दान देने में प्रसिद्ध थीं। उदाहरण के लिए सन् १११२ के लगभग गङ्ग महादेवी ने, जो कि महामण्डलेश्वर भुजबल गंग पेर्म्मडि देव की पट्टरानी थीं, अपने छोटे भाई पट्टिगदेव के लिए गङ्गवाडि का मुकुट धारण किया। वह समस्त रानियों और राजाओं में अधिक प्रतिष्ठित थीं। भुजबल गंग की दूसरी रानी का नाम बाचल देवी था। उसने बन्निकेरे नामक स्थान में एक सुन्दर जिनालय बनवाया, उसके लिए उक्त नरेश ने गङ्ग महादेवी, उनके पुत्रों तथा बाचल देवी ने समस्त मंत्रियों एवं नाड़ प्रभुओं की उपस्थिति में सब करों एवं चुङ्गियों से मुक्त कराकर अनेक प्रकार के दान दिये-(२५३)। ले० नं० २६७ में गङ्गदेवी की प्रशंसा है।

होय्सल वंश की राज महिलाएँ भी जैन धर्म की सेवा में किसी से कम न थीं। इन महिलाओं में शान्तलदेवी का नाम विशेष उल्लेखनीय है। यह होय्सल वंश के प्रतापी नरेश विष्णुवर्धन की रानी थी। श्रवण वेल्गोल से प्राप्त एक ले० नं० २८३ (प्रथम भाग ५६) में और कई दूसरे लेखों में उसके सौन्दर्य, बुद्धि, धार्मिकता एवं भक्ति आदि गुणों की बड़ी प्रशंसा की गई है। उसका पिता कट्टर शैव सम्प्रदायी था पर उसकी माँ कट्टर जैन थी। शान्तलदेवी गीत, वाद्य, नृत्य में प्रवीण तथा अपनी सुन्दरता के लिए विख्यात थी (२५७. प्रथम भाग ६२)। उसके गुरु का नाम प्रभाचन्द्र मुनीन्द्र था। उसने सन् ११२३ में शान्ति जिनेन्द्र प्रतिमा बनवाई और गन्धवारण बसदि का निर्माण कराकर, अभिषेकादि कार्य

के लिए एक तालाव बनवाया और अपने पति विष्णुवर्धन की आज्ञा से प्रभाचन्द्र मुनीन्द्र को एक गांव दान में दिया। उसे लेख में 'सम्यक्त्व चूड़ामणि एवं जिन-समयसमुदितप्राकार' कहा गया है। जैन व्रतों के प्रति दृढ़ श्रद्धालु उस देवी ने सन् ११३१ में शिव गंग नामक स्थान में सल्लेखना विधि से देहत्याग किया। ले० नं० २८६ (प्रथम भाग ५३) में लिखा है कि उसके माता पिता ने शान्तल देवी के पश्चात् शरीर त्यागा था। उसकी माँ के सम्बन्ध में उक्त लेख से ज्ञात होता है कि उसने श्रवणवेल्गोल में आकर कठोर संन्यसन विधि को धारण कर एक मास तक अनशन करके देहत्याग किया था।

शान्तलदेवी का अनुकरण करने वाली उसी घराने में हरियब्बरसि नामक राजकुमारी थी। वह विष्णु वर्धन की पुत्री और कुमार वल्लाल देव (नरसिंह प्रथम) की बहिनों में सबसे बड़ी थी। उसने सन् ११२६ में (२६३) हन्तियूर नामक स्थान में नाना रत्नों से जटित शिखरों से समन्वित एक विशाल जैन मन्दिर बनवाया था, तथा मन्दिरों की मरम्मत, पूजा प्रबन्ध, ऋषि और वृद्ध स्त्रियों को आहार देने के लिए गुत्ति स्थान के चिन्न नामक व्यक्ति एवं बंम्म नामक मठ्ठुग, से खास कीमत देकर जमीन खरीद ली और अपने पिता से सब करों से मुक्त कराकर अपने गुरु गण्डविमुक्त सिद्धान्तदेव को भेंट में दे दी।

राजघरानों की ये महिलायें जैन धर्म की भक्ति में ऐसी ओतप्रोत रहती थीं कि अपने जीवन के अन्तक्षणों को सुधारने के लिए जैन धर्म विहित कठोर संन्यास विधि से देह त्याग करने में भी न हिचकती थीं। ले० नं० १४० की जक्कियब्बे नामक ऐसी ही वीराङ्गना थी। वह राष्ट्रकूट नरेश कृष्ण तृतीय के शासन काल में अपने पति सत्तरस नागार्जुन के स्वर्गवास होने पर नागर खण्ड की शासिका नियुक्त की गई। वह जैन शासन और प्रजाशासन में निपुण थी। एक बार वह अनिवार्य रोग से ग्रस्त हो गई। उसने अपनी पुत्री पर शासन का भार सौंप संन्यास विधि से देह त्याग दिया। ले० नं० १५० में उल्लेख है कि राजा पढियर दोरपय्य की ज्येष्ठ रानी एवं वुतुग (गंग नरेश ?) की बड़ी वहिन

पाम्बव्वे ने, जो अभयनन्दि पण्डितदेव की शिष्या नाणव्वेकन्ति की शिष्या थी, केशलोंच करने के बाद तप के पूरे ३० वर्ष पूर्ण किए और पांच अणुव्रतों (?) को धारण कर दिवंगत हुई। लेख में उसके व्रत एवं तपस्या की प्रशंसा है।

कोङ्गाल्व वंश की जैनधर्म के प्रति भक्ति सुविदित है। उक्त वंश के राजा राजेन्द्र कोङ्गाल्व की मां पोन्चव्वरसि ने सन् १०५० में एक बसदि बनवायी थी, और उसमें अपने गुरु गुणसेन पण्डितदेव की मूर्ति स्थापित की थी तथा सन् १०५८ में उसने उक्त बसदि को भूमिदान दिया था (१८८, १८९)। ले० नं० ५६० में कोङ्गाल्व वंश की एक और महिला सुगुणिदेवी का नाम दिया गया है जिसने अपनी माता के पुण्यार्थ एक प्रतिमा की स्थापना की और भूमिदान दिया।

जैन सेनापतियों की पत्नियां का भी जैनधर्म की सेवा में बड़ा हाथ था। इनमें सबसे उल्लेखनीय नाम है सेनापति गंगराज की पत्नी लक्कले या लक्ष्मीमती का। वह लक्ष्मीमती दण्डनायकिति कहलाती थी। उसे लेख नं० २५८ (प्रथम भाग, ६३, में गंग सेनापति के 'कार्ये नीतिवधू' और 'रणे जयवधू' कहा गया है। उसने सन् १११८ में श्रवणबेल्गोल में एक जिनालय बनवाया था। ले० नं० २६८ (प्रथम भाग ५६) से ज्ञात होता है कि सेनापति गंगराज ने अपने राजा विष्णुवर्धन से एक गांव पारितोषिक रूप में पाकर अपनी माता पोचल देवी एवं अपनी भार्या लक्ष्मी देवी द्वारा निर्मापित जैन मन्दिरों के रक्षार्थ अर्पण किया था। लक्ष्मीमति ने भी आहार, अभय, औषधि और शास्त्र इन चारों दानों को देकर 'सौभाग्यखानि' पद पाया था (२५५, प्रथम भाग, ४७)। ले० नं० २७६ (प्रथम भाग, ४८) में लक्ष्मीमति के रूप, गुण, शील आदि की प्रशंसा की गई है। इस धर्मपरायण महिला ने सन् ११२१ में संन्यास विधि पूर्वक शरीर त्यागा था। सेनापति गङ्गराज ने अपनी साध्वी पत्नी की स्मृति में एक निषद्या बनवा दी थी।

गङ्गराज के बड़े भाई का नाम बम्मदेव चमूप था। इसकी पत्नी जक्कणब्बे थी जो कि दण्डनायकीति कहलाती थी। वह सेनापति बोप्प की माता थी तथा शुभचन्द्रदेव की शिष्या थी। प्रथम भाग के ले० नं० ४४६ और ४८६ से ज्ञात

होता है कि उसने मोक्षतिलक नामक व्रत किया था और पाषाण पर नयणदेव की मूर्ति खुदवायी थी। उसी वर्ष उसने श्रवणबेलगोल में मूर्ति की प्रतिष्ठा करायी एवं वहाँ एक तालाब खुदवाया था। ले० नं० २८५ (प्रथम भाग, ४३) में इस महिला की बड़ी प्रशंसा है।

ले० नं० २८८ से एक और जैनधर्म भक्त महिला का नाम ज्ञात होता है। वह है कालियक्कब्बे, जो कि चालुक्य नरेश त्रिभुवनमल्ल के सामन्त पाण्ड्य भूपाल के सेनापति सूर्य की पत्नी थी। इसने सन् ११२८ में सान्तलूरु में एक सुन्दर जिनालय बनवाया और पूजा के हेतु तथा पुजारी की आजीविकार्थ मन्दिर के पुरोहित को कुछ भूमि दान में दे दी।

ले० नं० ३१३ में हमें दानशील तीन महिलाओं के नाम मिलते हैं। गंग नरेश मारसिंह की छोटी बहिन सुग्गियब्बरसि ने उद्धरे नामक स्थान में अनेक जैन मुनियों को दान दिलाया और पट्टबसदि जिनालय को बनाया था, तथा बसदि के लिए उवणेविलि नामक ग्राम दान में दिया था। उसी लेख में कलियव्विरसि नामक एक महिला का उल्लेख है। उस महिला ने जहाँ जिन मन्दिर नहीं थे वहाँ जिन मन्दिर बनवाये और जहाँ जैन यतियों को आमदनी के क्षेत्र नहीं थे वहाँ उसने दान दिये। तीसरी महिला शान्तियक्क ने, जो कि बोप्प दण्डेश की भतीजी एवं केतिसेट्टि की पत्नी थी, उद्धरे में एक बसदि बनवायी।

ले० नं० ३३६ में जैन धर्म परायणा दो बहिनों का नाम आता है। वे हैं जक्कव्वे और पद्मियक्क। जक्कव्वे के विषय में लिखा है कि वह होय्सल नरेश नरसिंह के पुराने सेनापति चाविमय्य की पत्नी थी। उसने हेरगू में एक जिनालय बनवाकर पार्श्वनाथ की प्रतिमा प्रतिष्ठित करायी तथा पूजनादि प्रबन्ध के लिए नरसिंह से भूमि का दान भी ले लिया था। इसी तरह ले०नं० ३५२ में ईश्वर चमूप की पत्नी माचियक्क द्वारा जिन मन्दिर निर्माण एवं भूमिदान का उल्लेख है। ले० नं० मालियक्क को अन्तनून गुणरत्नमण्डन एवं चातुर्वर्णसमुदयैकशरण कहा गया है।

जैन धर्म पर अचल श्रद्धा रखने वाली एक विशिष्ट महिला आचल देवी का उल्लेख करना यहाँ आवश्यक है। वह शैव धर्म को मानने वाले सेनापति चन्द्र-मौलि की पत्नी थी। वह अपने चार प्रकार के दान के लिए विख्यात थी। उसके इस कार्यों में उसके पति ने कभी बाधा नहीं दी बल्कि धार्मिक उदारता के कारण उसने सहायता ही की है। आचल देवी ने श्रवणबेल्गोल में एक जिनालय बनवाया और उसके पति ने अपने नरेश होय्सल बल्लाल से बम्मेयन हल्लि नामक गांव दान में दिलाया (ले० नं० ४०३, प्रथमभाग १२४)। ले० नं० ४०४ (प्रथम भाग १०७) से ज्ञात होता है कि वीर बल्लाल ने उक्त महिला की प्रार्थना पर बेक्क नामक ग्राम भी गोम्मटेश्वर की पूजा के हेतु दिया था।

मंत्री एचण की पत्नी सोमल देवी भी जैन महिलाओं में उल्लेखनीय है। ले० नं० ४५१, ४५५ और ३५६ में उसकी प्रशंसा है। उसने बेलवत्त नाडु में एक जैन बसदि का निर्माण कराया और उसके पूजन के हेतु दान भी दिया था।

यह नहीं समझना चाहिए कि राजघराने, सामन्तों एवं सेनापतियों की पत्नियों में ही जिन धर्म के प्रति विशेष अनुराग था. बल्कि वैसा ही अनुराग नागरिकों की पत्नियों में भी देखने को मिलता है। ले० नं० ३५३ में लिखा है कि हेगडि जक्कय्य और उसकी पत्नी जक्कव्वे ने दीडगुरु में एक चैत्यालय बनवाया और पार्श्वनाथ भगवान् की स्थापना करके देवपूजा और ऋषियों के आहार के लिए भूमिदान दिया।

ले० नं० ३८३ में जैनधर्म पर दृढ़ श्रद्धा रखनेवाली हर्य्यले महासती का उल्लेख है। उक्त लेख में लिखा है कि उक्त सती ने मृत्यु के समय अपने पुत्र भूवय नायक को बुलाकर कहा कि स्वप्न में भी मेरा ख्याल न करना, केवल धर्म का विचार करना। यदि मुझे और तुम्हें पुण्योपार्जन करना है तो जिन मन्दिर बनवाओ ...आदि। इसके बाद जिनेन्द्र के चरणों में पंच नमस्कार मंत्र को जपते हुए उसने समाधि से देह त्याग दिया। ले० नं० ३८४ से मालुम होता है कि

इसी तरह चन्द्रायण देव की गृहस्थ शिष्या हरिहर देवी भी समाधिमरण से दिवंगत हुई थी। ११वीं शताब्दी के मध्य के नल्लूर से प्राप्त एक लेख (१८३) में नक्कियव्वे नामक श्राविका भी संन्यसन विधि से स्वर्गगत हुई थी।

१२वीं शताब्दी के उत्तरार्ध और १३वीं के पूर्वार्ध के ऐसे अनेकों लेख इस संग्रह में हैं जिनमें समाधिभावना से देहोत्सर्ग करनेवाली अनेकों महिलाओं का उल्लेख है। ले० नं० ४२३ में शान्तियक्क या शान्तले, ले० नं० ४३६ में मालव्वे तथा ले० नं० ४२७ में जक्कव्वे का नाम, यहाँ उदाहरण के रूप में समझना चाहिये।

८. धार्मिक उदारता एवं सहिष्णुता

इन लेखों में सहिष्णुता के अनेक उदाहरण मिलते हैं। जैनाचार्यों और जैन नेताओं, नरेशों, सामन्तों और सेठों में भारतीय संस्कृति के अनुरूप यह विशेष गुण था और इस भावना का उन्होंने निष्पक्षभाव से प्रदर्शन भी किया।

इन लेखों से जैनाचार्यों की विद्वत्ता एवं इतिहासप्रियता के साथ साथ उनकी विस्तीर्ण हृदयता का परिचय मिलता है। उन्होंने शिलालेखों की रचना हो अपने स्थानों और धर्म और सम्प्रदाय के लेखों के उपयोग के लिए नहीं की प्रत्युत अन्य धर्म और सम्प्रदाय के उपयोग के लिए भी की। उदाहरण स्वरूप दिगम्बराचार्य रामकीर्ति ने चित्तौड़गढ़ से प्राप्त प्रशस्ति (३३२) वहाँ के तोकलजी के मन्दिर के लिए लिखी थी। बृहद्गच्छ के जयमंगल सूरि ने सुन्ध पहाड़ी से प्राप्त एक लेख (५०७) लिखा जो कि वहां चामुण्डा देवी के मन्दिर से प्राप्त हुआ है। इसी तरह यशोदेव दिगम्बर ने ग्वालियर के कच्छवाहों की प्रशस्ति तथा रत्नप्रभसूरि ने गुहिलोत वंश के घाघसा एवं चिर्वा से प्राप्त लेख लिखे। पीछे के ये लेख इस संग्रह में नहीं है। यहाँ यह न समझना चाहिये कि वे लेख उन स्थानों में जैनों से छीन कर ले जाये गये हैं, प्रत्युत इसके विपरीत, वे लेख विशेषतः उन स्थानों के लिए ही जैनाचार्यों ने लिखे थे, क्योंकि उन लेखों के अन्त में जैनाचार्यों के नाम, गुरु परम्परा, गण, गच्छ के सिवाय हमें ऐसा कुछ नहीं मिलता जो जैनों से सम्बन्धित हो। यहां

तक कि मङ्गलाचरण के पद्य भी अजैन देवी देवताओं के मंगलाचरण से प्रारम्भ होते हैं। हाँ, कुछेक में ॐ सर्वज्ञाय नमः, पद्मनाथाय नमः आदि से उनका प्रारम्भ हुआ है। ये लेख निश्चय रूप से जैनाचार्यों की विशाल हृदयता को सूचित करते हैं।

जैनाचार्यों की इस नीति का अनुसरण जैन नेताओं ने भी किया। ले० नं० १८१ (सन् १०४८) से विदित होता है कि एक जैन महामण्डलेश्वर चामुण्ड-राय ने वनवसेनाड़ में जिननिवास, विष्णुनिवास, ईश्वरनिवास, और जैन मुनियों के लिए निवास बनवाये थे। इसके समान ही और दूसरे सामन्त थे जो जैन और ब्राह्मणों में भेद नहीं मानते थे। ले० नं० २४६ से विदित होता है कि नोलम्बवाड़ी के शासक बम्मरस ने सन् ११०६ में एक जैन मन्दिर तथा सर्पेश्वर देव के लिए चुंगी से प्राप्त आय को तथा कई प्रकार के और दानों को दिया था। सामन्तों की ऐसी रुचि को सूचित करने वाले और भी लेख हैं। ले० नं० ३५६ से मालुम होता है कि सामन्त शैव, महेश्वर, बौद्ध, वैष्णव एवं अर्हन् इन चार समयों का प्रतिपालक था।

ब्राह्मण और जैनों के बीच असाधारण हार्दिक सम्बन्ध था। ले० नं० ४४८ से ज्ञात होता है कि सन १२०४ में नागर खण्ड के पाँच अग्रहारों के ब्राह्मणों ने स्थानीय अधिकारियों, सेठों, नागरिकों और किसानों के साथ मिलकर बन्दिलिके के शान्तिनाथ की पूजा के लिए भूमिदान किया।

धार्मिक उदारता के विषय में अदलकुल के सामन्तों का नाम विशेष उल्लेख-नीय है। इस वंश के सामन्त विष्णुवर्धन ने सन् ११४० में अपने ही क्षेत्र में एक शिवमन्दिर तथा अदल जिनालय बनवाया था (३१५)। इसी वंश के एक ले० नं ३३३ का मंगलाचरण सर्वधर्म समन्वय की भावना से ओतप्रोत है (शिवाय धात्रे सुगताय विष्णवे जिनाय तस्मै सकलात्मने नमः)। इस लेख में उदारचेता सामन्त बाचि की विस्तार पूर्वक प्रशंसा की गई है। उक्त सामन्त ने कैदाल नामक स्थान में न केवल जैन मन्दिर ही बनवाया था बल्कि गंगेश्वर, नारायण, चलवरिवरेश्वर तथा रामेश्वर के मन्दिर भी बनवाये थे। उसने अपनी

पत्नी भीमले के नाम पर भीम जिनालय तथा भीम समुद्र नामक विशाल तालाब बनवाकर पार्श्वदेव के नाम पर कर दिया था। उक्त लेख में वाचिराज को चतुः समय-समयोद्धार-धौरेय कहा गया है।

इसी अन्य जैन लेखों से मालुम होता है कि १३ वीं शताब्दी के मध्य तक धार्मिक उदारता की भावना का अच्छा प्रचार था पर तेरहवीं के अन्तिम पाद के बाद १०० वर्षों तक दक्षिण भारत के ऊपर मुस्लिम आक्रमणों के कारण उनसे रक्षा के महत्त्वपूर्ण प्रश्न के आगे धार्मिकता का प्रश्न फीका पड़ गया।

किसी तरह मुस्लिम आतङ्कों का जोर कम करने के लिए विजय नगर साम्राज्य की स्थापना हुई। इस वंश के राजाओं में धार्मिक निष्पक्षता का एक बड़ा महत्त्वपूर्ण गुण था। सन् १३६३ के एक लेख (५६१) से विदित होता है कि बुक्कराय प्रथम के शासन काल में जैन मन्दिर की सीमाओं के विषय में जब हेद्दर नाड के लोगों और मन्दिर के आचार्यों में झगड़ा उठ खड़ा हुआ तो राज्य की ओर से उस मामले की जाँच पड़ताल हुई। राज्य के प्रधान मंत्री नागण्ण ने वृद्धजनों की एक सभा में फैसलाकर मन्दिर की ठीक सीमा बाँधकर शासन पत्र भी लिख दिया।

इसके पाँच वर्ष बाद सन् १३६८ में बुक्कराय के सामने जैनों और भक्तों (श्रीवैष्णवों) के बीच धार्मिक विवाद फिर खड़ा हुआ। ले० नं० ५६५ (प्रथम भाग, १३६) और ले० नं० ५६६ में इन घटनाओं का चित्रण है। इन लेखों में लिखा है कि जैनों ने अपने ऊपर वैष्णवों द्वारा हुए अन्याय की शिकायत लिखित रूप में बुक्कराय से की तब बुक्कराय ने स्वयं इस बात की जाँच की और जैनों के हाथ को वैष्णवों और उनके आचार्य के हाथ में रखकर कहा कि जैन दर्शन एवं वैष्णव दर्शन में कोई भेद नहीं है। जैन धर्म वाले भी पंच महावाद्य बजा सकते हैं। जैन धर्म की हानिवृद्धि को वैष्णवों को अपनी हानिवृद्धि समझना चाहिये। वैष्णवों को इस विषय के शासन पत्र समस्त बस-दियों में लगाना चाहिये। जब तक सूर्य और चन्द्र हैं तब तक वैष्णव जैन धर्म की रक्षा करेंगे। जो इस नियम को तोड़ेगा वह राजा, संघ एवं समुदाय का द्रोही

होगा। ले० नं० ५६६ के अन्त में लिखा है कि जैनों और वैष्णवों ने मिलकर वसुवि सेट्टिको संघ नायक की उपाधि दी।

उपर्युक्त तीन लेखों से ज्ञात होता है कि विजयनगर नवोदित हिन्दू समाज के अधिनायकों में देश की सुरक्षा और शान्ति के साथ धार्मिक निष्पक्षता का बड़ा ध्यान था। इस बात के प्रमाण अन्य लेखों में भी मिलते हैं जो कि इस संग्रह में नहीं है।

धर्म समभाव की इस भावना का प्रभाव हम कतिपय शिलालेखों के प्रारंभिक मंगल पद्यों में भी पाते हैं। ले० नं० ६४९ पार्श्वनाथ जिनेश्वर के नमस्कार से प्रारम्भ होता है। तत्पश्चात् जिनशासन की प्रशंसा व पञ्चपरमेष्ठियों के नमस्कार के बाद नमस्तुंगशिरः आदि पदों से शम्भु की स्तुति है। उसके बाद वराह और शम्भु की स्तुति की गई है। ले० नं० ६८८ में भी जिनशासन की स्तुति तथा शम्भु की स्तुति साथ साथ की गई है।

जैन और शैवों के परस्पर मेल मिलाप को प्रदर्शन करने वाले एक महत्वपूर्ण लेख की ओर भी हम ध्यान दें। ले० नं० ७१० के प्रारम्भ में जिनशासन और शम्भु की स्तुति के बाद एक घटना का उल्लेख है। विजयनगर के आरवीडु वंश के नरेश वेंकटाद्रि द्वितीय के राज्य में एक वीर शिव हुच्चप्प देव ने हलेवीड की विजय पार्श्व वसदि के खम्भे पर लिंग मुद्रा लगा दी थी जिसे विजयप्प नामक जैन ने साफ कर दी। तब पद्मण्ण सेट्टि आदि जैनों ने यह समझा कि इससे दूसरे धर्म वालों की भावना को क्षति पहुँचेगी, वीर शैवों के मुखियों से निवेदन किया। इस पर दोनों सम्प्रदाय के लोग इकट्ठे हुए और उचित जांच के बाद उन्होंने आज्ञा निकाली की कि विभूति और बिल्वपत्र प्रदान करने के बाद जैन लोग आचन्द्रसूर्य अपनो सब धर्म विधि कर सकते हैं। इसके बाद इस शासन पत्र पर राज्य की स्वीकृति ली गई और वह वीर शैवों की ओर से जैनों को समर्पण किया गया। लेख के अन्त में वीर शैव सम्प्रदाय ने अपने उदार भाव दिखलाये हैं कि जो व्यक्ति जैन धर्म का विरोध करेगा वह महामहत्तु के चरणों से निकाल दिया जायगा, वह शिव, जंगम तथा काशी, रामेश्वर के लिंग का द्रोही समझा जायगा।

अन्त में महामहत्तु की स्वीकृति के वाद वर्धतां जिनशासनम् लिखा है।

९. जैनधर्म पर संकट

१२ वीं शताब्दी के वाद दक्षिण भारत में जैन धर्म के पतन के एवं विशृंखलित होने के चार प्रधान कारण थे।

प्रथम तो वह राज्याश्रय से वंचित हो गया था, गंग, राष्ट्रकूट, होय्सल जैसे साम्राज्य नष्ट हो चुके थे।

द्वितीय, पश्चात्कालीन जैन नेता गण ब्राह्मण धर्म के नवोदित रूप वैष्णव और वीर शैव सम्प्रदाय से जैन धर्म की रक्षा करने में उदासीन हो रहे थे। जैनाचार्यों में ऐसे कोई प्रभावक आचार्य न थे जो कि धार्मिक क्षेत्र में प्रतिद्वन्द्वियों को परास्त करते।

तृतीय, जैन मन्दिरों को आश्रय देने वाले व्यापारी संघ, वीर वणिज आदि वीर शैव धर्म के प्रभाव में आकर जैन धर्म को छोड़ चुके थे। शेष सामान्य जन वर्ग में ऐसी शक्ति न थी कि वे संगठित हो विधर्मियों का प्रतिरोध कर सकते।

चतुर्थ, वीर शैव धर्म के आचार्यों ने जैन धर्म के केन्द्रों पर हमला करना प्रारम्भ किया और स्थानीय सामन्तों को अपने धर्म में परिवर्तित कर उनसे ही जैनों का तिरस्कार कराया।

उपर्युक्त बातें जैन लेखों पर दृष्टिपात करने से भलीभाँति सिद्ध होती हैं। इस संग्रह के लेख नं० ४३५ और ४३६ से वीर शैव धर्म के एक आचार्य एकान्तद रामय्य के सम्बन्ध में ज्ञात होता है कि उसने कलचूरि नरेश विज्जल को अपने प्रभाव में लाकर जैनों पर भयंकर उत्पात किए थे। उसने अब्लूर में जैन-मूर्ति को फेंककर वेदी को ध्वस्त कर दिया और शिवलिंग की स्थापना की। इस पर जैनों ने कलचूरि नरेश विज्जल से शिकायत की पर वह तो उक्त आचार्य के प्रभाव में था। इसने उनका उपहास किया और एकान्तद रामय्य को प्रोत्साहन देते हुए जय पत्र प्रदान किया (४३५)। उसी लेख से ज्ञात होता है कि चालुक्य वंश का अन्तिम नरेश सोमेश्वर चतुर्थ भी उस मत का अनुयायी हो गया था।

विजय नगर राज्य के ले० नं० ५६१,५६५,५६६ और ७१० से विदित होता है कि दूसरे सम्प्रदाय के लोग जैनों पर ज्यादती करते थे पर तत्कालीन राजाओं की उदार एवं निष्पक्ष नीति के कारण उनकी सुरक्षा बनी रही। ले० नं० ७१४ से ज्ञात होता है कि जैनों को अपमानजनक शर्तें मानने को भी बाध्य होना पड़ा, पर उन्होंने अपने पड़ोसियों की भावना की रक्षा के लिए वह शर्त भी मान ली। उक्त लेख में लिखा है जैन लोग पहले विभूति और बिल्व पत्र बांटकर अपनी सब धर्म विधि कर सकते हैं। जैनियों ने जब यह शर्त मान ली तो उसका प्रभाव दूसरे धर्म वालों पर तत्काल हुआ और उन्होंने भी प्रतिज्ञा की कि जैन मन्दिरों आदि को कोई क्षति पहुँचावेगा तो वह उनके धर्म से बाहर कर दिया जायगा। जैनियों में उनकी अहिंसा नीति का ही प्रभाव था कि वे परमत सहिष्णु थे और इससे वे आजतक भारत में रह सके।

१०. जैन धर्म के केन्द्र

प्रस्तुत लेख संग्रह को ध्यान से पढ़ने से मालुम होता है कि भारत में उत्तर, दक्षिण, पूर्व, पश्चिम सभी ओर अनेक प्रभावक जैन केन्द्र थे। इन केन्द्रों का इतिहास देखने पर विदित होता है कि जैनाचार्यों ने जैन धर्म को राजाओं और सामन्तों के दरबारों तक ही सीमित न रखा था बल्कि साधारण जनता के बीच भी उसे जनप्रिय बनाने के प्रयत्न किये थे। इसीलिए राजाओं और सामन्तों के सतत परिवर्तित होते रहने पर एवं उनके प्रभुत्व का लोप होने पर भी जैन धर्म की नींव भारतवर्ष में अक्षुण्ण बनी रही।

(अ) उत्तर भारत के जैन केन्द्रों में मथुरा एक समय प्रमुख स्थान था। इस सम्बन्ध में हम पर्याप्त लिख चुके हैं। इसके अतिरिक्त, उदयगिरि-खण्डगिरि (उड़ीसा) पभोसा, राजगृह, रामनगर (अहिच्छत्र), उदयगिरि (सांची), देवगढ़, दूबकुण्ड, ग्वालियर, बन्नागंज, बड़नगर, खजुराहो, और महोबा के नाम उल्लेखनीय हैं।

उदयगिरि-खण्डगिरि—उड़ीसा प्रान्त में भुवनेश्वर के पास की उक्त

दो पहाड़ियां जैन तीर्थों के इतिहास की दृष्टि से बड़े महत्त्व की हैं। यहाँ से भारतीय लेखों में महत्वपूर्ण एक लेख (२) हाथी गुम्फा से प्राप्त हुआ है जो जैन सम्राट् खारवेल के इतिहास पर प्रकाश डालता है। उक्त लेख में लिखा है कि यहाँ आदिनाथ भगवान् की एक प्रतिमा थी जिसे मगध का राजा नन्द उठा ले गया था। इसका अर्थ यह हुआ कि नन्दकाल से ही यह स्थान एक जैन केन्द्र था। इस संग्रह में दो और लेख (३ और २४५) इस स्थान के दिये गये हैं। अन्तिम लेख सूचित करता है कि ११वीं शताब्दी में भी यह जैन तीर्थ था। इसका प्राचीन नाम कुमारी पर्वत था। यहाँ से और भी अनेक लेख मिले हैं। जिनकी प्रतिलिपि स्व० वेणीमाधव वरुआ ने ओल्ड ब्राह्मी इन्स्क्रिप्शन्स् नामक ग्रन्थ में दी है।

प्रभोसा:—इलाहाबाद के पास कौशाम्बी जैन और बौद्धों का एक प्राचीन तीर्थस्थान है। कौशाम्बी के पास ही प्रभास पर्वत नाम की एक पहाड़ी है जो प्राचीन काल से ही जैन तीर्थ रही है। इस स्थान के तीन लेख (६, ७ और ७५६) इस संग्रह में दिये गये हैं। प्रथम दो लेख वहाँ की प्राचीन दो गुफाओं से प्राप्त हुए हैं। इन लेखों की लिपि शुंगकालीन है। उनसे मालुम होता है कि अहिच्छत्र के अषाढ़सेन ने जो कि बहसतिमित्र (मगध नरेश) का मामा था, काश्यपीय अर्हतों के उपयोग के लिए ये गुफाएँ बनवायीं। काश्यप, भगा० महावीर का गोत्र था। संभव है ये गुफाएं भगा० महावीर के अनुयायी भिक्षुओं के लिए बनवायी गई थीं। तीसरा लेख १६ वीं शताब्दी का है। ये तीनों लेख इस बात को सिद्ध करते हैं कि यह स्थान प्राचीन काल से अब तक बराबर जैनों का मान्य तीर्थ है।

राजगृह:—यह स्थान जैन, बौद्ध और हिन्दुओं का पवित्र तीर्थ है। इस स्थान के तीन जैन लेख (८७,८३६ और ७४३) इस संग्रह में दिये गये हैं। ले० क्रं० ८७ पवित्र पर्वत वैभार की तलहटी में एक गुफा से प्राप्त हुआ है जिसे सोन भण्डार कहते हैं। यह लेख बड़े महत्त्व का है और इस प्रकार पढ़ा गया है:—

१. निर्वाण लाभाय तपस्वियोग्ये शुभे गुहेऽर्हत्प्रतिमा प्रतिष्ठे

२. आचार्यरत्नं मुनि वैरदेवः विमुक्तयेऽकारयद्दीर्घतेजाः ॥

जिसका भाव है कि किसी मुनि वैरदेव ने निर्वाण प्राप्ति के हेतु दो गुफाएं बनवायीं,

जन० कनिंघम ने आर्क्या० स० रिपो० के प्रथम भाग में इसकी प्रतिलिपि छापी थी और टी० ब्लॉख महोदय ने इसे पढ़कर एपि० इण्डिका के ८ वें भाग में प्रकाशित कराया। ब्लॉख महोदय इसे लिपि विद्या की दृष्टि से तीसरी या चौथी शताब्दी का कहते हैं। इस लेख के आ० वैरदेव कौन थे यह ठीक तरह से नहीं कहा जा सकता। कुछ विद्वान् इसे श्वेताम्बर पट्टावलियों के वज्रस्वामी मानते हैं जिनका समय सन् ५७ ई० है[1]। हमारा अनुमान है कि ये वैरदेव ले० नं० ९० (सन् ३९० के लगभग) के वीरदेव होना चाहिये जो कि मूलसंघ के आचार्य थे और जिनके सम्बंध में लेख में 'श्रीमद् वीरदेवशासनाम्बरावभासनसहस्रकर' अर्थात् भग० महावीर के शासन रूपी आकाश को प्रकाशित करने वाला सूर्य, विशेषण दिया गया है। लेख की लिपिका समय ३ री ४ थी शताब्दी, हमें वैरदेव से वीरदेव का साम्य स्थापन करने को बाध्य करता था। यदि यह अनुमान ठीक है तो मानना होगा वीरदेव का प्रभाव उत्तर भारत में राजगृह की ओर और दक्षिण भारत में कन्नड प्रान्त में बराबर था।

इस स्थान के दो अन्य लेख १८ वीं शताब्दी के हैं जिनसे सिद्ध होता है कि यह स्थान जैनों का अविच्छिन्न रूप से तीर्थ रहा है।

राम नगरः—(अहिच्छत्र) से प्राप्त अनेकों लेखों में से केवल दो लेख (५३,८४३) इस संग्रह में दिये गये हैं। ले० नं० ८४३ के कोत्तरि शब्द से ज्ञात होता है कि यहाँ अनेकों जैन मन्दिरों के ढेर थे। अब भी वहाँ कोत्तरि को

१—जर० बिहार० रि० सो०, भाग ४६, अंक ४, पृष्ठ ४००–४१२; उमाकान्त प्रेमचंद शाह—राजगिर की जैन गुफा सोन भण्डार के मुनि वैरदेव।

अपभ्रंश रूप में कतारि खेरा नामक छोटी पहाड़ी है। यह स्थान एक समय दिग० सम्प्रदाय का केन्द्र था[१]।

उदयगिरिः—(साँची) यहाँ की एक अकृत्रिम गुफा से एक लेख (६१) मिला है जो इस स्थान को जैन केन्द्र होने की सूचना देता है।

देवगढ़ से प्राप्त ले० नं० १२८ से ज्ञात होता है कि गुर्जर प्रतिहार नरेश मिहिर भोज के समय इसका एक नाम लुअच्छगिरि था वहाँ शान्तिनाथ भगवान् का एक मन्दिर था। दो अन्य लेखों (६१७, ६१८) से जो कि १५ वीं शताब्दी के हैं, विदित होता है कि यहाँ मूलसंघान्तर्गत नन्दिसंघ मदसारद गच्छ, बलात्कार गण का अच्छा प्रभाव था।

११ वीं शताब्दी में दुबकुण्ड, काष्ठासंघ के लाटवागट गण का प्रमुख स्थान था। यह स्थान ग्वालियर से ७६ मील दक्षिण पश्चिम दिशा में है। इस क्षेत्र के आसपास कच्छवाहों (कच्छप घाट वंश) का राज्य था। सन् १०८८ ई० में महाराजाधिराज विक्रमसिंह कच्छवाहा ने यहाँ के एक जैन मन्दिर को दान दिया था। उस मन्दिर की स्थापना एक जैन व्यापारी साधु लाहड़ ने की थी जो जायसवाल वंश का था। उसे विक्रमसिंह ने श्रेष्ठि की पदवी दी थी। यहाँ काष्ठासंघ लाटवागट गण के प्रमुख गुरु देवसेन की पादुकाओं की स्थापना सन् १०९५ ई० में की गयी थी (२२८, २३५)।

ग्वालियर से प्राप्त दो लेखों (६३३, ६४०) से विदित होता है कि १५ वीं शताब्दी में तोमर वंशी राजाओं के काल में यह स्थान काष्ठीसंघ (काष्ठासंघ का दूसरा नाम) माथुरान्वय, पुष्करगण के भट्टारकों का प्रमुख केन्द्र था। इन लेखो में उक्त संघ के कतिपय भट्टारकों के नाम दिये गये हैं।

बवागंज (मालवा) से प्राप्त १२ वीं शताब्दी से १५ वीं तक के तीन लेखों से विदित होता है कि यह प्रमुख जैन केन्द्रों में एक था। सन् ११६६ में

१—यहाँ से प्राप्त अनेकों लेख, अनेकान्त, वर्ष १० किरण ३—४ में प्रकाशित हुए में।

यहाँ एक प्रभावक जैन मुनि रामचन्द्र थे, जो राज्यमान्य मुनि (भूपतिवृन्दवन्दित-पदः) थे। ये सर्वसंघतिलक देवनन्दि मुनि के शिष्य थे जो कि राज्यमान्य लोकनन्दि मुनि के शिष्य थे (३७०, ३७१)। १५ वीं शताब्दी में यह स्थान ग्वालियर के भट्टारकों के अधीन था (६४३)।

खजुराहो के जैन और हिन्दू मन्दिर भारतीय शिल्पकला के विशिष्ट नमूने हैं। यहाँ से प्राप्त अनेक लेखों में से केवल १२ मूर्तिलेख इस संग्रह में हैं इनमें कुछ लेखों से विदित होता है कि यह स्थान ग्रहपति वंश (गहोई वैश्यों) का प्रमुख केन्द्र था। यहाँ के सन् ६५५ के एक लेख से मालुम होता है कि यहाँ जिननाथ का एक प्रसिद्ध मन्दिर था जिसे चन्देल नरेश धंग के राज्य में पाहिल्ल नामक सेठ ने अनेक वाटिकायें वगीचे दान में दिए थे (१४७)।

इसी तरह महोवा भी चन्देल नरेशों के समय में एक जैन केन्द्र था। इस संग्रह में इस स्थान से प्राप्त सं० ११६६ से सं० १२२१ अर्थात् ५२ वर्ष के ८ मूर्ति लेखों से विदित होता है कि यहाँ जैन लोग निर्विघ्न रीति से सोत्साह प्रतिष्ठा आदि कराते थे। ले० नं० ३३७, ३४२ पर चन्देल नरेश मदन वर्म्म का नाम और ले० नं० ३६५ में परमर्दि का नाम एवं राज्य संवत्सर दिया हुआ है।

(आ) इस संग्रह में पश्चिम भारत के संगृहीत लेखों को देखने से विदित होता है कि इस क्षेत्र में श्वेताम्बर सम्प्रदाय के अनेक जैन केन्द्र थे जैसे आबू, सिरोही, अजमेर, अनहिलवाड़, खम्भात, दोहद, दिलमाल, नड-लाई, नडोले. जैसलमेर, पालनपुर, वयाना आदि। गिरनार से प्राप्त २-३ लेख दिग० सम्प्रदाय के हैं, शेष बहुसंख्य लेख श्वेताम्बर सम्प्रदाय के हैं। शत्रुञ्जय से ११८ संग्रहीत लेखों में दिगम्बर सम्प्रदाय का केवल एक लेख (७०२) है जिसमें मूलसंघ, सरस्वतीगच्छ वलात्कारगण कुन्दकुन्द अन्वय के भट्टारकों की पट्टावली दी हुई है। यहां सं० १६८६ में अहमदावाद के संघपति हुंबड़ जातीय श्री रत्नसी के वंशजों ने, जब कि शाहजहाँ का राज्य प्रवर्तमान था, श्री शान्तिनाथ की प्रतिमा स्थापित की थी।

(इ) दक्षिण प्रान्त के प्रमुख जैन तीर्थों और केन्द्रों में श्रवणबेल्गोल, पोदनपुर, पलासिका, पुलिगेरे, कोपण, हनसोगे, हुम्मुच, बल्लिगाम्बे, कुप्पटूर, हलेबीड़, मलेयूर, तुल्लूर, मुगलूर, अंगड़ी, वन्दालिके, आवलि, उद्रि, कारकल, गेरसोप्पे आदि प्रसिद्ध थे।

श्रवण बेल्गोल—यहाँ के सम्बन्ध में विशेष कुछ नहीं कहना है क्योंकि उसके माहात्म्य को प्रकट करने के लिए जैन शिला लेख के ५०० शिलालेख प्रथम भाग के रूप में प्रकाशित हो चुके हैं। इस स्थान की परम्परा का सम्बन्ध अनेक विद्वानों के मत से श्रुतकेवली भद्रबाहु और सम्राट् चन्द्रगुप्त से है। कुछ विद्वानों के मत से उज्जयिनी के द्वितीय भद्रबाहु और उनके शिष्य गुप्तिगुप्त से है। जो भी हो पर जै० शि० सं० प्रथम भाग के प्रथम लेख का साधारणतः अर्थ करने से यहां की परम्परा का सम्बन्ध भद्रबाहु द्वितीय से ही मालुम होता है।[1]

---

[1] 'जैन परम्परानो इतिहास' के लेखक विद्वान् मुनि श्री दर्शन विजय जी आदि (त्रिपुटी महाराज) ने आर्य सिंहगिरि के उत्तराधिकारी आर्य वज्रस्वामी और भद्रबाहु द्वितीय के जीवन चरित में अनेक प्रकार का साम्य दिखलाया है और संभावना प्रकट की है कि यदि दोनों आचार्यों को एक मान लिया जाय तो श्वेताम्बर दिगम्बर इतिहास संबंधी अनेक गुत्थियां सरल रीति से सुलझ जा सकती हैं। इन वज्रस्वामी का जन्म वीर संवत् ४९६ में, दीक्षा काल वीर सं० ५०४ में युगप्रधान पद ५४८ में और सं० ५८४ में स्वर्गगमन हुआ था। वे लिखते हैं:—दिगम्बर ग्रन्थों में इस अरसे में द्वितीय भद्रबाहु होने का उल्लेख है जिनके दूसरे नाम वज्रयशा (तिलोयपण्णत्ति) महायशा (महापुराण), यशोबाहु (उत्तर पुराण, हरिवंश पुराण), जयबाहु (श्रुतावतार), वज्रर्षि (हरिवंश पुराण स० १ श्लोक ३३), महायशा (आवश्यक निर्युक्ति) मिलते हैं। श्रवणबेल्गोल के चन्द्रगिरि स्थित एक लेख में उल्लेख है कि श्रुतकेवली भद्रबाहु की परम्परा में महानिमित्तज्ञ भद्रबाहु ने उज्जयिनी में रहते हुए १२ वर्षीय दुष्काल को आते देख

दक्षिण कर्नाटक की ओर विहार किया और ७०० शिष्यों के साथ इस पहाड़ी पर आये। उन्होंने यहाँ अपने समाधिमरण की आराधना के लिए केवल एक शिष्य को साथ रख शेष को विसर्जित कर दिया इत्यादि (पृष्ठ २८४–२९२)।

आगे मुनिश्री लिखते हैं कि आर्य वज्रस्वामी ने वि० सं० १७४ में अपने शिष्य संघ के साथ बारह वर्ष के दुष्काल में दक्षिण जाकर एक पहाड़ी के ऊपर अनशन किया और समाधि पूर्वक स्वर्गगमन किया। इस भूमि की इन्द्र ने रथ के द्वारा तीन प्रदक्षिणा की इससे इस पहाड़ का नाम 'रथावर्तगिरि' पड़ा।

इस रथावर्तगिरि का असली नाम क्या था और वर्तमान में उसका नाम क्या है, इस बात का कहीं स्पष्ट उल्लेख नहीं मिलता। किन्तु हमें लगता है कि आज जो इन्द्रगिरि (विन्ध्यगिरि) के रूप में पहाड़ी बोली जाती है वही वास्तव में रथावर्त गिरि है, और उसके ऊपर जो विशालकाय मूर्ति है वह आर्य द्वितीय भद्रबाहु स्वामी याने वज्रस्वामी की मूर्ति है।

आ० वज्रस्वामी ने अनशन के लिए प्रथम एक पहाड़ी पसन्द किया था अपने एक बालमुनि को भी छोड़ने के लिए उन मुनि को वहीं रख उस पहाड़ी का त्याग कर सामने की दूसरी पहाड़ी पर अनशन किया और बालमुनि ने पहली पहाड़ी पर अनशन किया।

इसके पश्चात् उनके प्रशिष्य आचार्य चन्द्रसूरि यहीं पधारे थे और उनके उपदेश से उसी पहाड़ी की विशाल शिला पर आ० वज्रस्वामी की विशाल काय प्रतिमा बनी। ये दोनों पहाड़ियाँ आज इन्द्रगिरि और चन्द्र-गिरि नाम से प्रसिद्ध हैं, इत्यादि।

(देखो, जैन परम्परानो इतिहास, भा० १, लेखक त्रिपुटी महाराज, प्रकाशक–श्री चारित्र स्मारक ग्रन्थ माला, अहमदाबाद, १९५२, पृष्ठ ३३७-३३९)

जो भी हो पर 'अनेकग्रामशतसंख्यं मुदित जन धन कनक सस्य गोमहिषाजावि कुल समाकीर्णं जनपदं प्राप्तवान्" उल्लेख जिस स्थान के लिए किया गया है वह पुन्नाट देश के उत्तरी भाग के सिवाय और कोई दूसरी जगह नहीं है।

पोदनपुर—तीर्थ के सम्बन्ध में हमें ले० नं० ३६५[1] (सन् ११८०) से विदित होता है कि भरत चक्रवर्ती ने पोदनपुर के समीप ५२५ धनुष प्रमाण बाहुबलि की मूर्ति प्रतिष्ठित करायी थी। कुछ काल बीतने पर मूर्ति के आसपास की भूमि कुक्कुट सर्पों से व्याप्त और बीहड़ वन से आच्छादित होकर दुर्गम्य हो गयी थी। राच-मल्ल नृप के मंत्री चामुण्ड राय को बाहुबलि के दर्शन की अभिलाषा हुई पर यात्रा के हेतु जब वे तैयार हुए तब उनके गुरु ने उनसे कहा कि वह स्थान बहुत दूर और अगम्य है। इस पर चामुण्ड राय ने वैसी मूर्ति की प्रतिष्ठा कराने का विचार किया और उन्होंने वैसा कर डाला।

— कहा जाता है कि यह पोदनपुर निजाम हैदराबाद प्रान्त के निजामाबाद जिले का 'बोधन' नामक गाँव है जो कि १० शताब्दी के पूर्वार्ध में राष्ट्रकूट नरेश इन्द्र चतुर्थ की राजधानी था और वहां वैष्णवों का बोलबाला था तथा वहाँ एक विशाल वैष्णव मन्दिर भी बनवाया गया था। यहाँ अब भी जैन एवं ब्राह्मण पुरातत्त्व की सामग्री मिलती[2] है।

पलासिका:—हलसी या हलसिगे (जिला बेलगांव) से प्राप्त ६ लेखों से ज्ञात होता है कि पांचवीं शताब्दी ईस्वी में कदम्बों के राज्यकाल में पलासिका एक प्रमुख जैन केन्द्र था। यहां यापनीय, निर्ग्रन्थ एवं कूर्चक ये तीनों सम्प्रदाय समान भाव से आदृत थे। ले० नं० ६६ में लिखा है कि कदम्ब नरेश काकुस्थवर्मा ने अपने जैन सेनापति श्रुतकीर्ति को धार्मिक कार्य के लिए एक क्षेत्र दान में दिया था। ले० नं० ६६ के अनुसार कदम्ब मृगेशवर्मा ने अपने पिता की स्मृति में

---

१. जैन शि० ले० संग्रह, नं० ८५.

२. सालेतोरे, मेडीवल, जैनिज्म, पृष्ठ १८६.

यहाँ एक जैन मन्दिर बनाकर यापनीय, निर्ग्रन्थ और कूर्चकों को दान में दिया था। इसी तरह ले० नं० १०० उल्लेख करता है कि अष्टाह्निका पर्व मनाने के लिए कदम्ब नरेश रविवर्मा और अन्य लोगों ने पुरुखेटक गांव यापनीय संघ को दिया था। ले० नं० १०१-१०२ के अनुसार यहाँ कदम्ब रविवर्मा और उसके छोटे भाई भानुवर्मा द्वारा जिन भगवान् की पूजा के लिए दान दिये गये थे। ले० नं० १०३ से विदित होता है कि कदम्ब नरेश हरिवर्मा ने पलासिका में सिंह सेनापति के पुत्र मृगेश द्वारा निर्मापित जैन मन्दिर में अष्टान्हिका पूजा के लिए और सर्व संघ के भोजन के लिए कूर्चकों के वारिषेणाचार्य संघ के लिए चन्द्रक्षान्त को प्रमुख बनाकर दान दिया था। इसी तरह ले० नं० १०४ के अनुसार अहिरिष्टि नामक श्रमण संघ के लिए सेन्द्रक राजा भानुवर्मा की प्रार्थना पर हरिवर्मा ने दान दिया था। इस तरह कदम्ब राजाओं की ४-५ पीढ़ी तथा पलासिका यापनीय, निर्ग्रन्थ और कूर्चक सम्प्रदाय का प्रमुख केन्द्र रहा है।

पुलिगेरे (लक्ष्मेश्वर):—इस स्थान के सातवीं से दशवीं शताब्दि ईस्वी के संग्रहीत पाँच लेखों से मालुम होता है यह एक जैन तीर्थ था। यहाँ शंखवसदि नामक विशाल जैन मन्दिर था जिसकी छत ३६ खम्भों पर थमी थी। इस वसदि के नाम से इस स्थान का नाम शंखतीर्थ पड़ा था। ले० नं० १०९ से विदित होता है कि सेन्द्रक राजा दुर्गशक्ति ने शंखजिनेन्द्र की नित्य पूजा के लिये कुछ भूमि दान में दी थी। ले० नं० १११ के अनुसार चालुक्य विनयादित्य सत्याश्रय ने इस मन्दिर को अपने राज्य के ५ वें या ७ वें वर्ष में माघ पूर्णिमा के दिन दान दिया था। ले० नं० ११३ में उल्लेख है कि चालुक्य वंशी विजयादित्य सत्याश्रय ने अपने राज्य के ३४ वें वर्ष में इस मन्दिर के लिए दान दिया था और ले० नं० ११४ से ज्ञात होता है कि सन् ७३४ ई० में विक्रमादित्य ने शंखतीर्थ वसदि का जीर्णोद्धार कराया था। यहाँ शंख वसदि के अतिरिक्त एक और जिनालय था, जिसका नाम धवल जिनालय था। ले० नं० १४६ ... तीर्थ के इतिहास की दृष्टि से बड़े महत्त्व का है। उक्त लेख के अनुसार सन् ... में इस तीर्थ का विशाल रूप हो गया था। यहाँ गंगराजा मारसिंह गङ्ग-

कन्दर्प ने एक जिनालय बनवाया जो कि शंख बसदि तीर्थ बसदि मण्डल के लिए मण्डन स्वरूप था। उसका नाम उक्त राजा के नाम पर गङ्गकन्दर्प भूपाल जिनेन्द्र मन्दिर रखा गया और उसके लिए दान देते समय सीमा के रूप में अनेक जैन एवं अजैन बसदियों का उल्लेख है।

कोपणः—यह स्थान श्रवण बेल्गोल के बाद बड़े महत्त्व का जैन तीर्थ रहा है। शिलालेखों के पर्यवेक्षण से प्रतीत होता है कि यह ७ वीं से लेकर १६ वीं शताब्दी तक जैनों का महातीर्थ रहा है। प्रस्तुत संग्रह में कोपण के सम्बन्ध के ११ वीं शताब्दी के पहले के लेख संग्रहीत नहीं पर उसके बाद के जो भी लेख हैं उनमें उसकी प्रसिद्धि का ही उल्लेख है। ले० नं० १६८ से विदित होता है कि सन् १००० के लगभग कोपण तीर्थ के कुछ यात्री श्रवण बेल्गोल आये थे। ले० नं० २६६ में लिखा है कि जैनों के महत्तो तीर्थों में प्रमुख तीर्थ कोपण था। ले० नं० २५५ में उल्लेख है कि जैन सेनापति गंगराज ने अपनी अनवधिक दानशीलता से गङ्गवाडि ६६००० को कोपण के समान समझ दिया था। यही बात ले० नं० ३०१ और ४११ से पुष्ट होती है। ले० नं० ३०४ के अनुसार गंगराज के ज्येष्ठ भ्राता बम्मदेव के पुत्र एच दण्डनायक ने कोपण बेल्गोल आदि स्थानों में अनेक जिन मन्दिर निर्माण कराये थे। उसी लेख में कोपण को 'कोपण आदि तीर्थदलु' अर्थात् एक प्रमुख या आदि तीर्थ के रूप में माना गया है। सन् ११५६ (३५४) में सेनापति हुल्ल ने कोपण महातीर्थ में २४ जैन साधुओं के संघ के लिए अन्नदान दिया था। ले० नं० ४५१ में उल्लेख है कि एचण ने बेलगवत्तिनाडु में एक ऐसा जिनालय बनवाया था जैसा उस प्रदेश में और कहीं नहीं था और इस तरह उसने बेलगवत्तिनाड को कोपण के समान बना दिया।

१६ वीं शताब्दी में भी कोपण का महत्व कुछ कम न हुआ था। इस शताब्दी के महान् विद्वान् वादि विद्यानन्द के विषय में ले० नं० ६६७ में उल्लेख है कि इन्होंने कोपण तथा अन्य दूसरे तीर्थों में महोत्सव करके विद्यानन्द नाम से प्रसिद्धि प्राप्त की।

लु० राइस महोदय कोपण को निजाम हैदराबाद के दक्षिण-पश्चिम में स्थित वर्तमान कोप्पल को माना है। इस विषय में अब सन्देह नहीं है।

चिक्क हनसोगे:—जैन तीर्थों में चिक्क हनसोगे का नाम भी प्रमुख था। इस संग्रह के लेखों से प्रतीत होता है कि उक्त स्थान ११ वीं शताब्दी के पहले से भी जैन धर्म का केन्द्र था। ले० नं० २४० से ज्ञात होता है कि वहां एक समय ६४ बसदियां थीं जो कि अब सब ध्वस्त हालत में हैं पर उन्हें देखने से मालुम होता है कि वे चालुक्य शिल्प की शैली में सुन्दर ढंग से निर्मित हुई थीं। ले० नं० २२३ (लगभग सन् १०८० ई०) से विदित होता है कि दामनन्दि भट्टारक के अधिकार क्षेत्र में पनसोगे के चङ्गाल्व तीर्थ की सारी बसदियाँ थीं, अब्बेय बसदि तथा तोरेनाड् की बसदि भी उनके प्रधान शिष्यगण के अधिकार में थी। ले० नं० १९६, २४० और २४१ से उन बसदियों का एक विचित्र इतिहास मालुम होता है कि इन बसदियों के आदि प्रतिष्ठापक मूलसंघ, देशीगण, होत्तगे गच्छ के रामस्वामी थे जो कि दशरथ के पुत्र, लक्ष्मण के भाई सीता के पति और इक्ष्वाकु कुल में उत्पन्न हुए थे। पीछे इन्हीं बसदियों को दान देने वाले क्रमशः शक, नल, विक्रमादित्य, गंग और चङ्गाल्व थे। सन् १०६० के लगभग यहां चंगाल्व नरेश राजेन्द्र चोल नन्नि चंगाल्व ने कुछ बसदियों का निर्माण कराया था।

हनसोगे के जैन गुरुओं का बड़ा प्रभाव था। इनकी एक शाखा हनसोगे बलि नाम से प्रसिद्ध थी। सन् १३०३ में हनसोगे के बाहुबलि मलधारि देव के शिष्य पद्मनन्दि भट्टारक ने होन्नेयन हल्लि में गंध कुटी निर्माण करायी थी तथा १५ गद्याण का दान भी दिया था (५५१)। पन्द्रहवीं शताब्दी के लगभग कारकल के शासकों को जैन धर्म के प्रभाव में लाने वाले इसी स्थान के गुरु थे। हनसोगे के ललितकीर्ति मुनीन्द्र के उपदेश से शक सं० १३५३ फाल्गुन शुक्ल १२ के दिन सोमवंश के भैरवेन्द्र के पुत्र पाण्ड्य राय ने कारकल में बाहुबलि की प्रतिमा बनाकर प्रतिष्ठित करायी थी (६२४)।

हुम्मचः—शान्तर कुल के संस्थापक जिनदत्तराय के समय (६ वीं शता०) से यह बराबर महत्व पूर्ण जैन तीर्थ रहा है। इस संग्रह के लगभग २२ लेखों से यह बात भली भाँति सिद्ध होती है। यहां की प्राचीन बसदि का नाम पालियक्क बसदि था जो कि सन् ८७८ के लगभग निर्मापित हुई थी। ले० नं० १४५ से से ज्ञात होता है कि तोलापुरुष शान्तर की पत्नी पालियक्क ने अपनी माता की मृत्यु पर उसे पाषाण बसदि के रूप में खड़ा किया था और इसके लिए बहुत से दान दिऐ थे। सन् ८६७ के ले० नं० १३२ में उल्लेख है कि तोलापुरुष विक्रमादित्य ने मौनिसिद्धान्त भट्टारक के लिए एक पाषाण बसदि बनवायी। सन् १०६२ के दो ले० नं० १६७ और १६८ क्रमशः सूले बसदि और पार्श्वनाथ बसदि से प्राप्त हुए हैं। प्रथम लेख में पट्टणस्वामि नोक्कय्य सेट्टि के दानों का उल्लेख है और दूसरे में वीर शान्तर की पत्नी चागलदेवी के दान कार्यों की प्रशंसा है। सन् १०६५ के एक लेख (२०३) में उल्लेख है कि त्रैलोक्यमल्ल शान्तर ने अपने गुरु कनकनन्दि देव को यहां दान दिया था। सन् १०७७ के ५ लेख उसी तीर्थ से प्राप्त हुए हैं जिनमें से ले० नं० २१२ में तैलह शान्तर के दानों और पट्टणस्वामि नोक्कय्य सेट्टि की प्रशंसा है। ले० नं० २१३ बहुत ही विशाल लेख है जो कि पञ्चकूट बसदि के प्राङ्गण में एक बड़े पाषाण पर उत्कीर्ण है। पञ्चकूट बसदि प्रसिद्ध उर्वीतिलक जिनालय का ही नाम है। इस लेख के अनुसार चट्टलदेवी ने अपने पति एवं पुत्रादि की याद में तालाब कुआं, बसदि, मन्दिर, नाली, पवित्र स्नानागार, सत्र, कुंज आदि प्रसिद्ध धर्म एवं पुण्य के कार्यों को सम्पन्न कराया था। चट्टलदेवी शान्तरकुल और गंगवंश से सम्बन्धित कांची की रानी थी। लेख में शान्तर वंश और गंग वंश की वंशावली तथा द्रविड़ संघ, अरुङ्गलान्वय नन्दिगण की पट्टावली भी दी हुई है। इस लेख के अनुसार पंचकूट जिनालय का स्थापना काल शक सं० ६६६ था। ले० नं० २१४ में पंचकूटबसदि के निर्माण कार्य का विशेष इतिहास दिया गया है और मन्दिर के प्रतिष्ठाचार्य श्रेयांस देव की (ले० नं० २१३ के समान ही) परम्परा दी गई है। ले० नं० २१५ में नन्नि शान्तर, राजा ओड्डुग और चट्टलदेवी आदि

ानियों की तथा हेमसेन (कनकसेन) दयापाल, पुष्पसेन, वादिराज, अजितसेन आदि आचार्यों की प्रशंसा की गई है। ले० नं० २२६ में शान्तर राजाओं के दान का उल्लेख है। ले० नं० ३२६ में उल्लेख है कि सन् ११४७ में विक्रम शान्तर की बड़ी बहिन पम्पादेवी ने उर्वीतिलक जिनालय के समान ही शासन देवता की मूर्ति निर्माण करायी थी, तथा उसने उसके भाई और पुत्री ने पञ्च-बसदि के उत्तरीय पट्टसाले को बनवाया था। ले० नं० २३८, ४६७, ४६४, ४६७, ५००, ५०३, ५४२, तथा ५६७ समाधिमरण के स्मारक लेख हैं। ले० नं० ६६७ बहुत विशाल है और विजयनगर साम्राज्य के प्रसिद्ध विद्वान् वादि विद्यानन्द तथा तत्कालीन राजाओं पर उनके प्रभाव का सुन्दर वर्णन करता है।

बल्लिगाम्वे :—के भी जैन तीर्थ होने के अनेक लेख प्रमाण हैं। यहाँ सन् १०४८ में जलाहुति शान्तिनाथ से सम्बद्ध बलगारगण के मेघनन्दि भट्टारक के शिष्य केशवनन्दि अष्टोपवासि भट्टारक की बसदि थी। इस बसदि के लिए उक्त सन् में महामण्डलेश्वर चामुण्डराय ने कुछ भूमि का दान दिया था (१८१)। यहाँ सन् १०६८ में जैन सेनापति शान्तिनाथ ने काष्ठ से बनी हुई प्राचीन मल्लिकामोद शान्तिनाथ तीर्थंकर की बसदि को पाषाण की बनवाया था तथा इस मन्दिर के निमित्त वहाँ माघनन्दि भट्टारक को कुछ जमीन दान में दी थी (२०४)। इस लेख में तथा इससे पहले के ले० नं० १८१ में उल्लेख है कि यहाँ सभी धर्मों के—जिन, विष्णु, ईश्वर आदि के मन्दिर थे। ले० नं० २०४ की अन्तिम पंक्तियों से यह भी विदित होता है जगदेकमल्ल (जयसिंह तृतीय जगदेकमल्ल) तथा चालुक्य गंग पेर्म्मानडि विक्रमादित्य ने उक्त बसदि को पहले कुछ जमीनें दान में दी थीं। ले० नं० २१७ (सन् १०७७) से मालुम होता है कि यहाँ के चालुक्य गंग पेर्म्मानडि जिनालय को विक्रमादित्य चतुर्थ ने सेन गण के आचार्य रामसेन को एक गाँव दान में दिया था। सन् ११८६ ई० करीब का एक लेख (४२०) समाधि मरण का स्मारक है। ले० नं० ४५३ और ४५[illegible] सन् १२०५ ई०) में एक जैन बसदि के लिए एक जैन राजा (सम्भव है रट्ट के राजा)—द्वारा दान का उल्लेख है। इन दोनों लेखों में रट्टवंश के पिछले

राजाओ की वंशावली दी गई है। इस सबसे यही मालुम होता है कि बल्लिगाम्बे ११-१२ वीं शताब्दी के प्रमुख जैन केन्द्रों में एक था।

कुप्पटूर:—के सम्बन्ध में संगृहीत कतिपय लेखों से ज्ञात होता है कि यह स्थान ११ वीं से १५ वीं शताब्दी तक एक महत्त्वपूर्ण जैन केन्द्र था। ले० नं० २०६ से विदित होता है कि कदम्ब रानी मलाल देवी ने सन् १०७७ में पार्श्वदेव चैत्यालय की स्थापना की थी और पद्मनन्दि भट्टारक ने उसकी प्रतिष्ठा करा के उसका नाम वहां के ब्राह्मणों के नाम पर 'ब्रह्म जिनालय' रखा था। यहीं देशी गण के आचार्य देवचन्द्र के शिष्य श्रुत मुनि थे जिन्होंने एक मन्दिर का जीर्णोद्धार कराया था, और सन् १३६७ में समाधिगत हुए थे (५६३)। ले० नं० ५५५ से विदित होता है कि सन् १४०२ में कुप्पटूर एक प्रसिद्ध स्थान था। विजय नगर के सम्राट् हरिहर के समय यहां एक जैन मन्दिर था, जिसमें कदम्बों का एक शासन पत्र मिला था। सन् १४०८ के लं० नं० ६०५ से विदित होता है कि कुप्पटूर नागर खण्ड का तिलक स्वरूप था वहां अनेक जैन रहते थे, तथा अनेक जैन चैत्यालय थे। वहां का शासक जैन धर्मावलम्बी गोपमहाप्रभु था।

अङ्गडि:—यह होय्सल वंश का उत्पत्ति स्थान था। इसका दूसरा नाम सोसेवूर था। १० वीं शताब्दी के मध्य से इसके जैन केन्द्र होने के अनेक प्रमाण मिलते हैं। ले० नं० १६६ से ज्ञात होता है कि यहां द्रविड़ संघ के प्रसिद्ध मुनि विमलचन्द्र पण्डित देव थे जिन्होंने सन् ६६० में लगभग संन्यास विधि से मरण किया था और उनकी शिष्याओं ने इस उपलक्ष्य में स्मारक खड़ा किया था। इसी तरह ले० नं० १७८ वज्रपाणि मुनि के समाधिमरण का स्मारक है। ये वज्रपाणि होय्सल नरेश नृपकाय राच मल्ल के गुरु थे। ले० नं० १६४, २०० २४२ भी समाधिमरण के स्मारक हैं। ले० नं० १८५ से मालुम होता है कि ये वज्रपाणि मुनि द्रविड गण के थे। उनकी शिष्या जाक्रियब्बे ने कुछ जमीनें वहां के अर्कर जिनालय के लिए छोड़ दी थीं। इस लेख के समय विनयादित्य होय्सल का राज्य प्रवर्तमान था। ले० नं० २०१ में पाषाणशिल्पियों के प्रधान, माणिक होय्सलाचारि द्वारा निर्मित एक बसदि का उल्लेख है। यह बसदि मुल्लूर के गुणसेन

पण्डितदेव को सौंप दी गई थी। इसी तरह ले० नं० ३६७ (सन् ११६४) में उल्लेख है कि यहाँ एक बसदि पट्टणसामि नागसेट्टि के पुत्र ने बनवायी थी जिसके लिए सन् ११६४ में वीर विजय नरसिंह देव ने दान दिया था। सन् ११-७२ के एक लेख (३७८) में एक होन्नंगिय बसदि के लिए किसी कम्बरस नामक व्यक्ति द्वारा दान का उल्लेख है।

बन्दालिके:—इस स्थान की तीर्थ रूप में प्राचीनता यहाँ से प्राप्त सन् ९१८ (ठीक ९११) के एक लेख (१४०) से विदित होती है जहाँ इसे बन्दनिके तीर्थ रूप में लिखा है। उक्त सन् में नागर खण्ड सत्तर की शाविका नक्कियब्बे ने सल्लेखना पूर्वक देहत्याग किया था। सन् १०७५ के एक लेख (२०७) में भी इसका तीर्थ के रूप में उल्लेख है। वहाँ शान्तिनाथ बसदि के लिए चालुक्य नृप सोमेश्वर ने कुछ भूमि दान में दी थी। ले० नं० ४०८ से ज्ञात होता है कि कदम्ब वंश की एक शाखा की अधीनता में इस स्थान की कीर्ति एवं यहां के शान्तिनाथ जिनालय की प्रसिद्धि जगह जगह फैल रही थी। इसी लेख के अनुसार एक बार यहां के जिनालय को देखने होय्सल सेनापति रेचण आया था। उसने इस मन्दिर के दर्शन से प्रसन्न होकर पूजा के खर्च के लिए एक गाँव दान में दिया था। इसी शान्तिनाथ जिनालय में सन् १२०० के लगभग सोमलदेवी नामक महिला ने समाधि मरण किया था (४३३)। ले० नं० ४३८ के अनुसार उक्त बसदि के लिए तीन गाँव दान में दिये गये थे। ले० नं० ४४८ में बन्दालिके (बान्धव नगर) की समृद्धि एवं सौन्दर्य का अच्छा वर्णन है। यहाँ एक सेट्टि ने शान्तिनाथ देव के लिए एक मण्डप खड़ा किया था। ललितकीर्ति सिद्धान्त के शिष्य शुभचन्द्र पण्डित ने इस तीर्थ का प्रबन्ध (पारुपत्य) अपने हाथ लेकर उसे समुन्नत किया था एवं नागर खण्ड सत्तर के सभी प्रमुख व्यक्तियों ने, प्रजा ने, और किसानों ने अनेक दान दिये थे और होय्सल सेनापति मल्ल ने उक्त क्षेत्र की रक्षा की थी। उक्त जिनालय के प्रबन्धक शुभचन्द्र देव ने सन् १२१३ में सन्यासपूर्वक देहत्याग किया था (४६)।

उद्धरे (उद्रि):—इस तीर्थ के १२ वीं से १४ वीं शताब्दी के ही लेख इस संग्रह में हैं जिनसे मालुम होता है कि यहाँ प्रसिद्ध तीन वसदियाँ थीं—पञ्च वसदि, कनक जिनालय एवं एरग जिनालय। सन् ११२९ में यहाँ का शासक गंगनरेश मारसिंह का पुत्र महामण्डलेश्वर एक्कलरस था उसके सेनापति सिंगण का विरुद जैनचूडामणि था (२९१)। यह एक्कलरस नाना देशों के विद्वानों और कवियों के लिए कर्ण के समान दानी था। वह वहाँ की सारी प्रवृत्तियों का संचालक था। उसकी फुआ सुग्गियब्बिरसि ने यहाँ पञ्चवसदि में रहने वाले साधुओं के लिए दान दिया था (३१२)। एक दूसरी महिला कनकब्बिरसि ने वहाँ बहुत से दान दिये (३१३)। इसका अनुकरण कर दूसरी महिलाओं ने भी दान दिये थे। राजा एक्कल ने कनक जिनालय को भूमि दान दिया था। (३१३)। सन् ११९८ के एक लेख (४३१) में उल्लेख है कि होय्सल सेनापति महादेव दण्डनाथ ने वहाँ एरग जिनालय नाम का एक विशाल जिनालय बनवाया था। उसने उक्त मन्दिर के लिए अनेक दान भी दिये थे। इसी लेख में लिखा है कि उद्धरे बनवासी देश के शासकों के रक्षण और कोष भवन के रूप में अद्वितीय स्थान था। सन् १३८० के एक लेख (५७९) से विदित होता है कि इस स्थान में विजयनगर नरेश हरिहर राय द्वितीय के समय में बैचप नामक एक जैन वीर रहता था। उसने अपने देश को अतातायियों से बचाने के लिए उनसे युद्ध किया और उन्हें परास्त करने में अपने जीवन की बलि दे दी। ले० नं० ५९९ में बैचप के पुत्र सिरियण्ण की जिनधर्म भक्ति का और उद्धरे की महिमा का वर्णन है। सन् १४०० में सिरियण्ण ने समाधि विधि से देह त्याग किया था। चौदहवीं शताब्दी में उद्धरे अति समुन्नत एवं प्रख्यात स्थान था, यहाँ तक कि इस स्थान के आचार्य ने अपने वंश का नाम उद्धरे वंश रख लिया था। यहाँ के आचार्यों मुनिभद्र देव ने हिसुगल वसदि बनवायी थी तथा मुलगुन्द के जिनेन्द्र मन्दिर का विस्तार कराया था। ले० नं० ५८८ उनके समाधिमरण का स्मारक है।

हलेबीडः—जैन धर्म का एक महत्वपूर्ण केन्द्र होय्सलों की राजधानी हलेबीड

था। जिसका कि दूसरा नाम उक्त वंश के लेखों में दोरसमुद्र या द्वारावती मिलता है। प्रस्तुत संग्रह में इस स्थान का पुराना लेख सन् १११७ के लगभग का (२६३) है जो कि विष्णुवर्धन नृप के समय का है। इसमें जैन मंत्री गंगराज के कार्यों की बड़ी प्रशंसा है। सन् ११३२ के ले० नं० ३०१ में विष्णुवर्धन की दिग्विजय का, तथा साथ में सेनापति गंगराज द्वारा अगणित जैन मन्दिरों के जीर्णोद्धार कार्यों का उल्लेख है। गंगराज के पुत्र बोप्प ने दोर समुद्र में पार्श्वनाथ बसदि का निर्माण कराया था और अपने पिता की स्मृति में पार्श्वनाथ की मूर्ति स्थापित की थी। राजा विष्णुवर्धन को दैवयोग से इसी अवसर पर युद्ध विजय, पुत्रोत्पत्ति और सुख समृद्धि मिली थी। उसने इस मांगलिक स्थापन को ही उक्त वार्ता में निमित्त मान बड़ी प्रसन्नता से देवता का नाम विजयपार्श्व एवं पुत्र का नाम विजय नारसिंह देव रखा और जावगल नामक गाँव तथा अन्य प्रकार के दान दिये। उक्त लेख से यह भी मालुम होता है कि मन्दिर के पुरोहित नयकीर्ति सिद्धान्तदेव को तेली दास गौंड ने भूमिदान दिया तथा उसने और राम गौण्ड ने उत्तरायण संक्रमण में बहुत से दान दिए। सन् ११६६ के एक लेख (४२६) में यहाँ की शान्तिनाथ बसदि के लिए कुछ किसानों द्वारा गाँव एवं तालाबों के दान का तथा बसदि के आचार्य, स्थानीय किसान वर्ग, एवं गाँव के ६० कुटुम्बों द्वारा दान की रक्षा का उल्लेख है। ले० नं० ४६६ के अन्तर्गत दो लेखों का संकलन हुआ है। पहले लेख में होय्सल नरसिंह तृतीय द्वारा जीर्णोद्धार कार्य का तथा दूसरे में उक्त राजा द्वारा अपने उपनयन संस्कार के समय दान का उल्लेख है। सन् १२७४ के एक लेख (५१४) में बालचन्द्र पण्डित देव के चमत्कार पूर्ण समाधि मरण का वर्णन है। उनके स्मारक रूप में भव्य लोगों ने उनको तथा पंच परमेश्वर की प्रतिमायें बनाकर प्रतिष्ठित की थीं। इसी तरह ले० नं० ५२४ (सन् १२७६) में उक्त बालचन्द्र पण्डितदेव के श्रुतगुरु अभयचन्द्र महासैद्धान्तिक के समाधिमरण का उल्लेख है। ये अभयचन्द्र अनेक शास्त्रों के प्रकाण्ड पण्डित थे। इसी तरह इस लेख के २० वर्ष बाद बालचन्द्र पण्डित देव के प्रधान शिष्य रामचन्द्र मलधारि देव के समाधिमरण

का अनोखा वर्णन है (५४८)। ले० नं० ५४६ में एक अद्भुत सूचना है। उसमें उल्लेख है कि वहाँ से ईशान दिशा की ओर १५ विलस्त के अन्तर पर शान्तिनाथ देव जिनकी ऊँचाई ६ विलस्त है, जमीन के अन्दर गड़े हैं, कोई भव्य पुरुष उनको बाहर निकालकर उनकी प्रतिष्ठा कर पुण्य लाभ ले। सन् १६३८ के महत्वपूर्ण एक लेख (७१०) में जैन और शैवों की एकता तथा परधर्म सहिष्णुता का वर्णन है।

मलेयूर:—चामराजनगर तालुके में जैन धर्म का एक मजबूत गढ़ मलेयूर था। यहाँ के कनकाचल पर्वत पर अनेक बसदियाँ थीं। सन् ११८१ में यहाँ की पार्श्वनाथ बसदि के लिए अच्युत वीरेन्द्र शिक्यप वैद्य की पत्नी चिक्कतायी ने पूजा प्रबन्ध के लिए, मुनियों के नित्यदान के लिए और हमेशा शास्त्रदान के लिए किन्नरीपुर ग्राम को दान में दिया था (४०१)। यहाँ के १४ वीं से लेकर १६ वीं शताब्दी तक के १० लेखों से विदित होता है कि यहाँ अनेक बसदियाँ थीं।

आवलि नाड:—सोराब तालुके के अनेकों जैन केन्द्रों में प्रसिद्ध केन्द्र आवलिनाड् (हिरिय आवलि) था। मध्य युग में इस स्थान के अनेकों सामन्तों ने, उनकी पत्नियों ने तथा नगरवासियों ने अपने उत्साहपूर्ण धर्मसेवन से इस स्थान को अमर बना दिया था। जैनधर्म की दृष्टि से उस स्थान का महत्त्व यद्यपि १२ वीं शताब्दी में भी था (२८६, ३२२) पर विशेषकर यहाँ १४ वीं शताब्दी के मध्य से लेकर पन्द्रहवीं शताब्दी के प्रथम दर्शकों के अनेक लेखों से, जो कि इस संग्रह में दिये गये हैं, विदित होता है कि यहाँ जैन धर्म की धारा अच्छी तरह प्रवाहित थी। इन लेखों में अधिक संख्या समाधिमरण के स्मारक लेखों की है। इन लेखों से ज्ञात होता है कि यहाँ के सामन्त आवलि प्रभु या आवलि महाप्रभु कहलाते थे और अपने जीवन के अन्तिम क्षणों को सुधारने में कितने जागरूक रहते थे।

तवनिधिः—सोराव तालुके का यह स्थान भी एक जैन तीर्थ था। यहाँ से अनेकों जैन लेख मिले हैं पर यहाँ केवल ६ ही लेख संगृहीत हैं जो कि सब समाधिमरण के स्मारक हैं जिनसे ज्ञात होता है कि ऐसे स्थानों में समाधिविधि सम्पन्न कराने वाले आचार्य होते थे जहाँ कि श्रावक जन अपने जीवन के अन्तिम क्षणों में आकर संन्यासविधि से जीवन त्याग करते थे।

मुल्लुरुः—यह स्थान कुर्ग तालुके में है। यहाँ के ११ वीं से १४ वीं शताब्दी तक के ८ लेख संग्रहीत हैं जिनसे विदित होता है कि यहाँ शान्तीश्वर वसदि, पार्श्वनाथ वसदि एवं चन्द्रनाथ वसदि नाम के तीन जिनालय थे। ले० नं० १७७, १८८, १६१, २०२, २०६ से विदित होता है कि यह स्थान कोङ्गाल्व नरेशों की श्रद्धा एवं विनय का क्षेत्र था। यहां राजेन्द्र चोल कोंगाल्व के समय में एक प्रसिद्ध आचार्य गुणसेन पण्डित थे, जिनके भक्त, उक्त परिवार के सभी लोग थे। उक्त सभी लेख दान या समाधि के स्मारक हैं। ले० नं० ५६० (सन् १३६१) से सिद्ध होता है कि यहाँ चौदहवीं शताब्दी के अन्तिम दशकों तक कोङ्गाल्व राज्य का अस्तित्व था, और वे लोग जैन धर्म के बराबर भक्त थे। इस लेख में चन्द्रनाथ वसदि की पुनः स्थापना का उल्लेख है।

मुगलूर (मुगुलि):—हसन तालुके का यह स्थान होय्सल राज्य में एक समय जैन धर्म का केन्द्र था। प्रस्तुत संग्रह में यहां के चार लेख संग्रहीत हैं जिन से ज्ञात होता हैं कि यहाँ १२ वीं शताब्दी में द्रविड़ सघान्तर्गत नन्दिसंघ अरुङ्ग-लान्वय की गद्दी थी। उस गद्दी के अधिकारी श्रीपाल त्रैविद्य के शिष्य वासुपूज्य देव थे। ले० नं० ३२७ से मालुम होता होता है कि यहाँ होय्सल विष्णुवर्धन के राज्य में एल्कोटि जिनालय नामक एक प्रसिद्ध मन्दिर था। यहीं महाप्रभु पेर्म्मानडि के पुत्र गोविन्द ने बड़ी वसदि बनवायी थी। उस मन्दिर के भट्टारक वासुपूज्य देव को उक्त जिनालय के लिए नारसिंह होय्सल देव ने कुछ भूमि का दान दिया था।

कारकलः—तुलु देश में यह महत्त्वपूर्ण जैन केन्द्र है। इस स्थान का इति-

हाथ हुम्मच के शान्तर वंश के साथ जुड़ा हुआ है। जिनदत्तराय ने ६ वीं शताब्दी में शान्तर राज्य की नींव हुम्मच की राजधानी बनाकर डाली थी और उसी शताब्दी में वह उसे कलस नामक स्थान में ले गया था। ले० नं० ५२२ से विदित होता है कि सन् १२७७ में उक्त राजाओं की राजधानी कलस ही थी। कुछ लेखों से ज्ञात होता है कि चौदहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में शान्तर नरेश अपनी राजधानी कलस से कारकल ले आये थे। इसी शताब्दी में यहाँ के राजाओं पर लिंगायत मत का प्रभाव भी पड़ने लगा था। परन्तु १५ वीं १६ वीं शताब्दी के लेखों से मालुम होता है कि वे जैन धर्म के भी प्रतिपालक थे। सन् १४३२ के एक लेख (६२४) से मालुम होता है कि शक सं० १३५३ के फाल्गुन शुक्ल १२ बुधवार को भैरवेन्द्र के पुत्र वीर पाण्डेयशी या पाण्ड्यराय ने यहाँ बाहुबल की प्रतिमा बनाकर प्रतिष्ठित करायी थी। यह कार्य उन्होंने देशीगण की पनसोगे शाखा में ललितकीर्ति मुनीन्द्र के उपदेश से किया था। ले० नं० ६२७ में वीर पाण्ड्य की मनो कामना पूर्ण करने के लिए ब्रह्मदेव (जिसकी मूर्ति वहीं थी) से याचना की गई है। ले० नं० ६६४ से मालुम होता है कि सन् १५३० में कारकल की गद्दी पर वीर भैररस वोरेयड थे। उसकी बहिन कालल देवी ने कल्लबस्ति के पार्श्वनाथ के लिए अनेक प्रकार के दान दिये थे। ले० नं० ६८० से ज्ञात होता है कि सन् १५८६ में ललित कीर्ति मुनीन्द्र के उपदेश से भैरव द्वितीय ने चतुर्मुख बसदि बनवायी, जिसके दूसरे नाम त्रिभुवनतिलक जिनालय या सर्वतोभद्र भी थे। इस लेख में भैरव द्वितीय द्वारा अन्य अनेकों मूर्तियों की स्थापना का उल्लेख है।

वेणूर:—कारकल तालुके में इस छोटे से गाँव में गोम्मटस्वामी की एक विशाल मूर्ति मिली है जिसकी स्थापना सन् १६०४ में तिम्मराज ने की थी, जो कि प्रसिद्ध चामुण्डराय के वंशज थे। इस मूर्ति की स्थापना श्रवणबेल्गोल के भट्टारक चारुकीर्ति पण्डितदेव की सलाह से की गई थी (६८६, ६९०)।

गेरसोप्पेः—१५-१६ वीं शताब्दी के जैन केन्द्रों में गेरसोप्पे का नाम प्रमुख था। अब तक यहाँ की स्थिति को प्रकट करने वाले अनेकों लेख प्रकाशित हो चुके हैं। प्रस्तुत संग्रह के कतिपय लेखों से उसकी महत्ता पहचानी जा सकती है। गेरसोप्पे के राजवंश का वैवाहिक सम्बन्ध संगीतपुर और कारकल के राजाओं से था। गेरसोप्पे का नाम बढ़ाने का श्रेय वहाँ के राजाओं और जैन नागरिकों को विशेष था। ले० नं० ६७४ में इस नगर का सुन्दर वर्णन है जिससे मालुम होता है कि यहाँ अनेक भव्य जिनालय थे, योगियों के निवास तथा विद्वानों की मण्डली थी। इस लेख से विदित होता है कि सन् १५६० में यहाँ अनन्तनाथ और नेमीश्वर नामक दो विशाल चैत्यालय थे। उक्त लेख में यहाँ के वणिक् वर्ग के धार्मिक कार्यों का उल्लेख है। यहाँ के उदारचेता कतिपय सेट्टियों के दान कार्य का उल्लेख हमें श्रवणबेल्गोल से प्राप्त कुछ लेखों में भी मिलता है। ले० नं० ६६६[1] से विदित होता है कि सन् १४१२ में गेरसोप्पे के गुम्मटण्ण सेट्टि ने यहाँ आकर पाँच वसदियों का जीर्णोद्धार कराया था। इसी तरह ले० नं० ६७१[2] से ज्ञात होता है कि सन् १४१६ के लगभग गेरसोप्पे की श्रीमती अव्वे और समस्त गोष्ठी ने चार गद्याण का दान दिया था। ले० नं० ६७०[3] (सन् १५३६) में चार वातों का उल्लेख है जिनमें गेरसोप्पे के सेट्टियों से लेन देन सम्बन्धी कुछ आपसी समझौतों के उपलक्ष्य में आहार के लिए दान देने की प्रतिज्ञाएँ करायी गई हैं।

मैसूर राज्य से पन्द्रहवीं शताब्दी के अनेक जैन लेखों से ज्ञात होता है कि यहाँ और भी अनेक जैन केन्द्र थे जैसे सरगूरु (६१८) मोरसुनाड् (६२१), निडगल्लु पर्वत (४७८, ६३७) यिडुवणि (६४६) वोगेयकेरे (६५५) आदि।

---

१. प्रथम भाग, १३१

२. प्रथम भाग, १३५

३. ,, ६६–१०२

कर्नाटक प्रान्त के अन्य कई जैन केन्द्रों का नाम इन शिला लेखों से विदित होता है जैसे नन्दिपर्वत (११४), तडताल (२३२), चामराज नगर (२६४), कैदाल (३३३), एलम्बल्लि (३४९), नित्तूर (४३६–४४१, ४६६), हिरिय-महालिंगे (४३८) कुन्तलापुर (४४९), सोरब (४५७), जोगमत्तिगे (५२१), कलव (५२२), होन्नेयनहल्लि (५५१), हरवे (६५२) आदि।

(ई) तामिलदेश के अनेक जैन केन्द्रों में से केवल तीन स्थानों के लेख प्रस्तुत संग्रह में संग्रहीत हो सके हैं।

वल्लीमल्लै:—यह स्थान उत्तरी अर्काट जिले के वन्दिवास तालुका में है। यह ९–१० वीं शताब्दी में जैन धर्म का केन्द्र था। यहां गंगराजा शिवमार के प्रपौत्र, श्रीपुरुष के पौत्र तथा रणविक्रम के पुत्र राचमल्ल सत्यवाक्य ने इस स्थान को अपने अधिकार में करके एक मन्दिर बनवाया था (१३३)। यहां किसी वाणवंशी राजा के गुरु देवसेन की प्रतिमा स्थापित की गई थी। ये देवसेन भट्टारक भवणन्दि के शिष्य थे (१३६)। इस प्रतिमा की स्थापना एक जैन मुनि श्री अज्जनन्दि भट्टार ने की थी (१३५)। यहां से प्राप्त एक दूसरी प्रतिमा के लेख से मालुम होता है कि ये अज्जनन्दि भट्टारक बालचन्द्र के शिष्य थे और इन्होंने गोवर्धन भट्टारक की प्रतिमा की स्थापना की थी (१३४)।

पञ्चपाण्डवमलै:—इस स्थान से प्राप्त दो लेखों में से एक (११५) से ज्ञात होता है कि पल्लव राज नन्दि पोत्तरसर (नन्दि) के ५० वें राज्य संवत्सर में पोन्नियक्कियार नामक यक्षी और नागनन्दि गुरु की एक पाषाण पर मूर्ति खुदवायी गई थी। ले० नं० १६७ से विदित होता है कि अपनी रानी की प्रार्थना पर वीर चोल ने तिरुप्पानमलै देवता के लिए एक गांव की आमदनी बाँध दी पर लेख पलिच्चन्दम् शब्द से मालुम होता है कि यहाँ एक प्रसिद्ध जैन बसदि थी। ये दोनों लेख ९ वीं, १० वीं शताब्दी के हैं।

तिरुमलै—उत्तरी अर्काट जिले में यह स्थान ११ वीं शताब्दी के प्रारम्भ से ही जैन केन्द्र रहा है। इस नाम का अर्थ पवित्र पर्वत होता है। यहाँ सन्

१००५ ई० में चोलराजा राज प्रथम के २१ वें वर्ष में एक जैन मुनि गुणवीर ने अपने काव्यादि कला में विशारद गुरु गणिशेखर के नाम पर एक नहर या मोरी बनवायी थी (१७१)। दूसरे लेख नं० १७४ से ज्ञात होता है कि राजेन्द्र चोल प्रथम के १२ वें राज संवत्सर में मलियूर के एक व्यापारी की पत्नी ने तिरुमलै में एक जैन मन्दिर की पूजा और दीपक के लिए दान दिया था इस मन्दिर को राजराज चोल की पुत्री कुन्दवै ने बनवाया था इसलिए इसका नाम कुन्दवै जिनालय था। ले० नं० ४३४ से विदित होता है कि इस पर्वत को अर्हसुगिरि (अर्हत् का पर्वत) कहते थे जिसका तामिल नाम एणगुणविरै तिरुमलै (अर्हत् का पवित्र पर्वत) कहा गया है। यहाँ चेर वंशके राजा अतिगैमान् ने केरल नरेश द्वारा संस्थापित यक्ष यक्षिणी की प्रतिमाओं का जीर्णोद्धार कराकर प्रतिष्ठापित किया था और एक घण्टा दान में दे यहाँ मोरी बनवायी थी। ले० नं० ५५७ में उल्लेख है कि राजनारायण शम्बुवराज के १२ वें वर्ष में पोन्नूर निवासी मएडै पौन्नाण्डे की पुत्री नल्लाताल ने एक जैन प्रतिमा की प्रतिष्ठापना की थी। इसी तरह ८३१ वें लेख में उल्लेख है कि परवादिमल्ल के शिष्य अरिष्टनेमि आचार्य ने एक यक्षी की प्रतिमा बनवाकर स्थापित की थी।

(उ) आन्ध्र देश में जैन धर्म का आगमन संभवतः कलिंग देश से हुआ था वह भी ईशा की दो शताब्दी पूर्व जैन सम्राट् खारवेल के समय में। पर शिलालेखों से जैनधर्म के केन्द्रों के प्रमाण ७ वीं शताब्दी से ही मिलते हैं। इस शताब्दी में यहां जैन धर्म को प्रश्रय कतिपय पूर्वी चौलुक्य नरेशों ने दिया था। प्रस्तुत संग्रह में केवल दो केन्द्रों के लेख ही आ सके हैं।

ले० नं० १४३ से ज्ञात होता है कि नेल्लोर जिले के ओंगले तालुका में मल्लिय पूण्डि ग्राम में कटकाभरण नाम का एक प्रसिद्ध जैन मन्दिर था इसे कृष्णराज के पोत्र दुर्गराज ने बनवाया था। यह स्थान यापनोय संघ नन्दि गच्छ

१. संभव है वह राजा राज राज चोल तृतीय का समकालीन था।

का प्रमुख केन्द्र था मन्दिर के अधिष्ठाता वीरदेव मुनि थे जो कि जिननन्दि के शिष्य थे। उक्त जिनालय के लिए मल्लियपूण्डि ग्राम दान में दिया गया।

इसी तरह अत्तिलिनाड् में कलुचुम्बरु नामक स्थान में एक सर्वलोकाश्रय जिनालय था। ले० नं० १४४ से ज्ञात होता है कि सन् ६४५ से ६७० के लगभग पूर्वी चालुक्य अम्म द्वितीय (विजयादित्य षष्ठ) ने उक्त जैन मन्दिर की भोजन शाला की मरम्मत के लिए दान दिया था। यह दान पट्टवर्धिक वंश की श्राविका चामेकाम्बा की ओर से उसके गुरु अर्हनन्दि को दिलाया गया था। ये मुनि वलिहारिगण अड्डकलि गच्छ के थे।

गुलाबचन्द्र चौधरी

सहायक ग्रन्थ निर्देश

१. पं० नाथू राम प्रेमी, जैन साहित्य और इतिहास, प्रथम, द्वितीय संस्करण, बम्बई.

२. डा० हीरालाल जैन, जैन शिलालेख संग्रह, प्रथम भाग, बम्बई १६२८

३. डा० अनन्त सदाशिव अल्तेकर, राष्ट्रकूटाज् एण्ड देयर टाइम, पूना, १६३४.

४. डा० भास्कर आनन्द सालेतोरे, मेडीवल जैनिज्म, बम्बई, १६३४.

५. डा० दिनेशचन्द्र सरकार, सक्सेसर आफ सातवाहनाज्, कलकत्ता, १६३६.

६. डा० वे० मा० बरुआ, ओल्ड ब्राह्मी इन्स्क्रिप्सन्स्, कलकत्ता, १६२६.

७. डा०मजूमदार और पुसलकर, एज आफ इम्पीरियल यूनिटी, बम्बई १६५१.

८. ,, ,, क्लासिकल एज, बम्बई, १६५४

९. डा० गुलाबचन्द्र चौधरी, पोलिटिकल हिस्ट्री आफ् नार्दर्न इण्डिया फ्राम जैन सोर्सेज (७-१२ वीं शताब्दी), बनारस (अप्रकाशित)

१०. रावर्ट सेवेल और कृष्णस्वामी आयंगर, हिस्टोरिकल इन्स्क्रिप्सन्स आफ सदर्न इण्डिया मद्रास, १६३२.

११. एम० आर० शर्मा, जैनिज्म एण्ड कर्नाटक कल्चर, धारवाड, १०४०

१२. प्रो० नीलकण्ठ शास्त्री, हिस्ट्री आफ साउथ इण्डिया, आक्सफोर्ड १६५४

१३. विलियम कोल्हो, होय्सल वंश, बम्बई, १६५०

१४. दिनकर देसाई, मण्डलेश्वराज् अण्डर दि चालुक्याज् आफ कल्याणी, बम्बई, १६५१

१५. वेंकट रमनय्य, ईस्टर्न चालुक्याज आफ वेंगी,

१६. मुनि दर्शन विजय जी, पट्टावली समुच्चय, प्रथम भाग, वीरमगाम, १६३३

१७. त्रिपुटी महाराज, जैन परम्परानो इतिहास, अहमदाबाद, १६५२

१८. प्रेमी अभिनन्दन ग्रन्थ, टीकमगढ़ १६४६

१९. जैन सिद्धान्त भास्कर, आरा, भाग १—२१

२०. अनेकान्त, देहली, १—१०

२१. इण्डियन एण्टीक्वेरी

प्रस्तावना का शुद्धिपत्र

[इसमें केवल उन्हीं अशुद्धियों का निर्देश किया गया है जो कुछ महत्त्व की है। इसके सिवाय जो अशुद्धियां बिन्दियों, मात्राओं और अक्षरों के टूट जाने से तथा यत्र तत्र विरामादि चिन्हों के आ जाने से हुई हैं उन्हें पाठक स्वयं सुधार लेने की कृपा करें।]

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
७	६	उक्त तथा अन्य	उक्त तथा अन्य सामग्री
१४	२३	स्थावरावली	स्थविरावली
१५	२६	कावच्छुलिय	का वच्छुलिय
२१	२३	की संभावना कि	की संभावना है कि
२३	१२	कुर्त्तक तथा सम्प्रदायों	कुर्त्तक सम्प्रदायों
२६	११	इन संघ	इस संघ
२८	१	वहीं नाग	वही नाम
३०	१६-२०	रूप (बलात्कार)	रूप बलात्कार
४५	२५	एन्टीम्बेरी	एएटीक्वेरी
४७	२६	भाग, पृष्ठ	भाग १, पृष्ठ
६३	६	लेख नहीं हैं	लेख नहीं मिलते
७०	६	प्रनिनिधि	प्रतिनिधि
७०	१८	यह नया पाठ	एक नया पाठ
७४	१६	३५७-५५८	३५७-३५८
८१	१६	संरक्षक	संरक्षक थे
९१	२१	उल्लेख या	उल्लेख है
९६	२३	वड़ा उग्र	वड़ा उग्र
[illegible]	२३	उच्छृङ्खल	उच्छृंखल
१०४	६	स्वीकार किया था।	स्वीकार किये था।

जैन-शिलालेख-संग्रह

तृतीय भाग

३०३

श्रवणबेलगोला—संस्कृत।

[कालनिर्देश रहित]

[जै० शि० सं०, प्र. भा.]

३०४

श्रवणबेलगोला—संस्कृत तथा कन्नड़।

[कालनिर्देश रहित]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

३०५

बेलूर—कन्नड़।

[शक १०५१ = ११२७ ई०]

[ग्रामर्में, सौम्यनायकी मन्दिरकी छतके पत्थरपर]

(ऊपरका भाग नष्ट)

..........................प्रनाव ॥

मंगळोलान्...अरलियर क्रिडु दगुले तगुल्दन राज्यमाने...।

वेङ्गिरिगला-वर्गी-मागदोत् नादे नरसिंगन वधू-निकरमं पहेडु...द्।

अङ्गरजनिकि दिडे सिङ्गलिकनं तुलिडु गङ्गरनत मगुलडुतर-वरित्री।

रंगद नृपालरनसुङ्गोलेनेरेगङ्ग-नृप-नन्दननवार्यंतर-सौर्य्यम् ॥
अन्तुत्तर-दिग्विजयमुत्तरोत्तरमागि सले ।
अतिदीर्घ-घ्राण-हस्तं निशित-दशन-दंष्ट्राङ्कुरं पत्त-रत्ता-।
यत-पत्त' तार्क्ष्यनन्तोवगिसि तुळिये तन्नाने **पाण्ड्या**वनीभृत्-।
पूतना-विध्वंसनोपार्जित-जय-वधुवं विष्णु तुच्छाजि-लज्जा-।
स्मितनान्तं **चोल-गौड़ा**सुर-समर-जय-श्री-समालिङ्गिताङ्गम् ॥
अन्तु **पाण्डयनं** वेङ्कोण्डु **नोलम्बवाडियं** कैकोण्डु ।
सेण्डिन तेरदिं निज-दोर्-दण्डदिनुच्चोटिसि पोलेयलुरुचाङ्गियना-।
खण्डल-विभवं त्तणदिं । कोण्डं श्री-कञ्चिगोण्ड-विक्रम-गङ्गं ॥
तदनन्तरं **तेलुङ्ग-देश**क्केति ।
गज-घटे वेर्र**सिन्द्र**···। भुजित-यशो-धनमुमुन्न कुल-धनमुमना-।
विजिगीषु कवदु' कोण्डं । विजय-स्तम्भंगळे सेयलेण्-देसेळोलळम् ॥
तदनन्तरं राष्ट्र-कण्टकनप्प **मसणन** निर्म्मूल-प्रळयक्के सलिसि
वनवसेपन्निर-च्छासिरमुमं कडितवके वरिसे ।
तिरिकिल्लादुवु **विष्णु**-भूभुज-भुज-श्रीगावगंपे म्पिनोल् ।
नेरेदा-**सह्य**-नगेन्द्र-**नील**·············गळ् ।
पेरतेना-भुज-लक्ष्मिगी-नेगल्द-**पानुङ्गल्** मुहूर्त्तार्द्धदिं ।
किरिदानुम्मिडिवट्टेनल् मिळिर्दु कैसार्त्तप्पुदावद्भुतम् ॥
······त्रिजनपर·········**नाथ किसुकल्ल** कोळननाळोकन मात्रदो
कोण्डु **जयकेसियं** वेंकोण्डु **पलसिगे-पन्निर्-च्छासिर् मुमं**··········नूरु
निक्कु'····डु ।

मगु-मगुळदु पोक्क दुर्ग्गम-। नागळगल्दा-वार्द्धि-वेरगमड्डु' तिगट' ।
तगु-तगुल्दु कोण्डनोवदे । जग-विरुदरनरसि **विष्णुवर्द्धन-देवम्** ॥
पेसर्गोण्डावाव-देशङ्गलनेणिसुवदावाव-दुर्ग्गङ्गळ' वण्-।
णिसि पेलुत्तिप्पु' डावाववनिपतिगळ' लेक्किसुत्तिप्पु' देम्बोन्द् ।

ऐसेकं कैगण्मे नाल्कु-कडल तडि-वरं दिग्जय-कीडेयोळ् साधिसिदं भू-लोकमं
क्षत्रिय-कुल-तिलकं वीर-**विष्णु**-क्षितीशम् ॥

आ-महा-क्षत्रियं समधिगतपञ्चमहाशब्द महामण्डलेश्वरं **द्वारावतीपुरवरा**-
धीश्वरं यादवकुलाम्बरद्युमणि मण्डलिकचूडामणि श्रीमदच्युतपदाराधनलब्धविष्णु-
प्रभावं दिक्पालकपराक्रमाक्रमणतुपराक्रमैकस्वभावं शत्रुक्षत्रियकलत्रगर्व्वसर्वस्वापहारक-
गमीरविजयशङ्खनादं **वासन्तिकादेवि**लब्धवरप्रसादं समनुगृहीताहितमहीकान्त-
कामनीजनमुखनिरीक्षणकृतदृष्टिनिरीक्षणं सकलजनसत्यनिश्चयाशीर्व्वादसामर्थ्यसम्पादित-
कल्याणपरम्पराभिवृद्धियुक्तं दुर्द्धरसमरकेलिवंलक दोर्व्वलावलेपं तुरुष्कालाश्वपति-गज-
पति-प्रमुख-राज-लोक-निर्द्दयनिर्द्दलनोपार्ज्जिताश्व-गजादि-नानाविध-रत्न-निचयचक्रवर्त्ति-
राज्य-लक्ष्मी-विलासं सर्व्वदानिवासन् । **चोल-कुल-प्रलय**-भैरवं । **चेरम**-तम्बेरम-
राज-कण्ठीरवन् । **पाण्ड्य-कुल**-पयोधि-वडवानलन् । **पल्लव**-यशो-वल्ली-पल्लव-
दावानलन् । **नरसिंहवर्म्म**-सिंह-शरभन् । निश्चल-प्रताप-तीव्र-तापित-**कलपा**-
दि-नृपाल-शलभन् । **वङ्गाङ्गकलिङ्ग-सिंहल** नृपाल-कुरङ्ग-कुल-पलायन-कारण-
कठोर-विजय-धनु-र्दण्ड-टङ्कारम् । सकल-रिपु-नृप-कुल-दलन-जनित-जयालङ्कारन् ।
निजाज्ञा-चण्ड-डिण्डिमनाडम्बरालंकृत **काञ्चीपुर** स्वग्रहचेतोनियोगयोग्यक्षितिपनृपान्तः
पुरकरतलकोडीकृत **दक्षिणमधुरापुरम्** निजसेनानाथनिर्द्दलित-**जिननाथ**-
पुरम् । जगद्-दारिद्र्य-विद्रावण-प्रवीण-कारुण्य-कटाक्ष-निरीक्षणन् । प्रसन्न-पद्मे-
क्षणन् । चतुस्समुद्र-मुद्रित-वसुमती-मनोहर-लक्ष्मी-वल्लभम् । मत्त-लोम-दुर्ल्लभं,
नामादि-समस्त-प्रशस्ति-सहितन् श्रीमत् कञ्चि-गोण्ड-विक्रम-गङ्ग-वीर-**विष्णुवर्द्धन**-
देवर **गङ्गवाडि**-तोम्भत्तर-सासिरमुं **नोणम्बवाडि**-मूवत्तिर्-च्छासिरमुं बनवसे-
पन्निर्-च्छासिरमुं दुष्ट-निग्रह-शिष्ट-प्रतिपालन-पूर्व्वक-मेक-च्छत्र-च्छायेयिं रक्षिसि
सुखसंकथाविनोददिं राज्यं गेय्युत्तमिरला-क्षत्र-कुल-कुलाचल-चक्रवर्त्तिय पादमूल-
प्रभूतनुं तत्कारुण्यामृतरसप्रवाहपरिवर्द्धितनुमागि ।

प्रेक्षरं वेसेसलुम्बेर्व्वरिदु बलदु शास्त्रानुशास्त्रालि नीलुडेण् देसेगं तलुतोप्पें सर्व्व-
र्चक-सकल-फलैश्वर्य्यदि लोकमं रक्षिसुतिर्क्का-पूर्ण-चेतोरथ-युत-कमळा-कल्पवल्ली-
विलासालसथं श्रीविष्णु-दण्डाधिप-द्विज-कुजातं विपश्चिद्विनुतम् ॥ सम-

सन्दक्षुण्ण-पुण्योदयमुदय-नगारुढ़-भानु-प्रभा-विभ्रमदिन्दं निन्त्र-निन्दं ' पोसपिसे कमलानन्दमं विश्व-नेत्रोपमनेन्दु' तेजदिन्दं वेलेगुगुमेलेयं विष्णु **विष्णु**-क्षितीश-क्रम-पङ्के जात-भृङ्गं नृपल-रिपु-चमू-नाथ-मत्तेभ-सिङ्गम् ॥ अभिरामाकारदिन्दप्रतिम-भुज-कलाटोपदिन्दप्रमेय प्रभु-मन्त्रोत्ता (त्सा) ह-शक्ति-त्रितयदिनमर्दुत्साहदिं विष्णु-भू-वल्लभ-सताङ्गकवाळम्बनवेने नेगल्दक्षुण्ण-पुण्याढ्यनेक प्रभुवा ' ' विष्णु-दण्डाधिपनखिल-बुध-प्राण-रक्षा-प्रवीणम् ॥ परिपूर्ण्णेन्दु-प्रभा-विभ्रमदोलमर्दु गङ्गा-पगा-स्फार-रूप-विस्तरमं तल्कय्सि दुग्धार्ण्णव-नव-रुचियं तालिद नीलदप्पु-दादम् । धरेयी-दिक्-चक्रदिं मन्दर-शिखरदिनत्तल् वियन्मण्डपाग्रं । वरेगं श्री **विष्णु**-दण्डाधिप- विपुल-यशः- कल्प-वल्ली- विलासं ॥ स्वस्ति समस्तभुवनभाग्योदयोत्पन्नं नयविनयवीरक्षितरणादिगुणसम्पन्नं श्रीमदर्हत्परमेश्वरपदपयोजषट्चरणं विपश्चिज्जनैक-शरणं **काश्यपगोत्र**शतपत्रवनमित्रं चमूप-चूडारत्नं **चिण्णम**-प्रिय-पुत्रं श्रीमत्ता-र्किकचक्रवर्ति- **वादीभसिंहा**-परनामधेय - **श्रीपाल-त्रैविद्य-देव**-पादाराधनालब्ध-सरस्वतीप्रभावसर्व्वस्वं चातुर्य्य चतुराननं समस्तशास्त्रविद्यावडाननं सकलशुभलक्ष-णोपलक्षिताक्षय-सौभाग्य-भाग्याभिरामं रूपनिर्ज्जितकुसुमचापं विरोधि-वीर-भट-भयङ्करं । पर-दुराप दुर्द्धर-प्रताप पञ्चाङ्ग-मन्त्र-प्रपञ्चाञ्चित-साचिव्य स्वयम्बुद्ध चतु-रुपाधाविशुद्ध नाना-नयोपाय-प्रावीण्य प्रत्यक्ष-योगन्धरायण । **विष्णुवर्द्धन-देव**-प्राज्य-राज्य-भर- सन्धारण-परायण । स्वामि-भक्ति-युक्त-वैनतेय । स्वामि-हिताञ्जनेय श्रीमत्कञ्चि-गोण्ड-विक्रम-गंग-**विष्णुवर्द्धनदेव**- प्रसादासादित-द्विगुण-प्रतिपत्ति-प्रति-ष्ठित-महा-प्रचण्ड- दण्डनाथ-पदवी-पद-राजितललाट-पट्ट । निज-विजय-भुजा-दण्ड-निर्लोठित-रथ-तुरग-करि-घटा-घटित-समर-संघट्ट । **मासार्द्ध-सिद्ध-दक्षिण-दिग्जय** दुर्द्धरावस्कन्द-केली-निर्म्मूलित--पारावार--तीर-वीर-राजसमाज- सर्व्वस्वापहरण-समायात-मातङ्ग-घटा-समर्पण-सम्पादित- स्वामि-सर्व्वाङ्गपुलक । दण्डनाथ-मण्डली- मण्डन-माणिक्य-तिलक निज-प्रताप-निर्द्दग्ध-**रायरायपुर**- शिखी-शिखा-कलाप- सन्तापित **चेर-चोल-पाण्डय-पल्लव**- नृपान्तरङ्ग । **कोङ्ग**-वज्र-मस्तक-मस्तिष्क- कुसुमोप-रञ्जिताजि-रङ्ग । **सह्याचल**-तिलकायमान-दक्षिण-दिग्जयोत्तम्भित-पति-जय-स्तंभ । सदा-समालिङ्गित-लक्ष्मी-कुच-कुम्भ । समस्तराज-कार्य्य-भर-सहिष्णुता-स्वभावसार

संग्रामधीर। यदु-कुल-श्रीहर निट्टेलुव मुरिवं मनदिं मुनिरिव। **विष्णुवर्द्धन-देव** दक्षिण-भुजा-दण्डं मनदोलु मच्चरिपर गण्डं। नामादि-समस्त-प्रशस्ति-सहितम् श्रीमन्महाप्रधान **निम्मडि-दण्डनायक-बिट्टियण्णं** सर्व्वाधिकारियुं समस्त-जनोपकारियुमागि सुखमिरे। बिरुदर्म्मीरायरायोंनिरे जगदोलगा- कोङ्गितोल् कदमंताल्वरितं नीनिन्दु तन्नं नृपति बेसले पत्नार्द्धदोल् युद्धदोल् चेङ्-गिरियं बेङ्कुएड्डु तत्पट्टणमनुरिदिं तद्धात्रियं सूरेगोण्डच्चरि कप्पं गोण्डु तण्डं मद-गज-घटेयं **विष्णु**-दण्डाधिनाथं॥ मगर्वातं कोङ्गु गोळवं गड गज-घटेयं तर्प्पनीतं गडं पोन्-नगेयेन्दुदण्डकं नरिसे पर-नृपं कादि देङ्कोण्डु कोङ्गम्। कानुन्कोट्टतळज् साधिसि गज-घटेयं तन्न बाहा-बळं कैमिगे तण्डाळदंगति प्रीतिय-नोदविनिदं विष्णुदण्डाधिनाथं॥ निपर्ंशरतम्म-नम्मिडेयोळ गदडङ्गिम्पिनं **चोल-**लाळादिगळारं-गोण्डु दुर्माश्रयदोले सकलरं भयं-गोण्डु गोलुण्डे-गोलुत्तिर्म्पिन-मन्मोनिधि-निकट-र्नाद्पालरं विष्णु-विक्रान्त-गुणं कैगण्ने वेङ्कोण्डदटनवर सर्व्वमं गोण्डन्॥ अरिदुदु **रायरायपुरवा**-पुर-वह्नि-शिखा-कलापवा-। परिदुवे कञ्चि-मत्तलेनुतं नडे नोडुव **चोल-चेर-पाण्ड्यर** बंयोल् धिगिल्लेने नमूप-शिखा-मणि-र्दार-विष्णु-कतर-प्रताप-शिखी नीलदु पोडलुपदगुव्वुं पश्चिरल्॥ अनुपम मत्वो...ता-। ने नेगळतेयनान्त नल्लनेरडुं-कुलनुं। जननी-जनकर पोरदाल्-। दन पेम्पुं पेसरुमं नेगल्तिनातं॥ आतनन्वय-क्रममेन्तेदोडे। भगवदादि-ब्रह्म-निर्म्मित-मप्प युगावतारदोळु कश्यप-प्रजापतियिं पवित्रमाद **काश्यप**-गोत्रदोळु कृत-कृत्यरं सिद्ध-साध्यसमरर महान्मरलेकरिं बलिकववर पोगर्त्तेगं नेगलतेगं ताने नेलेयागि।

पदनन्तुत्तुंग-गोत्राचल-शिखरदोलोप्पुत्तिरल् तन्न नित्या-
भ्युदयं भू-मण्डलोत्साहमनोदविसे सानन्द-स-स्मेर-लक्ष्मी-
वदनाब्ज-श्रीयोलोप्पम्बडेये निज-विलासं जगद्वन्द्यमादत्त्।
उदयादित्य-प्रभावं प्रकटित-भुवनाभोग-तेजो-विलासम्॥
आतन कुल-वधु भुवन-ख्याते जगत्नूते भाग्य-सौभाग्य-गुणो-
पेते मनोभव-विभव-स-मेतेपेनल् **शान्तियक्क**नोर्व्वले नोन्तल्॥

आ-दम्पति-गल भाग्यदि। नादं सत्पुत्रनात्म-गोत्र-पवित्रम्।
मेदिनिगे ताने सुर-तरु-। वादं श्री-**चिण्ण-राज-दण्डाधीशम्** ॥
परम ब्राह्मण्य-प्रभावं मनुज-परिवृढाकारमं तालिद्-तेम्बन्।
तिरे धरोदात्त-सत्वोन्नति योलमदु नाना-गुणानर्ग्घ-रत्नो ॥
त्करमं रत्नाकरं तानेने तलेदेरेयङ्गावनीनाथ-धात्री -।
भरभं तालिदर्द्दनेक-प्रभुवेने भुवनं **चिण्ण**-दण्डाधिनाथं ॥
आ-विभुविन मनोवल्लभे।
कुलद पोगल्ते शीलद नेगल्ते मनोभव-राज्य-लक्ष्मियं ॥
निलिसिद गाडिलोकदोंलगावगवी-मिगिलन्ददिन्दवग्-।
गलिसिद रूढ़ि तन्नोलमदोंप्पिरे **चिण्ण**-चमूप-कान्ते **चन्**-॥
द्ले नेरे तालिददल् धरेगगुण्डलेयप्प गुण-प्रभावमम्।
फणि-पतिगं वचो-विषयमल्लवु भाविसे चण्डियक्कनोल-॥
गुणमन्तु निष्कलंक-निज-रूपदो-लोप्पिरेयुं पोगलतेपोल्।
तणिपदे धात्रि **लक्ष्मी रति भारति रेवति सत्य भामे रुग्-**
मिणि भुवन-प्रणूते धरणीसुते पेम्वुदु लोकमाकेयम्।
अवर्गे मगं महा-बल-पराक्रमनन्वय-भूषणं मनो ॥
भव-निभनन्य-सैन्य-विपिन-प्रलयानलनर्त्थि-कल्प-पार्।
त्थि-वनेने रूढ़ि-**बेत्तुदयणं** नेगल्दं भुवन-प्रणूत-**या**- ॥
दव-नृप-राज्य-वारिनिधि-वर्द्धन-पार्व्वण-शार्व्वरीकर [म्]।

आ-पुण्य-भाजननिं बलियं पलवु स्त्री-रत्नंगलं पडेदु मत्तमोर्व्वं महाबल-पराक्रमनुं पुण्य-निधियुमप्प मगनं पडेयलु जिन-महा-महिमेगलं माडि वयसुतिर्प्पा-पुण्यवतिगे।

पुट्टिदनप्पुं कूर्प्पुं नेट्टने तन्नोडने पुट्टे रिपुगलगेभयं।
पुट्टे निज-पतिगे चक्रं। पुट्टिदुदेने **विष्णु** सु-भट चूड़ारत्नम् ॥
अन्तु पुट्टि।

कुवलयमेय्दे तन्नुदयदिं परितोषमनेय्दे विश्व-वान्-।
धव-जन-लोल-लोचन-चकोर-चयं निज-देह-कान्तियिं ।
तवदनुरागमं तलेये **काश्यप**-गोत्र-पवित्रनेलगे वा-।
डिवडेल- दिङ्गलन्तनुदिनं वलेदं पिरिदु-विभूतियिम् ॥

अन्तु समस्त-गुणङ्गकुमोदवलेयिं वलेवुदुमन्वयागत-प्रधानसन्ततियुं तनगे धर्म्म-सन्ततियुमेम्ब वहुमानदिं श्रीनरूञ्चिगोण्ड विक्रम-गंग-**विष्णुवर्द्धन**-देवं पुत्र-समान-मागे कैकोण्डु नडपि महोत्सवदिनुपनपनोत्सवमं ताने माडे सप्ताष्ट-संवत्सरान्तरदोल् समस्त-शस्त्र-शास्त्र-प्रवीणनागे सकल-शुभ-लक्षणोपेतेयुमभिजातेयुमप्प निज-प्रधान दण्डनाय-पुत्रियं कन्या-रत्नमं तन्दा-**विष्णुवर्द्धनदेवं** ताने कनक-कलशवनेत्ति कै-नीरेरदु कन्या-दान-फल-परितुष्टनागे विवाहकल्याणमनचूण-मनोरथमं तलेदु दशै-कादश-वर्ष-प्रायदोले कुशाग्रीय-वुद्धि-समर्त्थनुं चतुरुपधा-विशुद्धनुमादुदं कोण्डु कोण्डाडि **विष्णुवर्द्धनदेवं** तन्न श्रीहस्तदिं द्विगुण-प्रतिपत्ति-पूर्व्वकं 'महा-प्रचण्ड दण्डनाय'-पट्टमं कट्टि समस्ताधिकारमुमं कुडे 'सर्व्वाधिकारियु'[1] सकळ-जनोपकारियु-मागि ।

अनुपममप्प दिग्विजयदिं जयनोल् पडियागि वल्पिनिं ।
तनगपराजितत्वमजवत्तिरे तेजदलुर्क्कियिं काल् ॥
जनमनुरागदिन्दमित-तेजनेनल् क्रम-विक्रमाङ्कलिम् ।
नेनेयि [नु] वं पुरातनमहाम्मर**निम्मडि-दण्डनायकम्** ॥

आतनारूढ-यौव्वननागि समस्त-नियोग-युक्त-सा......र्दमननुभविसुत्तुं महा तीर्थ-स्थानङ्गलोळनून-धर्म्ममं माडिसि श्रीमद्-यादव-राज्य-राजधानी-दोरसमुद्रदोल् ई-**विष्णुवर्द्धन-जिनालयवं** मा......महा-पुरयन गुरु-कुलमेन्तेन्दडे श्रीवर्द्ध-मान-स्वामिगळ तीर्त्थदोलु केवलिगलु रिद्धि-प्राप्तरुं श्रुत-केवलिगलुं पलरुं सिद्ध-साध्यरागे तत्...........र्य्यमं सहस्र-गुणं माडि **समन्तभद्र-स्वामिगलु**

---

1. राजभक्ति, निस्पृहता, संयम (Contineous) और धैर्य ।

सन्दरवरिं बलिक तदीय-श्रीमद्-द्रमिल-संघाग्रेसररप्प **पात्रकेसरि-स्वामिगलिं वक्र-ग्रीवाभि**......रिन्दनन्तरम् ।

यस्य दि............न् कीर्त्तिस्त्रैलोक्यमप्यगात् ।
येन स भात्येको **वज्रनन्दी गणाग्रणी** ॥

अवरिं बलिक **सुमति-भट्टारक**रवरिं बलिक...**समय-दीपक**............रं उन्मीलित-दोष-क.........रजनीचर-बलमुद्बोधित-भव्य कमलमादत्तुज्जित**मकलङ्क** प्रमाण-तपन स्फु......॥ अवरिं बलिक **चक्रवर्त्ति-भट्टारकरवरिं** बलिक **कर्म्म-प्रकृति**.........वरिं बलिक पल्लवन गुरुगलु **विमलचन्द्राचार्य्य**रवरिं बलिक **परिवादिमल्ल**-देवरवरिं बलि **कनकसेन** श्री-**वादिराज-देव**रवरिं बलिक गंग कुल-कमल-मार्त्तण्डनप्प **बुतुग-पेर्म्माडिय** गुरुगलु श्री-**विजय-भट्टारक**रवरिं बलिक चक्रवर्त्ति-**जयसिंह**-देवन गुरुगलागि ।

गत-सर्व्वज्ञाभिधानं सुगतनयगताम-प्र...दं **कणादं** ।
कृत-नीति-भ्रान्ति-नश्यन्-निज-नय-नयनालोकनं सन्द **लोका-**
यत निन्नी-मर्य्य-मात्रंगल नुदिगलोलवेम्बिनं मारि लोकोन्-
नतमाप्तर्हन्मताम्भोनिधि...विभवं **वादिराजेन्द्र**-भावं ॥

अवरिं बलिक यादवान्वय-चूडामणियप्पेरेयङ्ग-देवङ्गे गुरुगलुं जगद्गुरुगलु-मेनिसि ।

चरणानुस्मरणा......य-निकरक्किष्टार्त्थ-संसिद्धियं ।
तर् वाचं ग्रहणं कुमार्ग-युत-वादि-व्रातमं तूलं दुर्-।
धर-चारित्रद दुर्जयोर्ज्जित-बल-श्रीयोलपु तम्मोल् मनो-
हरमागल् तलदर्म्मन्त**जितसेन स्वामिगल्** कीर्त्तियं ॥ अवर सधर्म्मरु ।

कन्तुवनान्तु मेय् देगेयदोडिसि दुर्म्मद-कर्म्म-वैरि-वि-।
क्रान्तमनेऽदे भञ्जिसि लसत्परमागम-विस्त्वदिन्दिदा- ।
नीन्तन-**तीर्त्थ-नाथरेने** रुढियनान्त **कुमारसेन-सै-**
द्धान्तिक रादमुज्वल...जिन-धर्म्म-यशो-विलासमम् ॥

अवरिं बलिक **श्रीमदजितसेन-स्वामिग**लग्र-पुत्ररुं जगत्पवित्ररुमागि ।

तले सन्द योग्यतेयनग्गलिसिद दुर्द्धर-तपो-विभूतिय पेम्पिम् ।
कलियुग-गणधरेन्दुट्ट नेलनेल्लं **मल्लिषेण-मलधारिगलं** ॥

अवरि बलिक **अकलंक**-सिंहासनमनलंकरिसि तार्किकचक्रवर्त्तिगलु **वादीभ-सिंह** रुमेम्ब पेसरेसेये ।

अवसर्पिण्यर्द्धदिन [दि] तुलुगडे जिन-नीनूत-नंवात-मी भू-
भुवनन् तेङ्काडुवन्नं तुरिद सकल-विद्या-नादि-सूरदिन्तीं ।
वि विपरिन्चत्तापसन्तापमनुडुगिहुतिर्द्दप्युदादं मुनीन्द्र- ।
प्रवर-**श्रीपालयोगीश्वर** नेनिय ज्ञान्-सार्थकृन्-पुण्य-तीर्थं ॥
आवन विषयनो षट्-तर्क्कविल-बहु-भंगि-संगतं **श्रीपाल**- ।
त्रैविद्य-गद्य-पद्य-वाचो-विन्यासं निसर्ग-विजय-विलासन् ॥

अन्तु जगद्गुरुगलेनिसिद **श्रीपाल-त्रैविद्य-देवर** कालं कर्च्चि **श्रीमद्-म्मडि-दण्डनायक बिट्टियण्णनो**-वसदिय खण्ड-स्फुटित-जीर्णोद्धारक देवता-...नामिल्लिर्प रि(ऋ)षियनुदायदाहारदानकं **शक-वर्ष १०५६ नेयनल-संवत्सरदुत्तरायण-संक्रान्ति** यन्दु **श्रीविष्णुवर्द्धन-पोय्सल देवर** श्री हस्तदिं धारेयेरेसिसि परमेश्वरदत्ति माडि बिडिसिद ग्राम **मय्से-नाड बीजे-बोललदर** सीमान्तर (आगेकी ६ पंक्तियोंमें सीमाओंका वर्णन है) **दोरसमुद्रद** पट्टण-स्वामि बोप्पादि-सेट्टिय मग **नाडवलसेट्टिय** कय्यलु हिरि-यकेरेयोलगण तावरेयकेरेयोलगाद नेलनं मारुगोण्डी-वसदिगे कोट्ट श्री हिरियकेरेय केलगण तावरेयकेरेय बडगण-कोडिय विष्णुभट्टन तोट...तण गलेय...लु चतुरस्त्र १५ गलेय भूमियं मारुगोण्डी-वसदिगेबिट्ट ॥ **द्वादशसोमपुरवाद होलेयब्बेगे-रेय** हन्नेरडुवृत्तियोलगोण्डु वृत्तियं **गोग्गण-पण्डितर** म...से **गुलियण्णन** कय्यलु मारुगोण्डी-वसदिगे बिट्ट ॥ (वे ही परिचित श्लोक)

(प्रथम भाग नष्ट हो गया है)

२ [राजा एरेयंगके पुत्रने अपनी रानियोंका परित्याग करके, राज्य छोड़कर, और चेङ्गिरिके निकटके देशमें मरते वक्त देह त्याग करते हुए नरसिंहकी रानियोंके ऊपर अधिकार जमा लिया था, अङ्गरको नष्ट कर दिया था

और गंगाकी ओर मुड़कर उत्तरदेशके राजाओंका सत्यानाश किया। उत्तर के आक्रमणमें सफलता प्राप्त कर उसके हाथीने **पाण्ड्य** राजाकी सेनाको कुचल दिया था, भयङ्कर महान् युद्धोंमें चोल और गौलोंको हराया। कञ्ची-गोण्ड-विक्रम-गंगने पाण्डयका पीछा करके नोलम्बवाडिको अधिकृत करके उच्चंगिपर दखल कर लिया। इसके वाद तेलुङ्ग (तैलंग) देशकी तरफ़ बढ़ा, और इन्द्र...की सारी सम्पत्ति सहित कैद कर लिया। इसके वाद भसणको, जो सारे राष्ट्रका कण्टक था, समूल नष्ट किया और वनवसे वारह हज़ारको अपने कडित (हिसावकी किताव) में लिख लिया। ऋणार्धमें राजाविष्णुने (एरे-गंगके पुत्रने) प्रसिद्ध पानुङ्गल् ले लिया, किसुकल्पर राज्य करने वाले...... नाथको अपनी नजरसे ही मार डाला। जयकेसीका पीछा करके पलसिगे १२००० का तथा......५०० पर अधिकार जमा लिया।

इस महाक्षत्रिय विष्णुवर्द्धन देवके अनेक पद और उपाधियोंमें से कुछेक ये हैं:—चोलकुलप्रलय-भैरव, चेरस्तम्बेरमराजकण्ठीरव, पाण्डय कुलपयोधिवडवा-नल, पल्लवयशोवल्लीपल्लवदावानल, नरसिंहवर्म्म-सिंह-सरभ, निश्चलप्रतापद्वीप-पतित-कलपालादि-नृपाल-शलभ। कञ्चीपर अधिकार करनेवाला (कञ्चि-गोण्ड), विक्रम-गंग वीर-विष्णुवर्द्धनदेव जिस समय इस तरह गंगवाडि ६६०००, नोणम्ब-वाडि ३२००० तथा वनवसे १२००० पर सुख व शान्तिसे राज्य कर रहा था :—

उसके पादमूलसे प्रभूत (उत्पन्न) तथा उसके कारुण्यरूपी अमृतप्रवाहसे परिवर्द्धित **विष्णु-दण्डाधिप** था। (उसकी प्रशंसा) विष्णु-दण्डाधिपका नाम **इम्मडि-दण्डनायक विट्टियण्ण** था। इस दण्डनायकने आधे महीने (१५ दिन) में ही दक्षिण विजय कर ली थी। विष्णुवर्द्धन-देवका यह दाहिना हाथ था। बहुत-सी उपाधियों और पदोंसे युक्त यह महाप्रधान, इम्मडि-दण्डनायक विट्टियण 'सर्व्वाधिकारी' और सर्वजनोपकारी होता हुआ शान्तिसे समय व्यतीत कर रहा था:—

इसके वाद पद्यमें विष्णु-दण्डाधिनायके उन्हीं पराक्रमोंका वर्णन आता है जिनका वर्णन पहिले गद्यमें हो चुका है।

विष्णु-दण्डाधिपकी मूल-कुल-परम्परा इस प्रकार थी:—सबसे पूर्वमें (आदि ब्रह्माके युगमें) काश्यप प्रजापति थे, जिनसे बहुत-से महान् पुरुष उत्पन्न हुए; उनके बाद एक **उदयादित्य** हुए, जिनकी पत्नीका नाम शान्तियक्के था। उनका पुत्र **त्रिपण-राज-दण्डाधीश** था। उसकी पत्नी चन्दले थी, उनका पुत्र **उदयण** था। उदयणका छोटा भाई **विष्णु** हुआ, जो नये चन्द्रमाकी तरह आकार और यशमें बढ़ता ही गया।

इसके किशोरावस्था प्राप्त होने पर स्वयं काञ्चिगोण्ड विक्रमगंग विष्णुवर्द्धनदेवने, उसको अपने पुत्रके समान मानकर, बड़े उत्सवसे स्वयं ही उसका उपनयन संस्कार किया। सात या आठ वर्षकी उमरके बाद जब वह समस्त शास्त्र-विज्ञानमें पारंगत हो गया तब उसको अपने प्रधान मन्त्रीकी पुत्री ब्याह दी। और १० या ११ वर्षकी उमरमें बुद्धिमें कुशाग्रकी तरह तीक्ष्ण होने और चार उपाधियों (राजभक्ति, निस्पृहता, संयम और धैर्य) में पूर्ण होने पर विष्णुवर्द्धनदेवने दुगुने विश्वासके साथ उसे 'महा-प्रचण्ड-दण्डनायक' का पद दिया। और उसे सर्वाधिकार दे देनेसे वह सर्वाधिकारी तथा समस्त जनोंका उपकार करनेकी सामर्थ्य वाला हो गया।

पूर्ण यौवन प्राप्त होने पर समस्त सार्वजनिक कामोंके करनेसे अनुभवकी वृद्धि होनेपर महापवित्र स्थानोंमें दान देनेके बाद, उसने यादव राज्यकी राजधानी दोरसमुद्रमें यह विष्णुवर्द्धन जिनालय बनवाया।

इस महापुरुषके गुरुकी गुरु-परम्परा इस प्रकार थी:—वर्द्धमान स्वामीके बाद केवली और श्रुतिकेवलियोंके हो जानेके बाद, जिन शासनके प्रभावको सहस्र-गुणा बढ़ानेवाले समन्त भद्र स्वामी हुए। उनके बाद, उसी द्रमिल-संघके अग्रणी पात्रकेसरी-स्वामी हुए। तत्पश्चात् क्रमसे वक्रग्रीव-वज्रनन्दी गणाग्रणी, सुमतिभट्टारक, जिनशासनदीपक अकलङ्क-चन्द्रकीर्ति-भट्टारक-कर्मप्रकृति-मल्लवादिगुरु विमलचन्द्राचार्य-परवादिमल्लदेव, कनकसेन-वादिराजदेव—श्रीविजयभट्टारक (बृहुग-पैम्माडिके गुरु-नयसिंहदेवके गुरु वादिराजेन्द्र—जो दर्शन शास्त्रके प्रकाण्ड विद्वान् थे)—यादवान्वय-चूड़ामणि एरेयङ्ग-देवके गुरु अजितसेन-स्वामी (उनकी

प्रशंसा), इनके एक सतीर्थ्य कुमारसेन-सैद्धान्तिक हुए, जो अपने समयके तीर्थनाथ कहे जाते थे—उनके बाद अजितसेन स्वामीके ज्येष्ठ पुत्र मल्लिषेण-मलधारि हुए, जो कलियुगके गणधर माने जाते थे। तत्पश्चात् वादीभसिंह अकलङ्ककी गद्दी सँभालने वाले मुनीन्द्रप्रवर श्रीपाल-योगीश्वर हुए, जिन्होंने सम्यग् ज्ञानका प्रचार कर अज्ञानके हटानेमें बड़ा काम किया। उन्होंने अनेक तर्कशास्त्रके ग्रन्थ बनाये थे।

इन जगद्गुरु श्रीपाल-त्रैविद्य-देवके पैरोंका प्रक्षालन करके,—इम्मडि-दण्ड-नायक बिट्टियण्णने 'बसदि' की मरम्मत, भगवानकी पूजाके प्रबन्ध, तथा ऋषियोंके आहारदानके लिये, (उक्त मितिको) विष्णुवर्द्धन-पोय्सलदेवके हाथोंसे मरुसे-नाड्में बीजबोललुका गाँव प्राप्त किया और उसे परमेश्वरको दानमें दे दिया। इसी तरह दोरसमुद्र-पट्टण-स्वामी (नगरसेठ) बोण्डाडि-सेट्टि के पुत्र नाडवल-सेट्टिसे खरीदी गयी (उक्त) दूसरी भूमि भी उक्त मंदिरको दानमें दे डाली। द्वादश सोमपुरके १२ हिस्सोंमेंसे एक जो होलेयब्बेगेर था—वह भी दानमें दे दिया। (वे ही अन्तिम श्लोक)।]

[EC,V,Bbur tl ., No. I7]

३०५ क

अथूँणाका शिलालेख

अथूँणा (उच्छूणक)-संस्कृत ।

[विक्रम सं० ११६६, वैशाख सुदि ३]

१—इ० ॥ ॐ नमो वीतरागाय।

स जयतु जिनभानुर्भव्यराजीवराजी-
जनितवरविकाशो दत्तलोकप्रकाशः।
परसमयतमोभिर्न स्थितं यत्पुरस्तात्
क्षणमपि चपलासद्वादिखद्योतकैश्च ॥ ॥ छ ॥

२—आसीच्छ्रीपरमारवंशजनितः श्रीमण्डलीकाभिधः
कन्हस्य ध्वजिनीपतेर्निधनकृच्छ्रीसिंधराजस्य च ।
जज्ञे कीर्तिलतालवालक इतश्चामुंडराजो नृपो
योऽवंतिप्रभुसाधनानि बहुशो हंति स्म

३—देशे स्थलौ ॥ २ ॥ श्रीविजयराजनामा तस्य सुतो जयति मति (जगति)
विततयशाः । सुभगो जितारिवर्गो गुणरत्नपयोनिधिः शूरः ॥ ३ ॥ देशेऽस्य
पत्तनवरं तलपाटकाख्यं पण्याङ्गनाजनजिता—

४—मरसुंदरीकम् । अस्ति प्रशस्तसुरमन्दिरवैजयन्तीविस्तारुद्धदिननाथकर-
प्रचारं ॥ ४ ॥
तस्मिन्नागरवंशशेखरमणिर्निःशेषशास्त्राम्बुधि-
जैनेन्द्रागमवासनारससुधाविद्धास्थिमज्जाभवत् ।
श्रीमानंबरसंज्ञकः कलिबहिर्भूतो भिषग्रा (ग्रा) मणी-
र्गार्हस्थे (स्थ्ये)पि निकुंचिताघप्रसरो देशव्रतालंकृतः ॥ ५ ॥ यस्याव
[श्य] क [क] र्मनिष्ठितमतेः श्रेष्ठा वनांते भवन्नंतेवासिवदाहितांज-
लिपुटा ।

६—श्रोसः (षः) कृतोपासनाः । यस्यानन्यसमानदर्शनगुणैरन्तश्चमत्कारिता शुश्रूषां
विदधे सुतेव सततं देवी च **चक्रेश्वरी** ॥ ६ ॥ **पापाक**स्तस्य सूनुः समजनि
जनितानेकभव्यप्रमोदः प्रादुर्भू—

७—तप्रभूतप्रविमलधिषणः पारदृश्वा श्रुतानां [।] सर्वायुर्वेदवेदी विदितसकल-
रुक्क्रान्तलोकानुकम्पो निर्णीताशेषदोषप्रकृतिरगदस्तत्प्रतीकारसारः ॥ ७ ॥
तस्य पुत्रास्त्रयोऽभूवन्भूरिशा-
-स्त्रविशारदाः । **आलोकः साहसा**ख्यश्च **लल्लुका**ख्यः परोनुजः ॥८॥ यस्त-
त्राद्यः सहजविशदप्रज्ञया भासमानः स्वांतादर्शस्फुरितसकलैतिह्यतत्त्वार्थसारः ।
संवेगादिस्फुटतरगुणव्य-

९—त्कसम्यक्प्रभावः तैस्तैर्दानप्रभृतिभिरपि स्वोपयोगी कृतश्रीः ॥ ९ ॥ आधा [रो] यः स्वकुलसमितेः साधुवर्गस्य चाभूदग्रे शीलं सकलजनताह्लादिरूपं च काये । पात्रीभूतः कृतियतिधृतीनां

१०—श्रुतानां श्रियां च सानन्दानां धुरमुदवहद्भोगिनां योगिनां च ॥ १० ॥ यो **माथुरान्वय** नभस्तलतिग्मभानोर्व्याख्यानरंजितसमस्तसभाजनस्य । श्री-**छत्रसेन**सुगुरोश्चरणारविंदसे—

११—वापरो भवदनन्यमनाः सदैव ॥ ११॥
तस्य प्रशस्तामलशीलवत्यां **हेला**भिधायां वरधर्मपत्न्यां । त्रयो बभूवुस्तनया नयाढ्या विवेकवंतो भुवि रत्नभूताः ॥ १२ ॥ अभवदमल—

१२—बोधः **श्रीदुक**स्तत्र पूर्वः कृतगुरुजनभक्तिः सत्कुशाग्रीयबुद्धिः । जिनवचसि यदीयप्रश्नजाले विशाले गणभृदपि विमुह्येत् क्वैव वार्ता परस्य ॥ १३ ॥
करणचरणरूपानेक—

१३—शास्त्रप्रवीणः परिहृतविषयार्थो दानतीर्थप्र [वृत्तः] । ग (श) मनियमित-चित्तो जातवैराग्यभावः कलिकलिलविमुक्तोपासकीयप्र (व्र) ताढ्यः ॥ १४ ॥
कनिष्ठस्तस्याभूद्भुवनविदितो **भूषण** इति श्रियः पात्रं—

१४—कांतेः कुलगृहसुमायाश्च वसतिः । सरस्वत्याः क्रीडागिरिरमलबुद्धेरतिवनं क्षमा-वल्याः कंदः प्रविततकृपायाश्च निलयः ॥ १५ ॥ स्मरः (रो) सौ रूपेण प्रवलसु [भ] गत्वेन गणभृत् कुवेरः संप-(॥)

१५—त्या समधिकविवेकेन धिषणः । महोन्नत्या मेरुर्जलनिधिरगाधेन मनसा विद-ग्धत्वेनोच्चैर्य इह वरविद्याधर इव ॥१६॥ जैनेन्द्रशासनसरोवरराजहंसो मौनी-न्द्रपादकमलद्वय—

१६—चंचरीकः । निःशेषशास्त्रनिवहोदक नाथनक्रः । सीमंतिनीनयनकैरवचारु-चन्द्रः ॥१७॥ विदग्धजनवल्लभः सरससारशृंगारवानुदारचरितश्च यः सुभग-सौम्यमूर्तिः सुधीः । प्रसाद—

१७—नृपरा , नमद्ररविलासिनीकुन्तलल्यपल्लपदपंकजद्वितयरेणुरत्युन्नतः ॥ १८ ॥ प्रथमधवलप्राये मेत्रे गतेपि दिवं पुनः। कुलरथमरो येनैकेनाप्यसंभ्रममुद्धृतः। गुरुतरविप-

१८—द्गर्त्तग्रावग्रहादुदनादिव (तारि त्र) स्थिरमतिमहास्थाम्ना नीतो विभूतिगिरेः शिरः॥१८॥ द्वे भार्ये भूषणस्य स्तः लक्ष्मी सीलीती विश्रुते। पतिव्रतत्वसंयुक्ते चारित्रगुणभूषिते ॥२०॥ स सी-

१९—लिकायामुदपादि पुत्रान् सन्तानयोग्यान् गुरुदेवभक्तः। आलोकसाधारणशांतिमुख्यान् स्वबन्धुचित्ताम्बविकाशमानून् ॥२१॥ आयुक्ततमर्हद्भमारनिहितस्तोकाम्बुवन्नश्वरं

२०—संचित्य द्विपकर्णचंचलतरां लक्ष्म्याश्च दृष्ट्वा स्थितिं। ज्ञात्वा शास्त्रवुनिश्चयात् स्थिरतरे नूनं यशः श्रेयसी तेनाकारि जिनगृहं...भूमेरिदं भूषणम् ॥ २२ ॥ भूषणस्य क-

२१—निष्ठो यो लल्लाकं इति विश्रुतः। देवपूजापरो नित्यं श्रातुरादेशकृत् सदा ॥ २३ ॥

ज्येष्ठो वाहुकनामा यः सीडकायामजीजनत्
शुभलक्षणसंयुक्तं पुत्रमम्बटसंज्ञकम् ॥ २४ ॥

२२—वर्षसहस्रे याते पट्षष्ठ्युत्तरशतेन संयुक्ते विक्रमभानोः काले स्थालीवस्थमवृति सति विजयराजे ॥ २५ ॥ विक्रम संवत् ११६६ वैशाख सुदि ३ सोमे वृषभनाथस्य प्रतिष्ठा ॥

२३—श्री वृषभनाथधाम्नः प्रतिष्ठितं भूषणेन बिम्बमिदं। उच्छूणकनगरेस्मिन्निह जगतौ वृषभनाथस्य ॥ २६ ॥ युगलं ॥०॥ तुर्यवृत्तात्समारभ्य वृत्तान्येतानि

—प्रोडशा। आद्यवृत्तेन युक्तानि कृतवान् कटुको बुधः ॥ २५ ॥ माइल्लोवंशेऽभूत्तवः श्रीसावदो द्विजः। तत्सूनोर्मादुकस्येयं निःशेषाथ परा कृति ॥ २५ ॥ वालमान्वयकायस्थराजपालस्य

२५—सूनुना। संधिविग्रहसंस्थेन लिखिता **वासवेन** वै ॥ २६ ॥ यावद्रावण-रामयोः सुचरितं भूमौ जनैर्गीयते [।] यावद्विष्णुपदीजलं प्रवहति व्योम्न्यस्ति यावच्छशी । अर्ह-

२६—द्वक्त्रविनिर्गतं श्रवणकैः याव [च्छ्रु]तं श्रूयते तावत्कीर्तिरियं चिराय जयतात्संस्तूयमाना जनैः ॥ ३० ॥ उत्कीर्णा विज्ञानिक**सूमाकेन** ॥ ० ॥ मंगलं महाश्रीः ॥ ० ॥

शिलालेखका परिचय[1]

[डूंगरपुरके अन्तर्गत अर्थूणा (उच्छूणक) नामका एक स्थान है, जो एक समय विशाल नगर था; और परमारवंशी राजाओंकी राजधानी रह चुका है। एक समय यह स्थान एक छोटे-से गाँवके रूपमें आबाद है और इसके पास ही सैकड़ों मन्दिरों तथा मकानों आदिके खण्डहर भग्नावशेषके रूपमें पाये जाते हैं। यह शिलालेख यहींसे मिला है जो आजकल अजमेरके म्यूजियममें मौजूद है।

उक्त शिलालेख वैशाख सुदि ३ विक्रम सं० ११६६ का लिखा हुआ है और उस वक्त लिखा गया है जबकि परमारवंशी मंडलिक (मदनदेव) नामके राजाका पौत्र और चामुण्डराजका पुत्र 'विजयराज' स्थलि देशमें राज्य करता था। उच्छूणक नगर में, उस समय 'भूषण' नामके एक नागरवंशी जैनने श्री वृषभदेवका मनोहर जिनभवन बनवाकर उसमें वृषभनाथ भगवान्की प्रतिमाको स्थापित किया था, उसीके सम्बन्धका यह शिलालेख है। इसमें भूषणके कुटुम्बका परिचय देनेके सिवाय, माथुरान्वयी श्री छत्रसेन नामके एक आचार्य

---

१. पं० जुगल किशोर मुख्तार ; अर्थूणाका शिलालेख, जैनहितैषी, भाग १३, अंक ८, पृ० ३३२ से उद्धृत।

का भी उल्लेख किया है, जो अपने व्याख्यानोंद्वारा समस्त सभाजनोंको सन्तुष्ट किया करते थे और भूतकका पिता 'आलोक' जिनका परमभक्त था। माथुरसंघी इन आचार्यका, अभी तक, कोई पता नहीं था। माथुरान्वयसे सम्बन्ध रखने वाली काष्ठासंघकी उपलब्ध गुर्वावलीमें भी छत्रसेन गुरुका कोई उल्लेख नहीं है[1]। इस शिलालेखसे माथुरसंघके एक आचार्यका नया नाम मालूम हुआ है।

३०६

अजमेर-प्राकृत

[सं० ११९५ = ११३८ ई०]

संवत् ११९५ आषाढ़सुदि ३ आचार्य सदानन्दीकृते पण्डितगुणचन्द्रेण शान्तिनाथ प्रतिमा कारिता।

अर्थ स्पष्ट है।

[J. A.S.B., VII, p. 52, no. 6]

३०७

सिन्दिगेरे;—संस्कृत तथा कन्नड़

[शक १०६० = ११३८ ई०]

[सिन्दिगेरे में, ब्रह्मेश्वर बस्तिके द्वारके स्तम्भ पर]

(पूर्वमुख)

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम्॥

स्वस्ति समस्त-भुवनाश्रयं श्री-पृथ्वी-वल्लभं महाराजाधिराजं परमेश्वरं परम-भट्टारकं सत्याश्रयकुलतिलकं चालुक्याभरणं श्रीमत्-त्रिभुवनमल्ल-देवर विजय-

1. देखो जैनसिद्धान्त भास्कर, किरण ४, पृ० १०३

राज्यमुत्तरोत्तराभिवृद्धिप्रवर्द्धमानमाचन्द्रार्क-तारं सलुत्तमिरे तत्पादपद्मोपजीवि समधिगत-पञ्च-महाशब्द महा-मण्डलेश्वरं **द्वारावतीपुरवराधीश्वरं यादवकुला-**म्बरद्युमणि सम्यक्त्व-चूड़ामणि मलेपरोळु गण्डाद्यनेक-नामावली-समलंकृतरप्प श्रीमत् **त्रिभुवनमल्ल तळकाडु-कोन्गु-नङ्गलि-गङ्गवाडि-नोळम्बवाडि-बनवसेहानुङ्गलु-हलसिगे**-गोण्ड भुजबल **वीरगङ्ग होय्सळ देवरु** श्रीमद्-राजधानि-**दोरसमुद्रद** वीडिनलु सुख-संकथा-विनोददिं पृथ्वी-राज्यं गेय्युत्तमिरे तत्पादपद्मोपजीविगळु श्रीमन्महाप्रधानं **हिरिय-मरियाने-दण्डनायंकर** मगं **दाकरस-दण्डनायकर** पुत्ररुं द्रोह-घरट्ट-**गङ्गपटय-दण्डनायकर वाचरस-दण्डनायकर सोवरस-दण्डनायक**रळियन्दिरुमप्प श्रीमन्महा-प्रधानं हिरिय-भण्डारि-**मरियाने-दण्डनायकरुं** श्रीमन्महाप्रधानं **दण्डनायकं भरतरुप्पगलु शक वर्ष १०६० नेय पिङ्गळ-संवत्सरद पुष्य-सु १० आदिवारदुत्तरायण संक्रान्तियलु तुलापुरुष महादानदलु** तम्म नेलेपूरु **सिन्दङ्गेरेय** वसदिगे श्री-**विष्णुवर्द्धन होय्सल-देवर** कय्यलु धारा-पूर्व्वकं हडेदु बिट्ट **सवणेन-हल्लि**य सीमा-सम्बन्धमेन्तेन्दडे (आगेकी २० पंक्तियोंमें सीमाओंकी चर्चा है तथा हमेशा का अन्तिम श्लोक)

(दक्षिण मुख)

जय-जया-शरणं रण-क्षिति-हत-क्षत्रं हत-क्षत्र- निर्- ।
द्दय-निर्द्दारित-देह-लोहित-पयश्-शातासि शातासि-दुर्- ।
जय-धारा-चकितारि-रक्षण-भुजा-दण्डं भुजा-दण्ड-को- ।
टि-युवद्-वीर-वधू-प्रमोदि **भरत**-श्रीमच्चमूवल्लभं ॥
नय-युक्त-क्रम-विक्रमं क्रम-नमद्-भू-मण्डलं मण्डल- ।
प्रिय-वृत्तं प्रिय-वृत्त-संगत-गुण-ग्रामं गुण-ग्रामणी- ।
नयनानन्दकरं करार्प्पित-धनुर्-ज्यो-राव-दूरीकृता- ।
रि-यशो-राजि जितोद्धताजि **भरत**-श्रीमच्चमूवल्लभम् ॥
अवनी-नूत-यशं यशो-धवलिताशा-मण्डलं मण्डला- ।
ग्र-विलूनारि-बलं बल-प्रभु-नमच्चञ्चच्छिखा-शेखरी- ।

भवदात्माङ्घ्रि-नखोत्करं कर-गतारि-श्री-विलासं विला- ।
सवती-मानित-मीनकेतु **भरत**-श्रीमच्चमू-वल्लभम् ॥
स्मर-लीलं स्मर-लील-लोल-ललित-भ्रू-भ्रू-धनुर्व्विभ्रमो- ।
त्कर-लीलायत-दृष्टि दृष्ट-विलसत्-पुष्पेषु पुष्पेषु-जर् - ।
ज्जरितोन्मत्त-विलासिनी-जन-मनो-मानं मनो-मान-खे- ।
द-रतोत्कण्ठ-वधू-कदम्ब **भरत**-श्रीमच्चमू-वल्लभम् ॥
जित-मन्त्रं जित-मन्त्र-नूत-महिम-स्तोमं हिम-स्तोम-शु- ।
भ्रतमात्मीय-यशं यशो-लहरिका-मज्जगत्-तर्प्पि तर् - ।
प्पित-लोक-स्तुत-कीर्त्ति कीर्त्तित-भुज-स्तम्भं भुज-स्तम्भ-सं- ।
भृत-विक्रान्त-वधू-करेणु **भरत**-श्री मच्चमू-वल्लभम् ॥
चित-विद्विष्ट-चमू-चमूप-विलसन्मन्त्रं लसन्मन्त्र-सा- ।
धित-दुर्वृत्त महो-महोर्जित-मही-चक्रं मही-चक्र-सं- ।
स्तुत-दोर्म्मण्डल मण्डलाग्र-दमितानम्रारि नम्रारि-कीर् - ।
त्तित-दिग्-वर्त्तित-जैत्र-लक्ष्मि **भरत**-श्रीमच्चमूवल्लभम् ॥
प्रतिपक्ष-क्षिति-केतु केतु-जनित-द्विड्-भीति भीति-द्रुता- ।
श्रित-रक्षा-निळयं लयानल-लुठत्-तापाग्नि-कोपाग्नि-शो- ।
षित-युद्धोद्धत-जीवनं वन-शिखि-प्रोद्यत्प्रतापं प्रता- ।
प-तत-श्री-परिलब्ध-लक्ष्मि **भरत**-श्रीमच्चमूवल्लभम् ॥
करवाळाहत-विद्विपं द्विपदसृक्-पूर-प्लुतेभं प्लुते- ।
भं रथालम्बित-खड्गि खड्गि-निहतश्वौघं हताश्वौघ-जर् - ।
जरितान्त्रौघ-विकर्षि-फेरव-रव-व्याजृम्भितं जृम्भितो- ।
द्दुर-दोर्द्दण्ड-भवजितानि **भरत**-श्रीमच्चमू-वल्लभम् ॥
ललनानीकमनो-मनोभव भव-स्फाराळिकाख्यानळो- ।
ज्ज्वळ-तेजो-निज-बाहु बाहु-निहत-द्विड् (द्वि) द्विट्-च्चिरो-देवकीर् - ।
त्ति-लता-वेल्लित-वार्द्धि वार्द्धि-वलय-क्षोणि-तळ-स्तुत्य निन् -
न लसद्-वद्दोळिक्के लक्ष्मि **भरत**-श्रीमच्चमू-वल्लभम् ॥

(पश्चिम मुख)

जिनपति देव्वनाळडर........विष्णु-नृपाळम् तनयनी-जगद्- ।
जन-नुत-मन्त्रि दाकरसनव्वे यशोधिके दुग्गणव्वे स.....।
.....ति-वान्धवर्म्मेरिगनग्रजनेन्दडे वण्णिस दु...के वल्- ।
लने पेरनुर्व्वियोळ् **भरत**नुद-गुणगळोळाद पेम्मेयं ॥
सिरि पोल-मुत्तिनेक्कसरदन्तिरे निन्न विशाळ-वक्षदोळ् ।
सरसति वक्त्रदोळ् तिळकदन्तिरे वीरर वीर-लक्ष्मि तोळ्- ।
वेर-गिनोळोप्पे रक्के-वपियन्तिरे निर्म्मळमन्न कीर्त्तियम् ।
भरत-चमूप ताळ्दु शशि-सूर्य्य-कुलाद्रि-त्रयङ्गळुळ्ळिनम् ॥
अनतारि-श्री-समाकर्षणवभिजन-दारिद्र्य-तीव्र-ग्रहोच्चा- ।
टनवत्युग्र-द्विषन्मारणवतुळ-मयार्त्तावनीपाळक-स्तं- ।
भनवुर्व्वी-वश्यवास्मावनि-परिवृढ-शान्त्यर्थ-मन्त्रं जगन्मण्- ।
डन-कीर्त्ति-श्रीश विद्वन्निधि **भरत**-चमूनाथ नीनोन्दे मन्त्रम् ॥
हरि भरदिन्दे किर्त्तेळद तारद कल्लेडेयल्लदाग्रहम् ।
वेरसु दुघोत्करम् तिरियदुर्व्विगे मध्यमवेम्ब निन्देयोळ् ।
पोरेयद नेरवेन्दपुदु धारिणी विप्र-कुल-प्रदीपनन् ।
भरत-चमूपनं मदन-रूपननप्रतिम-प्रतापनम् ॥
हृदयं कारुण्य-पीयूषद पुदिदोदवाळोकनं चारु-दाक्षि- ।
ण्यद केळी-गेहवात्याम्बुदवरिवळ-कळानार्म-सन्दर्भविष्ट- ।
प्रदवुद्यद्-भ्रू-लतालसदवमर-चरित्-पूतवाचारवासेम् - ।
कुदेनेन्दन्य-सामान्यने **भरत**-चमूपं मनोजात-रूपम् ॥
भुज-दर्प्पं शौर्य-नार्म्मं वितरणवधिक-प्रीति-नार्म्मं हु-नेत्रं- ।
भुजमुं दाक्षिण्य-नार्म्मं वदन-शशि कळा-नार्म्मवाचार-सारम् ।
त्रि-जगत्-संस्तोत्र-नार्म्मं निरुपम-विलसन्मूर्त्ति शृङ्गार-नार्म्मम् ।
निजमेन्दन्य-सामान्यने **भरत** -चमूपं मनोजात-रूपम् ॥
मत्ते कृत-युगमे वन्दन्द् । उत्तम-पुरुषरने पडेवडेनगे दलीतम् ।

विट्टेन्दु कादपं त्रिदि । वित्तरदिं **भरत**-राज-दण्डाधिपनम् ॥

संकण्ण ॥

घनमेल्लं जिन-मन्दिरक्के दयेयेल्लं प्राणि-वर्गक्के सन्- ।
मनमेल्लं जिनराज-पूजेगे समन्त् औदार्य्यमेल्लं विशि- ।
ष्ट-निकायक्केसवन्न-दान-गुणमेल्लं सन्मुनीन्द्राळिगेम्- ।
विनेगं सच्चरितं चमूप-**भरतं** माळ्पं महोत्साहमम् ॥
प्रभविसुगे विभवमीश्वर- । निभ-मूर्त्ति विरोधि-विक्रम-जय-केतन ।
शुभ-कृद्-गुण निनगे चमू- । प्रभु **भरत** सहस्र-वत्सरं पुगु-विनेगम् ॥
अति-सुभग-सुन्दराकृति । सततं निनगोप्पि **भरत** नीं निजदिन्दम् ।
जित-मदननागे निन... ।...य माडिदुदिळा-तळ भूतलदोळ् ॥

(उत्तरी मुख)

श्री-मूल-संगद देशिय-गणद पोस्तक-गच्छद कोण्डकुन्दान्व-यदाचार्य्यरु श्री-**कुळचन्द्र-सिद्धान्त-देवरु** ॥ अवर शिष्यरु ॥

एळ-मावि वनमल्लदिं तिळि-गोळम्माणिक्यदिं मण्डना- ।
वळि ताराधिपनिं नभं शुभदमागिप्पन्तिरिर्द्दत्तु निर्- ।
म्मलमीगळ् **कुळचन्द्र-देव**-चरणाम्भोजात-सेवा-विनिश्- ।
चल-सैद्धान्तिक-**माघनन्दि** मुनियिं श्री-कोण्डकुन्दान्वयम् ॥
श्री-**माघनन्दि-देव**र । कोमळ-पद-कमळ-युगळमं स्मरयिपड् ।
आ-मानवरं पोर्द्दु । भीमोरग-विष-रुजा-महोग्रह-दोषम् ॥

अवर शिष्यरु ॥

दण्डित-दण्ड-त्रयरा- । खण्डल-पति-विनुत-सत्-तपस्सम्पदनुत् ।
खण्डित-मदनेनलेसेदं । **गण्डविमुक्त-व्रतीश**-राद्धान्तेशम् ॥

(यह लेख यहीं तक पाया जाता है ।)

[जिस समय महाराजाधिराज, परमेश्वर, परम-भट्टारक सत्याश्रय-कुल-तिलक, चालुक्याभरण, श्रीमत्त्रिभुवन मल्लदेवका विजय-राज्य उत्तरोत्तर प्रवर्द्धमान थाः—

तत्पादपद्मोपजीवी (हमेशा की उपाधियों सहित) तलकाडु-कोङ्गु-नङ्गलि-गङ्गवाडि, नोळम्ववाडि-बनवसे-हानुङ्गल और हलसिगेको अधिकृत करनेवाले, वीरगङ्ग होय्सळ-देव अपनी राजधानी दोरसमुद्रमें विराजमान थे:—

तत्पादपद्मोपजीवि,—महाप्रधान प्राचीन मरियाने-दण्डनायकके पुत्र डाकरस-दण्डनायकके पुत्र तथा गङ्गपय्य-दण्डनायक, बाचरस-दण्डनायक और सोवरस-दण्डनायकके दामाद,—महाप्रधान, प्राचीन भण्डारी, मरियाणे-दण्डनायक, और महाप्रधान दण्डनायक भरतमय्यको (उक्त मितिको), विष्णुवर्द्धन-होय्सळ-देवके हाथोंसे सवणेनहल्लिमें उनके निवासस्थान सिन्दङ्गेरेकी 'बसदि' के लिये कुछ ज़मीन (वर्णित) मिली।

(यहाँ भरतको प्रशंसामें बहुत ही साहित्यिक-कला-पूर्ण श्लोक हैं।)

मूलसंघ देशिय-गण, पुस्तक-गच्छ और कुन्दकुन्दान्वयके आचार्य कुलचन्द्र-सिद्धान्त-देव; उनके शिष्य (प्रशंसा सहित) माघनन्दि मुनि; उनके शिष्य, गण्ड-विमुक्त-व्रतीश थे।]

नोट:—लेखमें आया हुआ 'संकण्ण' नाम संभवतः भरत-दण्डनायककी प्रशंसा-के श्लोकोंके कर्त्ताका नाम जान पड़ता है।

[EC, VI, chik-magalur U., no. 161]

३०८

सिन्दिगेरे—संस्कृत तथा कन्नड़।

[काल-निर्देश रहित, पर संभवतः लगभग ११०३ ई०]

[सिन्दिगेरेमें, बस्तिमें ब्रह्मेश्वर मन्दिरके एक पाषाण पर]

श्रीमत्-परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम्॥

स्वस्ति समस्त-भुवनाश्रय श्री-पृथ्वी-वल्लभ महाराजाधिराज परमेश्वर परम-भट्टारक **सत्याश्रय-कुल**-तिलकं चालुक्याभरणं श्रीमत्-**त्रिभुवनमल्ल-देवर** राज्यमुत्तरोत्तराभिवृद्धि-प्रवर्द्धमानमा-चन्द्रार्क्क-तारं सलुत्तमिरे तत्पादपद्मो-

पत्नीवि । स्वस्ति समधिगत-पञ्च-महाशब्द महा-मण्डलेश्वरं द्वारावती-पुरवराधी-श्वरं **यादवकुला**म्बर-द्युमणि सम्यक्त्व-चूडामणि मलेपरोळ् गण्डाद्यनेक-नामा-वली-समलङ्कृतरप्प श्रीमत् **त्रिभुवनमल्ल विनयादित्यं पोय्सळं कोङ्कण-दाळ्वखेडद वयळ्-नाड तळकाड साविमलेयि**निोळगाद भूमियेल्लमं दुष्ट-निग्रहशिष्ट-प्रतिपाळनेयिं ।

वलिदडे मलेदडे मलेपर । तलेयोळ् वाळिङ्ववनुदितभय-रस-वशदिम्।
वलिपद मलेपद मलपर । तलेयोळ् कम्पिङ्डुवनोडने **विनयादित्यम्** ॥
आ-मण्डलेश्वरन मनो-नयन-वल्लभे ।
परिजनकं पुर-जनकं । परमार्थं ताने पुण्य-देवतेयेनलेम् ।
धरेयोळ् नेगल्दलो **केळेयब्बरसि** वनाराध्ये भुवन-वनिता रत्नम् ॥

अन्तवरिर्व्वरुं सुख-संकथा-विनोददिं **सोसेवूर** नेलेवीडिनोळ् राज्यं गेय्यु-त्तिर्दु-**केळेमल-देवियरुं मरियाळे**-दण्डनायकनं तन्न तम्मनेन्दु रक्षिसि **विनयादित्य-पोय्सळ-देवरुं** तानुमिर्द्दु मरियाने-दण्डनायकङ्गे **देकवे-दण्डना-यकितियं** कन्या-दानं माडि **आसन्दि-नाड सिन्दगेरेयं** प्रभुत्व-सहितं नेले-यागि **शक-वर्षं ९६९ नेय सर्व्वजित् संवत्सरद फाल्गुन-शुद्ध-तदिगे सोमवारदन्दु** कन्या-दानमुं भूमि-दानमुमं धारा-पूर्व्वकं कोट्टु स्वधर्म्मदिं रक्षिसु-त्तमिरे ।

धरणिगे नेगर्द-पोय्सळ । नरपतिगं कमन-कम्बु-कन्धरे केळेयब्ब- ।
रसिगमुदयिसि नेगर्द । धरित्रियोळ् वीर-गङ्ग **नेरेयङ्ग**-नृपम् ॥
अनुपम-कीर्त्ति मूरनेय मारुति नाल्कनेयुग्र-वलिनियय्- ।
दनेय-समुद्रमारनेय-पू-शरनेयेळनेयुर्व्वरेशनेण्- ।
टनेय-कुलाद्रियोम्बननेयुद्गत-दान-समेत-हस्ति पत् ।
तनेय-निधि प्रभाववनेने पोल्ववरारेरेयङ्ग-देवनम् ॥
आ-विभुगं नेगर्दं चल-। **देवि**गमुदयिसिदरदटरेने **वल्लाल**दमावल्लभ-विष्णु-धरि- । श्री-वल्लभ-सु-भट-नुतिम**दुदयादित्यर** ॥

एनितित्तडमेनितिरिदड- । मनितार्प्पुम् कूर्प्पुमर्प्पुवेपेरर्गेदु केम् ।
मने नोड दिटके **वल्ला**- । **ल**न्नृपालने चागि **वल्ल-देव**ने विर ॥

अन्तु सुख-संकथा-विनोददिं श्रीमद्राजधानि **वेलुहूर** वीडिनोलु राज्यं गेय्युत्त-मिद्र्दु **मरियाने-दण्डनायकन** द्वितीय-लक्ष्मी-समानेयरप्प **चामवे-दण्डनाय-कितिगं** पुट्टिद **पद्मल-देवि-चावल-देवि बोप्पादेवि**यरिन्ती- मूवरुं शास्त्र-गीत-नृत्यदलु प्रौढ़ेयरुं मूरु-राय-कटक-पात्र-जस-दलेयरेनसि वलेयला-मूवरुं-कन्यकेयर-नोन्दे हसेयलु **वल्लाल-देव**ं विवाहं माडि **शक-वर्ष १०२५ नेय स्वभानु-संवत्सरद कार्त्तिक-शुद्ध १० बृहस्पतिवारदन्दु** मोले-वाल-रिणक्के **मरियाने-दण्डनायकङ्गे सिन्दगेरेय**-नेरेदनेय-पर्यायदलु प्रभुत्व-सहितं नेलेयागि पुनर्धारा पूर्व्वकं कोट्टु सलुत्तमिरे ।

श्री-कान्ता-नेत्र-नीलोत्पल-वदन-सरोजात-स--स्मेर-लीला-
लोकं लोकत्रयोज्जृम्भित-विशद-यशश्चन्द्रिकादोष्प्रताप-
व्याकीर्णा त्यक्तयुक्तक्रमकलितकुभृच्चक्रखेदप्रमोद-।
श्रीकं श्री-**विष्णु** भूपं वेळगुगे जगमं राज-मार्त्तण्ड-देव ॥
इनितं कोपावलेप-भ्रुकुटि निटिलदोळ् पुट्टे तेर्प्पुत्तिवं तोप्-
पेने मार्प्पेयुं दिशाधीशरनिदिर दिशाधीशरोळ् तागिकुं तिप्-
पेनेलाशा-दन्ति-यूथङ्गळंधदिर दिशा दन्ति-यूथङ्गळोळ् पुण्-।
मेने तालङ्डुगुं व्योममुमनेलेयुमं **विष्णु** जिष्णु-प्रभाव ॥
पेसर्गोण्डावाव-देशङ्गळनेणिसुवुदावाव-देशङ्गळं व-।
ण्णिसि पेळुत्तिर्प्पुदावावनि-पतिगळं लेक्किसुत्तिर्प्पुदेम्त्रोन्द् ।
एसकं कैगण्मे नाळकुं-कडल तडि-वरं दिग्जय-क्रीडेपोळ् सा- ।
धिसिदं भू-लोकमं क्षत्रिय-कुल-तिलकं वीर-**विष्णु**-क्षितीशं ॥

स्वस्ति समधिगत-पञ्च-महा-शब्द महामण्डलेश्वरं **द्वारावती-पुर**वरेश्वरं य कुलोदयाचल-द्युमणि । मण्डलिक-चूडामणि । श्रीमदच्युत-पादाराधनालब्ध-प्रभावम् । सकल-दिक्पालक-पराक्रमाक्रमण-पटु-पराक्रमैक-स्वभावम् । शत्रु-क्षत्रिय-कलत्र-गर्भ-स्रव-सम्पादक-गभीर-विजय-शङ्ख-नादम् । वासन्तिका-देवी-लब्ध-वर-प्रसा-

दम् । प्रतिदिन-निरत-निरुपम-हिरण्यगर्भ-तुलापुरुषादि-क्रतु-सहस्र-समर्पित-पितृ-देव-गुरु-द्विज-समाजन् । निष्प्रतिपक्ष-भुज-बल-प्रभाव-निर्ज्जितादिराज । विष्णु-ईश्वर-विजय-नारायणाद्यसंख्यात-देव-कुल-कुलाचल-कुल-यादवजलधि - विष्णुसमुद्र-मुद्रित-महीलोक-नवीकरण-चातुर्य्य-चतुराननम् । चतुर्गण-मण्डित-पण्डित-गोष्ठी-षडाननन् । समर-मुख-गृहीताहित-महीकान्त-शुद्धान्त-कान्ता-मुख-निरीक्षण-तृण-कृत-सूर्य-निरीक्षणन् । नृसिंह-ध्यान-निश्चलीभूत-निर्म्मल-चरित्रन् । पुराङ्गना-पुत्रम् । सकलजन-सत्य-नित्याशीर्व्वाद-सम्पादित-निरन्तराभिवृद्धि-प्रयुक्तन् । दुर्द्धरसमरकेलि-संसक्तन् । दोर्व्वलापलेप-दुश्शीलाश्वपति-गजपति-प्रमुख-राज - लोक-निर्द्दय - निर्द्दलनोपार्ज्जि-ताश्व-गजादि-नाना-रत्न-निचय-रुचिर-राज्यलक्ष्मी-विलासन् । सरस्वती-निवासन् । **चोल**-कुल-प्रलय भैरवं । **केरल**-स्तम्बेरम-राज-कण्ठीरवन् । **पाण्ड्य-कुल**-पयोधि-वडवानलन् । **पल्लव**-यशो-वल्ली-पल्लव-दावानलं । **नरसिंह-वर्म्म**-सिंह-शर-भन् । निश्चल-प्रताप-दीप-पतित-**कलपालादि-नृपाल**-कुरंग-कुल-पलायन-कारण (म्) कठोर-विजय-धनुर्द्दण्ड-टङ्कारन् । रिपु-नृप-कुल-दलन-जनित-विजयालंकार-निर्वाह-चण्ड-डिण्डिमाडम्बरा-लंकृत-**काञ्ची-पुरम्** । स्व-गृह-चेटिका-नियोग-नियुक्त-रिपु-नृपान्तःपुरन् । कर-तल-कोपीकृत-दक्षिण-**मधुरापुरम्** । स्वकीय-सेना-नाथ-निर्द्दलित-**जननाथपुरम्** । जगद्-दारिद्र्य-विद्रावण-प्रवीण-कटाक्ष-निरीक्षणन् । प्रत्यक्ष-पद्मेक्षणन् । समुद्र-मेखलालङ्कृत-वसुमती-वल्लभन् । भय-लोभ-दुर्ल्लभन् । नामादि-प्रशस्ति-सहितन् । श्रीमत्-कञ्चि-गोण्ड-विक्रम-गङ्ग**विष्णु-वर्द्धन-देवन् गङ्गवाडि-तोम्भत्त(त्ता)**र-सासिर **नोळम्बवाडि-मूवत्ति**र्च्छासिर मुमं **वनवसे**-च्छीसिरमुमं । दुष्ट-निग्रह-विशिष्ट-प्रतिपालन-पूर्व्वकमाल्दु सुख-संकथा-विनोददिं राज्यं **पन्नि**-गेय्युत्तिरे तत्पादपद्मोपजीविगळु । समस्त-राज्य-भर-निरूपित-महामात्य-पदवी-प्रख्यातरुम् । अभिजातरुम् । श्रीमदर्हत्-परमेश्वर-पद-पयोज-षट्चरणरुम् । रत्नत्रया-लंकृत-शम-दम-नय-विनय-शौर-वितरणादि-गुणाभरणरुम् । कञ्चि-गोण्ड-विक्रम-गंग-**विष्णुवर्द्धन**-देवान्वयागत-महा-प्रचण्ड-दण्डनाथ-पदवी-पट्ट-रञ्जित-निटिळाकेन्दु-मण्ड-लरुम् । निरवद्य-स्याद्वाद-लक्ष्मी-रत्न-कुण्डळरुम् । नित्याभिषेक-निरत-निरुपम-जिन-पूजा-महोत्साह-जनित-प्रमोदरुम् । चतुर्व्विधदानविनोदरुम् । श्रीमदकलङ्क-दर्शन-

लक्ष्मी-नयनोपमानरुम् । परस्पर-स्नेह-मोहाधीनरुमप्प श्रीमन्महा-प्रधानम् **मरि-याने-दण्डनायक**-नुं श्रीमदादि-**भरतेश्वर**नेनिप **भरतेश्वर दण्डनायक**नुम तम्मोळ-भेद-भावदिं-गुण-गुणि-स्वरूपरागि ।

भीमार्ज्जुन-लव-कुचरिव- । री-माळकेयेनल्के तम्मुतिर्व्वरुमेसद् ।
श्रीमन्मरियानेयमुद्दाम-गुणं **भरत**-राज-दण्डाधिपरु ॥
एरगि बुध-मधुकरङ्गळ् । पेरपिङ्गदे तन्ननेन्दुमोलगिपिनेगं
मरियाने दान-गुणवेडे- । वरियदिरलु पतिगे पट्टदानेयेन्देनिप ॥
मरुवक्कमनोडिसलुं । नेरे राज्य-श्री-विळासमं मेरेयलुवी-।
मरियाने नेरगुमेन्दर- । करिनोळ् पति मेच्चे पट्टदानेयुमाद ॥
उन्नत वंशानुत्सवकरोत्तम-भद्र-गुणान्वितं जगत् ।
सन्नुत-दान-युक्त-विभवं मरियाने रिपु-प्रभेदनोत्- ।
पन्न-जायाभिरामनेनगीतने नच्चिन पट्टदानेयेन्द् ।
एम् नेरे नच्चि माडिदनो विष्णु-नृपं ध्वजिनी-पतित्वमम् ॥
एरगुव दिविजर मकुटद । तुरुगिद माणिकद तण्-विसिलुगळ पोलपिम् ।
मिरुगुव जिन-पद-नख-रुचि । मरियानेगे माल्के सकल-महिमास्पदमम् ॥
आतन सति मुन्नेगर्दा- । सीतेगरुन्धतिगे रतिगे वाणिगे भूभृज्-
जातेगे दोरेयेनलल्लदे । भूतळदोळ् **जक्कणब्बे** गुळिदर्द्दारेये ॥
अनुपमवप्प तन्न पति-भक्तिय निर्म्मल-धर्म-युक्तियोळ् ।
पिनोळमदिर्द्दं रूपिन विळासद । विभ्रमदोळपु वंश-वर् ।
द्धन-कररप्प तत्सुतरिनोप्पुविनं मरियाने-दण्डना- ।
थन वधु-**जक्कियक्क**ने यशोवतिपादलीला-तळाग्रदोल् ॥
तोळतोळगि वेलगि कीर्त्ति [य] । वळयदिनळवट्ट **विष्णु**-भूपन राज्य- ।
स्थलके मिसुपेसेव हेमद । कलशं केवलमे **भरत**-दण्डाधीशम् ॥
सिरि पोस-मुत्तिनेकसरदन्तिरे निन्न विशाल-वक्षदोळ् ।
सरसति वक्त्रदोळ् तिलकदन्तिरे वीरर वीर-लक्ष्मि तोळ् ।
वेरगिनोळोप्पे रक्के-त्रणियन्तिरे निर्म्मळवप्प कीर्त्तियम् ।

भरत-चमूप ताळ्दु शशि-सूर्य्य-कुलाद्रि-चयङ्गळुळ्ळिनम् ॥
वारिधि-वृत-भू-लोकदो- । ळारयलीविरिव-गुणदोलमम भरतङ्ग ।
आरु मणं तोणे वल्लद । वीरर्कलि-युगदोळोगेदे दण्डाधीशर् ॥
लोगर मातवन्तिरलि माण् भरतं मुनिदेत्ते मत्ते कोळ्- ।
पोगद वैरि-दुर्ग्ग मुरिदेळद वैरि-पुरङ्गळोळोडि पाळ्- ।
आगद-वैरि-देशमति-भीतियिनुळ्ळुदनित्तु तेत्तु वाळ् ।
आगद-वैरि-वीर-रणमिल्ल दली-दोरे तत्पराक्रमन् ॥
मनेयोळ् चाणिक्यनिन्दम् मिगिलेनिप महा-मन्त्रि नाना-नयज्ञम् ।
मोनेयोळ् सौपर्न्निनिन्दग्गळमेनिप महा-वीरनभ्यस्त-शास्त्रम्
मनेगम्मरान्तु निन्दोङ्गिद मोनेगमिदेम् दत्तनेन्दर्क्करिन्दाळ् ।
दाने तन्नं वण्णिसल्केन् नेगर्दनो भरतं खळ्ग-कार्य्यातिधुर्य्य ॥
भरतेश्वर-चन्द्रेश्वर- । चरितमे निज-चरितमेने चमूपति भरते- ।
श्वरनेसेवनन्वितास्विल- । पुरुषार्त्थं भव्य-सेव्य-जङ्गम-तीर्त्था ॥
निरपायं निष्कळंकं निहत-रिपु-कुलं निर्भराशा-वय-श्री- ।
परिरम्भारम्भ-शुम्भत्-सुखमयमतितीव्र-प्रताप-प्रकाश- ।
स्फुरितं पद्माकराब्ज-ग्रहण-कळित--नित्योदयं लोकदोळ् सु-
स्थिरमक्के दोर्-यशश्श्री-रत-भरत भवद्भाग्यचण्डांशुबिम्ब ॥
कान्तं श्री-भव्य-चूडामणि भरत-चमूनाथनात्यन्तिक-श्री- ।
कान्तं त्रैलोक्य-नाथं परम-जिनने देव्वं समभ्यस्त-सत्-सि- ।
द्धान्त-श्री माघणन्दि-व्रतिपरे गुरुगळ् तन्दे माराय रेन्दन्द् ।
एन्तुं तां धन्येयेन्दी-हरियलेयेने भू-मण्डळं विच्चलिक्कुम् ॥

इन्तु तन्न भाग्याभिवृद्धियुं समस्त-जनमुं परसे चतुरुपधा-विशुद्धनुम् जगत्-सेव्य-सम्यक्त्व-स्वयम्बुद्धनुं महा-युद्ध-व्यसन-विरोधि वीर-मदोद्भट-भुज-बळवलेपन-विळोपनेनुमभिनव-जयकुमारनुं विनेय-जनाधारनुं श्री-जैन-शासनोद्भासनोत्पन्न-सौधर्म्मेन्द्रनुं परम-परोपकार-गुण-खेचरेन्द्रनुम् । श्रीमत्कञ्चि-गोण्ड वीर-विष्णुवर्द्धन-देवनणुगिन-र्क्करिन दण्डनायकनु जगद्वशीकरण-परिणत-सौभाग्य-कुसुमशायकनुमेनिसि भरतण-

दण्डनायकनु-मग्रजं-**मरियाने-दण्डनायक**नुमन्वयागत-महा-प्रधान-पदवियन.....
रिसि ।

अरियं व्यावर्णिसळान् । अरिवार्य्यंणमेम्ब सद्गुण-त्रितयदोळम् ।
नेरेदरु जसमने जगदोळु । मरेदरु **मरियाने-भरत**-राज-चमूपर् ।
मरियानेय पडेदं जग- । उरुवनुजनकनेम्बुदन्ते भरत-राजने पडेदम् ।
पेरडेम् मूरु-लोकमुव् । उरुवण्णननेम्बुदवरनी-भुवन-जनम् ॥

इन्तु पोगळ्तेगं नेगळ्तेगं नेलेयादा-महानुभावरुत्पत्तियिं पवित्रीभूतमुमाद **भारद्वाज-गोत्र**दोळु ।

आ-क्रमळगर्भ-वंशदो- । ळ् एकीकृत-भुवन-मान्य-सौजन्यं तां ।
दाकरसनति-प्रौढ़-वि- । वेक-रसं ख्यातनातनन्वय-तिलकम् ॥
स्वीकृत-सद्-गुण-निकरम् । लोक-प्रभु-गंग-राज्य-**पोय्सल**-राज्यक्क् ।
एक प्रभुवेने नेगळ्दं । **डाकरसं** दण्डनाथ-वसुधा-रत्नम् ॥

आतन मनो-वल्लभे **येचियक्क** ।

आ दम्पतिगळ्गात्मज । रादर् **माकण**-चमूप-**मरियाने**गळी- ।
मेदिनी तम्मनिवर्च्चन्- । द्रादित्यरमोघमप्परेने कृत-कृत्यर् ॥
पेसरिन्दं मरियानेयेम्ब-जसवं...दियुं बल्लिनिन्द् ।
एसेवेण्टुं देसेयानेगळ्गमधिकं तानेम्बिनं तन्नोळे र्- ।
व्वेसनुं दानमुमोप्पे होय्सळ-नृपं गो...........सा- ।
धिसिदं श्री-मरियाने पार्त्थिवर सङ्गरावणी-रङ्गमम् ॥
आ-मरियानेय वधुगळु । भूमिय लक्ष्मिय वोलमर्दति-पेम्पिन्- ।
तामेसेव ग......... । ....गुणवतियर् ॥

अन्तु मद-गजद मद-रेखेगळन्ते **मरियाने**-दण्डनायकनोळोप्पम्बडेदा-चेडङ्गियरिव्र्
....................युमेनिसिद **दण्डनायकिति-देकव्वेगे** ।

सुतराद**माचण**नु- । मतर्क्य-विक्रान्त-शालि-**दाकरस**नु...
.... । ....नर ॥

श्रीमन्माचण-दण्डनायकने कल्पोर्व्वीजमुर्व्वीतळ..............................

....

[जिन शासनकी प्रशंसा। सत्याश्रम-कुल-तिलक, चाळुक्याधीश श्रीमत् त्रिभुवन मल्लका राज्य प्रवर्द्धमान था:—तब यादव कुलाम्बरद्युमणि त्रिभुवनमल्ल विनयादित्य पोय्सल कोंकण, आल्वखेद, बयल्-नाड्, तलेकाड् और सावमिलेसे घिरे हुए भूमि-प्रदेशपर राज्य कर रहे थे। उनकी पत्नी केलेयब्बरसि थी। (दोनोंकी प्रशंसा)।

जिस समय ये दोनों राजा-रानी सोसेवूरमें निवास कर रहे थे, केलेयल देवीने विनयादित्य-पोय्सलकी उपस्थितिमें मरियाने-दण्डनायकको देकवे-दण्डनायकित्ति-की सगाई कर दी। (शक वर्ष ६६६में)।

उसके बाद पोय्सल राजाओंकी, अन्य शिलालेखोंके समान ही, विष्णुवर्द्धन तककी उत्पत्ति दी है, अर्थात् एरेयङ्ग और उनके तीन लड़के बल्लाल, विष्णु और उदयादित्य।

विष्णुवर्द्धनके दो प्रधान मन्त्री थे: मरियाने दण्डनायक और भरतेश्वर दण्ड-नायक। (इन दोनों की और इनके कुटुम्बकी प्रशंसा)। मरियानेकी एक स्त्री जक्कनवे थी। दूसरी पत्नी देकव्वे-दण्डनायकितिसे दो पुत्र उत्पन्न हुए, माचण और डाकरस। माचणकी प्रशंसा।]

[EC, VI, chik magalur U., no. 160]

३०६

श्रवणबेलगोला—कन्नड़।

[कालनिर्देश रहित]

[जै० शि० सं०, प्र. भा.]

३१०-३११

श्रवणबेलगोला—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक १०६१ (?) = ११३९ ई०]

३१२

बादामी—कन्नड़।

[शक १०६१ (?) = ११३९ ई०]

नमः श्री-वासुदेवाय भोगिने योगमूर्त्तये।
हरेश्वराय सत्याय नित्याय परमात्मने ॥

स्वस्ति समस्त भुवनाश्रय श्रीपृथ्वीवल्लभ महाराजाधिराज परमेश्वर परमभट्टारक [सत्या] श्रय-कुळ-तिळक चाळुक्याभरण [श्री] मत्-प्रतापचक्रवर्त्ति **जयदेकमल्लदेव** [र] विजयराज्यमुत्तरोत्तराभिवृद्धिप्रवर्द्धमानमा-[चं]द्राकंतारं बरं सलुत्तमिरे [॥] [त] त्पादप[द्मो]पजीवि [।] श्रीवल्लभनमळं भू [दे]वाङ्घ्रिसरोजभृङ्गनङ्गजकल्पं कोविद-शुक-सहकारं देवं श्री**कालिदास**दण्डाधी[श]म् ॥ समधिगतपं[च]महाशब्द महासा[म]-न्ता[धि]पति महाप्रचण्डदण्डनायक समस्ताधिकारि मनेवेर्गडे काविम[र]स......ने (?) गल्द (?) **कालिदास**चमूनाथनाद.................... ......सुजनैकनिळयं श्री-ना...............धीशं ॥ मत्तन्ते काळिमरसङ्गुत्तम[1] ....**महादेव**-चमूपोत्तमनुदग्रमहिमं मत्तेभवलं विनीतनाततसौ(शौ)र्य्यं ॥ इन्तेनिसिद **महादेव**-दण्डनायकनुं **पालदेव**दण्डनायकनुं चालुक्य-जगदेक मल्लवरिषद एरडे(ड)नेय **सिद्धार्त्थि-संवत्सरद कार्त्तिक सु(शु)द्ध त्रयोदसि (शि) सोमवारदन्दु** श्रीमद्योगिजनहृदयानन्दनेनिप परमानन्ददेवरु माडिसि(द) योगेश्वरदेवर्गो वादाबिय सिद्धायदोळगे हतु (त्तु) गद्याण पोन्नु वरिसवरिसक्के कुडुहदेन्दाचन्द्राक्कर्स्थायियागे (गि) पेग्गडे-**रामदेव**-रसन विन्नपदिं बिट्टरु ॥ [क्रम] दिन्दितिद [नेय्दे] काव पुरुषङ्गायु [जय] श्रीयु [मक्के] यिदं कायदे [काय्त्र पापिगे कुरुक्षेत्रं] गळोळं वार

---

1. सम्भवतः यहाँ पाठ 'उत्तमसुपुत्र मोगेदं' है।

[णाविद्योळे र्-क्रोटि मुनीन्द्रं कविले] यं वेताम्बरं कोन्डुदेन्दवर्श नग्गु] मि(दें) [दुगारिद्दुदी शैवाद्वरं बात्रियोळु ॥]

यह लेख बताता है कि किस तरह, जगदेकमल्लके राज्यके द्वितीय वर्ष सिद्धर्थि संवत्सरमें उसके दो अधीनस्थ दण्डनायक **महादेव** और **पालदेव**ने रामदेव नामके किसी सरदारकी प्रार्थना करने पर मन्दिरको वार्षिक दानके रूपमें १० गद्याण 'सिद्धाय' नामके करको आयसे दिये ।

चालुक्य वंशावलीमें दो जगदेकमल्ल आते हैं : एक तो **जयसिंह द्वितीय** जिसका काल, सर डब्ल्यू इलियट (Sir W. Elliot) के मतके अनुसार, **शक ९४० से ९६२ (?)** है,—और दूसरा **सोमेश्वर तृतीय का ज्येष्ठ पुत्र एवं उत्तराधिकारी**, जिसकी सिर्फ उपाधि, नाम नहीं, शिलालेखों में आता है और जिसका समय, उसीके अनुसार **शक १०६० से १०७२** है ।

इस प्रकार दोनोंके राज्यके प्रारम्भका अन्तराल १२० (१०६०–९४०) वर्ष आता है । यह काल २ युगके बराबर होता है । इसके संवत्सरका नाम तथा राज्यका वर्ष अभी भी लेखको सन्देहापन्न बनाये रखते हैं । लेकिन इलियटके मैनुस्क्रिप्ट कलैक्शन (Elliot Ms. Collection) से जे. एफ. फ्लीटको इस बातका पता चला कि जयसिंह द्वितीयने 'श्रीमत्प्रतापचक्रवर्ति' यह पदवी कभी धारण नहीं की थी, और उधर यह पदवी सोमेश्वर द्वितीयके उत्तराधिकारीकी उपाधियों में हमेशा आती है । अतएव यह लेख द्वितीय जगदेकमल्लके समयका है, और इसकी तिथि **शक १०६१ (११३९–४० ई०)** है, जो कि **'सिद्धार्थ' संवत्सर** था ।]

३१३

बुद्रि—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

वर्ष कालयुक्त [११३९ ई० (लू. राइस) ।]

[बुद्रिमें, वन-शङ्करी मन्दिरके पूर्वकी ओरके पाषाणपर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

भद्रं **समन्तभद्रस्य पूज्यपादस्य** सन्मतेः ।
अकलङ्कगुरोर्भूयात् शासनायाघनाशिने ॥
धुरदोळ् **चाळुक्य-चक्रेश्वरन**धिक-बळं **तैलपं** सत्य-रत्ना- ।
करना-**सत्याश्रयं** विक्रम-भुज-बलदिं **विक्रमादित्य** भूपम् ।
वर-तेजं **अप्पणं** भूतळ-नुत-**जयसिंह** मनोजात-रूपम् ।
धरेपोळ् **त्रैलोक्यमल्लं** निरुपमनेसेदं **सोमनु**र्व्वी-ललामम् ॥
त्रिभुवन-जन-नुतनेसेदम् ।
त्रिभुवनमल्लं विरोधि-बळ-हृत-सेल्लम् ।
विभवद **भूलोकमल्लं** ।
विभु सले **जगदेकमल्ल** नाळदं धरेयन् ॥
कुन्तळ-विषयक्कधिपति ।
कुन्तळ-चक्रेशनल्लि **बनवसे नागेळ्** ।
कन्तु-श्री-निळयं सले ।
भ्रान्तेम् **जिड्डुलिगे**यल्लियुद्दरेयेसेगुम् ॥
बेळे दिर्द्दा-गन्ध-शाळी-वन-परिवृतदिम् तेङ्गु-पङ्क्तेज-षण्डङ्-
गळि (नो)प्पं पेत्तु तोर्प्पा-बकुल-तिळकाद चम्पकाशोक-जम्बू- ।
कुळदिं जम्बीर-पूगद्रुम-कुरवकदिं नागवल्ली-तटाकङ्- ।
गळिनादं हर्म्यदिन्दुद्दरे बुध-जन-सम्प्रीतियं माडुतिक्कु म् ॥
धरणीशं **गङ्ग-वंशं** जन-नुतनिरिवा-**चट्टिगं** वैरि-भूपा- ।
ळरुमं बेङ्कोण्ड-गण्डं सोगयिसे हरि-वा-**कञ्चि**गंधाळियिट्टम् ।
मरेयं तान्‌...नाडोळगण हणवं कोण्डना-**मारसिंगम्** ।
वर-तेजं कीर्त्ति-राजं रण-मुख-रसिकं **मारसिंगं नृपेन्द्रम्** ॥
गङ्ग-कुळ-कमळ-दिनकरन् ।
अङ्गज-सन्निभननून-दान-विनोदम् ।
भङ्गिसिदं वैरिगळम् ।
तुङ्ग-यशं नेगळ्दनोप्पेयेक**कल-भूपम्** ।

वृत्त ॥ परमार्त्थं वीर-तीर्त्थं पर-हित-चरितार्त्थं सदा-भावितार्त्थम् ।
तरुणी-सम्मोहनार्त्थं मनसिज-वनितारूर-संशुद्धितार्त्थम् ।
वर-शिष्टानीकरर्त्थं तले कुडे पडेगुं लोक-संरक्षणार्त्थम् ।
पुरुषार्त्थं स्वार्थलेन्देक्कल-नरपति भू-लोककन्ति...तिक्कुंन् ॥
वज्रवद्विद्विष्ट-भूपालरनवर्य[वि]दि कादि वेङ्कोण्ड-मण्डन् ।
दळवेत्तं वोडे गण्डं त्रिल्द-भटर वेन्नित्तु पोपल्लि गण्डम् ।
क्ळनं पेल्दहे गण्डं रिपु-मदहरणं गङ्ग-मार्त्तण्ड-देवन् ।
तळेदं भू-कान्तेयं येक्कल-नृप-तिलकं चारु-वीर-दण्डदिन्दन् ॥
क्रूरारातीभ-कुम्भ-स्थळ-विदलन-कण्ठीरवं विश्व-विद्या ।
धरं श्री-भारती-मण्डन-कुन्द-मणि-हारं मनोजात-रूपा- ।
कारं गम्भीर-नीराकारनमल-गुणं सत्य-भाषा-विभूतम् ।
ताग-शुभ्राभ्र-गङ्गा-शशि-विशद-यशङ्केलङ्गोप्पुतक्कुंम् ॥
अङ्ग-कलिङ्ग-वङ्ग-कुरु-जाङ्गळ-कौशळ-मध्यदेश-भद्- ।
रङ्ग-तुरुष्क-गौड-मगधान्ध्रमवन्ति वराट-चोळ दे- ।
शङ्गळ पण्डितर् क्कविगलुत्तम-यात्रकोन्दे कोट्टु कर्- ।
णणङ्गें समानमागे सलेदेक्कलनित्तपनोप्पे वित्तमम् ॥
अनर्दिन वरि-वोनलिन्दम् । कमनीयं कल्प-वल्लि पुट्टुव तेरदिम् ।
प्रमदा-रत्नं जनियिसल् अमळाङ्गने **सुग्गियब्बरसि** धारिणियोल्- ॥
परमेष्टि-स्वामि देव्वं गुरु तनगेसवो-**माघणन्दि-व्रतीन्द्रम्** ।
वर-मन्त्रर् वन्धु-वर्म्मं निरुपम- मरेयं एरिदा-**मारसिङ्गम्** ।
नरपाळनग्गना-**सुग्गियब्बरसि** यताशर्गे कोट्टन-दानम् ।
धरेगोप्पम्बंतुदा-गङ्गवदि वसवं वीरगुं मादन्दम् ॥
वीर-जिनेन्द्र-पाद-सरसी [रु] ह-राजित-राजहंसयम् ।
चारु-चरित्रियं गुण-पवित्रेयनूर्ज्जित-दान-शीलेयम् ।
भारति-कर्ण्णपूरे मुनि-राज-पयो [रु] ह-भृङ्गयं गुणा- ।
धारु **सुग्गियब्बरसियं** धरे वण्णिसुतिक्कुं मागळुम् ॥

सवणन-बिळिलोळे विट्टळ् । भुवन-स्तुते मत्तगेप्पे सले पन्नेरडम् ।
भव-हर-पञ्चवसदिगा- । प्रवरान्विते **सुग्गियब्बरसि** धारिणियोळ् ॥
कतिपय-कालान्तरितं । हितवेनिपा-पूर्व्व-वृत्ति तळेयलु पडेगुम् ।
सततं जिन-पूजोत्सव- । रतेयप्पा-**कनकियब्बरसि**यिं धरेयोळ् ॥
जिन-पूजेगे जिन-महिमेगे । जिन-राजन मजनक्के जिन-भवनक्कम् ।
जिन-मुनिगेसवी-दानमन् । अनवरतं माडुतिक्कुं **कनकियब्बरसि** ॥
जिन-गृहमिल्लदल्लि जिन-मन्दिरमं जिन-गेहमागियुम् ।
जिन-मुनिगळ्गे दान-निचयं दोरेकोळ्द् थाविनल्लिया- ।
मुनि-जनगित्तु कीर्त्ति-लते पल्लविसुत्तिरे लोकदल्लियन्त् ।
अनुपममागला- **कनकियब्बरसि**योप्पुतमिक्कुं धात्रियोळ् ॥
सुर-कुजमनिळिसि **शक्रन** । सुरभियनिन्नेबुदेन्दु चिन्तामणियम् ।
परिहरिसि कुडले वल्लळे । परमार्त्थं **चट्टियब्बरसि** धारिणियोळ् ॥
चनकनु **मारसिङ्ग**-नृपनग्रजनेक्कल भूप वल्लभम् ।
दिनकर-तेजनोप्पे **दशवर्म्म** नृपङ्गेरेयङ्गनग्र-नन्- ।
दननुजात **केशव**-नृपाळ चतुर्विध-दानदिन्द मान्- ।
तनदोळे **चट्टियब्बरसि**यं बुध-मण्डलि मेच्चि वर्णिकुम् ॥
परमाराध्यं जिनेन्द्रं गुरु ऋषि-निवहं **बोप्प-दण्डेश** मावम् ।
निरुतं **बोप्पब्बे**यन्ता-जनति जनकना-**कोटि-सेट्टि** प्रमोदम्- ।
वेरशिर्द्दा-**शान्तियक्क** करवेसर्दिरला-पत्नि सम्यक्त्व-रत्ना- ।
करनप्पी-**केति-सेट्ट**द्देरेय वसदियं माडिदं पुण्य-पुञ्जम् ॥
विमळ-यशो-वितानननकळङ्कनुपार्जित-जैन-धर्म्मना- ।
गमिक-जन प्रपूर्ण्ण-विकचाब्ज- सरोवर-राजहंसनेन्द् ।
अमम धरित्रि बण्णिपुदु भव्य-शिखामणि भव्य-बन्धुवम् ।
सुमति-निवासनं नेगळ्द् केतननुत्तम-दान-सत्वनम् ॥
परम-**श्री-मूलसंघं** सोगयिसुतिरे श्री-**कोण्डकुन्दान्वयम्**···।
इरे श्री-**काणूर्गणं** गच्छमेसदिरे सन्दा-**तिन्त्रिणीका**ख्यमोघं ।

वेरसा-श्री-रामणन्दि-व्रति-पतियेलेदं पद्मणन्दि-व्रतीन्द्रम् ।
वर-शिष्यङ्ग्र-शिष्यं नेगळ्दनु मुनिचन्द्राख्य-सिद्धान्त-देवम् ॥
अन्तवर शिष्यनेसेगुं । भ्रान्तेम् श्री-भानुकीर्ति-सिद्धान्तेशम् ।
क (श`त्रु-मद-दर्प-दळनम् । सन्तत-बुध-क्ळर-भुवनेगळ्दं धरेयोळ् ॥
कनक-जिनालयवेसेदिरल् । अनुपमनेकल-नृगाळ सवणन-विलिलोळ् ।
वन-सुतमेने मानुकीर्त्ति- । मुनिगोप्पिरं बिट्ट मत्तरं पन्नेरडम् ॥
नेगळे चाळुक्य-चक्रि-वर्षं जगदेक-महीश शाविरम् ।
मिगिलवत्तु-कालयुत-माघ···दा दशमी बृहस्पती ।
सोगयिसे वार पन्नेरडु-मत्तरना कोडगेय्महादमम् ।
तगरदे भानुकीर्त्ति-मुनीगेकल बिट्ट शशाङ्कनुळ्ळनम् ॥
कोटि-पयं कविलेयनेळ्- । कोटि-तपोवनर वेद-विदरं पन्निर् ।
कोटियने कोटि-तीर्त्थदे । कोटि-महा-दिनदोळ्ळिदनिन्तिदनळिदम् ॥
(मेशाका अन्तिम श्लोक) श्री-चन्द्रणिकेय तीर्त्थद प्रतिबद्ध··॥
[जिन-शासनकी प्रशंसा । पृथ्वीका शासन करनेवाले क्रमशः ये राजा हुए:—]

१ चालुक्य-चक्रेश्वर तैलप; २ सत्याश्रय; ३ विक्रमादित्य; ४ अय्यण; ५ जयसिंह; ६ त्रैलोक्यमल्ल; ७ सोम; ८ त्रिभुवनमल्ल; ९ भूलोकमल्ल; १० जगदेकमल्ल ।

कुन्तल-देशमें, बनवसे-नाडमें, बिड्डुलिगेमें उदरेके वृक्षों और कृषीचोंका वर्णन ।

गंग-वंशके राजा मारसिंगका वर्णन । राजा एकलकी प्रशंसा । अङ्गादि नानादेशोंके विद्वान् और कवियोंके लिए वह कर्णके समान दानी था ।

मुगियब्बरसिकी प्रशंसा । उसके गुरु माघनन्दि-व्रतीन्द्र थे, राजा मारसिंग उसका बड़ा भाई था । मुगियब्बरसिने यतीशोंको आहारदान तथा बढ़िया पञ्च-बसदि दी थी । बसदि के लिए सवणर्विळिमें भूमिदान किया था ।

कनकियब्बरसिने इस पूँजीमें और भी वृद्धि की । जहाँ जिन-मन्दिर नहीं थे

वहाँ जिन-मन्दिर बनवाये, और जहाँ जिन-मुनियोंको आमदनीका क्षेत्र नहीं था वहां उसने दान दिये।

चट्टियब्बरसि कामधेनु और चिन्तामणिके समान थी। उसके पिता राजा मारसिंग थे, ज्येष्ठ भाई राजा एक्कल, पति राजा दशवर्म्मा था, जिसका एरेयङ्ग ज्येष्ठ पुत्र था, और उसका छोटा भाई राजा केशव था।

शान्तियक्केके परमदेव जिनेन्द्र थे, गुरु ऋषि-गण थे, बोप्प-दण्डेश उसका चाचा, बोप्पले उसकी मां, कोटि-सेट्टि उसके पिता थे,—उसके पति केति-सेट्टिने उद्द (द्ध) रेकी बसदिका निर्माण कराया।

मूलसंघ, कोण्डकुन्दान्वय, काणूर-गण और तिन्त्रिणीक-गच्छमें रामणन्दि-व्रति-पति—पद्मणंदि—मुनिचन्द्र सिद्धान्त-देव—भानुकीर्त्ति-सिद्धान्तेश क्रमशः शिष्य-परम्परामें हुए। अन्तिम मुनिको राजा एक्कलने कनक-जिनालयके साथ-साथ चालुक्य-चक्री जगदेव राजाके राज्यमें (उक्त मितिको) भूमिदान दिया]

[Ec, VIII, Sorab Tl. No. 233]

३१४

रायबाग;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[१]

["रायबाग गाँवमें नरसिंगशेट्टिके जैन मन्दिरके पाषाणखण्ड पर।"]

यह एक चालुक्य शिलालेख है। इसमें **दासिमरसु** सेनानायकके दानका वर्णन है। यह दान **सिद्धार्थी संवत्सर** के आषाढ़ महीनेकी कृष्णपक्षकी त्रयोदशी, सोमवारको, जबकि सूर्य दक्षिणायन हो रहा था, किया गया था। यही संवत्सर **जगदेकमल्लदेव** राजाके राज्यका दूसरा वर्ष था। यह दान **हूविनबाग** के नरसिंगशेट्टिके जैन मन्दिरके लिये किया गया था। सर डब्ल्यू. ईलियटकी सूची में दो चालुक्य राजाओंकी 'जगदेकमल्ल' उपाधि है,—एक तो **जयसिंह द्वितीय** की, जिसका क़रीब-क़रीब काल **शक ९४० से शक ९६२** तक दिया हुआ है,

और दूसरे का नाम तो नहीं दिया हुआ है, परन्तु इतना मालूम है कि वह सोमेश्वर तृतीयका उत्तराधिकारी था। शक वर्ष ६४२, उसी तरह शक वर्ष १०६२ सिद्धार्थी संवत्सर था, और तदनुसार वर्त्तमान लेखका काल सन्देहास्पद है, लेकिन सम्भवतः **शक १०६२** (११४०-१ ई०) यथार्थकाल है।

[JB, X, P. 183-184, N. o. 10. a.]

३१५

मौंट शिवगङ्गा;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[विना काल-निर्देशका [लगभग ११४० ई० (लू. राइस) ।]

[गङ्गाधरेश्वर मन्दिरके मण्डपके खम्भे पर]

एतन्मित्र-कुळाम्भोज-भास्करस्य यशस् स्थिरम्।
विष्णोरडळ-वंश-श्री **नायक**स्यैव शासनम्॥
ललितेन्दु-द्युतियं तेरल्मि भवनं माडिट्टरो संकरा-।
चळमं मेङ् कडिदिट्टरो शिव-गृहं माडिट्टरो पुण्य-सङ्-।
कुळमं येळिमेनल्के कृत्तु **शिवगङ्गेशाद्रि**योळ् माडिदम्।
कुळ-नामं गडिमेन्दु देव-गृहमं **सामन्त-कञ्जासनम्**॥
अदळ-कुळ-रत्न-भूषणन्। अदळ-कुलाम्भोज-**भानुवदळे**श्वरमेन्दु।
उदुभव-चरितं माडिद-। नुदुत्र-यशं **बिट्टि-देव**नी-शिवगृहमम्॥
पूवलि पूजे निवेद्यं। दांविगे जळ गन्ध धूपवत्तते पात्रम्।
पावुळमेनिप्पुवनारैद्। आवगमवं कपके वर्प्प धनमं कोट्टम्॥
अन्तुमल्लदेयु निज-जनकन पेसरिं ब्रह्मेश्वर-देवालयं वूरं ब्रह्मसमुद्रमं नेगल्द··· ···मत्तम्।

अदळ-जिनालयङ्गळदळेश्वर-देवगृहङ्गळित्तिवेन्द्।
अदळसमुद्रमेन्देसेव विष्णुसमुद्रमिवेन्दु धर्मदिम्।

पुदिदवनन्दु माडिसिद कट्टिसिदं केपेयं निजान्वयक्कू ।
उदुभवमागलेन्ददळ-वंश-शिखामणि [वि] ष्णुवर्द्धनम् ॥
अल्लि वळिक तम्मवगे परोत्त-विनयमागे बोचसमुद्रमेम्ब केपेयं कट्टिसि
शिव-महिमेयेडेगे केशव- । भवनोद्धरणक्के...ऐ-कोडिगेधर्म्म- ।
प्रवरर्गो बेडितनितर्- । त्थमनिवनीव **चिट्टि-देव**नदटर देवम् ॥
स्वस्ति श्री **विष्णु-सामन्तं** स्थिरं जीवि

[इस लेखमें बताया गया है कि चिट्टि-देव, अपरनाम विष्णुवर्द्धन, शिवगङ्गशाद्रि **(Mount Shivaganga)** में शिव-मन्दिर बनवाया था । चिट्टि-देव अदळ-कुळका था । उसने, इसके सिवाय, अदळ-जिनालय, अदलेश्वर-देवगृह भी बनवाये थे ।]

[EC. Ix, Nelamangala U., No. 84]

३१६

मुगुलूर—कन्नड ।

[बिना काल-निर्देशका, ११४० ई० (लू. राइस).]

[बस्तिके अन्दर पड़ी हुई मूर्त्ति के पीठस्थलपर]

श्रीपाल-त्रैविद्य-देवर गुड्डगळु मेळसिन **मारि-सेट्टि**यरिं नेगर्त्तिय **गोवन-सेट्टि**यरु **सोगे-नाड मुगुळि**यलु बसदियं माडिसिदरु...माडिसि श्री-**पार्श्व**-देवर प्रतिष्ठेयं माडिसि आ-बसदियुमं आ-देवर भूमियुमं तम्म गुरुगळिगे धारा-पूर्व्वकं माडि कोट्टरु ॥

[श्रीपाल- त्रैविद्य-देवके गृहस्थ- शिष्य मारि-सेट्टि और गोवन-सेट्टिने सोगे-नाडमें मुगुळिमें एक 'बसदि' बनवायी और उसमें पार्श्व-देवकी स्थापनाकर, बसदि और उसकी जगह (जमीन) देवताके लिये अपने गुरुको अर्पित करदी ।]

[E, C, V. Hassan U. 129.]

३१७

—अञ्जनेरी (नासिक के पास);—संस्कृत

—[शक १०६३=११४२ ई०]

यादववंश शिलालेख

(१) ओं पंच परमेष्ठिभ्यो नमः । स्वस्ति श्री शक संवत् १०६३ दुंदुभिसंवत्सरां-
तर्गत ज्येष्ठ सुदि पंचदश्यां सोमे अनु-

(२) राधानक्षत्रे सिद्धयोगे अस्यां संवत्सरमासपक्षदिवसपूर्व्वायां तिथौ समधिगता-
शेषपंचमहाशब्दद्वारावतीपुरवरे-

(३) श्वर विष्णुवंशोद्भवयादवकुलकमलकलिकाविकासभास्करयादवनारायण
सामंतपितामह मांडलिकदमन इत्यादिसमस्त-

(४) निजराजावलीविराजितमहासामंत श्रीसेउणदेवविजयराज्ये तत्पाद-प्रसादा-
वाप्तमहामहत्तमः प्रतापकंपितवैरिवर्गः

(५) संग्रामयौंड [:] शूरवैरिवधूविनोदनकल्लोलः अनवरतदानार्द्रीकृतदक्षिणकर-
प्रकोष्ठः निशितनिस्त्रंश (निस्त्रिंश) विदारितारा-

(६) तिकरिकुंभस्थलगलितमुक्ताफलमंडितरणांगन (रणांगण) मनस्विनीमानो-
न्मूलनकंदर्पः दर्पांधमदीरं (र) द्विपः सौ (शौ) र्यौदार्यवारांनिधि-

(७) स्थैर्यगुणरत्नोत्साह मंत्रशीलसंपन्न [:] प्रजापालनानंदशत्रुपराजयानंतोषित-
कीर्तिव्याप्तदिग्वलयः[1] अनेकशास्त्रनीतिशा-

---

1 इस वाक्य का ठीक अर्थ नहीं निकलता । यदि 'पराजयानं' के बाद 'द' लुप्त हुआ मान लें, तो 'शत्रुपराजयानंदतोषित' ऐसा पाठ होगा और जिसका ठीक अर्थ भी निकलेगा ।

(८) स्त्रोक्तविवेकवर्द्धितबुद्धिकौशलसहस्त्रविज्ञानप्रभुत्वमंत्रोत्साहशक्तिसामर्थ्यरूपला-
वण्यविच्चित्रवक्तव्यताभोगोपभोगराष्ट्रकोश-

(९) लाद्यनेकविषयगुणगणालंकृतशरीरः व्यर्थीकृतप्रतिपन्थिमनोरथः संग्रामविजय-
लक्ष्म्यालानस्तंभ. रत्नाय (क) र इव अनंतगां-

(१०) भीर्य्ययुक्तः हिमादि (द्रि) रिव अपरिमितमहिमान्वितः षाड्गुण्यसंपन्नाविपर्य-
यतनिष्ठः[१] देवद्विजगुरुवराचाय (र्य) साधुपूजाभिरतः दीनान—(ना)—

(११) थोद्धरणक्षमः रविरिव प्रतिदिवसोपनीयमानोदयः परिहास-प्राकारः ईद्रि
(ईदृग्) गुणविशिष्टश्रीपाणुमउडरी सर्व्वव्यापारे कुर्व्व-

(१२) ति सतीत्येतस्मिन्काले प्रवर्त्तमाने श्री सेडणाख्येन महानृपेण प्रधानयुक्तेन
विचार्य भक्त्या देवाय चंद्रप्रुतये प्रदत्तं हट्टद्ध-

(१३) यं भारविवर्जितं च श्री साधुवत्सराजेन स्वकुलतिकभूतेन देवद्विजगुरु
वराचार्य पूजाभिरतेन श्री लाहडसाधुना सह दशर-

(१४) थ साधुना स्वकीयं हट्टदानं कृतं तथा-गृहदानं च कृतं । चन्द्रप (प्र)
भाय देवाय कंदर्पदहनाय च । विशुद्धदेहरूपाय सर्व्वसत्त्वहिताय च ॥ त-

(१५) था नगरे वर्षं प्रति द्रम्मपंचकं कृतं आयुः पुत्रा धनं सौद्यं (ख्यं) सौभाग्यं
राज्यमक्षयं । आभिश्रे (श्रै) ष्ठयं यशः स्वर्गं भूमिदो लभते फलं ॥ बहु-

(१६) भिर्वसुधा भुक्ता सगरादिभ्रि[२] । यस्य यस्य यदाभूमिः (मेः) तस्य तस्य तदा
फलम् । दाता चैवानुमंता च स्वर्गस्योपरि तिष्ठति । हर्ता हारइ (यि)—

(१७) ता भूमिः (मेः) पच्यते रौरवे ध्रुवं ॥ स्वदत्तां परदत्तां वा यो हरेच्च
वसुंधरां । षष्टि (ष्टिं) वर्षसहस्राणि विष्ठा (ष्ठा) यां जायते कृमिः ॥
श्रीकोलश्वरपंडितान

(१८) सुतेन दुष्टगणकगजकंठीरवेण साधुगणकचरणारवृंद (विंद) मकरंदलुब्धषट्पदेन
श्रीदिवाकरपंडितेन इदशासनं सै (शै) लपट्टे लिखित-

---

१ इस वाक्य का कुछ भी अर्थ नहीं निकलता ।

२ यह व्याकरणकी दृष्टिसे गलत है; ठीक प्रचलित रचना यह है 'राजभिः सगरादिभिः ।'

(१६) मिति······मंगलं महाश्री.

सारांश

दुन्दुभि संवत्सर शक १०६३ के ज्येष्ठ मासके शुक्ल पक्षकी पञ्चमी तिथि, सोमवारको राजा सेउणचन्द्र (तृतीय) ने नगर (संभवतः अञ्जनेरी) में तीन दुकानें आठवें तीर्थंकर चन्द्रप्रभ भगवानके मन्दिरके खर्चेके लिए दीं; तथा वत्सराज नामके एक धनिक व्यापारीने दो और व्यापारियों, जिनके नाम लाहड और दशरथ थे, के साथ-साथ उसी कामके लिए एक दुकान और भवन दिया, जिस नगरमें यह मन्दिर है उसके अधिकारी ऑफीसर 'महामहत्तम[१]' का नाम 'वागुमडर्भा' था जो सुननेमें भद्दा मालूम पड़ता है।

अभी तक प्राप्त सामग्रीसे निम्नलिखित यादव वंशावली का निर्णय किया जा सकता है:—

५. वद्दिग। झञ्झा शिलहार, शक ८३८ की पुत्रीसे विवाहित।

७. वेसुक। गोगिराज की जो कि चालुक्यसामन्त था, पुत्री से विवाहित।

८. भिल्लम (द्वितीय) जो आहवमल्लकी बहिनके द्वारा जयसिंह चालुक्य की पुत्री से विवाहा गया था।

---

१ जिलेके अधिकारीको जिसे आजकल 'कलेक्टर' कहते हैं, 'महामहत्तम' कहा जाता था।

६, सेडणचन्द्र (द्वितीय.) शक ६६१.

... ...

... ...

... ...

(१३१) सेडणचन्द्र (तृतीय) शक १०६३.

[IA, XII, P. 126-128]

३१८

कसलगेरी—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

—[शक १०६४=११४२ ई०]—

[कसलगेरी (देवलापुर परगना) में, कल्लेश्वर मन्दिरके सामनेके पाषाण पर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥
भद्रमस्तु जिनशासनाय सम्बधतां प्रतिविधानहेतवे ।
अन्यवादिमदहस्तिमस्तकस्फोटनाय घटने पटीयसे ॥

स्वस्ति समधिगतपञ्चमहाशब्द महामण्डलेश्वरं **द्वारावतीपुर**वराधीश्वरं यादव-कुलाम्बरद्युमणि सम्यक्त्वचूडामणि मलेपरोळ् गण्ड कोङ्गु-नङ्गलि-गङ्गवाडि-नोळम्बवाडि-तलेकाडु उच्चङ्गि-बनवसे-हानुङ्गलु-गोण्ड भुजबळ **वीर-गङ्ग-होय्सळ-विष्णु वर्द्धन-देवर** विजयराज्यमुत्तरोत्तराभिवृद्धिप्रवर्द्धमानमाचन्द्रार्क्कतारं सल्लुत्तमिरे तत्पादपद्मोपजीवि ।

स्वस्ति स्वस्तिळकै शुभैश्शुभतमैः पुण्याहवैः कीर्त्तयां ।
स्थाप्यन्ते जित-पार्श्व जिनपादपङ्कजदळे श्री-ह्री-धृतिर्द्धीयंताम् ।
त्वं दत्तं देयातु देव-देवभुवने मुक्त्यङ्गनावल्लभो .

नळ-नहुषादि सोमदेवनेने सोवण धन्यनो पन्नगी-वैनतेयनो ॥
मारन सतिगं सीतेगे । रेवतिगनु (रु) न्धतिगे अत्तिमव्वेगो सदृशं पेळ् ।
सारगुणं सोमन सतिगुदारगुणं निन्वन्नेयराद मारव्वेणो-धारिणियलु ॥
आतन सतियं पोलिपडी- । भूतळदोळ् रूपु अजवनितेगे रतिगन्त्
आ-सति पार्श्वद्वियेनि- । प जिनतु-पाद-भक्ते माचले-नारि ॥

आ-मारव्वे सोमनोडने लीलेयिं...उळ् र कुल-ललेनेयेनिसि जळचर-निचय-निचित-कुन्द-कुड्ड-मळ-वदन-वन-देवतेये वन-लक्ष्मिये कल्प-तरुवेनिसि वहु-पुत्रियरं पडेदु जिन-जननियेने जिनधर्म्मैककाधारी-भूतेयुं आहाराभय-भैषज्य-शास्त्र-दीन-विनोदेयुं जिनगन्धोदकपवित्रीकृतोत्तमाङ्गेयुं जिनसमयसमुद्धरणेयुं पार्श्व-देव-पादाराधकेयुमप्प ।

जिनपति दैव पोरेदाल्दने होय्सळविष्णुभूप सज्-
जननुते मारे माचले गुणान्वितेयर्तनगग्रपुत्र रेन्द् ।
अनुपम-चट्ट-देव कलि-देवने सन्द्-
अनुपम-कीर्त्तियं नेरेये ताल्दद-भव्यने सोवणनी-धरित्रियलु ॥

स्वस्ति समस्तगुणसम्पन्ननुं विबुधप्रसन्ननुं आहाराभयभैषज्यशास्त्रदानविनोदनुं जिनगन्धोदकपवित्रीकृतोत्तमाङ्गनुं जिनसमयसमुद्धरणनुं तोडल्दर डोङ्कियुं तोडरे वल्-गण्डनुं नुडिदु मत्तेअनुं परनारी-पुत्रनुं पार्श्व-देव-पादाराधकनुमप्प कलुकणि-नाडाल्व सामन्त-सोवेय-नायकं भानुकीर्त्ति-सिद्धान्त-देवर गुड्डं कलुकणि-नाड् आल्वं हेव्विडिरूव्वाडियलु उत्तुंगचैत्यालयवं माडि श्री पार्श्वदेवरं प्रतिष्ठे माडि श्रीमूलसंघ-सुरस्ट (स्थ)-गणद ब्रह्मदेवर् कालं कच्चि धारापूर्वकं माडि कोट्ट देवर अङ्ग-भोगक्कमाहारदानक्कं वसदिय जीर्णोद्धारक्कं विट्ट दत्ति शक-वर्ष १०६४ नेय दुन्दुभि-संवत्सरद पौष्य-मासदुत्तरायण-संक्रम...मी-बृह (स्पति) वारदन्दु वसदिगे वायव्यद देसेयलु अरुहनहळ्ळिय सीमान्तर ...डे (अन्तिम ८ पंक्तियोंमें सीमाकी चर्चा है, और इसके बाद अन्तिम पद्य)

[उसी पाषाणके बायीं ओर—]

स्वस्ति **कल्कणि-नाड एक्कोटि-जिनालय** वेन्दु समे...रु कूडि कोट्ट हेसर ॥
स्वस्ति स्वारि-**माचोज** कलुकणिनाड आचार्य्य कलियुग-विश्वकर्म्म

[जिनशासनकी प्रशंसा ।

जिस समय (अपनी इसेशाकी उपाधियों सहित), भुजबल वीर-गङ्ग-होय्सळ-विष्णुवर्द्धन-देवका विजयी राज्य अपनी वृद्धि पर थाः—तत्पादपद्मोपजीवी **सामन्त-सोम** था (उसकी प्रशंसा)।

जिससमय वीर-गङ्ग पेर्म्माडि चोज राज्य पर आक्रमण करनेके लिये हदुवनकेरीमें कदुले नदीके किनारे-किनारे जा रहे थे, एक जंगली हाथी भागता हुआ आकर सेना पर टूट पड़ा । अय्कणने उस हाथीको अपने बाणोंसे मार दिया, जिसपर कलुकणि-नाड्के शासकने उसे 'करिद्-अय्कण' की उपाधि दी ।

करिद्-अय्कणका सबसे बड़ा पुत्र **नाग** था, उसका ज्येष्ठ पुत्र **सुग्ग-गऊण्ड** था, उसका पुत्र सामन्त-सोम था । उसकी मारय्वे और माचले नामकी पत्नियाँ थीं । मारय्वे की बहुत-सी पुत्री हुई, पर माचले के पुत्र हुए, जिनमें ज्येष्ठ चट्टदेव और कलि-देव थे ।

कलुकणि-नाड्के शासक, सामन्त-सोवेद-नायक ने (अपनी बहुत-सी उपाधियों सहित), जो कि धार्मिक जैन और भानुकीर्त्ति-सिद्धान्तदेवके गृहस्थ-शिष्य थे, हेब्बिदिरव्वाडिमें एक ऊँचा चैत्यालय बनवाया और उसमें पार्श्व-जिनकी स्थापना करके पूजा-सेवाके खर्चके लिये, मन्दिर की मरम्मत तथा आहारदानके लिये, श्री मूलसंघ तथा सूरस्त (स्थ) गणके ब्रह्मेश्वके पादों को प्रक्षालनपूर्वक **'अरुहन-हल्लि'** नामक गांव दानमें दिया ।

जिनालयका नाम 'कल्क (कलुक) णि का एक्कोटि जिनालय' रक्खा था । शिल्पि का नाम **माचोज** था । यह कलुकणि-नाड् का आचार्य, कलियुग का विश्वकर्म्मा था ।]

[E C, IV, Nagamargala U., no, 94 and 95]

३१६

बोगादि—संस्कृत तथा कन्नड़ भग्न ।

[काल लुप्त, पर प्राय: ११४९ ई०]

[बोगादि (होसकेरी परगना) में, ध्वस्त वस्तिके पासमें पड़े हुए एक पाषाण पर]

... ...गम्भीर... ... ... ।
... ...जिन-शासनम् ॥

... ...श्रीमन्महाराजाधिराज परमेश्वर परमभट्टारक **सत्याश्रयकुल**-तिलक **चालुक्या**भरण... ... ...राज्य... ...नव् आ-चन्द्रार्क्कतारं सलुत्तमिरे तत्पादपद्मोपजीवि ।

श्रीकान्तानेत्रनीलोत्पलवदनसरोजात-स... ... ... ।
...लोकत्रयो... ... ...चन्द्रिका-दोः—प्रताप- ।
...त्यक्त-युक्त-क्रम-कलित-...च्-चक्र-खेद-प्रमोद- ।
श्रीकं श्री **विष्णुभूपं**... ... ...मार्त्तण्ड- रूपम् ॥
... ...। ते मगुल्दा-सेवुर्विं हिमं- वरेगं ।
क्रम-केळियिं तोळ्-चलं । समद-त्त्रि... ...नृपालम् ॥

स्वस्ति समधिगत... ...महा-मण्डलेश्वरं ...पुर-वरेश्वरं **यादवकुळा**म्बरमद्युमणि मण्डलिक-चूड़ामणि... ... ...शार्द्दूळ पाण्ड्यळनलधिवडवा (वा) नलं **नरसिंग**... ... ...वंशवन-दावानलं ... ... कुळ-विळय...वेङ्गिरि-गिरीन्द्र-वज्र-दण्ड .. ... वळ-बहळ-तमः—पटल-मार्त्तण्ड सत्त-को...न ... ... कोप-पावक .. .. निरवद्य हृद्य-विद्या-विनोदन... ... ...सन्तोष... ... ... सासिरमुं गङ्गवाडि-मू... ... ... दुष्ट-निग्रह-शिष्ट-प्रतिपालन... ... रक्षिसि राज्यं गेय्युत्तमिरे । तत्पादपद्मोपजी... महा-प्रधान .. ..षाड्गुण्य-नैपुण्य-स्वयम्बुद्ध **विष्णुवर्द्धन** दे... ... ...रत्नाकर-सुधाकर... ... ...महापरमेश्वर-पाद... ... ...देवर... ...

जनैक-शरण••श्रीमद्जितसेनभट्टारक-पादाराधना-लब्ध••• ••• ••• •••त्रिलास नय-विनयादिविशिष्ट-गुण-गण••• :•• ••• ••• ••• ••• प्रतिदिन-जिन पूजा-जनित-प्रमोद चतुर्व्विधदानविनोदं सरस्वती••• ••• ••• ••• •••प्रान्त नियम-••• ••• •••
अप्प श्रीमदकलङ्कान्वयवज्र प्राकारं नामादि समस्तप्रशस्ति-सहितं श्रीमन्महाप्रभु•••
••• •••देव••• ••• ••• ••• ••• भ्युदय-युत ••• ••• ••• ••• दानादि••• •••
नयनदिन् आ-माधवं विश्व ••• ••• ••• ••• ••• ••• ••• ••• ••• •••
••• ••• ••• स्तुत्यनादं ••• ••• ••• ••• पुरुष ••• ••• सत्व ••• ••• माडि-राजम् ॥ परिपूर्णंद ••• ••• ••• ••• ••• ••• •••श्रीक-रणद-माधवन कीर्ति लोक-त्रयन ••• ••• ••• ••• ई-भोगवत्तियो ••• ••• ••• ••• महा-भोगं माडि-राज-विभु••• ••• ••• ••• सिदम् ।

श्रीकरणद ••• ••• ••• ••• ••• ••• धर्मं । श्रीकरवेनलजितसेनमुनिपदविनत, ••• ••• निस ••• ••• नेय । श्रीकरणद माडि-राज ••• ••• स ••• ••• ॥
अन्ता-महानुभावनन्वय-क्रमद पोगल्तेयु चलदलाद नेगर्त्तेयु आल्पो ••• •••
धन ••• ••• ••• कुळ-पूजितनाद महानुभावनारल्व वियु अल्लदो ••• ••• •••
नमयनण्डलेवं भुवन-भूषण ••• ••• मत्तं ••• ••• यनङ्कळ ब्रह्मनेनिसि गङ्ग-मण्डल
••• ••• ••• मनाद जन-नाथ ••• देवं ••• बुध ••• ••• सभे ••• ••• चोळ-नृपाळ ••• ••• ••• जलधि नृप ••• ••• ••• ••• महा-प्रधान-मनः—प्रिये ॥
••• मन-मुज्य-विलय ••• ••• ••• साम्राज्य ••• ••• ••• ••• जग-विनूते वनिता-रत्नम् ॥ भुवन ••• चोणमय्यन तनूज ••• ••• ••• मनोभव-रू ••• ••• •••
भाग्य-शक्तियेने ••• ••• सन्दोड म ••• ••• ••• ••• ••• नारायणं मनु-मार्गा-ग्रणी बोणमय्यनिवर ••• ••• ••• ••• धन्यळे••• ••• इनरिव्वर्गं न ••• •••
••• ••• ••• निमद-क्रमनन्तक-नारायणनु भुवननुतं ••• ••• ••• ••• ••• •••
••• महत्त्वमनोल्दु राज्यलक्ष्मी ••• ••• ••• अद्भुत-शौर्य्यंदोळ् जयश्री-करण •••
नृप ••• ••• ••• ••• राज्यदल्लि निर्व्याजमागि ••• गळन्तु कळादिकार •••
माधवनु मादेव बोणनेने नेगल्द माधव सम्यग्-दृग्-बोध-चरितगळिं श्रेयो-धरणीशन-वोल् नताग्रणियादनी-गुरु-जन ••• ••• अजितसेन-मुनीश्वरन् इन्द्र-वन्दित-परम-

जिने ··· ··· ··· अवनीश-शिखामणि **विष्णुवर्द्धन** पोरेदनशेषभव्यरे निज ···
··· ··· ··· ··· ··· यनो माडिराजनवनी-तळदोळ् ॥ ··· ··· ··· ··· ···
आतन वल्लभे ॥

वृ० ॥ हावविलास ··· ··· ··· समन्वित ··· समेतेयागियु ।
रेवति तां प्रभाव ··· ··· ··· ··· यागि धर्म्म-स- ।
दावने ··· योळ् विदग्धेयेनिसिद ··· ··· बुगे वि- ।
ख्यावनि ··· **उभयव्वेय** कीर्तिय ··· ··· ··· ··· ॥

··· ··· ··· ··· सौभाग्य-भाग्यवति ··· ··· द् उमे भारति रति ··· येने सन्दु
मूत्रकं पाटियं ··· ··· ··· ··· ··· ··· कणव्वेयनलु सजन-वन्द्येयेनिसिदुमेयक्क-
ने तळप ··· ··· ··· ··· कुलद चलद गुणदुन्नतिया पुरुषार्त्थ ··· ··· ··· ···
··· ··· ··· ··· वेळेदवेनलु सच्चरितं श्रीकरण माडिराजनुर्व्वी- ··· ··· ···
वनिजं नेगल्दम् ॥

ई-कलि-कालद् मनुजर् अ- । नेकरुमं कणनिन ··· ··· ··· ···।
बुधानीक बण्णिसे, गल्दं । श्रीकरणद माडि-राजनूर्जित-तेजम् ॥

आतनन्वयगुरुकुळक्रम ।

अवटुतटमटति झटिति स्फुटपटुवाचाट धूर्ज्जटेरपि जिह्वा ।
वादिनि **समन्तभद्रे** स्थितवति तव सदसि भूप कास्थाऽन्येषाम् ॥१॥
तारा येन विनिर्जिता घटकुटीगूढ़ावतारा समं
बौद्धैर्यो धृतपीडपीडितकुदृग् देवार्त्थ-सेवाञ्जलिः ।
प्रायश्चित्तमिवाङ्घ्रिवारिजरजःस्नानं च यस्याचरद्
दोषाणां सुगतस्य कस्य विषयो **देवाकलङ्कः** कृती ॥२॥
योऽसौ घातिमलद्विषद्बलशिलास्तम्भावली-खण्डन-
ध्यानासिः पटुरर्हतो भगवतस्सोऽस्यप्रसादीकृतः ।
छात्रस्यापि स **सिंहनन्दिमुनि**ना नो चेत्कथं वा शिला-
स्तम्भो राज्य-रमागमाध्वपरिघस्तेनासि खण्डो घनः ॥३॥

गृहीतपक्षादितरः परस्स्यात् तद्वादिनस्ते परवादिनस्स्युः ।
तेषां हि मल्लः **परवादिमल्लस्तन्नाम** मन्नाम वदन्ति सन्तः ॥४॥
···द-नय-कलङ्कः कीर्त्तने **धर्म्म कीर्त्ति**-
र्व्वचसि सुरगुरुः··· ··· ··· ···।
इति समयगुरूणामेकतस्सङ्गतानां
प्रतिनिधिरिव **देवो** राजते **वादिराजः** ॥५॥
काणादः कोणमेकं भजति,··· ··· ···गतस्**सौगतो**ऽयम्
मूल्युं,**मीमांसकाद्याः** किमिह··· ··· ··· ··· ···।
येनायं न्यायमुद्राप्रतिमरस्रसः प्रौढिपर्य्ययरूढो
वादं दुस्तर्क्कगाढप्रथिमगरिवृधा··· ··· ···णेऽम् ॥६॥
श्रीमच्चालुक्यचक्रेश्वरजयकटके वाग्वधू जन्मभूमौ
निष्काण्डं डिण्डिमः पर्य्यटति पटु-रटो**वादिराजस्य** जिष्णोः ।
जह्युद्यद्वादिदर्प्पो जहिहि गमकतागर्व्वभूमा जहाहि
व्याहारेर्प्यो जहीहि स्यु (स्फु) टमृदुमधुरश्रामकाव्यावलेपः ॥७॥
नाहङ्कारवशीकृतेन मनसा न द्वेषिणा केवलं
नैरात्म्यं प्रतिपद्य नश्यति जने कारुण्यबुद्ध्या मया ।
राज्ञः श्री**हिमशीतलस्य** सदसि प्रायो विदग्धात्मनो
बौद्धौघान् सकलान् विजित्य सुगतः पादेन विस्फोटितः ॥८॥
पाताले व्यालराजो वसति सुविदितं यस्य जिह्वासहस्रं
निर्गन्ता स्वर्गतोऽसौ न भवति धिषणो वज्रभृद्यस्य शिष्यः ।
जीवेतां तावदेतौ निलयबलवशाद् वादिनः केऽत्र नान्ये
गर्वं निर्म्मुच्य सर्व्वं जयिनमिनसभं **वादिराजं** नमन्ति ॥९॥
वाग्देवीं सुचिरप्रयोगसुदृढप्रेमाणमप्यादराद्
आदत्ते मम पार्श्वतोऽयमधुना श्री **वादिराजो मुनिः** ।
भो भो पश्यत पश्यतैव यमिनां किं धर्म्म इत्युच्चकै-
र्ब्रह्मण्यपरः **पुरातन मुने**र्व्वाग्वृत्तयः पान्तु वः ॥१०॥

.... देवो
विदितसकलशास्त्रो निर्जिताशेषवादी ।
विमलतरयशोभिर्द्धोतदिक् चक्रवालो
विगतसकलसङ्गस्त्यक्तरागादिदोषः ॥११॥
एकास्यो ... ... गुणपरिणताननो भारतीनश्च सर्व्वकळाधरो ... ...
... ... क्षितितलं तन्मूलमालम्ब ... ...
गुरून् गुणगुरून् परान् परमयोगनिष्ठापरान्
तृणीकृतजगत्त्रयस्फुरितदेवनिन्दाकरान् ।
स्थिरान् नयविशारदान् सकलशास्त्रसूत्राकरान्
नमामि ... दिवाकरान् **अजितसेन-योगीश्वरान्** ॥१२॥
जगद्दुरिमघस्मरस्मरमदान्धगन्धद्विप-
द्विधाकरणकेसरी चरणभूष्यभूभृच्चिरवः (च्छिखः) ।
द्विषड् गुणवपुस्तपश्चरणचण्डधामोदयो
दयेत मम **मल्लिषेण-मलधारिदेवो** गुरुः ॥१३॥
नैर्म्मल्याय मलाविलाङ्गमखिलत्रैलोक्यराज्यश्रिये
नैष्किञ्चिन्यमतुच्छतापहृतये न्यञ्चद्भुताशं तपः ।
यस्यासौ गुणरत्नरोहणगिरिः श्री**मल्लिषेणो गुरु**-
र्वन्द्यो येन विचित्रचारुचरितैर्द्धात्री पवित्रीकृता ॥१४॥
उद्दप्तप्रतिवादिकुञ्जर ... ... वचनप्रौढ़ि ... ...
... ... मयामलनखक्रूर ... ... ।
... ... विकल्पविभ्रमघटा ... ...
स्याद्वादाचलमस्तकस्थितिरसौ **श्रीपाल** कण्ठीरवः ॥१५॥
... ... गायन्ति ... शास्ति कथं **श्रीपालदेवो**ऽसौ त्रैविद्य-विद्योदयः ।
श्रीमत्**समन्तभद्रस्वामि**गल् **अकलङ्कदेव**रिं बलिक श्रीमत्तपो ... ... सरि-
व्रति-नाथरु । अवरिं बळिक
... वृ ॥ आ-**वक्रग्रीव-र्य्यं**-व्रति-परिवृढ ... ... व्रतीन्द्रं ।

देवेन्द्रसुत्यनादं बळिक कनकसेनाह्वयव्योदिराजर् ।
श्रीवाणीवल्लभश्रीविजयमुनि ··· ··· ··· अजितपालनाथर्
देवर् श्रीवादिराजं बलिकमजितसेन-द्वितीयाकलङ्कर् ॥१६॥
अवरिं बळिक श्रीमत्कुमारस्वामिगळिं मल्लिषेण-भट्टारकरिं तमेते ··· ···
आवन वियपनो परवादिविसरबहुनङ्किंघनं श्रीपाळ-
त्रैविद्यगद्यपद्यवचोविन्यासं निवर्णविनयविलासम् ॥
सकलविद्याध्यनकपदिमकरननन्तरार्किकद्विरदन-के-
सरी ··· ··· ··· ··· ··· ··· इति शाब्दिकसरोरुहवनमार्तण्डम् ॥१७॥
वडमाति ··· ··· ··· ··· ··· ··· निम्बुरवत्रमुथिथिं ··· ··· वचोविमवं विष्णु-
पद्मनाभन

··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· समन्तभद्रश्रीमत्-

सन्तानदल्लि नेगट्टुदु । नन्दर श्री-द्रमिळ-संघमी-वसुमतियोळ् ।

··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ···

··· ··· ··· विनूतोऽपि विदशकमलाभरणोऽभूत् दणेन ।

पूतं दृष्ट्वा पुनरनुदिनं प्राज्यपद्मर्चनाद्यैः

··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ॥

··· ··· शक-वर्षं सासिरदनवत्तेळनेय रक्ताक्षि-संवत्सरद पौष्यदमावस्ये ··· वार-उत्तरायण-व्यतीपात-ग्रहणदुं कूडिदन्दु तुङ्गभद्रातीरद ··· ··· रन्देवर ··· ···
हेग्गडे मा···य्य माडिसिद श्रीकरण जिनालयके श्रीमद्होय्सल-देवर भोगव ··· धारा-पूर्व्वकं माडि कोट्टर ··· लं सासिरदनवत्तेळनेयरक्ताक्षि संवत्सर-दोळे नृप-तुङ्ग होय्सळ-नृपनोलिदित्त श्रीकरण-जिनालयक्के भो ··· ··· आ-वृत्तिगे सीमा-सम्बन्धवेन्तेन्दडे (आगे की आठ पंक्तियोंमें सीमाओं की चर्चा है)
···दतां जैनशासनम् ॥ (हमेशाकी भाँति अन्तिम श्लोक) ··· ···
[जिन शासन की प्रशंसा ।
जिस समय महाराजाधिराज परमेश्वर परमभट्टारक, सत्याश्रयकुल

तिलक, चालुक्याभरण, ... का विजयी राज्य चारों ओर प्रवर्द्धमान था:—

विष्णु-भूप की प्रशंसा ।

जिस समय (अपनी उपाधियों और पदों सहित)......राज्य की रक्षा कर रहे थे:—तत्पादपद्मोपजीवी,—महाप्रधान, विष्णुवर्द्धन-देवके राज्यरूपी समुद्रका चन्द्रमा, **अजितसेन** भट्टारकके पैरोंका आराधक, **माधव** या **माडिराज** मुनीम (accountant) था, जो वोणमय्य और......का पुत्र था। माडि-राज की पत्नीका नाम उमयब्बे या उमयक्के था ।

निम्नलिखित उसके 'गुरु-कुल' का क्रम था:—

१. समन्तभद्र

२. देवाकलङ्क-पण्डित (२ सान्तर श्लोकोंमें महिमाका वर्णन)

३. सिंहनन्दि-मुनि

४. परवादि-मल्ल

५. देव वादिराज (५ श्लोकोंमें इनकी महिमाका वर्णन है।)

६. अजितसेन-योगीश्वर

७. गुरु मल्लिषेण मलधारि-देव (२ निरन्तर श्लोकोंमें वर्णन)

८. श्रीपाल-त्रैविद्य (२ सान्तर श्लोकोंमें महिमाका वर्णन)

गुरु-परम्पराके आचार्यों की नामावली ।

विभुपद्मनाभकी प्रशंसा ।

श्री करण-जिनालयको जिसको......हेग्गडे मादय्यने तुङ्गभद्रा नदीके किनारे लेखोक्त तिथिमें बनवाया था, होय्सल-देवने धारापूर्व्वक भोगवती (नदी) का दान दिया ।]

[Ec, IV, Nagamangala Tl. No., 100]

३२०

कोल्हापुर—संस्कृत तथा कन्नड़

[शक १०६५=११४३ ई०]

१ श्रीमत्परम-गंभीर-स्याद्वादामोघ-लाञ्छनम् [।]
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥१॥

२ स्वस्ति श्रीर्जयश्चाभ्युदयश्च ॥ तत्वानलनानार्थ-प्रतिरचि प्रदर्शकं [।] अर्हत-

३ [:] पुरुदेवस्य शासनं मोह-शासनं ॥ स्वस्ति [।] श्री शीलहारमहा-क्षत्रियान्वये विन-

४ स्तारेर-रिपु-प्रतिर्जतिगो नाम नरेन्द्रोऽभूत् । तस्य सूनवो गोङ्कलो गूवलः

५ कीर्तिराजश्चन्द्रादित्यश्चेति चत्वारः । तत्र गोङ्कल-भूतलस्वेम्मारसिंहो नाम नन्दनः तस्य तनुजाः गूवलो

६ गङ्गदेवः बल्लालदेवः भोजदेवः गण्डरादित्यदे [व] श्चेति पञ्च । तेषु धार्मिक-वर्म्मनस्य वैरि-का-

७ न्ता-वैधव्य-दीक्षा-गुरोः सकल-दर्शन-चक्षुषः श्रीमद्-गण्डरादित्यदेवस्य प्रिय-तनयः ।

८ स्वस्ति समधिगतपञ्चमहाशब्द-महामण्डलेश्वरः । नगरपुर वराधीश्वरः । श्री-शिला-

९ हार-नरेन्द्रः निज-विलास-विजित-देवेन्द्रः जीमूतवाहनान्वयप्रसूतः । शौर्य्य-विख्यातः ।

१० सुवर्णगरुड-ध्वजः युवतिजन-मकरध्वजः निर्जित-रिपुमण्डलीकदर्पः । मरुवङ्क-सर्पः ।

११ अय्यन-सिंगः सकळ-गुण-तुङ्गः । रिपु-मण्डळी (ळि) कभैरवः । विद्विष्ट-गज-
कण्ठीरवः ।

१२ इडुवरादित्यः । कलियुग-विक्रमादित्यः । रूपनारायणः । नीति-विजित-चा-

१३ रायण- । गिरि-दुर्ग-लङ्घनः । त्रिहित-विरोधि-बंधनः । शनिवारसिद्धिः ।
धर्म्मैकबुद्धिः । महा-

१४ लक्ष्मीदेवी-लब्ध-वरप्रसादः । सहज-कस्तूरिकामोदः । एवमादि-

१५ नामावली-विराजमान-श्रीमद्-**विजयादित्यदेवः** । वळवाड-स्थिर-
शिबिरे सुख-संकथा-विनोदेन राज्यं कु-

१६ र्व्वाणः । **शक-वर्षेषु पञ्चषष्ट्य त्तर-सहस्र-प्रमितेष्वतीतेषु प्रवर्त्त-
मान-दुं-**

१७ **दुभि-संवत्सर-माघ-मास-पौर्ण्णमास्यां सोमवारे । सोमग्रहण-**
पर्व्व-निमि-

१८ त्त **माजिरगेखोल्ला**नुगत-हाविन-हेरिलगे-ग्रामे । सामन्त-कामदेवस्य हड-

१९ वलेन श्री-मूलसङ्घ-देशीयगण-पुस्तक-गच्छाधिपतेः **क्षुल्लकपुर**-श्री रूप-
नारायण-जि-

२० नालयाचार्य श्रीमन्**माघनन्दि**सिद्धान्तदेवस्य प्रिय-च्छा [त्] त्रेण ।
सकलगुणरत्न-पात्रेण ।

२१ जिन-पदपद्म-भृङ्गेन । विप्रकुल-समुत्तुङ्ग-रङ्गेण । स्वीकृत सद्भावेन ।
वासुदेवेन

२२ कारितायाः वसतेः श्री-पार्श्वनाथदेवस्याष्टविधार्च्चनार्थं । तच्चैत्यालय-
खण्ड-

२३ स्फुटित-जीर्णोद्धरार्त्थं । तत्रत्य-यतीनामाहारदानार्त्थं च । तत्रैव ग्रामे

२४ कुण्डि-दण्डेन निवर्त्तन-चतुर्थ-भाग-प्रमितं क्षेत्रं । द्वादश-हस्तसम्मितं
गृह-निवेशनं

२५ च । तन्माघनन्दि-सिद्धान्तदेव-शिष्यानां **माणिक्यनण्दिपण्डित-
देवानां** । पादौ प्रक्षाल्य धारा-पू-

२६ व्वंकं सर्व्वनमस्यं सर्व्व-बाधा-परिहारमाचन्द्रार्क्कतारं सशासनं दत्तवान् ॥
२७ तदागामिभिरस्मद्वंश्यैरन्यैश्च । राजभिरात्मसुख-पुण्य-यशस्सन्तति-वृद्धिभिः स्व-
२८ दत्ति-निर्व्विशेषं प्रतिपादनीयमिति ॥ शान्तरसक्के ताने नेलेयाद
२६ जिन-प्रभु तन्न दैवमश्रान्त-गुणक्के ताने नेलेयाद तपोनिधि **माघनन्दि** सैद्धान्तिक-
३० योगी तन्न गुरु । तन्नाधिपं विभु कामदेव-सामंतनिदुत्तमतन्निदु पुण्यमि-दुन्नति **वासुदेवेन** ॥

भावार्थ

[यह शिलालेख कोल्हापुर शहरके शुक्रवार दरवाजेके पासके जैनमन्दिरके सामनेके एक पत्थर पर उत्कीर्ण है ।

शिलालेखमें शीलदार कुलके **महामण्डलेश्वर** विजयादित्य देवके एक भूमिदानका उल्लेख है । पहलेके दो श्लोकोंमें जैनधर्मके यश की गाथा गाई गई है । तत्पश्चात् ३-१५ तक की पंक्तियोंमें दाताकी निम्नलिखित वंशावली और उसका वर्णन है—**शीलदार** क्षत्रिय वंशमें **जतिग** नामका एक युवराज था, जिसके चार लड़के, गोङ्कल गूवल, कीर्त्तिराज, और चन्द्रादित्य थे । राजपुत्र गोङ्कलका लड़का **मारसिंह** था । उसके पुत्र **गूवलगङ्गदेव, बल्लालदेव, भोजदेव,** तथा **गण्डरादित्य-देव** थे । और **गण्डरादित्यदेव**का पुत्र **महामण्डलेश्वर विजयादित्यदेव** था । उनके ये पद थे—'नगरपुरवराधीश्वर, श्री शिलाहारनरेन्द्र, निजविलास-विजितदेवेन्द्र, जीमूतवाहनान्वयप्रसूत, शौर्य्यविख्यात, सुवर्णगरुडध्वज, युवतिजन-मकरध्वज, निर्दलित-रिपुमण्डलीक-दर्प्प, मरुवङ्क-सर्प्प अप्पनसिंग, सकलगुणतुङ्ग, रिपुमण्डलिक-भैरव, विद्विष्टगज कण्ठीरव, इडुवरादित्य, कलियुग-विक्रमादित्य, रूपनारायण, नीतिविनितचारायण, गिरिदुर्ग्गलं

धन, विहितविरोधिविंधन, शनिवारसिद्धि, धर्म्मैकबुद्धि, महालक्ष्मीदेवी-लब्ध-वरप्रसाद, तथा सहजकस्तूरिकामोद।'

पंक्ति १५–२६ में **विजयादित्यने**, अपने **वळवाड**के निवासस्थान पर आरामसे राज्य करते हुए, सोमवारके दिन चन्द्रग्रहण के अवसरपर, दुन्दुभिवर्षकी माघ महीने की पूर्णिमा तिथि सोमवारको भूमिदान किया। यह दुन्दुभिवर्ष शक वर्ष १०६५ के बीत जाने पर ही लगा था। जमीन **कुण्डी** नामक देशी माप से चौथाई **निवर्तन** थी। उसी सालमें १२ हाथका एक मकान भी अर्पण किया था। जमीन और मकान दोनों **आजिरगखोल्ल** नामके जिलेके **हाविन-हेरिलगे** गाँवके थे। यह एक मन्दिरको दान किया गया था जिसे माघनन्दि सिद्धान्तदेवके शिष्य तथा कामदेव-सामन्तके अधीनस्थ वासुदेवने बनवाया था। यह दान मन्दिर के जीर्णोद्धार तथा वहीं रहनेवाले मुनियोंके लिये आहारदानके प्रबन्धके लिये था। माघनन्दि सिद्धान्तदेव **क्षुल्लकपुर** (कोल्हापुर ही का दूसरा नाम) के रूपनारायण जैनमन्दिरके पुजारी (या पुरोहित) थे, मूलसंघ, देशीयगणके पुस्तकगच्छ के प्रधान थे। उनके एक दूसरे शिष्य **माणिक्यनन्दि पण्डित-देव** थे। इस दानके करते समय इन्हीं पण्डितदेवके पादोंका प्रक्षालन किया गया था। इस दानको सब करों और बाधाओंसे सदैवके लिये मुक्त किया गया था। २७–२८ की पंक्तियोंमें भविष्यमें होनेवाले राजाओंसे प्रार्थना की गयी है कि वे इस दानकी हमेशा रक्षा या सन्मान करते रहें, क्योंकि यह उन्हीं एक का किया है। और यह शिलालेख अन्तमें पुरानी कर्णाटकलिपिमें वह कहते हुए समाप्त होता है :—

शान्तरस प्रधान जिन देव ही मेरे देव हैं, अश्रान्त गुणवाला तपोनिधि, योगी माघनन्दि सैद्धान्तिक ही मेरे गुरू हैं और कामदेव सामन्त ही मेरे राजा या मालिक हैं।']

[EI, IV. No. 27, T and A.]

३२१

मत्तावार—कन्नड़।

—[शक १०६५=११४३ ई०]

[मत्तावार (चिक्कमगलूर परगना) में, पार्श्वनाथ मन्दिर के एक पाषाण पर]

स्वस्ति शक-वरुषद् सासि ६५ सन्द रुधिरोद्गारि (य)-संवत्सर ... ... दिरेशनिवारदन्दु ... ... य बुध जक्कवे-गन्ति हेग्गेरेय मल्लिकापुरदिन्द पुरवेय्दलु। नुत्रत ... ... देवेन्द्र बुधम् ॥

श्रावकर तोवेतर तु-। धावळि-परमोपकारि मति-चतुर क्ळा-।

कोविदर वन्दु वन-मा-। निदान-पथरण्य सु-कवि-देवेन्द्र-बुधम् ॥

गौजड-वेग्गडेय गुरुगळु देवेन्द्र-पण्डितरिगे अवर मदमाळिगे देकव्वेय निसिदिय कल्लं मत्तवारद गामुण्ड बूचि-वेग्गडे नारणवेग्गडेय्यं पडिकर-माडुव मावलय्य नु निलिसिदरु

[(उक्त मितिको) गौजके वेग्गडेके गुरु देवेन्द्र-पण्डित की पत्नी देकव्वे का स्मारक-पाषाण मत्तावारके गामुण्डोंने खड़ा किया था।]

[Ec, VI, Chik magalur tl, no 162]

३२२

हिरे-आवली—संस्कृत—तथा कन्नड़

[सोरब परगना, हिरे-आवली-गाँव]

[ध्वस्त जैन वस्तिके पास २५ वें पाषाणपर]

स्वस्ति समस्तसुरासुरमस्तकमकुटांशुजालजलधौतनद प्रस्तुतजिन धर्म्म ... ... मर्त्त-भित्तिःस्तम्भनखिलभव्यजन ... श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनं।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनं ॥

स्वस्ति समस्तभुवनाश्रय श्रीपृथ्वीवल्लभ महाराजाधिराज परमेश्वरं परमभट्टारकं सत्याश्रयकुळतिळकं चाळुक्याभरणं श्रीमज्जगदेकमल्लदेव ··· निर्म्मळकीर्त्ति ··· चोच्चंड ··· ··· मंडितवीरश्रीयं निळे सळे नेगर्द रजेय ··· नुर्व्विगे ··· समुद्रदि ··· ··· ··· विपुळकष्टमनेंतिरुतिर्प्प ··· वनेक चळुक्य-पेर्म्मचमूप ··· ॥

श्रीजगदेकमल्ल महीनाथन लक्ष्मिगे रम्य हर्म्यवि-
भ्राजितमष्ट··· ळगं-मिवदळे निप्पमैमेयं
साजदेताळिद् तत्पतिगे वार्द्धिवरं नेळनं निमिर्च्चिरा-
राजित पट्टसाहणियोळोळदोरे बम्मणदण्डनाथनोळ् ॥ ··· दळं सैरिपु-यकेरगदोळ्पं मीरे ताप्रभावदंदे किडलीय-युगंदे यप्पुदे नाडेरदंदिनं तन्नुडि नन्नियागि नडेदोर्ड स्वामिसंपत्तिगास्पदवाद अनेक विक्रमविलास योगदंडाधिप ॥

वृ॥ चित्तदलुमल्लदेतन्न ।
सत्यद गुणविल्ल घनदे नीरेरिकरं ।
नित्तरिसि मूरुलोकम्- ।
नुत्तरिसितु निन्न कीर्त्तिलतेयुं कृतियुं ॥

कंद ॥ अय्दं जिनपदगणेशं ।
मेय्देगेयदे मनद धृतिय कामिनियरोळं- ।
तेय्दि ··· ··· बेससे ··· सुलु ।
मय्दुनमल्लरस क ··· नाहवरामं ॥
शंकरदेवतनूजनु ।
किंकरनेनिसिर्द स-णदान्वयदोडेयं ।
शंकिसदे धर्म्मदोळवं ।
शंकाधिगुणंगळं ··· यरेयिसिदं ॥

स्वस्ति समस्तप्रशस्तिसहितं श्रीमन्महाप्रधानं योगेश्वरदण्डनायकं बनवसे पन्निच्छ्रसिरमनाळुतमिरे जिडुवळिगे एप्पत्तर अधिकारि पेर्ग्गडे मयुदुन मल्लिदेवं । श्रीमच्चाळुक्य विक्रमवर्षद दुंदुभि संवसरद पुष्यसुद्ध सोमवारदंदुत-

रायणसंक्रांतिय पर्व्वनिमित्त दंडनायकगे बिन्नपंगेय्दु श्रीमदवलिय **पार्श्वदेवर्गे** आरगुलियवयल साल माविनह्लि विट्ट केय्यि ··· दुण्डिय गलेयलु कम्म 5—1

स्वस्ति समस्तजिनपादांभोजवरप्रसादरूमप्प **मुद्दगाकुंडनुं** (others named) अक्कसालेजगरणियोल् ··· प्रतिष्ठेयें मडि समस्तप्रजेगळिर्द्दु । स्वस्ति यमनियम-स्वाध्यायध्यानधारणमौनानुष्ठान जपगुणसंपन्नरप्प । **श्रीमूलसंघद सेनगणद पोगरि गच्छद वीरसेनपंडितदेवर** सहधर्म्मिगळप्प **माणिक्यसेन पण्डितदेवर** कालं कर्च्चि धारापूर्व्वकं माडि सर्व्वनमस्यमागि कोट्टरु । ई धर्म्मव प्रतिपालिसिदर् अनन्तपुण्यमनेय्दुवरु इदनळिदवरु अधोगति इळिवरु ॥

(हमेशाका अन्तिम श्लोक)

[काल सन् ११४२-४३ ई० । दुन्दुभि वर्ष, पुष्य शुद्ध सोमवारकी उत्तरायण संक्रान्ति । यह लेख पश्चिमी चालुक्य राजा जगदेकमल्ल द्वितीय के राज्यका उल्लेख करता है और उसके बनवसे-१२००० के प्रदेशपर शासन करने वाले योगेश्वर दण्डनायक सेनाध्यक्षकी तारीफ़ करता है । पेर्गडे मय्दुन मल्लिदेव सेनाध्यक्षकी अनुमतिसे जिडुवलिगे-७०के राज्य पर शासन कर रहा था और इसने आवलीके भगवान् पार्श्वनाथको एक भूमिका दान दिया था ।

एक और दान, संभवतः एक जैन मन्दिरको मुद्द गावुण्ड तथा और दूसरे लोगोंके द्वारा किया गया था (इसकी दिगत लुप्त है) । ये लोग जैनधर्मके पक्के भक्त थे । यह दान वीरसेन पण्डित देवके सहधर्मा माणिक्यसेन पण्डितदेवके पाद-प्रक्षालन पूर्वक किया गया था । वीरसेन पण्डितदेव मूलसंघ, सेनगण और पोगरि गच्छके थे ।]

[EC, VIII, sorat tl. no 125]

३२३

श्रवणबेलगोला—संस्कृत तथा कन्नड ।

[शक १०६८=११४५ ई०]

[देखो, जैन शिलालेख संग्रह, प्रथम भाग]

३२४

यल्लादहल्लि = संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[वर्ष क्रोधन = ११५४ ई० (लू० राइस)]

[यल्लादहल्लि (नेल्लीकेरी प्रदेश) में, गाँवके दक्षिण-पूर्वमें, ध्वस्त बस्तिके पासके पाषाण पर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥
यस्य सद्धर्ममाहात्म्यात् सौख्यं जग्मुर्मुनीश्वराः ।
तस्य श्रीपार्श्वनाथस्य शासनं वर्द्धतां चिरम् ॥
जयति विगत-संख्याराति-भूपाल-भूमि-
ध्वज-गज-तुरगादीन् संविजित्याग्रहीद्यः ।
सकळ-समय-धर्म्माचार-शौर्य्योरु-विद्वद्-
गुण-मणि-खनि भूभृत् पोय्सळ-क्ष्मापतिस्तः ॥
श्रीकान्तानेत्रनीलोत्पलवदनसरोजात-स-स्मेर-लीला-
लोकं लोकत्रयोज्जृम्भितविशदयशश्चन्द्रिकादोःप्रताप-
व्याकीर्णं त्यक्त-युक्त-क्रम-कळित-कुभृच्चक्रखेद-प्रमोद-
श्रीकं श्रीविष्णुभूपं वेळगुगे नगमं राजमार्त्तण्डरूपम् ॥
जळधि-व्यावेष्टितोर्व्वीपतियेनिसि सुखं बाळो चन्द्रार्क्कतारं ।
तळकाडं कोण्ड-गण्डं निगुलर पदेयंकूडे वेङ्कोण्ड-गण्डम् ।
तळवारल् तळ्त भूपालर हेडतलेयं थोप्येनल् होय्द गण्डम् ।
बलवद्राज्यङ्गलं तन्नलगिन मोनेयोळ् पाय्दु कट्कोण्डगण्डम् ॥
तलेमलेयादियागे निमिर्द्दुर्ग्गदुर्ग्गमनावगम्महा-
बळ-पद-घातदिन्दरेदु सण्णिसुतुं नडेतन्दु तन्दु तन्न दोर-
बळदलि कोङ्ग चेङ्गिरिय मीसेगळं ससितन्ते विष्णु-दोर-

ब्ब्लदले किचनोत्तिरिपि कळङ्गिन वेगिन वेङ्गिन नन्दनङ्गळं ॥

स्वस्ति समधिगत पञ्चमहाशब्द महामण्डलेश्वर **द्वारावतीपुर**वराधीश्वर। **यादवकुलाम्बरद्यु**मणि। मण्डलीक-चूडामणि। श्रीमद्अच्युत-पादाराधना-लब्ध-विष्णु-प्रभावम्। दिक्पालक-पराक्रमाक्रमाक्रमण-पटु-पराक्रमुक-स्वभावम्। शत्रु-क्षत्रिय कलत्र-गर्भस्रव-सम्पादक-गभीर-शङ्ख-नाद। वासन्तिका-देवी-लब्ध-वर-प्रसाद। हिरण्यगर्भ-तुलापुरुषादि-महा-क्रतु-सहस्र-सन्तर्पित-पितृ-देव-गुरु-सम ••• निरुपम-क्षत्र-गुण-निर्जित-विराट-विष्णु-**वीर-विजयनारायण-पुरा**वरं ख्यात-देव-कुळ-कुळ.चळकुळ (कुळ)-यादवब्बळधि-विष्णुचन्द्र विलास-मुद्रित-मही-लोकन् अविकरण चातुर्वर्ण्ण-चतुरानन। चतुर्व्वेदपाण्डित्य-मण्डितगोष्ठिपञ्चानन समरमुखगृहीताहितमहीकान्त-कामिनीजन-मुखनिरीक्षणक्षणकृतसूर्य्यनिरीक्षण नृसिंहध्याननिश्चलीभूत-निर्म्मळचरित्र। पराङ्गनापुत्र। सकळजनसत्यनित्याशीर्व्वाद-सामर्थ्य सम्पादितकल्याणायुरारोग्याभिवृद्धि-युक्त दुर्द्धरसमरकेळीलंपट दोर्व्वळाबळ प्रदुरशीलाश्वपतिगजपति प्रमुखराज-लोक-निर्द्दयनिर्द्दळनोपार्जिताश्वगजादिनानाविधरत्ननिचय-रचितरलक्ष्मीविलासम्। सरस्वतीनिवासम्। **चोळकुल**प्रलय-भैरवम्। चेरम-स्तम्बेरम-राजकण्ठीरव। **पाण्ड्य-कुल**पयोधि वडवानल। पल्लवयशोवल्लीपल्लवदावानल। **नरसिंहवर्म्मसिंह** सरभ निश्चल-प्रतापाधिपतित-**कळपाळा**दि-नृपाल-सलभम्। निज-सेना-नाथ-निर्द्दलित **जगन्नाथपुर** दग्द्-दारिद्र्य-विदारण-प्रवीण-कारुण्य-कटाक्ष-निरीक्षण प्रत्यक्ष-पञ्चेक्षण-चतुस्समुद्र-मुद्रित-वसुमती-मनोहर-लक्ष्मी-वल्लभ। भुवलोकदुर्लभ। नामादि-समस्त-प्रशस्ति-सहितम् श्रीमत्-**कञ्चि-गोण्ड विक्रमगङ्ग वीर-विष्णु-वर्द्धन-देवरु** गङ्गवाडि-तोम्बत्तर-शरीरतुं। **नोळम्बवाडि**-मूवत्तिर्-च्छासिरमुं। **वनवसे**-पन्नि-र्च्छासिरमुं। **हलसिगे**-पन्निर्च्छासिरमुवेरडर-नूर्व्वरं दुष्टनिग्रह-शिष्ट-प्रतिपालन-पूर्व्वकवेक-च्छत्र-च्छायेयिन्दाळ्दनामहानुभावनिं वळिय।

कन्॥ तन्देवल् अच्छोदित-तेटॆ-। द्रिन् दवे नेगल्दादिरासिन-पदविगे समनेम्न्।
ओन्दु-विभव-प्रभावते-। यिन्दं **नरसिंह**नरसु-गेय्युत्तिर्द्दम्॥

वृ०॥ हिमदि सेतु-वरं तोलल्दु नेलनं निष्कण्टकं माडुव-।
ळि ळ महोग्रानियोळान्तिदिर्द्दिदर्टि **चङ्गाल्व**नं कोन्दुवा-

समदेमावळियं इय-प्रततियं चेम्बोङ्कळं नूलरतु-
नमुमं कोण्डु नृसिंहं-भूपनेळेयं दोस्-स्तम्भदोळ् तालिदम् ॥

व ॥ अन्तु समस्त-मण्डलिक-सामन्त-सेनानाथ-परिजन-परिवृतनागि दोरसमुद्रद
नेलेवीडिनोळ् समुत्तुंग सिंहासनासीननागि सुखसङ्कथाविनोददिं राज्यं गेय्यु-
त्तमिरे तत्पादपद्मोपजीवि । स्वस्ति समस्तराज्यभरनिरूपितमहामात्यपदवीप्रख्यातं
शक्तित्रयसमन्वितं श्री-वीर-विष्णुवर्द्धन-देव-प्रताप-लक्ष्मी-रक्षणाङ्ग- (२)
रक्षक सत्य-शौच-स्वामि-हिता दि-सद्-गुण-शिक्षकं चतुर्व्वेदमहादाननिरतं श्रीमद-
भिनवभरत श्री वीर विष्णुवर्द्धनदेवभुज्यविजयमण्डितमानवाकारचक्रम् ।
स्वामि-समादेश-साधितसकलदिक्चक्र । कौशिक कुलाम्बरदिवाकरम् । सम्य-
क्त्वरत्नाकर । नामादिसमस्त प्रशस्तिसहितम् श्रीमन्महाप्रधानम् ।

वृ० ॥ कुडे नृपमेरे होय्सळ-महीभुजनक्करदुक्केयिन्दे तां ।
पडेदनशेयराज्यकरभारधुरन्धरनेन्दु तन्त्र-नेग-
र्ग्डतनमं निरन्तरवेनल् प्रभु-शक्तियनान्त पेम्र्मे नूर-
म्मडि मिगिलादुदे-चोगळ् वेनुन्नतियं विभु-देव-राजनम् ॥

अन्तु पति-हितनुं सकळ-नियतनुवेनिसिद देव-राजन गुरुकुलवेन्तेन्दोडे ।

श्लो० ॥ जयत्यमरनागेन्द्रपूजिताङ्घ्रि युगं प्रभोः ।
वर्द्धमानजिनेन्द्रस्य शासनं कर्म्मनाशनम् ॥

अन्तु श्रीवर्द्धमान-स्वामिगळ दिव्य-तीर्थदोळु केवलिगळुं श्रुतकेवलिगळुं बुद्धि-
प्राप्तरुं अप्प परम-मुनिगळु सिद्ध साध्यरुमागे तत्तीर्थसामर्थ्यमं सहस्रगुणं माडि
समन्तभद्र-स्वामिगळुमकलङ्कदेवरुं । गृद्धपिञ्छाचार्य्यरुं (। व्) आदि-
यागे पलम्बरुं श्रुत-वररु सन्द वलिक्के श्रीमूलसङ्घद श्री कोण्डकुन्दान्वयद देशिय-
गणद पुस्तक-गच्छद विशिष्टदोळगे सागरनन्दि-सिद्धांत-देवरभिनव-गणधररे-
निसिदरवर शिष्यरहंनन्दि-मुनि-पुङ्गवरवर शिष्यरु तर्क्क-व्याकरण-सिद्धान्ताम्बुरुह-
वन-दिनकररुमेनिसिद श्रीमन्-नरेन्द्रकीर्त्ति-त्रैविद्यदेवरवर सधर्म्मर् षट्त्रिंशद्गुण-
मणिमण्डनमण्डितरु पञ्चविधाचार-निरतरुमप्प श्रीमन्मुनिचंद्र-भट्टारकर श्री-पादा-
विन्दाराधक ।

वृ ॥ मूलं मूलगुणस्तथोत्तरगुणः काण्डं श्रुतं स्कन्धकम्
शाखा शान्तिरथाङ्कुरः प्रथमतो धर्म्मो दया मञ्जरी ।
जाता यस्य स कल्प-भूमिवनितो भव्येष्वभीष्टं फलम्
शिष्यश्श्रीमुनिचन्द्रदेवयमिनः सन्वर्द्धतां देवगः ॥

आ-विशिष्ट-कल्प-द्रुमन वंशावतारवेन्तेन्दोडे श्री-कौशिकमुनीश्वरनिन्दनेकरं (व्) अनुपमरेलेदरवरोळगे ।

कन्द ॥ अनवधिगुणमणिभवनं जिनपदयुगळोदयचलार्क्कं विद्वज्-
जन-जलज-राज-हंसं । जनसंस्तुतनेनिसि देवराजं नेगल्दम् ॥
आ-विमल-यशन कुल-वधु । भुविनुतचरित्रे सकलगुणवति विकचेन्-
दीवर-लोचने पुण्य- । श्री-वन्दिते कामिकब्बे नेगल्दळु जगदोळ् ॥
आ-दम्पतिय तनूजं । भूदेव-कुलाम्बरेन्दु निर्म्मल-कीर्त्ति-
श्रीदयितं निरवद्य-गु- । णोदयनुर्दियिसिदनेसेयलुदयादित्यम् ॥
एने नेगल्दुदयादित्यन् । वनिते पतिव्रतगुणावलम्बन-योषिज्-
जनविनुते सकलागम- । जनितेयेनलु किरुगणब्बे नेगल्दळु जगदोळ् ॥

वृ ॥ एने नेगल्दिर्द्द दम्पतिगळ-उद्भवमुद्भविपन्ते पुण्य-मा-
जनरोगेदर्त्तनूभवरुदात्ततेयिं खुन-त्रयङ्गळी-
वनधि-परीत-भूतळदोळन्देसेवन्तिरे जैन-धर्म्म-वर्-
द्धनमेने भूवरिन्दमे यशोलते पूर्व्वे दिगन्तराळमं ॥
पेसर्-वेट्टा-भूवरोळ् पेम्मॆगे मोदलॆ निसिर्द्दल्युदात्तप्रभाव-
प्रसवं श्रीदेवराजं विमळगुणगणाळम्बनं सोमनाथम् ।
कुसुमास्त्राकार-सार-प्रकटित-विभव-श्रीधरं तानेनल् वर्त्त् ।
विसिदर्नीहारहारोज्ज्वळतर-यशदिं तीवे दिक्-चक्रवाळम् ॥

कन्द ॥ अवरोळगेनिसुं निज-कुल- । नव- नळिनी-द्युमणि निखिल-भव्यजनैका-
र्घ्य-पूर्ण-चन्द्रनुद्यत्- । प्रविभासित-कीर्त्ति देवराजं नेगल्दम् ॥

वृ ॥ जनसंस्तुत्यरोळीतनत्यधिकनीतं विश्रुताचारनी-

तनतक्यौरपदनीतनुद्घ-यशनीतं सत्कलाधारनेन्द् ।
एनितानुं तेरंदिन्दे वणिसलिला-लोकं करं पेम्पु वेत्-
तनुदात्त-स्थितियिं सुहृज्जनविपद्-विद्रावणं देवणम् ॥
जडजभवनफळे येनिसुव । गिड्डु कलु मरनदपरे निपरं पडेदघमं ।
बिडिसलु वेडिये पडेदम् । **कडुचरितेय** देवराजनं घरेगेसेयल् ।
आ-भव्य-चूडामणिय मनोरमे ।
कन् ॥ अनुपम-महिमाळम्बिनि । जिनपदसरसिरुहभृंगकुन्तले योपिन्-
जनविनुते पूर्ण्ण कळश- । स्तनि **कामल-देवि** नेगल्दळी-वसुमतियोळ् ॥
वृ ॥ तळिरं केन्दळव् इन्दुवं वदनवुम्भृङ्गाळियं कुन्तळा-
वळी चेम्बोङ्-गोडनं पोदल्द-मोले मुक्तानीकमं दन्तवुत्-
पळमं लोचनवीत्तु-चाप-लतेयं भ्रूविभ्रमं पोल्विरयं ।
तळेयल् कामल-देवि मन्मथधनुर्ज्यालेखेयन्तोप्पिदल् ॥
अन्तु सकुटुम्ब-समेतं श्रीजिनधर्म्मनिर्म्मलाम्बरहिमकरनुं श्री-होय्सलमहीशरा[illegible]-भूभृन्निलयमणिप्रदीपकलशनुं मागुत्तिदंडे श्री-होय्सलं देवराजन धर्म्मबुद्धिगं स्वामि-भक्तिगं मेच्चि **सूरनहळ्ळियं** कोट्टोडळ्ळि ।
वृ ॥ एनिसुं शुभ्राभ्र-जालं वळसिद रजतादीन्द्रमीयिद्दु वेन्देम्-
विनेगं नाना-सुधा-दीधिति वळवळिमुत्तुङ्गकूटं त्रिकूटं ।
जिनगेहं शोभिसल् माडिसि निज-जनकं गित्त नाल्दोळनिष्टान्-
गनेगित्तं मत्तवोन्दं विबुध-जन-सुरोर्व्वीजनी-**देव-राजम्** ॥
अन्तमरेन्द्र-भवनमेनिप पार्श्व-जिन-भवनमराज-राष्ट्र-यशो-धन-वृद्धयर्थवागि माडिसि **श्री-होय्सळ-देवं** कूत्तु श्री-पार्श्वदेवरष्टविधार्च्चनेगं (व्) आहारदानक्कं क्रोधन-संवत्सरद उत्तरायण-संक्रमणदन्दिष्ट-देवता-सन्निधानदला-सूरनहळ्ळिय मोदल नाल्वत्तु होन्नोळगे हत्तु होन्न मोदलं श्री**पार्श्वपुरमं** माडि देव-राजङ्गे धारा-पूर्व्वकं माडिया-चन्द्रार्क्कतारं सलुवन्तागि कोट्टदा-भव्य-चिन्तामणि श्रीमन्-**मुनिचन्द्र-देवर** श्री-पादवं कर्च्चि धारा-पूर्व्वकं माडि कोट्ट भूमिय सीमेयेन्तेन्दोडे देवरकेरेय पडुवण-कोडियिं नट्ट कलुगळिं दोड्डगट्टद पडुवण-कोडियिं मूड माविनकेरेय दारिचिन्दं

केतन-श्ट्टदिं वेङ्क नाविनकेरेयिं पडुवण-चीनेयिं पडुव तरंगेलेय मोरंडिय हेरड़े गेवनगट्टद वडगण कोडिय कन्निनकेरेय मूडण कोडियिन्दवा-श्यल मूडनिन्दं मूडलु ॥ (हमेशाकी तरह अन्तिम वाक्यावयव और श्लोक) भद्रमस्तु जिन-शासनस्य ॥

[जिन शासन और पार्श्वनाथके सिद्धान्तोंकी प्रशंसा। राजा पोय्सल और राजा विष्णुकी प्रशंसा।

जिस समय (अनेक पदोंसे युक्त) कलिको अधिकारमें करनेवाले, विक्रम-गङ्ग, वीर-विष्णुवर्द्धन-देव गङ्गवाडि ६६०००, नोलम्बवाडि ३२०००, बनवसे १२०००, तथा हलसिगे १२००० पर राज्य कर रहे थे :—

उसके बाद, अपने पिता की छापसे वैसे अङ्कित होगये हों, **नरसिंह** राजा थे। (उसकी प्रशंसा) उनके दोरसमुद्रमें राज्य करते समय, उनके पादपद्मोपजीवी ग्रामप्रधान **देवराज** हुए। उनके गुरुकी परम्परा निम्नभांति थी:—

वर्धमान जिनेन्द्रके बाद केवली, और 'श्रुतकेवली' हुए। उसके बाद उसी परम्परा में— मूलसंघ, कोण्डकुन्दान्वय, देशियगण तथा पुस्तकगच्छमें, समन्तभद्रस्वामी, अकलङ्क-देव, गृद्धपिच्छाचार्य तथा और भी बहुत-से श्रुतधर हुए। इनमें एक समरनन्दि-सिद्धान्तदेव हुए जो नये गणधर समझे जाते थे। उनके शिष्य अर्हनन्दि-मुनि थे। उनके शिष्य नरेन्द्र-कीर्त्ति त्रैविद्यदेव थे जो न्याय, व्याकरण और दर्शन में पारङ्गत थे। उन्हींके साथी मुनिचन्द्र-भट्टारक थे।

उनके चरणों का पूजक शिष्य **देव** था। उसकी परम्परा इस प्रकार रही:— कौशिक-मुनिसे सन्तान चली, जिसमें **देवराज** था। देवराज का पुत्र उदयादित्य, उसके, तीन पुत्र हुए—देवराज, सोमनाथ और श्रीधर। इनमें से कडुचरिते का देवराज प्रधान था।

उसको देवराज-होय्सलने सूरनहल्लि दान में दी। और उसने वहां एक जिन-मन्दिर बनवाया। होय्सल देवने अष्टविधार्च्चन और आहारदानके निमित्त

सुरतहल्लि की ४० होन में से १० होन इसके लिए निकाल दिये और इसका नाम पार्श्वपुर रख दिया। और देवराजने मुनिचन्द्र-देवके पादप्रक्षालन पूर्वक भूमिदान दिया।]

[EC, IV, Nagmangala Tl., No. 76]

३२५

महोवा;—संस्कृत।

[सं० १२०३=११४६ ई०]

इस लेखमें सं० १२०३ होनेके अतिरिक्त शिल्पी (इसको खोदनेवाले) लाखनका नाम और दिया हुआ है।

[A. Cnnninghom, Reposts, XXI, p. 73, a

३२६

हुम्मच;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक १०६९—११४७ ई०]

[हुम्मचमें, तोरण-बागिलके उत्तर की ओर के खम्भे पर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम्॥

स्वस्ति समस्त-भुवनाश्रयं श्री-पृथ्वी-वल्लभ महाराजाधिराज,परमेश्वर परम-भट्टारकं सत्याश्रय-कुळ-तिळकं चाळुक्याभरणं श्रीमत्-जगदेकमल्ल-देवर विजय-राज्यमुत्तरोत्तराभिवृद्धि-प्रवर्द्धमानमा-चन्द्रार्क-तारं सलुत्तमिरे तत्पादपद्मोपजीवि। (पंक्ति ८ में 'समधिगत पञ्च' से लेकर पंक्ति २० में 'महा-मण्डलेश्वरं' तक शि० ले० नं० २१४ की ११ वीं पंक्ति से २५ तक की पंक्तियों से मिलता है।)

कुन्दद् तेवप्-प्रसरन् ।
कन्दिसे पर-नृप-यशो-लता-कन्दळमन् ।
वन्दिगे वेळपुदनिचन् ।
कन्दद् बळमेनिये **वीर-देव-नृपाळम्** ॥
आतन हृदयाधीङ्गदोळ् ।
आतत तनु-लतिकेयोन्दे सांन्दसे मिक्कन् ।
मातेनो सिरियुमं गिरि- ।
जातेयुमं सतियरोळगे **वीरल-देवि** ॥
अवर्गे तनूभवर् क्रमदिनादरपश्चिम-दिग्-वधूटियोळ् ।
नवि नेरेयल् पोदल्व वेळगुं बहु-रागमुमग्र-तेजमुन् ।
भुवन-हितत्वदिन्दळे निपी-गुणदन्तिरे **तैल-भूपनुम्** ।
भुवन-विनूत-**गोग्गि-नृप**नोङ्गनग्गद **बम्म-देवनुम्** ॥
निज-भुज-बळदिन्दरि-भू- ।
भुजरं कोन्दोत्तिकोण्डु देशमनन्ता- ।
विजिगीषु-**तैल-भूपम्** ।
भुजबल-सान्तरनेनिप्प पेसरं पडेदन् ॥
आतन तम्मं तोळोळि- ।
ळा-तळमं तळेदु तात्दिदं सत्य-वचम् ।
ख्यातं **गोग्गि-नृपाळम्** ।
भूतळवरियल्के **नन्नि-सान्तर**-वेसर ॥
विक्रम-शान्तर-वेसरम् ।
शक्रङ्गेणेयेनिसि पडेदनुद्दण्ड-मही- ।
चक्रम नेपगिसि दिङ्-मुख- ।
चक्रोज्वळ-कीर्त्ति-कान्त**नोड्डग-भूपम्** ॥
पर-नरप-शिरः-कञ्जो- ।
त्कर-करि कमळा-पयोधर-द्वय-हारन् ।

स्मर-मूर्त्ति सकल-दिग्-मुख- ।
परिचुम्बित-कीर्त्ति **वम्म-देव-कुमारम्** ॥

अवर तायि ॥

जनकं रक्कस-गङ्ग-भूमिपति काञ्ची-नाथनात्म-प्रियम् ।
विनुतर् श्री-विजयर् सु-शिक्षकरेनल् विद्विष्ट-भूपाळ-सं- ।
हननिं क्रान्त-यशो-विळास भुज-खड्गोल्लासि तां **गोग्गि** नन- ।
दननी-**चट्टल-देवि**गेन्दोडे यशश्श्रीगिन्तु मुं नोन्तरार् ॥
कुन्तळ-देशदोळोर्प्पुव ।
सान्तळिगेय नडुवेनिप्प **पोम्बुर्च्च**मिला- ।
कान्तेय पेर-नोसलेनिसे निर ।
न्तरमेसेवोन्दु-तिळक**मुर्व्वी-तिळकम्** ॥

इन्तेनिसिदुर्व्वी-तिळक-जिन-भवनमं माडिसिद महा-सतिय प्रिय-पुत्र-नन्न **विक्रम-शान्तरङ्गे** ॥

पुट्टिदनिनङ्गे तेजम् ।
दिट्टि मोगक्कमर्दु चन्द्रमङ्गळ् तरदिम् ।
पुट्टु वत्रोलखिळ-वैरि-व- ।
स्ट्टं शरदिन्दु-कीर्त्ति **तैल-नृपाळम्** ॥
नळने विनोदि धर्म्मजने धार्म्मिकनन्वये रत्नदागरम् ।
कुळिशमे शत्रुमर्ज्जुनने धन्वि सुरेन्द्रने भोगि मन्दरा- ।
चळमे गिरीन्द्रमप्रतिम-रायं-भळपने चक्रि **तैल-मण्** ।
डलिकने दानियेन्दु मुदिगिक्किदेनार्ण्णवरेत्तिकोळ्ळिरे ॥
त्रिभुवनमल्ल-चक्रि कुडे **तैल** नृपं पडेदं नृपोत्तमम् ।
त्रिभुवनमल्ल-सान्तर-निजोचित-नाममनुर्व्वि वण्णिसल् ।
विसु **जगदेकदानि**-बेसरं तळेदं निखिळार्त्थिगादुदोन्द् ।
अभिनवमप्प जङ्गम-सुर-द्रुममेम्बिनमित्तु धात्रियोळ् ॥
आतन वक्षस्थळदोळ् ।

न् (उत्तर मुख) तन-मणि-हारवेनिसे तनु-रुचि सौभा- ।
ग्यातत-गुणमं तळेदळ् ।
कौतुक-तनु-लतिकेयिन्दे **चट्टल-देवि** ॥
सम्पन्नोत्सव-भावमं तळेदु लीला-यौवन-श्रीयनान्त् ।
इम्पिन्दा-मिथुनं मनोरथमनान्तिर्प्पन्नेगं पुट्टिदर् ।
चम्पा-देवियमुग्रवंश-तिळकं **श्रीवल्लभो**र्व्वीशनुम् ।
पेर्म्पि पुट्टववोल् सुधार्ण्णवदोळा-श्रियं सुर-द्रुमाब्जमुम् ॥
पर-भूपाल-समुद्रदोळ् निज-कर-प्रोत्खात-निस्त्रिंश-मन्- ।
दरमं सन्धिसि विक्रमद्-भुज-फणीन्द्रावेष्टित-प्रान्तमम् ।
भरदिन्दं कडेदुग्र-वंश-तिलकं श्री-कान्तेयं तन्नपेर्- ।
उरदोळ् ताळ्दे बुधाळियेम् पोगळदो श्रीवल्लभाख्यानमम् ॥
विक्रम-गर्व्वमं तळेदु तागिद वैरि-नृपाळ-जाळ-दोश्- ।
चक्रदोळिर्द्द विक्रम-वधूटियनिळ्कुळिगोण्डु वलिनिम् ।
विक्रम-वज्र-वेदि-भुज-मण्डपदोळ् तळेदोल्दु ताळ्दिदम् ।
विक्रम-शालिगळ् पोगळे **विक्रम-शान्तर**नेम्ब नाममम् ॥
शौर्य्यं यस्य सदर्प्प-वैरि-वनिता-वैधव्य-दीक्षा-गुरुः ।
प्रायो दानमनूनमर्त्थि-जनता-दारिद्र्य-विद्रावणम् ।
कीर्त्तिर्द्दिग्वनिता-विलोल-कबरी-कुन्द-प्रतिद्वन्द्विनी ।
सोऽयं सद्गुणरत्नरोहणगिरिः श्रीवल्लभोर्व्वीश्वरः ॥
अभय-विशुद्ध-नायक-निबद्ध-निज-क्रम-चूडेयं शिरश्- ।
शु (सु)भग-विभूषयेन्दु तळेदिर्द्दरिगित्तु समस्त-धात्रियन् ।
विभुसले कोट्टु कट्टिदिरोळान्तहितर्ग्गीहि-नाक-लोकमम् ।
त्रिभुवन-दानियेम्ब पेसरं तळेदं बुध-माळे वण्णिसल् ॥
कत्तुरिय बोट्टे मेणिदु ।
पुत्तळिगेयो नीळ-मणिय तोळ्-गम्बदोळेम् ।
तेत्तिसिदुदेनिसि धरेयम् ।

पोत्तुदु भुज-वज्र-कोटि-खिरिवल्लहना ॥
इन्तु बगेगोळिपुदोन्दु-व—।
सन्तद **सान्तळिगे-सायिरं** सन्तविरल् ।
शान्तर-तिळकं **विक्रम-** ।
शान्तरनेकातपत्रमं तळेदिर्द्दम् ॥
आ-भूपतियग्रजेगे ।
त्रैभुवन-व्याप्त-कीर्त्ति-गङ्गा-जळदिम् ।
भू-भुवन-कलि-कळङ्कद ।
वैभवमं-कर्च्चि कळवुदेनच्चरियो ॥
धरेयेल्लं चित्र-चैत्यालय-नव-रचना-चूळकं दिक्करीन्द्रो- ।
त्कर-कर्ण्ण-श्रेणिमेल्लं जिन-सव-निनदत्-तूर्य्यकोत्ताळ-ताळं ।
स्फुरितोद्यद्-व्योममेल्लं परम-जिनपतीज्या-ध्वज तानेनल् ।
वर-**पम्पा देवि**येत्तं बेळगुवळरुहच्छासन-श्रिय पेम्पम् ।
विनुत-महापुराण जिन-नाथ-कथोक्तिये कर्ण्ण-भूषणम् ।
जिन-मुनिगळ्गे माडुव चतुर्व्विध-दानमे हस्त-कङ्कणम् ।
जिनपति-भक्ति-सूक्ति-नुति-मालेये बन्धुर-कन्थ-मण् (पश्चिम मुख) उनम् ।
तनगेने **तैल**-भूप-सुते मेच्चुवळे तनु-भार-भूषेयम् ॥
उर्व्वी-तिळकमनिळिपि चि- ।
गुर्व्विसिदवोलोन्दे-तिङ्गळोळ् माडिसिदळेनल्क् ।
ओर्व्वळे शासन-देवते ।
सर्व्वोर्व्वि-वन्द्येयेनिसि **पम्पा-देवि** ॥
आ-नूतना**त्तिमब्बेय** ।
भू-नुत-शीळवने तळेदु सौभाग्य-वपुश्- ।
श्री-निधि भोग्य-श्लाघ्य- ।
श्री-निधि पुट्टिदळुदात्ते **बाचल-देवि** ॥
स्तन-कळशाग्रदोळ् पोळेदु मुत्तिन हारमनोन्दि कर्ण्णदोळ् ।

वन-कुळियावतंसमनमर्क्कैयनाळ्दु विनीळ-केशदोळ् ।
विनुतवेनिप्प केदगेय पूविनिचय्दनवांशुगळ् ।
दिनमुख-पूजेयोळ् वोदव नोमवे वाचल-देविगातगम् ॥

ई-चरित्र-पवित्रेये ताय शीलद पुट्टेयेन्तेन्दोडे ।
दत्ति-पूर्ण्णेन्दु-बिम्बानने ।
दत्ति-पूर्ण्ण-महामिनेकुं दत्ति-पूर्ण्ण- ।
प्रचुर-चतुर्-व्यक्तियुमिते ।
दत्ति पन्ना-देविगळिक-सन्ध्या-नयदे ळ् ॥

इन्ती पूवर्वं श्रीमद्-[द] रविळ-संघद नन्दि-गणद अरुङ्गळान्वयद वादीभसिंहनेनिप अजितसेन-पण्डित-देवर गुड्डुगळप्प पट्टविबुर्व्वी-तिळकमेनिसिद पञ्च-बसदिय बडगण पट्टशाळेयं माडिसिदवर गुरु कुलदाचार्य्यावळियेन्तेन्दोडे ॥ श्री-वर्द्धमान-स्वामिगळ तीर्त्थं प्रवर्त्तिसे तत्प्रथमगणधरर् गौतमर् गणधरदेवर् अवरिं मुनिगळ पलरुं सले अवरिं बळिय चतुर्-ऋद्धि-सम्पन्नरेनिप कोण्डकुन्दाचार्य्यर् श्रुतकेवळिगळेनिप भद्रबाहु-स्वामिगळ् मोदलागे हलरुमाचार्य्यर्पोदिम्बळियं समन्तभद्र-स्वामिगळ् तीर्त्थवर्त्तिसिदवरनन्तरं गङ्ग-राज्यमं माडिद सिंहनन्द्याचार्य्यर् अवरिं जिन-मत-कुवलय-शशाङ्कनेनिप अकलङ्कदेवरवरिं राय-राचमल्लन गुरुगळप्प वादिराज-देवरेनिसिद कनकसेन-देवरवर शिष्यरोडेय-देवरं सलिसिदं माडिद दयापाळ-देवरं वर्त्तिसिदिम्बळियं षट्-तर्क-षण्मुखरुं स्याद्वाद-विद्यापतिगळुं जगदेकमल्ल- वादिगळुमेनिसिद श्री-वादिराज-देवर ॥

चयिसुवुदे जिनवृद्धत- ।
चयमं श्री-वादिराज-सूरिगे समयोळ् ।
जयसिंह-चक्रवर्त्तिगे ।
जय-पत्रं वन्दु कुडुतमिप्पुदे जिनदन् ॥

इन्तप्प **वादिराज-देवरिम्** । **कमळभद्र-देवरवरिं** । शब्द-चतुर्म्मुखरं तार्किक-चक्रवर्त्तिगळु **वादीभ-सिंह**रुमेनिसिद **अजितसेन-पण्डित-देवरवर** सधर्म्मर् **कुमारसेन-देवर**नन्तर वैद्य-गज-केसरियेनिसिद **श्रेयान्स-देवरवरिम्** ॥

यः पूज्यः पृथिवी-तले यमनिशं सन्तस्तुवन्त्यादरात्
येनानङ्ग-धनुर्जितं मुनि-जना यस्मै नमस्कुर्व्वते ।
यस्मादागम-निर्णयस्तनुभृतां यस्यास्ति जीवे दया
यस्मिन् श्री-**मलधारिणि**व्रति-पतौ धर्मोऽस्ति तस्मै नमः ॥
यस्य वागमृतं लोके मिथ्यैकान्त-विषापहम् ।
तस्मै **श्रीपाल-देवाय** नमस्त्रैविद्य-चक्रिणे ॥

अवर सधर्म्मर् ॥

इच्छा-विघाता भयतो विघातां
नारायणो मौन-परायणोऽसौ ।
महेश्वरो दूर-विनश्वरोऽस्मिन्
कोऽ**नन्त-वीर्य्ये** प्रतिवक्ति वादी ॥

श्रीमत्**पस्या-देवि**यरं **श्रीवल्लभ-देव**नुं राज्यं गेय्युत्तमिरलु **स (श) क-वर्ष १०६६ प्रभव-संवत्सरद वैशाख-शुद्ध-पञ्चमी**-बृहस्पतिवारदन्दु वडगण पट्टशालेय प्रतिष्ठेय माडि श्रीवल्लभ-देवं **वासुपूज्य-सिद्धान्त-देवर** कालं कर्च्चि धारा-पूर्व्वकं कोट्ट वृत्ति आवुदेन्देडो ओडिलत्रयलु-मूतगद्देयुमं सर्व्व-नमस्यं माडि कोट्टर् ॥ (वे ही अन्तिम वाक्यावयव और श्लोक) (दक्षिण-मुख) **श्री-दुर्म्मति-संवत्सरद पुष्य-शुद्ध-छट्टि-सोमवारदन्दु** श्री-वीर-सान्तर-देवर्गे.................इकिदरु **देवरस-दण्णायक**वरद रूवारि **मादेय** होयिद श्री-जिनशरणु ॥

[जिन शासनकी प्रशंसा ।

जब, (उन्हीं चालुक्य पदों सहित), जगदेकमल्ल-देव का विजयी राज्य चारों ओर प्रवर्द्धमान था :—

तत्पादपद्मोपजीवी, (शि० ले० नं० २१३ में जो नन्नि-शान्तर के लिये विशेषण प्रयुक्त हुए हैं उन्हीं सहित) राजा वीर-देव था। उसकी रानी वीरल-देवी थी। उनके राजा तैल, राजा गोग्गि, ओड्डुग और बम्मदेव, ये चार पुत्र उत्पन्न हुए थे। तैल का नाम भुवनल-शान्तर पड़ा; गोग्गि का नन्नि-शान्तर, और राजा ओड्डुग का विक्रम-शान्तर। रूपमें कामदेव के समान कुमार बम्म-देव था। इन सबकी मां चट्टल-देवी (वीरल-देवी) थी, जिसके पिता राजा रक्कस-गंग, पिता काञ्ची-अधिपति, गुरु श्रीविजय, पुत्र गोग्गि थे।

कुन्तल-देशमें सुन्दर शान्तळिगे में पृथ्वीदेवी के माथे के समान पोम्बुर्च्च था। उर्व्वी-तिलक जिन मन्दिर को बनानेवाली महासती के प्रिय-पुत्र विक्रम-शान्तर के राजा तैल उत्पन्न हुआ था। तैलको चक्रवर्त्ती त्रिभुवनमल्लने 'त्रिभुवन-मल्ल-शान्तर' का नाम दिया; 'जगदेकदानी' का भी पद उसको मिला। इसकी रानी चट्टल-देवी थी। इन दोनों के संयोगसे पम्पा-देवी और राजा श्रीवल्लभका जन्म हुआ था। श्रीवल्लभका दूसरा नाम विक्रम-शान्तर था और यह सान्तलिगे हजारका राजा था।

इस राजा की बड़ी बहिन पम्पा-देवी बहुत ही जिनभक्त थी। इसने एक ही महीने में उर्व्वी-तिलक (बसदि) के साथ-साथ शासन-देवता बनवायी थी।

पम्पादेवीसे, नयी अत्तिमब्बे[1] के समान, उदार बाचल-देवीका जन्म हुआ था। उसकी प्रशंसा—

ये तीनों (पम्पा-देवी, श्रीवल्लभदेव तथा बाचल-देवी) वादीभसिंह नामसे

---

१. यह चालुक्य चक्रवर्त्ती तैलके सेनापति मल्लपकी पुत्री नाग-देवकी पत्नी, तथा पडुवल तैलकी माता थी। वह भक्त जैन थी, इसने पोन्नाके 'शान्ति पुराण' की १००० प्रतियाँ अपने खर्चसे लिखवायी थीं, और सोने तथा रत्नोंकी १५०० जिन प्रतिमायें बनवायी थीं।

प्रसिद्ध, द्रविळसंघ, नन्दिगण, और अरुङ्गलान्वयके अजितसेन-पण्डित-देवके गृहस्थ-शिष्य और शिष्या थीं। उन्होंने पञ्च-वसदिके उत्तरीय पट्टशालेको बनवाया था।

इसके बाद अपने गुरुओं की परम्पराके आचार्यों के नाम दिये हैं; वे प्रायः सब वे ही हैं जो पहले के शिलालेख नं० २१३ और २१४ में आ चुके हैं। विशेष इतना है कि अजितसेन-पण्डित-देवके दो सधर्मा थे—कुमारसेन-देव और श्रेयान्स-देव। इनके बाद बहुत बड़े विद्वान् मलधारि, तथा श्रीपाल-देव त्रैविद्य-चक्री हुए। उनके सधर्मा अनन्तवीर्य थे।

जब पम्पा-देवी और श्रीवल्लभ-देव राज्य कर रहे थे, (उक्त मिति को), उत्तरीय पट्टशाले की स्थापना करने के बाद, वासुपूज्य-सिद्धान्त-देवके पाद-प्रक्षालनपूर्वक निम्न दान दिया;—(यहाँ दानकी विस्तृत चर्चा है)।

वे ही अन्तिम श्लोक।

इसके बाद ६ पंक्तियाँ हैं (जो बहुत घिसी हुई हैं), जिनमें दुर्म्मति वर्षमें (११४१ ई०) वीर-शान्तर-देवके सम्बन्ध में कुछ उल्लेख है।

देवरस-दण्णायक ने इसे लिखा। शिल्पी मादेय ने इसे उत्कीर्ण किया।)

[Ec, VIII. Nogars U. No.37]

३२७

मुगुलूर—संस्कृत—तथा कन्नड़-भग्न

[वर्ष प्रभव = ११४७ ई० ? (लू० राइस)]

[वस्तिके प्रवेशद्वारके पासके पाषाणपर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम्॥
श्रीमदेल्कोटि-जिनालयमिदु ॥
जयति सकळविद्यादेवतारत्नपीठं

हृदयमनुप्रलेपं यस्य दीर्ग्घं सदेवः ।
जयति तदनु शास्त्रं तस्य यत् सर्व्व-मिथ्या-
समय-तिमिर-घाति ज्योतिरेकं नराणाम् ॥
श्रीकान्तानेत्रनीलोत्पळवदनसरोजातसस्मेरलीला- ।
लोकं लोकत्रयोज्जृम्भितविशदयशश्चन्द्रिकादोः प्रताप- ।
व्याकीर्ण-त्यक्त-युक्त-क्रम-कळित-कुभृच्चक्र-खेद-प्रमोद- ।
श्रीकं श्रीविष्णुभूपं वेळगुगे जगमं राज-मार्त्तण्ड-रूपम् ॥
जित-पञ्चेषुत्वदिन्दीश्वरनेनिसियुनुग्रत्सुधाकान्तनत्यू- ।
र्ज्जित-तेजो-लक्ष्मियिं तीव्रकरनेनिसियुं दृश्यरूपं कळा-सं- ।
भृत-भास्वद्-वृत्तदिन्दं विधुवेनिसियुमात्मीय-नित्योदयोल्ला-
रित-दोषाशेषनिन्तावनोळमसदृशं वीरविष्णु-क्षितीशम् ॥
अरिसेनाचक्रचक्रं पोरळे रिपुकुभृत्-पुङ्गव-भ्रान्ति तत्तोप्- ।
पिरे तन्नुग्रासियिन्दुच्चळिसि धरेगुरुळ् तप्प विद्विट्-सिरङ्गळ् ।
तरदिं कुम्भङ्गळं पोल्तेसेये नव-घटी-यन्त्रदिं विष्णु युद्धा-
जिर-वापी-वैरि-रक्ताम्बुवने निज-यशो-वल्लिगेतुत्तविप्पम् ॥
मगु-मगुर्द्दु पोक्कु दुर्ग्गम- । नगळगळ्दा-वार्धि-वरेगवट्टुं तिगटं ।
तगु-तगुळ्दु कोन्दनावदे । जग-विरुदरनटसि विष्णुवर्द्धन-देवं ॥
हिमदिं सेतुवरं मत्- । ते मगुळ्दा-सेतुविं हिमं-वरेगं वि- ।
क्रम-केळियिं तोळल्वं । स-मद-क्षत्रियरनिरिसि विष्णुनृपाळम् ॥

स्वस्ति समधिगत-पञ्चमहाशब्द- महामण्डलेश्वरं द्वारावतीपुरवराधीश्वरं यादवकुलाम्बरद्युमणि सम्यक्त्व-चूडामणि । मलेयचक्रवर्त्ति । धर्म्मज-मूर्त्ति श्रीमत्काञ्चीगोण्ड विक्रम-गंग विष्णुवर्द्धन-होय्सळ-देवं गङ्गवाडि-तोम्भत्तरु-सासिरमुमनेकच्छत्रच्छायेयिं प्रतिपाळिसि सुखं राज्यं गेय्युत्तमिरे तत्पादपद्मोपजीवि । धरामर-कुलतिलकं । जिनेन्द्रपूजाविधान-पात्रदान-प्रवर्द्धित-प्रमोद-पुळकम् । श्रीमदजितसेन-भट्टारक-पदाम्भोज-चञ्चरीकं । परमतत्त्वप्रागल्भ्यप्रबळ-विवेकं श्रीमन्महाप्रभु-पेर्म्माडियन्वय-प्रभावं एन्तेन्दडे ॥

नियत-स्याद्वादविद्याविभवभवनमागिप्पं निद्धूत-दोप- ।
त्रयमप्युद्यत्तपोलद्मिगे सले नेलेपागिप्पं रूढाकलङ्का- ।
न्वयदोळ् भव्यालिगेल्लं मोदलेनिसि करं पेम्पुवेत्तत्तु पेर्म्मा- ।
डिय वंशं लोकवं कीर्त्तियोळ् वेळगितत्तुज्ज्वळाचार-सारं ॥
अक्कर ॥ नय-विनयमननुकरिसुवननु- ।
नयदिं तेजोधिकनेने नेगर्द्द पेर्म्माडिय पेर्म्मगने **श्री-** ।
मय्यनातन चित्त-प्रिये **देवलब्बे** पति-भ- ।
क्तियोळा-सीतेगमरुन्धतिगमेणेयेनिपळ् ॥
अवर्गे मगं समस्त-गुण-रत्न-सुधाम्बुधि **मसणि-सेट्टि** भू-
भुवन-विनूतनातननुजं नेगर्द्द प्रभु **मारि-सेट्टि** बान्- ।
धव-जन-सर्व्व-भव्य-जन-कल्प-महीरुहना-महात्मनी- ।
तवद-विभूतियं पडेदुदर्हतेयं धरेयोळ् निरन्तरम् ॥
दोरसमुद्रद नडुविदु । मेरु-महीधरमेनल्के माडिसिदं श्री- ।
मारमनुतुङ्ग-जिना- । गारमनिंदु विश्वकर्म्म-निर्म्मितमेनिसल् ॥
आ-विभुविनणुग-दम्मं । **गोविन्दं** मन्दरावनीधर-धैर्य्यम् ।
श्री-वनिता-वल्लभना- । गोविन्दनवोल् महीमनःप्रियनादम् ॥
वसुधेगे कौस्तुभमेनली- । वसदियनी-**सुगुळि**यल्लि सद्भक्तियिनेत्- ।
तिसिदनेने मत्ते गोविन्द-सेट्टियं पोगलादप्परे बुध-निधियं ॥
भू-विदितने भीमय्य म-हा-विभवं पुत्रि **नागियक्क**नुमिवरी- ।
गोविन्दन जिन-गृहकति- । पावन-चरितर् निरन्तरं पडि सलिपर् ॥
अवरग्र-तनूजमय-नय-शीलनप्रतिम-धर्म्म-सहा (नि) यकनरातिपूज्य-दुर्ज्जयनखिलेष्ट-शिष्ट-जन-रक्षण-दक्षनु……सरं नेगळ्द महा-प्रभु बेडदे पुण्डा-**चिट्टि-सेट्टिय** गुण… …र्मं पोग [ळ] ला-चतुरास्यनु… … … …युतं मायोपायक्के पेसवतिधन्यं स्वस्ति य… … …सनेनल् **नाकि-सेट्टिय**… … … …सरा… पेम्पुमं निमिर्न्चि गोत्र-पवित्रनाद गोविन्द… … … …**समन्तभद्र**स्वामिगळ … … … …वाचार्य्यरिं **कनकसेन-वादिराज**-देवरिं **धनपाळ** भट्टारकरिं

श्री··· ···कसेन-भट्टारकरिं मलधारि-स्वामि··· ··· ···त्रैविद्य-देवरिं श्री-वासुपूज्य-सिद्धान्त-देवरिं··· ···देवरिं बन्द द्रमिळ··· ··· ···विलयमो पट्-तर्कानिळ-बहु-भङ्गी-सङ्गत-श्रीपाळ-त्रैविद्य-गद्य-पद्य - वाचो-विन्यास - निसर्ग-विलस-विलासन् ॥

सच्चरित्र-रवि··· ···विद्या-संशुद्ध-बुद्धये ।

विद्वज्जन-प्रपूज्याय वासुपूज्याय ते नमः ॥

इन्तु नेगल्तेदेस तन्न गुरु-कुलद पेम्पं नेगळि गोविन्द-सेट्टि माडिसिदनिन्ती-जिनालयम् ॥

मनु-चरितर् समस्त-भुवन-स्तवनीय-जिनेन्द्र-धर्म्म-वा-।

रिनिधि-सरोजिनी-प्रमद-राग-विवर्द्धन-राजहंसरण् ।

णनुमनुजन्ननुं गुण-युतननुं पदन्नन-गारिवान रा- ।

मनिम्मडियागिपुं भरतराज-चमूपनुमेन्दुदी-जगम् ॥

भारतदोळ् कर्नानु- । दारतेयोळ् धर्म्म-नन्दनं सत्वदोळा- ।

चारदोळ् सिन्धु-नन्दन । ··· दडे भरत-राज-दण्डाधीशन् ॥

ई- गोविन्द-जिनालयक्के प्रभव-संवत्सरदुत्तरायण-संक्रान्ति व्यतीपातदन्दु ··· दलि... आगि श्री-नारसिंह-होय्सळ देवं श्रीपाळ त्रैविद्य-देवर शिष्य-रप्प वासुपूज्य-सिद्धान्त-देवर कालं कर्च्चि धारापूर्व्वकं श्रीमदग्रहारं मुगुळि-यलि बिट्ट वृत्तिय सीमा-सम्बन्धि हिरियकेरेय केळगे गद्दे (आगेकी चार पंक्तियों में दान का विशेष वर्णन है) आ-बेद्दलेयोळगागि देवर सोडरिगे गाणदलर-वाने ण्णेयूदेळगाव दण्डमारे वद्दे गोण्डु विशद वण-सिद्दायविन्तुवल्लि··· ऐदु-पणवं महाजनं कोडुवरिन्तिनितुवं मूर्ताचिर्व्वर्म्मद्दा जनंगळ् धारापूर्व्वकं माडि कोट्टर (आगेकी चार पंक्तियोंमें कुछ परिचित वाक्यावयव तथा श्लोक हैं) ई-धर्म्म-वनळिदतेळें [वे] य नरकं पुगुवं केरेय म ··· ··· डिनेयं ता-कडिसिद केरेयल्लि ··· गद्देयं देवरिगे बिट्टरु ॥ अशेष-महाजनङ्गळ् मत्तद-केरेयल्लि कण्डुग गद्देयं बिट्टर । बळल्लु मन्तूळ भट्ट ··· ··· ··· ···

[जिन-शासन की प्रशंसा । यह एक्कोटि-जिनालय है । राजा विष्णुकी प्रशंसा,

जिसने हिमालयसे लगाकर सेतु तक और सेतुसे लगाकर हिमालय तक तमाम शत्रु राजाओं को नष्ट कर दिया।

जिस समय द्वारावतीपुरवराधीश्वर, मलेय-चक्रवर्ती विष्णुवर्द्धन होय्सल देव. शान्ति से अपने राज्य का शासन कर रहे थेः—

उनके चरण-कमलसे आजीविका करनेवाला, (अन्य-अन्य विशेषणों के साथ) अजितसेन भट्टारक का शिष्य महाप्रभु पेर्म्माडि हुआ। उसकी सन्तति निम्न-लिखित थीः—

(अनेक प्रशंसाओं के वाद) पेर्म्माडि का ज्येष्ठ पुत्र भीमय्य था, उसकी पत्नी का नाम देवलव्वे था। उनके पुत्र मसणि-सेट्टि और मारि-सेट्टि थे। दोरसमुद्र के मध्यमें मारमने एक बहुत ऊँचा जिनालय बनवाया। उसका पुत्र गोविन्द था। उसने मुगुली में एक वसदि बनवायी, जिसके लिए भीमय्य और उसकी पुत्री नागियक्कने पूजा का सामान दिया। उसके दो पुत्र थे,—विट्टि-सेट्टि और नाकि-सेट्टि।

उसके गुरु वासुपूज्य की परम्परा समन्तभद्र स्वामी से लेकर कनकसेन, वादिराज, धनपाल,······कसेन, कलधारि,······वासुपूज्य,······और श्रीपाल से होकर आई थी। उनके पैरों का प्रक्षालन करके मुगुलि अग्रहार में **नारसिंह-होय्सल देव** ने गोविन्द जिनालय के लिये उक्त भूमिका दान दिया।]

[Ec, V, Hassn U., no 130.]

३२८

वस्ति;—कन्नड़-भग्न।

[वर्ष प्रभव या पार्थिव (?)]

[वस्ति (चिनकुरळी प्रदेश) में, जिन्नेदेवर वस्तिके सामने के मानस्तम्भ पर]

स्वस्ति श्रीमन्महामण्डलेश्वर त्रिभुवनमल्ल तळकाडु-गोण्ड कोङ्गु-नङ्गलि-गङ्गवाडि-···डि-बनवासि-हानुङ्गलु-गोण्ड भुज-बल वीर-गङ्ग प्रताप-चक्रवर्त्ति··· श्री-

महाराजधानी-दोरसमुद्रदल्लु सुखसङ्कथाविनोददिं राज्यं गेय्युत्तमिरे ॥ श्रीमन्महाप्रधानं हेग्गडे शिव-राज ··नम्बिहदे सोमय्यनु श्रीमत्तु-माणिकद् ······ जिनालयक्के पार्थिवसंवत्सरद आषाढ़-सुद्ध-पाडिनि-आदिवार ··· ··· अतिथिथिय-आहार-दानक्के माणिक्यदोळल माडि··· ··· ···वतुल्लीनेयल्लि गेदे गालु कम्ब माळु गाळ दल्लु ······ तोरेय्नंबा होले-नमा यिनितुनं धारा-पूर्वकं-माडि कोट्टरिति

सलहिगे भिट्टि-वर्न··· । ··· करं सलिवुदिर्द्द्वर्गे पुन्दे ।
······ अक्किदवर्गां । पसुवं ब्राह्मणन कोन्द गति सनानिदुगुनु ॥

श्रीमत्तु माणिक्यदोळल मूलस्थ चन्द्रककोजन सुपुत्र परवादि-मल्लोजं ····· शासनं ··· ··· बाळिसुवतु ॥ वीतराग नमोऽस्तु मङ्गलमहा श्री

[विजयमय, (अपने वैदिक पदों सहित), प्रताप-चक्रवर्ती (? नरसिंह-देव) अपने राज्यका सुख और सुदिनचारी शासन करते हुए राजधानी दोरसमुद्र में विद्यमान थे:—महाप्रधान हेग्गडे शिवराज ······ सोमय्य ने माणिक्य-दोळलु जिनालयको दान दिया।

चण्डकचोज, जो माणिक्यदोळलुका मुख्य आदमी था, के पुत्र परवादि मल्लोज इस शासनकी रक्षा करेगा। वीतराग को नमस्कार।]

[Ec, IV Krishnarajapet Tl, no 36]

३२६

खजुराहो-संस्कृत

(विक्रम सं० १२०५, माघ वदी ५)

ॐ ॥ ग्रहपत्यन्वये श्रेष्ठिपाणिधरस्तस्य सुत श्रेष्ठि ति-(त्रि) विक्रम तथा आल्हण । लक्ष्मीधरं ॥ संवत् १२०५ । माघ वदि ५ ॥

[यह लेख भी २ इञ्च लम्बी १ ही पंक्ति में है। इसके अक्षरोंका आकार करीव १/२ इञ्चका है इसमें श्रेष्ठी (सेठ) पाणिधरके पुत्रोंका नाम दिया है। उनके नाम हैं—त्रिविक्रम, आल्हण और लक्ष्मीधर।]

EI, I, no XIX no7 (P,153)

३३०

खजुराहो-संस्कृत

जैन मन्दिरोंकी प्रतिमाओं परसे **तीन** शिलालेख

[विना काल निर्देश का]

१ [ग्र] हपत्यन्वये श्रेष्ठि श्री**पाणिधर** [॥]

[यह अधूरा शिलालेख एक ही पंक्तिमें है, जो कि ५ १/४ इञ्च लम्बी है। लगभग ५/८ इञ्च अक्षरोंका आकार है। ग्रहपति—अन्वय। जैसे इस शिलालेखमें है वैसे ही वह आगेके दो शिलालेखोंमें भी आया है।

[EI,I. P. 152.]

३३१

खजुराहो—संस्कृत

[संवत् १२०५=११४८ ई०]

[इस शिलालेख के लेखक का पता नहीं है। इतना ही मालूम है कि यह संवत् १२०५ का है।]

[A. Cunningham, Reports, XXI, P. 68, o, a.]

३३२

चित्तौड़ (राजपूताना);-संस्कृत-भग्न।

[सं० १२०७ = ११५० ई०]

पं० १. ओं ॥ नमः सर्व्व [ज्ञा] य ॥ नमो···[स] प्राञ्चिद्दुं (ग्ध) संकल्प-जन्मने। शर्व्वाय परमज्योति [र्द्द] ग्धसंकल्पजन्मने ॥ जयतात्स मृडः श्रीमान् मृडा···[1]

२. दनाम्बु (म्बु) जे। यस्य कण्ठच्छवी रेजे से (शे) वालस्येव वल्लरी। यदीय-शिखरस्थितोल्लसदनल्पदिव्यध्वजं समण्डपमहो नृणामपि वि[दू]-

३. रतः पश्यतां अनेकभवसंचितं क्षयमियर्त्ति पापं द्रुतं स पातु पदपंकजानतहरिः समिद्धेश्वरः ॥ यत्रोल्लसत्यद्भुतकारिवाचः स्फुर [न्ति चि]-

४. त्ते विदुषां सदा तत्। सारस्वतं ज्योतिरनन्तमन्तर्विस्फूर्ज्जतां मे दवताज्य-वृत्ति। जयन्त्यवश्र (स्र) पीयूषबिन्दुनिष्यन्दिनोनघाः। कवीनां [सम]

५. कीत्ती (र्त्ती) नां वाग्विलासा महोदयाः ॥ न वैरस्य स्थितिः श्रीमान् न जलानां समाश्रयः। रत्नराशिरपूर्व्वोस्ति चौलुक्यानामिहान्वयः ॥ तत्रो-

६. दपद्यत श्रीमान्रुद्र (न्द्र) वस्तेजसां निधिः। मूलराजा (ज) महीनाथो मुक्ता-मणिरिवोज्व (ज्ज्व) लः ॥ वितन्वति भृशं यत्र क्षेम (मं) सर्व्वत्र सर्व्वथा। प्रजा राजन्वती नून (नं) ज-

७. ज्ञेऽसौ चिरकालतः। तस्यान्वये महति भूपतिषु क्रमेण यातेषु भूरिषु सुपर्व्व-पतेर्न्निवासं। प्रोण्णु (र्णु) त्य बीभ्रयशसा ककुभां मुखानि श्रीसिद्धरा-

८. जनृपतिः प्रथितो ब (ब) भूव ॥ जयश्रिया समाश्लिष्टं यं विलोक्य समंततः। भ्रांत्वा जगांति यत्कीर्त्तिव (र्व) ना [हि] मरमंदिरम् ॥ तस्मिन्नमरसाम्रा-

९. जां (ज्यं) संप्राप्ते नियतेव्वशात्[2] कुमारपालदेवोभूत्प्रतापाक्रांतशात्रवः ॥ स्वतेजसा प्रसह्येन न परं येन शात्रवः। पदं भूभृच्छिरस्सूच्चैः कारि-

---

1. छूटे हुए अक्षर 'नीव' हैं।
2. 'र्वशात्' पढ़ो।

१०. तो वं (वं) धुरप्यलं ॥ आज्ञा यस्य महीनाथैश्चतुरम्बु (म्बु) धिमध्यगैः। ध्रियते मूर्द्धभिर्न्नम्रे (म्रै) र्देवशेषेव सन्ततम् ॥ महीभृन्निकु (कु) जेषु शाकंभरी-

११. शः प्रियापुत्रलोके न शाकंभरीशः। अपि प्रास्तशत्रुर्भयात्कंप्रभूतः स्थितौ यस्य मत्तेभवाजिप्रभूतः ॥ सपादलक्षमामर्थ्य नर्म्राङ्क-

१२. तभयानकः। [स्व] य [म] थान्महीनाथो ग्रामे शालिपुराभिधे ॥ सन्निवेश्य सि (शि) विरं पृथु तत्र त्रासितासहनभूपतिचक्रम्। चित्रकू-

१३. टगिरिपु [ष्क] लशोभां द्रष्टुमार नृपतिः कुतुकेन ॥ यदुच्चसुरसद्मांग्रेपरिष्यात्प्रपतन्सदा। रथं नयत्यलं मंदं मंदं भंगभयाद्रविः ॥ य-

१४. त्सौधशिखरारूढ़कामिनीमुखसन्निधौ। वर्त्तमानो निशानाथो लक्ष्यते लक्ष्मलेखया ॥ प्रफुल्त (ल्ल) राजीवमनोहरानना विवृत्तपाठीनविलोललोच-

१५. —।[1] —त्त [भृङ्गावलिरोमराजयो रथांगवक्षोरुहमंडलश्रियः ॥ परिभ्र- त्सारसहंसनिस्वनाः सविभ्रमा हारिमृणालवा (वा) हुकाः। वृ (वृ)- हन्नितंवा (बा) मलवारि—

१६. — —[2] मुदे सतां यत्र सदा सरोङ्गनाः ॥ स (सु) रभिकुसुमगंधाकृष्टमत्तालिमालाविहितमधुररावो यत्र चाधित्यकायां। स्खलिततरणिभानुः सल्ल—

१७. — — — — — मयिपति शश्वत्कामिनः कामिनीभिः ॥ शुभे यद्वने शाखिशाखांतराले प्रियाः क्रीडया सन्निलीना निकामं। घने [प]—

१८. — — — — — —[णां] [न] नूगंधसक्तालयः सूव (च) यन्ति ॥ प्राप कदापि न या हृदये शं सानुनयं समया हृदयेशं। यद्वनमेत्य सु [सं ?]—

---

1. यहांके त्रुटित अक्षर संभवतः 'नाः। प्रम' हैं।
2. यहांके त्रुटित अक्षर संभवतः 'राशयो' हैं।

१९. ◡ ◡— — —◡ ◡—◡ ◡—[र] तरागं ॥ एवमादिगुणे
दुर्गे स्वर्गे वा भुवि [सं] स्थिते । राजा विष्णुः परप्रीत्या संचरन्निजलील—
२०. या ॥ ति........[ता ?] श्चर्यसंकुलम् । ददर्शागाधगंभीरस्वच्छं स्वमिव मानसम् ॥ निर्म्मलं सलिलं यत्र पि—
२१. हितं प [द्मि]—◡— ।......जे नीलाब्ज (ब्ज) राग [भू] श्रियम् ॥ विमुच्य व्योम पातालरसा यत्र त्रिमार्गगंगा । लोका—
२२. न् पु [नाति]... .....◡—◡— ॥ [त] स्योत्तरतटेऽ द्राक्षीन्न-ग्रामरसमर्च्चितं । श्रीसमिद्धेश्वरं देवं प्रसिद्धं—
२३. जगती ◡— ॥...........◡—◡ ते । त्रैसंध्य [तू] र्यनादेन कलि (लिं) निर्भर्त्सयन्निव ॥ य [त्त ?] वस्याधिपत्येस्यात्पुरा भ—
२४. ट्टारिकोत्त [मा ।] ..[वी] नृपाभ्य [र्च्या ?]...◡—◡— ॥ तस्याः शिष्याभवत्साध्वी सुव्रतवात भूपिता । गौरदेवीति वि [ख्या]... [ता ?] कृतोद्यमा ॥ सु [मनो ?]—
२५. संसेव्या [मा ?]...अविनाशिनी । दुर्गा हि........◡—◡[ता] ॥ यत्तपः पावनं वीक्ष्य पवित्रीकृतसज्जनं । सस्मरुः पूर्व्वयमि...◡—◡— ॥ शिवं प्रपूज्य त [स्य]—
२६. ...[म] गमत्प्रभुः । प्रणम्य [तावुभौ ?] भक्त्या सि (शि) रसा ◡—◡— ॥...[तस्यां] तः पूजार्थं हरपादयोः । कुमारपाल-देवोदाद्ग्रामं श्री◡—◡— ॥......स्यां—
२७. टा दक्षिणपूर्व्वोत्तरपश्चिमतः सरःपाली भूणादित्य...राज...दीपार्थं घाण-कमेकं सज्जनोप्यदात् दंडनाथ......मेतद्दानम—
२८. श्री ज [य] कीर्ति शिष्येण दिगंब (ब) रगणेशिना । प्रशस्तिरीदृशी चक्रे...श्र रामकीर्त्तिना ॥ संवत् १२०७ सूत्रधा......[1]

---

1. इस पंक्तिके नीचे भी कुछ अक्षर खोदे गये थे; लेकिन प्रतिलिपिमें वे बिलकुल पढ़ने योग्य नहीं हैं।

[(२८ वीं पंक्ति में) लेखका काल सं० १२०७ दिया हुआ है, जो, विक्रम संवत् मान लेनेसे, ११४६-५० या ११५०-५१ ई० ठहरता है; और इसका उद्देश्य चालुक्य राजा कुमारपालकी चित्रकूट पर्वत, आधुनिक 'चित्तौड़गढ़', की यात्रा, तथा वहाँ उसके द्वारा उस समय पर्वत पर 'समिद्धेश्वर [शिव]' देवके मन्दिरके लिये किये गये कुछ दानोंका उल्लेख करना है।

"ॐ नमः सर्व्वज्ञाय" इन शब्दों के बाद, लेखमें पाँच श्लोक हैं। इनमेंसे शर्व, मृड, और समिद्धेश्वरके नामसे शिव परमात्माकी स्तुति करते हैं, जबकि अन्य दो सरस्वतीकी सहायताकी कामना, तथा कवियोंकी रचनाओंकी यशोगाथा गाते हैं। [पं० ५ में] लेखक चालुक्योंके वंशकी प्रशंसा करता है। उस अन्वय [वंश] में मूलराज राजा उत्पन्न हुआ था [पं० ६], और उसके तथा उसके बादके अन्य राजाओंके स्वर्गारोहणके बाद राजा सिद्धराज आये [पं० ७], जिनके उत्तराधिकारी कुमारपाल देव हुए [पं० ९]। जब इस राजाने शाकम्भरी (वर्त्तमान साँभर] के राजाको हरा दिया [पं० १०] और सपादलक्ष देशको मर्दन कर दिया [पं० ११], वह शालिपुर नामके स्थानमें गया (पं० १२), और वहाँ अपनी छावनी (Camp) डालकर वह चित्रकूट [चित्तौड़गढ़] पर्वतकी सुन्दरताको देखने आया; वहांके मन्दिरों, राज-प्रासादों, झीलों या तालाबों, ढाल और जंगलोंका वर्णन १३-१९ की पंक्तियोंमें है। कुमारपालने वहाँ जो कुछ देखा उससे उसका चित्त प्रसन्न हुआ, और उत्तर दिशाकी तरफ ढालपर बने हुए 'समिद्धेश्वर' देवके मन्दिरमें आकर [पं० २२] उसने शिव ईश्वर और उसकी पत्नीकी पूजाकी, और मन्दिरके लिये एक गाँव दानमें दिया जिसका नाम सुरक्षित न रह सका [पं० २६)। पं० २७ में अन्य दान [एक 'घाणक' या कोल्हू दिये जलानेके लिये, आदि] बनाये गये हैं; और पंक्ति २८ बताती है कि जयकीर्त्तिके शिष्य रामकीर्तिने जो दिगम्बर सम्प्रदाय के मुख्य थे, यह 'प्रशस्ति' लिखी है, और लेखके उपर्युक्त कालका निर्देश करती है।]

[EI, II, no xxxiii, Tl-421-424]

३३३

कैदाल;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक १०७२—११५० ई०]

[कैदाळ (तूमकूर परगना) में, प्रसन्न गङ्गाधर मन्दिर में पाषाणों पर]

(पहला पाषाण)।

जयन्ति यस्यावदतोऽपि भारती-विभूतयस्तीर्थकृतोऽपि••।
शिवाय धात्रे सुगताय विष्णवे जिनाय तस्मै सकलात्मने नमः ॥
दिनकृत्-तेजक्के तेजं मननेवरद्दुद्वृत्त-कण्ठीरवक्कम् ।
एनतुं गाढस्थवार्यन्तमर-कुचके नाधिङ्गलं नोळवन्ता- ।
घन-गाहाक्षेप-भीमार्ज्जुन-कृत-नल-नृपालरोळ् गण्डिन्दी- ।
मननेस्तं कोचितल् पात्रं पत्रिवेत्त नारसिंघ-निर्वाशम् ॥

स्वस्ति समधिगत-पञ्च-महा-शब्द महा-मण्डलेश्वर द्वारावती-पुर-वराधीश्वर यदु-कुलाम्बर-द्युमणि सम्यक्त्व-चूडामणि श्रीमत्-त्रिभुवन-मल्ल तळकाडु कोङ्गु-नङ्गलि गङ्गवाडि-नोळम्बवाडि-बनवसे - हानुङ्गल्-हलसिगे - बेळवोल-गुच्चङ्गि-गण्ड भुजबळ-वीर-गङ्ग विष्णुवर्द्धन-श्री-नारसिंघ-देवरु दुष्ट-निग्रह-शिष्ट-प्रतिपाळनं माडि दोरसमुद्रद नेलेवीडिनोळु सुख-संकथा-विनोददिं राज्यं गेय्युत्तमिरे तत्पाद-पद्मोपजीवि ॥ स्वस्ति समधिगत-पञ्च महा-शब्द महा-सामन्तं वीर-लक्ष्मी-कान्तं माळव-मारेश्वर गण्ड मान्यखेड-पुर-वराधीश्वरं चतुर्मुख गङ्गि-गोन्दळं बदिवं तोडर् डोङ्किपद्ळगादित्यं मरुगरे-नाडाळ्वं सामन्त-गूळि-बाचिगे ।

जिन-पति कुळ्दु वेळ्प गुरु-सम्पदनं हरनोल्दु कीर्त्तियम् ।
अज-सरोरुहं वर-चिरायुरमिन्दिनलि इगळ्च्युतम् ।
मननोलिदोप्पुविनं गिरिदं वर-दुव दयामितृद्धियम् ।
मनसिज-रूप-नाति निनगीगे शशाङ्क-कुलाद्रियुळ्ळिनम् ॥

सिंगद सौर्य्यवङ्गजन रूपु मुरारिय शक्तियागङ्गम् ।
पिङ्गदे कर्ण्णनीव-गुणविन्द्रन लीले भुजङ्ग-राजनोळ् ।
सङ्गळिसिर्द् पेर्मे सुरशैलद बिण्पुवोषल्दु निन्दवी- ।
गङ्गन पुत्रनोळ् सुभट-वाचियोळूर्जित-सव्यसाचियोळ् ॥
धरेपोळ् चागद पेम्पिनिं रवि-सुतं संग्रामदोळ् रामनिं ।
पिरियं सौचदोळञ्जना-तनयनोळ् सादृश्यवे······ ।
निरुतं निर्म्मळ-धर्म्म-सूनुवेळे योळ् तानाद नाल्वत्त-ना- ।
ल्वर-गण्डङ्गिदिराम्य गण्डरोळरे विश्वम्भरा-भागदोळ् ॥
अदळ-कुळ-कमळ-हंसन- ।
नदळान्वय-राज्य-भवन-मणि-तोरणन- ।
प्पदळर रामं बात्रिय ।
विदिताम्नायमनलम्पिनिम् प्रकटिसुवे ॥
श्री-रमणी-प्रियं जगदोळूर्ज्जित-तेजनपार-पौरुषम् ।
वीर-रस-प्रियं जसके नल्लनुदारनदेन्तु नोळ्पडम् ।
धारिणियल्लि ताने सुभटाग्रणि एम्बिनमोप्पिगोण्डदम् ।
वारिज-नाभनन्तदळ-वंश-कुळाम्बर-भानु बासयम् ॥
बासणिसि जगमणोळ्पिम् । भासुरतरमेनिप कीर्ति-दुकुलदिनांत ।
सासिर्म्मडि भीमङ्गेने । बासेयनन्तेसेदनावनुर्व्वी-तलदोळ् ॥
आतङ्गे तनयनादं । भूतलदोळ् राम भीमनिन्दर्ज्जुननिम् ।
मातेनो सुभटनधिक-वि- । नूतं तां नेगर्द्नेळगे गङ्गद-गङ्ग ।
ओवदिदिरान्त वैरियन् ।
आवगवान्तिरिदु गेल्दु जयदुन्नतियिम् ।
रावणनिं मिगिलेनिपम् ।
केवळमे जसदिनेसेद गङ्गद-गङ्ग ॥
अन्तेनिसि नेगर्द गङ्गन ।
सन्तति कलि-युग-धनञ्जयं कुल-तिलकम् ।

चिन्तामणि तानेनिपम् ।
भ्रान्तिल्लदे बेळ्र बनके **नायक-बसव** ॥
तत्-तनेयनान्त वैरिय ।
नेत्तरना-भूत-कोटिगेषदुत्सवदिम् ।
गुत्तनुमनिळिसिदं जयद् ।
उत्तरदिं सुत्ति हरिव **गङ्ग** बरेयोळ् ॥
मत्त-गज-वैरि निपं । वित्तरदिन्दान्त शत्रुगं रूपिनोळा- ।
चित्त नेळियं गुण ।
दुत्तरदिं सुत्ति परिव गङ्गं जगदोळ् ॥
अवन मगनधिक-रजनी- ।
भुवनकाश्चर्यवागे तन्नेय सौख्यंम् ।
नव-लंश्वर **बसवेयन्** । अवितय-वाक्यक्के ताने मोदलेनिसिदं ॥
असदलवेनिसिद कीर्त्ति- । प्रसरतेयं तळेदु खेचरङ्गेणेयादम् ।
वसु···पोगळल्के **नायक-** । **बसवं** त्रैलोक्य-वीर मषेयुगे काव ॥
कुलवे सेयलु बलवेसेयलु । चलवेसेयल् तेजवेसेयलुर्व्वी-तळदोळ् ।
कलि-बसवङ्गनुनयदिं । **चलवपिवं** तनेयनादनुत्सवदिन्दम् ॥
अट्टे कुणिदाडे रणदोळ् । निट्टुर-गति तोडर्दरङ्कुशं रण-धीरम् ।
क···ळहितरिगे भयं । बुदल् चलवषिवनिषिवनान्तरि-बलवम् ॥
सामन्तं चलवषिवङ्गा-मद-करि-गमन तनेयनादं मुददिम् ।
भीम-भुज···अदळर । रामं श्री-गङ्गनमळ-लक्ष्मी-सङ्गम् ॥
भीमङ्गेणे भुज-बळदिं । रामङ्गेणे शौर्यदेळगेपिं रूपिनोळा- ।
कामङ्गेणेयेनलोप्पि···। ई-महियोळ् **गङ्ग**नमळ-लक्ष्मी-सङ्गं ॥
आतन पराक्रममदेन्तेन्दोडे ।
अदटप्पुण्डरि-नायकप्पुलबरन्दोन्दागि··· ।
मददिं निन्दोडवन्दिरं जवनवोळ् सामन्त-काळानलम् ।
मिदुळं नेत्तर धारे सूसे मडळादंय्यय्य जीयेम्बिनम् ।

कदनोद्योगदे गङ्गन••गेल्दनान्तारात‍ि-सन्दोहमम् ॥
येडरिदरातियेम्बवन वंशमनुग्र-कुठारदिन्दवम् ।
कडिदु विरोधि-पर्व्वतमनागडे तन्न भुजा••वज्रदिम् ।
किडिसि जयाङ्गना-रमणनूर्जित-गङ्गनिळा-तळाग्रदोळ् ।
तोडर्दर-डोङ्कियार्जिसिदनुन्नतिसं शशि-सूर्य्यरुळ्ळिनम् ॥
एरेटङ्गा-सुर-धेनुवं भिगुवनान्तर्गाजियोळ् रोपदिम् ।
नरनिन्दं घन-शौर्य्यदनङ्गभवनं रोडाडिपं रूपिनिम् ।
पिरिपाळ् शक्र-विळासदि••भळर•••नोडे नाल्वत्त नाल्- ।
वर गण्डं कलि-गङ्गनार्ग्गवधिक सामन्त-कण्ठीरवम् ॥
आतन सति **वेनवाम्बिके** । सीतेगरुन्धतिगे रतिगे••• ।
ख्यातिगे गुणदुन्नतिगं । मातेम् तां पिरिपवल्ते धात्री-तळदोळ्
कन्तु-शर-श (स) दृश-रूपिं । चिन्तामणि विबुध-जनकव्•••त्तनवं
भ्रान्तिल्लदेम्•••••।•••अमर्दु नेगल्दं वेनकाम्बिकेयम् ।
आ—दर्प्पातगळगे ।
हरिगं गोमिनि-कान्तेगं मनसिजं रुद्रङ्गे रुद्राणिगम् ।
परमोत्साहदे षण्मुखं जनि [यि] पन्ती-धीर-गङ्ग••• ।
•••लक्ष्मीपतियप्प श्री-वेनविका- **मादेविगं** पुट्टिदम् ।
हर-पादाम्बुज-भृ (भृं) ग-**वाचय**•••••••••••• ॥
अदळ-कुळमेम्ब कुलदोळग् । उदयसिदं दिनपनन्ते तेजोनिलयन्
कदन-धनञ्जयनहितर । मद-हरणं शूर-वाचि तोडर्दर डोङ्के ॥
तोडर्द विरोधिगन्तकनु बेडिदवङ्गे कल्प-भूरुहम् ।
तडेयदे बन्दु कण्ड शरणार्तिगे वज्रद कोटेयेम्बुदी- ।
पोडवि निरन्तरं जसके नल्लननम्बुजनाभनन्ननम् ।
तोडर्दर डोङ्केयं सुभट-वाचियनूर्जित-सव्यसाचियम् ।
अदळ-कुलाम्बर-द्युमणि दायिगरन्•••ले गेल्द लीलेयिन्द् ।
ओदविद मान्यखेड-पुरदीशनुदारनपार-पौरुषम् ।

कदन-धनञ्जय······साहस-गङ्गनुर्व्विंयोळ् ।
मदनन रूपिनिन्देसेद वाचिये धन्यनदेन्तु नोळ्पडम् ॥
तोडर्द्दर गण्ड वैरिगळ गण्ड मदान्धर गण्ड वीरदिन्द् ।
एड्वर्वर गण्ड मेच्चदर गण्ड पिसुणर गण्डनेन्दुदम् ।
तोडेयद गण्डनाहवके सोलद गण्डनदेन्तु नोल्पडम् ।
तोडर्दर दोङ्के वान्ति निनगार द्वारे गण्डरिवा-तळाग्रदोळ् ॥
वुरदोळ् श्री-वधु कौस्तुभम्बोलेसेवळ् वाग्-वाणि······थिम् ।
परमानन्ददे वक्त्रदोळ् तिलकमं पात्तिर्प्पळन्तोल्दु तोळ् · ।
वेरगिं वीरर वीर-लाद्म नयदिं कूतिक्कुं नाल्वत्त-नाळ् · ।
वर गण्डं कळि-वाचियोळ् सुवगनोळ् सामन्त-सङ्क्रन्दनोळ् ।
हरियं मार्कोळुगुं भयङ्गोळुविनं दिग्-दन्ति-दन्तङ्गळम् ।
पिरिदाश्चर्य्यदे कित्तुं तोक्कवदटिं दिक्पाळ-सन्दोहमम् ।
करेदिन्तिर्न्निं वेङ्कु तन्न क्ळदि नोळ्पाग नाल्वत्त-नाळ् · ।
वर-गण्डं कळि वाचि-देवनधिकं सामन्त-सङ्क्रन्दनम् ॥
धरेयं यीद् दिनेश-सूनु-सदृशं त्यागक्के शौर्य्यक्के तान् ।
अरविन्दोदरनल्ते पाट निल-रूपि···पुष्पायुधम् ।
दोरे तामादरेनल्के शौचदळदं ताळिदद्दं नल्वत्त-नाळ् · ।
वर गण्डं कलि-वाचि-देवनेसेदं सामन्त-सङ्क्रन्दनम् ॥
भरदिन्दान्त विरोधियं रण-मुख-व्यापारदोळ् तन्न दुर् ·
द्धर-बाहा-क्ळदिं पडल्वदिसेयुं भूताळियुं काळियुम् ।
नोरे-नेत्तर-ण्णोणनेम्बिवं नोणोयुतन्तेर्द्दिडे नाळ्वत्त-नाळ् · ।
वर गण्डं कळि-वाचि-देव गेलुगुं सामन्त-सङ्क्रन्दनम् ॥
सुर-भूजावळि पणुदेद्दे नयदिं धात्री-तळक्केम्बिनम् ।
निरुतं दान-विनोदि कीर्त्ति-निळयं वैरीभ-पञ्चाननम् ।
स्मर-रूपं करेदीवनाग्र्गवधिकं तानाद नाल्वत्त-नाळ् · ।
वर-गण्डं कल्ल्-वेचि-देवनधिकं सामन्त-सङ्क्रन्दनन् ॥

सामन्तं सुर-धेनुवित्तु तणिपळ् विश्वम्भरा-भागमम् ।
सामन्तं रिपु-सैन्यमं तरियला-प्रत्यक्ष-वीरार्ज्जुनम् ।
सामन्तं शरणेन्दवङ्गे दयेयिं गम्भीर-रत्नाकरम् ।
सामन्तं कलि-बाचियार्ग्गेवधिकं वैरीभ-पञ्चाननम् ॥
मरुगरे-नाडाळ्वं गुण- । देरेयं सामन्त-बाचियदळग रामम् ।
मरुगरे-नाडोळगे हे- । ररिकेय कय्द्दाळदल्लि धर्म्मोन्नतियम् ॥
आ—कय्दाळद् विळासार्पदवदेन्तेन्दोडे ।
तुरुगिद मामरदिं वेळ्ळेद् । एरगिद सौगन्धि-शालियिं पू-गोळदिं ।
केरेयिं देवाळयदिं । नेरे सोगयिस तोक्खु लीलेयिं कय्दालम् ॥
विविधालङ्कृत-देव-सौध-तळदिं वेश्याङ्गना-बाटदिम् ।
कवि-राज-प्रवरक्कळिं सुळिव नाना-गेय-चातुर्य्यदिम् ।
नव-देशीय-विळासदिं सुबगिनिं कय्दाळमोप्पिप्पुदा- ।
दिविजेन्द्रोन्नत-लोकमं नगुवन्तोल् तन्नुदय-सौन्दर्य्यदिम् ॥
धनदनुमनिळिप परदरि ।
मनुगळनिळिप मुनिगळिं वगेवागळ् ।
मनसिजननिलिप विटरिम् ।
वनितेयरिं नाडे सोगयिकुं कय्द्दाळम् ॥

(दूसरा पाषाण) ।

अन्तनेक-विळासक्कावासमुं सकल-लक्ष्मी-निवासमुमेनिसि सोगयिसुव कय्दाळदोळ् ।

कन्द ॥ उद्धरिसि जैन-भवनमन् । उद्धरिसि सि(शि)वालयङ्गळं मुददिन्दन्त् ।
उद्धरिसि विष्णु-गेहमन् । उद्धरिसिदनल्ते बाचि जसदुन्नतियम् ॥
सोगयिप कामधेनु जिन-शासन-लक्ष्मिगे कल्प भूरुहम् ।
मृगधर-भूषणागम-तपस्विगे सिध-रस-प्रवाहमेम् ।
नेगेदुदु बुद्ध-कोटिगोने चिन्तिसदीव महांशु-रत्नवा- ।

नगधरनागमञरिगमेन्दोडे वाचियिदेम् कृतार्त्थनो ॥
धरेगेसेव नाल्कु-समेपद । सिरि कल्यावनिरुहं बुध-ज़नकेम् ।
दोरेवेत्त पेण्गिन्न्दं । पिरियं धर्म्मावतार गङ्गन पुत्रम् ॥
श्री-लीलायतनक्के ताने नेलेयाय्तेम्बोन्दु संसेव्यदिम् ।
नीलग्रीव-पदाब्ज-भृङ्गनधिकं श्री-**वाचि-देवं** यश- ।
लोलं वीर-गुणाम्बुरासि मुददि कय्दाळदोळ चेल्विनिम् ।
कैलासक्केणेयागि माडिसिदनी **गङ्गेश्वरावासमम्** ॥
श्री-**नारायण-गृहमं** । श्री-नारी-रमणनदळ-वंश-कुलाम्बर- ।
भानुर्वेनिसिर्द्द वाचिय- । नूनं माडिसिदनलुते तोडर्द्दर डोङ्कि ॥
चलवरिवेश्वरमं गुण- । जलधि जय-श्रीगधिपं बुध-जनकं तां ।
बलियेनिप **वाचि-देवं** । कुल-नगमं मिगुव पेम्पिनिं माडिसिदम् ॥
श्री-महिमं गुण-निळयं । भीम-पराक्रमनु **वाचि-देवं** मुददिम् ।
रामेश्वर-सदनमना- । हेमाद्रिगे मिगिलिदेम्बिनं माडळ् सिदम् ॥
भारतदोळ्आदुदीग सुरशैळविदेम्ब मनोनुरागदिम् ।
धरे पोगळन्तु सन्दटळ-वंश-शिखामणि **वाचि-देव** ताम् ।
वर-**जिन-मन्दिर**ङ्गळने माडिसि लोकदोळोल्दु कीर्तिगा- ।
भ(भा)रतनो गुत्तनो शिवियो खेचरनो बलि चारुदत्तनो ॥
रामन बाणदिन्दे लघुवादुदु नोर्प्पंड मत्त-वानरर् ।
प्रेमदे पर्व्वत-प्रततियिदमे कट्टिद सिन्धु तन्ननी- ।
भीम-पराक्रम मुडदे कट्टिसिदोळ्पिन पेम्पिनिन्दे ताम् ।
भीम समुद्रवेळिपु [दु] वाधिय गुण्पिन पण्गिनेल्गेयम् ॥
उदधिय गुण्पगास्त्य-मुनि-पुङ्गवनिन्दमे निन्दुदागियुम् ।
मदनहर-प्रताप रघु-रामन रामन बाण-घातदिन्द् ॥
उरिदुददेवुदेन्दु सुभटाग्रणि वाय पेण्गिनन्ददिन्द् ।
अदळसमुद्रवेळिपुदु तन्न महत्वदिनम्बुराशिय ॥
दिव्वूरं वेप्राळिगे । सर्व्वज्ञ-पदारविन्दनदळर रामम् ।

दोर्-वळ-विभासि बाचम् । सर्व्वाबाधं परिहारवेनिसियें कोट्ट ॥

इन्तु चतुस्-समय-धर्म्मोद्धार-धौरेयं श्रीमन्-महा-सामन्त-गूलि-**बाचि-देवन** नेक-देवालय-बसदि-विष्णु-गृहङ्गळं माडिसियुं महा-तटाकङ्गळं कट्टिसियुं **स [श] क-वर्ष १०७२ डेनेय प्रमोद-संवत्सरद फाल्गुन-मासदमास्ये-यादिवार-सूर्यग्रहण-व्यतीपातदन्दु** तम्मय्न **सामन्त-गंगैयंगे** परोक्ष-विनेयवागि श्री**गङ्गेश्वर-देव...**यन पेसरलु देगुल माडिसि देवर प्रतिष्ठे माडिया-गङ्गेश्वर-देवरङ्ग-भोगकमष्ट-विधार्चने-तपोधनराहार-दानक्कं देगुलद खण्ड-स्फुट-जीर्णोद्धारक्कं **हिरिय-केरेय** केळगे बिट्ट गर्द्दे सलगे ३ मानियलु बिट्ट गर्द्दे सलगे ३ बेद्दले सलगे १ मन्नवायङ्गे दिव्वूरं परोक्ष-विनेयवागि स-ब्राह्मणरिगे सर्व्वबाधा-परिहारवागि धारा-पूर्व्वकं माडि भूमि-दानवं कोट्टं मत्तं श्री-केशव-देव-रङ्ग-भोगकमष्ट-विधार्च्चनेगं ब्राह्मणराहार-दानकं देगुलद खण्ड-स्फुट-जीर्णोद्धारकं दिव्वूर् केरेय केळगे किट्ट गद्दे सलगे १० आगर्द्देय बळिय तोण्ट बेद्दलेयुदं सलु-वुदु मत्तं तम्म मुत्तय्यं सामन्तं चलवरिवङ्गे परोक्ष-विनेयवागि कित्तगळियलु चलवरेश्वरमेन्दाय(त)न पेसरलु देगुलवं माडिसि आ-चलवरेश्वर-देवरङ्ग-भोगक्कं अष्टविधार्च्चनेगं तपोधनराहार-दानक्कं देगुलद खण्ड-स्फुटित-जीर्णोद्धारकमा-कित्तगळिय केरय केळगे बिट्ट गर्द्दे सलगे ३ बेद्दले सलगे १ मत्तं तन्न मगळ **कुमारि चेन्नवे-नायकिति**गे परोक्ष-विनेयवागि श्री-**रामेश्वर देवर** देवालयमं माडिसि आ-देवरङ्ग-भोगक्कमष्ट-विधार्च्चनेगं तपोधनराहार दानक्कं देगुलद खण्ड-स्फुट-जीर्णोद्धारक्कं हिरिय-केरेय केळगेयुम् गर्द्दे सलगे ३ मानियलु गर्द्दे सलगे ३ बेद्दले सलगे १ मत्तं **रामेश्वर-देवर** नन्दा-दिविगेगे सर्व्व-बाधा-परिहारवागि बिट्ट येत्तु-गाण १ मत्तं सामन्त-**बाचि-देवन** मनस्-सरोवरालंकार राजहंसिनि ॥

कन्द ॥ भूमिगे सरि पेम्पिन्दं । कामाङ्गनेगधिकवेसेव शौचोन्नतियिम् ।
भीमले एन्दतिमुददिन्द् । ई-महि बण्णिपुदु **बाचि-देवन** सतियं ॥
जिन-पतिदेय्य तन्दे कलि योद्देरे-नाकनोल्पनान्त तज्-।
जननि विनूते चिम्बले महासति गूळिय-**बाचि-देव** सज्-।

घन-नुत वीर तन्न पतियन्टोडे पोल्ववरार् घरित्रियोळ् ।
वनितेय······भीमलेयोळूर्जित-पुण्य-गुणाभिगमेयोळ् ॥
रतिगं गोमिनिगं पा-। र्वतिगं मिगिलु सुवगिनिं सम्वटदिं तान् ।
अतिशय-रूपोन्नतियिं । क्षितियोळे ले वाचियगमि भीमले-नारि ॥

इन्तु नेगर्द् महा-सौभाग्य-शील-सौन्दर्य्य-सम्पन्नेयप्पं परिवार-सुरभि **भीमवे-नाय**-कितियर्गे परोक्ष-विनेयवागि श्रीमन्महा-सामन्त-**वाचि-देवं भीम-जिनालयमेन्दु** वसदियं माडिसियुं **भीमसमुद्रमेन्दु** कन्ने-गेरेयं कट्टिसियुमा-केरेय केळगे भीम-जिनालयद श्री-**चन्न-पार्श्व-देव**रङ्ग-भोगक्रमट-विधानार्च्चनेगं ऋषियराहार-दानक्कं वसदिय खण्ड-स्फुट-जीर्णोद्धारक्कं कोट्टु बिट्ट गर्दे सलगे ८ मत्तमा-भीमसमुद्रद होल-दलु बेद्दले सलगे २ मत्तं सम्यक्त्व-चूडामणियेनिसिद **सेनवोव-मारसय्यं** सामन्त-गूलि-**वाचिदेव**न कैय्यलु भूमियं पडेदु **मुदुगेरे**-गिळद वागिनोळ् **मारसमुद्रमेन्दु** कन्ने-गेरेयं कट्टिसि आ-केरेयं भीम-जिनालयद श्री चन्न-पार्श्व-देवरङ्ग-भागक्रमट-विधार्च्चनेगं ऋषियराहार-दानक्कं वसदिय खण्ड स्फुट-जीर्णोद्धारक्कं कोट्टु बिट्टन्ती-मारसमुद्रमादियागि समस्त देवालय-विष्णु-गृह-वसदिगे बिट्ट-भूमियं कुरुक्षेत्र **वाणरा(रणा)सि-प्रयागे**-अर्घ्यतीर्थमेन्दु प्रतिपालिसुवुदु ॥

मत्त ॥ परमानन्ददे **वाचि-देव**नभयं दिव्वूगलै-गण्डुगम् ।
दोरेवेत्तगद गर्द्दे-बेद्दलयनन्ता-तोण्ट-सद्-गेहमं ।
स्थिर-तेजं कुडलिन्तुदात्त-पडेदं चातुर्य्य-चन्द्रेश्वरम् ।
वर-विद्या-निधि **वाचि-राज**विबुधं चन्द्रार्करुळ्ळन्नेगम् ॥
सुरगिरिमुळ्ळिनं चलनिमुर्ळ्ळिन तारनगेन्द्रवुळ्ळिनम् ।
सुरनदिमुळ्ळिनं शिरियुमुळ्ळिनवग्गद सूर्यरुळ्ळिनम् ।
सुर-सभेमुळ्ळिनं वरदे भारतियु······तारेमुळ्ळिनम् ।
घरे शशिमुळ्ळिनं निळुके गूलिय-वाचिय धर्म्म-शासनम् ॥

(यही अन्तिम श्लोक) ।

जिस समय, द्वारावतीपुरवराधीश्वर, यदुकुलाम्बरद्युमणि, तलकाडु कोङ्गु नङ्गलि गङ्गवाडि नोलम्बवाडि बनवसे हानुङ्गल् हलसिगे बेल्वोळ और उच्चंगि

पर कब्जा करने वाले भुजबल-वीर-गङ्ग विणुवर्द्धन नारसिंघ-देव, शान्ति से राज्य करते हुए, दोरसमुद्र के निवासस्थल पर थे:—

तत्पादपद्मोपजीवी मान्यरवेडपुरवराधीश्वर, अदल लोगोंके लिये सूर्य, मरुगरे-नाड्का अधिपति सामन्त गूळि-बाचि था। उसकी प्रशंसायें, गङ्ग-पुत्रके रूप में उसका वर्णन। उसका पुत्र गुड्ढ गङ्ग था। उसके कुलमें नायक बसव हुआ। उसका पुत्र गङ्ग था, जिसने गुत्तको हराया था। उसका पुत्र बसवेय था। उसका पुत्र चलवरिव था। उसका पुत्र गङ्ग था, जिसकी स्त्री वेनवाम्बिके थी, और उनका पुत्र मान्यरवेड-पुरका अधीश बाचय या बाचि था उसकी विस्तार-पूर्वक प्रशंसा।

मरुगरे-नाड्का अधीश, अदल-राम, सामन्त-बाचि मरुगरे-नाड् के कयूदाळ (कैदाल) में अतीव उच्च धर्मका पालन कर रहा था। कयूदाळकी शोभा का वर्णन। वहाँ उसने जिन मन्दिर, शिव मन्दिर और विष्णु मन्दिर सभी को सहारा दिया। और वहाँ उसने यह गङ्गेश्वर मन्दिर, एक नारायण मन्दिर, एक चलवरिवेश्वर मन्दिर, एक रामेश्वर मन्दिर, और जिन मन्दिर बनवाये। तथा उसने भीमसमुद्र और अडळ समुद्र नाम के तालाब बनवाये। तथा दिव्वूर ब्राह्मणोंको दिया।

इस प्रकार चार मतोंके धर्मको बढ़ाते हुए, सामन्त गूळि-बाचि-देवने, बहुत-से मन्दिर, बसदि, और विष्णु-मन्दिर, तथा बड़े-बड़े तालाब बनवा कर,—(उक्त मितिको), सूर्य-ग्रहणके समय, अपने पिता सामन्त गङ्गैयकी मृत्युके स्मारकमें, उनके नामसे एक मन्दिर बनवाकर उसमें गङ्गेश्वर-देवको स्थापना की, और मन्दिरकी मरम्मत, पूजा-विधि, तथा मुनियोंके आहारके लिये (उक्त) हिरिय-केरेकी ज़मीन दी।

इस तरह केशव-देव, चलवरिवेश्वर-देव, रामेश्वर-देवके लिये भी भूमियाँ प्रदान कीं। तथा अपनी पत्नी **भीमलेके** नामपर,—जिसका देव जिनपति था, पिता याद्धरे-नाक और माता चिम्बले थीं,—भीम जिनालय नामकी बसदि बन-

वायी, भीम समुद्र नामका पवित्र (Virgin) तालाव बनवाया और उस तालावकी सारी जमीन चन्न-पार्श्व देवके लिये प्रदान कर दी।

तथा तेनबोव मारमय्यने, सामन्त गूळि-बाचि-देवसे भूमि प्राप्त करके, मार-समुद्र नामका पवित्र तालाव बनवाकर भीम जिनालयके पार्श्व-देवके नाम कर दिया।

इन विभिन्न दानोंको बाणार(राण)सी, प्रयाग इत्यादि पवित्र तीर्थोंके समान समझा जाय।-ये सब दान विद्या-निधि मा (वा) दि-राजके अधीन किये गये थे। शासन हमेशा कायम रहे, इसकी कामना।]

[Ec, XII. Tumkur Tl., No. 9.]

३३४

बामणी;—संस्कृत और कन्नड।

[शक १०७२—११५० ई०]

१. स्वस्ति ॥ जयत्यमळ-नानार्थ-प्रतिपत्ति-प्रदर्शकम्। अर्हतः पुर [,] दे [व]-
२. स्य शासनं मोह-शासनम् ॥ श्री-शीलहार-वंशे जतिगो नाम [क्षि]-
३. तीशस्समजातस्तत्पुत्रौ गोङ्कल गूवलौ। तत्र गोङ्कलस्य स [नु]-
४. र्मारसिंहदेवस्तदपत्यं गण्डरादित्यदेव तस्य नन्दनः। समधिग-
५. तपञ्चमहाशब्द-महामण्डलेश्वरः। नगर-पुर-
६. वराधीश्वरः। श्री शीलहार-वंश-न (न) रेन्द्रः। जीमूतवाहनान्वय-
७. प्रसूतः। सुवर्ण-गरुड़-ध्वजः। मरुवक-सर्पः। अयमनसिंघ-
८. नः। रिपु-मण्डलिक-भैरवः। विद्विष्ट- [ग] ज-कण्ठीरवः। इडुवरादित्यः।
९. कलियुग-विक्रमादित्यः। रूप-नारायणः। गिरि-दुर्ग-लंघनः। श-
१०. निवार-सिद्धिः। श्री-महालक्ष्मी-लब्ध-वरप्रसाद इत्यादि-नामावलि-विराजमानः।
११. श्रीमद्-विजयादित्यदेवः। वळवाड-स्थिर-शिबिर सुख-संकथा-वि-
१२. नोदेन विजय-राज्यं कुर्व्वन्। शक-वर्षेषु त्रिसप्तत्युत्तरसह-

१३. ख-प्रमितेष्वतीतेषु अङ्कतोऽपि १०७३ प्रवर्त्तमान-प्रमोद-संव-[त्स]-
१४. र भाद्रपद-पूर्ण्णमासी-शुक्रवारे सोमग्रहण-पर्व्व-निमित्त-
१५. णवु [क] गेगोल्लानुगत-मडलूर-ग्रामे सणगमय्य-चं [ध]-
१६. व्वयोः पुत्रेण । पुन्नकव्वायाः पत्या जेन्तगावुण्ड-हेम्म-
१७. गावुण्डयोः पित्रा चोधोरे-कामगावुण्डेन कारितायाः ।
१८. श्री पार्श्वनाथवसतेर्द्देवानामष्टवि [ध] र्च्चन-निमित्तं । वसतेः ख-
१९. ण्ड-स्फुटित-जीर्णोद्धारार्त्थं । तत्रस्थित-यतीनामह्ा-
२०. र-दानार्त्थं च तस्मिन्नेवग्रामे कुण्डिदेश-दण्डेन निव-
२१. र्त्तन-चतुर्थ-भाग-प्रमित-क्षेत्रम् । तेनैव दण्डेन त्रि-
२२. शत्स्तम्भ-प्रमाण पुष्पवाटीं । द्वादशहस्तप्रमाण-
२३. गृह-निवेशनं च स राजा निज-मातुल-लक्ष्मण-सामन्त-विज्ञा-
२४. पनेन तस्यैव गोत्रदानार्त्थं श्री-मूलसंघ-देशीयग-
२५. ण-पुस्तकगच्छ-क्षुल्लकपुर-श्री-रूपनारायण-चैत्याल[य]-
२६. स्याचार्य्यः ॥ श्री-माघनन्विसिद्धान्तदेवो विश्व-मही-
२७. स्तुतः । कुलचन्द्रमुनेः शिष्यः कुन्दकुन्दान्वयां—
२८. शुमान् ॥ अपि च ॥ रोदो-मण्डलमङ्ग किं स्व-वपुषा
२९. व्याप्नोति शक्रद्विपः किं क्षाराम्बुधिरावृणोति भुवनं गङ्गाम्बु
३०. किं वेष्टते । स्थानाऽय प्रिय-सुस्थिरः समरुचत् किं सान्द्र-चन्द्रात-
३१. पो यत्कीर्त्यैत्थमनूद्यतक्कणमसौ श्री-माघनन्दी जयत् ॥त-
३२. न्मुनीन्द्रस्यान्तेवासिनामहंनन्दि सिद्धान्तदेवानां पादौ
३३. प्रक्षाल्य धारा-पूर्व्वकं सव्व-नमस्यं सर्व्व-बाधा-परिहारमाच-
३४. न्द्रार्क्कतारं स-शा [स] नं दत्तवान् । @॥ स्वदत्तां परदत्तां वा यो हरेत वसु-
३५. न्धरां । षष्टि वर्षसहस्राणि विष्ठायां जायते क्रिमिः ॥ न विषं विषमि-
३६. त्याहुर्व्वेदस्वं विषमुच्यते । विषमेकाकिनं हन्ति देवस्वं पु-

३७. त्र-पौत्रकम् । अपि च ॥ सवत्सां कपिलां शस्त्र्या हत्वास्या
३८. मांस-शोणिते । गङ्गायां सोऽस्ति यो गृण्हात्यमुं धर्म्मोन्वरां
३९. नरः ॥ तत्पातकफलेनासौ यावच्चन्द्रदिवाकरं । तावद्घोरतरं दुःख-
४०. मश्नुते नरकावनौ ॥ अन्यच्च ॥@॥ मातुस्साद्र्-कपालेन सोऽस्ति मा-
४१. तम-वेश्ङ्गसु [।] श्व-मांसं मित्त्या लब्धं गये (?) यो धर्म्मभूहरः ॥@॥
४२. भद्रमस्तु जिनशासनाय ॥ सम्पद्यतां प्रतिविधानहेतवे । अन्य-
४३. वादि-मदहस्ति-मस्तक-स्फाटनाय घटने पटीयसे ॥@॥ अक्कसाले वं-
४४. **म्म्योजन** पुत्र । **अभिनन्ददेवर गुड्ड गोव्योजन** खडरगे ॥@@@॥

सारांश

[यह शिलालेख एक पत्थर पर उत्कीर्ण है । यह पत्थर **वामणी** गांवके जैनमन्दिरके दरवाजे पर अवस्थित है । वामणी गाँव **कामल** शहरसे दक्षिण-श्चम ५ मील पर है । कामल कोल्हापुर रियासतका एक मुख्य शहर है ।

इस शिलालेखमें **शीलहार** वंशके **महामण्डलेश्वर विजयदित्यदेव** के एक दूसरे दानका उल्लेख है । २-१० की पंक्तियोंमें दाताकी वही वंशावली और वर्णन है जो नं० ३२० के कोल्हापुरके शिलालेखमें है, सिर्फ इसमें दूरके अपने ६ सम्बन्धियों (कीर्तिराज, चन्द्रादित्य, गूवल द्वितीय, गङ्गदेव, बल्लालदेव और भोजदेव) तथा नौ अपने कम महत्त्वके विरुदों (पदों) को छोड़ दिया है। पंक्ति ११-३४ में उल्लेख है कि अपने निवासस्थान **वळवाड** में रहकर ही शासन करनेवाले **विजयादित्य देव** ने अपने मामा सामन्त लक्ष्मणके कहनेसे तथा अपने गोत्रदानके लिये, **जब कि प्रमोद वर्ष चालू था, अर्थात् १०७३ शक वर्षके व्यतीत होने पर, भाद्रपद महीनेकी पूर्णिमा तिथिके शुक्रवारको चन्द्रग्रहणके निमित्तसे—एक भूमिका दान किया** । यह भूमि कुण्डिके नापसे नापमें चौथाई निवर्तन थी । साथमें तीस स्तम्भ (खम्भे) प्रमाण पुष्पवाटिका, १२ हाथका एक मकान भी थे । यह सब भूमि वगैरः ···णावु [क] **गेगोल्ल** जिलेके **मडलूर** गाँवकी थी । इस दानका प्रयोजन यह था कि

इससे **चौधौरे कामगाकुण्ड**के बनवाये हुए उसी गांवके मन्दिर की पार्श्वनाथ भगवानकी अष्टविध पूजन होती रहे, जो कुछ मन्दिरके मकानका बिगाड़ हो वह सुधरता रहे तथा वहां रहनेवाले मुनिजनोंके लिये उससे उनके उपहारका प्रबन्ध होता रहे। यह दान शिलालेख नं० ३२० में वर्णित श्री माघनन्दि सिद्धान्तदेव के ही एक और शिष्य श्री अर्हनन्दि सिद्धान्तदेवके पैरोंका प्रक्षालन करके किया गया था। इस शिलालेखमें; नं० ३२० के कोल्हापुर वाले शिलालेखमें न मिलनेवाली एक नई बात श्री माघनन्दिसिद्धांतदेव के विषयमें यह है कि उन्हें यहाँ **कुल चन्द्रमुनिका शिष्य** तथा **'कुन्दकुन्दके अन्वय का एक सूर्य'** बतलाया है। अन्तमें पंक्ति ४३-४४ में पुरानी कन्नड़में यह बताया है कि इस लेखको सुनार बम्योजके पुत्र तथा अभिनन्दनदेवके शिष्य **गोळोज**ने खोदा था।]

[EI, III, No. 28, T. R. A.]

३३५

कोन्नूर;-संस्कृत।

—[बिना काल-निर्देशका, पर १२ वीं शताब्दिका मध्य (कीलहार्न)।]—

५९. मिथ्याभाव-भवातिदर्प्प-पर-तद्दुश्शासनोच्छेदकम् प्राज्ञाज्ञा-वशवर्त्तमा-

६०. न-जनता-सत्सौख्यसम्पादकम् [।] नानारूप-विशिष्ट-वस्तु-परम-स्याद्वाद-लक्ष्मी-पदम् जैनीयाज्जिन-राजशासनमिदं स्वाचार-सार-प्रदम् ॥ [४४]

६१. सिद्धान्तामृत-वार्द्धि-तारकपतिस्तर्काम्बुजाहर्प्पतिः शब्दो-द्यानवनामृतैक-सरणि-र्य्योगीन्द्र-चूडामणिः [।] **त्रैविद्यापर**-सार्त्थ-

६२. नाम-विभवः प्रोद्भूत-चेतोभवः[1] जीयादन्यमता-वनीभृदशनिः श्री-**मेघचन्द्रो** मुनिः ॥ [४५] इदे हंसी-वृंद-मीरुल्वगेदपुदु

६३. चकोरी-चयम् चञ्चुविन्दं कर्दुकल्सार्द्दप्पुदीशं जडेयो-ळिरिसलेन्दिर्द्दपं सेज्जेयो-ल्पदेदप्पं कृष्णनेम्बन्तेसेदु बिस-लसत्-कन्दली-कं-

1. 'भवो' पढ़ो।

६४. द-कान्तम् पुदिद्त्ती **मेघचन्द्र**-त्र (त्रै) तिविळक-जगद्वर्त्ति-कीर्त्ति प्रकाशम् ॥
[४६] वैदग्ध्य-श्री-वधूटी-पतिरखिळ-गुणालंकृतिर्**मेघचं-**

६५. **द्र-त्रै विद्यस्या**त्मजातो मदन-महिभृतो भेदने वज्रपातः [।] सैद्धांताम्न्यू-
(म्नू) ह-चूडामणिरनुपळ (म)-चिन्तामणि-

६६. र्म्मू (र्म्मू) जनानाम् योऽभूत् सौजन्य-चन्द्र-श्रियमवति मही **वीरनन्दी**
मुनींद्रः ॥ [४७] यश्शब्दज्ञ-नमस्यली-दिनमणिः काव्यज्ञ-चूडाम-

६७. णिर्म्यन्तर्क्कश्रियति-कौमुदी-हिमकरस्त्र्यर्थत्रयाम्नाकरः [।] यस्सिद्धान्त-विचार-
सार-विगो रत्न-त्रयी-भूषणः स्ये-

६८. याद्वद्वन-वादि-भूभृदशनिः श्री-**वीरनन्दि**-मुनिः ॥ [४८] यन्मूर्त्तिर्ज्जगतां
जनस्य नयने कर्प्पूरपूरायते यद्वृत्तिर्व्विदुषां त-

६९. तेश्श्रवणयोर्म्माणिक्यभूषायते [।] यत्कीर्त्तिः ककुभां श्रियः कचभरे मल्लील-
तांवायते जेजीयाद् भुवि **वीरनन्दि**-मुनिपस्सै-

७०. द्धांत-चक्राधिपः ॥ [४९] * श्री-**कोण्डकुन्दा**न्वयाम्बर-द्युमणि विद्वज्जन-
शिरोमणि समस्तानवद्य-विद्याविलासिनी-विलास-मूर्त्ति श्री-**वीरनन्दि**-सै [द्धा]-

७१. न्तिक-चक्रवर्त्तिळु श्रीमन्-महास्थानं **कोळनूर** महाप्रभु-हुलियमरसनुं नूरु-
पुर-पञ्च-मठ-स्थानङ्गळु ताम्र-शासन [मं]

७२. नोडि बरेयिसिमेनलका शासनदोळेन्तिदुर्दुदन्ती शिलाशासनमं बरेयि [[सू]
दरु [॥] मङ्गळ महा-श्री श्री श्री नमो[1] ...... [॥]

[इस लेखमें (जो मूल लेख की पं० ५६-७२ तकमें है), जैनधर्म तथा मेघचन्द्र-त्रैविद्य और उनके पुत्र वीरनन्दी इन दो मुनियोंकी प्रशंसाके बाद, बताया गया है कि कोळनूरके 'महाप्रभु' हुलियमरस तथा और लोगोंकी प्रार्थनापर वीरनन्दीने एक ताम्र-शासनको फिरसे यहाँपर शिला-शासनके रूपमें लिखवाया। इस ताम्र-शासनको इन लोगोंने स्वयं उनके पास देखा था।]

---

1. यहाँपर कुछ अक्षर (कमसे-कम छः) घिस गये हैं।

श्रवण-बेल्गोलके एक शिलालेखसे हम जानते हैं कि माघचन्द्र-त्रैविद्यका स्वर्गारोहण बृहस्पतिवार, २ दिसम्बर ११९५ ई० को हुआ था; और श्री पाठकके[१] द्वारा प्रकाशित एक सूचनाके अनुसार, वीरनन्दीने अपने 'आचारसार' ग्रंथकी समाप्ति उस तिथिको की है जिसे एफ़ कीलहॉर्नने यूरोपियन कलेण्डर के अनुसार सोमवार, २५ मई ११५३ ई० नियत की है। उपर्युक्त लेखके कथनानुसार इस लेखके पूर्वभाग (पंक्ति १-५६) की जब नकल की गई थी और जब यह शिलालेख उत्कीर्ण किया गया था वह काल, उक्त दोनों मुनियोंके काल निर्णयके प्रकाश में, करीब-करीब **१२ वीं शताब्दिका मध्य** ठहरता है।

[EI, VI, no 4 (II part; line 59-72).] T L Tr.

३३६

लण्डन (हॉर्निमन म्यूज़ियम) संस्कृत।

सं० १२०८ = ११५२ ई०

[जिन मिस्टर हॉर्निमन (Mr. Horniman) के म्यूज़ियम में यह मूर्ति-लेख मिला है उसकी मूर्ति उन्होंने म्यूज़ियम के क्यूरेटर (Curator) मि० क्विक (Mr. Quick) के कथनानुसार, सन् १८९५ में लण्डन में ख़रीदी थी।—Rh. D.]

मूर्ति जैनोंके बयालीसवें तीर्थङ्कर नेमिनाथ की है। चरण-पाषाणपर बहुत ही सुरक्षित तीन पंक्तियोंका एक लेख है। लेख नागरी. अक्षरों और व्याकरण की अशुद्धियों से भरी हुई संस्कृत में है। लेख और अनुवाद निम्न है:—

---

१. देखो Ind. Art. Vol. XIV. p. 14. श्री पाठकने जो तिथि दी है वह यह है 'शक १०७६, श्रीमुख संवत्सर, सोमवार, द्वितीय ज्येष्ठ सुदी प्रतिपद।'

लेख

१. ॐ संवत् १२०८ वैशाख वदि ५ गुरौ ॥ मण्डिल पुरात् ग्रहपत्यन्वे (न्वये) श्रेष्ठि-माहुल तस्य सुत श्रेष्ठि-श्री-महीपति भ्रातु वाल्हे महीपति-सुत पापे कूके साल्हू देदू [आल्हू ?]

२. विवोके सवपते सर्व्वे नित्यं

३. प्रणमति (मंति) स [इ] ॥।

अनुवाद :—ॐ ? संवत् १२०८, वैशाख वदी ५, गुरुवारको । मण्डिलपुर (बुन्देलखण्डका एक नगर) से, ग्रहपति वंशके श्रेष्ठी माहुल; उसके पुत्र श्रेष्ठी महीपति; उसके भाई वाल्ह; और महीपतिके पुत्र पापे, कूके, साल्हू, देदू, [आल्हू ?], विवीके और सवपते—ये सब मिलकर नित्य (रोज़) इस प्रतिमाकी वन्दना करते हैं ।

[JRAS, 1898, p. 101-102] T. L. Tr.

३३७

महोवा;—संस्कृत ।

[सं० १२११ = ११५४ ई०]

श्रीमान् मदनवर्म्मदेव राज्ये,
सं० १२११, आषाढ़ सुदि ३, सनौ,
देवश्री नेमिनाथ—रूपाकार लाखण ।

इस शिलालेखमें २ पंक्तियाँ हैं, जिसमेंकी नीचेकी केवल एक पंक्ति ही ऊपरके लेखमें आयी है। मूर्तिके चरण तल पर शंखका चिह्न है, जिससे जाना जाता है कि यह श्री नेमिनाथकी मूर्ति है ।

[A. Cunningham, Reports, XXI, P. 73, T.]

३३८

होललकेरे;—संस्कृत ।

वर्ष श्रीमुख [११५४ ई० (लू राइस) ।]

[होळल्केरेमें, सेट्टर नागप्पसे प्राप्त एक ताम्र पत्र पर]

श्रीमत्-पञ्च-कल्याण-वैभवाय नमः ॥

श्रीमत्परम-गम्भीर-इत्यादि ॥

स्वस्ति श्री यम-नियम-स्वाध्याय-ध्यान-मौनानुष्ठान-जप-तप-समाधि-शील-गुण-सम्पन्नरुमप्प ओ......कडियाण-परिग्रहादित्यरं मध्याह्न-कल्प-वृत्तरुमप्प **पारिश्व (पार्श्व) सेन-भट्टारक-स्वामि**यवरु । **होळलकेरे**य श्री-शांतिनाथ-देवर जीर्ण्णालयमं...द्धारमं माडिसिदरु ॥ श्री-मूल-संघद् **वोदण्ण-गौड**-मुन्तादवरु माडिसिद धर्म्मंवु विघ्नवागिरलु आ-गौडर सत्-पुत्रराद सोमण्ण-गौड शान्तण्ण-गौड आदण्ण-गौड-मुन्तादवरु । **प्रताप-नायक**रिगे नूरु-गद्याणवनिक्कि वेडिकोण्डु **हिरिय-केरेय** हिन्दण-तोटमुं गद्देयुमं बेद्दलमं नम्मवर मनेय-काणिकेयुमं सर्व-बाधा-परिहारवागि श्री-अमृत-पडिगे गुरुगळ आहार-दानक्के **शक-वर्ष १०७६ नेय श्रीमुख संवत्सरद माघ-शुद्ध-१०- शुक्रवार** बिट्ट दत्ति ॥ यिदक्के देवता-महोत्सवद विवर । **भाव-नाम-संवत्सरद वैशाख-शुद्ध-तदिगे-सोम-वार** विमान-शुधि (द्धि) वास्तु-विधि नान्दी-मङ्गल ध्वजारोहण भेरी-ताड़न अङ्कुरार्प्पण बृहच्छान्तिक मन्त्र-न्यास अङ्ग-न्यास केवल-ज्ञानद महा-होम । महा-स्नपनाभिषेकके अग्रोदक-प्रभावने-यन्नु कलश-प्रभावनेयन्नु माडिसि पुण्योपार्ज्जने-यन्नु माडिसिकोण्डरु । वर्षं प्रति अक्षय-तदि [गे] यल्लि नडेयुव महोत्सव-प्रभा-वनेगे...अष्टाह्निक-पर्व्वगळिगे श्रवण-पौर्ण्णमी-वुत्सवक्के भाद्रपद-शुद्ध-चतुर्द्दशि-अनन्त-तोहि-कलश-प्रभावने महा-आराधने-मुन्ताद्दक्के । कार्त्तिक-मासदल्लि कृत्ति-कोत्सवक्के माघ-ब.चतुर्द्दशियल्लु जिनरात्रे-महोत्सवक्के । चतुस्-सीमे-विवर । तोटक्के मूडलु हिरे-केरे । तेङ्कलु हेद्दारि । पडुवलु नेट्ट-कल्लु । वडगलु हुट्टरे । गद्देगळ चतुस्-सीमेगे नाल्कु-दिक्किगु नाल्कु-मुंक्कोडे सह नाल्कु-नेट्ट कल्लु । बेद्दलु-भूमिगु

इदे-गुरिखु। सुजनर यी-धर्म्मंव नडेसिकोण्डु बरन्दु। (वे ही अन्तिम श्लोक) शासनक्के भद्रं भूयाद् वर्द्धतां जिन शासनम् ॥

[पाँच कल्याण-वैभव जिसके होते हैं उसके लिये नमस्कार।]

जिन शासनकी प्रशंसा।

स्वस्ति। साधुके गुणोंसे युक्त पारिश्वसेन-भट्टारक-स्वामीने होळलकेरेके शान्तिनाथ-देवके ध्वस्त मन्दिरको फिरसे सुधरवाया था। श्री मूलसंघके बोद्ण्ण-गौड और दूसरे लोगोंके द्वारा दिया गया दान जो रुक गया था उसके लिये उस गौडके पुत्रों (जिनके नाम दिये हैं) और अन्य लोगोंने १०० गद्याण सहित प्रताप-नायकको भेंट में देते हुए प्रार्थना-पत्र दिया, तब पारिश्वसेन-भट्टारक-स्वामी-ने हिरिय-केरेके पीछेकी जमीन और लोगोंके घरोंसे मिली हुई भेंटे, सर्वकरोंसे मुक्त करके, देवकी पूजा और गुरुओंके आहार-प्रबन्धके लिये (उक्त दिन) दान-में दे दीं। इसके बाद देवता-महोत्सवकी एक सूची और भूमिकी सीमाएँ आती हैं। वे ही अन्तिम श्लोक।]

[EC, XI, Holalere tl., no. 1]

३३६

हेरगू—संस्कृत तथा कन्नड़।

—[शक १०७७—११५५ ई०]—

[हेरगू (आलूरु परगना), जैन-बस्तिके सामनेके पाषाणपर]

श्रीमत्पवित्रमकलंकमनन्तकल्पं
स्वायम्भुवं सकलमंगलमादि-तीर्त्थम्।
नित्योत्सवं मणिमयं नियतं जनानाम्
त्रैलोक्य-भूषणमहं शरणं प्रपद्ये ॥

श्री-वीतराग ॥

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्य-नाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥

स्वस्ति समधिगत-पञ्च-महा-शब्द महामण्डलेश्वरं **द्वारावती**-पुरवराधीश्वरं **यादव** वंशोद्भव कोङ्गु-नङ्गलि-गंगवाडि-नोणम्बवाडि- बनवसे-हानुंगल्लु- हलसिगे-गोण्ड भुज-बलवीर-गंग जगदेकमल्ल **होय्सळ-वीर-नारसिंह-देवरु** श्रीमद्राजधानी-**दोरसमुद्रद** नेलवीडिनलु दुष्ट-निग्रह शिष्ट-प्रतिपालनव माडि सुख-संकथा-विनोददिं पृथ्वीराज्यं गेय्युत्तमिरे तत्पादपद्माराधकं पर-बळ-साधक-नामादि-समस्त-प्रशस्ति सहितं श्रीमन्महाप्रधानं हिरिय-हडवळं **चाविमय्यन** नेगर्त्तेयेन्तेन्दड़े ।

इननं तेजदोळ् इन्द्रनं विभवदोळ् **चाणक्यनं** नीतियोळ् ।
मनुवं चारु-चरित्रदोळ् जळधियं गाम्भीर्य्यदोळ् धैर्य्यदोळ् ।
कनकाद्रीन्द्रमनेय्दे पोल्वनदरिं त्रैलोक्यमं मेच्चिद-
ज्जुननं श्री-पडवल्ल-चामनेनलिन्नेवण्णिपं बण्णिपं ॥
वर-वनिता-जनङ्गळ मनं कुसुमास्त्र-शारक्के सन्दुघो-
त्कर-कर-पङ्कजं वहु-सुवर्ण्ण-चयक्कधिनाथ-मन्दिरम् ।
स्थिरतर-राज्य-लक्ष्मिगेडेयादवु रूप-विलासदेळ्गेयिम् ।
निरुपम-दानदिं पति-हितोन्नतियिं पडवळ्ळ चामन ॥
अनुपममप्प बन्धु-निवहं निज-पक्षमनर्घ-रत्न-म- ।
डन-तति पञ्च-वर्ण्णमखिळोग्र-भुजासिये चञ्चु दुष्ट-दु
र्ज्जन-रिपु-भूभुजर्भुजगरागे नेगर्त्तेयनांत **विट्टि-दे**- ।
वन गरुडं समन्तेसेदनी-धरेपोळ् पडवल्ल-चामणम् ॥
इन्तु पोगर्त्तेगं नेगर्त्तेगं नेलेयाद हिरिय- । हडवल्ळ-चाविमय् ।
यन सर्व्वांग-लक्ष्मी हिरिय-हडवळिति **जक्कव्वेयर** नेगर्त्तेय् एन्तेन्दडे ।
निरुतं पूजिर देय्वमोप्पुव जिनं सिद्धान्त-चक्रेश्वरम् ।
गुरु मत्ता-**नयकीर्त्ति-देव**-यति ताय् आचव्वे वम्मय्यनुं ।
……प्रेमद तन्दे मिक्क सुभदिं लोकैक-रक्षा-क्षमम् ।
पुरुपं श्री-पडवल्ल-चामनेनलिं **जक्कव्वेयिं** धन्यरार् ॥
रतियनळु रूपिं भा- । रतियनळु वाग्विलासदिं सौष्ठवदिं ।
क्षितियनळु पेर्म्मेगरुन्- । धतियुनळ **जक्कियव्वे** कान्ता-रत्नम् ।

कोमळवागि वाने शुम्भ-शद्भ-शुभमेनिप मूर्त्तियिन् ।
व्योममनेय्दे पर्व्वि दिशु-दन्ति-वरं निमिर्दिर्द्द कीर्त्तियिन् ।
श्री-मुखदिन्दमुद्धविर सत्यद मेळ्-नुडियिन्दे गोत्र-दि- ।
व्यामणि जक्कियब्बे पले पक्षिसिदळ् शान्ति-देवियन्ददिन् ॥
अन्देरेये वन्दि-जनमा- । नन्ददिना-नुणदे कल्प-कुजदारवेयी- ।
वन्ददिनीवळ् बेळ्पुद- । नेन्दुं जक्कब्बे-देवि जगती-तळदोळ् ॥
तक्कळ मिक्क सोर्व्विद्य वृत्त-कुचंगळ·········नो - ।
डक्कलवर्व्विनेन्द नगे-गङ्गळ पोक्कमेनिप होस-कं- ।
प्पक्के विशेषमप्पवर-कान्तिय जक्कल-नारियोन्दु मा- ।
वक्के गुणक्के वाग्मिमतदुनतिगार् दोरे पेण्डिरव्वियोळ् ॥
जिन-रावाङ्घ्रियनोप्पुवन्तनेगळिं सद्भक्तियिन्दर्च्चिपळ ।
विनयं मुन्दे-लोक-पूज्यरेनिसिर्प्पाचार्य्यरं प्रीतिय-
प्प नवान्यामृतदनदिं तणिपुवळ् श्री-जैन-गेहङ्गळन् ।
मनतुल्लाह्वदे माळ्पाळी-वदणियोळ् जक्कब्बेयन्तप्परार् ॥
तळदोळग्गोळेयोप्पुव तळिर्म्मुख-पङ्कजदोळ् लयेवना-
डुळि-गुरुळोळियोळ् मधुप-संकुलमं कळ्नुडिगळ्गे मिक्क-को-
गिळ-मरि यानदोळ् गज-कुलन्तयनुद्ध-नयोवरक्के पो- ।
ळ्गळ्यमेनिप्पिवेन्दोरेये जक्कले-नारिय सर्व्विनेळ्गेयोळ् ॥
रव अक्कन् (अवरकन्) ।
  जिन-चाननविबुधदिन्द् ।
  अनेकवेनियन्तनङ्गळिन्दर्च्चिपि सद् ।
  जनरोळु मिगिलेने नेगळ्दा- ।
  विनयद कणि पद्मियक्कनेने मेच्चदरार् ॥
अवर गुरुगळु ।
  सकळ-व्याकरणार्त्थ-शास्त्र-चयदोळ् काव्यङ्गळोळ् मिक्कना-
  क्किदोळ् वस्तु-कवित्वदोळ् नेगळ्द सिद्धान्तङ्गळोळ् पारमा- ।

त्थिकदोळ्···किकदोळ् समस्त-कळेयोळ् पाङ्गिन नडेयु-
धिकनादं **नयकीर्त्ति-देव**-यतिपं सिद्धान्त-चक्रेश्वरम् ॥
हेरगोळ्ळितेन्देल्लं । निरुतं विन्नविसे केळ्दु वसदियनत्या- ।
दरदिन्दे माडि जक्कले । धरेयं धर्म्मक्के कोट्टु जसमं पडेदळ् ॥
अदेन्तेन्दडे **शक-वर्षं १०७७ नेय युव-संवत्सरद पुष्यदमावास्ये** आदिवारवुत्तरायण-संक्रान्तियन्दु श्रीमन्महाप्रधानं हिरिय-हडवळं चाविमय्यन सर्व्वाङ्ग-लक्ष्मी हिरिय-हडवळति श्री-मूल-संग (घ) द देशिय-गणद पुस्तक-गच्छद कोण्ड कुन्दान्वयदाचार्य्यर श्री-**नय-कीर्ति**-सिद्धान्त-चक्रवर्तिगळ गुड्डि **जक्कव्वेयर** महोत्साहदिं तावु हेरगिनलु प्रतिष्ठेयं माडिसिद श्री-चेन्न-पार्श्वनाथ-स्वामिगळ श्री-पाद-पद्माष्ट-विधार्च्चनक्कं उत्तुंग-चैत्यालयद खण्ड-स्फुटित-जीर्णोद्धारणक्कं रिषिय-राहार-दानक्कवेन्दु श्रीमत्तु हेरगिन प्रभुगळू-रोडेय-सोमनाथिमय्य बूविमय्य सिङ्ग-गावुण्डनोळगाद समस्त-प्रभुगळ समस्त-प्रधानर सन्निधानदलु श्रीमन्महामण्डलेश्वर-**नारसिंह-देवर्गे** बिन्नहं गेय्दु हिरिय-केरेय कीलेरियल्लि कल्ल-तुम्बिन समीपदल्लि विडिसिद गद्दे सलगेयय्दु वेद्दलेयल्लि स्थलवोन्दु ।

[जिस समय (अपने सर्वपदों सहित) होय्सल वीर-नारसिंह-देव अपने वास-स्थल शाही नगर दोरसमुद्रमें रहते थे और शान्ति एवं बुद्धिमत्तासे अपने-राज्यका शासन कर रहे थे :—

उनके पादपद्मका उपजीवी पुराने सेनापति चाविमय्य थे, जिनकी प्रशंसामें कहा गया है कि वे विट्टिदेवके गरुड़ थे। उनकी पत्नीका नाम जक्कव्वे था। उसकी बड़ी बहिन (उसकी प्रशंसा) पद्मियक्क थी। दोनोंके गुरु सिद्धान्त-चक्रेश्वर नयकीर्त्ति-देव-यतिप थे।

हेरगू की अच्छा स्थान होनेकी सबसे प्रशंसा सुनकर, जक्कलेने इच्छापूर्वक एक मन्दिर वहाँ बनवाया, और इसे भूमिदान भी दिया। इससे उसकी बहुत प्रसिद्धि हुई।

(निर्दिष्ट मितिको) महाप्रधान, पुराने सेनापति चाविमय्यकी पत्नी, श्रीमूल-संघ, देशिय-गण, पुस्तक गच्छ और कोण्डकुन्दान्वयके आचार्य नयकीर्त्ति-सिद्ध

चक्रवर्त्ती की शिष्या (श्राविक), जक्कव्वेने, बहुत हर्षके साथ भगवान् चेन्न-पार्श्वनाथकी प्रतिमाकी प्रतिष्ठा करवाके;—अष्टविध पूजनको चालू रखने, उसके ऊँचे मन्दिरकी मरम्मत आदिके लिये, और ऋषियोंको आहार-दान देनेके लिये, हेरगूके सरदारोंकी उपस्थितिमें, महामण्डलेश्वर नारसिंह-देवसे प्रार्थना करके, (निर्दिष्ट) भूमिका दान दिया।]

[EC, V, Hassan Tl., No. 57.]

३४०

खजुराहो—संस्कृत।

[सं० १२१२=११५५ ई०]

[इस शिलालेखके भी लेखका पता नहीं है। श्री वीरनाथ (महावीर स्वामी) की प्रतिमाके चरण-पाषाणमें यह लेख अङ्कित है। शिल्पीका नाम कुमार सिंह (या सिनहा) लिखा हुआ है।]

[A. Cunningham, Reports, XXI, P. 68, P. A.]

३४१

महोबा;—संस्कृत।

[सं० १२१३=११५६ ई०]

"संवत् १२१३, माघ सुदि ५ गुरु (गुरौ)।"

इस प्रतिमा पर चकोरका चिह्न है, इससे यह प्रतिमा सुमतिनाथकी है। लेख एक ही लम्बी पंक्तिका है। सबसे पहले उक्त कालका उल्लेख है। इसमें किसी राजाका नाम नहीं दिया हुआ है, और इसके अन्तमें शिल्पी रूकार (रूपकार) लाखनका नाम आता है।

[A. Cunningham, Reports, XXI, P. 73, A.]

३४२

महोबा;—संस्कृत ।

[सं० १२१५=११५८ ई०]

श्रीमन्**मदनवर्म्मदेव** विजय राज्ये । संवत् १२१५ पौष सुदि १० ।

"श्रीमान् मदनवर्म्मके विजय राज्य सं० १२१५ पौष सुदि १० के दिन ।"

[JASB, XLVIII, P. 288, A.]

३४३

खजुराहो—संस्कृत ।

[विक्रम सं० १२१५, माघ सुदी ५]

ॐ ॥ संवत् १२१५ माघ सुदि ५ **श्रीमन्मदनवर्म्मदेव**प्रवर्द्धमानविजय-राज्ये ॥ ग्रहपतिवंसे (शे) श्रेष्टिदेदूतत्पुत्र **पाहिल्लः** । पाहिल्लांगरुहसाधु[1] **साल्हे** [ते] नेदं (यं) प्रतिमा कारितेति ॥ ॥ तत्पुत्राः महागण । महीचन्द्र । सि [रि] चंद्र । जितचंद्र । उदयचंद्रप्रभृति । संभवनाथं प्रणंमति[2] नित्यं ॥ मंग [लं] महाश्री [:] ॥ रूपकाररामदेवः [:] ॥

[यह शिलालेख एक जैन प्रतिमा (संभवनाथ स्वामीजी) के चरण-पाषाण पर एक ही पंक्तिमें अङ्कित है । इसके लेखके समय **मदनवर्मदेव**का राज्य था । लेखाङ्कित प्रतिमाकी स्थापना साधु **साल्हे**ने कराई थी । इसका कुल ग्रहपति था । यह **पाहिल्ल**का पुत्र था, पाहिल्ल श्रेष्ठी **देदू**का पुत्र था । साल्हेके पुत्रों-का नाम, महागण, महीचन्द्र, सिरि (श्री) चन्द्र, जितचन्द्र, उदयचन्द्र इत्यादि था । ये हमेशा संभवनाथ तीर्थंकरकी वन्दना करते थे । प्रतिमा बनानेवालेका नाम रामदेव था । पाहिल्लका नाम हमें पहले शिलालेखमें भी मिल चुका है ।]

[F. Kiclhares, EI, I, No XIX, No. 8 (P. 153).

---

१. यह अक्षर, या इससे पहलेके और भी अक्षर, यदि वे हों तो, टूट गये । २ शुद्ध पद 'प्रणमंति' है ।

३४४

खजुराहो—संस्कृत।

[सं० १२१५=११५८ ई०]

[इसके भी लेखका पता नहीं है। यह लेख मदनवर्मा के राज्यकाल-का है।]

[A. C. Reports, XXI. P. 68, Q, A.]

३४५

गिरनार—संस्कृत।

[सं० १२१५= ११५८ ई०]

यह लेख श्वेताम्बर सम्प्रदायका है।

Ant. Kathiawad and Kachh (ASWI, II) p. 169,tr.]

३४६

गिरनार—संस्कृत।

[सं० १२१५=११५८ ई०]

[नेमिनाथ मन्दिरके दक्षिणकी तरफ पश्चिम दिशाकी दीवाल पर]

संवत् १२१५ वर्षे चैत्र शुदि ८ रवावद्येह श्रीमदुज्जयंततीर्थे जगतीसमस्त-देवकुलिकासत्कछाद्याकुत्वा लिसंविरणसंघविठ सालवाहण प्रतिपत्त्या सू० जसहडठ० सावद (दे) वेन परिपूर्णा कृता ॥ तथा ठ. भरथसुत द. पंडि [त] सालि-वाहणेन नागझरिसिरायापरितः कारित [भाग] चत्वारि त्रिंत्रीकृत कुंडकर्मांतर अधिष्ठात्री श्रीअंबिकादेवीप्रतिमा देवकुलिका च निष्पादिता ॥

अनुवाद:—सं० १२१५ के वर्षमें, चैत सुदी ८, रविवारके शुभ दिन। इस दिन यहाँ श्रीमत् उज्जयन्त तीर्थ पर संघवी ठाकुर सालिवाहनकी सम्मतिसे राज

(मिस्त्री) जसहड और सावदेवने समस्त जैन देवताओंकी प्रतिमा बनाकर पूर्ण की; तथा भरथके पुत्र पण्डित सालिवाहनने 'नागज (झ) रि सिरा' (Elephant Fount) के चारों ओर एक दिवाल खेंच दी, जिसमें चार बिम्ब पधराये गये।

कुण्ड बन जानके बाद, उसकी अधिष्ठात्री देवी श्री अम्बिकादेवीकी मूर्त्ति (प्रतिमा) और अन्य देवोंकी मूर्त्तियाँ उसके ऊपर बनाई गईं।

[ASI, XVI, P. 356, no. 16]

३४७

करुगुण्ड-संस्कृत और कन्नड़।

—[शक १०८० = ११५८ ई०]—

[करुगुण्डमें, जैन-बस्तिके दाहिनी ओर एक पाषाण पर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलांछनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥
श्रीमद्-द्रविळ-संघेऽस्मिन् नन्दिसंघेऽस्त्यरुङ्गळः ।
अन्वयो भाति निश्शेष-शास्त्र-वारासि-पारगैः ॥

स्वस्ति समधिगत-पञ्च-महा-शब्द महा-मण्डलेश्वर द्वारावतीपुरवराधीश्वर यादव-कुलाम्बर-द्युमणि सम्यक्त्व-चूडामणि मलपरोळ्-गण्डाद्यनेक-नामादि-प्रशस्ति-सहितनप्प श्रीमन्-महा-मण्डलेश्वरं नृप-काम-होय्सळनातन तनेय ॥

बलिदडे मलेदडे मलेपर ।
तलेयोळ् वाळिडुवनुदित-भय-रस-वसदिं ।
बलियद मलेपद मलेपर ।
तलेयोळ् कै यिडुवनोडने विनयादित्य ॥
आतङ्गं केळेयब्बरसिग पुट्टिदम् ॥
आनतरागद्रिपु-नृपर् ।
आनन-सरसीरुहं-नाळमं खण्डिसलेन्दु ।

आनिळुकुमदानिळुकुम- ।
दानिळुकुमदेरग-नृपन भुजदसि-हंस ॥

आतन सति एचल-देविगे तत्पुत्ररु बल्लाल-देव विट्टि-देव-नुदयादित्य-देव ॥ अवरोळगे ॥

तुळु-नाडं मले-नाडं ।
तळकाडु कोण्डु मतेयुं तणियदे भू- ।
तळमं कञ्चि-वरं कोण्ड् ।
अळवडिसिद विष्णु-भूभुजं केवळमे ॥

आतङ्गं लक्ष्मा-देविगं पुट्टिद ॥

तरळ-विलोचनाञ्चळके केम्पिनितुं वरे वक्कुं वागळन्त् ।
अरि-नरपाळ-सङ्कुळद पन्कले कैगे तुरङ्ग-राजि मन्- ।
दुरके गजाळि शालेगे घन निज-कोश-गृहान्तरक्के तद्- ।
घरे कडितक्कवुण्डेगेगवोळे गर्वी-नरसिंह-देवन ॥

स्वस्ति समस्त-प्रशस्ति-सहितं श्रीमन्महामण्लेश्वरं त्रिभुवनमल्ल तळेकाडु-गङ्ग-वाडि-नोणम्बवाडि-बनवसे-हानुङ्गलुगोण्ड भुजबल वीर-गङ्ग प्रताप-नरसिंह-होय्सळ-देवरु श्रीमद्राजधानि-दोरसमुद्रद नेलेवीडिनलु सुख-सङ्कथा-विनोददिं पृथ्वीराज्यं गेय्युत्तमिरे ॥ तत्पादपद्मोपजीवि स्वस्ति समस्त-राज्य-भर-निरूपित-माहात्म्य-पदवी-विराजमान-मानोन्नत-प्रभु-मन्त्रोत्साह-शक्ति-त्रय-शील-गुण-संपन्नरप्प श्रीमन्-महा-प्रधान ॥

काश्यप-गोत्रजनम्बुरु- ।
हास्यनलन्दापुर-प्रभु प्रकट-यशो- ।
भास्यखिळ-कळेगळोळुचतु- ।
रास्यं दण्डाधिनाथ-भद्रादित्यम् ॥

आतनग्र-तनूज ॥

एरेदहिदन्य-वधुगं ।
नेरेदान्त-विरोधि जनद कण्णुं मनमम्

परिकिसे सोलवेनल्कि ।
घरेपोळ दोरेयारो **तैल-दण्डाधिप**नोळ् ॥
आतन तनेय ॥
आ-चाव गुणङ्गळोळम् ।
भाविसुवडे नोड जगदोळु उप्परवट्टम् ।
केवळमे सन्धि-विग्रहि ।
चावुण्ड गुण-करण्डनमृतद पिण्ड ॥
आतन अग्र-तनूज ॥
वनधि-व्यावेष्टितोर्वीतळ-विनुत-यशं भद्र-राजात्मजातं ।
जनकं चावुण्डरायं सकल-गुण-गणालंकृतं नागिराजा- ।
ङ्कन मर्म्मळ् रक्कसाज्योतिमजे जननि सरोजाद्वि यक्षाम्बिका ।
सज्जन-रत्नं तानेनळ् **माधव**नुभयकुलख्यातनत्यन्त-पूतं ॥
जिन्नं समस्त-गुण-सम्- ।
पन्नं शिष्टेष्ट-ततिगे कै तीविरे चेम्- ।
बोन्नं कुडुवेडेगिन-सुत- ।
नन्नं पर-हितदोळा-वियच्चरनन्नम् ॥
वर-वनितेयर्गे रिपुग- ।
ळगेरेदर्थि-जनक्के **तैल-दण्डाधीशम्** ।
[1]हरि-तनेयं [2]हरि-तनेयं ।
[3]हरि-तनेयं घरेयोळेन्दुं पोगळदरोलरे ॥
खेचरनुदारदिन्दं ।
वाचस्पति बुद्धियिन्दे विभवोदयदिम् ।
प्राची-दिशा-पति हेग्गडे- ।
देचमनेनुतिप्पुदेन्दुमी-भूचक्रम् ॥

---

१. मन्मथ, २. अर्जुन, ३. कर्ण ।

पुट्टिद भूमियोळिन्तोळ्प ।
इट्टळमेनिसल्के नेगळ्द पार्श्वं मुदिदिम् ।
निट्टू खु माडिसिदं ।
पुट्टिसे चेल्वं समन्तु चैत्यालयमम् ॥
आतननुजं रकसिमय्य ॥
अवरोळगं जिन-देवने ।
सु-विदित-सकळार्थ-शास्त्र-कोविदनिन्ती- ।
भुवन-प्रख्यातं वाग- ।
युवति-वदनाम्बुजात-मधुपं नेगळ्दन् ॥
आतन सति बुल्लेयब्बेगम् ॥
पर-हितगल्लद पुरुषार ।
चरितमनिळिकेय्दु दुधरनावगवाप्पिम् ।
पोरवेडगे चौण्ड-रायम् ।
पर-हितमं काण-गोण्डनाध्यर कय्योळु ॥
चावुण्ड-रावननुचम् ।
तामरस-निभास्यनुतुपळार्द्रं मदवत्- ।
सामन्त-गमनं नेगळ्दम् ।
वामननवनो-विनूत शशि-विशद-यशम् ॥
आ-चावुण्डमय्यन कुल-वनिते ॥
आतन सति मुन्नेगळ्दा- ।
सीतेगरुन्धतिगे रतिगे वाणिगे भूभृद्- ।
जातेगे दोरेयेनलल्लदे ।
भूतळदोळु देकणब्बेगुळिदर्दोरेये ॥
आर्यिब्बेगं तनूज ।
श्री-सुतनं विळाससदोदविं मकराकरमं गभीरदिं ।
भासुर-तेजदिं दिनपनं चतुरत्वदिनम्बुजगर्भनम् ।

केसरियं पराक्रमदिनर्ज्जुननं सार-विद्येयिन्दे प- ।
ट्टिसद-**पारिसण्ण**नभिमान-धानं नगुवं निरन्तरम् ॥

आतन सति ॥

पति-भक्तियोळ-मळिन-जिन- ।
पनि-भक्तियोळत्तिमव्वेयेन्दी-भुवनं स- ।
ततं **बम्मल-देवि**यन् ।
अति-मुददिं पोगळुतिर्प्पुकिरुळुं पगलुं ॥

जनकं श्री**मरियाने**-मन्त्रि-तिळकं **जक्कव्वे** ताय् विश्व-भू-
जन-चिन्तामणि **दण्डनाथ-भरतं** धैर्य्यान्वितं शौर्य्य-शा- ।
ळि-नयज्ञं किरियय्यनङ्गज-निभं श्री-**पार्श्वनाथं** निजे-
शनेनल् **बिम्मल-देवि** धन्येये दश-विश्वम्भरा-भागदोळ् ॥

तोरेदुदु कामधेनु फळवादुदु कल्प-महीजमेम्बिनम् ।
करदु बुधाळिगित्तु हर-हास-निभोज्ज्वळ-कीर्त्तियं सवि- ।
स्तरिपेडेगीगळन्यर पेसर्द्दिदिं मरियानेयम्बुदो ।
भरतणनेम्बुदो खचरनेम्बुदो भानुतनूजनेम्बुदो ॥

भू-विनुतेयेनिप **बम्मल**- ।
देविगवा-नेगळ्द पारिसण्णङ्गं वि- ।
द्याविदनुदयिसिदनि- ।
ळा-विनुतं **शान्त**नुदित-लक्ष्मी-कान्त ॥

आतन गुरु-कुल श्री-वर्द्धमान-स्वामिगळ तीर्त्थ-प्रवर्त्तनदोळु गौतम-स्वामि-गण-धराचार्य्यर धर्म-सन्तानदोळु श्रुतकेवळिगळु **भद्रबाहु-स्वामिगळिन्दकळङ्क-देवरिं वक्रग्रीवाचार्य्यरिं सिंहनन्द्याचार्य्यरिं कनकसेन-वादिराज-देवरिं श्री-वर्द्धमान-जगदेकमल्ल-वादिराजन्देवरु** ॥

आदित्यन केलदोळु चन्- ।
द्रोदयमेसेयदवोली-धरा-मण्डलदोळु ।
वादिगळेवेम्ब टुण्टुक- ।

वादिगळेसेदपरे वादिरावन सभेयोळु ॥

अवर शिष्यरु **अजितसेन-पण्डित-देवरु** ॥ अवर शिष्यरु ॥

सले सन्द योग्यतेयिनग्- ।
गलिसिद दुद्धर-तपो-विभूतिय पेम्पिम् ।
कलि-युग-गणधररेन्दुदु ।
नेलनेल्लं **मल्लिषेण-मलधारिगळन्** ॥

अवर शिष्यरु अकलङ्क-सिंहासनारूढरं तार्किक-चक्रवर्त्तिगळु ॥

आवन विषयमो पट्-त- ।
र्कीविळ-बहु-भङ्गि-सङ्गतं **श्रीपाळ-** ।
त्रैविद्य - गद्य-पद्य-व- ।
चो-विन्यासं निसर्ग-विलस-द्विळासन् ॥

अवर शिष्यरु **वासुपूज्य-सिद्धान्त-देवरु** ॥ अवर गुड्ड श्रीमन्महा-प्रधानं ...ट्टिस-भण्डारि-**पारिसय्यनाहुमल्लन** केळेगदलु आन्तु मार्म्मलमं तविवि श्री-नारसिंह-होय्सळ-देवनवसरक्के तलेगोट्टल्लि **निरुगुण्ड-नाड करिगुण्डयं** प्रमुख-उहितं धारा-पूर्व्वकं माडि कोट्टनल्लि पारिसण्णङ्गे परोक्ष-विनयवागि आतन पुत्रं **शान्तियण-दण्डनायकं** बसदियं माडिसि आ-बसदिगे । बिट्ट तळवृत्ति अरह-गट्टमुमं बिट्टरु आ-केरेय केळगण एरेय केय्युमं केरेयिं मूडलेरडु मत्तर केङ्गाडुमं केरेय-कर्येयोळगण हू-दोटमुमं देवर बोडरिङ्गोन्दु गाणमुमं आ-वूर तिप्पे-सुङ्कमुमं कळ-वत्तमुमं **मल्ल-गौण्डनोळगाद** समस्त-प्रजेगळुविद्दु बिट्टरु **शक-वर्ष 1080 नेय बहुधान्य-संवत्सरद उत्तरायण-संक्रमण व्यतीपातदन्दु** खण्ड-स्फुटित-जीर्णोद्धारण-देवता-पूजेगं ऋषियराहार-दानक्कं **श्रीपाल-त्रैविद्य-देवर** शिष्यरु **वासुपूज्य**-सिद्धान्त-देवरवर शिष्यरप्प **मल्लिषेण-पण्डितर्गे** धारा-पूर्व्वकं माडि कोट्टरु । (हमेशाके अन्तिम श्लोक) ।

मुन्दोळु गो-अर्ध्दणमसृत्- ।
कन्माणिरे वरेदु मेन्चिपुदरिं कापिन् ।
दिर्म्मदिं मूढं रायर ।

कटकद विरुदर्ग लेखकोपाध्याय ॥

ई-शासनमं **माळोजन** मग रूवारि-**मल्लोज** खण्डरिसिद ॥

[नारसिंह-देवतककी संक्षिप्त वंशावली। जिस समय नारसिंह-होय्सल-देव राज्य करते हुए राजधानी दोरसमुद्र में विद्यमान थे:—

तत्पादपद्मोपजीवी दण्डनाथ-भद्रादित्य था। यह राज्यकी धुरीको वहन करने वाला काश्यपगोत्री महाप्रधान (मंत्री) था। उसका ज्येष्ठ पुत्र तैल-दण्डाधिप हुआ। उसका पुत्र चावुण्ड सन्धि-वैग्रहिक मंत्री था। उसका ज्येष्ठ पुत्र माधव था। जिनकी प्रशंसा। तैल-दण्डाधीशकी प्रशंसा।

पार्श्वने नित्तूरमें एक चैत्यालय बनाया। उसका अनुज रकसिमय्य था। चावुण्डरायका अनुज वामन था। चावुण्डरायकी पत्नी देकणब्बे थी। इन दोनोंका पुत्र पारिसण्ण था। उसकी पत्नी बम्मल-देवी थी। इन दोनोंसे शान्त नामका पुत्र उत्पन्न हुआ था।

उसके गुरुओंकी परम्परा,—वर्धमानस्वामी के तीर्थमें गौतमस्वामी गणधराचार्यकी धर्मसन्तानमें, भद्रबाहु, श्रुतकेवली, अकलङ्क देव, वक्रग्रीवाचार्य, सिंहनन्द्याचार्य, कनकसेन वादिराज-देव हुए। वादिराज की प्रशंसा। उनके शिष्य अजितसेन-पण्डित-देव हुए। इनके शिष्य मल्लिषेण-मलधारि हुए, जिन्हें उनकी योग्यता और तपश्चरण के कारण कलियुगी-गणधर कहा जाता था। उनके शिष्य तार्किक-प्रवर अकलङ्कसम श्रीमाल-त्रैविध हुए, जो गद्य-पद्य दोनोंमें निपुण थे। उनके शिष्य वासुपूज्य-सिद्धान्त-देव थे।

इनके गृहस्थ-शिष्य महाप्रधान पारिसण्णको निरुगुण्डनाडमें करिकुण्ड मिला था। ये उसके मालिक थे। पारिसण्णकी मृत्युके उपलक्ष्यमें उसके पुत्र शान्तियण दण्डनायकने एक 'बसदि' बनवायी; और उस बसदिके लिये (उक्त) भूमिका दान किया और दीपके लिये एक तेलकी चक्की भी दानमें दी। मल्लगौण्ड और समस्त प्रजाने उस गाँवके घाटकी आमदनी तथा 'कळवत्त' (धानसे अनाज निकालते समय अनाजका हिस्सा) भी दिया। (उक्त मितिको) उन्हीं तीन

प्रसिद्ध कारणोंसे उन्होंने श्रीपाल-त्रैविद्य-देवके शिष्य वासुपूज्य-सिद्धान्त-देवके शिष्य मल्लिषेण-पण्डितको ये दान दिये।

यह शासन शिल्पी मल्लोज ने लिखा था।]

[EC, V, Arsikere Tl., No. 141.]

३४८

श्रवणबेलगोला—संस्. व तथा कन्नड़।

[शक १०८१ = ११५६ ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

३४९

हेरेकेरी;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक १०८१ = ११५९ ई०]

[हेरेकेरीमें, बस्तिके पाषाण पर]

श्रीमत्पवित्रमकलङ्कमनन्तकल्पम्।
स्वायम्भुवं सकळ-मङ्गलमादि-तीर्थम्।
नित्योत्सवं मणिमयं निळयं जिनानाम्।
त्रैलोक्यभूषणमहं शरणं प्रपद्ये॥
श्रीमत्परम-गम्भीर-स्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम्॥

स्वस्ति समस्त-भुवनाश्रयं श्री-पृथ्वी-वल्लभं महाराजाधिराजं परमेश्वरं परम-भट्टारकं सत्याश्रय-कुल-तिलकं चालुक्याभरणं श्रीमत्-त्रिभुवनमल्ल-देवर विजयराज्यमुत्तरो-त्तराभिवृद्धि-प्रवर्द्धमानमा-चन्द्रार्क्क-तारमम्बरं सलुत्तमिरं॥ तत्पाद-पद्मोपजीवि॥ स्वस्ति समधिगत-पञ्च-महा-शब्द महा-मण्डलेश्वरं पट्टि-पोम्बुर्च्चपुर-वराधीश्वर शान्तर-कुळ-कमलिनी-दिनाधिनायकन् टेङ्क-मधुराधिनायक शान्तरादित्यं सकळ

जग-स्तुत्यं चलदङ्करामं गण्डर-भीम समर-प्रचण्ड नेव्वॅर गण्ड-नामादि-समस्त-प्रशस्ति-सहितं श्रीमतु **राय-तैलपदेव** ।

उदधि-परीत-भूमि-रमणी-रमणीय-मुखारविन्ददन्- ।
ददे सोगयिप्प सान्तळिगे-सासिरमं सुख-संकथा-विनो- ।
ददिनतिदुष्ट-निग्रह-विशिष्ट-कुल-प्रतिपाळनार्थवाळ्द ।
ओदविद पुण्य-पुञ्जरसदर् नृप-**तैलह-राय**-भूभुजर् ॥
समद-रिपु-नृपति-दुर्द्दम- ।
तममं बेङ्कोण्डु **शान्तरादित्य**-नृपम् ।
क्षमेयं पाळिसि लोको- ।
त्तमनादं स्थैर्य्य-मेरु-शैलं **तैलम्** ॥
अदटिनळुर्क्के मच्चेय निमिर्क्के यशोधन देर्क्के राज- ।
शद कडुदेळ्पु दान-गुणदोळ्पु गुणङ्गळ तळ्पु राज्य-सम्- ।
पदद पोदळ्के तेजद तेरळ्के विरोधिय बाळ्के तन्नदेम्- ।
बुदनेने पेम्र्मेयं तळेदनो नृपरोल् नृप-**तैल-शान्तरम्** ॥
तल्ललने **नन्नि-शान्तर**-।
वल्लभननुजाते सीतेयंगेलेवन्दळ् ।
वल्लभ-भक्तियोळं जिन- ।
वल्लभ-भक्तियोळवोन्दिदोल्पिं तेळ्पिम् ॥
अन्तेनि**पक्कला-देवी**- ।
कान्तेगवा-**तैल-शान्तर**-क्षितिपतिगम् ।
सन्तोषं पुट्टुववोळ् ।
कन्तु-निभर् पुट्टिदर् क्कुमारर् म्मूवर् ॥
मूवरे लोकदोळ् कदन-कर्क्कश-बाहुगळेन्तु नोर्प्पडम् ।
मूवरे धात्रियोळ् भुवन-मुम्भुक-दानिगळुव्वॅराग्रदोळ् ।
मूवरे राज-नीति-निळयर् धरेयोळ् सुचरित्र-पात्ररुम् ।
मूवरे **काम**-भूमिपति-**सिंह-नृपाम्मण**-भूमिपालकर् ॥

कलिये सिंहाग्रजातं विमळ-कुळजने पार्श्वनाथान्वयादै- ।
क-ललामं तीव्र-तेजोनिधियेभुवनदोळ् शान्तरादित्य-देवम् ।
ललना-सन्दोह-सम्मोहन-करने दिटं ताने दल् कामनेन्दन्- ।
देले काळेय-क्षितीश-प्रकरद्ळवियेकामनुद्दाम-धामम् ॥
आ-नृप-सति पाण्ड्य-कुलाम्- ।
भोनिधि-वर्द्धन-सुधांशु-लेखे चरित्र- ।
श्री-निधि बुध-निधि ताने द- ।
या-निधि विजयवति पुण्यवति वसुमतियोळ् ।
जिन-चरणाम्बुजं तळत्तळिर्प्पं सरोज-वनं मनं जगज्- ।
जन-कृत-पुण्य-मूर्त्ति निज-निर्म्मळ-मूर्त्ति दया-रसैक-पा- ।
वन-घन-पात्रबुन्मीलित-नेत्रवेनल् सवनारो भव्य-मण्- ।
डने येनिसिर्द्द शीलवति विजाळ-देविगिळा-तळाग्रदोळ् ॥
आ-विजयावती-देविगन् ।
आ-विसु-काम-क्षितीश्वरङ्गं वंशा- ।
भीवर्द्धनरोगेदर् जग- ।
देवं श्री-सिङ्गि-देवनेम्ब तनूजर् ॥
इव्वरे दोर्व्वळ-युवळरिव्वरे दान-विनोदिगळ् समन्त् ।
इव्वरे शस्त्र-शास्त्र-कुशलर् न्नेगळ्दिव्वं [रे] सत्-कुळर् द्दिटक्क् ।
इ [व्वं] रे सच्चरित्र-युतरिव्वरे भू-भुवन-सुतर् ज्जगक्क् ।
इव्दरे चेल्वरेन्दे जगदेवनुमग्गद सिङ्गि-देवनुम् ॥
अदिरद वीररिल्लळह गुण्डद मन्नेयरिल्ल कूगडङ्- ।
गद नरनाथरिल्ल नी नलिसेन्नद राज-कुमररिल्ल चा- ।
गद बळवन्तरिल्ला किडेदोड्डिसि पोगद दुर्ग्ग-वर्गविल्ल् ।
ओदविद शौर्य्य-शक्तिगे दिटं जगदोळ् जगदेव-भूपन ॥
उन्नति मेरुविङ्गे मणि-माळिकेयादुदु सर्व्व-शास्त्र-सं ।
पन्नते भारती-वचनवादुदु दान-गुणं समस्त-वि- ।

द्दन्निकरक्के कैपिडियोलादुदु तन्न जसं जगक्के कैयू- ।
गन्नडियादुदेन्देसेदनो जगदोळ् जगदेव-भूभुजम् ॥
समदारात्यङ्गना-मङ्गळ-कटक-हटित्-कर्ण्ण-पर्णापहं वि- ।
क्रमवी-काळेय-दोषापह˙˙˙मळ-चरित्रं˙˙˙विशिष्टे- ।
ष्ट-मनस्-तापापहं तन्नतुळ-वितरणोद्यागवेन्दन्दे लोको- ।
त्तमनादं **खिङ्गि-देवं** जग-विरुदरळेवं समग्र-प्रभावम् ॥
अवरोडने पुट्टिदळु भू- ।
भुवनं वित्तरिसु वत्तिमब्बेयो पेळेम्॰ ।
ववोलेसदळ**ळिया दे-** ।
वि विशुद्धाचारदिं विनिर्म्मळ-गुणदिम् ॥
रवर-पुरदोळ् नेरे सेनुव-।
पुरदोळ् माडिसिदळेसेव जिन-भवनमनन्त् ।
एरडमळिया-देवियवो- ।
लरसियरार् प्पुण्यवति [य] री-वसुमतियोळ् ॥
सले शोभाकरवागे सेतुविनोळत्युत्साहदिं भव्य-मण्- ।
डळि बाप्पेम्बिन्न वोन्दे कण्ठदोळे सम्यग्दर्शन-ज्ञान-निर्-
म्मल-चारित्र-गुण-प्रयुक्ते जिन-राजागारमं भक्तियिम् ।
अळिया-देवि समन्तु माडिसिदळुर्व्वी-स्तुत्यमं नित्यमम् ॥
चतुरे चतुर्व्विध-दानो- ।
न्नतियोळ् जिन-राज-भवनमं माडिसि भू- ।
नुत-कीर्त्ति **होन्नेयरसन** ।
सति **अळिया-देवि** नेगळ्दळवनी-तळदोळ् ॥
भुज-बल-भीम भीम-सम-विक्रम कोङ्कण-रत्नपाल वि- ।
श्व-जन-विनूत निर्म्मल-कदम्ब-कुळोज्वळ गङ्ग-तुङ्ग-वं-
श-नृप-**होन्न पोन्न**-महिपाळन मर्म्मं जिनेन्द्र-पाद-पङ्- ।
कज-मद-भृङ्ग निन्नोरेगे वप्पुवनावनिळा-तळाग्रदोळ् ॥

धी-दोरेय होन्न-नृपतिगव् ।
आ-दुरित-विदूरे अळियदेविगवोगेदन् ।
मेदिनि बण्णिसलरियदिन्तु- ।
पोदवि जयकेशि-देवनेम्ब कुमारन् ॥
नेगळ्दा-श्री-जयकेशि-देवननधी-सन्दोह-संभोग-का- ।
वेगे नेय्दल्दे पेच-चायळिय-देवी-कान्ते मोहार्थदिन्- ।
दे गुणाम्भोनिधिगा-मगङ्गे विपुल-श्रेयो-निमित्तं जगन् ।
पोगळल् सेतुविनोळु विनिर्म्मिसिदळुद्द-श्री-जिनागारमन् ॥

स्वस्ति समस्त···प्रख्यात-वीरेयं बिज्जल-देव तनूजातेयुनन अळिया-देवि-यर शक-वर्ष १०८१ नेय प्रमाथि-संवत्सरद पुष्य-शुद्ध-चतुर्द्दशी-शुक्र-वारदन्दु । उत्तरायण-संक्रान्तिय-पुण्य-दिनदोळ्······गुळिसळिया-देवियर होन्नेयरलदं तम्म धर्म्मक्के बिट्ट भूमियाहुदेन्दडे (यहाँ दानकी विशेष भूमि आती है) मूल-संघद कानूर-गणद तिन्त्रिणि-गच्छद वन्दणिकेय तीर्त्थ-दाचार्य्यर् भानुकीर्ति-सिद्धान्त-देवर कालं कर्चि धारा-पूर्व्वकं माडि चारु-पूजा-निमित्तं कोट्टर (इसके बाद अन्तिम श्लोक) ।

[जिन शासनकी प्रशंसा] ।

जिस समय (स्वाभाविक चालुक्य पदों सहित) त्रिभुवन मल्लदेवका विजयी राज्य प्रवर्द्धमान था :—

यत्पादपद्मोपजीवी, पट्टि-पोम्बुच्चपुरवराधीश्वर, दक्षिण-मधुराका अधिनायक राजु-तैलह (प)-देव सान्तलिगे हजार पर शासन कर रहा था । राजा तैल-शान्तरकी प्रशंसा । उसकी पत्नी अक्कला-देवी थी, जो नन्नि शान्तरकी छोटी बहिन थी । और उसके तीन पुत्र थे,—काम, सिंह, और अम्मन । सबमें बड़े कामकी प्रशंसा । उसकी पत्नी बिज्जल देवी थी । इनके पुत्र जगदेव और सिङ्गि-देव थे । उनकी प्रशंसायें । उनकी बहिन अळिया-देवी थी । उन्होंने सेतुमें एक बढ़िया जिन मन्दिर बनवाया था । वह होन्नेयरसकी पत्नी थी । वह होन्नेयरस

(अपर नाम होन्न पोन्न) कदम्ब-कुलका प्रकाश, तथा गङ्ग-वंशमें उत्पन्न हुआ था। उस और अलिया-देवीसे जयकेशी-देव उत्पन्न हुये थे और उन्होंने सेतुमें जिन मन्दिर बनवाया था। तथा बिज्जल देवीकी पुत्री अलिया-देवीने, (उक्त मितिको), होन्नेयरसके साथ, इस मन्दिरके लिये (उक्त) भूमियोंका दान दिया। यह दान दो "सिवने" का था। यह दान उन्होंने मूलसंघ, काणूर्-गण तथा तिन्त्रिणि-गच्छके भानुकीर्त्ति-सिद्धान्त-देवके, जो वन्दनिके तीर्थके आचार्य थे, पाद-प्रक्षालनपूर्वक किया गया था। हमेशाका अन्तिम श्लोक।]

[EC. VIII, Sagar Tl., No. 159-]

३५०

पालनपुर—संस्कृत तथा गुजराती।

[सं० १२१७ = ११६० ई०]

श्वेताम्बर सम्प्रदायका लेख।

[EI, II, No. V, No. 10 (P. 28), T. L, A.]

३५१

कवली;—संस्कृत तथा कन्नड़।

शक १०८२=११६० ई०

[कवळी (सक्रेपट्ण परगना) में पुराने गांवकी जगह पर एक पाषाणपर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

स्वस्ति समधिगत-पञ्च-महा-शब्द-महामण्डलेश्वरम् द्वारावतीपुरवराधीश्वरम्। शशाङ्कपुर-नि [वास]-वासन्तिका-देवी-लब्ध-
वर-प्रसादनुम्। निचासि-दण्ड-खण्डित-प्रचण्ड-दायादनुम्।
श्वेतातपत्र-शीतकिरण-विकसित-सकळ-जन-नयन-कुवळयनुं-।

निज-भुज-भुजंगराज-सन्धारित-वसुन्धरा-वळयनुम् ।
यदु-कुल-कमल-कमलिनी-कमनीय-वरुण-तरणियुम् ।

सम्यक्त्व-चूडामणियुं । कनक-धारा-वर्ष-परिपूरित-सकळ-याचक-चातक-चक्रवाल-वञ्छनतुं । शार्दूल-लाञ्छननुम् । हर-हसित-विशाद-कीर्त्ति-वर्चित-ब्रह्माण्डनुं । मलेपरोळ् गण्डनुं । मद-मुदित-मधुकर-निकुरम्ब-चुम्बित-कट-तट-विराजमान-सामज-समाजनुम् । मले-राज-राजनुम् । लक्ष्मीरमण-रमणीय-चरण-सरसिरुह-संचरण-चतुर-पट्टचरणनुम् । निज-विजय-राज्य-राज-लक्ष्मी-मणिमयाभरणनुम् । सु-कवि-शुक्ति संकथाकर्ण्णनोदीर्ण्ण-पुलक-दन्तुरित-कपोळफळकनुम् । नीति-नितम्बिनी-ललाट-तिळक-नुम् । सु-रुचिर-चरण-नखर-मणि-दर्प्पण-प्रतिफळित-विनत-रिपु-नृपोत्तमांगनुव् । अन्तु पोगळ्तेगं नेगळ्तेगं जन्म-भूमियागि ।

मददिं मेलेत्तिदा-माळवन पदकमं कोण्डवं चक्रकूटम् ।
वेदरल् वेट्टोण्डु सोमेश्वरन करिगळं कोण्डदं माण्डने पेळ्-।
दुदनेम्बो गेय्दुदिल्लेन्द्दिगननुरे वेट्टोण्डु कोण्डं जय-श्री-।
सदनं वट्टेशमं तत्-तळवन-पुरमं जिष्णु-विष्णु-क्षितीशन् ॥
तळकाडोळ् मुळिदाडि तुङ्ग-नगवप्प उरुचंगियं गाह्ना-।
कुळ-चित्तं बनवासेयागे नडेदाग्गिं वेळुवलं गोन्डु निरा-।
चलितं पेद्दोरेगेन् व-सोपदोलेदा-हानुङ्गलोदत्तु होर् -।
सळ-भूपालन शौर्य्य-सिंहवमुद्दद्-भूपर् भयद्दोळ्विनं ॥

अन्तेनिसिदाश्चर्य्य-शौर्य्यदिं कोङ्गु-नङ्गलि-गङ्गवाडि-नोणम्बवाडि-बनवासे-हानुं-गल्लु-हलसिगे-वेळ्वलनोळगागि कृष्णियादि-यागि हेद्दोरे-पर्य्यन्तवाद स......वङ्गळं दुष्ट-निग्रह-शिष्ट-प्रतिपाळनं माडि भुज-बल वीर-गङ्ग त्रिभुवनमल्ल होय्सळ-विष्णुवर्द्धन-देव..................राजधानि-दोर-समुद्रदोळु सुख-संकथा-विनोददिं राज्यं गेय्युत्तमिरे तत्पादपद्मोपजीवि ।

सरसति निनगिनितु कळा-। परिणते नेगळ्दजितसेन-भट्टारकरिम् ।
दोरेवेत्तु देवियाद्दिर् -। पिरियतनं निनदल्तुदवर महत्वम् ॥

सले सन्दा-योग्यतेय-अगलिसिद दुर्द्धर-तपो-विभूतिय पेन्विम् ।
कलि-युग-गणधररेम्बुदु । नेळनेळ्ळं **मल्लिषेण-मलधारि**गळम् ॥
आवनविषयमो पट्ु-त-। र्कोविळ-बहु-भंगि-संगत**श्रीपाल**-।
त्रैविद्य-गद्य-पद्य-व-। चो-विन्यासं निसर्ग-विजय-विळासं ॥
आळापं वेड माण् मार्-मलेयदिरेले नीं वादि वन्दिर्द्दपं भू-।
पाळोग्रद्-मौळि-माला-विळसित [·········] पदाम्भोज-युग्मम् ।
चोळ-क्षत्रादि-भूभृत्-सभेयोळु पलरं गेल्दु वेङ्कोण्डनी-**श्री-
पाल-त्रैविद्य-देव** पर-मत-कुधरानीक-दम्भोळि-दण्डम् ॥
जिन-धर्माम्बर-तिग्म- रोचि सु-चरित्रं भव्य-नीरेज-नन्-।
दन-मित्रं मद-मान-माय-विजितं **चन्द्रप्रभे**न्द्रात्मजम् ।
विनयाम्भोनिधि-वर्द्धनं जन-नुतं तानेन्दु संवर्ण्णिसळ् ।
मुनि-नाथं सळे **वासुपूज्य**नेसेदं सिद्धान्त-रत्नाकरम् ॥

श्री-**भूतबळि-पुष्पदन्त-भट्टारक**रिं । **समन्तभद्र-स्वामि**गळिन्द **कलङ्क-देव**रिम् । **वक्रग्रीवाचार्य्य**रिम् । **वज्रणन्दि-भट्टारक**रि **कनकसेन-वादि-राज-देव**रिं । श्री-**विजय-भट्टारक**रिं । **दयापाळ-भट्टारक**रिं । श्री-**वादिराज-देव**रिन्द् । **अजितसेन-भट्टारक**रिं । **मल्लिषेण-मलधारि-स्वामि**गळिं । **श्रीपाल-त्रैविद्य-देव**रिम् । श्री-**वासुपूज्य-सिद्धान्त-देव**रिम् । उत्तरोत्तरमागि वन्द श्रीमद्द्रविळ - संघदरुङ्गळान्वयद गुड्डरप्प श्रीमतु-**नारसिंघ-होय्सळ-गावुण्ड**म् ॥

पदनरिदासे दप्पिसदे बेळ्पर बेळ्पुदनित्तु सद्गुणा- ।
स्पदनेनिसल्के निन्न पेसरेम् गळ होय्सळ-गौण्डनेम्बुदे ।
[··] शिबियेम्बुदे खचर-नायकनेम्बुदे चारुदत्तनेम्-।
बुदे बलियेम्बुदे रवितनूभवनेम्बुदे गुत्तनेम्बुदे ॥
जिनपति-भक्तियान्त पति-भक्तिवुदारते शक्ति सज्जन-।
[··] कृत-युक्तियल्दे गुणवल्दे-गुणङ्गळनावगं पोग-।
ळ्दनवरतं निमिर्च्चुतिरे होय्सळ-गौण्डिन चित्त-वार्धिवर्-।

द्धन-कर-चन्द्र-लक्ष्मियेने वण्णिसलोप्पदे **केळ्ळेगौण्डियम्** ॥
कुल-धात्रीधर-धैर्य्यनब्धि-वर-गाम्भीर्य्यं समस्तावनी- ।
वळय-व्यापित-चारु-कीर्त्ति वनिता-कामं गुण-स्तोमनुज्-
ज्वळ-वाणी-स्तन-हारनर्थ्यतिशयाधारं करं पेम्पनिन्त् ।
एळेयोळ् ताळिद्दतो जगन्नुत-गुणं श्री-**कदम्ब-शेट्टि**-प्रभु ॥
आतन चित्त-प्रिये वि- । ख्यातियनान्तांद्रिसुतेगमम्बुधि-सुतेगम् ।
सीता-वधुगं रतिगव- । देतेरदिं **चट्टियक्क**नग्गळवेनिपळ् ॥
रतिगवरुन्धतिगं सर- । सतिगं रेवतिगमेसेव पार्व्वतिगं श्री-
सतिगं समनेनिसि महा- । सति चट्टियक्क तोळगि बेळगि-र्दाळ्ळेयम् ॥
भावकनेन्दु सच्चरित्रनेन्दु समुन्नतनेन्दु सत्पुरुषनेन्दु समुज्ज्वळ-कीर्त्तियेन्दु सर्व्वावनि सन्ततं सले पोगळ्वुदु **नन्नि-शेट्टियम्** । **लोक-गावुण्ड**गं **माकवे-गवुण्डिगं** पुट्टिद मगळु **चट्टवे-गवुण्डिय** मगं **होय्सळ-गवुण्डं** तम्मव्वेगे परोक्षवा- .. बसदियं माडिसिदम् । होय्सळ-गवुण्डनुं ऊर समस्त-प्रजे-गावुण्डुगळुविंद्दुं बसदिगं देवालयक्कं भूमि समानवागि वर्सादगे उत्तरायण-संक्रमण-व्यतीपातदन्दु **अहोवल-पण्डित** रिगे कालं कर्च्चि धारा-पूर्व्वकं माडि कोट्ट गद्दे सलगे नाल्कु बेद्दले मत्तरु नाल्कु माने येरडु कळनोन्दु केरय केळगण तोण्ट ओन्दु गाण ओन्दु ॥ **१०८२ नेय प्रमादि-संवत्सरद पौष्य-मास-उत्तरायण-संक्रान्ति-व्यतीपातदन्दु-नारसिह-होय्सल-देवर** कय्यलु धारा-पूर्व्वकं माडिसि-कोण्डु बसदिगे भूमियं बिट्टरु ॥ (आगेकी चार पंक्तियोंमें हमेशाके अन्तिम श्लोक हैं) कव्वलिय भूमि-पुत्रकरप्प गौडु-गळ पेसरं पेळवे (कुछ नामोंके बाद) समस्त-प्रजे-येल्लविर्द्दुं बसदिगे धारा-पूर्व्वकम्माडिदरु । इन्तिवरुम्यानुमतदिं बरेद **नेल्कुदरेय-ऊरोडेय कलि-देवु माणि-बोज** ॥

[जिन शासनकी प्रशंसाके बाद, विष्णुवर्द्धनके अनेक पद, और उपाधियाँ । इसने मालवका केन्द्रीय नगर हस्तगत कर लिया; चक्रकूटको डराकर उसने सोमेश्वरके हाथियोंका पीछाकर उन्हें पकड़ लिया । अदिगका पीछा करके उसके देश तथा राजधानी तळवनपुरको अधिकृत कर लिया । इस राजाने तळकाडु, उच्चंगि,

वनवासे, वेळ्वल, पेद्दोरे और हानुङ्गल सभी पर अधिकार जमाकर शत्रु-राजाओंमें भय उत्पन्न कर दिया।

जब, भुज-बल वीर-गङ्ग त्रिभुवन मल्ल होय्सल विष्णुवर्द्धन-देव राजधानी दोर-समुद्रमें बैठकर शान्ति और बुद्धिमत्तासे राज चला रहा था :—

तत्पादपद्मोपजीवी,—अजितसेन-भट्टारक, मल्लिषेण-मलधारी (कलियुगी गणधर), श्रीपाल-त्रैविद्य-देव और चन्द्रप्रभके पुत्र मुनिनाथ वासुपूज्य-सिद्धान्त-देव थे।

द्रमिल-संघके अरुङ्गलान्वयका एक गृहस्थ-शिष्य **नारसिंघ-होय्सळ-गावुण्ड** था। (उसकी प्रशंसा)। उसकी पत्नी केल्ले-गौण्डि थी। कदम्ब-सेट्टि-की प्रशंसा, जिसकी पत्नी चट्टियक्क थी। नन्नि-सेट्टिकी प्रशंसा।

लोक-गवुण्ड और माकवे-गवुण्डीकी पुत्री चट्टवे-गवुण्डीके पुत्र होय्सल-गवुण्ड-ने, अपनी माताकी स्मृतिमें, एक बसदि खड़ी की, और उस नगरके समस्त प्रजा तथा किसानोंके सामने, (उक्त) कुछ भूमि बराबर-बराबर बसदि और मन्दिरको बाँट दी। यह सब अहोबल-पण्डितके पाद-प्रक्षालनपूर्वक किया। और (उक्त मितिको) बसदिको वह सब भूमि दे दी जो उसे नारसिंह-होय्सल-देवसे मिली थी।

यह दोनों पार्टियोंकी सम्मतिसे नेल्कुदरेके प्रधान; कलिदेव-माणिबोब-ने लिखा।]

[EC, VI, Kadur, Tl., No., 69.]

३५२

पण्डितरहल्लि;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[बिना काल-निर्देशका, पर लगभग ११६० ई० का]

[पण्डितरहल्लि (करडगेरे परगना) में, मन्दरगिरि-बस्तिके प्राङ्गणमें एक पाषाण पर]

श्रीमत्परमगंभीर-स्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम्॥

नमो वीतरागाय ।

श्रीयं श्री-वक्षदोळ् सुस्थिरमेनिसि जगं बण्णिसल् तान्दि वीर- ।
श्रीयं दो-र्दण्डदोळ् ला (शा) स्वत (श्वत) मेने तळेदी-लोक-संस्तुत्य-वाणि- ।
श्रीयं वक्त्राब्जदोळ् वाग्-वरनेने मेरेदं यादवाम्नाय-राज्य- ।
श्रीयं स्वाङ्गीकृतं माडिद नृप-तिळकं **नारसिंह**-क्षितीशम् ॥

स्वस्ति समाधिगत-पञ्च-महा-शब्द महा-मण्डलेश्वरं **द्वारावती-पुर**-वराधीश्वरं **यादव**-कुलाम्बर-द्युमणि सम्यक्त्व-चूडामणि मलपरोळु-गण्डाद्यनेक-नामावली-समालंकृतरप्प श्रीमत्······मल्ल तलकाडुकोङ्गु-नङ्गलि-बनवसे-उच्चङ्गि-हानुङ्गल् गोण्ड भुजबल वीर-गंग होय्सळ-**नारसिंह-देवरु** श्रीमद्-राजधानि-**दोरसमुद्रद** नेलेवीडिनोळ् सुख-संकथा-विनोदर्दि राज्यं गेय्युत्तमिरे तत्पादपद्मोपजीवि ॥

स्फुरदुरु-दीधिति-प्रकटितोग्र-भुज··विळासि-दुर्-।
धरतर-विक्रम-क्रमदोळादतिवर्त्तियेनल्के सन्दनी- ।
धरे पोगळल्के रूढिये··चमूपति-रत्नना-नृपे- ।
श्वरन नेगळ्ते-वेत्त मनेगं मोनेगं नेगळ्देक-मुख्यदिम् ॥

एरगदराति-राय······परलोकेयप्पिनम् ।
किरिपि भुजासियं जसमनेण्-देसेयानेय··गोम्बिनोळ् ।
निरिसि समग्र-साहसमनी-धरेयोळ् मेरेयुत्तमिर्प्प हेर्- ।
अरिकेय **दण्डनाथनेरेयङ्ग**नेनल् नेगल्दं धरित्रियोळ् ॥

[स्] वस्ति श्रीमन्महा-प्रधानं सर्व्वाधिकारि सेनापति-दण्डनायक एरेयङ्गमय्यङ्गळ पाद पद्मोपजीवि ॥

स्थिरमेने गोत्र-मित्र-विबुधाश्रय···मं निमिर्च्चि वन्- ।
धुर-महिमोन्नतिक्केगेडेयागिकरं चेलुवागि भूभृद्-उद्- ।
धुर-लक्ष्मी-प्रधाननेसेदिर्द्दभिमान-मन्दरम् ।
मिरिदेनिसिर्द्द**नोश्वर-चमूपति** मन्दरदिं निरन्तरम् ॥

मन्निपनेन्न निन्न···नेगल्दिम्मडि-दण्डनाथनोल्द् ।
एन्नेय भाव नान् निनगे माननेनेन्तुमवश्य-पोष्य··।

•••नदे सन्द विक्रमदळुक्केयगुर्व्विनोळाळदनीश्वरम् ।
तन्नदटिन्दवादं **एरेयङ्ग**-चमूपन चित्त-वृत्तियम् ॥
मत्तमा-प्रधान-चूडारत्नन विपयाधिकारि•••नेगल्तेय पोगल्तेयं पेळवडे ।
करेवुदु कामधेनुवेने धेनु पोलं सले पत्रि धान्यमम् ।
नेरदळर्दर्घमुमळनेयुं पिरिदादुददेन्तु नोळपडम् ।
तेरे विपरीतविल्ल नुडियोळ्तोर्दाळल्लेनल् ••••श्वरम् ।
मरुवलि-मण्णे-तेङ्गर-नेगळतेय-कल्वळियेम्ब नाळ्गळम् ॥
कन्दिरे मुं चिरन्तनर जीर्ण्ण-जिनालयं मोदल्-।
गोण्डु निरन्तरं मेरेये माडिसि रूढियनीतनन्ते कम्-।
कोण्डवनावनीश्वरने धर्म-गुणोन्नतनातनिर्द्द भू-।
मण्डलमावगं स-फलमादुदेवं द्विज-वंश-मण्डनम् ॥
आ-महानुभावन सति ।
लावण्याम्भोधिय वे-। ला-वन-वन-लते-सुधाब्धि-संभव-लक्ष्मी-।
देवतेयेनिसुवल् ईश्वर-। देवन वधु **माचियक्क**नवळा-रत्नम् ॥
आ-पुण्यवतियन्वय-प्रभावमेन्तेन्दडे ॥
श्रीगे निवासवागि पेसर-वेत्तनेगळ्तेय **नाकि-सेट्टिगम्**
नागवेगं तनूभवनगुर्व्विन**सोहणि विट्टिगा**ङ्गना-।
भोग-पुरन्दरङ्गे सति **चन्द्रवे** तत्सुते माचियक्कनेन्द् ।
आगळमक्करिं विबुध-मण्डलि वण्णिसलोप्पि तोरिदळ् ॥
निरुपम-कीर्त्तियं तळेदु पेम्मेंगे ताय्-मनेयागि सत्-कळा-।
धर-मुखियाद चन्द्रदेगे पेर-म्मगळागि समस्त-लोकमम् ।
पोरेदनमोघनीश्वरनोळिर्देनुतुं तरुणी-विलासमम् ।
धरियिसि पुट्टिदळ् लकुमि-देवियेँ **माचवे**येम्ब नामदिम् ॥
द्विगुणिसुतिप्पुदाद दर-हास-विळास-नवीन-चन्द्रिका- ।
प्रगुण-गुणङ्गळिं कुवळयक्के विळासमनेन्दोड्डुदग्र-ली- ।
लीगे नेलेयाद माचलेयनून-लसद्-वदनेन्दु•••रु- ।

ढिगे नेगळिदन्दु-मण्डलदोळिर्द्द कळङ्कमनीगलागुमे ॥
कळिरसलोरे·········। चलनर मातिरखि पोलरीश्वरनेम्बी-।
कळ्र-महीजमनप्पिद । कलर-जता-ललिते··माचिपक······॥
परमाप्तं जिननातनिन्तु जनकं श्री-विट्टिगाङ्कं गुणो-।
द्धुर तन्नम्बिके चन्दिकब्बे येनिसिर्दा-माचियकङ्गे सद्-।
गुरुगळ् पोस्तक-गच्छ-देशिय-गण-श्रीकोण्ड कुन्दान्वयो-।
द्धरणर् गण्डविमुक्त-देव-मुनिवर श्री-मूल-सङ्घोत्तमर् ॥

अन्तनून-गुण-रत्न-मण्डनेमुं चातुर-वर्ण्ण-समुदयैक-शरणेयुमेनिसि नेगल्द श्रीमत्-पेर्-गडिति माचियकक्कं श्री-मय्दवोळल दिव्य-तीर्थदोळ् सत्-धर्म्मापंचेयिम् ।

नोडलिदु शित-विमानदे । नाडेयु मिगिलेनिसि नेगळ्द जिन-मन्दिरमं ।
कूडे घरे पोगळे माचवे । माडिसिदलगण्य-पुण्य- युवती-रत्न ॥

अन्तु माडिसि ॥

श्री-वधु-माचवे सले प-। द्मावतिगे रेयेम्ब केरेय कट्टिसि कोट्टळ् ।
भाविसे वसदिगे तन्न य-। शो-वधु दिग्-वधुगळोडने नलिदाडुविनम् ॥

मत्तमा-तीर्त्थद वसदिय देवरिगे मुन्न नडेव वृत्तिय सीमा-सम्बन्धमेन्तेन्दडे (यहाँ दानकी विशेष विगत आती है) मङ्गळ महा श्री । (वही अन्तिम श्लोक)······

[जिन-शासनकी प्रशंसा ।

जब भुजबळ वीर-गङ्ग होय्सळ नारसिंह-देव, शान्ति और बुद्धिमत्तासे शासन करते हुए, राजधानी दोरसमुद्रमें विराजमान थे :—तत्पादपद्मोपजीवी,–(प्रशंसा सहित) दण्डनाथ–एरेयङ्ग था । दण्डनायक-एरेयङ्गमय्यका पादोपजीवी ईश्वर-चमूपति था । वे दोनों आपसमें श्वसुर और दामाद थे । (उनकी प्रशंसायें), और उसने जिनालयकी मरम्मत करवायी थी । उसकी (ईश्वर-चमूपतिकी) पत्नी माचियक्क थी, जो नाकि-सेट्टि और नागवेके पुत्र साहणि-विट्टिगके चन्दवेकी ज्येष्ठ पुत्री थी; उसकी प्रशंसायें । जिनपति उसके इष्टदेव, पिता विट्टिग, माँ चन्दिकब्बे थीं । माचियक्कके गुरु पुस्तक-गच्छ, देशिय-गण, कोण्डकुन्दान्वय तथा मूलसंघके गण्डविमुक्त-देव-मुनिप थे ।

माच्चियक्कने मय्दवोळल् पवित्र तीर्थमें एक जिन मन्दिर बनवाया था, और पद्मावती-गेरे नामक एक तालाब भी, जिसे उसने बसदिको प्रदान कर दिया। उस बसदिके देवकी जमीनकी सीमायें। देवकी पूजा-विधि, मुनियोंके आहार, तथा मन्दिरकी मरम्मतके लिए प्रदान की गई भूमिकी विगत दी है। वे ही अन्तिम श्लोक।]

[EC, XII, Tumkur Tl., No. 38]

३५२

दोडगूरु;—कन्नड़।

[विना काल-निर्देशका, पर संभवतः लगभग ११६० ई० का]

[दिडगूरु (होन्नालि परगना) में, हनुमन्त-देवके गाड़ी रखनेके मकानके पीछेकी दीवालसे सटी हुई जैन-मूर्तिके चरण पाषाणपर]

श्री-मूल-संघ काणूर्........चार्य्य बाळचन्द्र-देवरिगे मेषपाषाण-गच्छ्......हेग्गडे-जक्कय्यनुं तन्न मद वळिगे जक्कब्बेयुं दिड्डुगूरोळु चैत्यालयमं माडिसि सुपार्श्व-देवर सु-प्रतिष्ठेय माडिया-देवरिंगे युं ऋषियराहार-दानक्कं नेल्लु-बेड्व मत्तरोन्दु एल्लु नवणे मत्तरोन्दु अडके-दोण्ट कम्म १५ इनितु आ-चन्द्रार्क्क सलुवन्तागि कोट्ट स्वस्ति।

[श्री-मूल-संघ, काणूर्-गण और ? मेषपाषाण-गच्छके आचार्य बालचन्द्र-देवके लिए,—हेग्गडि जक्कय्य तथा उसकी पत्नी जक्कब्बेने दिडगूरुमें एक चैत्यालय बनवाया, और उसमें सुपार्श्व भगवानकी स्थापना करके, देवके लिये तथा ऋषियोंके आहारके लिये (उक्त) भूमिदान किये।]

[EC, VII, Honnali tl., no 5.]

३५४

श्रवणबेल्गोला—कन्नड़ ।

[बिना काल निर्देशका]

[जै., शि., सं., प्र० भा.]

३५५

श्रवणबेल्गोला—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[बिना कालनिर्देशका]

[जै., शि.. सं., प्र० भा.]

३५६

हेग्गेरी;—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[शक १०८३=११६१ ई०]

[हेग्गेरेमें, बस्तिके एक पाषाणपर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥
स्वस्ति-श्री-वर्द्धमानस्य वर्धमानस्य शासने ।
श्री-कोण्डकुन्द-नामा भू- [च्] चतुरङ्गुळ-चारण [:] ॥

योऽर्हन् सोऽव्यात् । स्वस्ति समस्त-भुवनाश्रय श्री-पृथ्वी-वल्लभ महाराजाधिराज परमेश्वर परम-भट्टारक सत्याश्रय-कुळ-तिळक चाळुक्याभरण श्रीमद्-**भूवल्लभ-राय-पेर्म्माडि-देवर** कल्याणद नेलेवीडिनोळ् । **सप्तार्द्ध-लक्ष**-भूमियम् । दुष्ट-निग्रह-शिष्ट-प्रति-पाळनं गेय्दु सुख-सङ्कथा-विनोददिं राज्यं गेय्युत्तिरे । तत्पाद-पद्मोपजीवि ।

अरि-पुरदोळ् घगद्-घगिलु घं-घगिलेम्बुदराति-भूमिपा- ।
ळर शिरदोळ् गरिल्गरि गरिल्गरिलेम्बुदु वैरि-भूतळे- ।

सर करुळोळ् चिमिल्चिमि चिमिल्चिमिलेम्बुदु कोप-वह्निदुर्- ।
घरतरवेन्दोडल्कुरदे कादुवरार् मले-राज-राजनोळ् ॥

तत्पुत्र ॥

नो तीव्रो वडवानलो जळनिधेरद्यापि सद्भावतो-
भर्गाभीळ-ललाट-लोचन-बृहद्भानुर्यथा श्रूयते ।
कामोऽनङ्ग इति त्रिलोचन-गळे स्वस्थं च हाळाहळम्
तानेवं हसति प्रताप-दहनस्ते **विष्णु-भूपाळक** ॥

स्वस्ति समधिगत-पञ्च-महा-शब्द महा-मण्डलेश्वरं **द्वारावतीपुर**-वराधीश्वरं **यादव**-कुलाम्बर-द्युमणि सम्यक्त्व-चूडामणि मलपरोल् गण्ड तळकाडु-गोण्ड वीर-भुजबळ **विष्णु वर्द्धन-होय्सल**-राज्यमुत्तरोत्तराभिवृद्धियिं प्रवर्द्धमानमा-चन्द्रार्क्क-तारं-बरं सलुत्तविरे । तत्-तनयनेन्तप्पनेन्दोडे ।

देवो देव-सदृक्-भोग-निलयस् सम्पूर्ण-लक (क्ष्मी) मी-धवो
देव त्वद्द्विप-राज-राजित-मही-कान्ता-प्रियोऽसौ बभौ ।
देवश्शत्रु-धा (ध) रापति-प्रकर-कुम्भि-व्रात-कण्ठीरवो
देव श्री-**नरसिंह-भूप** विजय-श्रीश प्रणूतो भव ॥

तत्पादाराधकम् । स्वस्त्यनवरत-विनतानेक-नाक-लोकपाळालीळ-मौलिजाळ-खचित-मणि-गण-मयूखोल्लेखारुणित-जिन-चरण-हेम-सरसिज-सौरभासक्त-चित्त-मत्त-मधुकर । सम्यक्त्व-रत्नाकर । जिनार्च्चना-समय-समुद्गत-काळागुरु-धूप-धूम-स्यामळित-व्योम-रङ्ग । शिष्टेष्ट-जन-वनज-वन-पतङ्ग । गङ्गा-तरङ्ग-जनित-फेन-कुन्देन्दु-हर-हास-सुर-गज-ताराचल-द्युति-विशद-विशाल-दिग्-विवर-वर्त्तित-कीर्त्ति-प्रेम । सङ्ग्राम-भीम । अप्रतिहत-प्रताप-प्रचुर-प्रभाव-प्रसरत्-प्रचण्ड-प्रवळ-प्रस्फुरोदग्र-निशितासि-दोर्-मण्डिताडम्बर । अहित-दिशापट्ट संगर-विजय-लक्ष्मी-स्वयम्बर । अघनानळ-दन्दह्यमा[न]-बुध-कुधर-सन्तर्प्पण-सुवर्ण-वर्ष पयोधर । हर-वृषभ-कन्धर । शरणागत-कुभृत्-सन्तान-परिरक्षण-क्षमार्प्प-तरवारि-धारा-वारि-पारावार-पूर । रण-रङ्ग-धीर । समुद्दण्ड-सामन्त-बेदण्ड-तुण्ड-खण्डन-प्रचण्ड-मृगेश्वर । **हुळियेर-पुर**-वराधीश्वर । **शान्तल-देवी**-

गर्व्भ-पयःपयोधि-सञ्जात-नङ्गम-कल्प-भुज । सामन्त-चट्ट-तनूज । अति-बळ-विरोधि-सामन्त-बळ-बहळ-तमःपटल-पूर्व्व-कुभृन्-मस्तकोदय-बाल-रवि-बिम्ब । गर्व्वि-ताराति-सामन्त-गर्व्व-पर्व्वत-निर्भेदन-तीव्रतर-शम्ब । निज-प्रताप-तरणि-किरण-विव-टित-पर-बळान्धकार । वैरि-कुल-संहार । निज-भुज······दण्ड-प्रचण्डादि-सामन्त-मद-शुण्डाळ-मस्तक-विदारण-विनोद ललित मृगमदामोद । "मम कान्तं रक्ष रक्ष"-स्वर-त्रय-कम्पितान्त-विरोधि-सामन्त-सीमन्तिनी-सीमन्त-कुङ्कुम-रेणु-शोणित-पद-पद्म-श्री-केळि-विलास-हृदय-सद्म षोडश याचक-जन-मनोभिलषित-फल-प्रदायक । सन्नद्ध सामन्त-हृदय-सायक । रण-रसिक-चपल-हु-भट-कटक-पेटिका-मौळि-माणिक्य । नीति-चाणिक्य । चतुर-सीमन्तिनी-सम्मोहन-लतान्तकोदण्ड । रिपु-कुल-कळत्र-नळिन-नेत्र-मार्त्तण्ड । नवरस-भरित-मृदु-मधुर-गद्य-पद्यालंकृत-महा-काव्य-रसावेश-सञ्जात-सर्व्वाङ्ग-हर्ष-पुळक । मळेय-मानिनी-निटिल-तट-घटित-मलयज-तिलक । चोळी-कपोळ-मृगमद-मकरिकापत्र । लाटी-वधूटी-कटि-सूत्र । आन्ध्री-नीरन्ध्र-वन्धुर-स्तन-हार । गूर्ज्जर-नितम्बिनी-रत्न-केयूर । गौड-प्रौढ़-कान्ता-मुख-कमळ-चुम्बन-मधुव्रत । अनवरत-तुल्य-तुल्य-व्रत । कर्णाट-कामिनी-राशि-वदन-मणिमय-मुकुर । स-मद-रिपु-भयङ्कर । गेळङ्क-तळ-प्रहारि । तोडर्-दर मारि । दोड्डङ्क-वडिव । जग-वनण्डलेव । सितगर-गण्ड रिपु-शरभ-भेरुण्ड । सामन्त-वशणि । वुध-जन-चिन्ता-मणि । अप्पन-गन्ध-वारण । दुरित-निवारण । सकल-लक्ष्मी-कान्त । श्री-**विट्टि-देव-सामन्त** स्थिरं जीयात् ॥

चित्रलते ॥ नलिदुलिदट्टिकोण्डु कवितप्प विरोधि-बलक्के भीतियिम् ।
तेलवोलनेन्नदक्षदिदु पेर्व्वलवेन्नदे दोः-प्रतापदिम् ।
गिलिगिलि-गम्बवाडिसुवनाहवडोळ् कलि **विट्टि-देव** निन्- ।
नेलेगळवङ्गे सङ्गरदोळाम्पने गाम्पनवार्य-शौर्यनोळ् ॥
होडेव वर-सिडिल कालन ।
कुड्डु-दाडेय हरन नोसल कण्ण पोडर्प्पम् ।
पडेवुदु समरदोळेडगिद ।
कडु-गलिगळ कङ्गे **विट्टि-देवन** सवल ॥

शाद्दूंळविक्रीडित ॥

वाळं तूगदिरुळ्वुदं कवर्दुंकोळ् मद्-वल्लभर् निन्न की- ।
ळाळोळिङ्गेणेयेल्लरेके मुनिवै नीं कारगं वेद निन्- ।
नाळापक्के एर्देगेट्टर् एन्दु नुडिगुं तद्-वैरि-कान्ता-जनम् ।
हेळेनेम्बुदो **विट्टि-देव**नलघु (र्-द्) दोर्-व्विक्रम-क्रीडेयम् ॥

इन्तेनिसि नेगळ्द **विट्टि-देवा**न्वयवदेन्तेन्दोडे ॥

स्थिर-गम्भोर नोळम्बनग्र-महिषि-श्री-देवियं तद्-द्विषोत्- ।
करमन्तागडे वन्दु वन्दिविडिदल् तद्-वैरि-सवातमम् ।
भरदिन्देय्दे तळ-प्रहारदोळे कोन्दन्दित्तन्न-भूपना- ।
दरदि **वीर-तळ-प्रहारि**-वेसरं धात्रा-तळं वण्णिसल् ॥

चाळुक्याहवमल्ल-नृ- ।
पालन कटकदोळे कोन्दु दोड्डङ्कमुमम् ।
लीलेयोळे पडेदनदटम् ।
पाळिसि **दोड्डङ्क-वडिव**नेम्बी-विरुदम् ॥

अन्तातन मगनप्पा**हवमल्ल**गं पोन्नव्वेगं पुट्टिद **सामन्त-भीम**नेन्तेन्दोडे ॥

अतिमदराति-सिन्धुर-घटा-निघटोग्र-मृगेन्द्र विष्णु-भू- ।
पतिय मनक्के रागवोदवुत्तिरलातन विडिनल्लि ताम् ।
सितगर-गण्डनं परिदु कोन्ददर्टि पडेदं महीपनिम् ।
सितगर-गण्डनेम्ब विरुदं कलि भीमनिळा-तळाग्रदोळ् ॥

जनकं सामन्त-भीमं प्रथित-गुण-गणोद्भासि तां **चट्टियक्कम्** ।
जननि प्रख्यात-**माचं** समर-जय-वधू-कान्त **सामन्त-चट्टङ्** ।
गनुजं **सामन्त-मल्लं** निरुपम-सु चरित्रान्वितं **गोवि-देवम्** ।
विनुत-श्री-जैन-मार्ग्ग-स्थगित-गुण-कळाळापनुयत्-प्रतापम् ॥

मीरि कडाङ्ग होङ्गि मदवेरि चलं तले-दोरि विल्लनाद्- ।
देरिसि नीवि जे-वोडेदु संगर-रङ्गदोळान्तु पच्चळम् ।
दोरदे निन्दरप्पोडिदनोन्दने वेळ् ववनुण्डजीर्ण्णदिम् ।

कारिदनेम्बवोलद्दितरं कोल् [ड] वं हुळियेर-चट्टमम् ॥
करवाळाघातदिन्दम् रिपु-करि-शीर-सन्दोह-सद्-रक्त-मुक्तोत्- ।
कर-वीर-व्रात-निष्पीडित-निविड-कबन्धङ्गलिं रक्त-धारा- ।
धर-हस्त-व्यस्त-मृतावळि-पिशित-रसोद्रिक्त-सन्तृप्तियिं रौ- ।
द्र-रसं पोष्मल्के कोन्दं रणदोळहितरं कूडे सामन्त-चट्टम् ॥
आतन तम्मम् ॥
येरेदवर्गित्त चागवदु क्रितेनलीश्वरनद्रि-मध्यदोळ् ।
गिरिजेयपाङ्ग-वीक्षणदोळङ्कुरिसि युनदी-प्रवाहदिम् ।
परिकरदिन्दे पल्लविसि दिग्-गज-दन्तवडर्प्पेनल्के भा- ।
सुरवेने गोवि-देवन यशो-लते पब्बिदुदेन्दे लोकमम् ॥
धन-दर्प्पोनद्ध-दद्ध-भ्रुकुटि-कुटिल-रोषातुरावेश-शात्रर् ।
वनितोद्दण्ड-प्रतापानळ-कळ-शिखारूपरेम्बन्ददिन्दम् ।
मोनेयोळ् मारान्त-वैरि-प्रबळ-बळ-पयोजात-हेमन्तनाशाम्- ।
बन-दन्ताळिङ्गितेन्दु-द्युति-विशद-यशो-लक्ष्मणं गोवि-देवम् ॥
मत्तं सामन्त-चट्टन सतियेन्तप्पळेन्दोडे ॥
मरकत-वर्णमं तरुण-वेणु-तनु-च्छवियिन्देवभ्रमम् ।
सु-वचिरवप्प मुत्तेनिप दन्त-चयङ्गळदोन्दु-कान्तियिन्- ।
दुरग-सहत्तवप्प कचदिं हरिनीळवनोप्पडिन्दे होल्- ।
तिरे सरि रत्नदोन्देणेगे बन्दळु शान्तळे-नारि रूपिनोळ् ॥
स्थिर-गम्भीर-उदात्त-सद्-गुण-सदाचारत्वमेम्बी-गुणोन् ।
नतियं ताळ्दि महेश्वरागम-जिन-श्री-धर्म्म-सद्-वैष्णवा- ।
श्रित-बौद्धागमवेम्ब नाल्कु-समय-व्यापारमं माप्पै-सं- ।
गत-चातुर्य्यदिं कान्ते-शान्तलेगे पेळारुं समं चप्परे ॥
स्र ॥
पोरदाळ्दं नरसिंह-देव-महिपं सामन्त-गोविन्दनिम् ।
हिरियं चट्टमनैयनात्म-जननि प्रख्याते सातव्वे मन् ।

दर-धैर्य्यं विभु **माचि-देव** हिरियदर्यं मुत्तेयं **भीम**निम् ।
दोरेमारेन्देले निन्चलुं पोगळ्तुटी-श्री-**विष्णसामन्तनम्** ॥
रजताद्रि-प्रतिम-यशम् ।
निजवेनलेसदिर्द **बिट्टि-देव**ञ्जिन्ती- ।
भुज-बळ-**नृसिंह**-महिपम् ।
गज-वयकेन्दु **हेण्णगेरेयं** कोट्टम् ॥

इन्तु स्वस्ति श्री मूल-संघद देशिय-गणद पुस्तक-गच्छद कोण्डकुन्दान्वयद श्री-**चान्द्रायण-देवर** गुड्डम् । श्रीमन्-**महा-सामन्त-गोवि-देवं** तन्न सति **महा-देवि-नायकितिगे** परोक्ष-विनेयवागि माडिसि **गुणचन्द्र**-सिद्धान्त-देवर शिष्य-रप्प श्री-**माणिकनन्दि-सिद्धान्त-देवर** कालं कर्च्चि धारा-पूर्व्वकं माडि कोट्ट **हेग्गेरेय चेन्न-पार्श्व-देवर बसदिय** । अष्टविधार्च्चने-ऋषियराहार-दानक्केन्दु **शान्तल-देविय सु-पुत्रनप्प सामन्त-बिट्टि-देवम्** तनगे श्रेयोऽर्थवागि **१०**ने **चाळुक्य-विक्रम-संवत्सरद जेष्ट-शुद्ध-पञ्चमी-सोमवार सङ्क्रमणदन्दु** बसदिगे बिट्ट सवणगेरय सीमा-सम्बन्धवेन्तेदडे (यहाँ सीमाओं और दानको विगत दी हुई है) इन्ती-धर्म्मवं प्रतिपालिसुवर्गक्कुं जय-श्रीयुं शुभ-मङ्गळम् ॥ श्री श्री श्री
(वही अन्तिम श्लोक) ।

उचित-पदालङ्कारम् ।
प्रचुर-रसं नेगळलिन्तु जिन-शासनमम् ।
रचियिसिदं हर-हास- ।
रुचिर-यशं **देवभद्र-मुनिपो**त्तंसम् ॥
मेरेव-बुधाळिगाश्रित-जनक्कनुरागदोळित्तु मत्तवा- ।
दरिसुव दानदिन्दे सुर-भूजवनेणिगळेन्दे वण्णिकुम् ।
परम-जिनेन्द्र-पाद-कमळार्च्चन-निर्भर-भक्ति-युक्तेयम् ।
हरिहर देवियं नेगळ्द शासन-देवियनी-धरा-तळम् ॥

(बायीं ओर) स्वस्ति श्रीमन्-महा-सामन्त **बल्लय्य-नायकनु** हेग्गेरेय बस दिग स्थळ-वृत्तियागि हिरिय-केरेय केळगे बिट्ट गद्दे स ६ बेद्दले मत्तरु १

[जिन शासनकी प्रशंसा । पृथ्वीसे चार अङ्गुल ऊपर आकाशमें चलनेवाले कोण्डकुन्द नामके [आचार्य] जिन शासनमें हुए, इस बातका उल्लेख ।

स्वस्ति । जिस समय, (अपने चालुक्य पदों सहित), भुवनैकमल्ल-राय- पेर्म्माडि-देव अपने कल्याणके निवासस्थानमें थे और सप्तार्द्ध-लक्ष-भूमिपर शासन कर रहे थे :—

तत्पादपद्मोपजीवी,—उसका पुत्र (प्रशंसा सहित) विष्णु-भूपालक था । जिस समय, (अपने पदों सहित), विष्णुवर्द्धन-होय्सळका राज्य चारों और प्रवर्द्धमान था, उसका पुत्र (प्रशंसा सहित) नरसिंह-भूप था ।

तत्पादाराधक हुळियेर-पुरवराधीश्वर, शान्तल-देवीकी कुक्षिसे उत्पन्न, सामन्त-चट्टका पुत्र बिट्टि-देव-सामन्त था । उसके पराक्रमकी प्रशंसा । उसकी उत्पत्तिका वर्णन :—स्थिरगम्भीर (वीर-तळ-प्रहारी तथा दोड्डङ्क-बडिव ये दो उसके विरुद थे)-आहवमल्ल-सामन्त-भीम; इसके चार लड़के हुए :—माच, सामन्त-चट्ट, रामन्तमल्ल, और गोवि-देव । सामन्त-चट्टकी पत्नी शान्तल देवी थी । इन्हीं दोनोंका पुत्र विष्णु-सामन्त या बिट्टि-देव था । इसी बिट्टि-देवको राजा नरसिंहने हाथियोंके खर्चके लिए हेग्गगेरे दिया था ।

स्वस्ति । श्री-मूल-संघ देशिय-गण पुस्तक-गच्छ, तथा कोण्डकुन्दान्वयके गृहस्थ-शिष्य महा-सामन्त गोवि-देवने, अपनी पत्नी महादेवि-नायकितिकी मृत्युकी स्मृतिमें हेग्गेरेकी चन्न-पार्श्व बसदि बनवायी थी । अष्टविध पूजनके लिये, ऋषियोंके आहारके लिये,—गुणचन्द्र-सिद्धान्त-देवके शिष्य माणिकनन्दि-सिद्धान्त-देवके पाद-प्रक्षालनपूर्वक,—शान्तलदेवीके पुत्र सामन्त बिट्टि-देवने, अपनी समृद्धिके लिये, (उक्त मितिको), (उक्त) भूमि-दान किये; काली मिर्च, अखरोट और पानोंके गट्ठों पर जो दाम आये वे भी दिये ।

तथा हेग्गडे लक्कणने अपनी सास महादेवी-नायकितिकी स्मृतिमें, बसदिके लिये (उक्त) भूमियाँ प्रदान कीं । शाप ।

उचित शब्दों और रस-बहुलताके लिये, यह जिन शासन (लेख) प्रसिद्ध देवभद्र-मुनिपके द्वारा रचा गया था ।

हरिहर-देवी[1] की प्रशंसा।

स्वस्ति। महा-सामन्त वल्लय्य-नायकने (उक्त) भूमि हेग्गेरेकी वसदिके लिये 'स्थल-वृत्ति' के रूपमें दी।]

[EC, XII, Chik-nayakan halli tl., no. 21]

३५७-३५८

नडोले (Nadole) (Raj Putana)—संस्कृत

[सं० १२१८=११६१ ई०]

लेख श्वेताम्बर सम्प्रदायका मालूम पड़ता है।

[EI, IX, no 9, A, T. L A.]

and [EI, IX, no 9, B, T. L. A.]

३५९

खजुराहो—संस्कृत।

[यह लेख अजितनाथ भगवान के चरण-पाषाण पर अङ्कित है।]

[A. Cunningham, Reports, XXI, L. 69, R a.]

३६०

महोबा;—संस्कृत।

[सं० १२२०=११६३ ई०]

"संवत् १२२०, ज्येष्ठ सुदि ८ रवौः साधु देव ग नतस्य पुत्र रत्नपाल प्रणमति नित्यम् ॥"

---

१. विप्तूरके शिलालेख नं० ३८३, ३८४ देखो।

इस लेख पर हाथी का चिह्न है जिससे जाना जाता है कि यह प्रतिमा अतिनाथ की रही। इसमें दो पंक्तिया हैं, जिसमें काल और पूजक का नाम दिया हुआ है

[A. Cunningham, Reports, XXI, p. 74 a.]

३६१

महोवा;—संस्कृत ।

[विना काल-निर्देशका]

१. सांगम्य समा तत्पुत्र साहु श्री रत्नपाल। तस्य भार्या साधा। पुत्र कीर्त्तिपाल

२. तथा अजयपाल। तथा वस्तपाल। तथा त्रिभुवनपाल। प्रणमति नित्यम् (म)-

जितनाथाय

[इस लेख में पूर्व लेख के पूजक रत्नपाल नाम, उसकी भार्या और चार पुत्रोंके नाम सहित, दिया हुआ है।]

[A. Cunningham, Reports, XXI, p. 74, t.]

३६२

श्रवणवेलगोला—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक १०८५=११६३ ई० (कीलहौर्न)]

[जै० शि० सं०. प्र० भा०]

३६३

श्रवणवेल्गोला—संस्कृत तथा कन्नड़।

[विना कालनिर्देशका]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

३६४

हेग्गेरे;—कन्नड़।

[शक १०८५=११६२ ई०]

[हेग्गेरेमें, उसी बस्तिमें दूसरे पाषाण पर]

योऽर्हन् सोऽव्यात् स्वस्ति **शक-वर्ष स १०८५ सुभानु-संवत्सरद आषाढ़-शुद्ध १० बुधवारदन्दु** स्वस्ति श्री मूल-संघद देशियगणद पुस्तक-गच्छद कोण्डकुन्दान्वयद श्री-**माणिक्यनन्दिसिद्धान्त-देवर** शिष्यरप्प **मेघचन्द्र-भट्टारक-देवरु** सन्यसनविधिथिं समाधि-वोडेदु स्वर्गापवर्ग-प्राप्तरादरु

[जो अर्हत् हों वह हमारी रक्षा करे। स्वस्ति। (उक्त मितिको), श्री-मूलसंघ देशिय-गण, पुस्तक-गच्छ और कोण्डकुन्दान्वयके माणिक्यनन्दि-सिद्धान्त-देवके शिष्य मेघचन्द्र-भट्टारक-देव ने, सन्यसनकी विधिपूर्वक स्वर्गप्राप्त कर पुन-र्जन्मसे मुक्ति प्राप्त की।]

[E C, XII, Chik-Nayakanhalli tl., no 23.]

३६५

महोबा;—संस्कृत-भग्न।

[सं० १२२१ = ११६४ ई०]

सं० १२२४ आषाढ़ सुदि २ रवन् (रवौ) ॥ (कालञ्जराधिपति श्रीमत् **परमार्द्दिदेव**पाद्-नाम प्रवर्द्धमान कल्याण नि (वि) जय राज्ये।

यह लेख अधूरा है। परमार्द्दिदेवके राज्यकालाका है। इसमें एक लम्बी पंक्ति है।

[A. Cunningham, Reports, XXI, p. 74, a.]

---

१. लेखमें संवत् १२२४ है, परन्तु A. Guerinot में सं० १२२१ दिया हुआ है। किसकी भूल है सो छानबीन करनी चाहिये। हमारी समझ से A. Guerinot की ही भूल है, गल्तीसे '४' की जगह '१' छप गया है।

२६६

बेल-होङ्गल (ज़ि० बेलगाँव):—कन्नड़।

तारण संवत्सर = शक (१०८६=११६४ ई०)

बेल-होङ्गलका मन्दिर जो दीवालोंसे घं शहरकी उत्तर दिशामें अवस्थित है, इस समय लिङ्ग की वेदी बना हुआ है, लेकिन मूलतः वह एक जैन इमारत मालूम पड़ती है। इसमें इसी मन्दिरसे सम्बन्ध रखनेवाले दो शिलालेख हैं।

उनमेंसे प्रस्तुत लेख दूसरा है और पुरानी कन्नड़ लिपि और भाषामें है। इसमें कुल ५१ पंक्तियाँ हैं और प्रत्येक पंक्तिमें करीब ३६ अक्षर हैं। यह लेख एक पाषाणमयी साफ-सुथरी चट्टान पर लिखित है। यह चट्टान शहर के बाहर झाड़ियोंमें पड़ी हुई थी, इसको जे. एफ. फ्लीटने मन्दिरके सामने बायीं ओर रखवा दी थी। पाषाणके सिरे पर ये चिह्न हैं:—मध्यमें पद्मासनस्थ जिनेन्द्र प्रतिमा; इसके दाहिनीं ओर एक खड्गासनस्थ प्रतिमा, इसके बिल्कुल सामने ऊपर चन्द्रमा है; तथा इसके बायीं ओर एक गाय और बछड़ा है, इनके ऊपर सूर्य है। पाषाणका लेख इतना मिटा हुआ है कि इसका प्रतिलेख (Transcription) नहीं दिया जा सकता है। यह स्पष्टतः एक रट्ट (राष्ट्रकूट) शिलालेख है, जैसा कि इसके कार्तवीर्य नामके एक राजाके उल्लेखसे मालूम पड़ता है। इसका काल ३६ वीं पंक्तिमें दिया हुआ है और वह शक वर्ष १०८६ (ई० ११६४-६५), तारण संवत्सर है। इस लेखमें वर्णित कार्तवीर्य जे. एफ. फ्लीटकी रट्टों की सूचीमें तीसरे नं० का है। आगे लेखमें एक जैन बसदिका जिक्र आता है, और संभवतः उसी भवनका उल्लेख करता है जिससे कि यह अभी सटा हुआ है और इसीको दान करनेका संकेत है।

[IA, IV, p. 116, no 2, a.]

३६७

अङ्गडि—कन्नड़ भग्न।

वर्ष तारण [= ११६४ ई० (लू० राइस)।]

[अङ्गडि (गोर्णावीडु परगना) में, पाँचवें पाषाणपर]

. ...श्री स्वस्ति समस्त-भुवनाश्रयं श्री-पृथ्वी-वल्लभं महाराजाधिराजं परमेश्वरं परम-भट्टारकं यादवकुलाम्बर-द्युमणि सम्यक्त्व-चूड़ामणि मलेराज-राज मलेपरोळु गण्ड गण्ड-भेरुण्ड कदन-प्रचण्डन सहाय-शूर सनिवार-सिद्धि गिरि-दुर्ग-मल्ल चलदङ्कराम... ... ...वीर-विजय नारसिंह-देवनुम्॥ तारण-संवत्सरद चैत्र-शुद्ध... ... ...अन्दु सोसेवूर पट्टणसामि नागि-शेट्टिय... ... ...मय्यनु... ... ... माडिद बसदि इदके कट्ट... ... ...त्ति दत्ति।

[(अपनी उपाधियों सहित) वीर-विजय-नरसिंह-देवने (उक्त मितिको , उस 'बसदि' के लिये जिसे सोसवूर के 'पट्टण-सामि' नाग सेट्टि [के पुत्र]..... मय्यने बनवायी थी, दान दिया।]

[EC, VI, Mudgere tl., no 15.]

३६८

गिरनार—संस्कृत।

—[शक १२२२-११६५ ई०]—

यह लेख श्वेताम्बर सम्प्रदायका मालूम पड़ता है।

[Revised Lists art. rem. Bombay (ASI, XVI) p. 359, no 27, t. and tr.]

३६९

गिरनार—संस्कृत ।

[सं० १२२२ = ११६६ ई०]

नं० ३६८ के अन्तका लेख है । उसीका अन्तिम भाग है ।

[op. cit. p. 369, no 30, t and tr.]

३७०

ववागञ्ज (मालवा);—संस्कृत ।

[सं० १२२३ = ११६६ ई०]

मन्दिरके पूर्वकी ओर

यस्य स्वच्छतुषारकुन्दविशदा कीर्तिर्गुणानां निधिः

श्रीमान् भूपतिवृन्दवन्दितपदः श्रीरामचन्द्रो मुनिः ।

विरचद्मामृदखर्वशेखरशिखा सञ्चारिणी हारिणी

उर्व्यां शत्रुजितो जिनस्य भवनव्याजेन विस्फूर्जति ॥१॥

रामचन्द्रमुनेः कीर्तिः सङ्कीर्णं भुवनं किल ।

अनेकलोकसङ्घर्षाद् गता सवितुरन्तिकं ॥

संवत् १२२३ वर्षे भाद्रपदवदि १४ शुक्रवार ।

लेख स्पष्ट है ।

[JASB, XVIII, p. 950-952, no 1. t and tr.]

३७१

ववागञ्ज मालवा; संस्कृत ।

[सं० १२२३ = ११६६ ई०]

मन्दिरके दक्षिणकी ओर ।

ॐ नमो वीतरागाय ॥

आसीद्यः कलिकालकल्मषकरिध्वंसैककंठीरवो
वेनक्ष्मापतिमौलिचुम्बितपदः यो **लोकनन्दो मुनिः**
शिष्यस्तस्य ससर्वसङ्घतिलकः **श्रीदेवनन्दोमुनिः**
धर्मज्ञानतपोनिधिर्यतिगुणग्रामः सुवाचां निधिः ॥१॥
वंशे तस्मिन् विपुलतपसां सम्मतः सत्त्वनिष्ठो
वृत्तिं पापां विमलमनसा त्यज्यविद्याविवेकः ।
रम्यं हर्म्यं सुरपतिचितः कारितं येन विद्या
शेषा कीर्त्तिर्भ्रमति भुवने **रामचन्द्रः** स एषः ॥

संवत् १२२३ वर्षे ।

स्पष्ट है ।

[JASB, XVIII, p. 951-952, no 2, t. and tr.]

३७२

कम्बदहल्लि—कन्नड़ ।

[शक १०८६=११६७ ई०]

[कम्बदहल्लि (बिण्डिगनवले प्रदेश) में, जैन बस्तिके रङ्ग-मण्डपमें]

स्वस्ति श्रीयुतमूलसंघमदु तां शङ्घं गणं देसियम् ।
पोस्थज् गच्छमदन्वयं वेळे समं तां कोण्डकुन्दान्वयम् ।
भू-स्तुत्यं **हनसोगे**-दिव्य-मुनिगं पादार्च्चनक्कं कळा-
भ्यस्तरगं निज-वंशजर्गमिदु तां श्री-**पार्श्व**-दान-स्थळम् ॥
धरे तन्नं वण्णिसल् बिण्डिगनविलेयोळ् आ-**नेम-दण्डेश**-दिक्-कुञ्-
जरनय्यं पेट्ट-ताय् **मुद्दरसि** विमळ-गङ्गान्वय-ख्यातेयागल् ।
दोरेवेत्तीं-**पार्श्व-देव**-प्रभु कलि-युग-भीमाई-गेहादि-जीर्णो-
द्धरणं गेय्दावगं सोभिसे सोभे-वेसनं गेय्सिदं पुण्य-पुञ्जं ॥
सले देव-क्षेत्रदोळ् **बिण्डिगनविले**योळिर्प्पंतु-नाल्-कण्डुगं नीर्-
ण्णेलनन्तव्यत्तरं वेद्दलयनति-वळं नेम-मन्त्रीश-पुत्रम् ।

कुलकं तां पार्श्व-देवं सले कलि-युग-भीमाई-सत्-पूजेगोल्डी-
ये लसद्वंशयङ्गे दिव्य-व्रति-समितिगे विद्यार्थिगुत्साहदित्तम् ॥

शक-वर्ष १०८६ नेय सर्व्वजितु-संवत्सरद माघ व० ५ शुक्रवार-दन्दु पार्श्व-देव चतुर्विध-दानके बिट्ट दत्ति ॥

[यही स्थान है जो पार्श्वने श्री मूलसंघ देशिय-गण, पोस्तक-गच्छ और कोण्डकुन्दान्वयके हनसोगेके दिव्य मुनिके चरणोंकी पूजाके लिये, विद्वानोंके लिये तथा निजवंशजोंके लिये दिया था।

पार्श्वदेव-प्रभुने,—जिनके पिता नेम-दण्डेश थे और माता मुद्दवि थीं जो विमल गङ्ग वंशमें प्रख्यात थीं,—बिण्डिगनविलेके जैन मन्दिरको सुधरवाया, और उसके लिये कुछ जमीन अपने वंशजोंके लिये, दिव्य व्रतियोंके लिये, और विद्यार्थियोंके उपयोगके लिये दी।]

[EC, IV, Nagmangala Tl. No. 20]

३७३

वन्दूर—संस्कृत और कन्नड़

[शक १०६०=११६८ ई०]

[वन्दूर (जावगल्लु परगने) में, जैन-बस्तिके स्थलपर एक पाषाणपर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥
जयति सकळविद्यादेवतारत्नपीठं
हृदयमनुपलेपं यस्य दीर्घं स देवः ।
जयति तदनु शास्त्रं तस्य यत् सर्व-मिथ्या-
-समग्र-तिमिर-हारि ज्योतिरेकं नराणाम् ॥
श्री-कान्तर्य्यदु-कुळ-र
रत्नाकरदोळ् कौस्तुभादिगळ-चोल् पलरं ।

लोकोपकार-परिणत- ।
रेकीकृत-सकल-राज-गुणरप्पिनेगम् ।
सळनेम्बनागे यादव- ।
कुळदोळ् पुलि पाये कण्डु मुनि पुलियं पोय् ।
सळ एने पोय्दुदरिं पोय्- ।
सळ-वेसरवनिन्दवागे तद्वंशजरोळ् ॥
विनयं प्रतापमेम्बी- ।
जननाथोचित-चरित्र-युगदिं जगमं ।
जन-नयनवेनिसि नेगळ्दं ।
विनयादित्यं समस्त-भुवन-स्तुत्यम् ॥
आतङ्कति-महिमं हिम- ।
सेतु-समाख्यात-कीर्त्ति सन्मूर्त्ति-मनो-।
जातं मर्द्दित-रिपु-नृप- ।
जातं तनुजातनाद**नेरेयङ्ग**-नृपम् ।
वल्लिदरवनीपतिगळो- ।
ळेल्लं धर्म्मार्थ-काम-सिद्धि-वोलवनी- ।
वल्लभरातन तनयर् ।
च्वल्लाळं विट्टि-देवनुदयादित्यम् ॥
भूवररुगळोळं तां ।
भाविसे मध्यमनदागियुं नृप-गुण-सद्- ।
भावदिनुत्तमनादम् ।
भावि-भवद्-भूत-जिष्णु **विष्णु** नृपालम् ॥
मलेयं साधिसि माण्डने **तळवनं काञ्चो-पुरं कोयतूर्** ।
म्मले-नाडा-तुळु-नाडु नीलगिरिया-कोळालङ्**कोङ्गु-नं**-।
गलियुच्चंगि-विराट-राज-नगरं वल्लूरिवेल्लं पुजा- ।
वज्जदिं लीलेये साध्यवादुदेणेयार् **व्विष्णु**-क्ष्मापाळ[illegible]ळ् ॥

अन्तेनिसिद विष्णु-मही- ।
कान्तन तनयं नयानुरूपोपायन् ।
सन्तत-भुज-प्रतापा- ।
क्रान्त-नरं नारसिंहनाहव-सिंहम् ॥
आ-नारसिंह-नृपतिय ।
मानस-कमळ-हंसे पट्ट-माडेविगे-या- ।
श्री-गुतेगेचल-देविगे ।
नाना-गुण-गणद खणिगे चिन्तामणियोल् ॥
सकळ-कळा-परिपूर्ण ।
नक्षोर्मी-नदन-कुल-दन-कळङ्क तान् ।
अ-कुटिळनपूर्व-नय-श्री- ।
करं बल्लाळ-देवनुदयं गेय्दम् ॥
विनय-श्री-निधियं विवेक-निधियं ब्रह्मण्यनं पूर्ण-पु- ।
ण्यननुद्दाम-यशोनिधियं जित-जगत्-प्रत्यर्थियं सर्व-सज्- ।
जन-संस्तुत्यननुद्भवद्-वितरण-श्री-विक्रमादित्यनं ।
मनुजेश्वर् मलेराज-राजननदेवबल्लाळनं पोल्वरे ॥
स्वस्ति समधिगत-पञ्च-महा-शब्द महा-मण्डलेश्वरं । द्वारावतीपुरवराधीश्वरम् । यादवान्वय-सुधा-वार्धि-वर्द्धन-माकर-सान्द्र-चन्द्रम् । विमतावरीकृतामरेन्द्रम् । वासन्तिका-देवी-लब्ध-वर-प्रसादम् । विरचित-वीर-वितरण-विनोदम् । रिपु-राज-कदली-दण्ड-खण्डन-प्रचण्ड-मद-वेदण्ड । मलपरोळ्-गण्ड-मण्डळिक-गिरि-वज्र-दण्ड । गण्ड-भेरुण्ड । रण-रंग-धीर । जगदेक-वीरक-नामादि-समस्त-प्रशस्ति-सहितम् । तळकाडु-कोङ्गु-नङ्गलि-गङ्गवाडि-नोळम्बवाडि - हुलिगेरे-हलसिगे - बनवसे—हानुङ्गल् गोण्ड भुज-बल वीर-गङ्ग-प्रताप होय्सळ-बल्लाळ-देवं दोरसमुद्रद नेलेवीडिनोळ् सुखे-कथा-विनोददिं राज्यं गेय्युत्तमिरे तदन्वय-गुरु-कुळ-क्रममदेन्तेने ।
श्रीमद्-द्रमिळ-सङ्घेऽस्मिन्नन्दिसंघेऽस्त्यरुङ्गळः ।
अन्वयो भाति योऽशेष-शास्त्र-वाराशि-पारगः ॥

श्री-वर्द्धमान-स्वामिगळ धर्म्मतीर्त्थं प्रवर्त्तिसुवल्लि गणधररेनिसिद **गौतम-स्वामि-**गळिन्दं । **भद्रबाहु-भट्टारक**रिन्दं **भूतबलि-पुष्पदन्त-स्वामि**गळिन्दम् **एकसन्धि-सुमति-भट्टारक**रिन्दम् । **समन्तभद्रस्वामि**गळिन्दम् । **भट्टाकलंक-देव**रिन्दम् । **वक्रग्रीवाचार्य्य**रिन्दं । **वज्रणन्दि-भट्टारक**रिन्दम् । **सिंहणन्द्याचार्य्य**रिन्दम् । **पर-वादिमल्ल-श्रीपाळ-देव**रिन्दम् । **कनकसेन-श्रीवादिराज**रिन्दम् । **श्री-विजय-देव**रिन्दम् । **श्री-वादिराज-देव**रिन्दम् । **अजितसेन-पण्डितदेव**रिन्दम् । **मल्लिषेण-मळधारि-स्वामि**गळिन्दनन्तरम् ।

तमगाज्ञा-वशमादुदुन्नत-महीभृत्-कोटि तम्मिन्दे विण्ण ।
अमर्द्दत्ती-धरेगेय्दे तम्म-मुखदोळ् पट्-तर्क्क-वाराशि-त्रि- ।
भ्रममापोपन-मात्रमादुदेनलि मातेनगस्त्य-प्रभा- ।
वमुमं कीळ्पडिसित्तु पेम्पिनेसकं **श्रीपाल-योगीन्द्ररं** ॥

अवरग्र-शिष्यर् ॥

श्रीपाळ-त्रैविद्य-विद्या-पति-पद-कमलाराधना-लब्ध-बुद्धिः ।
सिद्धान्ताम्भोनिधान-प्रवितरदमृतास्वाद-पुष्ट-प्रमोदः ।
दीक्षा-शिक्षा-सु-रक्षा-क्रम-कृति-निपुणः सन्ततं भव्य-सेव्यः ।
सोऽयं दाक्षिण्य-मूर्त्तिर्ज्जगति विजयते **वासुपूज्य-व्रतीन्द्रः** ॥

अवर गुड्डुगळ् रत्न-त्रय-समन्वितर् **व···-देवनानन** वधु **सावियक्कम्** ॥

अवर्गे तनूभवं जित-मनोभव-रूप-नपार-पौरुषम् ।
विविध-कळा-विळास-भवनं प्रभु **बेळ्ळिय-दासि-सेट्टि** भू- ।
भुवनमनेय्दे रक्षिसुव दानद-धर्म्मद पेम्पिनिं सुधा- ।
र्ण्णवदेणेयप्प कीर्त्तियनुपार्ज्जिसिदं विबुधैक-बान्धवम् ॥
पडेवं सद्-धर्म्म-मर्य्यादेयोळे परदु-गेय्दर्त्थमं न्यायदिन्दम् ।
पडेदर्त्थं देवता-पूजेगे वसदिगे शिष्टेष्ट-दानक्के निच्चम् ।
कुडे मत्तं तन्न भाग्यं तव-निधियेने नीळ्दुण्मि कैगण्मे पेम्पम् ।
पडेदं देसं वियन्मण्डप-कळित-यशः-कल्पवल्ली-विलासम् ॥

आतन सति बोकियकं ॥ अवर बोदरळिवन्दिर् हेग्गडे मादिराजनुं संकर-सेट्टियुं ॥ आ-बेळिय-दासि-सेट्टि दोरसमुद्रदलु माडिसिद होय्सळ-जिनालयक्के बिट्ट बन्दबुरदलि माडिराननुं सङ्कर-सेट्टियुं माडिसिद पार्श्व-देवर्गे बसदियं पुष्पसेन-देवर्म्माडिसिदरादेवरष्ट-विधार्च्चनेगं ऋषियिगळाहारदानक्कं जीर्णोद्धार-क्कवागि वासुपूज्य-सिद्धान्त-देवरं अवर शिष्य पुष्पसेन-देवरं माडि-राजनुं संकर-सेट्टियुं समस्त-प्रजे-गावुण्डुगळुं सत्रागदिन्दा-चन्द्रार्क्कं नडेवन्तागि शक-वर्षं १०९० चोन्दनेय सर्व्वधारि-संवत्सरदुत्तरायण-संक्रमण-ग्रहण-व्यतीपातदन्दु धारा-पूर्व्वकं बिट्ट वळ-वृत्ति ॥ (आगे की ६ पंक्तियोंमें दानकी विशेष चर्चा है) तुक्कद हेगडेगळ् बिट्ट नन्दा-दीविगेगे कै-गाण बोन्दु इन्तु वासुपूज्य-सिद्धान्त-देवर्त्तम्म शिष्य वृषभनाथ-पण्डितर्गेनितुवं धारा-पूर्व्वकं कोट्टर् (वे ही अन्तिम वाक्या-वयव और श्लोक)

त्रैविद्य-देव-शिष्यम् ।
देवार्च्चन-दान-धर्म्म-निरतं सततम् ।
देवव्रत-परिशुद्धन् ।
भू-विदितं पुष्पसेन मुनि-जन-विनुतम् ॥

[स` प्रथम जिन शासनकी प्रशंसामें दो श्लोक हैं। पहलेकी ही तरह होय्सल राजाओंकी उन्नतिका वर्णन। विष्णुके विषयमें कहा गया है,—मलेको अधीन करके क्या वह चुप रहा? तळकन, काञ्चीपुर, कोयटूर, मलेनाड्, तुळु-नाड्, नीलगिरि, कोळाळ, कोङ्गु, नङ्गलि, उच्चंगि, विराट्-राजा का नगर, वल्लूर,—इन सबको अपने भुजाबलसे, लीलामात्रमें जीत लिया।

जिस समय (अपनी सब उपाधियों सहित), होय्सल बल्लाल-देव दोरसमुद्रमें निवास कर रहे थे:—उसके 'गुरुकुल' की परम्परा निम्नभाँति थी:—

द्रमिळसंघान्तर्गत नन्दिसंघमें एक अरुङ्गळ-अन्वय है, उसमें बड़े-बड़े शास्त्र-पारग विद्वान् आचार्य हो गये हैं। वर्द्धमान स्वामीके तीर्थमें क्रमसे इन लोगोंके द्वारा धर्मतीर्थका विकास हुआ,—गणधर गौतम स्वामी, भद्रबाहु-भट्टारक, भूतबलि

और पुष्पदन्त-स्वामी, एकसन्धि सुमति-भट्टारक, समन्तभद्र स्वामी, भट्टाकलंक-देव, वक्रग्रीवाचार्य्य, वज्रनन्दि-भट्टारक, सिंहनंद्याचार्य, परवादि-मल्ल श्रीपाल-देव, कनकसेन श्री-वादिराज, श्री-विजय-देव, श्री-वादिराज-देव, अजितसेन-पण्डित-देव, और मल्लिषेण-मलधारि-स्वामिः तदनन्तर श्रीपाल-योगीन्द्र हुए (इनकी प्रशंसा)। इनके मुख्य शिष्य वासुपूज्य-व्रतीन्द्र हुए (इनकी प्रशंसा)।

इनके गृहस्थ-शिष्य, रत्नत्रयके समान, व•••देव, उसकी पत्नी सावियक्क, और इनका पुत्र (प्रशंसा पूर्वक) वेल्लिमें दासि-सेट्टि थे। इसकी पत्नी बोकियक्क थी। इन दोनोंकी वहिनके लड़के हेग्गड़े मादिराज तथा संकर-सेट्टि थे।

वन्दवुरमें मादिराज और संक-सेट्टिने पार्श्व-देवके लिये एक मन्दिरका निर्माण कराया, और पुष्पसेन-देवने पार्श्व-देवकी मूर्त्ति वनवायी। उन देवकी अष्टविध पूजनके लिये, मुनियोंको आहार देनेके लिये, तथा मन्दिरकी मरम्मतके लिये,— वासुपूज्य सिद्धन्ति-देव, उनके शिष्य पुष्पसेन देव, मादिराज, संकर-सेट्टि, तथा सभी प्रजा और किसानोंने (उक्त मिति को) ग्रहणके समय, ३२ विलस्तके एक डण्डेसे नापकर भूमि-दान किया (भूमिका वर्णन)। 'सुङ्क' (या चुङ्गी)के हेग्गडेने हमेशा जलनेके लिये एक हाथकी तेलकी चक्की दी।

इस तरह यह सब वासुपूज्य-सिद्धान्त-देवने अपने शिष्य वृषभनाथ-पण्डितको सौंप दिया। हमेशाकी तरह अन्तिम श्लोक। पुष्पसेन-मुनिकी प्रशंसा।]

[EC. V, Arsikere Tl., No. 1.]

३७४

विजोली;—संस्कृत।

[सं० १२२६ = ११७० ई०]

लेख श्वेताम्बर सम्प्रदाय का मालूम होता है।

[JASB, LV, p.27–32, Tr ;p. 40–46, t.]

३७५

मूडहल्लि;—संस्कृत तथा गुजराती।

[कालनिर्देश नहीं, पर सम्भवतः लगभग ११०० ई० (लु. राइस)]

[मूडहल्लि (हदिनाद प्रदेश) में, चन्न-केशवके मन्दिरकी दीवाल-स्तम्भके ऊपर]

··· ··· ··· अति पूजित-यति वर्द्धमान अपश्चिम-तीर्थनाथ ममात्मना दिश··· ··· प्रवर्त्त··· ··· ···

श्रीमद्द्रमिल-संघेऽस्मिन्नन्दिसंघेऽस्त्यरुङ्गलः।

अन्वयो भाति निश्शेष-शास्त्र-वाराशि-पारगैः॥

(दूसरी तरफ़)··· ··· ··· अजितसेन-देव-मुनिपो ह्याचार्यतां प्राप्तवान्।

[इस लेखमें द्रमिलसंघान्तर्गत नन्दिसंघके अरुङ्गल अन्वयकी तारीफ़ है। इस अन्वयमें प्रायः सभी आचार्य या मुनि 'निश्शेष-शास्त्र-वाराशि-पारग' थे।··· ··· जितसेन-देव मुनिने आचार्य पदवी प्राप्त की।]

[EC, III, Nanjangud Tl., No. 133.]

३७६

हुल्लेगेरी—संस्कृत

[बिना काल-निर्देशका, पर संभवतः लगभग ११०० ई० (?)]

[हुल्लेगेरपुर (कृष्णराजपेट्टे ताल्लुक) में, बसत मन्दिर के सामनेके स्तम्भ पर]

श्रीम··· ···सर्व्वे ने··· ···रॆ सायया मनेय मग्डुगा··· ···नित्य पूजा··ण

आसीत् संयमिना पृथ्व्यां होनेनान्यन्महातपः।

तच्छ्रंशिना शील-स्तम्भो जिनचन्द्रेण निर्मितः॥

[इस पृथ्वी पर पशु-वधके सिवाय संयमीके द्वारा प्रत्येक महातप विद्यमान था; उसको वर्णविदित करानेके लिये जिनचन्द्रने यह पाषाण-स्तम्भ खड़ा किया था।]

[EC, III, Mandya., Tl., No. 34.]

३७७

तेवरतेप्प—संस्कृत तथा कन्नड़।

११७१ ई०

[तेवरतेप्पमें, वीरभद्र मन्दिरके सामनेके पाषाणपर]

श्रीमत्परमगम्भीर स्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥
सागर-वारि-वेष्टित-समस्त-धरा-रमणी-घन-स्तना- ।
भोग विदेम्त्रिनं विदित-विस्तृत-सारताराग्रहारदिम् ।
नागरखण्ड-पत्र-परिवेष्टन्दिम् जन-नेत्र-पुत्रिका- ।
रागमनित्तु माण् दुदे मनस्-सुख-दं **बनवासि-मण्डळम्** ॥
बळसिद नन्दनावळिगळिं शुक-सङ्कुळदिं पिकाळियिम् ।
बळेदेरगिर्द्द शाळि-वनदिं भ्रमराळियिनित्तु-वाटियिम् ।
तिळेगोळदिं लता-भवनदिं कमळाकरदिं कुमुद्वती- ।
कुळदिनिदेम् मनङ्गोळिपुदो सततं **बनवासि-मण्डळम्** ॥
अदनाळ्वनखिळ-रिपु-नृप- ।
मद-मर्द्दननर्त्थिगर्त्थमं पदेदीवम् ।
पद-नत-रत्ना-दत्तम् ।
विदित-यशं **सोवि-देव**-भूतळनाथ ॥
आ-कादम्ब-कुळ-तिळकन विक्रम-प्रक्रमवेन्तेन्दडे ॥
५ अदटर्म्मेयिक्के वीरर्व्विहदनुळिदु कुम्बिक्के विद्विष्ट-भूपर् ।
म्मदवं बिदिक्के शेषाव्रतमनोसेवरोतिक्के सर्व्वस्वमं व- ।
ळिदवं तन्दिक्के मारान्तवनिप-सतियर् कण्ण-नीरिक्के पूण्डि-
क्किदना-**चङ्गाळ्व**-धात्रीपतिगे निगळवं **सोवि-देवं**-क्षितीशं ॥
(क) ॥ मदवदरातियं तविसलग्गळ-गण्ण **कदम्ब-रुद्र**नेम्- ।

हुदे देसरुन्न-मण्डळिक-गण्डर दावणियेम्बुदे दिटक्क् ।
अदिरदराति- मण्डलिक-भैरवनेम्बुदे सोवि-देवनेम्- ।
बुदे निगळंकमल्ल-नृपनेम्बुदे सत्य-पताकनेम्बुदे ॥
क ॥ पर-नृप-कन्दकने गण्-।
डर दावणि कलिये मण्डळिक-भैरवनेम् ।
स्थिर-सत्य-वाक्यने बुधि- ।
वर शरणं सोवि-देवननुपम-भावम् ॥
नागरखण्डं बनवसे-ग् ।
आगिक्कुं भुवन-बालन्तदरोळागम्- ।
बागि वले तेवरतेप्पम् ।
नाग-लता-पूग-वनदिनळवेसेगुन् ॥
आ-तेवरतेप्पदधिपति ।
भूतळपति सोवि-देव-पद-युगळ-सरो- ।
जात-मद-मधुक वि- ।
ख्यात-यशं बोप्प-गौण्डनाहव-शौण्ड ॥
वृत्त ॥ अमरेन्द्रं मन्त्रदोळ् शौचदोळमरनदीनं प्रजा-पाळन-प्र- ।
क्रमदोळ् धर्म्मात्मजं सत्प्रभुतेयोळमळाम्भोजजं निश्चयं ता-
ने महो-लोकाग्रदोळ् गावण-कुळ-तिलकं बोप्प-गावुण्डनेन्देन्- ।
दु मनस्-सम्प्रीतियिं बण्णिपुदखिळ-धरा-चक्रमानन्ददिन्दं ॥
आ-तेवरतेप्पदधिप- ।
ख्यातिय नानेननेननभिवर्ण्णिसुवेम् ।
भूतळमे ताने बण्णिपुद् ।
ईतने गुणियेन्दु बोप्प-गौडननिशम् ॥
आ-त्रिभुवन सति लक्ष्मी- ।
देविगे सौभाग्य-भाग्य-लक्षण-गुण-सद्- ।
भावाकृतियिन्दं मेल् ।

भू-विदितं **चाविकब्बे-गवुंडि** नितान्त ॥
वृत्त ॥ सण्डद वम्मि-सेट्टि-गुणि-भव्य-शिखामणि-कल्लि-सेट्टिगळ् ।
मण्डळ-वन्यरन्नरोडवुत्तिदळेम्बिनितल्ल **बोप्प-गा-** ।
वुण्डन पेम्र्मे-वेत्त सति सर्व्व-गुणान्विते **चाविकब्बे-गा-** ।
वुण्डियेनल्के वण्णिसदरार् भुवनान्तरदोळ् निरन्तरम् ।
आ-महा-प्रभुवेनिप्प तेवरतेप्पद **बोप्प-गावुण्डगं चाविकब्बे-गावुण्डि**गम् ॥
क ॥ उदय-गिरियं दिनाधिपन् ।
उदधियिनमृतांशु-मण्डलं शुक्तिकेयिन्द् ।
ओदविद मौक्तकवोगेवन्त् ।
उदयिसिदं **लोक-गौण्ड**नेम्ब महात्म ॥
वृत्त ॥ आतन माते मातु घरेगातन पूङ्केये मिक्क पूङ्के सन्द्- ।
आतन वण्टे वण्टु नेगळ्दातन बुद्धिये शुद्ध-बुद्धि मिक्क्- ।
आतन साहसं नेरेये साहसवेन्दभिवर्ण्णिकुं घरि- ।
त्रीतळवागळुं तेवरतेप्पद नाळ्-प्रभु लोक-गौण्डन ॥
वृत्त ॥ एत्तिसिदं जिनेन्द्र-गृहमं घरे वण्णिसलेय्दे तन्न मेय्- ।
वर्ट्टिसिदं प्रजा-प्रकरवं रिपु-वर्ग्गद वाय व्रागिलोळ् ।
तेत्तिसिदं पलर् व्वेदरे कूरलगं निज-कीर्त्ति-वल्लियम् ।
पत्तिसिदं दिगन्तवनिदेम् कृतकृत्यनो लोकनुर्व्वियोळ् ॥
क ॥ केरे वावि देवता-गृहव् ।
अरवन्तिगे सत्रवेम्बिवं पडि सलिपम् ।
नेरेये पर-हितविदेन्दिद् ।
अरिकेय नाळ्-गौडनेनिप लोक-गवुण्डम् ॥
व ॥ आ-महा-प्रभुविन सतिय शील-गुणवेन्तेन्दडे ॥
क ॥ **तोत्तूर गोय्द-गवुडन** ।
हेत्त-मगळ् **काळिकब्बे-गावुण्डि** जगम् ।
विट्टरिसे सकळ-शील-गु- ।

णोत्तमे नेगळ्दत्तिमब्बेयं गेलेवन्दळ् ॥
आ-**काळिकब्बे**-गवुडि क- ।
ळा-कुशले जिनेन्द्र-धर्म्म-निर्म्मळे सततम् ।
लोक-गावुण्डन कुल-वधु ।
लोक-प्रख्याते सीतेयन्तेसेदिप्पळ् ॥

स्वस्ति श्रीमत्-कळचुर्य्य-चक्रवर्त्ति राय-मुरारि भुज-बळ-मल्ल **सोपि-देव**-वरिषद नाल्कनेय **विकृत-संवत्सरद पौष्य-शुद्ध-पुण्णमी-सोमवार** उत्तरायण-संक्रमण-पुण्य-दिनदोळु **तेवरतेप्पद लोक-गावुण्डं** तन्न माडिसिद रत्नत्रय-देवर अष्ट-विधार्च्चनक्कं बन्द होद ऋषियराहार-दानक्कं श्रीमनु-महा-मण्डलाचार्य्यरप्प **भानु-कीर्त्ति-सैद्धान्तिक-देव**र्गे कालं कर्च्चि धारा-पूर्व्वकं माडि कोट्ट गद्दे (यहाँ पर दानकी विशेष चर्चा और वे ही अन्तिम वाक्यावयव आते हैं) आ-महा-प्रभु-जिन पिरिय-गुरुगळप्प **मुनिचन्द्र-देव**र तपः—प्रभावमेन्तेन्दडे ॥

वृत्त ॥ मन्तणमेम् समस्त-परमागमदोळ् पद-शास्त्रदोळ् प्रमा- ।
णान्तरदोळ् समस्त-गणितङ्गळोळोर्व्वने तज्ज्ञनागि चै- ।
त्तन-मार्गादिं नडदु विश्व-नुतं **मुनिचन्द्र-देव**-सै- ।
द्धान्तिक-चक्रवर्त्ति जसमं देसेयन्तु-वरं निमिर्च्चिदम् ॥

आ-दिव्य-मुनीन्द्रर प्रिय-शिष्यरप्प मन्त्रवादि-**भानुकीर्त्ति-सैद्धान्तिक**र गुण-प्रभावमेन्तेन्दडे ॥

पेसर्वेत्तुग्र-समग्र-देवतेयरं तं तम्म पीठाग्रदिम् ।
पेसर्गोळाल् विरुतोडिपोगि नडुगुत्तिप्पर् क्करं यक्ष-रा- ।
क्षस-गन्धर्व्व-पिशाच-भूत-फणि वेताळादि-तीव्र-ग्रहम् ।
वेसनेनेम्बुदु **भानुकीर्त्ति**-मुनिपाज्ञा-शक्ति सामान्यमेम् ॥
ञ्वरगोग्र-ग्रह-शाकिनी-विहग-भूत-प्रेत-रण्टङ्ग-भेन् ।
तर-पैशाच-निशाचराद्भुत-गणं भू-चक्रदोळ् तोरलु- ।
द्धारिसित्तमन्तदे यन्त्र ओदिदुदे मन्त्रं कोट्ट वेर् तन्त्रव- ।

च्चरि **सैद्धान्तिक-भानुकीर्त्ति-मुनि**नाथोग्राशे सामान्यमे ॥
श्रीमन्मूल-पदादि-सङ्घ-तिलके श्री-कुण्डकुन्दान्वये ।
काणूर्-न्नाम-गणोत्स-गत्स-शुभगे भू-तिन्त्रिणीकाह्वये ।
शिष्यः श्री-**मुनिचन्द्र-देव-यमिनः** सिद्धान्त-पारङ्गमो ।
जीयाद् **बन्दणिका-पुरेश्वरतया** श्री-**भानुकीर्त्तिर्म्मुनिः** ॥

[जिन शासनकी प्रशंसा। बनवासि-मण्डलमें नागरखण्डका स्थान वही था जोकि स्त्रीके शरीरमें स्तन्यका होता है । बनवासि-मण्डलका वर्णन । इसके शासक सोवि-देव थे, जो कि कादम्ब-कुलके तिलक थे । उसके पराक्रमकी प्रशंसा,-चङ्गाळ्व राजाको हराकर जञ्जीरोंसे जकड़ दिया था । इससे उसका नाम कदम्ब-रुद्र, गण्डर-दावणि, मण्डलिक-भैरव, निगलंक-मल्ल, तथा सत्यपताक पड़ गया था ।

नागरखण्डकी ही तरह, तेवरतप्पे भी बनवसेका तिलक (भूषण) था, और उसमें नागकी लतायें तथा पूग (सुपारी) के बगीचे थे । सोवि-देव राजाके चरण कमलोंका भ्रमर, तेवरतेप्पका अधिपति बोप्प-गौण्ड था; उसकी प्रशंसायें । उसकी पत्नी चाविकब्बे-गवुडि थी, जिसके भाई बम्मि-सेट्टि तथा कल्लि-सेट्टि थे । बोप्प-गावुण्ड और चाविकब्बे-गवुण्डिके लोक-गवुण्ड उत्पन्न हुआ था, जो तेवरतेप्पका नाळ्-प्रभु था । उसने एक जिनेन्द्र-मन्दिर बनवाया था, एक तालाब, एक कुँआ, और मन्दिरके लिय एक चट्टच्चा (Water shed) तथा एक सत्र भी खोला था । उसकी पत्नी जो तोतूर गोन्ड-गवुड तथा काळिकब्बे-गवुण्डिकी पुत्रि थी—ने प्रसिद्ध अत्तिमब्बेकी ही भाँति दुनियाँमें प्रशंसा प्राप्त की थी; उसकी प्रशंसायें ।

कळतसूर्य्य-चक्रवर्त्ति राय-मुरारि भुजबळ-मल्ल सोवि-देवके चौथे सालमें (उक्त-मितिको),—तेवरतप्प लोक-गावुण्डने महा-मण्डलाचार्य्य भानुकीर्त्ति-सैद्धान्तिक-देवके चरणोंका प्रक्षालन कर (उक्त) भूमि दान दिया । हमेशाके अन्तिम श्लोक ।

गुरु मुनिचन्द्र-देव और उनके शिष्य भानुकीर्त्ति-सैद्धान्तिक की प्रशंसा । ये मुनि यन्त्र, मन्त्र और तन्त्र में बहुत हुशियार थे ।

मूलसंघ, कुण्डकुन्दान्वय-काणूर्-गण तथा तिन्त्रीणि-गता (गच्छ) के मुनि-चन्द्र-देव-यमीके शिष्य भानुकीर्त्ति-मुनि—जो वन्दणिका-पुरके अधिपति थे—जयवन्त हों।]

[EC, VIII, Serab. Tl., No. 345.]

३७८

अङ्गडि—संस्कृत तथा कन्नड़-भग्न।

[शक १०९४ = ११७२ ई०]

[अङ्गडि (गोणीबीडु परगना) में, बसदिके पासके पाषाणपर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥
श्री-नन्दि-ना............होन्नंगिय वसदियरं आचङ्ग............होसतुर्-कम्बरस मा......न्तङ्गनिडिसिद शक...१०९४ नन्दन-संवत्सर (यहाँ खतम हो जाता है।)

[जिन शासन की प्रशंसा। होसतुरके कम्बरसने (उक्त मितिको) होन्नङ्गीकी वसदिके लिये दान दिया।]

[EC, VI, Mudgere tl., no 12.]

३७९

मर्कुली—संस्कृत तथा कन्नड़-भग्न।

[शक १०९५ = ११७३ ई०]

(मर्कुली [ग्राम परगना] में, किलेके अन्दरकी बस्तिके पाषाणपर)

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥
श्रीमद्द्रमिलसंघेऽस्मिन् नन्दिसंघेऽस्त्यरुङ्गलः ।

अन्वयो भाति निश्शेष-शास्त्र-वाराशि-पारगैः ॥
श्री-कान्तर् **य्यदुकुल**-र- । त्नाकरदोळ् कौस्तुभादिगळवोल् पलरुं ।
लोकोपकार-परिणत- । रेकीकृत-सकळ-राज-गुणरप्पिनेगं ॥
मळनेम्बनागे **यादव** - । **कुळ**दोळ् पुलि पाये कण्डु मुनि पुलियं **पोय्** ।
सळवेने पोय्युदरिं पोय्- । सळ-वेसरवनिन्दमागे तद्वंशजरोळ् ॥
विनयं प्रतापमेम्बी । जननाथोचित-चरित्र-युगदिं जगदोळ् ।
जन-नयनमेनिसि नेगल्दं । **विनयादित्यं** समस्त-भुवन-स्तुत्यं ॥
आतंगति महिमं हिम- । सेतु-समाख्यात-कीर्त्ति सन्मूर्त्ति-मनो- ।
जातं मर्द्दित-रिपु-नृप- । जातं तनुजातनाद**नेरेयङ्ग**-नृपम् ॥
एरेगिद जनक्के पोम्-मुगि- । ळेरगिदवोळु लोकवङ्गमेने पोम्मळेयं ।
करेवनुरदेरगदहितगेरगिद व्रर-सिडिळेनिप्पनेरेयङ्ग-नृपं ॥
बल्लिदरवनीपतिगळो- । ळेल्लं धर्म्मार्थकामसिद्धिवोलवनी- ।
वल्लभरातन तनयर् । **बल्लाळं विट्टि-देवनुदयादित्यम्** ॥
मूवररसुगळोळं तं । भाविसे मध्यमनदागियुं नृप-गुण-सद्- ।
भावदिनुत्तमनाद । भावि-भवद्-भूत-जिष्णु-**विष्णु** नृपाळम् ॥
मलेय साधिसि माण्डने **तळवनं काञ्चीपुरं कोयतूर्** ।
म्मळेनाडा-तूळ् नाडु नीलगिरिया-कोळालमा-कोङ्गु नं- ।
गलियुच्चंगि विराट-राज-नगरं **वल्लूरि** वेल्लं स्व-दोर्- ।
व्वलदिं लीलेये साध्यमादुवेणेयार् **विष्णु**-क्षमापाळनोळ् ॥
पडुवण तेङ्कण मूडण । गडिगळ् तन्नाळ्व-नेलके मूरु-समुद्रं ।
बडगळ् **पेर्द्दोरे** तां गडि । गडियिल्ला- **विष्णु** किडसिदाहितगेन्तुम् ॥
मण्डलमं निजमं द्विज- । मण्डलिगं देवतालयक्कं कोट्टम् ।
खण्डेय वट्टलेयिं पर- । मण्डलमं वीर-**विष्णुवर्द्धन**नाळ्दम् ॥
अन्तेनिसिद विष्णु मही- । कान्तन तनयं नयानुरूपोपायम् ।
सन्तत-भुज-प्रतापा- । क्रान्तं-पदं **नारसिंह**नाहव-सिंहम् ॥
रिपु-सर्प्पद्-दर्प्प-दावानळ-ब्रहळ-शिखा-जाळ-काळाम्बुवाहं ।

रिपु-भूपाळ-प्रदीप-प्रकर-पटुतर-स्फार-झञ्झा-समीरन् ।
रिपु-नागानीक-तार्क्ष्यं रिपु-नृप-नळिनी-षण्ड-वेतण्ड-रूपं ।
रिपु-भूभृद्-भूरि-वज्रं रिपु-नृप-मद-मातंग-सिंहं नृसिंहन् ॥
स्थिरने भूभृद्धीश्वरं स-घनने लक्ष्मी-सुतं मूर्त्ति-ना- ।
डरने विष्णु-तनूभवं सुमटने वां नारसिंहं गडन् ।
स्थिर-तेजस्वियें विश्व-विक्रम-गुणं नैसर्गिकं नोळ्पडी- ।
नरसिंहक्कॆणे......गुणाद्यारोप-भूपाळकर् ॥
आ-विभुविन पट्ट-महा- । देवी पतिव्रते चरित्रदिन्दं सीता- ।
देविगे मिगिलादेचल- ! देवी समस्तार्थ-कल्पवल्लियेनिप्पळ् ॥
अन्तेचलदेचल-देविय- । नन्तयशो-नाम्न-गर्भ-दुग्धाम्बुधियिं ।
कान्ताङ्गनत्रि-पुत्रन । कान्तिहरं ध्वान्तहारि कुवलय-मित्रम् ॥
सकळ-कळा-परिपूर्ण । सकलोर्व्वी-नयन-सुरवदनकळंक मत्- ।
तकुटिलनपूर्व्व-नव-शी । तकरं बल्लाळ-देवनुद ... गोन्दं ॥
विनयं विक्रान्ति पुण्योदयमिवरोळगे लोकैक-सन्मान-सम्पत्- ।
वनितैकायत्त-राज्यं दृढङ्गेनिपुदी-स्थैर्य्य-सत्-कीर्त्ति-सम्पत्- ।
चि-निमित्तं पेट्टु मुं सुप्पुरि-क्ष्वेडु भयायत्त...दि बल्ला- ।
ळन राज्यं राम-राज्यं सकळ-जन-मनः-प्राज्यमत्यन्त-पूज्यम् ॥
विनय-श्री-निधियं विवेक-निधियं ब्रह्मण्यनं पूर्ण-पु- ।
ण्यनसुदाम-यशोर्थियं जित-जगत्-प्रत्यर्थियं सर्व्व-सज्- ।
जन-संस्तुत्यननुद्भवद्वितरण-श्री-विक्रमादित्यनन् ।
मनुजेशर् यदु-राज-राजननदेन्बल्लाळनं पोल्वरे ॥
इदु सर्व्व-ग्रासं गोळ्- । पुडु मास्वद्राज-मण्डळङ्गळ निर्मो- ।
चद...म्बिनमी- । -यदुपति बल्लाळ-राहु-राहु विचित्रन् ॥
दिग्गिभङ्गळ् मद-विह्वळंगळ् अचळं कल् कूर्म्मनिन्तोम्मेयुं ।
मोगमीयं भुजगाधिपं विष-धरं सारल्कयोग्यङ्गळेन्- ।
दु गुणोदग्र-समग्र-लक्षण-लसद्दोर्दण्डदोळ् सन्तोषं ।

मिगे भू-कामिनियिर्द्द्पळ्······बल्लाळ-भूपालना ॥
आ-बल्लाणन राज्य- । श्री··············· ।
श्री-बूचि-राजनेसदनि-ळा-बुधवर्गनिमित्त-बान्धव······॥
······कुळित-श्रीपाद-परम··· ··विनुत-श्रीपाल-त्रैविद्य-सेवा-सम्पादित-सकल-शास्त्रालोकं·····गुणवति···देवनय्यनेसेवा-सुगव्वे ताथि···········दक्कुला-ङ्गने···नलदिं···गुण-सम्पन्नर् स्सुतरु राय·····मल्लियणदेवनुं·····वरदं···॥···शास्त्रद·····आश्रिताशेष-विघ्नमं परिहरि...म्नभीष्टव···अतीत-नयं कोन्दु कय्योळा···गणि प्रधानते वृषान्वितेया···समुद्भव स्थिरतर शक्तिये···सुतं······

सर्व्वजनसम्मदप्रद- । नुर्व्वीश्वर-मन्त्रि-मण्डलालङ्कारम् ।
सर्व्वोपका·····च- । तुर्व्विध-पाण्डित्य-मण्डितं बूचरसं ॥
वाचक-वाचस्पति··।···चार्य्यं श्राव्य-काव्य-रस·····अर्त्थी-·।
लोचन-चक्षु परार्त्थद ।·····प्रिय-हितार्त्थ-वाचं बूचम् ॥
कन्नडदोळ् संस्कृतदोळ् । चन्नमेने········मे- ।
णिन्निनितुमिं पेररेने ।······उभयकवितेयिं बूचणनोळ् ॥
सिद्धान्तार्त्थमशेषं । शुद्धान्त···यादवं चतुरुपधा- ।
शुद्धं तत्त्वार्थसंग्रह- ।···ग्रह-कृतार्त्थनो बूचरसं ॥
पडेदर्त्थं जिन-पूजेगं···अभिषवक्काहार-दानक्के शी- ।
लोडेयर्गाश्रितगर्गर्त्थिगळ्गे विबुधर्ग्गिष्टर्गे शिष्टर्गे···।
···गे जिनालयक्के सततं सम्पूर्णमागिप्पुडेन्- ।
दोडे मन्त्रीश्वर-बूचि-राजने वलं धन्यं पेरर् द्धन्यरे ॥
आङ्गिरस-गोत्र··· । ···निळयं विनूत-जननं परिशुद्- ।
धाङ्गिरस-बुद्धि कलि-का- । लाङ्गिरस जाति···डं बूचरसं ॥
आ-पुरुष-रत्नमे··· । ···नृप-बल्लाळ-मन्त्रि-बूचङ्गे नृप- ।
श्री-पूर्ण-पुण्ये शान्तले । रूपातिशयानुरूप-मति सतियादळ् ॥
पति-भक्तियिन्दे दान-गुणदुन्- । नतियिं जिनपूजनाभिषवणोत्सवदिं ।
क्षिति-सुतेयं···मन्वेय । नतिशयदिं शान्तियक्कनुळिदवरळ्वे ॥

······नयमं । विनेय-ततिगिन्तु पूर्ण्ण-यशमं पेट्टल्म्य ।
वन-विनुते शान्तियक्कं । जिन-गुण-सम्पत्ति नोम्पियुद्यापने··॥
···आराध्यननून-दान-गुणदिं विक्रान्तियिं सर्व्व-सत्- ।
वन-मान्यर् मरियानेयुं भरततुं दण्डाधिपर् चन्देविर् ।
त्तनगि·····वन-प्रस्तुत्यनन्तत्रि······ ।
··पुण्यात्मन धर्म्म-पत्निगेणेयार् स्सान्तव्वेगी-कान्तेयर् ॥
आ-शान्तल-देविगमति ।···गुरु मन्त्रि-चूचणङ्गं रा- ।
···राज पुट्टिद- । नानि यत्नोळुमेगवा-रुद्रङ्गम् ॥
रवियं तेजदिन् इन्द्र-भूरुह···दत्तियू····· ।
भवदिं·· ·····शाक्यङ्गळर् ।
पुवु···न पेङ्गळिं निमिर्पदिं धर्म्मङ्गळं कूडे मा- ।
························· ·····॥
·····किरियं । तोयधि-गम्भीरनाहितोत्तम-दान- ।
श्रेया·····वि । नेयोपायं········॥
······विस- । लरि···पर-वधु परात्र्थमेन्ददळिपल् ।
केरेयं वेडिद वन्दिगे । मरेदुं········ ॥

······स्वस्ति समधिगतपञ्चमहाशब्द महामण्डलेश्वरं द्वारावतीपुरवराधीश्वरं यादवकुळाम्बरद्युमणि सम्यक्त्व चूडामणि मलेपरोळ् गण्ड तळकाडु-कोङ्गु-नङ्गलि-गङ्गवाडि-नोणम्बवाडि-वनवसे-हानुङ्गल्-गोण्ड······नसहाय-शूर निश्शङ्क-प्रताप-होय्सळ-वल्लाळदेवर श्रीमद्राजधानी-दोरसमुद्रदल्लि शक-वर्ष १०६५ नेय विजय-संवत्सरद श्रावण शुद्ध ११ आदिवारदन्दु तम्म पट्ट-बन्धोत्सवदोळ् महा-दानङ्गळं माडुत्तमिप्प समयदोळ् श्रीमत्सन्धिविग्रही··मय्यङ्गळ् ओगेनाडोळगण मरिकलि योळ् तावु माडिसिद त्रिकूट-जिनालयक्कावूरं देव·पूजेगमाहार-दानक्कं जीर्ण्णोद्धारक्कमा-चन्द्रार्क्कतारं-वरं नडवन्तागि पादपूजेयं तेत्तु सर्व्व-नमस्यवागि दत्तियं धारा पूर्व्वकं माडिदु श्रीमद्-द्रमिळ-संघद्रुङ्गळान्वयद श्रीपाळ-त्रैविद्य-देवर शिष्यरप्प श्रीमद्वासुपूज्य-सिद्धान्त-देवर कालं कर्चि

धारेयेरेडु कोट्टरन्तु देव-दा······(६ अस्पष्ट पंक्तियोंके बाद वे ही अन्तिम श्लोक आते हैं) भद्रमस्तु जिन-शासनाय। मङ्गळमहा श्री श्री श्री श्री विजय-संवत्सरद कार्त्तिक शु० ८ ···वारदन्दु केम्मदद माचय्यनुं·· अधिकारिगळगिलेय··) सोमेयनुं वाळचन्द्र-देवर गुड्ड हेग्गडे-चल्लय्यनु मरिकलिय त्रिकूटजिनालयक्का-वूर·········आगन्तुक-मदुवे-वणिगे-मग-गाण-बोळवारु-होरवारोळगागि समस्त-सुङ्कवमा-चन्द्रार्क्क तारं-बरं नडवन्तागि धारेयेरेडु बिट्टर् (वे ही अन्तिम वाक्यावयव) ।

[जिन शासनकी प्रशंसाके बाद द्रमिल-संघके अन्तर्गत नन्दिसंघके अरुङ्ग-लान्वयकी भी प्रशंसा।

यदुकुलके राजाओंमेंसे एक 'सल' नामका राजा था। इसका मुनि के 'पोय्सल' कहनेसे चीतेको मारनेसे 'पोय्सळ' नाम पड़ा। उसीके वंशमें (प्रशंसाओंको छोड़कर) विनयादित्य हुआ, जिसका पुत्र एरेयङ्ग हुआ। उसके तीन पुत्र—बल्लाल, बिट्टिदेव (विष्णुवर्द्धन) और उदयादित्य हुए। इनमेंसे बीचका विष्णु प्रधान हो गया। मलेयको लेकर क्या वह चुप बैठा? तळवन, काञ्चीपुर, कोयतूर, मले-नाड्, तुलु-नाड्, नीलगिरि, कोळाल, कोङ्गु, नङ्गलि, उच्चंगि, विराट-राजका नगर वल्लूर,—इन सबको, जैसे लीलामात्रमें ही, अपने भुजबलसे अधीनस्थ कर लिया। पूर्व, दक्षिण और पश्चिममें उसके राज्यकी सीमा समुद्र था, उत्तरमें पेर्द्दोरेको उसने अपनी सीमा बनाया। उसने अपना निजी देश ब्राह्मणों और देवोंको दे दिया, और स्वयं अपनी तलवारके बलसे जीते हुए विदेशी देशों पर राज्य करने लगा। उसका पुत्र नारसिंह था, जिसकी पत्नीका नाम एचल-देवी था। उन दोनोंका पुत्र बल्लाल-देव हुआ, जिसका राज्य रामके राज्यकी तरह समृद्ध था।

उसके राज्यमें बूचि-राज (प्रशंसा सहित) बड़े प्रधानकी तरह चमका। ये दोनों ही भाषा—कन्नड़ और संस्कृतके जानकार तथा दोनों ही कविताकी रचना करते थे। उसकी पत्नी शान्तल थी, जिसके पिता (और चाचा)

मरियाणे और भरत ये। शान्तलदेवी और मन्त्री बूचनसे रा······राव उत्पन्न हुआ था।

जब (अपनी उपाधियों सहित) होय्सळ-वल्लाल-देव (उक्त मितिको) राजधानी दोरसमुद्रमें था और अपने राज्याभिषेकके उत्सवमें बहुत दान (भेंट) बाँट रहा था, सन्धिविग्रही मन्त्री बूचिमय्यने, सिगेनाड्में मरिकलोमें त्रिकूट-जिनालय बनवाकर उस गाँवको, देवताकी पूजाके प्रबन्धके लिये, आहार दान देने तथा मन्दिरकी मरम्मतके लिये द्रमिल-संघके अरुङ्गळान्वयके श्रीपाल-त्रैविद्य-देवके शिष्य वासुपूज्य-सिद्धान्त-देवके चरणोंका प्रक्षालन करके उनको भेंट कर दिया। (ये ही अन्तिम श्लोक।)

तथा हेग्गडे-चल्लय्यने मन्दिरके लिये उस गाँवमें शादी, मृत्यु, करघे और कोल्हुओंके ऊपर लगे हुए कर, बाज़ारमें आयात माल पर तथा स्थानीय बिक्री पर *लगी हुई चुङ्गीका पैसा भी दिया।*]

[E C, V, Hassan tl., no 119.]

३८०

मुगुलूर;—संस्कृत तथा कन्नड़-भग्न

[वर्ष उद्गारी ?]

[मुगुळूर् (बैलहळ्ळि परगने) में, बस्तीके सामनेके पाषाणपर]

जयति सकल-विद्या-देवता-रत्न-पीठं

हृदयमनुपलेपं यस्य दीर्घं स देवः।

तदनु जयति शास्त्रं तस्य यत् सर्व्व-मिथ्या-

समय-तिमिर-घाति ज्योतिरेकं नराणम् ॥

श्रीमद्द्रमिळ-संघेऽस्मिन्नन्दि-संघेऽस्त्यरुङ्गळः।

अन्वयो भाति निश्शेष-शास्त्र-वाराशि-पारगैः ॥

श्रीमत्त्रैविद्यविद्यापतिपदकमलाराधनालब्धबुद्धिः

सिद्धान्ताम्भोनिधान-प्रविसरदमृतास्वादपुष्ट प्रमोदः ।
दीक्षा-शिक्षा-सुरक्षाक्रमकृतिनिपुणस्सन्ततं भव्य-सेव्यः
सोऽयं दाक्षिण्य-मूर्त्तिर्ज्जगति विजयते **वासुपूज्य-व्रतीन्द्रः** ॥
श्रीमतु-**वज्रणंदि-देवर** शिष्यरु मुगुळिय **पारुश्व-देवरु रुधिरोद्गारि-संवत्सरद** भाद्रपद-ब १२ ब्र ॥... ... ...

लेख स्पष्ट है ।

[EC. V, Harsam Tl., No. 128.]

३८१

बेक;—संस्कृत तथा कन्नड ।

[शक १०६५ = ११७३ ई०]

[जै. शि. सं०, प्र. भा.]

३८२

दोहद;—संस्कृत-भग्न

[श्वेताम्बर सम्प्रदायका लेख]

[IA, X, p. 158, t.]

३८३

करडालु;—कन्नड ।

[काल निर्देश रहित, पर ११७४ ई० ? (लू. राइस) ।]

[करडालुमें, ध्वस्त बस्तिमें एक खम्भेपर]

अनुपम-पुण्य-भाजने जिनेन्द्र-पदाब्ज-विलीन-चित्ते पा- ।
वन-सु-चरित्रे **हर्य्यले-महासति** तन्नसान-कालदोळ् ।

मनुज-मनोधनं करेदु बूचय-नायक केम्मगेन्न नीम् ।
कनस्निनोळन्दं नेनेयदिर्नेने सात्वतमप्प धर्म्ममम् ॥
धर्म्मननागळुं कुददे माल्पुदु माडिदोडप्पुदाबुदा- ।
धर्म्मदिनेम्बेयप्पोडे सुरेन्द्र-नरेन्द्र-फणीन्द्र-राज्यमन्- ।
तोर्म्मोदलप्पुदागि कडेयोळ् वर-मुक्तियनीवुदन्तरिम् ।
धर्म्म दनागु सत्य-निधि बूचन-नायक वेडिकोण्डे नाम् ॥
एनगनुमोदन-पुण्यम् ।
निनगं निस्सीममप्प पुण्यं साम्बुन् ।
मनमोसेदु माडिसोन्दम् ।
जिन-गृहमं बूचि-देव धर्म-धुरीणा ॥
एन्देन्दळेल देवर- ।
नेण्टुं नीने पूर्विति निक्कयनम् ।
कुन्दि करिगन्द दन्ता- ।
नन्ददे रचिपुदुपेच्चे गेय्दडे दोषम् ॥
तदनन्तरमभिषवमं ।
मुददिं जिन-पतिगे माडि गन्धोदकमन् ।
सदमळ-चरित्रे कोण्डळ् ।
वेदरिपेनव-वज्रमनेम्बो-मनदुत्सवदिन् ॥
तोरेदु जिनेन्द्र-चन्द्र-पद-सन्निधियोळ् पद-पद्मकङ्गळम् ।
मरेयदे मोरेनुचरिसुतुं नेरे तुचिद मोह-पाशमन् ।
परिदु सगवनं पोगळे हृत्पयदोळे नारि तनन्तु तैप्पु कण् - ।
दरेदवोलेन् समाधि-विधियिन्दिरदेय्दिदळिन्द्र-लोकमन् ॥
अरवं केळदमरावर्ता-पुरद-देवी-सङ्कुळं अन्तु नू- ।
पुरमन्तुत्तिन हारमं कटकमं केयूरमं वज्रकुण्-।
डुरमं माणिक्यदोलेयं तुडिसि बेगं देवि नीनेर रा- ।
ग-रसं•• •••मिगली-विमानमनेनुत्तं तन्दवर् स्वाञ्चिदर ॥

पेरि विमानमं बरे सुराङ्गनेयर् नळि-तो [ळ]... ... ... ।
त्तोरुविनं महोत्सवदे सेसयनिंक्के सुरानक-स्वनम् ।
मीरे घनाघन-ध्वनियनेत्तिद सत्तिगे चन्द्र-विम्बमम् ।
वीरे विलासदिं विडिदु चामरमिक्कि समन्तु पोकळा- ।
नीरे महानुभावे सति **हर्य्यल-देवि** सुरेन्द्र-लोकमम् ॥

[(प्रशंसा सहित) महासती हर्य्यलेने अपनी मृत्युके समय, अपने पुत्र बूवय-नायकको बुलाकर कहा,—स्वप्न में भी मेरा ख़याल न करना, लेकिन धर्म्मका ही विचार करना । हमेशा धर्म्म करो, क्योंकि ऐसा करने से तुम्हें इनाम (जिनके नाम दिये हैं) मिलेगा । हे बूवि-देव ! यदि मुझे और तुझे दोनोंको पुण्योपार्जन करना है, तो जिन मन्दिर बनवाओ । मेरे देवके मित्रोंका (?) हमेशा आदर करना और अपने लघु चाचाका हमेशा खयाल रखना । इसके बाद, जिनपतिपर लेप करके, उसने चन्दनका जल लिया इस निश्चयसे कि वह अपने तमाम पापोंको धो दे ।

तब, जिनेन्द्रके चरणोंकी उपस्थितिमें, बिना भूले पाँच शब्दों (पञ्च नमस्कार मंत्र) को बहुत जोरसे उच्चारण करते हुए, जिन इच्छाओंके जालसे वह घिरी हुई थी, उसे तोड़ते हुए, स्त्री हर्य्यलेने, समाधिके आश्रयसे इन्द्रलोकमें प्रवेश किया ।]

[EC, XII, Tiptur Tl, No. 93]

३८४

करडालु;—कन्नड ।

वर्ष जय [= ११७४ ई० ? (लु. राइस) ।]

[करडालुमें, ध्वस्त बस्तिमें एक खम्भेपर]

... ... श्री-चान्द्रायण-देवर... ... **ह-(हरि)हर-देवि** ॥
स (श) तपत्र-त्रबदिं सरोवर-कुलं मेरु प्र-कूट-प्रभोन्- ।

नतियिन्द्रद्विजेयि मदेभ-घटेयि सैन्यालि सन्-मार्ग•••••• ।
•••••• काश्य-निकल्पमेन्तेलगुनेन्ती-लोकदोळ् लोक-लं- ।
स्तुत चन्द्रायण-देवरिन्देलेगुवी-श्री-कोण्डकुन्दान्वयम् ॥
एसेव कुवाळिगाश्रित-जनक्कनुरागदोळित्तु मूचवा- ।
दरिसुव दानदिन्दे हुर-मूलमनेोळिगळेन्दे वण्णिकुन् ।
परम-जिनेन्द्र-पाद-कमळार्च्चन-निभर-भक्ति-युक्तेयम् ।
हरिहर-देवियं नेगळ्द् शासन-देवियनी-धरा-तळम् ॥
वर-जय-(लं) वत्सरं विनुत-जेष्ठ-युतं सित-पक्षमष्टमी- ।
परिगतमिन्दुवारदोळनिन्दित-पञ्च-पदङ्गळं सुखोत्- ।
कर-निळयङ्गळं नेरेये तन्नोळे•••• ••••सुतुं समाधियिम् ।
हरिहर-देवि-विश्व-विबुध-स्तुतेयेय्दिदळिन्द्र-लोकमम् ॥
निरुपमेयं चरित्र-युतेयं वनिता-जन-रत्नेयं मनो- ।
हर-जिन-मार्ग-वारिनिधि-चन्द्रिकेयं सुकृतैक-पुञ्जेयम् ।
पर-हित-चित्तेयं वगेयदन्तकनेन्व दुरात्मनोय्दनी- ।
हरिहर-देवियं विबुध-वन्दितेयं भुवनाभिरामेयम् ॥

जिनेश्वर नमो वीतरागाय शान्तये नमोऽस्तु ॥

[कोण्डकुन्दान्वयके चन्द्रायण-देवकी प्रशंसा,—जिनकी गृहस्थ-शिष्या हरिहर-देवी थी। उसकी भक्तिकी प्रशंसा। (उक्त सालमें), पञ्च-नमस्कार मन्त्रका उच्चारण करते हुए, समाधिके द्वारा, उसने इन्द्रलोक प्राप्त किया। जिनेश्वर, वीतराग और शान्तके लिये नमस्कार हो।]

[EC, XII, Tiptur, Tl, No, 94.]

३८५

हेरगू;—संस्कृत तथा कन्नड़।

वर्ष जय [११७४ ई० ? (लू० राईस)]

स्वस्ति श्रीमन्महामण्डलेश्वरं **द्वारावतीपुर**वराधीश्वरनुं कोङ्गु-नङ्गलि-गङ्गवाडि-नोणम्ववाडि-वनवसे-हानुङ्गलु-गोण्ड भुजवल वीरगङ्गनसहायशूर निश्शङ्क-प्रताप होय्सळ-**श्रीवल्लाळ-देवरु दोरसमुद्र**द राजधानीयल्लि सुख-सङ्कथा-विनोददिं पृथ्वी-राज्यं गेय्युत्तमिरे **जय**संवत्सरद पुष्यदमावासे-मंगळवार-व्यतीपात-उत्तराषाढ़ा-नक्षत्रदन्दु **हेरगिन** वसदिगे मोदलु गद्यान १ क्कं वळि-सहित्वागि गद्याणविप्पत्त-नाल्कक्कं भूमियं धारापूर्व्वकं माडि विट्ट स्थल हिरिय-केरेय किव्व-यललु विट्टिग-गट्टवोन्दु ऊरिन्द हडुवण होलदल्लि बेद्दले नाल्वत्तेरडु गेण गळेयलु कम्भ ३२½ विट्ट दत्ति ॥

गतलीलं लाळनाळम्वित-वहळ-भयोग्र-ज्वरं गूर्ज्जरं सन्- ।
धृतशूलं गौळनङ्गीकृत-कृशतर-सम्पल्लवं पल्लवं चू- ।
र्ण्णित-चूळं चोळनादं कदन-वदनदोळ् भेरियं पोय्सेवीरा- ।
हित-भूभृज्जाळ-काळानळनतुलवलं **वीर-वल्लाल-देवम्** ।
मनमोल्दुद्यद्यशश्श्रीपति नेले मोदलागल् सल्वन्तेरळ्-पोन्- ।
ननपारौदार्य-पर्य्युन्नतनुमुदधियुं मेरुवा-चन्द्रनुं निल्- ।
विनवस्युत्साहदिन्दं पेरगिन जिनगेहक्के विट्टं पुरन्ध्रो- ।
जन-लीलानङ्ग-रूपं मथन-जय-भुजं **वीर-वल्लाल-देवम्** ।
अतिशोभाकरमप्प विष्णुविन वक्षस्थानदोळ् लक्ष्मियुन्- ।
नति वेत्तिर्प्पवोलिर्क्कें कीर्त्ति-युतनोळ् श्री-चामनोळ् कूडि सं- ।
गत-सत्वर्व्वहु-पुत्ररं पडेवुतं **जक्कव्वे** चन्द्रार्क्करं ।
क्षितियुं मेरु-नगेन्द्रमुळ्ळिनेगमिं भद्रं शुभं मङ्गळम् ॥
इवनीयन्ददिनेय्दे पालिसिदवर्ग्गिष्टार्त्थ-संसिद्धि सं- ।

भविकुं कोण्डंळिदङ्गे गङ्गे गये केदारं कुरुक्षेत्रमेम्ब् ।
इवरोळ् पेसदे पावरं गोरवरं गो-वृन्दमं पेण्डिरम् ।
तवे कोन्दिक्किद पापमेय्दुगुमवं वीळ्गुं निगोदङ्गलोळ ॥
स्वदत्तां परदत्तां वा यो हरेत वसुन्धराम् ।
षष्टि-वर्ष-सहस्राणि विष्टायां जायते कृमिः ॥

[इस लेखमें बताया गया है कि जब (अपनी उपाधियों सहित) होय्सल वल्लाल-देव शाही नगर दोरसमुद्रमें था, और शान्ति से राज्य कर रहा था— (उक्त मितिको) हेरगूकी वसदिके लिये (उपर्युक्त) भूमि-दान किया । (उसकी प्रशंसा, जिनमेंसे एक यह भी है) जब वह प्रयाण करता था, तो लाड़, गुर्ज्जर, गौल (ड), पल्लव, और चोल राजाओंको भयका सञ्चार हो जाता था ।]

[EC, V, Hassan, Tl., No. 58.]

३८६

बिजोली—संस्कृत

[सं० १२३२ = ११७५ ई०]

लेख श्वेताम्बर सम्प्रदायका मालूम होता है ।

[JRAS, 1906, p. 700-701.]

३८७

क्यातनहल्लि—कन्नड़ ।

मन्मथवर्ष [११७२ ई० (लू० राइस)]

[क्यातनहल्लि (क्यातनहल्लि तालुके) में, कोदण्डराम मन्दिरके पत्थर पर]

श्रीमत्परमगम्भीर-स्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

स्वस्ति श्रीमन्महामण्डलेश्वर तळकाडु-गङ्गवाडि-नोणम्बवाडि-बनवासि-हानुङ्गलु-

गोण्ड भुज-बल वीर-गङ्ग असहायशूर निःशङ्कप्रताप **होय्सळ-वीर-बल्लालदेव** श्रीमद्-राजधानी **दोरसमुद्रद** नेलवाडिनलु सुक (ख)-संकथा-विनोददिं राज्यं गेवुत्तिई(रे) **मन्मथ-संवत्सरद माग्र्गसिर-सु १ आदिवारदन्दु श्रीयादव-नारायण**-चतुर्व्वेदि-मङ्गलदलु श्रीकरणद कलियणन कोडगेयोळु अय्वत्तु-कोळग गद्देयं साहिर-कोळग बेद्दलेयं श्रीकरणद हेमाडे···ळयण्णन कय्यलु **बल्लाळ-दे**···गे क्रयद होन्न कोट्ट सर्व्व-बाधा-परिहारवागि **कोडेहाळ-बसदिगे** चन्द्रार्क्क-तारम्बर सल्वन्तागि धारापूर्व्वकं माडि येरेयण विट्ट दत्ति ।

[जिस समय होय्सळ **वीर-बल्लाल-देव** राजधानी दोरसमुद्रमें रहते हुए शासन कर रहे थे, उस समय कोडेहाल-बसदिके लिये कुछ जमीन **यादव-नारायण** अग्रहारमें खरीदी गयी थी और वह बिना किरायेके दी गयी थी ।]

[EC, III, Srirangapatan Tl., No. 146]

३८८

श्रवणबेल्गोला—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[शक १०९९ = ११७६ ई० (कीलहौर्न)]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

३८९

एलेवाल;—कन्नड़-भग्न

[शक १०९९ = १२३७ ई०]

[एलेवालमें, बरम-देव मन्दिरके पासके पाषाणपर]

··· ··· ··· ··· सेवु ॥ ··· ··· ··· ··· सोकदिन्दं वळसिद्दु ··· ··· ··· ··· ··· ··· नागवल्लि-कुळदिं जम्बीरदिन्दं ··· ··· ··· एडं जनियिसे नन्दन-नन्दिदन् ··· ··· ··· ··· ···प्पनी-वनप ··· ··· ··· ··· **नागर-खण्डद**

... ... वरिसि चन्द्रादित्यरळ्ळन्नेगं चिर-लग्नं वरे-पट्ट ... ... लि
त्यरिनियोळु त्योद्यनेनलु कदम्ब ... ...विपति सोयि-देव-भूपति-तिळकं
जन-नुत-कदम्ब-वंश व ... ... तिक्कु विददर विरदं किद्दु नेयिक्कुविक्कुं
कदनक्किन ... ... एलं यिदे पुल्लं कचिं नीरं पुगुतलु पेण्णागि
पुचेलुं ... ... यि-देव-प्रतापन् ॥

अदटर वेर किचुं बुमयेचमरं वेदर् ... ... ।
... ... पनेन्तुद- ।
एलदे रण-रङ्ग-शूद्रकन साहस-भीमन सोयि ... ... ।
... ... नं मले विरव-वात्रियोळ् ॥
बनवसे-नाडधिकारं । दन-नुत- ... ... ।
... ... लन्तानान् । वनदर्दं-पडेद विक्रमादित्य-नृपन् ॥
वीराराति ... ... ।
... ... मले थील्दु नुञ्जि नोगेगुं दोर्-द्दण्ड-चण्डातियिम् ।
भोरेन्दा ... ... ।
वीरोदाचन वण्गिकुं बुध-जन श्री-विक्रमादित्य ... ... ॥
... ... निट्टदे हय्वे कोङ्कणम् ।
बेडगिन गङ्गबाडि तुळुनाडे ... ... ।
... ...बेसनेनद भूभुदराद कन्नमम् ।
कुन्दवनीश्वर् ... ... त्रियोळ् ॥

स्वस्ति समस्त-प्रशस्ति-सहितं श्रीमत्-महा-म ... ... से पत्रिच्छौ-
शिरमनाळुत्तुं सुख-सङ्कथा-विनोददिं राज्यं ... ... ॥

... ... ।
... ... ।
... ... एलेवल्लि कौञ्जु नारङ्ग-फलम् ।
रागदेळ ... ... ।

... ... सत्-पङ्केज-षण्डङ्गलि कुवलयदिं नाग-पुन्नागदिन्दम् ।
वक्ळ ... ... |
तिळक-श्री-चम्पकामोददिनेसगु सदा नागवल्लि-विलासम् ।
... ... आाज्य-लक्ष्मी-निवासम् ॥

गावणिग-कुलदे पुट्टिद ।
भाविते केरेय ... ... ।
... ... य पोगळे पुट्टिद ।
केवळमे देकि-सेट्टि वुध-सुर-भूज ॥
सङ्ग-ग ... ... ।
... ... सेट्टि कृतार्थम् ।
विङ्कदेळस्थळिळयोळम् ।
मोक्कने जिन-गृहमम् माडि कीर्त्तिय ... ... ॥
... ... ति गुरुवी-भानुकीर्त्ति-व्रतीन्द्रम् ।
... ... ति गुरुवी-भानुकीर्त्ति-व्रतीन्द्रम् ।
जननि प्रख्यातेयादो ... ... दम् ।
तनगन्ता-पत्नि गङ्गाम्बिके जन-नुत-नी-शङ्क-गावुण्ड मावं ।
जन-वन्द्यं दे ... ... लक्ष्मी-विळासम् ॥
केरेयम-सेट्टिय सुतरेम् ।
किरु-कुळरे केतमल्ल ... ... ।
... ... करन महीजम् ।
नेरेयेसेगं देकि-सेट्टि यनुवर धरेयोळ् ।
... ... पाद-सरोज-भृङ्गनम् ।
सु-कवि-जन-स्तुतं विबुध-कल्प-महीजनं वणिकुं स ... ... ।
... ... शा-करि-दन्तव मुट्टे पव्वुंगुम् ।
विकसित-भव्य-पङ्कज-दिवाकरनेन् ... ... ॥
... ... न-पद-पङ्कज-भृङ्गम् ।

जिन-महिमोत्तुंग विश्व-लक्ष्मी-सङ्गम् ।
जिन-महिम ··· ··· ·· ··· ।
··· ··· ··· ··· देकि-सेट्टि कीर्त्ति-विळासम् ॥
जिन-समय-वार्धि-हिमकर ।
जिन-मत-ल ··· ··· ··· ··· ।
··· ··· नम-निदानं तनगेने ।
घन-सुत-नी-देकि-सेट्टि धारिणिगेसेदम् ॥

अवर गुरु ··· ··· दडे ॥

कुन्तळ-गौड़-माळव-ववाहुति-दोहळि पोट्टियाण या ।
··· ··· ··· ··· विदर्मणदिन्दे बन्दु सै- ।
द्धान्तिक-पद्मणन्दि-सुतनी-मुनिचन्द्रनोळेय्दे ··· ।
··· ··· यिन्तु हरेदत्तु समस्त-धरा-तळाग्रदोळ ॥
अतितीव्रानल-काळकूट ··· ··· विनतुङ्गिडुद- ।
घतनं माणदे ··· नाडिसुव कन्दर्प्पं दरल्कम्मने ।
··· ··· ··· ··· बयलुगे ··· ··· ··· ··· वी- ।
र-तप-श्री-मुनिचन्द्र-देव-मुनियङ्गक्कुं पेरङ्गक्कौमे ॥
आरैवडे भेचक्रम् ।
बारह ··· ··· ··· गणित-स्थिति तत्- ।
सारतर-सूक्ष्म-तत्त्व-वि- ।
चारं मुनिचन्द्र-यतिगे हस्तामळकम् ॥

अवर ··· ··· तेन्दडे ॥

श्रीमन्मूल-पदादि-सङ्घ-तिळके श्री-कोण्डकुन्दान्वये ।
देसूर् नाम-गणो ··· ··· ··· तिन्त्रिणीकाह्वये ।
शिष्यः श्री-मुनिचन्द्र-देव-यमिनः सैद्धान्त-पारङ्गमो ।
जीयाद् ··· ··· ··· श्री-भानुकीर्त्तिर्म्मुनिः ॥

उरगोग्र-ग्रह-शाकिनी-विहग-भूत-प्रेत ··· ग-भी- ।
कर-भेता ··· ··· ··· गणं भू-चक्रदोळ् तोरलु- ।
द्धरिसित्तन्तदे यन्त्र ओदिदुदे मन्त्रं कोट्ट वेर् चन्त्रव- ।
च्चरि सैद्धा ··· ··· ··· ··· नि नाथोग्राज्ञे सामान्यमे ॥

स्वस्ति श्रीमत्-स (श) क-नृप-कालातीत-संवत्सर-सतंग ··· ··· भत्तनेय १०६६ नेय श्रीमत्-कळचुर्य्य-भुज-बळ-चक्रवर्त्ति राय ··· ··· नेय हेमळम्बि-संवत्सरद ज्येष्ठ-सुद्ध-दशमियादिवारदन्दु ··· ··· ण-सङ्क्रान्ति-व्यती ··· ··· ··· थियोळु श्रीमद्-एळम्बळिय देकि-सेट्टि तन्न माडिसिद शान्तिनाथ ··· ··· उदिय खण्ड-स्फुटित ··· ··· यर-जीयराहार-दानकं चातुर्व्वर्ण्ण-श्रवण-संघक्केन्दु श्रीमन्मूल-संघद काणूर्-गण ··· ··· गच्छद कोण्डकुन्दान्वयद तुम्ब-वंशद चीर-जळ-माळातिशय (शय)-त्रयोत्कृष्टानादि-संसिद्ध ··· ··· पुराधिनाथ-श्री-शान्तिनाथ-घटिकास्थानद मण्डळाचार्य्यरप्प श्री-भानुकीर्त्ति-सि ··· ··· कोट्टं कर्न्चि धारा-पूर्व्वकं माडि गोळिकेरेय बयललु (यहाँ पर दानकी विगत दी है) अन्ता-स्थानमं तम्म शिष्यरप्प मंत्रवादि-मकरध्वज श्रुत ··· ··· रिगे कोट्टरु ॥ (हमेशाके अन्तिम श्लोक और वाक्यावयव)।

[(शिलालेखका अधिकांश मिटा हुआ है)।

नागवल्लि-कुल और नागरखण्डका वणन । कदम्ब राजा सोयि देवकी प्रशंसा। बनवसे-नाड्का शासन विक्रमादित्यको मिला था, जिसे हय्वे, कोंकण, प्रसिद्ध गङ्गवाडि, और तुळु ··· ··· के राजा आकर भेंट देते थे।

जिस समय, अपने समस्त पदों सहित, महा-म [ण्डलेश्वर] ··· बनवसे १२००० पर शासन कर रहे थे :—नागवल्लिके आकर्षणोंका वर्णन। गावणिग कुलमें उत्पन्न हुआ केरेय [म-सेट्टि] था, जिसका पुत्र देकि-सेट्टि था। ··· गावुण्डने देकि-सेट्टिके साथ मिलकर एलम्बळ्ळिमें एक जिनमन्दिर बनवाया। उसके (सङ्क-गावुण्डके) भानुकीर्त्ति-व्रतीन्द्र गुरु थे, माँ प्रसिद्ध ··· ···, पत्नी गङ्गाम्बिके

और उसका श्वसुर विश्व-विख्यात ...... था। केरेयम-सेट्टिके केतमल्ल और (कि-सेट्टि पुत्रोंमेंसे देकि-सेट्टिकी जैनधर्मके महान् संपुष्टिदाताके रूपमें प्रशंसा।

मूलसंघ, कोण्डकुन्दान्वय, काणूर्-गण, तथा तिन्त्रिणिक-गच्छके मुनिचन्द्र-देवके शिष्य भानुकीर्त्ति-मुनिकी प्रशंसा (जैसा कि क्रमाङ्क ३७७ वें शिला-लेखमें है।

(उक्त मितिको), एलम्बळ्ळि देकि-सेट्टिने, अपने द्वारा बनायी हुई शान्ति-नाथ-बसदिकी मरम्मतके लिये, बीयल् तथा श्रवणोंकी चारों जातियोंके भोजन-दान (या आहार-दान) के लिये, शान्तिनाथ-बसदिका-स्थान-मण्डळाचार्य्य भानुकीर्त्ति-सिद्धान्त-देवके पाद-प्रक्षालन-पूर्व्वक,—(उक्त) भूमिका दान दिया। और वह 'स्थान' उसने अपने शिष्य मन्त्रवादी मकरध्वजको अर्पण कर दिया।

इनेशाके अन्तिम श्लोक।]

[EC, VIII, Sorab, Tl., No. 384.]

३६०

हेरगू;—संस्कृत तथा कन्नड़।

वर्ष दुर्मुखी [११७७ ई० (लू० राइस)]

स्वस्ति श्रीमत्-दुर्म्मुखि-संवत्सरद चैत्र-सुद्ध-दसमी-सोमवारन्दु हेरगिन चेन्न-पारिश्व-देवर नन्दा-दीविगेगे श्रीमतु सुङ्कद हेग्गडे हेरगिन बाचरस-गट्टियरस-बम्म-देव-बल्लय्यङ्गळु सुङ्कवं बिट्टरु एसु-गाण ओन्दक्कं आ-तेल्लिगर मने-देरे ओन्दुवं ऊरोडेय-नारसिगण्ण मार-गवुण्ड सेनबोव-सोमय्यनोळगाद समस्त-प्रजे-गळिद्दुं बिट्ट धर्म्म॥

[(उक्त मितिको) चुङ्गीके अध्यक्ष (नाम दिया है) ने हेरगूके भगवान चेन्न-पारिश्व (पार्श्व) के हमेशा चलनेवाले दीपके लिये चुङ्गीके दाम छोड़ दिये। और चौकीदार (Headman) सेनबोव (जिन दोनोंके नाम दिये हैं)

और समस्त प्रजा एक बैलके कोल्हू-का कर तथा एक तेलीके घरका कर देती थी (?)।]

[EC, V, Hassan, Tl., No. 59.]

३९१

अजमेर;—प्राकृत।

[सं० १२३४ = ११७७ ई०]

संवत् १२३४ जेठ सुद १३ बुधदिने माथुवुल्हा पुत्रवान हालू पास्वं (र्श्व) नाम देवपाल प्रणमतिमिहा।

अर्थ स्पष्ट है।

[JASB, VII, p. 52, No. 3, t.]

३९२

खजुराहो;—संस्कृत।

[सं० १२३४ = ११७७ ई०]

[यह लेख किसी जैन प्रतिमाके अधः पाषाणपर उत्कीर्ण है और खजुराहोमें पाये जानेवाले जैन-शिला-लेखोंमें सबसे पीछेके (उत्तरवर्ती) कालका है।]

[A. Cunningham, Reports, XXI, p. 69, 5, a.]

३९३

श्रवणबेल्गोला;- संस्कृत तथा कन्नड़।

[वर्ष हेवर्णन्दि = ११७७ ई० ? (लू० राइस)]

[जै. शि. सं., प्र. भा.]

३४६

हट्टण—संस्कृत तथा कन्नड ।

[शक ११०० = ११७८ ई०]

[हट्टण (नेल्लीकेरी परगना) में, वीरभद्र मन्दिरके पास एक पाषाणपर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥
श्रीपति-यन्नदिन्देसेव यादव-वंशदोळाद दक्षिणोर्-
व्वीपतियप्पनोर्व्व सळनेम्ब नृपं सळेयिन्दे कोपन- ।
द्वीपियनोन्दनोर्व्व मुनि पोय्सळ येन्दडे पोय्दु गेल्दु दिग्-
व्यापि-यशं नेगळ्दे-वडेदं गड पोय्सळनेम्ब नामदिं ॥
स्वस्ति श्रीजन्मगेहं विघृत-निरुपमोदात्त-तेजो-महोर्व्वम् ।
विस्तारान्तःकृतोर्व्वी-तळनवनत-भूभृत्-कुल-त्राण-दक्षम् ।
वस्तु-व्रातोद्भव-स्थानकमनलयशश्चन्द्रसम्भूतिधामं-
प्रस्तुत्यं नित्यमम्भोनिधि-निभमेसेगुं पोय्सळोर्व्वीश-वंशम् ॥
अदरोळ् कौस्तुभदोन्दनर्घ्य-गुणमं देवेभदुद्दाम-स-
त्वदगुर्व्वं हिमरश्मियुज्ज्वलकलापन्यायिर्यं पारिजा-
तदुदारत्वद पेम्पनोन्दने नितान्तं ताळ्दि तानल्ते पु-
ट्टिदनुद्वृत्त-तामो-विभेदि विनयादित्यावनीपालकम् ॥
कन्द ॥ विनयं बुधरं रञ्जिसे । घन-तेजं वैरि-बलमनञ्जिसे नेगळ्दं ।
विनयादित्य-नृपालकन् । अनुगत-नामार्त्थनमल-कीर्त्ति-समर्त्थं ॥
बुध-निधि विनयादित्यन । वधु केळेयब्बरसियेम्बोळात्मास्थितिमा-
व्विुरित-विबु परिजन-का- । मधेनु नेगळ्दळ् सुशीलगुणगणधामं ॥
ऽआ-दम्पतिगे तनूभवनादं तनगेंगदरि-नृपाळरनं मो-
··द बोळेरंगिपोनाहव- । मेदिनियोळे नेगळ्दनेरेयनेळेयोरेयङ्गम् ॥
वृ ॥ आतं चालुक्य-चक्रेशन कऌद भुजा-दण्डमुद्दण्ड-भूप-

व्रात-प्रोत्तुङ्ग-भूभृद्विदळनकुलिशं वन्दि-सस्यौघ-मेघम् ।
स्वेताम्भोजात-देव-द्विरद-सुर-नदी-दुग्ध-वारासि-चन्द्र-
द्योत-प्रस्पर्द्धि-भा-भासुर-विशद-यशं राज-मान्धातृ-भूपम् ॥
कन ॥ आ-चारु-मूर्त्तिगसम-शा- । रोचित-नामङ्गे भुवन-जयिगेरेयङ्गळ ।
एचल देविये सरसिज- । लोचनेने करविनेयळाद्ळतनुगे रतिवोल् ॥
एने नेगळदा-यिर्व्वर्गं । तनुजर्व्वनियिसिदरल्ते **वल्लालं वि-**
ष्णु-नृपालक**नुदयादि-** । **त्य**नेम्ब मूवरुमुदारराहव-धीरर् ॥
वृ ॥ अवरोळ् मध्यमनागियुं धरणीयं पूर्व्वापराम्भोधियेय्-
दुविनं कूडे निमिर्च्चुवेन्दु निज-निःप्रत्यूह-विक्रान्तदुद्-
भवदिन्दुत्तमनादनुत्तम-गुण-भ्राजिष्णु लक्ष्मी-वधू-
धवनुद्वृत्त-विरोधि-दैत्य-मथनं **तद्विष्णु**भूपालकम् ॥
वनवासी-पुरमा-विराटनगरं वल्लारि वल्लूर्व्वलि-
फ्लनिरुङ्गोळनकेरे कारुकनकोळलं कुम्मटं-चिञ्चिलुर्-
र्व्विनदा-**पेर्म्मन राचवूर्म्मुदुगनूरे**न्दिन्तसङ्ख्यात-दुर्-
र्गां-निकायं नेरे भग्नमादुदु वळं भ्रूभङ्गदिं विष्णुव ॥
इनिति दुर्गम-वैरि-दुर्ग्ग-चयमं कोण्डं निजाक्षेपदिन्द् ।
इनिवल्र्भूपरनाजियोळ् तविसिदनुत्तन्नुग्र-बाणाळियिन्द् ।
इनिवर्ग्गानतरिंत्तनुद्ध-पदमं कारुण्यदिं विष्णुवेन्द् ।
अनितं लेक्किसि नोर्पडञ्जभवनुं विभ्रान्तनप्पं बलम् ॥
कन् ॥ बिट्टग्रहार-निवहं । कट्टिसिदर्-गेरेय वळगमेत्तिसिद मुगिल्-
मुट्टुव देगुलमनितं । निट्टिसुवडे···**बिट्टि-देव**न पेम्पम् ॥
लक्ष्मी-देवि लसन्मृग- । लक्ष्मानने विष्णुगग्र-वधुवेने नेगल्दल ॥
वृ ॥ अवनि-मनोजनन्ते सुदती-जन-चित्तमन् इल्कोळल्के साल्व-
अवयव-शोभेयिन्दतनुवेम्बभिधानमनानदङ्गना-
निवहमनेच्चु मुय्वनणमानदे धीररनेच्चु युद्धदोळ ।
तविसुवनादनात्मभवनप्रतिमं **नरसिंह**-भूभुजम् ॥

विभवेन्द्रं खल-वह्नि दण्डधरनत्युद्वृत्त-दैत्याधिपं ।
शुभ-रत्नागर-नायकं नतजगत्प्राणं बुध-श्रीदनै-
स्य-मवं तानेने लोक-पाळतेयनेकायत्तमं माडि निन्द् ।
अभिरूपं सुतनादनल्ते नरसिंह-क्षोणिपालोत्तमं ॥
अरि-दैत्याधिप-वक्षमं खर-नखानीकङ्गळिं होळु वल्-
गरुळं तोड्सिद नारसिंहनेनलक्कुं वैरि-वीरावनी-
श्वर-वक्षस्थळमं स्व-खडग-नखर-व्याघातदिं पोल्दु वल्-
गरुळं तोडुव नरसिंह-नृपनं संग्राम-रङ्गाग्रदोळ् ॥
कन् ॥ समनिसे रागं तम्मोळ् । दमयन्ति नळङ्गे सीते रघुजङ्गेन्तन्त् ।
अमर्दचल-देविं नृसिं- । ह-महीरमणङ्गे लक्ष्मिवोल् वधुवादळ् ॥
अवर्गे सुतनादनभिजन- । धवळं गिरि-दुर्ग-मल्लनिभ-पति-दशदिग्-
धवलित-कीर्त्ति-वधूटी- । धवनरित्रलविजयपाण्ड्यनुच्चंगिय-दुर् ।
गमनुरवणीयिं कोण्डन- । समतेजोमूर्त्ति वीर-वल्लाळ-नृपम् ॥
वृ० ॥ केळ वसन्त-बाळ-सहकारद तण्-नेळल् आश्रिताळिगा-
मीळ-लयाहि-निष्ठुर-फणौघद मेय्-नेळलुद्धतारिगुन्-
मीळित-पुण्डरीकद नेळल् जयलक्ष्मिगेनिप्प वीर-वल् ।
लाळन तोळ-बाळ्ळ नेळलादुदु धात्रिगे वज्र-पञ्जरम् ॥
मनु-चारित्रं चरित्रं मनसिज-ललिताकारमाकारमब्जा-
क्षन मन्त्रं मन्त्रमिन्द्रात्मजनददट् अदट् अन्तीशनाप्पींप्पु भास्वन्-
तन तेजं तेजमम्भोजबनरिविरिंविन्द्र-प्रभावं प्रभावम् ।
तनगात्मायत्त मिन्ती-जगदोळेनिसिदं वीर-वल्लाल-देवम् ॥
स्वस्ति समधिगतपञ्चमहाशब्द महामण्डलेश्वरम् । द्वारावतीपुरवराधीश्वर । तळुव-कुळजलधिवड़वानल । दायाद-दावानल । पाण्ड्य-कुल-कमळ-वन-वेदण्ड । गण्ड-भेरुण्ड । मण्डलिक-बेण्टेकारं । चोळ-कटक-सूरेकारं । सकळ-वन्दि-वृन्द-सन्तर्प्पण-समग्र-वितरण - विनोद । शशकपुर-कृत-निवास-वासन्तिका-देवी-लब्धवर-प्रसाद । यादवकुलाम्बरद्युमणि । मण्डळिक-मकुट-चूडामणि । कदन-प्रचण्ड । मलपरोळ-

गण्ड-नामादि-प्रशस्ति-सहित कोङ्गु-नङ्गलि-तळेकाडु-नोळम्बवाडि-बनवासे-हानुङ्गल्-गोण्ड भुजबळ वीर-गङ्गासहाय-शूर शनिवारसिद्धि गिरिदुर्ग-मल्ल निश्शंकप्रताप होय्सल-वीर-**बल्लाल-देवर्** दक्षिणमहीमण्डळमं सद्धर्म्मदिन्दं पालिसुत्तं **दोरसमुद्र**-नेलेवीडिनोळ् सुख-सङ्कथा-विनोददिं राज्यं गेय्युत्तुमिरे तत्पादपद्मोपजीवि ।

वृ० ॥ मुन्तिदिरान्तनन्त-रिपु-सैनिकरं सिडिलन्ते सिङ्गदन्त् ।
अन्तकनन्ते सङ्गरदोळ् ओवदे जीरगेयोक्किलिक्कि सा-
मन्त-ललामनी-नेगळ्द्-तेङ्कण-रायनेनल्केनिप्प पेम्-
पं तळेदं प्रताप-निळयं घरेयोळ् **नरसिंग-नायकम्** ॥

तदाश्रयवर्त्तियप्प **सोवि-सेट्टि**यन्वयमेन्तेन्दोडे ।

कन् ॥ बसदि केरे देगुलं मळि- । गे सुरासुर-युद्ध-कथेयिवं **मुदुवोळलोळ्** ।
पोसतागे मेरेविनं निर्म्मिसि पडेदं जसद नेरंवनेळे**गेरेंगाङ्कम्** ॥

वृ० ॥ सङ्गत-पुण्यनप्रतिमनप्प एरेंगाङ्कन वंशजं प्रधा-
नं गुणि **बम्मि-सेट्टि**यवनात्ममनोहरे **माचियक्क**ना-
तङ्गमवळामुद्भविसिदं कुल-वर्द्धन **गन्धि-सेट्टि** तन्-
ङ्गियवङ्गे शीलवति मासति **माकवे** कान्ते लक्ष्मिवोल् ॥

कन् ॥ विगत-कुमत गतमल गं- । धिग-सेट्टिगममल-शीलवति माकवेगं ।
प्रगुणगुणगणनिधानं । मगनादं **सोम**गुरु-चरित्रारामम् ॥
परनारीपुत्रं बण- । टर-भावं केळतिसयनचळितनयनूर्-
व्वर दण्डे सेट्टि **सोमं** । सरणागत-वज्र-पञ्जरं गुणधामम् ॥
अपरिमित-दानि निज-सम- । य-पताकं देसियङ्कारंनसहन- ।
द्वीप-केसरि वदवर वे- । लि पत्तनस्वामि **सोवि-सेट्टि** जितात्मम् ॥
नव-तत्त्वविदं वितरण- । रविसुतनभिमान-मेरु शशि-विशद-यशो-
धवळित-दिशाळि निजकुल- । कुवळय-विधु **सोवि-सेट्टि** सज्जन-मित्रम् ॥
परम-जिन-पद-कमल-मधु- । करि दान-विनोदे गोत्र-चिन्तामणि वन्-
धुरिम-गुणि **सोवि-सेट्टि**गे । **मरुदेवि** सुशील-पुण्यवती सतियादळ् ॥
• ॥ गुणधामं मरुदेवि कान्ते तनुजातर्गग्रजं **नारसि**- ।

गणनुं सिंगणनुं विशुद्धगुणरिर्व्वर्य्वचणङ्गळ् जगत्- ।
प्रणुतर् निर्म्मळ-धर्म्मदोळ्पु जिनमार्ग्ग-श्रीगळंकार-द-र्-
प्र्पणमास्तेन्दडे सोवि-सेट्टियवोळावोम्पुण्य-पञ्चोदयम् ॥

कन् ॥ वनधि-निभ-तटाक-त्रय- । मनमरगिरि-तुङ्ग-पार्श्व-जिन-गृहमं सत्-
चन-भृत-निच-नामद-पत्- । तनदोळ् माडिसि कृतार्त्थनादं सोमम् ॥
स्वस्ति परम-जिन-शासन-शस्त-श्री-मूलसङ्घ-देशियगण- ।
प्रस्तुत-पुस्तकगच्छ-स- । त्विस्तरतर-कीर्त्ति-कुन्दकुन्दान्वयदोळ् ॥
विदित-गुणचन्द्र-सिद्धान्- । त-देव-सुतरन्य-वादि-तिमिरार्क्कर् वित्-
बुदा-नयकीर्त्ति-सिद्धान्- । त-देवरखिळावनीश-नत-पद-कमळर् ॥

वृ० ॥ सचियिन्दम्बरमन्वदि तिळि-गोळं नेत्रङ्गळिन्दाननं-
पोस-मार्वि वनमिन्द्रनिं त्रिदिवमा-शेषं मणि-व्रातदिन्द् ।
ऐसेवन्ती-नयकीर्त्ति-देव-मुनिर्यि राद्धान्त-चक्रेशनिन्द् ।
ऐसेगुं श्रीजिनधर्ममेन्दोरे वळिक्के-वर्ण्णियोम् वण्णियोम् ॥

कन् ॥ चन-नुत-नयकीर्त्ति-मुनी- । शन शिष्य नेगल्द दामनन्दि-त्रैवि- ।
द्यनखिळ-पर-वादि-कुभृद्- । घनवज्रं विरुद-वादि-मदन-महेशम् ॥
अ-मदं पितामहं वीत-मलं मदनारि मूकना-विपताकम् ।
दमिताम्य-वादियेने सन्- । द मान-निधि-दामनन्दि-मुनि-सन्निधियोळ् ॥
तदनुचनखिळ-कळा-को- । विदनात्माधीननमळ-रत्न-त्रितया-
स्पदनपगत-तन्द्रं दो- । प-दूरनध्यात्मि बाळचन्द्र-मुनीन्द्रम् ॥
नत-भुवननीश-चूडाम्- । चिताङ्घ्रि चन्द्रप्रमाङ्घ्रि-सेवा-निरतन् ।
नुत-वर्त्तमान-त्रोधा- । मृतरुचियेने बालचन्द्र-देव नेगल्दम् ॥

गद्य ॥ स्वति प्रताप-होय्सळ-पट्टण-स्वामि-सोमि(वि)-सेट्टि तां माडिसिद श्री-जिन-पार्श्व-देवरष्टविधार्च्चनेगं खण्ड-स्फुटित-जीर्णोद्धारक्कं जिन-मुनिगळ्-आहार-दानक्कं ... ये नाल्देसेय वेद्दलेयुमं वडगण नगरसमुद्रमुमं पट्टणदि मूडण होय्सळसमुद्रद मोदलेरियोळ् ओर्-खण्डुग नीर्व्वरेयुमं तेङ्कण सेट्टियकेरेय मोदलेरियोळ् ओर्-खण्डुम गद्देयुमनूर-मेण्टि सूडु सकळ-धान्य गोळग मूरु चळमावेयं प्रभु-गावुण्डुगळ

सामन्त-नरसिंग-नायकननुमतदि शकवर्षद सासिरद-नूरेनेय हेमळम्बि-संवत्सरद पौष्य-सुद्ध-तृतीयार्क्कदिन-व्यतीपातोत्तरायण-संक्रान्तियन्दु **वीर-बल्लाल-होय्सळ-देव**-राज्याभ्युदयात्थर्थन् निज-गुरुगळ् अप्पाध्यात्मि-**बाळचन्द्र-देवर** कालं तोळेदु धारा-पूर्व्वकं माडि कोट्ट सीमेयेन्तेन्दोडे पूर्व्वमुं आग्नेयमुं होय्सळसमुद्रद गद्दे-वरं बसदियिं तेङ्क मूवत्त मूण हन्नेरडु गद्दे-वरं नैऋत्यदोळ् बळ्ळेयकेरेय कीडि पडुवला-केरेय गद्दे-वरं वायव्योत्तरङ्गळ् नगरसमुद्रद निर्गोड्ड वडगण कोडियुं ईशान्यदोळ् ज्ञतारकेरे-वरं सीमे ॥

महाप्रधान **माधव-दण्डनायक**र वेसदिं बहित्रद **नारन-वेग्गडे** नन्दा-दीविजेगमष्टविधार्च्चनेगं ओन्दु गाणमुमं हेरिन सुङ्कद दशवन्दमुमं बिट्ट (हमेशा की तरह अन्तिम वाक्यावयव और श्लोक) भद्रमस्तु । श्री

[इस लेखमें सर्वप्रथम जिन-शासनकी प्रशंसा है। इसके अनन्तर सळका 'पोय्सळ' नाम कैसे पड़ा, इसके उल्लेखपूर्वक उसकी आगेकी वंशपरम्परामें विनयादित्य, एरेयङ्ग, विष्णुवर्द्धन हुए। विष्णुवर्द्धनने अपनी भ्रकुटिमात्रसे-जननवासीपुर, विराटनगर, बल्लारि, वल्लूर, प्रबल इरुङ्गोळका किला, करुककी चट्टान, कुम्मट, चिङ्गिलू, पेम्र्मका बाचवूर, मुदुगनूर, ये और अगणित दूसरे किले ले लिये। उसने बहुत-से विरोधी राजाओंको पराजित किया। उसने बहुतसे अग्रहार दानमें दिये, सर्वजनोपयोगी तालाब खुदवाये, और बहुतसे गगनचुम्बी मन्दिर बनवाये। विष्णुवर्द्धनकी पट्टरानीका नाम लक्ष्मीदेवी था, उनका **नारसिंह** नामका लड़का हुआ। उस लड़केकी पत्नी **एचल-देवी** है, जिससे **वीर-बल्लाळ** नामका पुत्र उत्पन्न हुआ। उसने दूसरी विजयोंके साथ-साथ उच्चङ्गिके विजय-पाण्ड्यके किलेको भी जीत लिया।

जिस समय, (अपने पदों सहित), होय्सल-वीर-बल्लालदेव इस पृथ्वीपर राज्य कर रहे थे, उस समय उनका पादपद्मोपजीवी दक्षिणका राजा **नरसिंग-नायक** था।

उसका आश्रित **सोवि-सेट्टि** था, जिसकी सन्तान-परम्परा इस तरह थी:—

पुत्र था **परेगङ्क**। इसने एक तालाब, एक 'बसदि', एक मन्दिर, एक

अण्डागार, तथा मुदुवोळल्में दैत्य और दानवोंके चित्र बनवाये थे। उसका पुत्र बम्मि-सेट्टि हुआ। उसकी पत्नीका नाम माचियक्क था। उनका पुत्र शन्धि-सेट्टि हुआ, उसकी पत्नीका नाम माकव था। उनका पुत्र सोम हुआ। पट्टण-स्वामी सोविसेट्टिकी एक भार्या मरु-देवी थी, जिसके तीन (चार?) लड़के थे— गङ्गग, नारसिंग, सिंगण, और बूचण। सोवि-सेट्टिने समुद्रके समान तीन तालाब, एक पार्श्व-जिनमन्दिर अपने ही नामको धारण करनेवाले नगरमें बनवाये।

मूलसंघ, देशिय-गण, पुस्तक-गच्छ और कुन्दकुन्दान्वयमें गुणचन्द्र-सिद्धान्त-देवके पुत्र नयकीर्त्ति-सिद्धान्त-देव हुए। उनके शिष्य दामनन्दि-त्रैविद्य हुए, जिनके छोटे भाई चन्द्रप्रभ-पादपूजक बालचन्द्र-मुनीन्द्र थे।

इस प्रताप-होय्सल-पट्टण-स्वामी सोमि (त्रि)-सेट्टिने पार्श्व-जिनकी अष्टविध पूजन, मन्दिरकी मरम्मत, तथा जिन-मुनियोंके आहारदानके लिये चउगावेके प्रभु और किसानों तथा सामन्त-नरसिंग-नायककी स्वीकृतिसे कुछ भूमिका दान किया। और, इस हेतुसे वीर-बल्लाळ-होय्सल-देवके राज्यकी वृद्धि होती रहे, कुछ दूसरी भूमि अपने गुरु बालचन्द्रदेवको उनके पादप्रक्षालनपूर्वक समर्पित की।

माधव-दण्डनायककी आज्ञासे घाट-अधिकारी नारण-बेर्गडेने हमेशा एक दीपके बलते रहनेके लिये तथा अष्टविधपूजनके लिये एक तेलका मिल (चक्की) और घाटपर उतरनेवाले सामान के ऊपर लगनेवाली चुङ्गीका $\frac{1}{10}$ वाँ हिस्सा दिया।]

[EC, IV, Nagamangala Tl. No. 70]

३९५-४०९

श्रवणवेलगोला;—कन्नड़।

[कालनिर्देश रहित]

[जै. शि. सं., प्र. भा.]

४०१

मलेयूर;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक ११०३ = ११८१ ई०]

[पार्श्वनाथ-बस्ति के प्राङ्गणमें छप्पर-मण्टपके पाषाणपर]

श्रीविद्यानन्द-स्वामिनः। चिक्क-तायिगळु।
श्रीमदच्युत-राजेन्द्राद् दीयमान-सुतो वरः।
श्रीमदच्युत-वीरेन्द्र-शिक्यपाल्यो नृपाग्रणीः ॥

तस्य भिषग्वरः।

कमलज-कुल-जातो जैनधर्म्माब्ज-भानु-
र्व्विदित-सकल-शास्त्रस्सद्-बुध-स्तोम-सेव्यः।
मुनिजनपदभक्तो बन्धु-सत्कार-दक्षो-
धरणिय-वर-वैद्यो भाति पृथ्वीतलेऽस्मिन् ॥

तस्य कुलवनिता।

त्रिवर्गसंसाधनसावधाना साध्वी शुभाकारयुता सुशीला।
जिनेन्द्रपादाम्बुजभक्तियुक्ता श्रीचिक्कतायीति महाप्रसिद्धा ॥
प्लवाब्देऽप्याश्विने शुक्ल-दशम्यां गुरुवासरे।
कनकाचल-पार्श्वेश-पूजार्त्थं-पञ्च-पर्व्वसु ॥
मुनीनां नित्य-दानार्त्थं शास्त्रदानाय सन्ततं।
चिक्क-तायीति विख्याता दत्तश्री-किन्नरीपुरा ॥

तयोः पुत्रः।

विद्यासारस्सदाकारस्सुमना बन्धु-पोषकः।
हृदयः पूज्यो भिषग्-राजस्तत्त्वशीलो विराजते ॥

(हमेशाकी तरह अन्तिम श्लोक)

ई-शासनद शकवर्ष ११०३ ने प्लव-सं ॥

[विद्यानन्द-स्वामी, चिक्कतायी के द्वारा।

अच्युत-राजेन्द्रसे अच्युत-वीरेन्द्र-शिक्यप-नामका एक पुत्र उत्पन्न हुआ था। धिके रूपमें उसकी प्रशंसा। उसकी स्त्री चिक्कतायीने, पाँच वर्षोंमें कनकाचलमें स्थित पार्श्वेशकी पूजाके प्रबन्धके लिये, मुनियोंके नित्यदानके लिये, और हमेशाके शास्त्रदान (उपदेश)के लिये, किन्नरीपुरका दान दिया। उनके पुत्रकी वैद्यके रूपमें प्रशंसा।]

[EC, IV, Chamarajnagar, Tl., No. 158]

४०२

तेरदल;—कन्नड़।

[शक ११०४ = ११८१ ई०]

स्वस्ति समस्त-भुवन-विख्यात-पञ्च-शत-वीर-शासन-लब्धानेक-गुणगणालङ्कृत-सत्य-शौच-आचार-चारु-चरित्र-नय-विनय-विज्ञान-वीरवणञ्जु-धर्म्म-प्रतिपालन-विशुद्ध-गुड्डु-ध्वज-विराजितानेकसाहसलक्ष्मीसमालिङ्गितवक्षःस्थळ भुवनपराक्रमोन्नतरुं मलपट्टि-गुरूत्पत्ति-बलदेव-वासुदेव-खण्डलि-मूलभद्र-वंशोद्भवरुं **पद्मावती-देवी-**लब्ध-वर-प्रसादरुमप्प श्रीमद्-अय्यावळेयय्नूर्व्व[र] स्वामिगळ् कुन्तळ-विषयदोळ ग्राम-नगर-खेड-कर्व्वड-मडम्ब-द्रोणामुख-पत्तणंगळिदमनेक-माटकूट-प्रासाद-देवायतनंगळिं-दमोप्पुवग्रहार पट्टणङ्गळिंदमतिशयवप्प श्रीमत्-कूण्डि-मूरुसासिरदोळगे इन्नेरडक्कं मोदल-वाडं वणञ्जु-वट्टणं नडवेयमने **तेरिदाळदल् शकवर्षं ११०४** नेय **प्लव-संवत्सरद** आश्वयुज बहुळ ३ आदिवारदळ् द्वात्रिंशत्-वेळापुरमुमष्टादश-पट्टणमुं वासष्टि-योग-पीठमुमरुवत्तनाल्कु-घटिक-स्थानमुं नानादेशाभ्यन्तरद गवरे-... रं सेट्टियरुं-सेट्टि-गुत्तरुं महानाडागि नेरदा स्थळदळ् श्रीमन्मण्डळिकं **गोङ्क-देवरसं** माडिसिद **नेमि**-तीर्थेश्वरन चैत्यालयमं कण्डु बलं-गोण्डु पोडेवट्टु हर्ष-चित्तरागि देवरष्टविधार्च्चनें [आ] चन्द्रार्क्क तारं बरं नडेवन्तागि कोट्ट शासन-

मर्य्यादियेन्तेन्दोडे चतुस्समुद्रपर्य्यन्तं वरं नडवन्तागि १२० नूरिप्पत्तेत्तुकत्ते-कोण-मण्डि-मैत्र-दोणि-दुग्गि-गळ-पथमत्रेयळ् नडेवडं सुङ्क-परिहारवागि कोट्टर् . मत्तं शासन-परिहारिगिरेन्नदे वोक्कल लोन्दु पणवं बिट्टर् ॥ यिन्ती केयि-मने-तोट-मुख्य-समस्त आय-दायवेल्लमं सर्व्वबाधापरिहारवागि धारा-पूर्व्वकं माडि बिट्टर् ॥ स्वस्ति श्रीमत्-**कोण्डकुन्दाचार्य्या**-न्वयद श्री-**मूल-संघद देशीय-गणद पोस्तक-गच्छद** श्री-**कोल्लापुरद निम्ब-देव**-सावन्त मडिसिद **श्री-रूपनारायण-देवर** वसदिय प्रति-बद्धमप्प **तेरिदाळद** गोङ्क-जिनेन्द्र-मन्दिरक्के **कोल्लापुर**दगस्त्येश्वरद कणगिलेश्वरद **महालक्ष्मी-देवि**य गोकागेय महालिङ्ग-देवर यिन्ती घटिक-स्थानदाचार्य्यरु मुख्य-एळ्-कोटि-पुव-संख्यात-गणगळ् महामण्डळियागि **तेरिदाळद** मूल-स्थानद **कलिदेव-स्वामि**गे प्रतिबद्धं माडि आ **नेमिनाथ-स्वामि**य प्रतिष्ठाकालदला **गोङ्क-जिनालय**दाचार्य्यरप्प **प्रभाचन्द्र-पण्डित-देव**रिगिदेम्म जोग-वट्टिगेय स्थानमेन्दु जोगवट्टिगेय निक्किदर् ॥ वसदिय मेले शूद्रकन सिंहद चक्रद चिह्नमेम्बिरद तिसुळद घण्टेयं परेय नागदेनिप्पवनेळु-कोटि- तापसर्गे महा-विरोधि-यवनीश्वर वैरियेनुत्तविक्किदर्म्मिसुगुव जोग-वट्टिगेयना मुनि- संकेय कोटि-तापसर् ॥

[IA, XIV, p. 14–26, (line 56–68)] t. and. tr.

४०३

श्रवणबेल्गोला—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[शक ११०४ = ११८१ ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

४०४

श्रवणबेल्गोला—कन्नड़ ।

[बिना काल निर्देशका]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

४०५

श्रवणबेलगोला—संस्कृत तथा कन्नड़।

[बिना काल निर्देशका]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

४०६-४०७

श्रवणबेलगोला—कन्नड़-भग्न।

[बिना काल निर्देशका]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

४०८

चिक्क-मागडि;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक [१] १०४ = ११८२ ई०]

[चिक्कमागडिमें, बसवण्ण मन्दिरके प्राङ्गणमें एक स्तम्भ पर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम्॥
श्रीराविप्पुदु धर्म्मदि निधत-धर्म्म शान्तियि शान्ति-वि-।
स्तारं कुन्थु ... ... ।
... घकर् त्रिभुत-धर्म्म शान्ति तत्-कुन्थुजेन्द्र-।
ई-रत्नत्रय-देवरुर्व्वितनेनल् दीर्ग्घायुमं श्रीयुमम्॥
प्रकट व्यात ... ... खरूपं नित्य-भावं त्रिकर्-।
त्रिक्रमावेष्टित-भावत-त्रितयवा-षड्-द्रव्य-सम्पन्न-व-।
र्चमोप्पिर्दुडु नोडे नाडेयुजयो-नब्योर्ध्व-लोक ...।
... लोकक्केसेदिर्प्पुदन्तुमय-कर्म्मोद्योग-निर्म्माण-तल्-।

लीलं द्वीप-समुद्र-वर्ग-वळयीभूत-प्रभूत-स्थळी- ।
माळाळ ... ... भू-रमणं जगद्धितनी-महत्त्वक्केनल्केम् ।
णडुवोप्पं वेचुदो तां लवण-जलधि रत्नम्मणल् लक्ष्मि नीर्- ।
वेण्णोडरिप्पा-कल्प-वृक्ष-प्रसव ... ... देवेळ्वेनोळ्पम् ॥

कं ॥ वार्-वळय-निकरवेम्बा- ।
नीर्वेलिय नडुवे नेरदु जम्बू-चिह्नम् ।
सार्विनवीप्सित-फळमम् ।
पार्विनवेळेगिम्बिदाय्तु **जम्बू-द्वीपम्** ॥
इदु जम्बू-द्वीप ... निदु सुरोर्व्वीरुहौदार्य्यदिन्दिन्त् ।
इदु राजद्धैर्य्यदिन्दिन्तिदु जनित-जिन-स्थान-भोग्योपयोगा- ।
भ्युदय-श्री-लीलेयिं राजरसन तेरदिन्दुन्नतत्वक्के पक्का- ।
दुदेवेनुत्तं चन्द्र-सूर्य्यां ... ... राराजिसिक्कुम् ॥
दोरेवेत्ता-**मेरु**विन् तेङ्कण-देशेयोळदेनोळ्पुवेत्तिदद्दुंडो श्री- ।
भरत क्षेत्रं करं तुम्बिगळ मधुर-मन्द्र-स्वरोद्गीतदिं मे- ।
ल्ले-रलिगळ्ळाडुवेल्लेल्लेलेम ... ... पुष्यज्ञळि हण्ण-गोञ्चल्- ।
वेरगिन्दं चूतवल्ली-विततिगळेसेदा-लास्य-सारस्यदिन्दम् ॥
कं ॥ श्रीमजनदिं सुमनो- । धामतेयिं भ्रमर-शोभेयिं कर्ण्णाट- ।
सीमेयना-भरत-श्री- । ... तोर्प्पु ... नाडे **कुन्तळ-देशम्** ॥

वचन ॥ मत्तमल्लि जनद कोण्टेयुं गुणद व्यवहारमुं विनदद व्यवसायमुं रसद तोरे-गणिनेसेव केळी-वनङ्गळुं बिरयिगळ कामनयिक्के ...रेयं गोण्डिप्पं ळीळेयिं नेरेद-कमळिनिगळुं वसन्तकेळिगे समेद पोण्डोणिगळ-गोण्डळमुं धर्म्मक्के नेम्मंमुं भोगक्कागरमुमाद घटिका-स्थानमुं रत्न-समृद्धिगे सोल्तु स ... ... मगळ गोण्डुदेनिप परिखेयिं राजमण्डलसमानमेनिप कामिनीवर मुख-कमळ-निकरमुं ग्राम-नगर-खेड-खर्व्वण-मडम्ब-द्रोणामुख-पुर-पत्तन-राजधानिगळ वन ... ... मेळि ...वर्वा मेरेदु नव-विषमागि तोर्प्प **कुन्तळ-देसक्के** ॥

हेळेयं **पाण्ड्य** **कळिङ्ग** करि-गरित्तरनागाळत्तेसेङ्गेय्ये निच्चं ॥
जगमं सम्प्रीतियिं **विज्जल**-नृपतिय तम्मं भुजा-गर्व्वदिं **मै**- ।
ळुगि-देवं पाळिसुत्तं मेरेद् वळिक्कवा-**बिज्जळो**र्व्वीश-पौत्रम् ।
त्रिगुणीभूत-प्रतापं तळेद्नेळेय ... **कन्दार**-क्षोणिपं तन्- ।
जगती-नाथानुतातं बळिक्कमवनियं ताळ्दिदं **सोवि-देवम्** ॥
क्रमदिं **कर्ण्णाट**मं **कुन्तळ**मनोलविर्निं तीळिद् तळक्कय्सि रम्यां- ।
गमनिम्निम्निम्निपोळ्पं पडेदु पृथुल-**लाट**क्के **काञ्ची**प्रदेश- ।
क्के मनम्वेत्तेय्दे रागं बुदिद्-कर-सरोजातमं नीडिया-**रा**- ।
यमुरारि-क्षोणिपं मेदिनियनिनिसु वन्देक-भोग्यक्के दन्दम् ॥
आतन तम्मनूर्जित-गुणं विभु-**मैलुगि-देव**नाळ्दिदम् ।
भू-तळमं बळिक्कमवनिं किरियातनेनिष्पनादोडम् ।
ख्यातियिनार्गवल्ते हिरियातनेनल् धरे **शङ्कमो**र्व्वीप- ।
ब्रात-नुतं धरा-बळयमं परिरक्षिसुतिर्द्दनोळ्मेयिम् ॥

कं ॥ शङ्कन कीर्त्ति-प्रभेयिन्- ।
दं कामिनि भूमि गौर-रुचियिन्देसेदेम् ।
शङ्किनियादळो गीता- ।
लङ्कृत-नाना-विनोद-विळसित-गतियिम् ॥

वृ ॥ सवनार् **निश्शङ्कमल्ल**-क्षितिपतिगे तच्चक्रियिन्दं बळिक्का- ।
हवमल्लं राय-नारायणनधिक-गुणं शङ्क-भूपानुजं भू- ।
भुवनाराध्यं धरा-मण्डलमनतुळ-दोर्द्दण्डदिन् ताळ्दिदं नोळ- ।
पवर्गेक-च्छत्रमं मेय्क्षिरि मेरेविनेगं प्राज्य-साम्राज्यदिन्दं ॥
क्रमदिन्दा-**बिज्जळो**र्व्वीपतिगे पडेदु सप्तांग-सम्पत्तियं म- ।
त्तमदं तच्चक्रियिन्दित्तलुमोदविद राजावळी-ळीलेगं तन्- ।
दुमिदे सप्ताङ्गमं काणिसिदनेने जगं मन्त्रदिं तन्त्रदिं वि-- ।
क्रमदिं श्रीयिं सदाचारदिनोसेदेसेदं **रेचि-दण्डाधिनाथम्** ॥
कळचूर्य्य-क्षितिपाळ-राज्य-लते पर्व्वल् तन्न दोष-शाखेयं ।

विळसन्मन्दर-सानुगं विबुध-सेव्यं विस्तृत-च्छायनं- ।
स्खळितौदार्य्य-विळास-भासि सुमनस्-संपूर्ण्णनुद्यद्यशः- ।
फळर्दि रेचण-दण्डनाथनेसेदं लोकैक-कल्प-द्रुमम् ॥
जिननं तन्न मनमं मनः-प्रकृतियं सद्-विद्येया-विद्येयम् ।
तनुवन्ता-तनुवं विळासवदनुघल्-लक्ष्मिया-लक्ष्मियम् ।
विनुतौदार्य्यवदं जगं जगमनिम्मी-कीर्त्तियालिङ्गिसल् ।
जन-वन्द्यं विभु-रेचिराजनेसेदं चारित्र-रत्नाकरम् ॥
कवि-तति वल्मेगोलगिसे कामिनियर् सोत्रगिङ्गे सोले बेळ्- ।
पवर्गंलुदार-वृत्तिगोलविं नर-शासनवागे राज्यमुद्- ।
भवदिनोडर्च्चि जैन-समयाम्बुधि कीर्त्ति-सुधांशुविं पोदळ्- ।
के वडेये रेचिराजनेसेदं वसदिं वसुधैक-बान्धवम् ॥
नडेद-नेलं रणोर्व्वरेयोळन्तनितुं तनगज-पुञ्जरिम् ।
पडेद-नेलन्तलेम्बलसिरल्-नृपाळनिक्कडुन्ते किळ्- ।
तडे कडु-दोसवेम्बनसहं मिगे बेक्कुडे पट्टे ताने वेड्- ।
गुडुवनोलेम्बनेनदटनो कलि-रेचण-दण्डनायकम् ॥
अनुपम-दान-शौर्य्य-रण-शौर्य्यमने-बोगळ्दप्पेनाम् द्विषज्- ।
जनपरोळोन्दुवच्चरसियर्गें सयम्बरवागे सग्गदोळ् ।
जनियिसितिन्द्र-भूरुहके तोरणदिन्तविलेम्बुदेय्दे मे- ।
दिनि वसुधैक-बान्धव-चमूपति रेचणनेम् कृतार्त्थनो ॥
पेडे-वणि शेषनोळ् सरसिजोदरनम्बुधियोळ् मृगाङ्कचन्द् ।
उडुपनोळद्रिजाद्धवभवाङ्गदोळा-मद-लुब्ध-भृङ्गविर- ।
प्पेडे दिगि-मङ्गळोळ् कुरुपु दोर्प्पिनेगं जगमं मुसुङ्कितिङ्- ।
गडलेने कीर्त्ति रेचनेसेदं जसदिं वसुधैक-बान्धवम् ॥
श्रीवन्द्यं सिरियिं समृद्धनेसेवा-नागाम्बिका-सूनु-भो- ।
गावासं वसुधैक-बान्धवनुदारं स्तुत्य-गौरी-सुख- ।
श्री-विष्टं वृषभध्वज-प्रियतमं नारायणात्मोद्भवम् ।

भा बेत्तिरे चेल्वनेन्देनिसिदं श्री-**रेचि-दण्डाधिपम्** ॥
तरदि देशङ्गळु श्री-**कळचूरि-कुळ**-चक्रेशरिं पेत्तुदी-**ना**- ।
गर-खण्डक्कल्पित्थवट्टा-नृपरोळ् पडेदिम्बिन्दवाळ्डिप्पेना- **रे**- ।
चरसं तानेन्दोडे-वण्णिपुदो निसदवी-देशदिन्दोळ्मेयं वि- ।
त्तरदिं पङ्कज-रूपं **बनवसे**यादरोळ् श्रीय-वोलिप्पुदेम्बेम् ॥
कुसुम-रजं रथावळि तळिर् सोव डाडुव कीर-जाळवेम्ब् ।
एसकदे चल्वुवेरिद-नेलं नेले-वेर्न्चिद पूगोळम्बिसुर्- ।
प्पेसगद-नुण्-बिसल् सुळिव कम्मेलरीन्दिसे हृन्चनोप्पुवा- ।
गसवेसेयल्के नाडेसवुदेन्तु बसन्तद सृष्टियेम्बिनम् ॥

कं ॥ आ-नागर-खण्डमना- ।
ल्पा-नृप-विनुत-**कदम्ब**रन्ता-नृप-स- ।
न्तानाम्बुजदोळे सकल-क- ।
ळा-निळयं ब्रह्म भूभुजं जनियिसिदं ॥
आ-विभुविङ्गं **चट्टल**- ।
देविगवुदायिसिदनखिळ-नीति-क्रम-सं- ।
भावित-राजाचार- ।
श्री-वधुगेसेयल्के शौर्य्यदोप्पं **बोप्पम्** ॥
मेदिनिगे **बोप्प-देव**नित् ।
आदुदु हगे हुगद बाळ बाळ्वेलियवङ्ग् ।
आदळ् वल्लभे विनुत- ।
श्री-देवियवर्गे पुट्टिदं **सोमं-नृपम्** ॥

वृ ॥ नुडिगललन्दे मुद्दु-नुडि **सत्य-पताक**नेनिप्पुदोप्पिद- ।
ट्टदि **निगळंक-मल्ल**नेने राजिपुदोजे **कडम्ब-रुद्र**नेम्ब्- ।
ओडेतनवं नेगळ्चिदुदु **गण्डर-डावणि**येम्ब्-नाममम् ।
पडेदुदु **सोम** भमिपन शौर्य्य-गुणावलियेम् कृतार्थनो ॥
निनगन्ता-काममीगळ् केळेयनेनिपुदं तोप्पुवोलेम्मनेन्चें- ।

च्चु नितान्तं निन्न पादक्केरगिपनेनुतं कान्तेयर्व्वोले काळ्गा- ।
नन-काश्मोर-द्रवं पट्टिद निगळद् चाङ्गाळ्वनङ्गके सेवा- ।
वनितारागम्बोळागळ् मेरेवुदनुदिनं सोम-भूमीश-पादम् ॥
मुनिदोडे-सोम-भूपनमागर्प्पेडेया-वनवातेयन्तदन्त् ।
अनितुमदीगळातन भुजासि-लता-बृचवाग्बु पोक्कुसिल्- ।
किनोळिरे पोळ्लदेन्दधितरोडि समुद्रद चेळेगण्डु ताव् ।
अनुमिसि वेळेगोण्डु सुखमिर्प्परिदेनर्दाव्क्षे नोन्तनो ॥
विरुदर् भ्मीतोर्व्विपाळर् म्मदन-परवशीभूतेयर् व्वियेयुळ्ळर् ।
श्शरणेन्दर् स्सेवकर् व्वेळ्पवर्गोल्दीवनी-सोम-भूमी- ।
श्वरनेन्दुं रागदिं सङ्गतमनभयमं वेव्वं तुष्टियं सप्त्- ।
इरवं सम्प्रीतियं वेळ्पुदनेने चनवौदार्य्यदिं वर्ण्यनादम् ॥
तोळ तोडर्प्पु मच्चिपेर्डे-व्वत्तुगे चुम्बिसुविम्बु सोम-भू- ।
पाळनोळेक-भोग्यवेनिसल् तनगागिरला-स्थळङ्गळम् ।
पाळिप कापु वीर-सिरि लक्ष्मि सरस्वतियेन्दे सैरिपळ् ।
मेळिसलीवळे पेररनेन्देने लच्चल-देवियोप्पुवळ् ॥
घनिपा-दम्पतियोल्मेगगाळिसलोप्पं प्राज्य-साम्राज्य-का- ।
मिनि माडल् विगियप्पनेच्चरे परोर्व्वीपाळरि कप्पविन्त् ।
इनितुं माडदिरल्के वुद्ध-तति तप्पं पुट्टिदं चोप्पनेम्ब्- ॥
इनेगं बोप्प-नृपाळनप्रतिम-पुण्यं राचिसित्तुर्व्वियोळ् ॥

कं ॥ ई-बोप्पं देवकिगाद्- । आ-बोप्पं तप्पदप्पनरिदेम् कीर्त्ति- ।
श्री-वायु-देरेदोडे काणल्क् ।
ई-वन्दुदे भुवन-निकरवेने पेसर्वडेदम् ॥

। नगेयल्तेयेमे यिक्कतिर्द-इदिनेण्ट्-अक्षोहिणी-सेनेगन्द् ।
मुरिं सत्त हिरण्यकाचकनेनिप्पङ्गन्ददेम् विट्ट-कङ्ग् ।
अचिदन्ता-मयदिन्दे बेन्द मदनङ्गन्दा-महाभागरण्- ।
मुगेयेन्दी विभु-बोप्प-देवनलेवं सत्त्वाधिकान्यौघमम् ॥

कदन-क्रीडेयोळुळ्ळ मिन्न दयेयेकिन्तोर्मेयुं तोरदी- ।
मदन-क्रीडेयोळुत्तुदं मरेदडं नीर्-वोकडं नाण पुत्- ।
उदलोन्दिद्दडवित्तोडं तलेयने सम्प्रीतियं तोरेयेन्द् ।
ओदवि मेळि‌ने कान्तेयर् म्मेरेवनी-श्री-**बोप्प**-भूपाळकम् ॥

क ॥ सिरियिन्दोप्पुव **बान्धव**- ।
पुरवातन राजधानियन्ता-पुरदोळ ।
सुर-खचरोरग-मणि-मकु- ।
ट-रचित-पद-कान्ति **शान्तिनाथं** मेरेवम् ॥

वृ ॥ पाळभिषेकवन्तेनितदादडवाल्लियदश्यमप्प पू- ।
माले पदक्के जानुवरविक्किदोडं निर्मिर्वुण्ण-तोयदिम् ।
लीलेयि मज्जनक्केरेये वामदे शीतळनागि वर्प्पवेम् ।
सालवे **शान्तिनाथ**न महा-महिमत्वमनोल्दु बण्णसल् ॥

कं ॥ एनिपास्थानाचार्य्यम् ।
मुनि विनुतं **भानुकीर्त्ति-सिद्धान्ति** जगज्- ।
जन-वन्द्यं निज-गुरु-कुळ- ।
वनज-विकाशमनोडर्च्चुयं तपदिन्दम् ॥
अलर्दुददेन्तेनला-गुरु- ।
कुळवा-गौतमनेनिप्प गणधरनिन्दित्- ।
तलनेक-**मूलसंघा**- ।
विळ-यति-पतियाद **कोण्डकुन्दान्वय**दोळ ॥
श्री-**रावणन्दि-सिद्धा**- ।
न्ताराव-सरोवरक्के तोडवेनिपं वाक्- ।
श्री-रम्य-**पद्मणन्दि**-त- ।
पो-रमे पिडिदिर्द्द पद्ममेने तच्छिष्यम् ॥
तन्मुनि-नाथन शिष्यं ।
मन्मथ-सह वल्लदङ्गना-रति सुखमम् ।

सन्मुनि-सद्गुरु-कुवळय- ।
भून्मति पोसतेनिसि नेगळ्दना-**मुनिचन्द्रम्** ॥
वृ ॥ लोकमनावगं वेळगिदं बसदिं **मुनिचन्द्र-देव**नं- ।
प्राकृत-जैन-योग-निळयं प्रकटीकृत-[त]त्व-निर्ण्णयम् ।
स्वीकृत-शब्द-शास्त्रनुररीकृत-तर्कं-कळा-कळापनू-
रीकृत-काव्य-नाटकनधःकृत-मीनपताक-विक्रमम् ॥
कं ॥ तच्छिष्यं प्रकटीकृत-कीर-
त्ति-च्छत्रं **भानुकीर्त्ति** काणूर-ग्गण-भू- ।
मि-च्छत्र **तिन्त्रिणीक-सु-** ।
गच्छं श्री-**कुन्द-वंश**नेसेदं जगदोळ् ॥
वृ ॥ शान्त-रसीत्य-मूर्त्ति दिगिभ-व्रज-मस्तक-वर्ति-कीर्त्ति सैद्- ।
धान्तिक-चक्रवर्त्ति जिन-पाद-निधान-सु-दीप-वर्त्ति चै- ।
त्तन-जैन-योगिसम-वर्त्तियेनल् **मुनि-भानुकीर्त्ति** पेम्-
पं तळेदं स्व-मन्त्रि-गति-धूर्त्त-जनक्रतिवर्त्तियेम्बिनम् ॥
नियतं तन्मुनिनाथ-शिष्यनेसेदं सन्मार्ग्गं-सम्पत्तियिम् ।
नयकीर्त्ति-व्रति-नायकं विबुध-वाञ्छा-दायकं जैन-त- ।
त्व-यथार्थागम-कायकं कृत-यशस्-संस्नायकं ध्वंसिता- ।
भय-निस्यन्दित-पुष्पसायकनुदग्रौदार्य-सन्दायकम् ॥
कन्द ॥ अन्तेसेदाचार्य्यावळिय्- ।
इं तिळिदागमङ्गळं जिन-समयोच्- ।
चिन्तामणि **सं(शं)कर-सा-** ।
मन्तं शान्तियने माडि शङ्करनेनिपम् ॥
विदित-पराक्रमनेनिपा- ।
~~~-नृप-तिळक **बोप्प-देव**न राज्या- ।
भ्युदयक्के ताने मोदलेनि- ।
सिदना-सामन्त-**शङ्करं** नयदिन्दम् ॥
~~~

सामन्त-शङ्करनिन्दुद्- ।
दामते-व़डेदिर्द्द नण्डु-वंशद सिरि मुन्न् - ।
ए-माल्केयेम्बोडन्वय- ।
रामेगे तोडवादनमळ-सङ्ग सिङ्गम् ॥
सिङ्गल कान्तेयल्ते सिरियातन केसर-माळेयम्ब चेल् - ।
विङ्गेडेगोण्डु माळनवगादनवङ्गेणेयागे माणियक्क- ।
अं गुण-युक्ति-कान्तेयनगिम्बिने पुट्टिदनेकनेक्के-गौ- ।
डङ्गनुजातना-केरेयमं मेरेदं स्तुति-जीवनोदयम् ॥
कं ॥ अनुदिनमवरिच्छा-जनि- ।
त-फलं वळये तन्न कालगळनाश्र- ।
यिसि नितान्तं केरेयमना- ।
दनदं रेसव्वे नक्षळाटळु नलविम् ॥
वृ ॥ अवररुदंर्गावुदात्तनप्पनेनिसिद्दी-वोप्पगावुण्डनु -
द्भवमुं तानु-वुदात्त-वृत्तियुमनन्नौदार्य्यमुं पेम्मेयो- ।
प्पवुदागिरे पुट्टि कीर्त्ति-पडेदं तन्निच्चेवोळ् चाकि-गौ- ।
डि विनूताङ्ग-वार्द्धियोळ् पडेये सत्-पुण्याङ्कनं सङ्कनम् ॥
वर-वनिता-वशङ्करनराति-नृपाळ-भयङ्करं जिने- ।
श्वर-यति-किङ्करं स्वपति-चित्त-मदंकरनिष्टवर्ग-शं- ।
करनखिळार्थ-शास्त्र-सुन्दढ़ंकरनात्म-सुखंकरं मनो- ।
हरनेने शंकरं पडेदनोप्पे चरित्रदोळं ··· ··· र्त्तियम् ॥
दिनमेल्लं दान-केळि-समयमे तनगेन्देम्बिनं नीतियेल्लम् ।
तनगेन्दागिर्द्दवेन्देम्बिनवरि-कुळवेल्लं स्व-खड्गाहतं-शा- ।
किनियर्गेन्दादुदेन्देम्बिन वोडमेयदल्लं जगत्-पोषणक्केम्- ।
विनवा-सामन्त-सुखं नेगळ्दनेळेगवातङ्कवागल्के-तन्निम् ॥
पथिकङ्गिष्टाङ्ग शिष्टंगघननेनिपवङ्गार्त्ति-यादङ्ग नित्या ।
तिथिगाळ्गन्यङ्गे मान्यङ्गवनिवेळेय ··· ··· डु-गोट्टङ्गे भार- ।

अयितरन्तेअवङ्नेनुतेनुदिसिदङ्गार्गवोल्दित्तु दोरप्य- ।
व्यपेयं माणिप्पनेम् मान्तनद् फणियो सामन्तरोळ् शंकराङ्कम् ॥
पति-मन्त्र-प्रौढिनेवक-तति निरवद्यारमं मान्यरोळ्पम् ।
क्षिति-सन् मर्य्यादेगं बन्धुगळनुदिन-सन्-मानमं धार्म्मिकर् सन्-
मतियं कान्ताजनं नेय्यळियनखिळ-वन्दि-व्रजं धा- ।
··· ··· वण्णिकुं पुण्यद् तवये दिट्टं नोडे सामन्त-शङ्कम् ॥

कं ॥ करेयेनिप सुरभिगेलेगळ ।
मरेयेनिसिद् कल्प-वृक्ष-पल्ल-ततिगेणेये ।
करेव ··· ··· ··· दारते ।
मेरेयुद् सामन्त-शङ्करनोळनवरतम् ॥

वृ ॥ विनेय-रसङ्गळि तणिपि यानकरं मनेगोन्दु सन्ततं ।
इनकद् वाडनित्तु मिगे सोकिसि तेव्यर ··· ··· ··· ।
/ ··· ··· आ माकगोण्डवर नालेगेयं प्रभु-शंकरं यशो- ।
धननेनिसिर्द्दनसदोदे माकवरे रसना-निकायमम् ॥

कं ॥ एनिसिद् शङ्कर-साम- ।
न्तन कान्तेय ··· ··· यिन्दुणे सत्या- ।
वनि जक्कणब्बेयुं का- ।
मन सिरि कं-देरळेय्विने सोगेयिसिदर् ॥
शान्तेय सुतु शङ्कर-ननुद्भवनुद्ध-कदम्ब-वद्र सा- ।
मन्त ··· ··· समय प्रणुतं वसुधैक-बान्धवम् ।
अन्तेसेदात-मन्त्रि विभु-श्रीपननोर्व्विदमोळ्मेगोण्डमम् ।
शान्तते दानवप्पु चरितं सिरि कोमळ-रूपवोप्पिरल् ॥
··· ··· न देवतेयेन्द् ।
एने नेगळ्दा-जक्कणब्बे-तनुविं मनदिं ।
मनसिजनुं जिननुं तन्न् ।

इनियङ्गुभय-भव-सुखवदेने करवेसेदळ् ॥
जिन-समय-भक्तियि स- ।
••• ••• सुपुत्रिर्व्विरिनेणे शा- ।
सन-देविगे वल्लभन- ।
त्यनुवशनी-जक्कणव्वे-गिढुवे विशेषम् ॥
आ-जक्कणव्वेयङ्ग-त- ।
नूजं मेरेदं जगक्के सुजन-मनोजम् ।
पूजि ••• ••• ••• ।
••• ••• सकळ-गुण-निकर-धामं सोमम् ॥

वृत्त ॥ तनु पुण्योदय-शोभितं निमिर्दतोळौदार्य-रम्यं मुखम् ।
जन-सम्मोहन-सत्य-वृत्त वलगन् दाक्षिण्य-दीर्घो ••• ।
••• ••• ति रूपके यथा रूपं तथा शीलवेन्द् ।
एने सामन्त-ललाम-सोमनेसेदं सौन्दर्य्य-चातुर्य्यदिम् ॥
करदिन्दं तेगेयल् सशक्ति नी ••• ••• वन्दा ••• ••• ।
र-पुत्र-नुत-जक्कणव्वेय मगं कण्ठीरवारोहरण- ।
क्केरेवं सोम-सहोदरं शिशुतेयोळ् मुद्दय्य मुद्दय्यना- ।
दरदि कळ्प-कुजतमं पडेवनेन्दा-चूतमं वर्द्धिपम् ॥

कं ॥ अन्तेनिसल् शङ्कर-सा- ।
मन्तं सक्ळत्र-पुत्र-बान्धव-मित्रा- ।
नन्तान्वयनेसेदं निश- ।
चिन्तं धर्म्मार्त्थ-काम-वर्ग-सुमार्ग्गम् ॥
अनुपमिताश्चर्य्य शा- ।
न्तिनाथनेन्दा-स्थळानुबन्धदिनिर्म्मिम् ।
जिन-गृहमं मागुडियोळ् ।
विनुतं सामन्य(त)-शङ्करम्माडिसिदम् ॥

वृ ॥ प्रतिविम्वं पद-जातमं कळेवुदा-नङ्कके कम्मके द्दद्- ।
गतमं माळ्पुदु शालमञ्जिकेगाळं चित्रिप्पुदा-भित्ति-सन्- ।
ततियं चङ्कम-चित्रदिन्देने बनं सामन्य-शङ्कं जगन्- ।
नुतमं माडिसिदं जिनेन्द्र-गृहमं मागुण्डियोळ् रागदिम् ॥
आ-भुवनैक-मण्डन-जिनालयमं नलेविन्दे नोडि सु-
र्य्याभरणाह्वयं वलिपुरि-त्रिपुरान्तक-सूरि-सत्स्तुतम् ।
शोभिसुतिद्र्द्दुदी-वसदि तीर्थकरर्सुशिव-सत् पदल्यरेन्द् ।
[आ-भुवनैक-मण्डन-जिनालयमं नलेविन्दे नोडि सु- ।
र्य्याभरणाह्वयं वलिपुरि-त्रिपुरान्तक-सूरि-संस्तुतम् ।
शोभिसुतिद्र्द्दुदी-वसदि तीर्थकरर् सुशिव-सत्पदल्यरेन्द् । १]
आ-भव-भावदिम्मुनिवरं स्थळ-वृत्तियनित्तनुत्तमम् ॥
कं ॥ स्थिरवागिरित्तनडकेय । मरनम्नूरळ्ळ-तोण्टवा-पूडोण्टम् ।
नेरसु सुमूमिय मत्तर । त्वरे गर्द्देयदोन्दु-गाणवेन्दित्तिनितम् ॥
वृ ॥ अन्ता-त्रम्म-निकायमं सुळिसुतं न्यायान्वित-द्रव्यदिन्द् ।
अन्तीवुत्तखिळाशेयं सदुपमोगानीकमं मोगिसुत्त् ।
अन्ता-शङ्कम-देव-चक्रि नडेदं वल्लाळ-भूपाळनम् ।
सन्तं तन्न पदाब्ज-सेवेगे-दरल् शौर्य्यार्णवं घूर्णिसल् ।

कं ॥ नडेदातन लक्ष्मिय् कयू- ।
पिडिदोडगोण्डखिळ-दण्डनाथ-समेतम् ।
नडेतन्दु ताणगुन्दद ।
नडे-वीडिनोळ् इर्द्दनर्थियिं पल-देवसम् ॥
इरे रेचण-दण्डाधी- ।
श्वरं जिनेश्वर-पदाभिवन्दने एन्दोप्प्- ।
इरे वन्दं मागुडिगा- ।
दरदिं श्री-चोप्प-भूप शङ्कर-सहितम् ॥

वन्दु जिनेश्वर-पदमं ।
वन्दिसि जिन-मुनि-पदाम्बुजक्केरगि जिनो-
न्मदिरमं नोडि दृढा- ।
नन्दं वसुधैक-बान्धवं वणिगसिदम् ॥१
अन्तु पोगळ्दु त्रि-भोगा- ।
भ्यन्तरवागिद्दं तळवेयं सर्व्व-नम- ।
स्यं तेजो-साम्य-समे- ।
तं तज्जिन-पूजेगेन्दु परिकल्पिसिदं ॥

स्वस्ति समस्त-भुवनाश्रयं श्री-पृथ्वी-वल्लभं महाराजाधिराज कालञ्जनपुर-वराधीश्वरं प्रताप-लङ्केश्वरं शौर्य्य-पञ्चाननं गीता-चतुराननं शुभतरादित्यं त्रिज-भूभुजापत्यं गज-सामन्त जय-कामिनी-कान्तं सुवर्ण्ण-वृषभ-ध्वजं कळचूर्य्य-राज्य-लक्ष्मी-प्रतिष्ठितायत-भुजं रायनारायणं भरतागमाम्भोधि-पारायणं गिरिदुर्ग्ग-मल्लं श्रीमदाहवमल्लं मोदेगनूर नेलेवीडिनलु सुख-संकथा-विनोददिं राज्यं गेय्युत्तमिरे तत्पादपद्मोपजीवि श्रीमन्महा-प्रधानं बाहत्तर-नियोगाधिपति महा-प्रचण्ड-दण्डनायकं रेचि-देवरसना-मागुणळिय रत्नत्रय-देवर बसदियाचार्य्यरू भानुकीर्त्ति-सिद्धान्त-देवरं बरिसि मुन्नं समधिगत-पञ्च-महा-शब्द महामण्डलेश्वरं बनवासिपुर-वराधीश्वरं पद्मावती-देवी-लब्ध-वर-प्रसादं मृगमदा-मोदं मार्कोल-भैरवं कादम्ब-कण्ठी ··· ··· कामिनी-लोलं हुसिवर शूलं निगळंक-मल्लनसु-हृत्-सेल्ल गण्डर-दावणि सुभट-शिरोमणि इत्य-खिल-नामावळी-समालंकृतनप्प वाप्प-देव ··· ··· बळिय बाडं तळवेयं त्रि-भोगाभ्यन्तर-विशुद्धियिं सर्व्व-बाधा-परिहारं सर्व्व-नमश्यवागि परिकल्पिसिदुदं शक-वर्ष-नूर-नाल्कनेय ··· ··· ··· ··· सुद्ध-पञ्चमी-बुधवारदन्दा-रत्नत्रय देवरभिषेकाद्यङ्ग-भोग-रङ्ग-भोगक्कं ऋषियराहार-दानक्कं विद्यार्थिगळ ··· ··· ··· ··· बसदि पेस ··· ··· ··· खण्ड-स्पु(स्फु)टित-जीर्णोद्धारक्कवेन्दु आ-श्रीमन्मूल-संघद काणूर्-गणद तिन्त्रिक-गच्छद नुन्न-वंशद श्रीमद्-भानुकीर्त्ति-सिद्धान्त ··· ··· ··· कोट्टु ··· ··· ··· महा-प्रधानं कृत-जयाकर्षण-विधानं धनु-

विद्या-धनञ्जयनाकर्ण्णित-रण-रमस-भीत-मू... ... ... द-विद्यावरं काव्य-कळा-वर-नेनिप मुरारि-केशव-देवङ्गे धर्म्म-प्रतिपाळनमं समर्पिसिदनातन प्रभावमेन्तेन्दोडे ॥

वृ ॥ गिरीशन दृष्टि ... ... मनुमत ।
शर-यष्टि-पार्त्थननुदन्वित-कन्दुर-वेग-सृष्टियोन्द् ।
इरे गरिवेत्त तन्न शरलिं गरि मूडि दिक्क्के पारि-दुल्- ।
स्वर-रिपु कादि ग ... न ... ... मुरारि-केशव ॥

...।... आ-दत्तदियळोम्मे नाना-देशद व्यवहारिगळ् तन्द-मण्डद कय्क्के नाल्कुं स्थळद वणञ्जु-मुम्मुरि-दण्डमुं ... ... च ... ... कन मृदु-हृदयरागि या-स्थळवं पोक्कु मारिद मण्डद पोङ्गे वीस मळवेगे हाग वत्तळक्के वेळे इन्तिनितुमं ... ... धर्म्ममं प्रति ... दरनेक-जन्मार्जित-पाप-बावेयं परि-हरिपि नाना-सुकङ्कणननुभविसुवर् प्रतिघातिसिदडे किडिसदवर्गेळेनेय-नरकमं पोक्कु... ... ... वर् ॥ (इमेशाके अन्तिम श्लोक) ।

(प्रथम भाग का अधिकांश बहुत बिगड़ गया है) ।

[जिन शासनकी प्रशंसा । धर्म्म, शान्ति और कुन्थु, ये तीन 'रत्नत्रय देवता'के नामसे उल्लिखित हुये हैं । अधो, मध्य और ऊर्ध्व लोकका वर्णन । जम्बूद्वीप भरतक्षेत्र और कुन्तल देशका क्रमशः वर्णन । कुन्तल-देशका ग्राम, नगर, खेड, कर्व्वण, मडम्ब, द्रोणमुख, पुर, पट्टन और राजधानी, इन ६ विभागोंमें विभाजन ।

प्रथम पृथ्वीका भोग चालुक्य राजाओंके द्वारा; पुनः रट्ट राजाओं द्वारा हुआ; उनको हटाकर तैलने पृथ्वीका शासन किया । तैलका पुत्र सत्याश्रय; उसका पुत्र विक्रम; जिसका छोटा भाई अय्यण था; उसका भी छोटा भाई जयसिंह; इस (जयसिंहका) पुत्र आहवमल्ल; उसका पुत्र सोमेश्वर; उस राजाका पुत्र पर्म्माडि-देव; जिसका पुत्र भूलोकमल्ल; उसका पुत्र जगदेकमल्ल; जिसका छोटा भाई नूर्म्मडि तैल था ।

इसके बाद, चालुक्य राज्यकी लक्ष्मी कळचूरि-तिलक **बिज्जलके** हाथमें आयी। उसकी बहादुरीके श्लोक। बिज्जलकी महत्ता (बड़प्पन) कैसे बढ़ी, इसके लिये कहा है:—सिंहल राजा, नेपाल राजा, केरल, गुर्ज्जर, तुरुष्क, लाळ, पाण्ड्य, कलिंग,—ये उसके किसी-न-किसी दैनिक कार्यको करके उसकी सेवा बजाते थे। राजा बिज्जलके छोटे भाई मैलुगि-देवने प्रेम और शक्ति-बलसे पृथ्वीकी रक्षा की; इसके बाद उस बिज्जल राजाके पौत्र राजा कन्दारने पृथ्वीका पालन किया; इसके बाद, उस (कन्दार) राजाके अनुतात (छोटे चाचा), सोयिदेवने पृथ्वीका पालन किया। राजा रायमुरारिने क्रमशः कर्णाट और कुन्तलको एक में मिलानेके बाद उसी राज्यमें लाट और काञ्ची-प्रदेशको भी मिला लिया। उसके छोटे भाई मैलुगि-देवने पृथ्वीका शासन किया; उसके बाद उसके छोटे भाई, लेकिन कीर्त्तिमें सबसे बड़े, राजा शंकमने पृथ्वीकी रक्षा की। उसकी प्रशंसा। (इस) निश्शंकमल्लके बराबर दूसरा कौन था? उसके बाद राजा शंकका छोटा भाई राय-नारायण आहवमल्लने पृथ्वीका शासन किया।

क्रमशः, राजा बिज्जलको सातगुनी सम्पत्तिके दिलानेवाले उनके दण्डाधिनाथ **रेच** या **रेचि** थे। उसके प्रशंसा-व्यञ्जक बहुत-से श्लोक, जिनमें उसे 'वसुधैक-बान्धवम्' कहा गया गया है। नागाम्बिका और नारायण के ये पुत्र थे, उनकी पत्नी गौरी थी, वृषभ-चिह्नवाला उनका झण्डा था।

उस रेचरस (रेच-दण्डाधिनाथ) को कळचुरि सम्राटों से क्रमशः बहुत-से देश मिले थे; उनमें एक **नागर-खण्ड** था।

कदम्ब-कुल-कमलमें, उस नागर-खण्डका शासक राजा **ब्रह्म** था। उससे और चट्टल-देवीसे **बोप्प** उत्पन्न हुआ था। बोप्प-देवकी पत्नी श्री देवी थी। उसका पुत्र राजा सोम हुआ। जब वह कुछ बोलने लगा, तो उसके आकर्षक शब्दों के कारण उसका नाम 'सत्य-पताक' पड़ गया; जब उसने इधर-उधर चलना शुरू किया, उसे लोग 'निगलंक-मल्ल' कहने लगे; जब उसकी शक्ति प्रकट होने लगी, तो उस 'कदम्ब-रुद्र' कहा जाने लगा; जब उसे राज्य मिला, तो उसे 'गण्डर-

दावणि (शूर लोगोंके लिये पशु-रज्जू)' कहने लगे। इस तरह उसकी बहादुरीके गुणोंकी कितनी लम्बी सूची थी। एक दूसरे श्लोकमें उसकी उदारताकी प्रशंसा है। उसकी पत्नी लचल-देवी थी। इनसे बोप्पका जन्म हुआ था। उसका कृष्णसे मिलान किया है और कहा है कि उसके १८ अक्षौहिणी सेना थी।

उसकी राजधानी समृद्ध जान्नव-पुर था, जिसमें शान्तिनाथ भगवान्‌का मन्दिर था।

उस मन्दिरमें भानुकीर्ति-सिद्धान्ती आचार्य थे। इनके गुरुकुलमें कोण्डकुन्दान्वयके मूल-संघके कई यतिपति थे। रावनन्दि-सिद्धान्तीके शिष्य पद्मनन्दि थे। उनके शिष्य मुनिचन्द्र थे। ये सर्वविद्याओंके बड़े प्रकाण्ड पण्डित थे। इनके शिष्य काणूर-गण, तिन्त्रिणिक-गच्छ और पुन्न-वंशके भानुकीर्त्ति थे। ये सैद्धान्तिक चक्रवर्त्ती थे। इनके शिष्य (प्रशंसा सहित) नयकीर्त्ति-व्रती थे।

इस परम्पराके गुरुओंसे 'आगम' सीखकर, जिन-समयके 'चिन्तामणि' शंकर-सामन्त थे। कदम्ब-राजा बोप्पदेवके राज्यको बढ़ानेके लिये शंकर ही उचित रूपसे प्रथम व्यक्ति कहे जाते थे। सामन्त-शंक द्वारा सुशोभित नण्डु वंशमें उस कुलका तिलक, सिङ्गमू उत्पन्न हुआ। उसकी पत्नी मालियक्क थी, जिसका पुत्र एक-गौड था, जिसका छोटा भाई केरेयम था। केरेयमकी पत्नी रेसब्बे थी, और उनका बोप्प गावुण्ड हुआ। उसकी पत्नी चाकि-गौडि थी, और उनका पुत्र शंक या सामन्त-शंक था। उसकी प्रशंसामें कई श्लोक। उसकी पत्नी चक्कणब्बे थी। उसका ज्येष्ठ पुत्र सोन, जिसका छोटा भाई मुद्दय्य था।

इस प्रकार सम्मानित शंकर-सामन्तने मागुडिमें, उस स्थानसे सम्बन्ध होनेके कारण, शान्तिनाथ भगवान्‌के लिये एक बढ़िया जिन-मन्दिर बनवाया। इस मन्दिरके चमत्कारका वर्णन। वलिपुरके त्रिपुरान्तक-सूरि, जिनका नाम सूर्याभरण था, उन्होंने इस कारण कि यह मन्दिर तीर्थंकर और शिवके भक्तोंको एक-सा

प्यारा था, इसके लिये ५०० सुपारीके वृक्षोंका वाग तथा एक पुष्प-उद्यान, अच्छी धान्य (चावल) की भूमि तथा एक कोल्हूके रूपमें एक अच्छी 'स्थल-वृत्ति' दी ।

उस गुणी कार्यको जारी रखनेके लिये, और अपनी न्याय-प्राप्त सम्पत्तिका अपने आश्रितोंकी आवश्यकताओंकी पूर्त्तिके लिये शंकर-देव-चक्रीने राजा बल्लालका आश्रय लिया । वह (? राजा) कुछ दिनोंके लिये ताणगुण्डके निवास-स्थानमें था । वहाँ रहते हुए, रेचण-दण्डाधीश्वर, राजा बोप्प और शंकरके साथ, मागुडिमें जिनेश्वरके पूजनके लिये आया । वहाँ आकर उसने जिन-मन्दिरसे बहुत प्रसन्न होकर जिनकी पूजाके लिये तलवे (गाँव) दिया ।

जब, कालञ्जर-पुर वराधीश, राजा विज्जकी सन्तान, राय-नारायण, आहवमल्ल मोदेगनूरके अपने निवास-स्थानसे शान्ति और बुद्धिमानीसे राज्य कर रहे थेः—

तत्पादपद्मोपजीवी रेचि-देवरसने मागुण्डिके रत्नत्रयदेवकी बसदिके पुरोहित, भानुकीर्त्ति-सिद्धान्त-देवको बुलाकर, (उक्त मितिको)[1] मूलसंघ, क्राणूर-गण, तिन्त्रिक-गच्छ, और नुन्न-वंशके भानुकीर्त्ति-सिद्धान्त-देवको बेलेय-बाड ... ... में तळवे दिया । यही तळवे तीन पीढ़ियों तकके लिये, सब करोंसे मुक्त करके बोप्पदेवने दिया था ।

और इस कामके संरक्षणका भार उसने प्रधान-मन्त्री मुरारि-केशव-देवको सौंप दिया । उसकी (मुरारि-केशवकी) प्रशंसा ।

और उस बस्तिमें, एक समय चार स्थानोंके वनञ्जु तथा मुम्मुरिदण्डने (उक्त) कुछ चुङ्गी दी ।]

[E C, VII, Shikarpur tl., no 197.]

---

१ — 'शक-वर्ष नूर-नाल्कने (शक वर्ष १०४)' इतना ही रह जानेके कारण और वर्षका नाम मिट जानेसे, निःसन्देह ११०४का मतलब दीखता है । एक हजारका उल्लेख मिट गया है ।

४०६

बोम्मनहल्लि;—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[शक ११०४ = ११८२ ई०]

[जै. शि. सं., प्र. भा.]

४१०

[जोडि] बसवनपुर;—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[शक सं० ११०५ = ११८३ ई०]

[जोडि बसवनपुरमें, डुण्डि-सिद्दन चिक्कके खेतके किनारेके एक पाषाणपर]

(प्रथम बाजू)

निर्धूय-पूति-मल-लेपमलं कलङ्कमालोकतस्त्रि-जगति प्रतिपूजितो यः ।
श्री वर्द्धमान इति पश्चिमतीर्थनाथो भव्यात्मनां दिशतु सन्ततमिष्टपुष्टिम ॥
श्री-वर्द्धमानजिनवक्त्रसमुत्थमर्थ-सार्थं समस्तमपि सूत्रगतं-चकार ।
यस्सर्वभव्यजनकण्ठविभूषणार्थं श्रीगौतमो गणधरोऽस्तु स नः प्रसिद्धयै ॥
गुरूणां कीर्त्तिमन्मूर्त्तिर्व्वाग्निषद्या विराजते ।
तद्विप्रयोगशोकार्त्तभक्तचित्तप्रशान्तये ।
श्रीमद्द्रामिळसङ्घेस्मिन्नन्दिसंघेऽस्त्यरुङ्गळः ।
अन्वयो भाति निःशेषशास्त्रवाराशिपारगैः ॥
समन्तभद्रस्संस्तुत्यः कस्य न स्यान्मुनीश्वरः ।
वारणासीश्वरस्याग्रे निर्जिता येन विद्विषः ॥
उपेत्य सम्यग्दिशि दक्षिणस्यां कुमारसेनो मुनिरस्तमाप ।
तत्रैव चित्रं जगदेकभानोस्तिष्ठत्यसौ तस्य तथा प्रकाशः ॥
कृत्वा चिन्तामणिं काव्यमभीप्सार्थ-समर्थनं ।

चिन्तामणिरभून्नाम्ना भव्यचिन्तामणिर्गु··· ॥
विद्वच्चूडामणिश्चूडामणिकाव्यकृते ··· ।
चूडामणिसमाग्रश्रोऽभूलक्ष्य-लक्ष ··· लक्षणः ॥
यस्य सप्ततिमहावादविजयी वन्द्य एव सः ।
ब्रह्म-राक्षस-वन्द्याङ्घ्रि**र्म्महेश्वर**मुनीश्वरः ॥
आशान्त-वर्त्तिनी-कीर्त्तिस्तपश्श्रुतसमुद्भवा ।
यस्यानवद्य-शान्तात्मा **शान्तिदेव**मुनीश्वरः ॥
तस्या**कलङ्कदेव**स्य महिमा केन वर्ण्यते ।
यद्वाक्यखड्गघातेन हतो बुद्धो विबुद्धिसः ॥
श्री**पुष्पसेनमुनि**रेव पदं महिम्नो देवस्सयस्य समभूत्स भवान् सधर्म्मा ।
श्रीविभ्रमस्य भवनं तनु पद्ममेव पुष्पेषुमित्रमिह यस्य सहस्रधामा ॥
कीर्त्ति**र्व्विमळचन्द्रस्य** चन्द्रांशु-विशदा बभौ ।
यद्वाक्यलालितोल्लासमत्र शोकोऽयमीदृशः ॥
पत्रं शत्रुभयंकरोरु-भवन-द्वारे सदा सञ्चरन् ।
नाना-राज-करीन्द्र-वृन्द-तुरग-व्राताकुळे स्थापितम् ।
शैवान् पाशुपतांस्तथागतमतान् कापालिकान् कापिलान् ।
उद्दिश्योद्धतचेतसान् **विमळचन्द्राशाम्बरेणा**दरात् ॥
इन्द्रनन्दिमुनीन्द्रोऽयं वन्द्यो येन प्रकल्पितौ ।
प्रतिष्ठा-ज्वालिनी-कल्पौ कल्पान्तर-कृत-स्थिती ॥
परवादि-मल्ल-देवो देवी यद्भाग्य- दि ··· प्रवृत्ता कृष्णराजाग्रे स्वनामादेश-देशिनी ॥
गृहीत-पक्षादितरैः परस्स्यात् तद्वादिनस्ते पर-वादिनस्स्युः ।
तेषां हि मल्लः **परवादिमल्ल**स्तन्नाम मन्नाम वदन्ति सन्तः ॥

(दूसरी बाजू)

सन्मतिः सत्यनामा··· ··· ··· ··· ···
··· ··· ··· ना गौतमा ··· ··· ।

... ... तस्य जातो भट्टारक ... ...

(३१ पंक्तियाँ यहाँ नष्ट हैं)

... ... श्रीमलधारि ... ...

श्रीमद्द्रमिल-संघ ... ...

(तीसरी बाजू)

... ... ऽजितसेन-पण्डित ... ...

... ... दिवौक-स्तुत:

तर्क्क-व्याकरणागमादि-विदित स्त्रैविद्यविद्यापति:

... मूल-प्रतिपालको गुण-गुरुर्विद्यागुरुर्य्यस्य स: ।

श्रीचन्द्रप्रभनामतो मुनिपतेस्सिद्धान्त-पारङ्गतो

... चन्द्रीऽजितसेन-देव-मुनिपो व ... य्यतां प्रातवान् ॥

श्रीमत्त्रैविद्यविद्यापतिरर-कमलाराधना-लब्धबुद्धि-

स्सिद्धा ... णिधान: त्रिजगदमृतत्वाद्दु ... ष्ट-प्रमोद: ।

टीका-रक्षा-कु-वक्षा ... मक्कृति-निपुणस्सन्ततं भव्य सेव्य-

स्सोऽयं दाक्षिण्य-मूर्त्तिर्ज्जगति विजयते वासुपूज्य-व्रतीन्द्र: ॥

नम:

... तिमिर-मित्रस्सद्-गुरुस्सच्चरित्र:

विबुध-वन-सु-चैत्र: पुण्य-सम्पूर्ण-गात्र: ।

जिन-निगदित-सूत्र पा ... सा सत्पवित्र-

स्स जयति गुण ... श्राम-चन्द्रप्रभोऽत्र: ॥

य ... म-कलाप: ध्वस्तनि:शेषताप: ।

... सकळ-भूपो निर्ज्जित- पुष्पचाप: ॥

महित-सकल-कोपस्सन्मुनिस्सत् ... पस्

स जयति गुण-रूपस्सूरि-चन्द्रप्रभाङ्क: ॥

नमोऽस्तु

(चौथी वाजू)

स्वपरमतविकासश्श्रीसुतेः कण्ठपाशो
नमितमुनिगणेशः भव्यबोधोपदेशः ।
श्रुत-परम-निवेशश्शुद्धमुक्त्यङ्गनेशः
जयति वर-मुनीशस्सूरिचन्द्रप्रभेशः ॥

समयदिवाकरदेवो तच्छिष्यः परम-तार्किकाम्बुज-मित्रः
चन्द्रप्रभमुनिनाथो कृत्वा सल्लेखनं शुभतनुत्यागम् ॥

शाके सायक-खेन्दु-भूमि-गणिते-संवत्सरे शोभकृन्-
नाम्नोष्टे कुजवार-शुद्ध-दशमी-प्रासोत्तराषाढके ।
मासे भाद्रपदे प्रभातसमये चन्द्रप्रभाख्यो मुनि-
स्सन्यसने समाधिना सुमरणं से ··· गणी द्रागभूत् ॥

यस्यार्यस्य गुरुस्सतां गुणगुरुस्त्रैविद्यविद्यानिधिः
ख्यातोऽसौ समये दिवाकर इति स्यादीत्त्वया शिष्यकैः ।
तैर्दत्तं सकलं ··· त श्रुतगुणं रत्नत्रयाख्यं क्रमाद्
आराध ··· त्य-समाधि ··· पातिश्चन्द्रप्रभाख्योऽभवत् ॥

य ··· ··· प ··· दशविधो धर्म्मं क्षमा ··· ···
कर गणागमे परिणतिस्साहित्य ··· ··· ···
आजन्ते स भवान् समाधि-विधिना ··· ··· चार्यो दिवं
यातो ध्यानवलान्वितः ··· ··· रागद्वेषमोहास्थिरः ॥

यस्तत्वो ··· ··· ··· ··· वर्द्धन-विधुः कामेभ-कण्ठीरवः
श्रीमद्-द्राविड़संघभूषणमणिस्सद्ज्ञानचिन्तामणिः ।
धृत्वा चारुतपश्चरित्रममलं स्मृत्वा जिनाङ्घ्रिद्वयं
कृत्वा सन्यसनं जिनालयगतो चन्द्रप्रभस्सन्मुनिः ॥

लोके दुष्टजनाकुले हतकुले लोभातुरे निष्ठुरे
सालङ्कारपरे मनोहरतरे साहित्य-लीलाधरे ।
भद्रे देवि सरस्वती गुणनिधिः काले कलौ साम्प्रतं

कं यास्यस्यभिमानरत्ननिळयं चन्द्रप्रभाख्यं विना ॥
साहित्योन्नतपादपं क्षितितले दुष्कर्मणा पातितं ।
वाग्देवी-पृथु-वक्त्र-मण्डनमहो संछिद्य निर्नाशितं ।
सर्व्वज्ञागम-सार-भूधरमिदं दर्पेण निर्लोठितं ।
श्रीचन्द्रप्रभदेव-देव-मरणे शास्त्रार्णवं शोषितम् ॥

नमोऽस्तु-

[इस लेखमें द्रमिल-संघगत नन्दि-संघके अरुङ्गल-अन्वयकी समन्तभद्र-मुनीश्वरसे लेकर चन्द्रप्रभ-मुनिनाथ तककी पट्टावली या शिष्य परम्परा दी हुई है। वह क्रमसे इस प्रकार है :—

१. **समन्तभद्र** मुनीश्वर—वाराणसी (वाराणसी=बनारस) में राजाके सामने विपक्षियोंको हराया।

२. **कुमारसेन**—दक्षिणमें आकरके उनकी मृत्यु हुई, परन्तु मृत्युके बाद भी उनकी कीर्ति सारे भारतमें सूर्यकी तरह प्रकाशित हो रही थी।

३. गुरु **चिन्तामणि**—चिन्तामणि काव्यकी रचना की थी। जिनभक्तोंके लिये वास्तवमें ही 'चिन्तामणि' थे।

४. **चूड़ामणि**—चूड़ामणि काव्यकी रचना की थी, जिसमें काव्यगत अलङ्कारोंका वर्णन था। वे वास्तवमें विद्वच्चूड़ामणि थे।

५. मुनीश्वर **महेश्वर**—इन्होंने महान् सत्तर ७० शास्त्रार्थोंमें विजय पायी थी। उनके पैर ब्रह्म-राक्षस भी पूजते थे।

६. **शान्तिदेव** मुनीश्वर—दिशाओंके अन्ततक तपसे समुद्भूत उनकी कीर्ति फैली हुई थी। वे बहुत शान्तमूर्ति थे।

७. **अकलङ्कदेव**—उनकी कीर्तिका वर्णन कौन कर सकता है। इनके प्रबल विजयी शास्त्रार्थों से बौद्ध पण्डितोंको मृत्युतकका आलिङ्गन कराया गया था।

८. **पुष्पसेन** मुनि—यह अकलङ्कदेवके साथी (सधर्म्मा) थे।

९. दिगम्बर **विमलचन्द्र**—ये बड़े भारी तार्किक पण्डित थे। शैव, पाशुपत, तथागत (बौद्ध) कापालिक और कापिल मतोंका बुरी तरह खण्डन करते थे। अपने घरके द्वारपर उनके लिये चैलेञ्ज लिखकर टाँग दिया था।

१०. **इन्द्रनन्दि** मुनीन्द्र—इन्होंने 'प्रतिष्ठा-कल्प' और 'ज्वालिनी-कल्प' ग्रन्थोंकी रचना की थी।

११. **परवादिमल्ल**—इन्होंने कृष्णराजके समक्ष अपने नामका निर्वचन इस तरहसे किया था :—गृहीतपक्षसे इतर 'पर' है, उसका जो प्रतिपादन करते हैं वे 'परवादि' हैं, उनका जो खण्डन करता है वह 'परवादि-मल्ल' है; यही नाम मेरा नाम है, ऐसा लोग कहते हैं।

१२. इससे आगेका शिलालेखका बहुत-सा अंश घिसा हुआ है : **मलधारि** और **द्रमिलसंघ** के नाम मिलते हैं।

१३. तत्पश्चात् **अजितसेन-पण्डित** और **चन्द्रप्रभ**, जिनके शिष्य **अजितसेन-देव** थे, की प्रशंसा आती है। इसके बाद समय-सभामें दिवाकर-सूर्यके समान **समयदिवाकर**के शिष्य **सूरि चन्द्रप्रभ**की प्रशंसा आती है।

१४. **चन्द्रप्रभ**-मुनिनाथने सल्लेखना व्रत धारणकर शकवर्ष ११०५, शोभकृद्वर्ष, मंगलवार, भाद्रपद शुक्ला १०, उत्तराषाढ़ा नक्षत्रमें, प्रभातसमयमें देहोत्सर्ग किया।]

[EC, III, Tirumakudlu Narasipur tl., no 105.]

४११

अळेसन्द्र;—संस्कृत और कन्नड।

[शक ११०५=११८३ ई०]

[अळेसन्द्र (नेल्लीकेरी प्रदेश) में, गाँव के मुख्य प्रवेशद्वार के दक्षिण को पड़े हुए पाषाणपर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

वीतराग । स्वस्ति समधिगतपञ्चमहाशब्द महामण्डलेश्वरं द्वारावतीपुरवराधीश्व यादवकुलाम्बरद्युमणि सम्यक्त्वचूडामणि वासन्तिकादेवीलब्धवरप्रसाद मलेपरोळु गण्डाद्यनेकनामावलीसमलङ्कृतरप्प श्रीमन्त्रिभुवनमल्ल **विनेयादित्यहोय्सळं कोङ्कणदाळ्वखेडद वयल्-नाड तळेकाड् साविमले**यिनोळगाद भूमियेल्लमं दुष्ट-निग्रह-शिष्टप्रतिपाळनेयिं ।

सळनेम्बनागे यादव- । कुलदोळु पुलि पाये कण्डु मुनि पुलियम्पोय् ।
सळ येने पोय्दुदरिं **पोय्- । सळ** वेसरवनिन्दवागे तद्वंशजरोळ् ॥
कन्द ॥ सळ-नृपनि वळियं यदु- । कुळ-वीरप्पलवरोगेदरवर अन्वयदोळ् ।
वळवद्विरोधिभूभृत्- । कुलिशं बनियिसिदनेसेये **विनेयादित्यं** ॥
वलिदडे मलेदडे मलेपर । तलेयोळु वाळिदुवनुदित-भव्य-रसवशदिं ।
वलिपद मलेयद मलेपर । तलेयोळु कैयिडुवनोडने **विनेयादित्यम्** ॥
आ मण्डलेश्वरन मनोनयनवल्लभे ।
परिजनकं पुर-जनकं परमार्त्थं ताने पुण्य-देवतेयेनलेम् ।
धरेयोळु नेगळ्दळो **केळेयब्- । बरसि** जनाराध्ये भुवन-वनितारत्नम् ॥

अन्तःरिर्व्वरं सुखसङ्कथाविनोददिं **सोसवूर** नेलेवीडिनोळु राज्यं गेय्युत्तमिर्द्दो-**केळेयल-देवियरु मरियाने**-दण्डनायकनं तन्न तम्मनेन्दु रक्षिसि **विनेयादित्य-पोय्सल देवरु** तानुमिर्द्दु **मरियाने-दण्डनायकङ्गे देकवे-दण्डनायकितियं** कन्यादानं माडि आसन्दि-नाड **सिन्दगेरेयं** प्रमुखसहितं नेलेयागि **शक-वर्ष ९६७ नेय सर्व्वजित् संवत्सरद फाल्गुण-सुद्ध-तदिगे सोमवारदन्दु** कन्यादानमुं भूमि-दानमुमं धारा-पूर्व्वकं कोट्टु स्व-धर्म्मदिं रक्षिसुत्तमिरे ।

धरणिगे नेगळ्दा-पोय्सळ- । नरपतिग कमनकम्बुकन्धरे केळेयब्- ।
बरसिगमुदियिसि नेगर्द । धरित्रियोळु **वीर-गङ्गनेरेयङ्ग**नृपम् ॥

आ-विभुगं नेगळ्द्देचल- । देविगमुदियिसिदरदटरेने **बल्लाळ-** ।
क्ष्मा-वल्लभ **विष्णु**-धरि- । त्री-वल्लभ सुभटनुदितनुदे**यादित्यम्** ॥
एनितित्तडमेनितिर्रिदडम् । अनितोप्पुं कूर्प्पुमप्पुवे पेर्रगौद्धुकेम्-
मने नोड दिटरे **बळ्ळा-** । **ळ**-नृपाळने चागि **बल्लु-देव**ने वीरं ॥

अन्तु सुख-संकथा-विनोददिं श्रीमद्राजधानी **वेलुहुर**-वीडिनोळु राज्यं गेय्युत्तं इर्द्दु **मरियाने**-दण्डनायकन द्वितियलक्ष्मी-समानेयरप्प **चामवे-दण्डनायकितिगं** पुट्टिद **पदुमलन्देवि चामल-देवि बोप्पा-देवि**यरिन्ती-मूवुरं शास्त्रगीत-नृत्यदलु प्रवुडेयरुं मूरुं-राय-कटक-पात्र-जस-दळेयरेनेसि बळेयला-मूवरु कन्यकेयरनोन्दे-हसे-योळ् **बल्लाळ-देवं** विवाहमाडि **सक-वर्ष १०२५ नेय सुभानु-संवत्सरद कार्त्तिक-शुद्धदशमि-बृह(स्पति)वारदन्दु** मोलेवाज्ञ-रिणक्के **मरियाने**-दण्ड-नायकङ्गे सिन्दगेरेय एरडनेय-पर्यायदलु प्रभुत्व-सहितं नेलेयागि पुनर्द्धारापूर्व्वकं कोट्टु सलिसुत्तमिरे ।

तुळु-देशं (चक्र) चक्रगोहं तळवनपुर उच्चंगि कोळाल पळु-
मले बङ्कक्कञ्चि कङ्चिनुव **हुडिय-घट्ट बयल् नाडु नीला** ।
चळ-दुर्ग्गं रायरायोत्तम-पुर तेरेयूर्कोयतूर्गोण्डवाडि-
स्थळवं भ्रू-भङ्गदिं गेल्दतुळ-भुज-बळातोपदि **विष्णु**-भूपं ॥
अरि नृपरं तडङ्गडिदु वेलियनिक्कि पट्टु प्रतापवुर-
ब्बिरे तळकाड नीडु-गडिदल्कुरें सुट्टु तुरङ्गदञ्चि-सञ्-
चरणदिनुत्तु वीर-रसदिं हदनाडे कूडे बित्तिदम् ।
सु-रुचिर-कीर्त्तियं नृप-सिखामणि **साहस-गङ्ग-होय्सळम्** ॥

स्वस्ति श्रीमतु काञ्चि-गोण्ड विक्रम-गङ्ग **विष्णवर्द्धनदेवं दोरसमुद्रद** नेलेवी-डिनोळु पृथ्वी-राज्यं गेय्युत्तमिरे तत्पादपद्मोपजीविगळप्प हिरिय-मरियाने-दण्डनायकन मय्दुननप्प **गङ्गराजदण्डाधीशम्** ।

मत्तिन-मातवत्तिरलि **जीर्ण्ण**-जिनालय-कोटियं क्रमं-
बेट्टिरे मुन्निनन्ते पल-वूर्गळुमं नेरें माडिसुत्तवत्-

सुजन-पात्र-दानदोटवं मेरेवुत्तिरे गङ्गवाडि-तोम्-
भट्टरु-सासिरं कोपणवादुदु गङ्गण-दण्डनाथनिम् ॥

वृत्त ॥ कदनदोळान्तरं गेल्दुवडेम् गळ निन्न पेसर्ब्जितारियेम्-
बुदे बुध-बन्धुवेम्बुदे जनाग्रणियेम्बुदे बोप्प-देवनेम्-
बुदे कलियेचि-राव-विभुवेम्बुदे गङ्गन गन्ध-हस्तियेम्-
बुदे रण-रङ्ग-पाण्डु-सुतनेम्बुदे वैरि-घरट्टनेम्बुदे ॥

आतन मग्दुनरु संस्त (समस्त) राज्यभरनिरूपितमहामात्यपदवीप्रख्यातरुमभिजातरुं श्रीमदर्हत्परमेश्वरपदपयोजषट्चरणरुं । रत्नत्रयाळङ्कृतरुमप्प श्रीमन्महाप्रधानं मरियाने-दण्डनायकनुं श्रीमदादि-भरतेश्वर नेनिप भरतेश्वर-दण्डनायकनुं तम्मोळभेद-भावदिं गुणि-गुण-स्वरूपरागि ।

उन्नतवंशनुत्तम-कुलोत्तम भद्र-गुणान्वितं जगत्-
सन्नुतदानयुक्तविभवं मरियाने रिपु-प्रभेदनोत्-
-पन्न-जयाभिरामनेनगीतने नच्चिन पट्टदानेयेन्द् ।
एम् नेरें नच्चि माडिदनो विष्णु-नृपं ध्वजिनी-पतित्वमम् ॥

जिनपति देव्वनात्म-जनकं-प्रभु पेर्ग्गडे देचि-राजनोळ्-
पिन कणि तन्न तायू नेगळ्द नागल-देवि चमूप-नक्त्र-चन्-
दन-तिळकं [...] मरियाने-चमूपति नायनिन्तु सन्-
जन-विनुतान्वयोन्नतिये जक्कल-देविये धन्ये धात्रियोळ् ॥

तोळतोळगि वेळगि कीर्त्ति- । वळयदिनळवट्ट विष्णु-भूपन राज्य-
स्तळके मिसुपेसेव-हेमद । कळसं केवळमे भरत-दण्डाधीशं ॥

कान्तं श्रीमव्यचूडामणि भरतचमूनाथनात्यन्तिक-श्री-
कान्तं त्रैलोक्यनाथं परम-जिनने देवं समस्त-सद्-सिद्-
धान्तं श्रीमाघनन्दिव्रतिपति गुरुगळ् तन्दे मारैयन् एन्दन्द् ।
इन्तुं तां धन्येयेन्दो-हरियलेयेने भूमण्डलं बिच्चळिक्कुम् ॥

एणिकेय लोकद-गणिकेयर् । एणेयल्लरु नोडे चिक्क-हरियळे गारम् ।
गुणदोळु शासन-देवियर् । एणेयप्परु भरत-राजनर्द्धाङ्गनेनम् ॥

इन्तु पोगळ्तेगे नेलेयाद कौण्डिल्य-गोत्रद डाकरस-दण्डनायकन एचव-दण्णायकितिय मक्कळु नाकण-दण्डनायकनुं मरियाने-दण्डनायकनुं अवर मक्कळु नाचण दण्डनायकनातन सति हम्मवे दण्णायकितियुं डाकरस-दण्डनायक आतन-सति दुग्गव्वे-दण्णायकिति अवर मक्कळु मरियाने-दण्डनायकन् भरतिम्मेय-दण्डनायकनुमवर तङ्गे ।

जिन-पद-पद्म-भक्ते सुचरित्र-नियुक्ते विनीते माचि-रा-
जन सुते काव-राजन मनः प्रिये चाकलेयद्धूजना-
नन-विळसद्ललामे मरियानेय सद्भरतेश-दण्डना-
थन किरि-दङ्गे मन्मथन विक्रम-लक्ष्मियोलादमोप्पुवळ् ॥

श्रीमत्काञ्चि-गोण्ड विक्रम-गङ्ग विष्णुवर्द्धन-देवनन्वयद मरियाने-दण्डनायकनुं भरतण-दण्डनायकनुं सर्व्वाधिकारिगळुं माणिकभण्डारिगळुं प्राणाधिकारिगळुं आगि सुखदि सलुत्तमिरे । विष्णवर्द्धनदेवं श्रीमद्राजधानि-दोरसमुद्रद नेले-वीडिनोळु पृथ्वी-राज्यं गेय्युत्तमिरे उत्तरायण-संक्रमानदोळ··नदोळु तम्म मगनं विट्टि-देवन हेसरनिट्टु १००० होन्नं पाद-पूजेयं कोट्टु आसन्दि-नाड सिन्दगेरेयुमं वाय्-वेण्णेगे वग्गवळ्ळियुमं कलिकणि-नाड दडिगनकेरेय प्रभुत्वमुमं विट्टि-देवन स्वहस्तदिं धारा-पूर्व्वकं हडदु सुखदिनिरे ।

वनियिसिदं विष्णु-मही- । शन वधु लक्ष्मा-देविगनुपम-नारसिंघा- ।
वनिपं नतरिपुभूपा- । ळ-निकाय-ललाट-तटाघट्टित-चरणम् ॥

श्रीमन्महा-मण्डलेश्वर नारसिंघ-देवरु राज्यं गेयुत्तमिरे तत्पादपद्मोपजीविगळु महाप्रधान मरियाने-दण्डनायकरुं भरतिम्मेय-दण्डनायकरुं तम्मन्वयद सिन्दगेरेय वग्गवळ्ळिय दडिगनकेरेय प्रभुत्वके ५०० होन्नं पाद-पूजेदं कोट्टु नारसिंघ-देवरु कैयलु पुनर्द्दत्तियागि हडदु सुखन्दिनिरे ।

काल-निभ-प्रतापि नरसिंघ-महीपतिगं मदेभ-ली-
लालस-याने कम्बुनिमकन्धरे एचल-देविगं जय- ।

श्री-ललनेश्वनीतनेने पुट्टिदनूर्जित-पुण्य-मूर्त्ति वल्-
लाल-नृपाळकं समदवैरिमहीभुजदर्प्पभञ्जनम् ॥
कलिकालजातपुत्रमञ्ळतरदुराचारकन्दोद्दहदिन्दम् ।
पोले पोर्द्दल् पेसि वेवचळवळिद् मही-कान्तेयं रक्षिसल्का-
चलवानुं ताने वन्दिल्लवतरिसिदवोला-वीर-वल्लाल-देवम् ।
कुलवात्याचारसारं नृपवरनुदर्द्दं-गेय्दनाश्चर्य्यसौर्य्यन् ॥

श्रीमन्महामण्डलेश्वरन् असहायशूर निश्शङ्कप्रताप होय्सळ-वीर-वल्लाल-देवर वत्पादपद्मोपजीविगळप्प श्रीमन्महाप्रधानं **भरतिमय्य-दण्डनायकरुं** श्रीमन्महाप्रधान **वाहुवलि-दण्डनायकरुं** सर्व्वाधिकारिगळु माणिक्य-भण्डारिगळुं प्राणाधिकारिगळुमागि सुखादिं सलुत्तमिरे ।

भरतचमूपतिगनुचितान्वय-चार-चरित्रदोप्पुवा-
हरियले-दण्डनायकितिगं गुणरत्नपयोधि पुट्टिदम् ।
परिचित-नीति-शास्त्र निखिलास्त्र-विशारदनिष्ट-विशिष्ट-मा-
लुर-निवि **विट्टि-देव**नखिळावनि-मण्डन-मौळि-मण्डनम् ॥
सेनापति मरियानेगे । भानुगे कानीननादवोल् सुतनादम् ।
भानु-सम-श्रुति त्रिभुव-नि- । वानं गुणरत्नराशियप्पं **वोप्पम्** ॥
मरियाने-दण्डनायक्रिविन कणियेनिसि पुट्टिदं वन-विनुतम् ।
करमेरेयिल्लद चवदि । नेरेदं जित-वीर-वैरि **हेग्गडे-देवम्** ॥
भरत-चमूपन पुत्रं । पुरुषार्थाम्बोधि मान-कनक-नागेन्द्रम् ।
पु···खचर मनु-मुनि- । चरितं **मरियाने-देव**नदटर गोत्रम् ॥
अनुपम-दण्डनाथ-भरतात्मजे भू-नुत- ··· नेत्रि-रावनङ्-
गने विसु-राय-देव-मरियानेगळम्बिके **सिन्दवट्टोळ्** ।
वनतर-कूट-कोटि-नुत-पार्श्व-जिनेश्वर-गेहमं जगज्-
-जन-नुतमागे माडिसिद **शान्तल-देवि** कृतार्थे धात्रियोळ् ॥
जिन-जननिगेणेये **वम्मवे** । जननि गड तण्डे नेगळद **हेग्गडे-मार**ङ्ग ।
अनुनयदे पुत्रनादं । दिन-पतिगे ··· ··· निप-तेजदातं **शान्तं** ॥

तङ्गेयरु हेमल-देवि दुग्गिल-देवियरु ।
भरत-चमूपर्नि पिरियना-मरियाने-चमूपना-मू- ।
वर··णं महाप्रभु महागुणि वीर्य्यद धैर्य्यदागरं ।
भरत-चमूपनङ्गभव-रूपनपास्त-रवि-प्रतापनुद्-
धराळवि विक्रम क्रम-विनिर्ज्जित-शत्रु-पराक्रमाक्रमम् ।
अन्तेनिप भरतसेना- । कान्तन कडु-होन्न कान्ते बूचले भू-च- ।
क्रान्त-स्थापित-शशि-मणि- । कान्ति-लसत्-कीर्त्ति-मूर्त्ति सति रति-यन्नळ् ॥
भरत-चमूपगे तम्मं । स्थिर-गुणनभिमतनेने बाहुबलि-दण्डेशम् ।
पुरुपार्थ-सार्थ-तीर्थं । पर-हित-विद्याधरेन्द्रनिन्द्रेज्य-निभम् ॥
आ-विभुविन सति नागल- । देवि जगत्ख्याते सीते पति-हितदिन्दम् ।
भावभवाङ्गने रूपि । भाविसे तां जान्मेयिन्द लक्ष्म्येनिप्पळ् ॥
ओदवद-रूपिनिन्दे नयदिन्द्··नोडुव कण्ण बे···तां ।
पदेदनुरागदिन्द चमूपति भरतनेम्ब महा-गजेन्द्रमम् ।
पुडिदळु तन्न यौव्वनद कम्बदे (आ-) बाचले-नारि··· ।
पदे जिनभक्ते पुण्यवति दान-विनोदे पतिव्रता-गुणि ॥
वेसनं बल्लाळ-भूपम्बेससे भरत-दण्डाधिपं रागादिं वा- ।
यु-सुतं रामाज्ञेयिन्दं नडव-तेरंदे बीळ्कोण्डु सामग्रियिन्दन्द् ।
असुहृद्देशङ्गळं केसुरिगे नेरेये बिट्टन्ते निष्कण्टकं भू- ।
प्रसरं तानाय्तधीशङ्गेनिसि पगेय चिन्तिल्लदन्तागे कोण्डम् ॥
ताङ्कदे युद्ध-रङ्गदोळिदिर्च्चुवने ··· ··· गर्व्वदिम् ।
··· मलेवन्दडवनं ··· ··· ओन्दे थट्टि वीररम् ।
तुङ्ग-भुजासियं तविसि विक्रम-लक्ष्मीगे गण्डनाद पेम्-
पिङ्गे बगल्वनं पोगळ्वुदी-भरतेश्वर-दण्डनाथन ॥
कुदुरेयनेरलङ्कर्णगङ्क्षियनोय्यने नीडे वैरिगळ् ।
कदन-पराङ्मुखर्प्परिदु बेट्टमनेरिदरुळ्दुदिक्किटर् ।
नदिगळोळद्दरङ्गुळिगळं नेरे कव्चिदरेय्दे हुत्तने-

रिदरिदु दण्डनाथ भरतान्वन बाहुबलि ··· ··· दर्श ॥

नाभि-सुत-सुवर तेरेंदे स- । नाभिगळ् आदि-प्रभाव-चरितप्रभवर् ।

श्शोभित-शुभ-मति-सुवर- । शोभितरी-भरत-बाहुबलि-दण्डेशर् ॥

स्वस्ति श्रीमन्महामण्डलेश्वरं तळकाडु-कोङ्गु-नङ्गलि-बनवसे-उच्चङ्गि-हानुङ्गलु-गोण्ड भुजबळ वीरगङ्गन् असहाय-शूर शनिवार-सिद्धि गिरि-दुर्ग-मल्ल चलदङ्कराम निश्शंकप्रताप **होय्सळ-वीर-बल्लाळ-देवरु** श्रीमद्राजधानि-दोरसमुद्रद नेलेवीडिनोळु सुख-सङ्कथाविनोददिं पृथ्वी-राज्यं गेय्युत्तमिरे **शक वर्ष ११०५ नेय शुभकृत्संवत्सरद मार्ग्गशिर-शुद्ध-पाडिव-सोमवारदन्दु कुमार-वीरनारसिंघ-देवं** दन्मोत्सव-महा-दानदोळ् तम्मन्वयद **सिन्दगेरेय** वळ्ळवळ्ळिय कलुकणि-नाड **दडिगणकेरेय अणुवसमुद्र** प्रभुत्वनुमं अणुवसमुद्रदलु कन्नेवसदियागि माडिसि आ-बसदिगं **चाकेयनहळ्ळिय** बसदिगं देवपूजे आहारदानं [illegible] सेसेयं तेचु अणुवसमुद्र सिदायद मोदल होन्नोळगे इप्पत्तु-होन्नं व[illegible]हित नाल्वत्तु-होन्नं स्वाण-सहित गळिहि श्रीमन्महाप्रधान **भरतिमय्य दण्डनायकरु** श्रीमन्महाप्रधानं **बाहुबलि-दण्डनायकरुं बळ्ळाल देव**न श्री-हस्तदलु धारा-पूर्व्वकं इत्तु **श्रीमूलसंघ देशियगण पोस्तक-गच्छ कोण्डकुन्दान्वय इङ्गळेश्वरद बळि कोल्लापुरद सावन्तन-बसदिय** प्रतिबद्ध **श्रीमाघनन्दि-सिद्धांत-देवर** शिष्यर **श्रीगंधविमुक्त-सिद्धांत-देवर** अवर शिष्यर श्री-**देवकीर्तिपण्डितदेवर** अवर शिष्यरप्प श्री-**देवचंद्र-पण्डितदेवर्गें शक वर्ष ११०६ नेय शोभकृत्संवत्सरद पुष्य शुद्ध-दशमी-सोमवारद** उत्तरायण-संक्रमण-महादानदलु धारा-पूर्व्वकं माडि कॊट्ट दत्तिगळ वृत्ति ॥ (आगेकी ६ पंक्तियोंमें दानकी विशेष चर्चा और हमेशाकी तरह अन्तिम वाक्यावली तथा श्लोक हैं)

[इस लेखमें सबसे पहले जिनशासनकी प्रशंसा है। वीतराग। (अपने [illegible]सहित) त्रिभुवनमल्ल **विनेयादित्य-होय्सळ**ने कोङ्कण, आळ्वखेड, बयल्नाड्, तलेकाड् और साविमलेसे घिरी हुई तमाम भूमिमें दुष्टनिग्रह-शिष्ट प्रतिपालन किया था।

यादव वंशमें सळ हुआ था। एक चीतेको किसीपर शिकार करनेके लिये उछलते हुए देखकर और किसी मुनिके यह कहनेपर कि "मारो (पोय्) सळ!" सळने इसे मारकर 'पोय्सळ' नाम प्राप्त किया था और यह नाम आगे चलकर उसके तमाम वंशका द्योतक हुआ। यदुवंशमें सळके बाद बहुत-से प्रबल राजा हुए, उन्हींमें एक **विनेयादित्य** हुआ। उसकी रानीका नाम केलेयब्बरसि था।

जिस समयमें दोनों (विनेयादित्य और केलेयब्बरसि) सोसवोरुमें रहते हुए सुख और बुद्धिमत्तासे राज्य कर रहे थे शक सं० ९६७ में केलेयल-देवीने मरियाने दण्डनायकसे **देकवे-दण्डनायकिति**को ब्याह दिया और भेंटमें आसन्दिनाड्के सिन्दगेरीको उसे दिया।

विनेयादित्य पोय्सळ और रानी केळेयब्बेसे राजा वीर-गङ्ग-एरेयङ्ग उत्पन्न हुआ। वीर-गङ्ग एरेयङ्ग और एचल-देवीसे **बल्लाल, विष्णु** और **उदयादित्य** उत्पन्न हुए थे। बल्लाल या बल्लु-देवकी प्रशंसा।

जिस समय बल्लालदेव अपनी राजधानी बेलुहूरुमें रहकर सुख-शान्तिसे राज्य कर रहे थे, मरियाने-दण्डनायककी दूसरी पत्नी **चामवे दण्डनायकिति**से पद्मलदेवी, चामलदेवी और बोप्पदेवी उत्पन्न हुई थीं। बल्लालदेवने इन तीनों कन्याओंका विवाह एक ही मण्डपमें शक सं० १०२५ में विभिन्न तीन राजाओंकी राजधानियोंमें कर दिया और उनकी दूध पिलाई (wet nursing)की तनखाके रूपमें द्वितीय पीढ़ीके मरियाने-दण्डनायकको पुनः सिन्दगेरीका स्वामित्व दे दिया।

राजा विष्णुने तुलु देश, चक्रगोट्ट, तळवनपुर, उच्चंगि, कोळाल, सप्तमले, बल्लूर, कञ्चि, कोङ्गु, हडिय-घट्ट, वयल्-नाड, नीलाचल-दुर्ग, रायरायपुर, तेरेपूर कोयत्तूर और गौण्डवाडि-स्थल,—इन सब प्रदेशोंको जीता था। साहस-गङ्ग-होय्सळने विरोधी राजाओंका नाश करके तलकाड्को (खादके लिये) बनाकर घोड़ोंके खुरोंसे उसे जोतकर अपने वीररसकी नदीसे उसे सींचकर अपने यशके अच्छे बीजसे इसे बोया।

जिस समय कलिके अधीनस्थ करनेवाले त्रिकद-गङ्ग-विष्णुवर्द्धनदेव राज्य करते हुए अपने निवासस्थान दोरसमुद्रमें थे, उनका पादपद्मोपजीवी, ज्येष्ठ मरियाने-दण्डनायकका साला गङ्गराज-दण्डाधीश था। गङ्ग-दण्डनायने अनेक जिन-मन्दिरों की पुनर्स्थापना की थी, अनेकों ध्वस्त नगरों को फिर से बसाया और अनेकों दानवितरण किये थे, इस कारण गङ्गवाडि ९६०००, कोपणके समान, चमक रही थी। उसका पुत्र (प्रशंसा सहित) बोप्पदेव था। उसके साले या जीजा मरियाने दण्डनायक और भरतेश्वर दण्डनायक थे।

विष्णुवर्द्धन ने मरियाने को अपनी सेना का सेनापति बनाया था।

कौण्डिन्यगोत्रीय डाकरस-दण्डनायक और एचब-दण्डनायकितिके पुत्र नागण-दण्डनायक और मरियाने दण्डनायक थे। डाकरस-दण्डनायक की पत्नी कुम्मव्वे-दण्डनायकिति थी और इन दोनों के पुत्र मरियाने-दण्डनायक और भरतिम्मेय-दण्डनायक थे।

जिस समय मरियाने-दण्डनायक और भरतम-दण्डनायक 'सर्वाधिकारी' के पद पर थे, तब उन्होंने अपने पुत्र का नाम विट्टिदेव रक्खा और उसे १००० 'होन्नु' देकर, विट्टिदेवसे उसके ही हाथ से आसन्दि-नाड् की सिन्दगेरी बगवळ्ळी सहित तथा कलिकणि-नाड् में दिण्डिगनकेरी का प्रमुत्व प्राप्त किया।

राजा विष्णु की रानी लक्ष्मी-देवी से नारसिंह उत्पन्न हुआ था। जिस समय वह शासक था, उस समय मरियाने-दण्डनायक और भरतिम्मेय-दण्डनायक ने ५०० 'होन्नु' देकर के उसके हाथ से सिन्दगेरी, बगवळ्ळी और दडिगनकेरीके प्रमुत्वका नया दान प्राप्त किया।

राजा नारसिंह और एचल देवीसे वीर-बल्लाल-देव (प्रशंसा सहित) उत्पन्न थे।

भरत-चमूपति और हरियले-दण्डनायकिति से विट्टिदेव उत्पन्न हुआ था। मरियाने-सेनापति से बोप्प उत्पन्न हुआ था; मरियाने-दण्डनायकसे हेग्गड-देव

उत्पन्न हुआ था; और भरत-चमूपसे एक पुत्र मरियाने-देव उत्पन्न हुआ था। भरत-दण्डनाथकी पुत्री, एचि-राजाकी पत्नी, तथा रायदेव और मरियानेकी माँ शान्तल-देवीने सिन्दघट्टमें एक पार्श्व जिनमन्दिर बनवाया।

अन्तमें इस लेखमें बताया है कि जिस समय, (अपने पदोंसहित), निःशंक-प्रताप-होय्सल वीर-बल्लाल-देव अपनी राजधानी दोरसमुद्रमें थे और अपने राज्य का शासन कर रहे थे :—शकवर्ष ११०५में, जब कि उन्होंने अपने पुत्र वीर-नारसिंघ-देवके जन्म-समयमें अनेक दान दिये तब महाप्रधान **भरतिमय्य-दण्ड-नायक** और महाप्रधान **बाहुबली-दण्डनायकने** बल्लालदेवके हाथों से अपने कुलकी सिन्दगेरी, बळ्ळबळ्ळी तथा दडिगनकेरि और कलुकणी-नाड्में अणुवसमुद्रके साथ-साथ उसके लगानमेंसे कुछ दान प्राप्त किया। यह दान उन्होंने अणुवसमुद और चाकेयनहल्लिकी बसदियोंके लिये लिया था। अणुव-समुद्रकी बसदि उन्होंने ही बनवायी थी। शकवर्ष ११०६में वह दान उन्होंने **देवचन्द्र-पण्डित-देवको** समर्पित कर दिया। वे देवकीर्त्ति-पण्डित-देवके शिष्य थे, ये **गन्धविमुक्त-सिद्धान्त-देवके** शिष्य थे, जो माघनन्दि-सिद्धान्तदेवके शिष्य थे। माघनन्दि-सि०-देव श्रीमूलसंघ, देशिय-गण, कुन्दकुन्दान्वय तथा इङ्गु-लेश्वरबलिके **कोल्लापुर** की सावन्त बसदिके थे।]

[EC, IV, Nagamangala tl.,no 32]

४१२

चिक-मगलूर-कन्नड।

वर्ष क्रोधन [= ११८४ ई० (लू० राइस).]

[चिक-मगलूर में, जलके अन्दर पड़े हुए पाषाणपर]

स्वस्ति श्रीमतु क्रोधन-संवत्सरद वैशाख-शुद्ध-पञ्चमी आदिवारदन्दु श्री-वीर-बल्लाळ-देवं पृथ्वी-राज्यं गेय्युत्तिरे **किरियमुगुळिय** कट्टित-काळगदलु **मुद्दगौडन** मग ... कादि बिद्दु सुर-लोक-प्राप्तनाद।

[(उक्त मितिको), जब वीर-बल्लाल-देव पृथ्वीपर राज्य कर रहे थे:— किरिय-मुगुळिकी सीमाके युद्धमें बुद्-गौडका पुत्र बम्मय्य युद्धमें लड़ा और मरकर स्वर्गको प्राप्त किया।]

[EC, VI Chickmagalur tl., no 5]

४१३

अजमेर;-प्राकृत।

[सं० १२४३=११८६ ई०]

संवत् १२४३ वैशाख सुदी १ श्रीमूलसंघे (वे) देव श्रीवासुपूज्य: प्रतिमा साधुहालण सुतवद्धमान तथा यांत देव तथा साधुपुत्रमादिपाल देवप्रतिमा प्रतिष्ठापितमिती।

अर्थ स्पष्ट है।

[JASB, VII, 52, no2.]

४१४

तेरदल;—कन्नड़।

[शक ११०९=११८७ ई०]

वीर-कणिङ्गराय-गज-केसरि सिंहणराय-शैळ-निर्वारणवज्र मार्म्मलेव गूर्ज्जर-राय-भुज-प्रताप-नीरेरुह-वन्य-दं (द) न्तिवेने पेर्म्मेयनोम्मेयुमान्तु गण्ड-पेण्डारनुदारनुर्विगेसेवं विभु तेज्ञुगि-दण्ड-नायकन्॥ समदारि-क्षितिभृत्-कदम्बकदोळत्यामीळ-वज्राग्नि तेजमनुन्मत्तमहीशवंशवनदोळ् दुर्व्वार-दावाग्नि-तेजमनन्योर्व्विप-सैन्य-सागरदोळुग्रद्वाडवोग्राग्नि-तेजमनोरन्तिरे तोरि विश्व-धरेगिन्ती गण्डपेण्डारनश्रमदिन्दं मेरेदं निज-प्रचण्ड-बाहु-तेजमं तेजनन्॥[1]

---

1. पाँच पादोंका यह श्लोक है।

भूरि-त्यागं विपश्चिज्जनजनितविपत्त्यागवुग्रप्रतापम्
क्रूरार (रा) ति-प्रतापं मृदु मधुर, वचः-सम्पदं साधु सत्य-
श्री-रामा-सम्पदं तानेनिसि जन-नुतं तेज-दण्डाधिनाथम्
पारावारावृतोर्व्वीवळयदोळतिविख्यातिवेत्तोप्पुतिप्पन् ॥

आतन तनयं विनयोपेतं विद्विष्ट-दण्डनाथ-कुमारव्रातानळ-पविदण्ड-ख्यातं श्री-भायिदेवनेसेवं जगदोळ् ॥

परदण्डाधिपनन्दनर्प्पलवरं पुट्टल्कमुं-पुट्टुगुम्
गुरु-गोत्रक्कपसद्यशं परिजनक्कुद्वेगमिन्ता चमू-
वर-तेजात्मज-भायिपं पदपिनि पुट्टल्क पुट्टित्तु वज्रर-
हृपं स्वकुलक्क तीव्र-परितापं शत्रुमळ्गा तृणम् ॥
क्रूरारातिनृपप्रधान-तनुजातानीकमं गण्ड-पेण्-
डारं तेजुगि-दण्डनाथतनयं श्री- भायिदेवं जगद्-
वीरं तीव्रकरासियिं पुगिसुवं स्वस्थानमं तानन-
ल्काराम्पक्कंदनैक-वीरननेकाम्भोधि-गम्भीरनन् ॥

आलुरवागे तागिदहितर्क्कळनाहवरङ्गभूमियोळ् पेसददिर्च्चं मिक्क किरु-गण्टकरं-मुरुदिक्कि कून्दि-मू-सासिरमं वसं निमिरे सुस्थिरदिं नृपनीयलाळ्वने सासिय-भायि-देव-पृतना-पति तेजुगि-देव-नन्दनम् ॥

पर-भूभृत्-कुळमं तगुळ्दु शरणायातर्क्कळं कादु पुण्-
डेर दर्गित्तु समस्त-देव-सदनक्कं विप्र-संघक्कदा-
दरदिं भू-गृह-दानमं दयेयिनादं माडि कीर्त्यङ्गना-
वारङ्गल् विभु-भायिदेव-सचिवं वल्लं परर्वल्लरे ॥

कडलनेड-गलिसि शेपन पडयोळ् दिक्-कुम्भि-कुम्भदोळ् सुर-सभेयोळ् विडदे कलि-भायिदेवन तोडवेनिसिद कीर्त्तिनर्त्तिपळ् नलविन्द ॥ अन्तु दशदिशप्र-वर्त्तित कीर्त्तिकान्तनेनिसिद कुन्तळ-मही-वल्लाभनीये कूण्डि-मूरु-सासिरमुमं निःकण्ट-कदिन्दाळुत्तं राय-दण्डनाथ-गण्ड-पेण्डारं कुमारं भायिदेव दण्डनायकर् श्रीमत्-

तेरिनाळद गोङ्क-जिनालयद श्रीनेमि-तीर्थेश्वरन अङ्ग-रङ्ग-भोगक्कं ऋषियराहार-दानक्कं खण्डस्फुटित-जीर्णोद्धारक्कं शक-वर्ष ११०९ नेय प्लवंगसंवत्सरद चैत्र शु १० बृहस्पतिवारदन्दु मुन्न गोङ्करसर् बिट्ट पूर्व्ववृत्तियेप्पत्तेरडु आ ७२रि बड-गला कोलल् सर्व्वबाधापरिहारविागि बिट्ट मत्त मूवत्तारु ३६ मत्तं धवलारक्के अङ्गडि-गेरि-पर्य्यन्त-निवेशनमं बिट्टु शासनद कल्लुगळं प्रतिष्ठेयं माडिदर् ।

मद्वंशजाः परमहीपतिवंशजा वा
पापादपेतमनसो भुवि भावि-भूपाः ।
ये पालयन्ति मम धर्म्ममिदं समस्तं
तेषां मया विरचितोऽञ्जलिरेष मूर्ध्नि ॥

इदु तानैहिक-पारमार्थिक-सुखक्कादासत्तं धर्म्ममिन्तिदनुल्लंघिसिदातनुग्रनरको-द्गिर्णोत्त-संवर्त्त-गर्त्तदोळाळगुं परिरक्षे गेय्वनुपेन्द्राहिन्द्रा-देवेन्द्र-सम्पददोळ् कूडुगुम-न्तिन्त पडेगुमाकल्पायुमं श्रीयुमन् ।। प्रियदिन्दमिदनेय्दे काद पुरुषङ्गायुं महा श्रीयुमक्कुविदं कायद पातकंगे पिरिदुं गङ्गा-गया-वारणासि-कुरुक्षेत्र (त्रा) दि पुत्र-गो-द्विज-मुनि-व्रातंगळं कोन्द पातकमक्कुं विडदिक्कुमा पुरुषनेन्दुं रौरवस्थानमम् ॥ शासनमिदावुदे ल्लिय शासनमारित्तरेके सलिसुवेनानो शासनमनेम्ब पातकना सकळ रौरवक्के गळङ्गवनिळिगुम् ॥

स्वदत्तां परदत्तां वा यो हरेत वसुन्धराम् ।
षष्टिवर्षसहस्राणि विष्ठायां जायते कृमिः ॥

[IA, XIV, p. 14-26 (lines 68-85)] t. and tr.

४१५-४१६

पर्वत आबू—संस्कृत

[सं० १२४५ = ११८८ ई०]

श्वेताम्बर लेख मालूम होते हैं ।

[Asiat. Res., XVI, p. 312, no XXII, a.]

४१७

अजमेर;—प्राकृत ।

[सं० १२४६ = ११८६ ई०]

संवत् १२३६ *फा सुदी ४ सुक्रे साधूलाहड पतनी तोलोत घासेडी वहुचिल वितसी लषमसी महासीमलिनाथप्रतिमाकारपिताः ।

अर्थ स्पष्ट है ।

[JASB, VII, p. 52, no 1, t.]

४१८

अजमेर;—प्राकृत ।

[सं० १२४६=११८६ ई०]

संवत् १२३६ फा वदि ४ सुक्रे आचार्य **माणिक्यदेव**-सिष्य**सोमदेव** अर्जि-का**मदन श्री**सर्वगोष्ठिका प्रणमति ।

इसमें वताया है कि आचार्य **माणिक्यदेव**के शिष्य **सोमदेव**की मूर्ति किसी अर्जिका **मदन श्रीने** प्रतिष्ठापित की और वह उसकी रोज वन्दना करती है ।

नोटः—ये सव लेख अजमेरवाले **१२ वीं शताब्दिको** जैनलिपिमें लिखे गये हैं ।

[JASB, VII, p. 52, no 5, t.]

---

* इस लेखमें और अगले लेखमें संवत् १२३६ है, लेकिन अ. गैरिनो (A. Guerinot) ने संवत् १२४६ कैसे दिया है, सो समझमें नहीं आता ।

४१९

तलगुण्ड;—कन्नड़-भग्न ।

[काल लुप्त,—पर लगभग ११८६ ई० ?]

नोटः—इसका लेख नहीं है; मात्र 'Mysore ins. Trnsalated' में नं० १०१ शिलाशासनमें (पृ० १८८) लु० राइसके द्वारा अनुवाद दिया हुआ है, जो निम्न प्रकार है:—

स्वस्ति ! जबकि पृथ्वी और भाग्यका कृपापात्र, महामण्डलेश्वर, सर्वोपरि शासक, सम्राटोंमें प्रथम··· ··· ··· ···विज्जलराज शान्ति और बुद्धिमानीसे बनवसे नाड्के ऊपर शासन कर रहा था—शक नृपके संवत्सर, स ·· ··· ··· वर्षमें··· ··· ···

अक्षर बहुत अस्पष्ट हैं ।

(यहाँ आकर लेख बिल्कुल पढ़नेमें नहीं आता ।)

[Mysore ins. Translated, no 101.]

४२०

बलगाम्वे;—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[काल लुप्त, पर सम्भवतः ११८६ ई० ?]

[बलगाम्वेमें, काशीमठके दरवाज़ेमें वीरकल् (   ) पर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥
प्रिय-सुचरित्रे भव्य-जन-बान्धवे ··· ···सामि माळि-से- ।
ट्टिय सति जैन-धर्म्मद तवर्म्मनेया-पति-भक्तियल्लि सी- ।
तेय-नेगळ्द् तिमौवेय समान नेगळ्तेये पज्जियक्कनो- ।
म्मेये ··· ··· समाधि-विधियिं पडेदळ् सुर-लोक-सौख्यमम् ॥

अर्हं ॥ स्वस्ति श्रीमतु यादव-चक्रवर्ति **वीर-बल्लाळ-देव-वसदि १६ रे नेय विश्वावसु-संवत्सरदुत्तरायणद संक्रान्ति-पुस्य(ष्य) दमावासे-आदित्य-वारदन्दु** पट्टणस्वामि **माळि-सेट्टियर** मदवळिमे **पद्मौवे** सुचित्तदिं समाधि कूडि स्वर्ग्ग-प्राप्तेयादळु मंगळ महा श्री श्रीवीतरागाय नमः ॥

[जिन शासनकी प्रशंसा । पद्मियक्केकी प्रशंसा, जिसने समाधिमरणकी विधिसे परलोकका सुख प्राप्त किया । यादव-चक्रवर्त्ति वीर-बल्लाळ-देवके १६वें वर्षमें 'पट्टण-स्वामि' माळिसेट्टिकी स्त्री पद्मौवेने, स्वयं अपनी इच्छासे समाधि धारण करके स्वर्ग प्राप्त किया ।]

[EC, VII, Shikarpur, tl., No. 148.]

४२१

अजमेर;—प्राकृत ।

[सं० १२४७ = ११९० ई०]

सं० १२४७ वैसाष सुद १५ श्रीमूलसंये(घे) साधु बहुमानपत्नी आस्त कर्म्म-क्षयार्थे प्रतिष्ठापित श्री पार्श्वनाथ प्रतिमा पुत्रमहीपालदेव ।

इसमें पार्श्वनाथकी प्रतिमाकी प्रतिष्ठापना की गयी है । 'साधु' उपनामधारी किसीकी बहुत आदरवाली पत्नी 'आस्त' थी, उसीने प्रतिष्ठा करायी थी । उसके पुत्रका नाम महीपाल देव था ।

[JASB, VII, p. 52, No. 4. t.]

४२२

चिक्क-मागदि;—कन्नड़ भग्न ।

[काल लुप्त, पर सम्भवतः लगभग]

[चिक्कमागदिमें, वस्तिके पासके पाषाणपर]

श्री स्वस्ति श्रीमतु यादव नारायण-प्रताप-चक्रवर्त्ति ...... **धाविसंवत्सरद**

आश्वयुज-बहुळ ५ सोमवार ··· ··· सन-समाधियिं पडेदु सुगति-प्रासनाद मग ··· ··· विरोधि-संवत्सरद चैत्र शु २ शुक्रवारदन्दु वीरोज मुडिपि सुगति-प्रासनाद ॥ मङ्गळ महा श्री श्री ··· ··· बेस्पतिवारदन्दु बोम्मळे सन्नसन-समाधियं ··· ··· आदळु मङ्गल महा श्री ॥

[वीरोज और बोम्मव्वेकी समाधिका स्मारक ।]

[EC, VII, Shikarpur, tl., No. 201.]

४२३

चिक्क-मागडि;—कन्नड़ ।

[विना कालनिर्देशका, पर लगभग ११६० ई० का]

[चिक्क-मगड्डिमें, बस्तिके पासके पाषाणपर]

श्रीमज्जैन-पदाम्बुजात-जनित-श्री-कान्तेयेम्बन्ददिम् ।
भूमि-प्रस्तुते दान-धर्म्म ··· ··· ··· ··· ।
कामास्त्र-प्रतिभासि-रूपिनलेव ··· ··· सान्तियकं जग- ।
क्के मातन्दिन सीतेयिं ··· ··· वाग्-देवियिन्दग्गळम् ॥
जनकं संकय-नायकं जननि तां मुद्दव्वे शान्तीश्वरम् ।
जिननाथं तनगिष्ट-देव्यवेसेवा-सद्-भव्यरे गोत्रदिं ।
मुनि-नाथं नयकीर्त्ति-देव-मुनियाराध्यं दलेन्दन्दड् आर् ।
व्वनिता-रत्नमेनिप्प सान्तलेयनोल् धन्यर्क्कळो-धात्रियल् ॥
दानद गुणदुन्नतियिम् ।
मौनी-घरेगधिकेयेनिसि सान्तवे सुखदिम् ।
ध्यानिसि जिन-पति-पदमम् ।
तानैदिदळमर-लोकमं हलररियल् ॥

[सान्तियक्क या सान्तले स्त्रीकी समाधि का स्मारक। इसके पिता संकय-नायक, माँ मुद्दव्वे, इष्ट-देव शान्तीश्वर-जिननाथ और गुरू नयकीर्त्ति-देव मुनि थे।]

[EC, VII, Shikarpur, tl., No. 200.]

३२४

चिक्क-मागडि;—कन्नड़।

[बिना कालनिर्देशका, पर लगभग १२११ (?) ई० का]

[चिक्क-मागडिमें, बस्तिके पासके पाषाणपर]

स्वस्ति श्रीमतु यादव-नारायणं भुज-बळ-प्रताप-चक्रवर्त्ति होयूसळ-वीर-वल्लाळ-देव-वरुषद २१ नेय प्रजापति-संवत्सरद मार्ग्गशिर-सुद्ध आदिवारदन्दु ॥

श्री-जिन-राज-राजित-पद-द्वयमं नलविन्दमोपेंमुम्।
पूजिसि ••• ••• तज्जिन-स्मरणदिं गत-जीवितै मल्ले-गवुण्डि ताम्।
पूजित-देवराज-पदेयादळिदच्चरियल्तु मुक्तियम्।
साजदिनीयलार्प्पं जिन-भक्तियदेनुमनीयलारदे ॥
गुरु सकळचन्द्र-मुनिपर्।
परमागममागमं जिनेन्द्रं देव्यम्।
परहितमेने शुभ-चरितम्।
वर-गुणि मल्लव्वे-गौडिगेने वोप्पदरार्॥

[स्वस्ति। यादवनाराण, भुजवल-प्रताप-चक्रवर्त्ति होय्सळ वीर-वल्लाल-देवके २१वें वर्षमें, मल्ले-गवुण्डि (स्त्री) ने 'मुक्ति' प्राप्त की। उसके गुरु सकळचन्द्र मुनिप-देव जिनेन्द्र थे।]

[EC, VII, Shikarpur, tl., No. 202.]

४२५

गुण्डलुपेट—संस्कृत तथा कन्नड़

[शक १११८=११६६ ई०]

[गुण्डलुपेट किलेमें, वस्ति-माळमें एक पाषाणपर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनं ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

स्वस्ति समस्त-भुवनाश्रयं श्रीपृथी (थ्वी) वल्लभ महाराजाधिराज परमेश्वर परमभट्टारक यादवकुलाम्बरद्युमणि सम्यक्त्वचूडामणि मलेपरोळ् गण्ड कदन-प्रचण्डन् असहायसूर शनिवारसिद्धि गिरिदुर्ग्गमल्ल चलदङ्कराम निःशङ्कप्रताप भुजबलचक्रवर्त्ति होय्सळ-वीर-बल्लाळ-देवरु बडग हेद्दोरे-पर्यन्त साधिसि दोर'समुद्र नेलवीडिनोळु सुखसङ्कथाविनोददिं राज्यं गेयुत्तमिरे तत्पाद-पद्मो...जीवि ।

पुरुष-विधान-रूप होरलाधि-कुलाग्रणी लोकसंस्तुतं
गोरव-गवुण्डनग्र- तनयं विनयाम्बुधि कीर्त्ति-सम्पदं ।
हरद्-गवुण्डनातन सुतं वर-बिट्टि-गवुण्डनोल्दु ताम्
निरुपमप्प तुप्पूर-जिनालयमं मरदिन्दे माडिदं ॥
विनयनिधि सत्य···धर । मनुचरित वदान्यमूर्त्ति मन्दरधैर्य्यं ।
जनता- संस्तुतनेम्बोन्द् । अनुपमगुण रणवितान बिट्टि-गवुण्डं ।
श्रीमद्-द्रमिळ-सङ्घेऽस्मिन्नन्दिसङ्घेऽस्त्यरुङ्गळः ।
अन्वयो भाति निश्शेष-शास्त्र-वाराशि- पारगैः ॥

स्वस्ति श्रीमन्महाप्रधानं कुमार-लक्ष्मण-दण्णायकराधिकारं माङ्कप्पेन्दातन सन्नि-धानदल्लु स्वस्ति समस्त-गुण-सम्पन्नरप्प कुडुग-नाड-मुन्नूरुं समस्त-प्रभु-गावुण्डु-गळिं-ददु तुप्पूर बिट्टि-जिनालयक्का-वूर मडहळ्ळिय सर्व्व-बाधापरिहारवागि शक-वर्ष ११ १८ नळ-संवत्सरद ज्येष्ठ-सुद्ध १३ वड्डवारदन्दु धारा-पूर्व्वकं माडि बिट्ट दत्ति । अदरिय बडग दिशा-भागदलेरडु वेलि भूमियुं खण्ड-स्फुटित-

जीर्ण्णोद्धारक्के देवरष्टविधार्च्चने··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ···ब्राह्मण··· ···
··· ··· ··· ··· ··· ···कोन्द पापक्के··· ··· ··· ··· ···(हमेशा की तरह
अन्तिम श्लोक) स्वस्ति श्री समस्त-कोटि-जिनालयं भद्रमस्तु जिनशासनाय ॥

[जिन शासनकी प्रशंसा ।

जिस समय, (अपने पदों सहित), होय्सळ वीर-बल्लाल-देव हेद्दुरें (कृष्णा नदी) तक उत्तरकी ओर पृथ्वीको स्वाधीन करके सुख और शान्तिसे राज्य करते हुए अपने निवासस्थान दोरसमुद्रमें थे:—तत्पादपद्मोपजीवी होरलाधिकुलाग्रणी एक **गोरव-गवुण्ड** थे । उन्होंने तिप्पूरमें एक जिनालय बनवाया । वह मन्दिर द्रमिलसंघ, नन्दिसंघके आरुङ्गल अन्वयका था । जिनालयकी मरम्मत तथा पूजाके प्रबन्धके लिये उसने मदहल्लि गाँव का, बसदिके उत्तरकी ओरकी जमीन सहित, दान किया था ।]

[EC, IV, Gundlupet, tl., No. 27.]

४२६

हलेबीड—कन्नड़ ।

वर्ष नल [शक १११८= ११९६ (कीलहार्न)]

[**पार्श्वनाथ बस्तिके प्रवेशद्वारके पासके एक पाषाणपर**]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥
श्री-**मूलसंघ**-कमलाकर-राजहंसो
देशीय-सद्-गणि··· ···रावतंसः ।
जीयाज्जिनेन्द्रसमयार्ण्णव-पूर्ण-चन्द्रः
श्री-वक्र-गच्छ-तिलको मुनि-बालचन्द्रः ॥

स्वस्ति श्रीमद्-भुवनळ-चक्रवर्त्ति यादव-नारायण-वीर-**बल्लाल-देवर्** सुख-संकथा-विनोददिं राज्यं गेय्युत्तमिरे। **नळसंवत्सरद कार्त्तिक-शुद्ध-पडिव-बृहस्पतिवा-**

रदन्तु श्रीमन्महा-वड्ड-व्यवहारि **कवडमय्यन देवि-सेट्टि**यरु माडिसिद श्री-शान्तिनाथ-देवर बसदियूरु **कोरडुकेरेय** कालुहल्लि माचियहल्लिय **बमतिगट्टव** इट्टिगेय मल्लरसय्यंगण मक्कळु अप्पय्य-गोपय्य-वाचय्यङ्गळु आ-शान्तिनाथ-देवर बसदिय परिसूत्रदोळगण तम्म माडिसिद पट्टशालेय श्री-मल्लिनाथ···वरष्ट-विधा-र्च्चनेगं खण्ड-स्फुटित-जीर्णोद्धारकं ऋषियर्क्कळाहार-दानक्कं पर्व्वदिनपूजेगं श्रीमन्म-हामण्डलाचार्य्यर् माण्डविय **बाळचन्द्र-सिद्धान्तदेवर** शिष्यर् **रामचन्द्र-देव**र्गे अरुवत्तु-गद्याण होन्नं क्रयवागि कोट्टु कोण्डरा-बम्मतिगट्टद सीमा-सम्बन्धवेन्तेने (आगेकी २ पंक्तियोंमें सीमाकी चर्चा है) आ-केरेयनिप्पत्तु-होन्नं कोट्टु कट्टिसिदर् देवर नित्य-पूजा-क्रममेन्तेने ॥ (आगेकी ६ पंक्तियोंमें दानकी चर्चा है) इन्ति नितुमं सर्व्व-बाधा-परिहारवागि श्री-शान्तिनाथ-देवर बसदिय-आचार्य्यरारोर्व्वरिर्द्दरि-द्दवरं कोरडुकेरेय गौडुगळु ऊरवत्तोक्कलुं अरुवण्णवोळगाद अन्यायवेनु बन्दडं तावे तेत्तु सलिसुवरु ई-धर्म्मवं नरवरंगळारेन्दु प्रतिपालिसुवरु ॥ (हमेशाका अन्तिम श्लोक) मंगल महा श्री ॥

[इस लेखमें सबसे पहले मुनि बालचन्द्रकी प्रशंसा है। वे मूलसंघ, देशिय-गण और वक्र-गच्छके थे। जिस समय यादव-नारायण वीर-बल्लालदेव शान्ति और बुद्धिमत्तासे राज्य कर रहे थे :—(उक्त मितिको) बहुत पुराने व्यापारी कवडमय्य और देवि-सेट्टिने शान्तिनाथ-देवकी बसदिके लिए कोरडुकेरेके एक छोटे गांव माचियहल्लिके बम्मटिगट्टको बनाया और इट्टगे मल्लरसय्यके पुत्र अप्पय, गोपय्य और वाचय्यने, शान्तिनाथ-बसदिके घेरेके अन्दर अपने द्वारा बनाये गये पट्टशाले के मल्लिनाथ-देवकी अष्टविध पूजाके लिये, महामण्डलाचार्य माण्डवि बालचन्द्र-सिद्धान्त-देवके शिष्य रामचन्द्रदेवको ५० होन्नु देकर उस बम्मटिगट्ट (उसकी सीमायें) खरीदकर भेंट कर दिया; और २० होन्नु देकरके एक तालाब बनवा दिया। इस दानकी रक्षा शान्तिनाथ बसदिके आचार्य, कोरडुकेरेके किसान, और गाँवके ६० कुटुम्ब करेंगे।]

[EC, V, Belur, tl., No. 129]

४२७

चिक्क-मागडि;—संस्कृत तथा कन्नड।

[संभवतः लगभग १२१२ (?) ई०]

[चिक्कमागडि में, वसवण्ण मन्दिर के प्राङ्गणमें एक खम्भे पर]

(पूर्व मुख) स्वस्ति श्रीमत्-प्रताप-चक्रवर्त्ति यादव-नारायण होय्सल-वीर-वल्लाळ-देव-वर्षद २३ नेय ॥

दोरेवेत्ताङ्गिर••त्सरं नेगळद्-मास श्रवणं शुद्ध-वा- ।
सरमळ् देरिसि शुक्रवारमु•••••पुष्य-घस्र-सा- ।
ध्य्••सु•••वहयापाद••••••••••परं वि••••••सत्-
करणं तैतिलमि•••••न्दिद विभातं कूडे पु•••यिम् ॥
जिन-वाक्यामृत-सेवर्यि मनद मिथ्यात्वामयं पिङ्गे द- ।
र्शन-संशुद्धते-वेत्त चित्तदोदविन्दन्तर्मही••प्ति•••।
अनितुं तन्नविवल्लवेम्•••वगेयं विट्ट कुश-•••त्म-शु- ।
द्ध-नयं तन्न•••देव ताळ्दि गुणमं जक्कव्वे निश्चस्तुतम् ॥
मति-जिन-पाद-पङ्कजदोळ् अन्वितमादुदु दृष्टि नासिका- ।
ग्रतेयोळे निन्दुवागम-पदङ्गळनालिसुतिदर्दुवागळुम् ।
श्रुति-युगळं•••दृष्टि-युत-सन्यसनं नेरेदोप्पे नाक-सं- । -
गति-वडेदळ् समाधि-विधियिं वरे जक्कलेयेम् कृतार्थेयो ॥
सले••भानु-ज्योतियिन्दं विकचिसियदरोळ् देव-देवेशनं निश्- ।
श्चळमागिर्द्द••सन्तोषदोळे जिनपनं जानिसुत्ता-लता-को- ।
मळे विट्टळ् वक्रियक्कं तनुवनुळिदराप्पोळवरेम्बन्तु तन्नम् ॥
त्त्यमं मिथ्यात्व-कर्म्मकमदं गुणद सम्यक्त्व-स••सम्बृ- ।
द्धियुमं मुम्मण्डि देश-श्रुतमननितुमं कोण्डु निर्मोहे ताय्-तन्- ।
देयुमं विट्टन्दे सन्यासमनमळिनवं पून्दु जैनेन्द्र-पाद- ।
द्वयमं चित्तव्सि चक्कव्वे दलेसे•••अ••••••••॥

···त-दर्शने विस्तारित-मु···········र-कळेवर बक्कले-नादिदनाङ्ग······
ति············नेनेयुत बक्कले तनुवं विट्टागवन्ते सुकृम···सुधाशन-पूज्य-
जैनचरणमननाकुळं पोकु जिननमिवन्दिसुव·········

(दक्षिण ओर)

श्रीमत्पुण्य-फलादभूद् भुवि सुता शान्त-स्थलस्य या
सा सर्व्वज्ञ-पदारविन्दमलकृत् सम्पूज्य भक्त्यादिशत् ।
शुद्ध-ध्यान-विशोधि-शोधित-मनःपूर्व्वं समाधि-क्रमैत्
साश्चर्यं त्यजति स्व-देहमणुवच्छ्री-जक्कलाम्बा सती ।
चित्तं विस्तार्य पुण्याश्रव-करण-विधौ सर्व्व-कर्म्माणि नाशी- ।
कर्त्तुं त्यक्त्वा विमोहं सनयमुपशमं प्राप्य चात्मोपयोगम् ।
शुद्ध-ध्यानामृताम्भः-प्लुत-म···जिनेन्द्रस्य पादारविन्दम्
प्रत्याप्यालोक्य देहं त्यजति तृणमिव श्रीमती जक्कलाम्बा ॥
नित्यानन्द-सुखामृताम्बुधि-पयः-पूर्व्वावगाहोत्सुका
स्वात्मानुष्ठित-सम्यनाव-विळसत्-सम्यक्त्व-पोतेन या ।
संसारार्ण्णव-पारमाशु तरणोद्योगं समुत्पादिनी
चित्रं देव-गतिं प्रति त्यजति किं देहं नु जक्कलाम्बिका ॥
निखिल-भवन-वल्ली-पुष्प-माला-कदम्बैः
घृत-दधि-वर-दुग्धैरामिषिच्यार्च्चयं तीर्त्थान् ।
न भवति हृदि तृप्ति जक्कलाम्बा स्व-देहात्
समवशरण-नार्थं द्रष्टुकामा प्रयाति ॥
दानान्वितेति गुण-रत्न-विभूषितेति
शान्तेति सर्व्व-जनतासु दया-परेति ।
जैनागमोक्त-चरितानुगतेति भव्यः
के न स्तुवन्ति भुवि जक्कल-योषितं ते ॥

(पश्चिम ओर)

श्री-विबुधेन्द्र-वन्दित-जिनेन्द्र-महा-महिमार्च्चना-शची- ।

देवियेनिप्प **जक्कल**-महा-सतियुद्ध-चरित्रमं कला- ।
श्री-विभवङ्गळं विविध-दानमनाप्त-जिनेन्द्र-भक्ति-सं- ।
भावित-सत्-समाधि-मृतियिं सुकृतार्त्थिगळारो कीर्त्तिसर् ॥
वनिता-भूषणे सच्-चरित्रवति ताय् **लच्छब्बे** सामन्त-**मण्-** ।
डन-मुद्दं जनकं विनूत-**भरतं** कान्तं सुतत्त्वोपदे- ।
शनना-श्रीम**दनन्तकीर्त्ति-मुनिपं** पूज्यं जिन-स्वामियेन्द् ।
एने जक्क••••••वंश-शील••••••सम्यक्त्वं जगत्-पावन ॥
••••••••••डिगे जिनाग•••जिनमतं मतिगा-जिन-सू•••सत्पदम् ।
नडेगोडनाडियाय्तेने जिनोक्तियनोदि तदागमात्थंमम् ।
नडे तिळिदन्ते मुक्तिगिरदेय्दिप शील-गुण-व्रताध्वदोळ् ।
नडेदेडेगेय्दवाल्के गड **जक्कले** नारि महेन्द्र-कल्पदोळ् ॥
नेरेये मुनीन्द्ररुं पोगळ्दणं तले दुगे परिग्रहङ्गळम् ।
तोरेदु गृहीत-सन्यसनदिं निज-बान्धव-मोह-पाशमम् ।
परिदु सुवृत्ते **जक्कले** महा-सति चित्तमनाप्त-तत्त्वदोळ् ।
नरिसि समाधियिं नेरेये साधिसिदळ् सुर-लोक-सौख्यमम् ॥
तळर्दिरदेक-पार्श्व-नियम-स्थिति दृष्टि सु-नासिकाग्रदिम् ।
कळिवेडे वल्पु वळ्किरदे मेय् मिडुकाडदे जैन-भक्ति सन्-।
चळिसदे माणदुच्चरिसि पञ्च-पदङ्गळगनात्म-तत्त्वदोळ् ।
नेलसिद सत्-समाधि-विधि **जक्कले**-नारिगिदेक-लावणम् ॥

(उत्तरकी ओर) श्री-जिनेन्द्र ॥

त्यक्त्वा देहं विमोहाद् व्रत-गुण-चरित-श्रेणि-निश्रेणि-मार्गाद्
आरुह्य स्वर्ग-दुर्गं निज-भजन-बलादेव यत् तद् गृहीत्वा ।
याहं **जक्काम्बिका**स्मिन् दिवि दिविजवरोऽभूवमात्म-प्रसादाद्
इत्थं तुष्टाव गत्वा समवसरण-भूस्थं नतेन्द्रं जिनेन्द्रम् ॥
जिन नाथाभिषवङ्गळिं जिन-गुण-स्तोत्रङ्गळिन्दं जिनार्- ।

च्चनेयिन्दं जिन-भक्तियिं जिन-मुनीन्द्राहार-दानङ्गळिम् ।
जिन-वाक्यार्त्थ-विचारदिन्दलेदु मिथ्या-मार्ग्गमं तत्त्व-भा-।
वनेयिं पेट्टमरल्वदिन्देरगिदळ् जक्कव्वे जैनाङ्घ्रि योळ् ॥
तत्त्वमना-जिनेन्द्र-मतदिं तिळिदुज्ज्वळमाद शुद्ध-ह-।
ष्टित्व-गुणाक्कंनिन्दलरे शील-गुण-व्रत-वारिजाळि मि-।
थ्यात्व-तमस्-तमं परेये सत्पथ-वर्त्तिनियागि शुद्ध-सं-।
वित्वदिनेय्दिदळ् नेगळ्द जक्कले नारि सुरेन्द्र-लोकमम् ॥
ललित-पतिव्रताचरण-चारु-नटी-सलिल-प्रवाहदिम् ।
कलि-मलमं कळल्चि निज-निर्म्मळ-कीर्त्ति-लता-वितानमम् ।
बळेयिसि-शील-शालि-वनमं परिवर्द्धिसि पुण्य-नन्दनङ् -।
गळने निमिर्च्चि जक्कले बलं पडेदळ् सुमनो-विभूतियम् ॥
परिकिसि सद्-बुधर् प्पोगळे तन्न चरित्र-गुणाङ्क-मालेयम् ।
विरचिसि सुप्रबन्धमने दिक्-कुळ-भित्तिगळोळ् तेरळ्च मुं-।
वरेदुदनीगळा-दिविज-लोकदळोप्पुव लेख-जाळदोळ् ।
बरेयिपनेन्दु जक्कले महा-सतियेरिदळल्ते सगमम् ॥
पुगेयवसर्प्पणं भरतदार्य्येयोळन्वितमाद भोग-भू-।
मिगळ विरामदोळ् सुकृत-दुष्कृत-वर्तनेयागि संन्द का-।
ल-गत-च...दु ... ळन्त्यदोळे पञ्चम-कालदोळेन्दिदन्द...।
महात्मरोळ् गुणमे जक्कले-नारियोळुत्तरोत्तरम् ॥

[प्रताप-चक्रवर्त्ति-यादव-नारायण होय्सल वीर-बल्लाल-देवके २३वें वर्षमें उक्त मितिको जिसका बहुत विस्तृत वर्णन है, परन्तु जो बहुत घिस गया है । ~

जक्कव्वे (जक्कले) ने समाधिमरण धारणकर स्वर्ग प्राप्त किया ।

(सम्पूर्ण लेख उसकी भक्ति और तपकी प्रशंसासे भरा हुआ है, कुछ भाग संस्कृत में है और कुछ कनड़में है) । उसकी माता लचव्वे, पिता मण्डनमुद,

पति विख्यात भरत, तप-साधक उपदेष्टा (गुरु) अनन्तकीर्त्ति-मुनिप। उसने अपना जीवन, शील और उपाधियाँ पद्यमें गुम्फित करा लीं थीं।]

[EC, VII, Shikarpur, tl., No. 196,]

४२८

श्रवणवेलगोला—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक १११८=११९६ ई०]

[जै० शि० सं, प्र० भा०]

४२९-४३०

श्रवणवेल्गोला—कन्नड़।

[बिना कालनिर्देशका]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

४३१

अद्रि;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक १११९=११९७ ई०]

[अद्रिमें, वन-शङ्करी मन्दिरके सामनेके पाषाण पर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम्॥

स्वस्ति श्री-पृथ्वी-वल्लभं महाराजाधिराजं परमेश्वरं परम-भट्टारकं यादव-कुळाम्बर-द्युमणि सम्यक्त्व-चूडामणि मलेराज-राज मलपरोळ् गण्ड कदन-प्रचण्डनेकाङ्क-वीरनसहाय-शूर शनिवार-सिद्धि गिरिदुर्ग्ग-मल्ल चलदङ्क-राम निश्शंक-प्रताप चक्रवर्त्ति ⁂-वीर-बल्लाल-देवर राज्यमुत्तरोत्तराभिवृद्धि-प्रवर्द्धमानमाचन्द्रार्क-तारम्बरं सल्लुत्तमिरे॥

भुवनं भू-चक्र-चक्रायुधनेने नेगळ्दं वीर-वल्लाळनुर्व्वी- ।
स्तवनीय-प्रांशु-मत्स्य-च्छवि सुचरित-कूर्म्मोदयं सार-सूकरि- ।
य विळासं विक्रम-श्री-नरहरि-परमं त्रिक्रमं राम रामो- ।
त्सव-रामानन्दि विद्या-सुगतमति-कलि-प्राभव-प्रौढ़-तेजम् ॥
वळवद्-वल्लाळनुग्राहव-पटह-रवं कर्ण्णवन्ताये विद्युत् (विद्विट्)-
कुळ-कान्ता-कर्ण्ण-पुत्रं केडवुदणकवल्तोन्दे केळ् विस्मयं कण्-
मलरिं बाष्पाम्बु कर्ग्यि कडगवडिगळिं नूपुरं वक्त्रदिं सुय् ।
तले-कट्टिं माले-वूवाकेगळ गळकदिं विळ्वुदुत्तार-हारम् ॥
जित-धात्री-चक्र चक्राधिप नृप-वर वल्लाळ केळ् निनु ओळान्तु- ।
द्धत-वीरराति-यूथं विगत-विभवमागिर्द्दुदं रञ्जिनकुं वि- ।
श्रुत-नाना-वाहिनी-सङ्कुळ-परिगत-शोभानुकूल्यं सदा-से- ।
वित-राजद्राज-वंशं सकळ-कवि-निकाय-स्वनाकीर्ण्ण-कर्ण्णम् ॥
एनसुं तीव्र-प्रतापक्कगिदु दिनकरं मित्रनागिर्द्दपं ने- ।
हने राजं राज-नामं तनगे पगेयेनिप्पुम्मळं पेर्च्चि कन्दिर- ॥
प्पनवं मत्तावनण्मं मेरेवनदटनिं तोर्प्पनावं महोग्रा- ।
रि-नृपाळं विश्व-भू-चक्रदोळेले चलदिं वीरवल्लाळ निन्नोळ् ॥
आनोलविन्द वण्णिसदडेम् गळ दक्षिण-चक्रि युद्धदोळ् ।
तानसहाय-शूरनेनिपुन्नतियं रिपु-राय-सेवुणा- ।
नून-गजाश्व-सङ्कट-वळङ्गळनळ्कुरदोन्दे-मेय्योळोन्द्- ।
दानेयोळोक्किशिकिद् पराक्रमदुन्नति ताने हेळदे ॥

व॥ अन्ता-प्रताप-चक्रवर्त्तियेनिसिद धीरं वीर-वल्लाळ-देवं निज-
भुज-वळदिन्दुण्डिगे साध्यं माडि चलदिन्दाळ्द पलवुं देशङ्गळोळ् ॥
पलवुं पूर्ण्ण-तटाकदिं वलेद्-नाना-शालि-केदारदोळ्- ।
पोलदिं वारिज-षण्डदिं परिमळ-भ्रान्ताळि-माळोद्य-पु- ।
ष्पलता-सङ्कुळदिं फलोन्नमित-चूतादि-क्षमाजङ्गळिम् ।

नेलेयागिप्पंदु मन्मथाङ्गो **बनवासी**-देशवेत्तेत्तलुम् ॥

क॥ एने नेगळ्दा-बनवासी- ।
वनिता-मुख-तिळकवेनिप **जिड्डुलिगे**यना- ।
नृपाळ-प्रकरद शौ- ।
र्य्यं-निधान-स्थानमेसेवुद्**दुद्दरे**य-पुरम् ॥

व॥ अदेन्तेन्दडे ॥
सरसिज-वक्त्रदिं कुमुद-लोचनदिं विळसल्लताङ्गदिम् ।
सुरुचिर- पल्लवाधरदिना-शुक-भावण्डदिन्दे मल्लिका- ।
परिमलदिं मदाळि-कुळ-कुन्तळदिं वन-लक्ष्मि-रूपनुद्- ।
धरेय पुरोपकण्ठ-वनदोळ् पडेदोप्पुवळावळाव-कालमुम् ॥

मत्तमल्लि ॥
सले तत्-पुराधिनाथर् ।
पलरं मुन्नेगळद्‌रवरोळतुळित-शौर्य्यम् ।
चलदर्त्थि-गण्डनेनिपोळ्- ।
गलि नट्टीगनिरिव **बिट्टिगं** पेसर्-वडेदम् ॥
परियिट्टु वरि-भूपा- ।
ळर पुरवं सुट्टु हरिव कञ्चिगनादम् ॥
विरुदिं तन्नृप-तनयम् ।
धरेयोळ् जयदुत्तरंगनपगत-भङ्गम् ॥
गङ्ग-कुळोत्तमं मरेयनेरिद मेयूगलि **मारसिंग**-भू- ।
पंगे तनूभवं नेगळ्द **कीर्त्ति**-नृपाळकना-नृपङ्गे पु- ।
त्रं गड **मारसिंग**नवनग्र-तनूभवमेन्दोडानदा- ।
वङ्गेणे माळ्पेनप्रतिम-रूपन**नेक्कल-देव**-भूपनम् ॥
आ-नेगळदे**क्कल-देव**-म- ।
हि-नाथन तङ्गे **दसवमरसन** सति धा- ।
त्री-नुते **चट्टल-देवि** क ।

ळा-निधि पडेदळ् पवित्र-पुत्र-त्रयमम् ॥
पर-भूपाळ-पुर-त्रिनेत्रनेरग-क्ष्मापाळकं वैरि-दुर्- ।
धर-दैत्य-प्रकर-प्रताप-हरणोद्यत्केशवं केशवम् ।
सरसोदार-कवित्व-तत्त्व-चतुरास्यं सिंगदेवं महा- ।
पुरुष-त्रै-पुरुषत्वमं तळेदरन्ता-भूवरं भूवरर् ॥

अवरोळ् पिरियनेनिषि ॥

मरेदुं पर-सतिगर्- ।
करोलच्युतनल्लदन्य-देव्वक्कर्प्पम् ।
मरेयिप निज-धन-लोभक ।
एरगनेरगनेरग-नृपनेने नेगळ्दम् ॥
एने नेगळ्देरग-नृपाळकन्- ।
अनुजं कोळाल-पुर-वराधीशं पा- ।
वनतर नन्नियं-गङ्गम् ।
विनुत-गुणोत्तुंगनवनी-पति नरसिंगम् ॥
आ-विभुविन सति लकमा- ।
देवि मुकुन्दङ्गे लक्ष्मि परमेष्ठिगे वा- ।
णी-वृषु रुद्रङ्गद्रिजे ।
देवेन्द्राङ्गेसेव-सचियेनल्पेसर्-वडेदळ् ॥
आ-रमणी-विशाळ-विनुतोदार-पद्मदोळञ्जगर्मनन्त् ।
आ-रमणी-निवामळिन-गर्भ्भ-पयोधियोळिन्दु रागदिन्द् ।
आ-रमणी-लसज्-जठर-बाहुवियोळ् सुरसिन्धु-वं स-वि- ।
स्तारदे पुट्टुवन्ददोळे पुट्टिदनेक्कल-भूमिपाळकम् ॥

सुत्तेन्दोदे ॥ स्वस्ति समधिगत-पञ्च-महा-शब्द महा-मण्डलेश्वरम् कोळाळपुर वराधीश्वरं गङ्ग-कुल-कमल-मार्त्तण्डं बिरुद-मण्डलिक-शरभ-भेरुण्डं जयदुत्तरंगं नन्नियं-गङ्गं विराजित-मयूर-पिञ्छध्वजं भूप-रूप-मकरध्वजं श्रीमदच्युत-चरणालिप्त-

चन्दनचर्च्चिताङ्गं विप्राशीर्व्वाद-सत-सहस्र-सम्भृत-शेपाक्षत-पवित्रीकृतोत्तमाङ्ग भूमि-कन्या-स्वर्ण्णान्न-दान-विनोदं सकळ-जन-मनोह्लादमेनिसि **देक्कल-देवन** प्रतापमं पेळ्वडे ॥

जवनं जक्कुलिपं कडङ्गि सिडिलं माक्कोंळ्वनामीळ-का- ।
ळ-विपोग्राहियनेत्ति मारिड्डुवनौर्व्वं-ज्वळेयं मर्ग्गिपम् ।
तविपं तीव्र-निषाद्दग्गळिकेयं तानेन्दोडिन्दुक्किनि- ।
क्कुवमारान्तपरेक्कल-क्षितिपनं संग्राम-रङ्गाग्रदोळ् ॥
दवरूपं रिपु-काननक्के पवि-रूपं शत्रु-शैळक्के वा- ।
डव-रूपं [द्] विपदर्ण्णवक्के निज-तीव्रात्युग्र-कोप-प्ररू- ।
पवेनल् पोङ्गि कडङ्गि निन्दतुळ-बाहा-गर्व्वदिन्दाम्परार् ।
अवनीपाळकरेक्कल-क्षितिपनं संग्राम-रङ्गाग्रदोळ् ॥
ई बेसेगोळ्वुदेनो सुभटोत्तमनेक्कल-देवनिष्टरोळ् ।
नम्बुगे दप्पिदन्दु पर-कान्तेयोळोळ् [द्] ओडगूडिदन्दु लो- ।
बम्बिडिदर्त्थदत्तळिपिदन्दिदिरान्तडे कोल्लदन्दु केळ् ।
अम्बुधि मेरेयिं तोलगुगुं तळर्गु नेळेयिं सुराचळम् ॥
तक्कतनक्के मिक्क पर-कामिनियक्कळनेम्म तङ्गेयेम्म- ।
अक्कनेनुत्ते नम्बे मोरेगोण्डोडगूडुव साधु-गळ्ळरे- ।
तक्कुपायोग्यवा-महीपरेम् गळ पोल्वरे शौचदेळेयिन्द् ।
एक्कल-भूपनं पर-वधू-विनुतोदार-पद्म-गर्ब्भनम् ॥
गति-भावं चारि सूत्रं निरिसळवि बळं काङ्के वल्योजे कायपु-
न्नति गाढं लागु वेगं तेरपु पसरवारैके तेरक्के कूर्प्पङ् ।
कितवाकारं तडं कित्तडवेनिप भृगु-प्रौढियिं कोल्वनुग्रा- ।
हितनं मारङ्कवं मार्म्मलेददे चलदिन्देक्कल-क्षोणिपाळम् ।
ा-नृपाळनन्वयागत-प्रधानरोळ् ॥
स्तुति-वेत्तं विश्व-लोकोन्नत-वितरण-शीलं रिपु-क्षोणिपाळ- ।
प्रतति-प्रख्यात-दण्डाधिप-कुळ-विळयोदग्र-काळं मही-वन्-

दित-भास्वत्-सचरित्र-व्रत-युत-गुण-लोळं जगत्-सेव्य-भव्य-
प्रतिपाळं स्वीकृत-प्राकट-वर-बुध-जाळं **चमूनाथ-माळम्** ॥
आ-विभुविङ्ग सति-**मा**- ।
देविगमोगेदं प्रताप-निधि वैरि-चय- ।
श्री-वरनहित-वनोघद्- ।
दावानळनप्प **बोप्प-देव-चमूपम्** ॥
एरेदर्त्यार्थि-चयक्के कल्प-कुजविप्पन्तिप्पनं बोप्पनम् ।
वर-वंशाम्बुधि-वर्द्धनक्के शशियिप्पन्तिप्पनं बोप्पनम् ।
आ-सेनापति-सति-जिन- ।
शासन-देवते समस्त-चतुर्कोटि कळोद्- ।
भासित-पद्मावति जग- ।
वी-संस्तुतेयेनिप **बोप्पियक्कं** नेगळ्ळ्ळ् ॥
आ-दिव्य-सतियेनिप **बो**- ।
प्पा-देवि-गममळ-कीर्त्ति-बोप्पङ्गं पुण्- ।
योदयदिनोगेदनमृत-म- ।
होदधियोळ् सोमनेगेव-तेरदिं **सोमम्** ॥
धरे बण्णिप्पुदु मन्त्रि-बोप्पन तनूजारामनं प्रेमदिम् ।
निरवद्यामळ-नामनं प्रणुत-विद्व [त्]-स्तोमनं प्रोल्लसद्- ।
वर-नारी-जन-कामनं विनय लक्ष्मी-धामनं भव्य-जन्- ।
धुर-धर्म्म-व्रत-नेमनं बहु-कळा-निस्सीमनं सोमनं ॥
सुरि-चकोर-सोमननवद्य-कळागम-सोमनुद्धतो- ।
गारि-सरोज-सोननति-निर्म्मळ-वंश-पयोधि-सोमना- ।
चार-वन-प्रवर्द्धन-वसन्तक-सोमनशेष-भव्य-हृत्- ।
कैरव-सोमनेन्देनिप **सोम**-चमूपनिदेनुदात्तनो ॥
आ-महिमास्पदनेनीनर्सिद- ।
सोम-चमूपङ्गे पात-हितादन्घति सु- ।

प्रेमान्विते सतियादळु ।

सोवल-मादेवि सविगे सवि-लेखेयवोल् ॥

पडेमातेम् विळसत्कळा-परिणतं विद्या-गुणोद्भासि हेग्- ।

गडे-सोमं पति सामि-बञ्चकर गण्डं दण्डनाथं बसक् ।

ओडेयं श्री-**महादेव**नात्म-सुतनेन्दन्दिन्दु मत्तन्यरार् ।

प्पडेदर् **स्सोमल-देवि**यन्ते सतियर् स्सौभाग्यमं भाग्यमम् ॥

एने नेगळ्द मंत्रि-सोमन ।

वनितेगे पति-हितेगे सत्-कुल-प्रभवेगे सज्- ।

जन-नुते-सोवल-देविगे ।

तनयर् **म्महदेव-राम-केशव**रोगेदर् ॥

आ-मूवरोळं मध्यमन् ।

ई-महियोळु ताने पलरोळुत्तमनेनिपम् ।

रामं यशोभिरामम् ।

सोमात्मजनमळ-धर्म्म-कर्म्म-प्रेमम् ।

पर-सेना-जय-विक्रमोन्नतियोळादं भीमनुं रामनुं ।

धरणी-स्तुत्य-कळा-विळासदोदविन्दा-सोमनुं रामनुम् ।

वर-नारी-जन-मोहनाकृतियोळुद्यत्-कामनुं रामनुम् ।

सरियेन्दी-जगवेय्दे वण्णिपुदु कीर्त्ति प्रेमनं रामनम् ॥

श्री-रामननुजनेनिसिदन् ।

आ-राम-चमूपननुजनुरु-लक्ष्मण-वि-।

स्तार-सुमित्राधिक-पुण्-।

यारामं केशवं जगज्जन-विनुतम् ॥

एरेदन्दागळे माणिपं बुध-विपत्-संक्लेशवं केशवम् ।

विरुदिन्दान्तरनेय्दिपं स्फुरदरण्योद्देशवं केशवम् ।

शरणागेन्दडे नीडुवं वहळ-बाहा-पाशवं केशवम् ।

चिर-कीर्त्ति-प्रमेर्य्यं वेळय़नखिळाशाकाशवं केशवम् ॥
कडु गलि माधवङ्गे मुनिदेळ्वर गोण्पुरि मन्त्रि-माधवङ्ग ।
एडवरनोक्किलिक्कुव नवं सले माधव-दण्डनाथ नोळ
तोडर्वर मृत्तु माधव-चमूपनोळण्मिन मचक्के मार् -।
न्नुडिवर मारि केशव-चमूपति यण्गन गन्ध-वारणम् ॥
तरुणी-लोचन-काम-देवनकळङ्काचार-विस्तारनक् -।
करिगर्गाश्रयनाश्रितैक-शरणं प्रोद्वृत्त-वीरारि-सिन् -।
धुर-सिंहं सकळागम-प्रणुत-जैनानून-वारासि-वन-।
धुर-चन्द्रं महदेव-मन्त्रियनुवं दण्डाधिपं केशवम् ॥
आ-नेगळ्दनुव-द्वितयम् ।
पीन-भुजाकृतिविनात्म-भुजदोळ् तवुळ्र् -।
न्त्री-नुतमेनिसल्केसेदम् ।
ताने चतुर्भुवनेनल्के माधव-देवम् ॥
मरसि परात्थमं तेगेव मेळ्ळिसि पोर्द्दि पराङ्गना-रतक् ।
एरगुव नम्बिदाळ्दनिरे मत्ते पतित्वमनासेगेय्दु बे-।
सरनुसिर्वन्य-मन्त्रि-निकरक्कद्दिं तोडरिक्कदं गडेन् ।
अरियिरे सामि-वञ्चकर गण्डननी-महदेव-मंत्रियम् ॥
पर-वधु रम्वेगं रतिगवग्गळवोप्पुवडं परात्थवी- ।
श्वर-सखनर्त्थदिं वरुणनर्त्थदिनूर्ज्जितवागि वप्पडम् ।
पर-नृपनोल्दु मन्त्रिसुवडं पिरिदीवडवत्त चित्तवो- ।
सरिसदिदेम् महत्वदोदवो महियोळ् महदेव-मन्त्रियम् ॥
बहु-वक्त्रं पद्मगर्भं तनुज-गुरु गुरु-द्वेषि नीवं सुराधी- ।
श-हितात्मं सु-प्रबुद्धोद्धवनेनिपवनुं तानकार्य्य-प्रयुक्तं ।
महियोळ् पोल्वन्ननावं तनगेने नेगळ्दं विश्व-लोक-प्रसिद्धम् ।
महदेवं मन्त्रिमुख्यं मनु-मुनि-चरितं मन्त्र-युद्ध-प्रवीणम् ॥
गेडेगोण्डं धन्यनोल्दालगिसिदने कृतार्त्थं मनं वेट्ट मेय्-सार् -

द्दोडनुण्डं पुण्य-पुञ्जं पोरेव-नृपने नैर्म्मल्य-धर्म्मानुसङ्गम् ।
नुडि-गल्तं विश्व-विद्वज्जन-विनुत-कळा-प्रौढनेन्दन्दु तन्नोळ्
पडियावं मन्त्रि-वर्य्यं बुध-निधि महदेवङ्गे मत्तोर्व्वनन्यम् ॥
मति कृतिंगळ्गे दृष्टियेनिसिप्पुदु तन्नय सूक्ति-शक्ति भा- ।
रतिगे विवेकवं कलिसुवोजुवोलिर्प्पुदु चारु-सत्-कळा- ।
न्वते चतुराननङ्गरिवनीवेरवट्टेनिसिप्पुदेन्दु वन्- ।
दि-तति निरन्तरं पडेदु बण्णिपुदी-**महदेव**-मन्त्रियम् ॥
वनदोळ् हुट्टिद-भद्र-जाति-जयमं मुण्डट्टु तां पट्टवर्- ।
द्धनःप्पन्तिरे चक्रवर्तिगे चळं गोण्डेकल-क्षोणिपा- ।
ळन दुर्ग्गं-बिडिदिद्दु दोर्व्वळद वल्पं तोरि **बल्लाळं**-दे- ।
वन सेनापतियादनूर्ज्जित-भुजं दण्डाधिपं **माधवम्** ॥
परिकिपडुम्ब-वस्तु हदिनारवरोळ्ळु तुदिर्यि निवृत्ति तळत् ।
एरडेरदुत्तरोत्तरमनेय्दे मोदल् परवा-जिनेन्द्र-भा- ।
सुर-पद-पूजेयोळ् फळदिनित्त जळम्बरवोन्दु माणद्डे ।
निरुपमवल्ते **माधव**-चमूपनं जैन-जन-स्तुत-व्रतम् ॥

अदेन्तेन्दडे । श्रीमन्महा-प्रधानम् । पुरुष-निधानम् **सोवल-देवी**-जठर-जाह्नवि-समुद्भूत शौच-गाङ्गेयम् । अणु-व्रतादि-सुव्रताचरण-नियमागण्य-पुण्य-कायम् । निखिल-समय समुत्पाटन-प्रकटीकृत-ज्ञानानून-जैनागम-शिक्षा-क्षम-**सकल-चन्द्र-भट्टारक-देव**-चरण-सरसीरुह-परिमळ-परितोष-समुल्लसित- षट्चरणं । जिन-समय-समुद्धरण-परिणतान्तःकरणम् । भुवन-विनुत-भव-रहित-जिन-भवन-विनिर्म्मा-पणो-द्वृत्त-चित्त-नित्याह्लादम् । आहाराभय-भैषज्य-शास्त्र-दान-विनोदम् । श्रीम-**देक्कल देव**-राज्याभुदय-करण-कारणम् । त्रि-शक्ति-चतुरुपाय पञ्चांग-मन्त्र-प्रवीणम् । सामि-वञ्चकर गण्डम् । निखिळ-गुण-गण-करण्डम् । पर-नारी-सहोदरम् । साहस-वृकोदरम् तानेनिसि नेगळ्द-**महदेव**-दण्डनाथन महा-सतिय महत्त्वमं पेळ्वडे ॥

आतनु मनः-प्रियं रतिगे लक्ष्मिगो भाविपोडोर्व्वं गोवळम् ।
पति गिरिराज-पुत्रिगे मरुळ्गेरेयं वरनेन्न कान्तन- ।

च्युतनतितेव्यनूर्ज्जित-श्लाघरनेन्दिळिकेय्वळी-महा- ।
सति महदेव-मन्त्रिय मनः-प्रिये लोकल-देविसन्ततम् ।
चवुरतेगाद् चैपु सुचरित्रतेगाद पोडर्प्पु जैनदुन्- ।
नतिकेगे सार्द्द पुण्यवभिमानके तळ्त महत्त्ववी-जगन्- ।
नुत महदेव-मन्त्रिय मनः-प्रिये लोकल-देवि निन्न सत्- ।
पति-हितदिन्दवाग्तेनलदेवोगळ्वेम् निज-सद्-गुणङ्गळम् ॥
चतुरतेयोळ् समन्तु जिन-शासन-देवते जैन-धर्म्मदुन्- ।
नतिकेयोळच्चिमब्बे सततं पति-भक्तियोळोळ्पुवेत्तरुन्- ।
धति पडि पाटि पासटियेनला-सति लोकल-देविगिन्नदार् ।
प्रति महदेव-मन्त्रिय मनः-प्रियेगन्य-चमूप-कान्तेयर् ॥

अन्तु गोत्र-मित्र-कळत्र-परिजन-परितोष-प्राज्य-राज्यान्वितनेनिसि नेगळ्द महदेव दण्डनायङ्गे गुरुवेनिसिद सकळचन्द्र-भट्टारक-देवराचार्य्यावळियं पेळ्वडे ॥

जनता-संस्तुत-पद्मणन्दि-मुनिपं तच्छिष्यनादं जगज्- ।
जन-चूडामणि रामणन्दि-यतियं तच्छिष्यनुद्यद्-यशम् ।
मुनिचन्द्रं जिन-धर्म्म-निर्म्मळ-लसत्-सैद्धान्त-चक्रेशना- ।
तन शिष्यं कुळभूषण-व्रति-वरं त्रैविद्य-विद्याधरम् ॥
विमळ-प्रोन्नत-कीर्त्ति कीर्त्तित-गुणाढ्यं विश्व-भास्वज्जगन्- ।
नमितं तर्क्कदोळप्रतर्क्य-महिमं सैद्धान्त-सर्वज्ञनुत्- ।
तम-शब्दातिशय-प्रचण्ड-मति धर्म्म-व्यक्त-मुक्[य्] अङ्गना- ।
रमणं श्री-कुळभूषण-व्रति-वरं त्रैविद्य-विद्याधरम् ॥
तनगादं परिचारकाकृति यशश्री चारु-चारित्र-का- ।
मिनी रावच्-चमरीज-कान्ते मनेगादिर्प्पाके निच्चं दयाङ्- ।
गने वाग्वल्लभे बुद्धि वानसे करं भास्वत्-तपो-लक्ष्मि-सन्- ।
ननमागल् कुलभूषण-व्रति-वरं श्री-राज्यदिं राजिपम् ॥
शिष्यम् ॥ पुदिदेर्द्दु मदवं तिरस्करिसि तळ्तेळ्दु भयकासे-दो- ।
रदेयारायतनङ्गळं तोरेदु सन्दैदिन्द्रियङ्गळ्गे सो- ।

लदे नाल्कुं गतियिन्दवोसरिसि मूरुम्मूडवं विट्टु ता-
ने दया-वल्लभनादनी-**सकळचंद्रं**-चारु-**भट्टारकम्** ॥
श्री-वनितेगे मोगविस्तु त- ।
पो-वनितेगे मेय्यनोड्डि मुक्त्यङ्गनेयम् ।
भाविसुव बम्मचारियन् ।
ए-वोगुळ्वुदो **सकळचन्द्र-भट्टारकरम्** ॥
सकळागम-कोविदरम् ।
सकळ-जगद्-भरित-कीर्त्ति-लक्ष्मीश्वरम् ।
सकळात्मकरं पोगळ्गुम् ।
सकळ-जनं **सकळचन्द्र-भट्टारकरम्** ॥

स्वस्ति श्री **सक-वर्ष ११११ नेय पिङ्गल-संवत्सरद माघ-शुद्ध १२ बड्डवार उत्तरायण-सङ्क्रान्ति-व्यतीपातदन्दु** श्रीमन्महा-प्रधानं **महदेव दण्डनायकम्मीडिसिदेरग-जिनालयद शान्तिनाथ-देवर** प्रतिष्ठेयं माडिदल्लि श्रीमन्महा-मण्डलेश्वर **येक्कलरसरुं** समस्त-परिवारङ्गळुमिद्दु वसदिय खण्ड-स्फुटित-जीर्णोद्धारकं ऋषियराहार-दानकं देवरष्ट-विधार्च्चनाभिषेकक्कङ्ग-भोग-रङ्ग-भोगकं **श्री-मूलसंघद काणूर्-ग्गणद तिन्त्रिणी-गच्छद** श्री-**सकलचन्द्र-भट्टारक-देवर** कालं कर्चि धारा-पूर्व्वकं माडिसि सर्व्व-नमस्यमागि कोट्ट स्थळ-वृत्ति (शेषमें दान और सीमाओंकी विशेष चर्चा है ।)

[जिन शासनकी प्रशंसा । जिस समय, (अपने पदों सहित), होय्सळ-वीर-बल्लाल-देवका राज्य प्रवर्द्धमान थाः—उसकी बहादुरी को कहनेवाले श्लोक, जिनका अन्तिम कथन यह है कि उसने राजा सेवुणको, जिसके पासमें अगणित हाथी, घोड़े, तथा अच्छे योद्धा थे, युद्धमें अकेले ही हराया ।

प्रताप-चक्रवर्त्ति वीर-बल्लाल-देवके द्वारा जीते गये बहुत-से देशोंमें से एक बनवासी-देश था जो काम-देवका स्थान था । इस देशका तिलक-स्थानीय जिड्डु-लिगे था; जिसके शासकोंके पास रत्ण और कोष-भवनके तौर पर उद्धरे था;

इसकी सुन्दरताका वर्णन। इसके शासक बहुतसे प्रसिद्ध व्यक्ति हुए, पर उन सबमें सबसे ज्यादा नाम विट्टिगका हुआ। युद्धसे भाग जानेवाले शत्रु-राजाओंके नगरको जलानेसे उसे 'हरिवकञ्चिग' (ध्वंसक कञ्चिग-असुर) की उपाधि मिली थी। उस राजाका पुत्र, जोकि गङ्ग-कुलका अग्रणी था, राजा मारसिंग था; जिसका पुत्र राजा कीर्त्ति था, जिसका पुत्र मारसिंग, जिसका ज्येष्ठ पुत्र राजा एक्कल-देव था। उस विख्यात एक्कल-देवकी छोटी बहिन दलवमरसकी पत्नी, संसार-प्रसिद्ध चट्टल-देवी थी जिसके तीन लड़के थे,—एरग, केशव और सिंग-देव। एरगकी प्रशंसा। उसका लघुभ्राता कोळाल-पुरका अधिपति, नन्निय गंग, नरसिंग था, जिसकी पत्नी लक्मा-देवी थी। और उससे राजा एक्कल उत्पन्न हुआ था। उसके पद। युद्धमें उसके पराक्रमकी प्रशंसा करने वाले श्लोक।

उसके मन्त्रियोंमें, (प्रशंसापूर्वक), चमूनाथ-माल था। उस और उसकी पत्नी मादेवीसे बोप्प-देव-चमूप उत्पन्न हुआ था। उसकी पत्नी बोप्पियक या बोप्प-देवी थी, और उनका पुत्र सोम-चमूप था, जिसकी पत्नी सोवल-मादेवी थी। उसके महादेव, राम और केशव पुत्र थे। इनमेंसे राम और केशवकी प्रशंसा। महादेव-मंत्रीकी प्रशंसायें। यह सकळचंद्रभट्टारक-देवका भक्त था।

उसके (महादेव-दण्डनायके) गुरु सकलचन्द्र-भट्टारक-देवकी गुरुपरम्परा:— पद्मणन्दि-मुनिपके शिष्य रामणन्दि यतिप, जिनकी क्रमगत शिष्य परम्परा ये थी:— मुनिचन्द्र-सिद्धान्त-चक्रेश, कुलभूषण-व्रति त्रैविद्य-विद्याधर, इनके शिष्य सकळ चन्द्र-भट्टारक थे; उनकी प्रशंसा। (उक्त मितिको), महाप्रधान महादेव-दण्डनायकने एरग जिनालय बनवाकर और उसमें शान्तिनाथ भगवान्‌की प्रतिष्ठा करके, महामण्डलेश्वर एक्कलरसकी उपस्थितिमें, मूलसंघ, काणूर-गण तथा तिन्त्रिणी गच्छके सकलचन्द्र-भट्टारक-देवके पाद-प्रक्षालनपूर्वक, हिरिगण तालाबके नीचे 'मेरुण्ड' दण्डेसे नापकर ३ मत्तल चावलकी भूमि, दो कोल्हू, एक दुकानका दान किया। कुछ दानोंका और भी जिक्र है। मन्दिर-भूमिकी सीमा।]

[EC, VIII, Sorab, tl., No. 140]

४३२

यिडगूरु;—कन्नड़-भग्न ।

[विना काल—निर्देशका, पर लगभग १२०० ई०]

[यीडगूरु (चिक्कनहल्लि परगना) में, तालावकी मोरी पर एक टूटे हुए पाषाणपर]

......यं रत्नसिद्धान्त-देवर कुमुदचन्द्र-देवर गुम्म-सेट्टि यिवं [प-] रोक्षविन... ... ...निनिसिध... ... ...

[रत्नसिद्धान्त-देवके (शिष्य) कुमुदचन्द्र-देवके गृहस्थ-शिष्य गुम्म-सेट्टिका स्मारक ।]

[E C, XII, Gubbi tl., No 36]

४३३

चन्दलिके;—संस्कृत तथा कन्नड़—भग्न ।

—[विना काल-निर्देश का, पर संभवतः लगभग १२०० ई० का]—

[शान्तीश्वर वस्तिके आंगनमें, उत्तरकी ओर के समाधि-पाषाणपर]

लेख बहुत घिसा हुआ है)......शासन के एसवी-शासन-देवि जिनेन्द्र-पूजे... ...जित-देव-कान्ते जिन-योगि-निकाय-समग्र... ...व्रतेय्...तिम्वे विबुधाळिगे तां सुर धेनु येम्... ...नेगळ्द सोमल-देवि... पूजेगं मुनि... ... व्रत.... प्रवृत्ति-जिन-पादाम्भोज-सद्-भक्तियोळ...व्रतादि-गुण-सन्दोह...तन्देगे... वगारू द्दोरे एणे भू-चक्रदलि कान्तेयरु ॥

श्रीमद्-भ...रोत्तम-लसत्- श्री-तीर्थ-शान्तीश्वरो-।
द्दाम-स्तान...माळ्पोन्दु सद्-दानदिन्द् ।
एमन्ता-शुभचन्द्र...युं नोळ्पडी-।
रामा-रत्नवेनिप्प सोमब्बे लोक-त्रय... ...॥

··· ···ल-देवि जैन-पद-पूजा-दान-शीलादियि-।
··· ···रोत्तरं सन्दिर्द्द सम्यक्त्वदिन् ।
सन्तर् व्बण्गिसे··· ···दं कालान्तदल् निर्म्मळम् ।
शान्तं चित्तवेनल्के त्रि··· ···देवत्वमं ताळिदळ् ॥

[लेख बहुत बिगड़ा हुआ है। इसमें शान्तीश्वर बसदिमें जैन विधियों के पालन पूर्व्वक सोमल-देवी या सोमव्वेकी मृत्युका उल्लेख है। उसके गुरु शुभचन्द्र थे, और लेखमें उसकी उदारता तथा जिनभक्तिकी प्रशंसा की गयी।]

[E C, VII, Shikarpur tl., No 232,]

४४३

—विना काल-निर्देशका—तिरुमलै—संस्कृत और तामिल।

१ स्वस्ति श्री [॥] चेर-वंशत्तु अतिगैमान् (इ) एळिनि शेल्द वर्म्म-
२ त्त [र] गुं यक्षियारैयुमेळुन्द [च] ळुवित्तु एरिमणियुमि-
३ ट्टुके उप्पेनि-क्का [ळु] ङ्ण्डु डुत्तु [।] न् ॥ श्रीमत्केरलभूभृ-
४ ता यवनिकानाम्ना सु-वर्म्मोत्तमा तुण्डीराह्वयमण्डलार्हसु-
५ गिरौ यक्षेश्वरौ कल्पितौ [।] पश्चात्तत्कुलभूषणाविक-
६ नृप श्रीराजराजात्मज न्यामुक्तश्रवणोज्ज्वलेन तकटानाथेन जीर्णो-
७ द्धृतौ ॥ चक्षियर् कुलपति योगिनि वगुत्तविचकरियक्षियरो-
८ डेक्षियवळिरु तिरुच्चिपि वेण्गुणविरै तिरुमलैत्तान् अ,
९ क्षितन् वळि दरम् वन् वळि मुदलि कलि अतिकनवकन् नृळ् विन्वैयर्
१० स्पल पुनै तकमैयर् कावलन् चिड्ढुकादळगिय प्पेरुमाळेय् [॥]

दूसरा शिलालेख

[यह शिलालेख पूर्व शिलालेखका संस्कृतमात्र श्लोक है। मूल लेखमें यही श्लोक छोटी-छोटी १५ पंक्तियोंमें दिया हुआ है। हम यहाँ इसे ४ पंक्तियोंमें ही देते हैं।]

श्रीमत्केरलभूभृता यवनिका-नाम्ना सुधर्म्मात्मना
तुण्डीराह्वय-मण्डलार्हसुगिरौ यक्षेश्वरौ कल्पितौ [।।]
पश्चात्तत्कुलभूषणाधिकनृपश्रीराजराजात्मज
व्यामुक्तश्रवणोज्ज्वलेन तकटानाथेन जीर्णोच्छ्रितौ [।]

[यह लेख बहुत घिसा हुआ है। इसमें एक तामिल गद्यका प्रघट्टक (Passage), शार्दूल छन्दमें एक संस्कृत श्लोक, और दूसरा एक और तामिल पद्यका प्रघट्टक है। इसमें व्यामुक्त-श्रवणोज्ज्वलके या (तामिलमें) 'विडु-कादरगिय-पेरुमाळ्', उर्फ चेर-वंशका अतिगैमान्के दानोंका उल्लेख है। इस युवराजकी राजधानीका नाम 'तकटा' मालूम देता है। वह किसी राजराजका पुत्र था और केरलके राजा किसी यवनिका, या (तामिलमें) वञ्जिके राजा एरिणि, की सन्तान। राजाने यवनिकाके द्वारा कल्पित (स्थापित) यक्ष और यक्षिणीकी प्रतिमाओंका जीर्णोद्धार कराया उनको तिरुमलै पर्वतपर प्रतिष्ठापित किया, एक घण्टा दिया और एक नाली बनवायी। लेखमें तिरुमलै पर्वतको 'अर्हसुगिरि (अर्हत्का उत्तम पर्वत)' कहा गया है; इसीको तामिलमें 'एणगु-विरै तिरुमलै (अर्हत्का पवित्र पर्वत)' कहा है। संस्कृतके श्लोकके अनुसार यह पर्वत 'तुण्डीर-मण्डल'में था; यह प्रसिद्ध 'तोण्डै-मण्डलम्'का संस्कृतीय रूप है।

[South India ins., I, no 75 aud 76
(p. 106-107), t. and tr.]

४३५

अल्लूर;—संस्कृत और कन्नड़।

बिना कालनिर्देशका [ई० ११०० (फ्लीट)]

१ ओं [।।] नमस्तुङ्गशिरश्चुम्बिचन्द्रचामरचारवे।
त्रैलोक्यनगरारम्भमूलस्तंभाय शंभवे ।।

श्रीमद्-गङ्गा-तरङ्गो-

२ च्छलित-दल-कण-श्रेणि-पुःपालि-शोभा-वामम् नखजटा-पल्लवममृतकरोदयत्फलम् बाहु-शाखा-रामं गौरी-लता-

३ लिङ्गितममरनुतं शंभुकल्पद्रुवाद रामंगोगर्त्थियिं वाञ्छितफळचयमं सन्ततो-त्साहदिन्दम् ॥ श्रीकण्ठं रामदेवं गनुपम-

४ मदिंगोंगे सम्पत्तनेन्दुम् (णना) नाकौकानीकमौळि-प्रकरमणिगणश्रेणिशोणांशु-जाळ-व्याकीर्णाङ्घ्रि-द्वयालंकृतनमरवरं शीतशैलेन्द्र-

५ कन्यालोकांशु-श्री-निवासं सकलगणवृतं वीर-सोमेशनीशम् ॥ चलदुग्रग्राहव-क्त्रच्युततिमिनिकरातुच्छपुच्छाग्रवाता-कुलितां-

६ भः-कुम्भि-यूथ-प्रकर-स्वजल-फूत्कार-इत्ताभ्र-माला-मिलितं सुत्तुप्पुंदुग्रमणिगण-किरणस्फारमुक्तांशु वेळाचलमाळं

७ भू-रमा-मण्डन-विपुल-कटीदेश-सुद्रं समुद्रम् ॥ व ॥ अन्तनेकजलचरनिवासमुं समुत्तुंगलहरीनिर्वासमुमेनिसि सोगयिसुव

८ लवणसमुद्रदि परिवृतवाद जम्बूद्वीपदि तेङ्कलु नील-निषध-हिमवन्त-पर्व्वतङ्गळोळवल्लि ॥ वृ ॥ एसेगुं पूर्व्वापरांमोनिधि-मि [ति]-

९ विततायायामदिं सिद्ध-कन्या-विसरानंगोरुकेळी-श्रम-शम-महिमा-कन्दरं स्वर्धुनी-वाः-प्रसरोपत्तुण्ण-नाना-[नग-नि]-

१० कर-गलद्गण्डशैलालिमाला-विसरं प्रस्फार-शीतद्युति-रुचि-निचय-भ्राजितं शीत-शैलम् ॥ व ॥ आ हिमगिरीन्द्रद दक्षिणपार्श्ववर्त्ति-

११ यत्तिप्प भारतवर्षदोळु कुन्तल-देशवेम्बुदविकशोभेवेत्तेसेवुदल्लि ॥ क ॥ सोगयिपुदल्लन्देयेम्बुदु नगरं चेलुवेसेदु नाडेयम-

१२ रावतिगं मिगिलेनिसि विबुधवनदिन्दगणितधनधान्य-जल-समृद्धियिनेन्दुम् ॥मच॥ प्रकटितकमरावतियोळु सुकेशियुं मञ्जुघोषेयुं तामिर्प्प स-कलवधूततियेल्लं सुकेशियर्म्मञ्जु-घोषेयर्त्तत्पुरदोळ् ॥ वृ ॥ अदु नानाविध-गन्धशालि-वनदिं सर्व्वर्त्तु कोद्यान-नन्दनदिं पूर्ण्ग-तटाक-कूप-

१४ सरसी-सन्दोहदिम् सारसोन्मद-भृङ्गि - पिक-कोक-केकि-शुक-संघानीक-शाकुन्त-नाददिनेत्तम् गणिका-विनोद-कृत-वीणा-नाददिदोप्पुगुम् ॥ व॰॥ अन्तपरि-मित-के-

१५ दार-भूमियुमपारजलाश्रयाभिराममुं वहुजनाकीर्ण्ण-मुममेय-गणिका-निवासमुमग-णितवणिग्जनाश्रयमुमेनिसि शोभानिवासमागे ॥

१६ वृ ॥ अवतरिसिर्द्दनल्लि रजताचलदि गिरिजा-समेतमुत्सवदोळे सोमनाथनखिला मरमौलिविनद्धरत्नसंभवकिरणप्रभापटलपुञ्जपरागपदाब्जनर्थियन्द-

१७ वनत-भाक्तिकाभिमतसिद्धिफलोदयकल्पभूरुहम् ॥क॥ आ सोमनाथपुर-संवासि-तरोळु ब्रह्मपुरिगळोळ् विप्रोळा **व्यास-शुक-वामदेव-पराशर-कपि-**लादि-सदृशनो-

१८ र्व्वन्नेगळ्दम् ॥क॥ **श्रीवत्स-गोत्र**नुर्व्वीदेवनुतं निखिलवेदवेदाङ्गविदं पावन-चरित्रगुणसद्भावं **पुरुषो**त्तमं द्विजोत्तमनेनिपम् ॥कं॥ आ विप्रन सति सीता-देविगवा [स] त्य-

१९ तपन-सतिगं गुण-सद्भावदे **पद्माम्बिके** सले पावन-सुचरित्रे पतिहित-व्रतेये-निपळ् ॥ आ दम्पतिगळ् पलकालवनपत्यरागिर्द्दोन्दु देवसं नापुत्रस्य लोकोस्ति येम्ब वेदवाक्यमम् ति-

२० [ळिदु] ॥क॥ पुत्रार्त्थवागि सत्यपवित्राचरणं नेगळ्द**पुरुषोत्तम**नापत्त्राणनी-शनेन्दु कलत्रान्वितनागि शम्भुवं पूजिसिदन् ॥व॥ अन्नेगमित्त दिविज-दनुज-वृन्द-वन्दित-पादारविन्द-

२१ [नप्प] महेश्वरं कैलास-पर्व्वतद रम्यभूमियोळु केशव-वासवाब्जभवरोलगि-सलसंख्यातगणपरिवृतनुमासहितं वोड्डोलगदोळु सुखसंकथा-

२२ विनोददिन्दमिरे नारदनेम्ब गणेश्वरनिन्तेन्द ॥वृ॥ ओहिल दास चेन्न-सिरियाळ हलायुध बाणनुद्भटर्द्देहदोळोन्दि वन्द मलयेश्वर केशवराज-दिया गेहि-

२३ कनौल्यमं विदुरसंख्यगणं निदनाद् भक्ति-मदगिदोळिल्लिरलु समयमुक्तवाद्गुतु (टु) जैन-बौद्धरोळ ॥ एन्दुदुं महेश्वरं दर-हसित-वदनारविं-
२४ दनागि वीरभद्रनं नीं मनुष्य-लोकदोळु निन्नंशदोळोर्म्मणं पुट्टिसि पर-समयगळं नियामिसेन्दुदुं वीरभद्रनुं पुरुषो-
२५ त्तम-भट्टर्गे स्वनदोळ्ग्रामस-रूपदिं बन्दु पुत्रं पर-समय-नियामकं निमगे पुट्टुगुमेन्दु मचामिन्तेन्द ॥ श्लोक ॥ जैनमार्गेषु ये या-
२६ ता अध्वो दक्षिणापथे ते । दूषिता भवन्तु सर्व्वे रामेण तव सूनुना ॥ व ॥ एन्दु व (प) स्म-प्रसादं-माडि पोपुदुं पुरुषोत्तम-भट्टरु
२७ कि (कु) तार्थरागि सन्त-स्तटु मगनं पडेदु बातकर्मादि-क्रियेगळं माडि देवतोद्देशदिं रामनेन्दु पेसरनिट्टातनुं बन्न दिव्य-जन्मानुरूपमा-
२८ गे शिव-योग-युक्तनागि निरुद्द त्रि (त्र) त्तिर्दि नरियिसुत्तुम् ॥ कन्द ॥ एकाग्र-भक्ति-योगदिनेकाकियेनल्के सन्दु शिवनं निरिदल्पैकान्तदोळाराधि-
२९ सियेकान्तद-रामनेम्ब पेसरं पडदम् ॥ वृ ॥ ततवं सन्दु शिवागमोक्त-विविध क्षेत्रङ्गळोळु शम्भवायतनानेक-नदी-नद-प्रकरदोळु गौरि (री) वरांघ्रिद्वय[1]
३० याश्रित-वाक्कायमनोनुगं चरियिसुत्तुं बन्दु कण्टं सुराभ्चितनं दक्षिण-सोमनाथ-ननवौब-शान्तिदं प्रीतियिन् ॥ व ॥ अन्तु बन्दनवर-
३१ त-विनमदमर-वर-मौळि-मणि-किरण - मञ्जरी - रञ्जिताङ्घ्रियुगननप्प हुलिगेरेय सोमनाथननाराधि-सुत्तमिप्पुदुमा परमेश्वरं प्रत्यक्षवागि ॥
३२ अत्र श्लोकद्वयम् ॥ अब्बलूरु-वर-ग्रामं गत्वा राम ममाज्ञया [।] तत्र वासं कुरु स्वस्थं यत्र मां भक्ति-योगतः ॥ जैनैः सह विवादं च शङ्कां हित्वा कु-
३३ रुष्व । त्वशिनोपि पणं कि (कृ) त्वा पुत्र त्वं विजयी भव ॥ एन्दु सोम-

---

1 अङ्घ्रिद्वय ।

नाथ-देवर्वेसखिद्डेकान्तद-रामय्यनन्ब्ळूर ब्रह्मेश्वर-स्थानदोळु निस्पृहवृत्तियिन्द-
मिरे ॥ क । (॥)

३४ यु (उ) लिदड्डि-ब्रन्दु **जैन** पंलरन्ता **सङ्क-गौण्ड**-सहितं पिरिदुं चलदिं
कैबारिसिदर्त्तोलगदे जिन दैवनेन्दु शिव-संधियोळ् ॥ व ॥ आदं केळ्दे-
कान्तद-रामय्य-

३५ नति-क्रुद्धनागि शिव-सन्निधियोळन्य-देवता-स्तवनं माडलागदेण्ड्डदं माणदे
नुडियुत्तिरलिन्तेन्दम् ॥ वृ ॥ जगमं माडुवनावनावनावनदना-

३६ पत्का [ल] दोळ्कावनिं मिगे कोपं तनगागे संहरिसलावं दत्तणा शम्भु सर्व्व-
गनिर्द्दन्ते गत-प्रभाव-वैभाव संसारदोळु ब्रिद्दु दंदुगदोळु वद्दुं तपक्के सादुं

३७ मुखमं पोर्द्दिर्प्पनुं देवने ॥ क ॥ हरनन्तिरीवने निम्मरुह मुं-कोट्टिटावुदावुदु
मुन्नं हरनोळ् पडदरनेकर्व्वरमं वाण-दिनिशाळ-मक्त-गणङ्गळु ॥ क ॥ एने जै-

३८ नरेङ्ग नीं मुम्निन हितरं हेळलेके निम्मय सि (शि) रमं बनमरियर्दीदु
कोट्टातनोळिं पडे नोने भक्तनातने देवम् ॥ क ॥ एन**लेकान्तद-रामं**
मनसिज-रिपुगित्त तलेय

३९ नाम् पडेदडे नीवेनगीव पणमदेनेने मुनिदेन्दर्ज्जिनन किन्तु शिवनं निलिपेवु
॥ क ॥ एने कुडुवुदोलेयं नीवेनगेन्दित्तोले गोण्डु शिरमं तां भोङ्केनवरिदु
कुडुव पददो-

४० ळु शिवनं सान्निध्यमाडि **रामं** नुडिगुं ॥ वृ ॥ उडुगदे शंभु नीने शरणेम्न-
ददं मनमन्यवा (भा) वदोळोडर्दडमी क्रि (कृ) पाणमुखदिं तले पोगदे
निल्कदल्लदि-

४१ र्द्दडे शिव निम्न मुन्नडिगुरुळुगेनुतं कलि **रामनादुर्दु** केयिडदरिदिकलार्यि-
सिदं शिरमं शिवनङ्घ्रि-युग्मदोळु ॥ वृ ॥ अरे-गायू-गोण्डने कित्तु नोळ्दिदने
कूर्प्पङ्ग-

४२ ळुकि मेपि (मेय्) गायदने सेरगं पार्द्दने बाळ्गे भक्तरेनुतं वल्लाळ **रामं**

त्त-कन्वरमं चक्केने हुल्लं कट्टनरिवन्तश्केशदिन्द्रागळन्तरिटीशाङ्त्रियोळि
[कि शंकर-] गणकानन्द-

४३ वं माडिदन् ॥ क ॥ अरिद तलेयेळु-देवसं वरेगं नेरदिं बळिक्कवित्तं हरना-
दरदिं तले कलेयिल्लदे तिरवाट्टु लोकवळि (रि) ये रामं पडेदं
॥ क ॥ वेर-

४४ गागि जैनरेल्लं मरिगि जिन-प्रळे (ळ) यवेम्दुदं माडदिरिम्मेंडेरागि काल्वि-
डिये माणदे वरसिडिळ्वेरागि जिनन तलेयं मुरिदम् ॥ वृ ॥ बडिगोण्डोर्व्वने
सोक्कि बाळे-

४५ वनमं काडने पोक्कन्तिरलु कडगलु कार्पीन वीररं तुवगमं सामन्तरं वूळ्दु
मार्प्पडेगळु जैनर मारि बन्दुदेनुत्तुं वेङ्गोट्टु पोगलु जिनं कडेवनं बडि-
दल्लि कैको-

४६ ळिसिदं श्री-वीर-सोमेशनं ॥ वृ ॥ अदनेल्लं नेरे पोगि बिज्जण-महीपाळङ्गे
जैनर्क्कळक्किवदिं पेल्दु विरोधवागे पिरिदुं दूरुत्तिरलु कोप-दुर्म्मदना
बिज्जण मूमुवं मुनिसिनिम्

४७ रामय्यनं कण्डु नीनिदनन्यायमनेके माडिदेयेनल्कोट्टोलेयं तोरिदम् ॥ क ॥
अवरित्त योलेयिदे नीनवधरिसुवुदिक्कु निम्न मण्डारदोळिन्-

४८ नवरोङ्गुविरलियिन्नोट्टुवुदार्प्यडे निम्न मुन्दे जिनरं पलरन् ॥ [वृ] ॥ अन्त-
प्पडी तलेयनरिदवर कैयोळ्वेट्टुवेनवरदं सुट्टिम्बळिक्कवां पडुवेनेनगाने-
सेज्जेय-वस-

४९ दि मुख्यवागियेन्नुरव (एन्दु-नुरं-) वसदिय जिनरं पलरनोट्टुवुदेने बिज्जण
रायं नामी कौतुकमं नोडुवेवेन्दु वसदिगळ पण्डितरमं जैनरुमं करदु
नीमप्पडे

५० वसदिगळं पणं-माडि ओलेयं कुडिवेन्दडवरावी-मुवोडद वसदियं दूरल्
वन्देवल्लदिनोड्डि जिन-प्रजर्यं-माडलु वन्दवरल्लवेने बिज्जण-रायं नक्कु
नीविम्नुवि-

५१ रदे पोगि सुखदिनिरिवेन्दवरं कळिपि **रामय्यंगळिगेल्लरुवरिये** जयपत्रमं कोट्टम् ।। वृ ।। अरि-राय-च्तितिभृ‍-नगारियरिरायाम्भोधि-कुम्भोद्भ-

५२ वं अरि-रायेन्धन-तीव्र-वह्नि अरि-रायानङ्ग-भावेक्षणं अरि-रायोग्र-भुजङ्ग-भूरि गरुडं श्री-**विज्जणं** वैरि-राज-रमाकर्षण-दोलितासि-सुहृदं कीर्त्यङ्गनावल्लभं ।।

५३ **चोलन**निक्कि **लालन**नधक्करिसि स्थिति-हीन-माडि **नेपाळननन्ध्रनं** तुळिदु **गुर्ज्जरनं** सेरेयिट्टु **चेदि**-भूपाळन मैमेयं मुरिदु **वङ्गन** बीसिसि कादि कोन्दु **वं**-

५४ **गाल-कलिंग-मागध-पटस्वर-माळव**-भूमिपाळरं पालिसिदं धरा-वलयमं कलि **बिज्जणराय**-भूभुजम् ।। क ।। कोडदोळगे पुट्टि कडलं कुडिदं घट्योनि पुट्टि **कलचूर्य्यं**-

५५ रोळोगडिसदे च (चा) लुक्यरन्वय-गडलं कुडिदुक्कुं सजनं **विज्जणनोळु** ।। व ।। स्वस्ति समधिगतपञ्चमहाशब्द-महामण्डलेश्वरं । **कालञ्जर**-पुरवराधीश्वरं [।] सुवर्ण्ण-वृष-

५६ भ-ध्वजम् । डमरुग-तूर्य्य-निर्ग्घोषणम् । **कलचूर्य्य-कुल**-कमल-मार्त्तण्डम् । कदन-प्रचण्डम् । मोने-मुट्टे-गण्डम् । सुभटरादित्यम् । कलिगळङ्कुशम् । गज-सा-

५७ मन्त-शरणागत-वज्र-पञ्जरम् । प्रताप-लङ्केश्वरम् । पर-नारी-सहोद,म् । स (श) निवार-सिद्धि । गिरि-दुर्ग्ग-मल्लम् । चलदङ्क-रामम् । निस्स (श) ङ्क-मल्ल-नित्यखिल-नामादि-स-

५८ मस्त-प्रशस्ति-सहितम् । श्रीमतु **विज्जणदेवं रामय्यङ्गळु** माडिद परम-साहसकम् निरतिशयवप्प मा (म) हेश्वर-भक्तिगं मेच्चि वीर-सोमनाथ-देवर देगुल-

५९ द माट-कूठ-प्राकार[१]-खण्ड-स्फुटित-जीर्णोद्धारक्कं देवरंगभोग-नैवेद्यक्कं **अवन-वसे**-पन्निर्च्चासिरद कम्पणं **सत्तलिगेय** एप्पत्तर मन्तेय **चट्टरसनुमा** (मन्) कम्पणदग्रायित-प्र-

[१] यहाँ भी सदाकी भाँति 'प्रासाद' पाठ होगा।

६९. धिसे **चालुक्य-राय-सोमं** नेगल्दम् ॥ व ॥ अन्ता **त्रिभुवनमल्ल-सोमेश्वरदेवं** सकल-चमूनाथ-शिरोमणियुं चाळुक्य-राज्य-प्रतिष्ठापक-नप्प कु-

७०. मार-**बम्मय्यनुं** तानुं **सेलेयहळ्ळिय-कोप्पदोळु** सुखसंकथा-विनोद-दिनिर्द्दोन्दु देवसं धर्म्म-गोष्टि (ष्ठि) योलिर्दु पुरातन-नूतनरप्प शिवभक्तर गु-

७१. ण-स्तवनं-माडुत्तमिर्द्दे **कान्तद-रामय्यङ्गळब्बलूर**-लिद्ल्लि **जैन**रेल्लं नेरदु वन्दु महाविवादम्माडि नीं तलेयनरिदु-कोण्डु शिवन कैयोळ्पड देयप्पडे जिन-

७२. ननोडेदु शिवनं प्रतिष्ठे-माडुवेन्दोडुमनोड्डियोलेयं कोट्टडेवरु कोट्टोलेयं कोण्डु तन्न तलेयनरिदु-कोण्डु शिवङ्गे पूजे माडि वळिका तळेयं येळ-

७३. देवसके मुन्निनन्ते तलेयं[1] पो (?)ले-बीळवन्तु पडेदु **बिज्जण-देवन** कैय्यलु जय-पत्रवं पूजे-सहितं कोण्डुदुमं जिनननोडेदु बसदियनळिदु बिसु-

७४. टु नेलनं खंडिसि[2] वीर-सोमनाथ-देवरं प्रतिष्ठेमाडि शिवागमोक्तवागे पर्व्वत-प्रमाणद देगुलमं त्रिकूटवागे माडिसिदरेम्बुदं केळ्दु **त्रिभुवन-मल्ल-सो-**

७५. **मेश्वरदेवं** विस्मयं-वि (व) ट्टु नोडुवर्त्थियिं विन्नवत्तलेयं बरयिसि बरिसियवरनिडिर्-गोण्डु तन्नं[3] मनेगोड-गोण्डु पोगि पिरिदुं सत्कारदिं पूजि-

७६. सि श्रीमद्-वीर-सोमनाथ-देवर देगुलद माट-कूटप्राकार-खण्ड-स्फुटित-जीर्णो-द्धारक्कं देवर अङ्गभोग रङ्गभोग-नैवेद्यक्कं चैत्र-

---

१ इस शब्दकी अनावश्यक पुनरावृत्ति मालुम पड़ती है।

२ शायद 'सिडिसि।'

३ 'तम्म' या 'तत्राय' पढ़ो।

७७. पवित्र-वसन्तोत्सवादि-पर्व्वंगळिगवन्नदान-विद्यादानकं **वनवसे**-पन्निच्छासिरद
कम्पणम् **नागरखण्ड**-वेप्पत्तरोळगण अब्बलूरना देवर्गा वूराग-

७८. लु-वेळ्कुवेन्दु परमभक्तियिन्दा कम्पणद मन्नेय **मल्लिदेवनं** मुन्दिट्टा वूर
मेलाळिके-मन्नेय-सुङ्क दण्डदोप-निधिनिक्षेप-सहितवागि **एकान्त-**

७९. **द-रामय्यङ्गळ** कालं कर्च्चि पूर्व्व-प्रसिद्ध-सीमा-सहितं त्रिभोग-सहितं धारा-
पूर्व्वकम्माडि परमेश्वर-दत्तियागे (गि) तात्र (ताम्र)-शासनमं कोट्टानेयनेळि
(रि) सि मे-

८०. रयिसि परम-भक्तियिं प्रतिपाळिसिदम् [॥] ॐ [॥] श्रीकण्ठ-पदाम्बुजमन-
नाकुल-चित्तदोळे पूजिपं शिव-समय-प्राकारनेळ (नि) सि सले नेगळ्-
देकान्तद-राम-नीशा-

८१. भक्ति-प्रेमम् ॥ ॐ [॥] श्रियं दीर्ग्घायुवं कीर्त्तियननुदिनवुं माळ्के गीर्व्वाण-
न्दि-व्यायं श्री-वीर-सोमं विध्रि (धृ) त-हिमकरं **कामदेवङ्गु**दार-श्री-युक्तं—

८२. गद्रिजा-सम्मित-सित-तरळालोल- विस्तार- लीला-नेत् (त्र) आळोकोद्ध-
(?) त-श्री-ललित-रति-काळा-लास्य-शैलूष-वेषं ॥ स्वस्ति समधिगतपञ्च-
महाशब्द-महामं-

८३. डलेश्वरं **वनवासि**-पुरवराधीश्वरं **जयन्तो**-मधुकेश्वर-देव-लब्ध-वर-प्रसादं
विद्वज्जनाह्लादकं **मयूरवर्म्मकुल**भूषणं **कदम्ब**-कण्ठीरवं कदन-
प्रचण्डं साह-

८४. सोत्तुङ्गं कलिगळङ्कुशं सत्य-राधेयं शरणागत-वज्र-पञ्जरं याचक-कामधेनुवित्य-
खिळ-नामावळि-सहितनप्प श्रीमन्महामण्डलेश्वरं **कामदेवरस**-

८५. र्म्मानुज्ञत्यनूरं दुष्ट-निग्रह-शिष्ट-प्रतिपालनदिनाळुत्तमिर्द्द-**ब्बलूर** वीर-सोमनाथ-
रं वन्दु कण्डु **रामय्यङ्गळु** शिवागवा (म)-विधा-

८६. नदिं माडिसिद पर्व्वतोपमानमप्प देगुलमं कण्डवरु माडिद साहसमं स-विस्त
केळ्दु मेच्चि परम-प्रीतियिन्दोड-गोण्डु पोगि

८७. **पानुङ्गल्ल** नेलेवीडिनोळ् प्रधानरुं तानुं **मदुकेय**-मण्डलिक-सहितं सुख-सङ्कथा-विनोददिं कुळ्ळिदर्दु परम-भक्तियिं वीर-सोमनाथ—

८८. देवर्गे **पानुङ्गल्ल**-अय्नूररोळगण कम्पणं **होसनोड्** प्पट्टरोळगे **मुण्डे-गोड** समीपद **जोगेसरदिं** वडगण **मल्लवळ्ळि**येम्ब ग्राममं प्रसिद्ध-सी-

८९. मा-सहितवागि त्रिभोगाभ्यन्तरं नमस्यमाडिया देवर देगुलद खण्ड-स्फुटित-जीर्णोद्धारक्कं देव-रङ्गभोग-रङ्गभोग-नैवेद्य [क्रम] चैत्र-

९०. पवित्र-वसन्तोत्सवादि-पर्व्वंगळ्गमन्नदानक्कवेन्दु **रामय्यङ्गळ** कालं कर्च्चि धारा-पूर्व्वकं-माडि-परम-भक्तियिं कोट्टु धर्म्ममं प्रतिपालिसिदम् । (।।) स्वस्त्यस्तु ओम् ।।

९१. इन्ती धर्म्मङ्गळं प्रतिपाळिसिदवरु श्री-वारणासि प्रयागे कुरुक्षेत्र अर्घ्यतीर्थ श्रीपर्व्वतादि-पुण्य-क्षेत्रदल्लि सायिर कविलेगळ कोडुं

९२. कोळगुवं होन्नोळ्कट्टिसि चतुर्व्वेद-पारगरप्प सु-ब्राह्मणर्गे सूर्य्यग्रहण-सोमग्रहण-व्यतीपात-संक्रमणादि-पुण्य-कालदोळ्विधि-युक्तवागे कोट्ट

९३. प (फ) लवं पडेवरु ई धर्म्मवनळिदवरा गङ्गे वारणासि कुरुक्षेत्र-प्रयागादि-पुण्य-क्षेत्रङ्गळोळा कविलेगळुवं ब्राह्मणरुवं कोन्द पापमं पडेवरीयर्त्थं सं-

९४. देह विल्लेम्बुदं मुन्नं मनु-वाक्यङ्गळु (ळं) पेळ्गुं ।।
श्लोक ।। बहुभिर्व्वसुधा भुक्ता राजभिः सगरादिभिः ।
यस्य यस्य यदा भूमिस्तस्य तस्य तदा फलम् ।।
गण्यन्ते पांसवो

९५. भूमेर्गण्यन्ते वृष्टिविन्दवः ।
न गण्यते विधात्रापि धर्म्म-संरक्षणे फलम् ।।
स्वदत्तां परदत्तां वा यो हरेत वसुन्धराम् ।
षष्टि-वर्ष-सहस्राणि विष्ठायां जा-

९६. यते क्रमिः ॥

कर्म्मणा मनसा वाचा यः समर्त्थोप्युपेक्षते ।

सम्यस्तथैव चाण्डालः सर्व्व-धर्म्म-व्बहिष्कृतः ॥

कुलानि तारयेत् कर्त्ता सप्त सप्त च सप्त च ।।

अघोवघा—

९७ तयेद्धर्त्ता सप्त सप्त च सप्त च ॥

श्लोक ॥ अपि गङ्गादितीर्थेषु हन्तुगामथवा द्विजम् (।)

निष्कृति (:) स्यान्न देवस्व-ब्रह्मस्व-हरणे नृणाम् ॥

सामान्योयं धर्म्म-सेतु—

९८. र्नृपाणाम्

काले-काले पालनीयो भवद्भिः (।)

सर्व्वानेतान् भाविनः पार्त्थिवेन्द्रान्

भूयो भूयो याचते रामचन्द्रः ॥

स्वस्त्यस्तु मंगलं च । श्रीश्च ॥ ओम्

९९. ओम् [॥] हरनोळ्तवनिधियन्ताम् दख़ुरविल्लेनिसि पडेदु देगुलवं पुरहरन कैळासदन्तिरे वीरचिसिदं शम्भु-भक्ति-धामं रामम् ॥ वृ ॥ देगुलकेन्दु भक्त-

१००. जनवादरदिन्दिदिरेदॆ कोट्टड (दं) हागवनादडं कळदुकोळ्ळदे बेडदे नाडे द्दे (दै) न्यदिं पोगि नृपाळरं शिवननुग्रहवत्तयवागे माडिदं देगुल [वं] म् हराद्रिगेणे-

१०१. यागिरे रामनिदेम् कि (क्र) तार्थनो ॥ क ॥ केशवराजचमूपं शासनवं पेळ्दनन्तदं तिर्द्दि निरायासने वरदनीशन दासं शिव-चरणकमल-शरणं सरणम् ॥ ॐ [।।]

१०२. स्वस्ति श्रीमतु-हर-धरणी-प्रसूत-मुक्कण्ण-कादम्ब- [वंश] रुं बनवासि-पुरवराधीश्वररुं श्री-मद्गु (धु) कनाथदेवर दिव्य-श्री-पाद-

१०३. पद्मारावकरुं मल्लिदेवरायरुं नागरखण्डेय··· ··· ··· ··· ······
रिगे-नाड्डुमं··· ···

१०४. ··· ··· ··· ··· ···कोट्टरु ॥

[इस प्रकाशित अभिलेखकी कहानीका संक्षेप इस प्रकार है:—

कुन्तल देशके आलन्दे (या आलन्द) नामक नगरका निवासी श्रीवत्स गोत्रका पुरुषोत्तमभट्ट नामका एक शैव ब्राह्मण था। उसके राम नामका एक पुत्र उत्पन्न हुआ। कालान्तरमें, शिवकी अधिक भक्ति करनेके कारण, इसका नाम 'एकान्तद-रामय्य' पड़ गया। उसने बहुत-से शैव तीर्थ स्थानोंकी यात्रा की। और अन्तमें वह हुळिगेरे (लक्ष्मेश्वर) आया जहाँकि 'दक्षिणका सोमनाथ' इस नामसे प्रसिद्ध एक शैव मन्दिर था, इसके बाद अब्लूर जहाँ कि, जैनधर्मके एक मज़बूत गढ़ होनेके सिवाय, ब्रह्मेश्वरके मन्दिरमें एक महत्त्वपूर्ण और प्रभावशाली शैव केन्द्र भी था। अब्लूरमें वह जैनोंके साथ विवादमें फँस गया। जैनोंने वहाँ शङ्कगौण्ड नामके ग्रामणीके अधिनायकत्वमें उसकी भक्तिका अन्त कर दिया। कुछ शर्तें रक्खी गईं और यह एक ताड़-पत्र पर लिख दी गईं। शर्त यह थी कि हारनेपर जैन लोग अपने जिन देवकी जगह शिवकी प्रतिमा स्थापित कर देंगे। एकान्तद-रामय्य शर्तमें विजयी हुआ। इस पर जैनोंने उपर्युक्त शर्तनामेकी शर्तोंका पालन करनेसे इन्कार कर दिया। तब जैनोंके रक्षक, घुड़सवार, सरदार, तथा उनके सैनिकोंके विरोधमें होते हुए भी, उस अकेलेने जिनको उठाकर (फेंककर) वेदीको ध्वस्त कर दिया, और, जैसाकि आगेके लेखसे प्रकट होता है, उसकी जगहपर पर्वत सरीखा एक 'वीर-सोमनाथ' नामसे शिवालय खड़ा कर दिया। इसपर जैन लोग विज्जलके पास गये और उससे एकान्तद-रामय्यकी शिकायत की। राजाने एकान्तद-रामय्यको बुलवाया और उससे प्रश्न किया कि उसने जैनोंका यह भयंकर नुकसान क्यों किया। इसपर एकान्तद-[illegible]ने वही ताड़-पत्र वाला शर्तनामा पेश कर दिया, और विज्जलसे उसे अपने [illegible] जमा कर देनेको कहा तथा यह बात भी कही कि अगर जैन लोग अपने

८०० मन्दिरोंको जिनमें आनेसेज्जेयवदादि भी शामिल रहेगी, शर्तपर लगादें तो वह फिरसे वही चमत्कार[1] (feat) दिखलायेगा जिसे कि उसने अभी ही दिखलाया था। इस दृश्यको देखनेकी इच्छासे बिज्जलने जैन मन्दिरोंके जितने विद्वान् थे उन सबको बुलाया और उसी शर्तनामेकी शर्तको दुहरानेके लिए अपने तमाम मन्दिरोंको शर्तपर रख देनेके लिये कहा। जैनोंने यह कहते हुए कि वे अपनी शिकायतकी क्षतिको मिटानेके लिये उसके पास आये हैं न कि उस क्षतिको और बढ़ानेके लिये, दूसरे बारकी इस परीक्षाको माननेसे इन्कार कर दिया। इसपर बिज्जलने उनका उपहास किया और यह शिक्षा देते हुए कि इसके बाद तुम लोगोंको अपने पड़ोसियोंके साथ शान्तिसे रहना चाहिये, उन्हें बरखास्त कर दिया, और एकान्तद-रामय्यको खुली सभामें जयपत्र दिया। तथा, जिस अद्वितीय साहससे एकान्तद-रामय्यने अपनी शिवभक्ति प्रकट की थी उससे प्रसन्न होकर, उसने उसके पैर धोये और वीर-सोमनाथके मन्दिरको गोगाव नामका ग्राम, जो बनवासी १२००० में सत्तलिगे-सत्तरके मळुगुण्डके दक्षिणमें है, दानमें दिया।

इसके बाद लेख कहता है कि जिस समय पश्चिमी चालुक्य राजा सोमेश्वर चतुर्थ और उनके सेनापति ब्रह्म शेलेयहळ्ळियकोप्पमें थे, एक ग्रामसभा की गई जिसमें पुराने और नये शैव-सन्तोंके गुणोंका वाचन किया गया था। जब एकान्तद-रामय्यका किस्सा उससे कहा गया तो सोमेश्वर चतुर्थने एक पत्र लिखकर एकान्तद-रामय्यको अपने पास अपने राजमहलमें आनेके लिये कहा। वहाँ उसने उसके पैर धोये और उसी मन्दिरको स्वयं अब्लूर ग्राम ही भेंट किया। यह अब्लूर-ग्राम नागरखण्ड-सत्तरमें है जो बनवासी बारह हजारमें है। और अन्तमें, महामण्डलेश्वर कामदेवने उस मन्दिरको जाकर देखा, सब कहानी सुनी,

---

1. यह चमत्कार और कुछ नहीं सिर्फ कटे हुए सिरको जोड़ देना है। एकान्तद-रामय्यने अपना सिर काट दिया था और फिर शिवकी कृपासे उसे पुनः जोड़ दिया था।

एकान्तद-रामय्यको हानगल बुलाया, और वहां उसके पैर धोये और मल्लवल्ली नामका गाँव मन्दिरको दानमें दिया। यह मल्लवल्ली गाँव पानुङ्गल-पाँच सौ में होसनाड्-सत्तरमें मुण्डगोडके पास जोगेसरके दक्षिणमें है।]

[EI, V, No. 25, E.]

४३६

अब्लूर—कन्नड़।

[बिना काल निर्देशका]

१. श्री-ब्रह्मेश्वर-देवरल्लि **एकान्तद-रामय्य** वसदिय जिननोडुवागि तलेयनरिदु इडेद टावु ।। संक-गावुण्ड वसदिय नोडेयलीयधे (दे) आळुं कुदुरेय् ··· ···

२. नोड्डिरलु **एकान्तद-रामय्य** कादि गेल्दु जिननोडेदु लि [ङ्गमं प्रतिष्ठे-माडिदम् ।।]

अनुवाद :—ब्रह्मेश्वर भगवान्के पवित्र मन्दिरमें, जब कि एक मन्दिरके 'जिन' शर्त (दाव) पर रख दिये गये थे, एकान्तद-रामय्यने अपना सिर काट डाला और इसको फिरसे प्राप्त कर लिया! जब सङ्कगावुण्डने उसे (एकान्तद-रामय्यको) मन्दिर या वेदीको ध्वस्त नहीं करने दिया और अपने आदमियों तथा घुड़सवारोंको (उस वेदीकी रक्षाके लिये)··· ··· ··· ··· एकान्तद-रामय्यने लड़ाई लड़ी और उसमें विजय प्राप्त की तथा 'जिन'को भग्न करके 'लिङ्ग' की प्रतिष्ठा की।

[EI, V, No. 25, F.]

४३७

कम्बेनहल्लि;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[बिना काल निर्देशका]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

४१८

बन्दलिके;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[बिना काल निर्देशका, पर संभवतः लगभग १२०० ई०]

[शान्तीश्वर बस्तिके रङ्गमण्डपके दक्षिण-पश्चिम खम्भे पर]

(पश्चिम-मुख) स्वस्ति श्रीमतु **अभयचन्द्र-सिद्धान्ति-देव**रुगळ् शिष्यरु ···कन अदर **मुरारि-देव**-दान-प्रतिपालक-वंशोद्भवरु **चारुकीर्त्ति-पण्डित-देव**रु **हिरिय-महळिगेय पञ्च-बस्ति**य जीर्णोद्धारव माडिद्रु। आ-स्थानक्के अरसिन्दलु नाडिन्दलु त्रिडिसिकोण्ड वृत्ति आ-**ताळगुप्पे**य बस्तिगे पूर्व्वं तोडगि सन्दु बहुदु। **बलेयगारु। बाळेयहळ्ळि। तगुडवत्तिगे** यी-मूरु-ऊरु सर्व्वमान्य अरसियकेरेय ळगे ताळगुप्पेय गऊडुगळु बिट्टदु ४ हाद। मुरवत्तूर गौडुगळु वीर गौण्डन केरेय केळगे बिट्टदु ४ हाद। बिदळ २ सासव हेरुबडे १० येत्तु हदिनेण्टु कम्पण-दलु सलुऊदु। बत्तियकेरी सर्व्वमान्य। बलेयगारलि गुरुगळु बिट्ट भूमि अज्जिय मूलस्थानके ४ हाद। हञ्चड २० मान्य येत्तु हञ्चड सर्व्वमान्य समेय-समुच्चयद मोगवट्टिगेय पञ्च-बस्ति यी-धर्म्मक्के ··· ···रुदरुलन हदिनेण्टु समेयवु कर्त्तर ॥ श्री श्री

[स्वस्ति। मुरारि-देवके दानके प्रतिपालक वंशमें उत्पन्न, अभयचन्द्र-सिद्धान्ती देवके शिष्य चारुकीर्त्ति-पण्डित-देवने हिरिय-महलिगेकी पञ्च-बस्तिको सुधारा। राजा और नाड्से जो दान पहले ताळगुप्पेकी बस्तिके लिये मिला था, अर्थात् बलेयगारु, बळेयहल्लि और तगडुवत्तिगे,—ये तीन गाँव, सब करोंसे मुक्त, उस मन्दिरके लिये भी लागू हो सकते हैं। (उक्त) कुछ भूमि भी दानमें दी थी।

इस गुणी कार्यके लिये १८ जातियाँ प्रबन्धक हैं।]

[EC, VII, Shikarpur, tl, No. 227.]

४३९

नित्तूर;—कन्नड़।

[बिना काल-निर्देशका, पर लगभग १२०० ई० का]

[नित्तूरु (गुब्बि परगना) में, आदीश्वर वस्तिकी उत्तरीय दीवालमें एक पाषाण पर]

श्री-मूल-संघ-देशिय-गण-पुस्तक-गच्छ-कोण्डकुन्दान्वयद श्री (यु) **अभयचन्द्र-सिद्धान्तिक-चक्रवर्त्तिगळ** प्रिय-शिष्यरागमाम्बुनिधिगळुं सकळ-गुणाकळितरुमप्प **बाळचन्द्र-पण्डित-देवर** प्रिय-गुड्डियरु ॥

विनय-निधि **माळियक्कं** । अनुपम-गुणमन्ते **बामि-सेट्टि**गळं ताम् ।
जिन-भक्तियिन्दे पडेदळु । जिन-भक्तप्पडेव पडवुयोगळलळुम्वम् ॥
शोळान्विने **चौडलेगं** । **माळवेय तनूज मल्लि-सेट्टि**गे सुतेया- ।
व्याळ-गज-गमने **पद्मले** । बाळक-माळिक्य **मल्ल**-माळात्मजरुम् ॥
मुळिदु जवं माळवेयुमन् । उळिहदे सोसे **चौडियक्कनं** माडिपलु स्त्री-
कुळ-साहस-षड्-गुणदोन्द- । अळव समाधियोळे मेरेदु मुडिप्पिदरळुते ॥

माळव्वेयुं चौडियक्कनुमेम्बिर्व्वर निषिधि ॥

[श्री-मूलसंघ, देशिय-गण, पुस्तक-गच्छ और कोण्डकुन्दान्वयके अभयचन्द्र-सिद्धान्तिक-चक्रवर्त्तीके शिष्य वालचन्द्र-पण्डित-देवकी प्रिय गृहस्थ-शिष्या,—**माळियक्के** थी।

चौडले और माळवेके पुत्र मल्लि-सेट्टिकी पद्मले और मल्लम दो पुत्रियाँ उत्पन्न हुई थीं। जब यम (मृत्यु) ने क्रुद्ध होकर, मालवेको न बचाकर, उसकी पुत्रवधू चौडियक्कको भी मारा वह समाधिको प्राप्त हुई, और स्त्रियोचित भक्तिके ६ गुणोंको प्रदर्शित कर दिवंगत हुई। यह स्मारक (निषिधि) मालव्वे और चौडियक्क दोनोंका है।]

[E C, XII, Gubbi tl., No 5]

४४०

निचूरु;-कन्नड़ ।

[विना काल-निर्देशका, पर संभवतः १२०० ई० का ?]

[निचूरु (गुब्बि परगना) में, आदीश्वर बस्तिकी उत्तरीय दीवालमें एक पाषाणके वायी ओर की तरफ]

माळव्वेय मग बामि-सेट्टिय मद्वळिगे बूचव्वेय निषिधि ॥

[माळव्वेयके पुत्र बामि-सेट्टिकी पत्नी बूचव्वेकी निषिधि (स्मारक) यह है ।]

[E C, XII, Gubbi tl., No 6]

४४१

निचूरु;-कन्नड़ ।

[विना काल निर्देशका पर संभवतः १२०० ई० ? का]

[निचूरु (गुब्बि परगना) में, आदीश्वर वस्तिकी उत्तरीय दीवालमें एक पाषाणके दाहिनी ओर]

माळव्वेय मल्लि-सेट्टिय तन्दे गुणद वेडङ्ग मल्लि-सेट्टियुमातन प्रिय-पुत्र माळेय्यनुमेन्द् इर्व्वर निषिधि ॥

[मालव्वेके पिता मल्लिसेट्टि, और मल्लि-सेट्टिके प्रिय पुत्र माळय्य दोनोंकी [illegible] यह है ।]

[E.C., XII, Gubbi, tl., No. 7]

४४२

कडकोल;—कन्नड़ ।

वर्ष खर [=१२वीं या १३वीं ई० (फ्लीट) ।]

[१] श्रीमत्-खर-संवत्सरदन्दु

[२] कत्तेय-ऐचि-सेट्टि[ट्] य म-

[४] ग चंद्यन निषिधिगेय क-

[५] ल्[लू] उ ॥

अनुवाद—श्रीवाले खर संवत्सरमें,—(व्यापारी) कत्तेय-ऐचिसेट्टि के पुत्र चन्दयके निषिधिगे' का पाषाण ।

[IA, XII, P. 101, No 3] t. and tr.

४४३

सिग्गाम्वे (जिला धारवाड़);—कन्नड़ ।

वर्ष व्यय [=१२वीं या १३वीं शताब्दि ई० (फ्लीट) ।]

[धारवाड़ जिलेमें बङ्कापुर तालुकाका तालुका स्टेशन सिग्गाम्वे है । यहाँके कलमेश्वर मन्दिरके सामनेके स्मारक पाषाण पर यह अभिलेख है ।]

[१] स्वस्ति श्रीमद्व-व्यय-संवत्सरद् मार्ग्ग-

[२] सि (शि) र व ११ सु (शु) । देसी (शी) य-गणद वाळचं-

[३] द्रत्रैविद्यदेवर गु[ड्]ड सब (?) रसिंगि-से[ट्]टि

[४] यरु स्वर्ग-प्राप्तनादनु ॥

अनुवाद स्वस्ति ! देशीयगणके वाळचन्द्रत्रैविद्यदेवके गुड्ड (शिष्य या अनुयायी) (व्यापारी) (?) सवरसिङ्गिसेट्टिने, शोभनीक व्यय संवत्सरके मार्गशिर (महीने) के कृष्ण पक्षकी एकादशी, शुक्रवारको स्वर्ग प्राप्त किया ।

[IA, XII, P. 102, No, 5.] t. and tr.

४४४

एद्दोले—कन्नड़

[बिना कालनिर्देशका; १२वीं या १३वीं ई० शताब्दि (फ्लीट).]

[१] श्री-मूलसङ्घ-वसो (ला) त्कारगद कुन्दकुन्दुगळ गुड्ड ऐचि-सेट्टि

[२] यर मग येरम्बरगे-नाड सेट्टिगुत्त रामि-सेट्टियर निषीधि ॥

अनुवाद रामिसेट्टि जोकि एरम्बरगे[1] जिलेका सेट्टिगुत्त था—श्रीमूलसङ्घके वसो (ला) त्कारगणके कुन्दकुन्दु का गुड्ड (शिष्य) था; और ऐचिसेट्टि (व्यापारी) का पुत्र था, उसकी यह निषीधि (निषद्या) है।

[इं ए०, १२, पृ० ६६]

४४५

गिरनार—संस्कृत भग्न।

[बिना काल—निर्देशका]

लेख श्वेताम्बर सम्प्रदायका है

[Revised list and Rem. Bombay (ASI, XVI), p. 351-352, No 8, t. and tr.]

४४६

रायबाग;—संस्कृत।

[शक ११२४=१२०१ ई०]

[मूल लेखका अब पता नहीं है।]

इस शिलालेखका प्रारम्भ उस राजा कृष्णके वर्णनसे शुरू होता है, जिससे रट्टवंश यशस्वी हुआ था। तदनन्तर राजा सेनका वर्णन है, जो रट्ट राजाओंकी ... में 'सेन'-नामधारी राजाओं में द्वितीय संख्याका सेन है। इसके बाद

1. यह नाम 'एरम्बिरगे' भी लिखा जा सकता है।

वंशावली (Genealogy) कार्त्तवीर्य चतुर्थ और मल्लिकार्जुन तककी दी हुई है। कार्त्तवीर्य चतुर्थका समकालीन एक राजा यादववंशी रेव्व[1] नामका था। इसके बाद लेख में कुछ दोनोंका उल्लेख आता है जो 'दुर्म्मति संवत्सर' शक ११२४ में किये गये थे। दान करने का दिन वैशाख शुदी पूर्णिमा, शुक्रवार 'व्यतीपात' का समय था। ये दान राजा कार्त्तवीर्यदेवने अपनी माता चन्द्रिका-महादेवीके द्वारा बनाये गये रट्टोंके जैन मन्दिरके लिये तत्कालीन गुरु शुभचन्द्र भट्टारक देवके लिये थे। सीमाओंके निर्धारण में बहुतसे गाँवों और शहरोके नाम आये हैं।

[JB. X, P. 183, No 9, a.]

४४७

रोहो—संस्कृत तथा गुजराती

[सं० १२५९=१२०२ ई०]

लेख भग्न है और श्वेताम्बर सम्प्रदायका मालूम पड़ता है।

[EI, II, No. 5, No 12 (P. 28-29) t, and tr.]

४४८

वन्दलिके:—संस्कृत तथा कन्नड़।

—[शक ११२५=१२०३ ई०]—

[वन्दलिकेमें, शान्तीश्वर नस्तिके सामनेके पाषाण पर]

कवि-निवह-स्तुतं नेगळ्द रेच-चमूपतियिं वळिक्कमा-।
भुवनदोळिन्तनन्त-जिन-धर्म्मवधृद्धरिपर्द्धं-रेचनम्।
सुविदितमागे वान्धव-पुराधिप शान्ति-जिनेश-तीर्थमम्।
कवडेय वोप्पनुद्धरिसिदं यदु-वल्लभ-राज्य-भूषणम्॥

१—कल्हो ळी के शिलालेखमें भी 'रेव्व' नाम आया है। पर यहाँका रेव्व उस रेव्वसे भिन्न है (जे. एफ़. फ्लीट)।

मडगिडलेन्देम् घनमं ।
पडेवने नाळ्-देरद दानमं माडलुकेन्-।
दोडमेयनर्ज्जिपनारिम् ।
कडु-माणं भव्यरोळगे कवडेय वोप्पम् ॥
श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥
वसुधा-कान्तेय कुन्तळोपममेनिप्पी-कुन्तल-क्षोणियम् ।
पेसर्व्वेत्ता-नव-नन्द-गुप्त-कुल-मौर्य्य-क्ष्मापरळ्दर् ळसत्-।
जसदाण्मर् कलि-रट्टराळ्दरवरिं चालुक्यरळ्दर् व्वळिक् ।
एसेदिर्द्दा-कळचूर्य्य वंशजरोळाळ्दं बिज्जल-क्षोणिपम् ॥
अळ्कि वळिक्के घरेयोळ् ।
बल्लिदरं तरिदु निज-भुजासिथिनदरं ।
बल्लाळ-नृपं घरेयं ।
उल्लोलेयिनाळ्दनखिळ-देशं पोगळल् ॥

आतन वंशावतारमेन्तेने ॥

वृत्तम् ॥ कृष्णन नाभि-पङ्कजजनप्पजनिं वोगेदत्रियत्रिजम् ।
विष्णुवदामार्गि ससि पुट्टिदनातन वंश-सम्भवम् ।
विष्णु-पराक्रमं पुरु पुरूरवना-नहुषं ययाति रा-।
जिष्णु यदूत्तमं क्रमदे तत्तदपत्यरेनल्के पुट्टिदर् ॥
सळनादं यदु-वंशदोळ् मुडदवं वासन्तिका-देविया ।
चळनाराधनेयं प्रोणर्च्चि शशकोघद्-ग्रामदोळ् पायदोडा-।
गळे तां पेर्द्-ब्बुलि पोप्पळेन्दु सेळेयं जैन-व्रतीन्द्रं जपत्-।
कुळकं कोट्टोडे पोय्ये होय्सळ-नेसर् त्तानादुडी- घात्रियोळ् ॥
सेळे सिन्दद कावागिरे ।
मुळिसिन्दं पाय्द पुलिये पुलियागिरे ताम् ।

तोळतोळ तळ्दपुदु यदु-नृप-।
बळदोळ् पुलियेसेव-सिन्दवन्दिन्दित्तल् ॥
सळनिन्दं बळिकं नृपाळवरनेकर् य्यादवेशर् म्मही-।
तळमं पाळिसिदर् ब्बळिक्के **विनयादित्यङ्गे** पुत्रं जगत्-।
तिळकं **नुन्नेरेयङ्ग**नादनेरेयङ्गङ्गोप्पे **बल्लाळनुम्** ।
विळसद्-विष्णुवुमर्क्क-तेज**नुदयादित्याङ्क**नुं पुट्टिदर् ॥
अवरोळ् रक्षिप **विष्ण-बर्द्धन**-नृपङ्गादं सुतं मेदिनी-।
धवनप्पा-नरसिंह-भूपनदरं **तन्नारसिंहङ्ग**मुत्-।
सवदिन्दे**चळ-देवि**गं **यदु-कुल**-प्रोत्तंसनादं सुतम् ।
भुवनानन्दन-मूर्त्ति कीर्त्ति-निळयं **बल्लाळ**-भूपालकम् ॥
निरिदिदिरान्तवरं निज- ।
चरणक्केरगिदरनोसेदु रक्षिसि धरेयम् ।
परिपाळिसुतं सुखदिन्द् ।
इरे **विजयसमुद्र**दल्लिया- **बल्लाळम्** ॥
धरणी-कान्तेय मुखदन्त् ।
इरे **बनवसे-नाडु** रञ्जिसुवुददरोळ् **ना-** ।
गर-खण्डं तिळकदवोल् ।
परिशोभिपुदाव-कालमुं सिरियोदविम् ॥
ऊरूर्न्नन्दनदि लता-भवनदिन्दूरूर्त्तटाकङ्गळिन्द् ।
ऊरूर्त्तळ्तेले-वळ्ळियिं कोळगळिन्दूरूर् प्पळोर्व्वीजदिन्द् ।
ऊरूर् कव्विन तोण्टदिं कळवेयिन्दूरूर् प्रजा-व्रातदिन्द् ।
ऊरूर् द्देव-गृहङ्गळिं विबुधरिन्दूरूर् क्करं रञ्जिकुम् ॥
परलोळ् परुसं धेनूत्- ।
करदोळ् सुर-धेनु नन्दनदोळमर-कुजम् ॥
करमेसेवन्तिरे सलें ना- ।
गर-खण्डदोळेसेवुदेसेव **बान्धव-नागरम्** ॥

वृ ॥ अदु ऋळसिद् नन्दनदिनम्बुज-षण्डदिनोळ-गन्नुंगिनिम् ।
पुडिदेले-वळ्ळियिं वेळद-शाळियिनोप्पुव कोण्टेयिं समन्त् ।
ओदविद-लक्ष्मियिं त्रिभवदिं विळसज्जनदिं सु-देव-गे- ।
हद कडु-चेल्विनिन्दमळका-पुरमं नगुतिर्प्पुदोर्म्मेयुम् ॥
अदनाळ्वं प्रजे मेच्चे गण्डनदटं कादम्ब-वंशोद्भवम् ।
मुददिं **सोम-नृपा**त्मजातनेनिसिर्द्दो-**बोप्प-देव**ङ्गे पुट्ट् ।
इद सत्पुत्रनन्न-शौर्य्य-निळयं कन्दर्प्प-सन्-मूर्त्तिय- ।
म्युदयालङ्कृतनात्त-कीर्त्ति-रमणं श्री-**ब्रह्म-भूपाळक**म् ॥

आ- **चन्द्रणिकेय** शान्तिनाथ-देवर मण्टपमं माडिसि **कवडेय बोप्पि-सेट्टियर** सर्व्व-नमस्यमं माडिदम् ॥

नागर-खण्डदोळ् हरन वक्त्रदवोल् नेगळ्दग्रहारमध्द् ।
यागळुमोप्पुगुं निखिळ-वेद-पुराण-सुनीति-शास्त्र-तर्क- ।
आगम-काव्य-नाटक-कथा-स्मृति-यज्ञ-विधानमं मनो- ।
रागदिनोदुवोदिसुवशेष-महाजनदोन्दु-प्पोपर्दि ॥
प्रत्येक-बृहस्पतिगळ् ।
नित्यानुष्ठान-चारु-चारित्र-परर् ।
स्सत्य-युतर् चेचदोळा- ।
दित्य-सट्टशरल्लियिर्प्प मावनवेल्लं ॥
केरेयूर शम्भु-देवनेय् ।
अरितर्क्कं सकळ-विद्वेगळ्गं सले कण्- ।
दरवीयेनिसिप्पेनवनम् ।
नेरे पोलवु नेरेयनवनुमा-भारतियुम् ॥
उरदे बणञ्जु-धर्म्मदोळं नयदिं नडेयुत्तमिर्प्परम् ।
ब्ररिदु सु-धर्म्मदिं नडेवरं प्रतिपाळिप **सेट्टिकव्वे**यक्- ।
करिन-सुतङ्गे पुण्य-निधि **शंकर-सेट्टि**गे सेट्टि-गुत्तरार् ।
प्पेररेणे सत्यदिं विभवदिं नुत-शौर्य्यदिनुद्घ-धैर्य्यदिम् ॥

तनगय्यं **शङ्करं** तज्जननि नेगळ्द **जक्कव्वेयाप्तं** जिनं सन्-।
मुनि-वन्द्यं **भानुकीर्त्ति-व्रति-पति** गुरु **वल्लाळलनाळ्दं** विनेपर् ।
त्तनगिष्टर् कान्ते **लच्छाम्बिके** सति सति-नुते **जक्कव्वे-मल्लव्वेगळ्** नन्-
दनेयर् **व्वल्लाळ-देवं** सुतनेनेयेसेदं वीर- **सामन्त-मुद्दम्** ॥
कविगळ मुद्दनाश्रितर मुद्दननाथर मुद्दनिष्टनप्प्-।
अवर्गळ मुद्दनर्त्थिगळ मुद्दनेडर्ग्नेले-गोण्ड शिष्ट-ज्ञान्-
धवरेसेवोन्दु-मद्दनेनसुं परिकारद मुद्दनङ्गना-।
निवहद मुद्दनेय्दे सलियं प्रभु-मुद्दनिळा-तळाग्रदोळ् ॥
स्वच्छतर-कीर्त्तियिन्दम् ।
कच्छवियूरडेय **बिट्टियरसं** जगमम् ।
प्रच्छादिशिदनवङ्गति-।
तुच्छरेनिप्पूरडेयरदेम् पेळ्ळेणेये ॥
सागर-वळयित-धरणी-।
भागदोळत्युन्नतिकेयिं बर्ल्पि सत्-१
त्यागदिनरि वन्देणेये ।
बेगूर प्रभुगे माळ-गौडङ्गन्यर् ॥
सोगयिप्प **कण्णसोगेय** ।
नेगळ्दिर्द्दे**रकाटि-गौड**नरितवनाप्पंम् ।
मृग-रिपु-विक्रममं नेरे ।
पोगळल्का-जलजभवनुमेनार्त्तं (पं) पने ॥
मळवल्लि येरह-गौडङ्।
एळेयोळ् समनप्परुण्टे सत्यदिनरिविम् ।
वीळसत्-त्यागदिनत्युज्-।
ज्वळ-कीर्त्तियिनधिक-शौर्य्यदिं सद्-गुणदिम्
चलद नेलो चागदागरं ।
अलघु-गुळङ्गळ निधानमर्रिलद तवरुज्-।

न्नळ-कीर्त्तिय करुवेनिपम् ।
सले इलरिं दव्वळर सोम-गवुण्डम् ।
मुददे मुनिचन्द्र-सिद्धान्-।
त-देवरळ्करिण-शिष्यरनुपम-विचर्-
म्मद-रहितर् स्सलेनेगळ्दर् ।
व्विदित-गुणर् ल्ललितकीर्त्ति-सिद्धान्तेशर् ॥
अवरानन्दन-नन्दनन् ।
अवनी-संस्तुत्यमेनिप कणूर्गण-कै-।
रव-चन्द्रनेनिसि नेगळ्दम् ।
विवेकि शुभचन्द्र-विनुत-पण्डित-देवम् ।
मळिनते इल्लद कुन्दम् ।
तळेयद सले राहु-पीडे येदद दोषा-।
वळियोळ् परियिसदस्ता-।
चळकेळसद चन्द्रनेनिसुवं शुभचन्द्रम् ॥
बन्दणिकेय तीर्थवना-।
नन्दाचार्य्यरवोलुद्धरिसिदं जगदा-।
नन्दकर-ललितकीर्तिय ।
नन्दन शुभचन्द्र-विनुत-पण्डित-देवम् ।
कुसुम-व्रातदोळम्बुजं बळधियोळ् दुग्धाब्धि ताराळियोळ् ।
ससि चिन्तामणि कल्गळोळ् तरुगळोळ् कल्पोर्व्विजं रत्नदोळ् ।
मिसुपा-कौस्तुभमोप्पुवन्ते जिन-योगि-व्रातदोळ् रञ्जिरम् ।
जसदाण्मं शुभचन्द्र-देव-मुनिपं कानूर्गणोद्धारकम् ॥
इन्तिदु चित्रमेम्बिनेगमेय्दे मोसर् प्योरसवे पाल्गळोर्-।
अन्तिरे पुत्तिनोळ् पुगे जलातिशयं नव-पुष्प-मालिका-।
सन्ततियिन्दमादतिशयं-नेरसोप्पुव शान्तिनाथ-तीर्-।
त्थान्तर-पारिपत्यदेसेवं शुभचन्द्र-मुनीन्द्रनोर्म्मेयुम् ॥

श्रीमद्-बल्लाळभूपाळकन विनुत-सन्-मंत्रि विप्रान्वयाब्ज-।
स्तोमोद्यद्-भानु नारायण-पद-कमल-द्वन्द्व-भृङ्गं यशश्-श्री-।
धामं साहित्य-विद्याधरनखिळ-गुणालंकृतं मान्तन-प्रो-।
द्दामं श्री-मल्लनी-वन्दणिकेयनोलविं पालिसुत्तिप्पनोळिपं ॥
कडिवं मारान्तरं वेगदे करगिसुवं शत्रु-सैन्यङ्गळं सङ्-।
गडकेल्लं धैर्य-वर्ण-क्रम…णसेये तां तोरुवं कीर्त्तियल्दम् ।
कडु-चेल्वप्पन्तिरच्चोत्तुनखिळ-दिशा-दन्ति-दन्तङ्गळोळ् नोळ्-।
पडे सन्तं **कम्मट**कन्तोडेयनेनिसुवं **मल्ल-दण्डाधिनाथम्** ॥
आ-कम्मटद् श्री-मल्लन प्रधानननेनिप ॥
वृ ॥ अलरे विरोधि-सन्तमसमळिकरेयाटविकोद्ध-कैरवम् ।
सले पोडल्देय्दे सज्जन-विसं प्रविकासमनेय्दे रागमग्-।
गळिसिरे मित्र-चक्र-चयदोळ् बेळेयं नुत-विश्व-धात्रियम् ।
सललित-मूर्त्ति कीर्त्ति-निधि **सूर्य्य-चमूपति** सूर्य्यनन्ददिम् ॥
अन्तु पोगळ्ते-वडेदधिकारि **मल्लि-सेट्टियरुं** द्विज-वंश-कमळ-सूर्य्य-नप्प **सूर्य्य-देवनुं** यम-नियम-स्वाध्याय-ध्यान-धारण-मौनानुष्ठान-जप-समाधि-शील-सम्पन्नरप्प नागरखण्डदय्द्ग्रहारदशेष-महाजनङ्गळुं सकळ-साहित्य-विद्या - विलासिनी - विलास-मूर्त्तियेनिप **केरेयूर** यूरडेयं **शम्भुदेवनुं** स्वच्छाच्छ-गाङ्गाम्भ-सदृश-कीर्त्ति-वल्लभ-नेनिप **कच्छावियूरडेय बिट्टियरसनुं** वणञ्जु-धर्म्म-वार्द्धि-वर्द्धन-चन्द्र-लेखेयेनिप **त्रिभुवनमल्ल-सेट्टिकव्वेयुं** तदपत्यं शौर्य्य-निधानननप्प **शङ्कर-सेट्टि** सकळ-याचक-जन-मनोभिलषित - फळ-प्रदामर-कुज - सदृत्तनप्प **शंकर-सामन्तानन्दन-नन्दनं** भव्य - जन - बान्धवनप्प नाळ् - प्रभु सामन्ते - **मुद्दय्यनुं** रत्नत्रया-भरण-भूषितनप्प **वेगूर माळ गौडनुं** देव-द्विज-गुरु भक्तनप्प **कण्णलोगेय एरकाटि-गौडनुं** निखिळ-गुणाळंकृतनप्प **मळवल्लि-एरह-गौडनुं** विनेय-गुण-निधानननप्पब्बलूर **सोम-गौडनु**मिन्तिनिवरुं मुख्यवागि नागर-खण्डवेप्पत्तर समस्त प्रभु-गावुण्डुगळेकस्थरागिद्दुं **सक-वर्ष ११२५ सले रुधिरोद्गारि-संवत्सरदुत्तरायण - संक्रमण** - निमित्तवागि **वन्दणिकेय श्री - शान्ति**

नाथ-देव - रमिपेकाष्ट - विधार्च्चने - पूजा - विधानोचित-त्रयकं अल्लिय पात्र-पावुळक्कं खण्ड-स्फुटित-जीर्णोद्धारक्कं चातुर्व्वर्णदाहार-दानक्कमेन्दल्लिय तीर्त्थाचार्य्य **शुभचन्द्र-पण्डित-देवर** कालं कर्च्चि सर्व्वबाध-परिहारवागि तम्मनितरुं धारा-पूर्व्वकं माडि बिट्ट दति चेन्तेद्दे दण्डियइल्लियुं जावळियुं गङ्गळळियुं स्थळवृत्तियुं ऊरूरलु नन्दादीविगेगे नाल्कु-पणमं मुद्देय-सावन्तं चिक्क-मागुण्डिय बडगणोणियिं पडुवलु ५०० मरद अडके-दोटमुं इन्तिनितुमं बिट्टरु धर्म्मदिं प्रतिपाळिसुवन्तप्पवरु गङ्गेय तडियलु सहस्र-कविलेयं नवरत्न-भूपगं माडि सहस्र-ब्राह्मणरिगे दानं माडिद फल-वीधर्म्मक्कळिवनन्नयमं मनडोळ चिन्तिसिदनावोनातननितु-कविलेयुमननितु-ब्राह्मणरमं गाङ्गेय तडियोळळिड पाप ॥ (हमेशाके अन्तिम श्लोक) ।

[विख्यात रेच-चमूपति; उसके बाद यदुवल्लभराज्यभूषण, बान्धव-पुराधिप **कूडवे वोप्पने** शान्ति-जिन तीर्थ (बन्दलिके) की उन्नति की ।[1]

जिनशासन की प्रशंसा ।

कुन्तल-देश नव नन्दों, गुप्त-कुल मौर्य्य राजाओं; इसके बाद पराक्रमी रहो; इसके बाद चालुक्यों; तदनु कलचूरि-वंशके राजा बिज्जल द्वारा शासन किया गया । तत्पश्चात् इस देशपर राजा बल्लालने शासन किया ।

उसके वंशका अवतार (परम्परा) :—होय्सल राजाओंका उदय और बल्लाल तककी वंशावली ही वर्णित है जो पिछले कई शिलालेखोंमें आ चुकी है ।

पृथ्वी रूपी स्त्रीका बनवसे-नाड् चेहरा था, जिसमें नागर खण्ड तिलकके समान मालूम पड़ता था । इसके कुञ्जों, बगीचों और तालावों इत्यादिका वर्णन । नागरखण्डमें उत्तम बान्धव-नगर चमक रहा था । इसके आकर्षणका वर्णन । इसके शासक कदम्ब-वंशके थे; वे सोम-राजाके पुत्र बोध-देव थे । उनका

---

१. यह सब शासनके पूरे लिखे जानेके बाद जोड़ा गया मालूम पड़ता है ।

ब्रह्मभूपालक नामका लड़का था। कन्नडेय बोप-सेट्टिने उस बन्दिणिकेके शान्तिनाथ-देवके लिये एक मण्डप खड़ा किया और विधिपूर्वक यह उसे समर्पण कर दिया।

नागरखण्डमें, हरके मुखोंके समान, पाँच अग्रहार थे, जिनसे ब्राह्मणोंके वेद आदि विद्याओंके पढ़ने-पढ़ानेकी ध्वनि निकलती थी। वहाँके ब्राह्मणोंकी प्रशंसा। केरेयूर शम्भु-देवकी समस्त विद्याओंमें अद्वितीय निपुणता। सेट्टिकब्बेके पुत्र बनञ्जु-धर्म-निवासी संकर-सेट्टिकी; सामन्त-मुद्दकी, जिसके पिता शंकर, मां चक्कब्बे मित्र जिन, गुरु भानुकीर्त्ति-व्रतिपति थे, शासक बल्लाल, पत्नी लच्चाम्बिके, पुत्रियां चक्कब्बे और मल्लब्बे, पुत्र बल्लाल-देव था; कच्छवियूरके मालिक त्रिट्टियरसकी; वेगूरके प्रभु-माळ-गौडकी; कण्णसोगेके एरकाटि-गौडकी; मळवळ्ळिके एरह-गौडकी; तथा अब्लूरके सोम-गौडकी प्रशंसामें श्लोक।

मुनिचन्द्र-सिद्धान्त-देवके प्रिय शिष्य ललित कीर्त्ति-सिद्धान्ती थे। उनके पुत्र, काणूर-गण समुद्रके चन्द्रमा, शुभचन्द्र-पण्डित-देव थे। उन्होंने शान्तिनाथ-तीर्थ (बन्दलिके) का प्रबन्ध अपने हाथमें लिया।

राजा बल्लालका प्रसिद्ध मन्त्री मल्ल या कम्मट मल्ल-दण्डाधिनाथ था। उसने बन्दलिकेकी बहुत प्रेमके साथ रक्षा की थी। उसके पराक्रमकी प्रशंसा। उसका मंत्री सूर्य्य-चमूपति था।

नागरखण्ड सत्तरके इन सब मुख्य-मुख्य व्यक्तियोंने, प्रजाने और किसानोंने (उक्त मितिको) तीर्थके पुरोहित शुभचन्द्र-पण्डित-देवके पाद-प्रक्षालनपूर्वक (उक्त) दान दिया।]

[EC VII Shikarpur tl No 225]

४४९

कलहोली;—कन्नड़

[शक ११२७=१२०४ ई०]

लेख-परिचय

यह लेख कलहोलीके एक पुराने मन्दिर—जो कि अब एक लिङ्ग-मन्दिरके रूपमें, जैसा कि इस भागके सभी जैन मन्दिरोंका हुआ है, परिवर्त्तित है—के पाषाण-तलसे लिया हुआ है। कलहोली बेलगाँव जिलेके **गोकाक** तालुकामें है। इसका पुराना नाम **कलपोडे** है। हम देखते हैं कि रट्टोंकी राजधानी इस समय **वेणुग्राम,** आधुनिक **वेलगाँव** थी। सबसे पहले राजा **सेन**का वर्णन आया है, जो शि० ले० नं० १३० में द्वितीय क्रमपर वर्णित है। इन दोनोंके ऐक्यका कथन आगेके किसी भी अन्य आधुनिक शिलालेखमें नहीं दिया गया है, लेकिन कालोंकी तुलना इस निष्कर्ष पर पहुँचाती है। दूसरे, शि० ले० नं० १३० की ३८वीं पंक्तिका 'वृहद्दण्ड' [1]विशेषण इस शिलालेखकी चतुर्थ पंक्तिमें सेनके लिये दिये गये प्रथम विशेषणसे मिलता-जुलता है। इसमें सेनके बादसे तीसरी पीढ़ी तकका उल्लेख है। और अन्तमें कुछ दान आते हैं, जो शक ११२७ (ई० १२०५,६) में, कार्त्तवीर्य चतुर्थकी आज्ञासे **सिन्दल-कलपोडे**में बने हुए जैनमन्दिरकी ओरसे किये गये थे। यह गांव उन गांवोंमें से एक था जो **कुरुम्बेट्ट 'कम्पण'** के नामसे विख्यात थे। यह कुरुम्बेट्ट कुण्डी-तीन हजार जिलेमें शामिल था। लेखसे पता चलता है कि कार्तवीर्य चतुर्थको अपने शासनमें अपने छोटे भाई 'युवराज' **मल्लिकार्जुन**से सहायता मिलती थी। प्रसंगवश लेखमें एक यादव सरदारोंके कुटुम्बका भी उल्लेख आता है जो उस ...**हगरटगे** जिले पर शासन कर रहे थे। आजकल यह किस जिले

1. जिसके पास बड़ी भारी या शक्तिशालिनी सेना हो।

या स्थानका नाम है, इसका पता नहीं चलता। यादव कुटुम्बकी यों दी है:—

रेव्व, जिसका विवाह होलादेवी से हुआ था.
|
ब्रह्म ,, ,, चन्दलदेवी से ,, .
|
राजा प्रथम ,, ,, मैळलदेवी से ,, .
|
चन्दलदेवी, चन्द्रिके, या **चन्द्रिकादेवी**
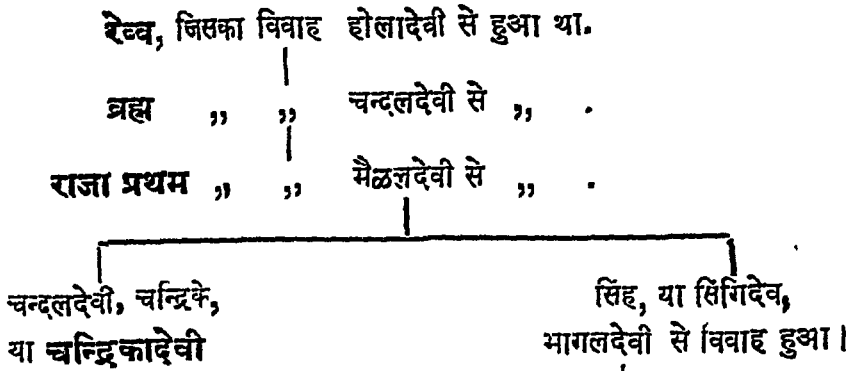
सिंह, या सिंगिदेव, भागलदेवी से विवाह हुआ।
|
राजा द्वि०, चन्दलदेवी, और लक्ष्मीदेवीसे विवाह.

राजा प्रथमकी पुत्री **चन्द्रिकादेवी** रट्ट सरदार लक्ष्मण या लक्ष्मीदेव प्रथमकी पत्नी हुई, तथा कार्त्तवीर्य चतुर्थ और मल्लिकार्जुनकी माता हुई। उल्लेखित दान-प्रदत्त जैनमन्दिरको राज द्वितीयने बनवाया था। मन्दिरके गुरू मूल कुन्दकुन्दाम्नायकी हनसोगे शाखाके थे; उनमेंसे तीनके नाम यहां दिये हैं:—मलधारी, उनके शिष्य सैद्धान्तिकनेमिचन्द्र, उनके शिष्य शुभचन्द्र थे।

ओं नमः सिद्धेभ्यः [।।] श्रीमत्परमगम्भीर स्याद्वादामोघलाञ्छनं [।] जीयात्रै (त्रै) लोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनं [।।] श्री जन्मभूमि वरसुरभूजं क्षीराम्बुराशि (शी) यन्ते गभीरं श्री जैन शासनं सले रजिसुतिर्क्कमळ राजपूजित-महिमं ।। विळसित विपुळामृत गोकुलदिंदं सकलसत्य संपददिं निर्म्मळवर्ण्ण दिन्दे विधु मण्डळदंतिरे कूण्डिमण्डळं कण्णोळिकं ।। अदनाव्वं सेनं साहस भीमसेनन सकृद्विद्या विळासेन ना शानरि प्रियवल्लभं प्रथुसभं तीव्रां (व्रां) शुतेजस्प्रभं नाना-दानि कीर्तगने कार्त्तवीर्यनखिलोर्व्वीचक्रमं चक्रयातरे दोर्द्दण्डदोळान्तनद्भुतगुणं श्रीरट्टनारायणं मेरु नभस्तळं जळधि मु (म) त्पतियं नति सन्महत्व (त्त्व) गम्भीरगुणक्के मचरिपुवेन्द मराद्रियनिक्के मेट्टिया नीरदमार्ग्गमं पुदिद्दु वारिधियं

मिगेदार्ण्ट कीर्तिया शारमणक्कें वंणिपुदु पंपिन लंपिने कार्त्तवीर्यन अर्जिततेजनिर्जित-यशं परितर्जितराष्ट्रकंटकं निर्जितदुर्जयारिनिवहं कमळाधिपनन्ते दानि नागार्ज्जुननन्ते रावणविदारण कारजरामनन्ते मिकर्ज्जुननन्ते रंजिपनिळेश शिखामणि मल्लिका-र्जुनं ॥ श्रीचक्रवर्त्तितनुजे कळाचतुरे विशाळलोळलोचने येनिसिर्दं चलदेवि सवीत्वलोचने येने कार्त्तवीर्यनवू पेसवंडदेळ् ॥ स्वस्ति समधिगत पंच महाशब्द महामण्डलेश्वरं सत्तनूर्पुरवराधि ईश्वरं त्रिवळीतूर्यनिर्घोषणं रट्टकुळभूषणं सिन्दूरलाञ्छनं सफळीकृतविद्वज्जनाभिवाञ्छनं वीरकथाकर्ण्णनजातरोमाञ्चं साहित्य-विद्याविरिञ्चं सुवर्ण्णगरुडध्वजं सहजमकरध्वजं संग्राम कौतूहळीकृतगदादण्ड कदनप्रचंडं सिन्धुराराति बन्धुरकबन्धनर्तनसूत्रधारं वैरिमण्डलिकगण्डतळप्रहारं परवधू-नंदनं विमतसंक्रन्दनं साहसोत्तुंगं समाराधितमहासिंग निडु मोदलादनेकनामा-वळिविराजितं श्री कार्त्तवीर्यदेवं निजानुज युवराज वीर मल्लिकार्ज्जुनदेवं वेरसु वेणुग्राम स्कन्धावारदोळ् सुखदिं साम्राज्यलक्ष्मीयननुभविसुत्तमिरे ॥ श्रीकवि बुध श्रीरत्नाकळितं जळधियंददिं यदुकुल लक्ष्मीकान्तं श्रितकमळानीकं इगरटगे नाडु जगदोळगेसेगुं ॥ आ नाडनाळ्वं यदुवंशं श्रित राजहंस मेसेदिक्कुं व्योमदन्त-लिपग्युदयं वेत्त कराचमृतनुरतेनं कीर्तिभाजं सनुमदिळेज्यं सुमनसपूज्यनमळ-स्वान्तं जितध्वान्तन्तेप्पिदनादं कमळाधिप प्रभुतेयिं श्रीरेच्चनुर्व्वीश्वरं ॥ आ रेच्च-प्रभुविंगमग्रज हीलादेविगं स्वान्वयोद्धारं धीरनुदारनुद्गुणसारं शुंभदंभोधिगम्भीरं वाग्वनिताल्लन स्थगितहारं सौख्यसंपादकाचारं ब्रह्मनवोलतक्र्यमहिमं ब्रह्माह्वगं पुट्टिदं ॥ जळधिगभीरस्मृतभूरुळय ब्रह्मगं नुचितवेलोपम चन्द्रलदेवीगमागेदं मण्डळ-नाथं राजनन्ददिं राजरसं । पुदिदिरे रागदिं सकळमण्डलमप्रतिमप्रसाद संपदमखिळा-शेयनेळये पुरिसि जैनमतामृतार्ण्णवं पडेदभिवृद्धियं तळेये तन्न पेसर्गनुरूप मागेयम्यु-दयमनेयिन्दं विमळवृत्त निराजित राजभूभुजं ॥ क्षितिपतिराजराजन मनोरमे मैळलदेवि ता यशस्वति नुतियोग्य भाग्यवति दानदयावति सत्कळासरस्वति य-मळेल रूपमळभावति जैनपदाम्बुजार्च्चनावति पुरुपुण्य पुत्रवति रंजिसुवळ् सुविशा-ळ शीळदिं ॥ कुलविस्तारक राज राज विभुगं श्रीरोहिणी मूर्ति मैळलभादेवी गमा-दनवर्पतिहित श्री चन्द्रिकादेवी निर्म्मळरुक्चन्द्रिकेयन्ते सिंहमहिपं साम्भम्बो-

लादर्म्महीतळपूज्यर् विबुधेज्यरुज्वळगुण श्रीकान्त रात्यन्तिकं ॥ अनुपमशौर्य्यशाळी यदुवंश शिरोमणि राजराजनन्दने विबुधाभिनंदने घटोद्रसुस्थित सर्प्पदर्प्प भुजने पतिंचिन्तरंचने जगंनुत जैनमतामृताभिवर्धनकरचारुचंद्रिके महासति चन्द्रिके धन्ये धात्रियोळ् ॥ श्रीपति लक्ष्मीदेवमहीवल्लभवल्लभे कार्त्तवीर्यं धात्रीपति **मल्लि-कार्जुन** महीश्वर मातृ महासतीत्व सीतोपमे जैनपूजनसुरेन्द्रवधूपमे रूपकेतु-कान्तोपमे रंजिपळ् नेगळ्द **चन्दळदेवि** समस्तधात्रियोळ् ।

स्फुरितानर्घ्यमणि-प्रणूतकटित प्रख्यातदानेन्द्र भूमि -।
रुहोर्व्वीतळधारितुंगशिखर श्रीमद्भुजादण्डमं-॥
दरदिं वैरि बळाब्धियं मथियिसुत्तुग्रजय श्री वधू -।
वरनादं यदुवंशभाळतिळकं सिंहावनीपाळकं ॥
सजळं गोण्डु समग्रसिंहमहिपं मेल्पातिसल्पा जिमं ।
सबळं वैरिबलं जवंगे कबळं वेताळबावक्के कोट्ट् ॥
पिरि श्रोणि बळारिगित्त वडिनं हार्द्दिदं इदंगे नेदूदुं ।
मृककेत्तिदवुत्तियेदोड हितर्म्मेब्योलि महाम्परे ॥

जनपति सिंगिदेवन मनःप्रिये **भागलदेवी** भाग्यमेदिनि गुणयूथनाथ मुनिदान विनोदिनि संश्रितार्त्तिभेदिनि विबुधप्रमोदिनि कळागममेदिनी नित्यसत्यवादिनि दुरितापनोदिनि पतिव्रते पूजितरूपे रंजिपळ् ॥ भोगपुरन्दर-प्रतिम सिंहामहीपतिगं जिनार्च्चनोद्योग सचेत्रचरित्रवति **भागलदेवी**गनाद नात्मजं रागसमागमप्रद सुमूर्त्ति जयंत नतिप्रसिद्ध जैनागमवार्द्धिवर्धनकळा-निधि राजरसं समंजसं ॥ जिनपूजाविबुधाधिपं विपुळतेजं प्राप्तधर्मप्रभावनयं पुण्य-जनोत्तमं गुणगणांभोरासि वैरीप्रभंजनन्र्व्वाधनदं महीश्वरनेनिप्पी पेपिनिं लोक-पाळनिळं राजिरसं जगद्वळयमं पाळिप्पु देनोप्पुदे । क्षिति सले कूत्तु कीर्तिपुदु मूर्ति मनोभवराजनं समर्च्चितजिनराजनं यदुकुळामृत वारिधिराजनं समुन्नतिगिरिराजनं गुणविराजितनूत्नसिंहभूपति सुतराजनं विषमवाजि सुशिक्षणवत्सराजनं ॥ पिंगदवृ...-शौर्यमसुहृन्नरलोक जगद्वळंगे राजंगे जगत्प्रमोदजनकाभ्युदयं **यदुवंश** संभवोत्तुंग-...तुंगे विनय प्रियवृत्तिनृपाळ सिंह जातंगे पराक्रमं पोसते वंणिसुवन्दु समस्त-

घात्रियोळ् ॥ द्यूतमृगव्य मांसगणिकापरदारखळप्रसंग चौर्याग्रुळमल्लमेषखगयुद्ध-निषिद्ध विनोदनोद्यतर्ब्भूतळ नाथरप्परदु माण्दु जिनस्तवनार्च्चनाम होल्यातमुनीन्द्र-दानरतप्परे राजनृपाळ निंनवोळ् ॥ सति चन्दळदेवि पतिव्रते लक्ष्मीदेवि-मेम्बरीर्वरू मवनीपति राजनृपन राणियरतिशयगुणयुतयरेनिसि नेगळ्दर्ज्जगदोळ् ॥ स्वस्ति समस्तप्रशस्ति सहित श्रीमन्महामण्डळेश्वरं कुपणपुरवराधीश्वरं यदुकु-ळांवरद्युमणि बुधजनचिन्तामणि निजभुजाविनिर्द्दळितरिपुनृपकंठकदळं नरलोक-जगद्दळं अनवरत जिनसवनसुरभि सलिलपवित्रीकृतोत्तमाङ्गं धर्मकथाप्रसङ्गं जिनसमयसुधार्णववसुधाकरं सम्यक्त्वरत्नाकरनेनिसि नेगल्द क्षत्रियमस्तकाभर-णराजनृपं विभुसिंहस्ननरत्नं त्रयमूर्ति निर्म्मळिन धर्म्ममेनुत्तदनोल्दु पेळ्ववो-ल् धात्रिगे मिक्क कल्योळेयोळेत्तिसिदं जिनशासतिगेहमं नेत्रविचित्रमं महिते (तिं) रीट मनप्रतिकूटमं ॥ अन्तनन्तसुख श्रीकान्त (तं) शान्तिनाथ समुत्तुंग भूत्य निधानमं कनककळश मकरतोरण मानस्तंभविराजमाननं राजरसं सिद्ध कल्योळेयल्लि माडिसि तन्न गुरुगळुं जगद्गुरुगळुवेनिसिद शुभचन्द्रभट्टारक-देवर्गे कोट्टनवर गुरुकुळक्रममेंतेने ॥ जयनिळय कुण्डकुन्दान्वय विश्रुत मूलसंघदेशि पूर्णोदय पुस्तक गच्छदोळतिशयमेने हनसोगेयेम्ब वळि ऋगेगोळिकुं । गुरुकुळतिळक-प्पविन चरितर्ग्गुणभरितरल्लि नेगल्दर्व्वीजितस्मर मलधारि मुनीन्द्रर्च्चरणाम्बुजनत-नरेन्द्रपगततन्द्रर् ॥ पदनखसंकुळं विपमबाणविपाहिमहाविषापहारद मणि नाम-दक्करमे मोहपट्टग्रहभेदिमंत्रमंगद भटभाजमंजवरुबाहरणौपधमेन्दोडेननेम्बुदो मळ-धारि मुनिपोत्तम प्रभावतपःप्रभावमं ॥ शान्तरसावतार मळधारिमुनीश्वरराग्रशिष्य सैद्धान्तिक नेमिचन्द्रगुरुधर्म्मरथ श्रुतवार्द्धि नेमिचन्द्रं तममं निवारिप कळागुणभद्र-नमानुपामृतस्वान्त समन्तभद्रनेने वंणिसरारकळंकमृत्तनं । आ सैद्धान्तिक नेमिचन्द्र-यतिवर्याचार्य्यं शिष्यर्गुणावास श्रीशुभचन्द्रभासुर यशोभट्टारक व्वीश्वाधात्रि संपू-जित शीलधारकरुदग्रानंगसंहारकर् श्रीसद्दर्शन बोधमृत्त(धामृत)पद्वीविस्तार निस्तार-कर ॥ शुभचन्द्रं स्वगुणोल्लसत्कुवळयं श्रीचन्द्रिकाशुद्धवृत्तिभवप्रभावर्दि दिगम्बरश्रीवृद्धियं मण्डळप्रभुसंपूजितपादनुज्वळ गुणाढ्यं शान्तरूपं कळाविभवात्युंनतभृत्तनभ्युदययुक्तं माळ्पदेनोप्पदे ॥ मारमदापहारिपरमोग्रतपश्शुभचन्द्रदेव भट्टारकशिष्यरी ललित-

कीर्ति समुन्नतनामधेय भट्टारकरिन्दु सल्ललित कीर्तिगळन्वित शान्तमार्तिगळ् सार-चतुष्टयार्थत्रयवेदिगळुत्तम सत्यवादिगळ् ॥ स्वस्ति समस्त गुण संपन्नरुं भव्यप्रसन्नरुं **चन्द्लदेवि**वन्दित पदारविन्दरुं निजात्मभावनाभिसपण्ड(द)रुं श्रीराजनृपाळ सुप्रतिष्ठ **शान्तिनाथ**देवर वसदियाचार्य्यरुं मण्डळाचार्य्यरुमप्प शुभचन्द्र भट्टारकदेवर्गे श्री-**कार्त्तवीर्य्य** देवं आ शान्तिनाथदेवरंगभोगक्कं रंगभोगक्कमा वसदिय खण्डस्फुटित जीर्णोद्धारणक्कमल्लिप्पं मुनिजनंगळाहाराभयभैषज्यशास्त्रदानकं **शकवर्ष ११२७ नेय रक्ताक्षिसंवत्सरद** पौष्य शुद्ध बिदिगे शनिवारदन्दुत्तरायणसंक्रमणदल्लि कूण्डि-मूरुसासिरद बळिय कुलंवेट्टगंपणदोळगण सिंदनकल्पोळेयल्लिय कळगडियर सिन्द-गाऊण्डं मुख्यवागि हंनीर्व्वं गाऊण्डुगळ्लेये इन्नेरडु तप्पडिय कुचुम्मेह गोलिंदेर-डु सहस्र कंब केय्यं धारापूर्वकं सर्व्वसमस्यवागि कोट्टन्त केय्य सीमे [।] ऊरिं बडणल् कंकणनूर् हेद्दारियिं मूडलविलहळ्ळद मुरुविनल्लि नैरुत्य कोणल्नेट्ट कल्लल्लिं बडगमुखं त्रिळियत्राबियिं मूडलागि पडुवणसीमे नडियल्कें भोरडियल्लि वायव्यद कोणल्नेट्ट कल्लल्लिं मूडमुखं बडगण सीमे नडियलीशान्यद कोणल्नेट्ट कल्लल्लि [illegible]मुखं पंचवसदिय मान्यदिं पडुवळागि मूडणसीमे मडियल् नविलहल्लदल्लि आग्नेयको-णल्नेट्ट कल्लल्लिं पडुमुखं तेंकणसीमे नविलहळ्ळं [।] आ वसदियिं संमन्धद मनेय निवेशनविंमोळनुं गेणु [।] बाचेयविडिय राजहस्तदला वसदियिं बडगळ गजवीथियिं मूडल् बडुवणे क्केय हस्तं नाल्वत्तु सिरिवागिल कल्लिं मूडळ पंचवसदिय केरियल्लिगे बडगणेक्केय हस्तविपत्तारु आ केरियिं पडुवण भागं त्रिडिदु मूडणेक्केय हस्त नाल्वत्तु तेंकणेक्केय हस्त ऐवत्तेरडा मान्य दोळगणंगडि नल्कु गाणवोन्दा वसदिय वणवेय निवेशनवप्पुदु [।] ऊरिं पडुवळ् हूदोंडद कंबं मूवत्तु [॥] मत्तमा ऊर सन्तेयं माडल् वेडिचे ळगले मुख्यवागि नल्कुंपट्टणद सेट्टियरुं महानाडागि नेरेदिर्द्दल्लि आ शान्तिनाथदेवर नित्याभिषेकक्कमष्टविधार्च्चनेगं सर्व्वत्राधापरिहारवागि बिट्ट एत्तु कत्ते कोणं मोदळादवरवत्तु ६० ॥ मत्तमेळुवरे हंनोन्दुवरेय समस्त मुंमुरिदण्डं मुख्यवागि नाडुगळ् बिट्टायद क्रममेन्तेन्दोडे [।] सकळधान्यमाडदु वन्दडं हेरैंगोमनं [।] भंडिगे बळ्ळवेरडु [।] हसरकडके ओंदु [।] हेरैगेले नूरु [।] होत्तळकैय्यत्तु हाडक्कें सोल्लिगे एण्णे उलेय होरे मारितक्के

ओन्दु कट्टोले[।] किरकुळमेनु नारिदं मट्टुगायं हिडिवरि [।] कप्पने मडिके दन्दु॥

श्रीसन्नादत मूर्ति तीर्थमहिमाविस्तारि यात्रीस्फुरत् ।
- तेजश्चक्रधरं दगंनुवयश तन्नन्दद्दिदेन्दु र -॥
रादिनी दिन शान्तिनाथ नवनीनाथप्रणुतोदयं ।
रावद्नापतिगीगे वेळ्प दरवं चन्द्रार्कतारांबरं ॥

ललितपदार्थालंकृतिगळिनोसवं रसंगळिदे तुषपेळ् पुळकावळि वस्यमोगेये कविकुलतिलकं शासनमनोल्दु पेळ्दं पार्श्वं ॥

बहुभिर्व्वसुधा दत्ता राजभिस्सगरादिभिः [।] यस्य यस्य यदा भूमिस्त (मित्त) स्य तस्य तदा फलन् ॥ गण्यन्ते पांसवो भूमेर्गण्यन्ते वृष्टिबिन्दवः [।] न गं (ग) ण्यते विधात्रापि धर्म्मसंरक्षणे फलं ॥ स्वदत्तां परदत्तां वा यो हरेत वसुन्धरां [।] षष्टिर्व्वर्ष सहस्राणि विष्टायां जायते कृमिः ॥ सामान्योयं धर्मसेतुर्नृपाणां काले काले पालनीयो भवद्भिः । सर्व्वा (र्व्वा) नेतान्भाविनः पार्थिवेन्द्रान्भूयो भूयो याचते रामचन्द्रः ॥ ... ग्राः परमहीपतिवंशजा वा पापादपेतमनसा भुवि भूमिपालाः । ये पालयन्ति मम धर्ममिमं समग्रं तेभ्यो मया विरचितांजलिरेष मूर्ध्नि । मंगळमहा श्री श्री [॥] अर्हते नमः ।

[JB, X, p. 173-175, a.; p. 220-228, t.;
p. 229-239, tr. (ins. No. 5).]

४५०

पुरले;—कन्नड़—भग्न ।

वर्ष रक्ताक्षि [१२०४ ई० (लू. राइस) ।]

[वीर सोमेश्वर मन्दिरमें, लिङ्गके आसन-पाषाणपर]

रक्ताक्षि-संवत्सरद भाद्रपद-शुद्ध १२ आ स्वस्ति श्री वीर-बल्लाळ-देवर [......] समुद्रद नेलेवीडिनलु सुखदि राज्यं गेय्युत्तिरे श्रीमतु-महा ...प्रधान हिरिय-हेडेय-असवर मारय्यङ्गळ सन्निधानदलु......दण्णायक रिगु.........हेम-गावुण्ड हडवळकाळय्य गङ्ग-गावुण्ड कम्प-गावुण्ड गायि-गावुण्ड माङ्क-गावुण्ड लक्क-गावुण्डुगळु अयिचय्य होन्नय्य-मुख्यवाद समस्त-प्रभु-गावुण्डुगळ

तम्मगागि ⋯⋯कुन्तलापुरदल्लि सदाचारय्यरप्प **नेमिचन्द्र-भट्टारक-देवरिगे** नाळु-प्रभु⋯⋯⋯**सावन्त-मारय्यनु** विचारिसि⋯⋯काळ-गावुण्ड⋯⋯ मयण पेम्म⋯⋯दियरं कण्डु तव⋯⋯⋯वरद शीलाशासनवं तोडदु बलात्कार तम्म भक्तियागे सलुत्त⋯⋯⋯वेण्णवळिळ-यल्लि⋯⋯⋯कोण्डु नाळ्-प्रभुगळु अधिकारि सावन्त-मारय्यनुं मनद्धारेयागि **नेमिचन्द्र-भट्टारकदेवर** कालं तोळदु धारा-पूर्व्वकत्रागि⋯⋯शिला-शासनवं वरेदु वेनवसेय दोडिकेय⋯(महेशाके अन्तिम वाक्यावयव तथा श्लोक)

[(उक्त मितिको) जिस समय वीर-बल्लाल-देव दोरसमुद्रके निवासस्थानमें था;—प्रधान मंत्री हिरिय-हेडेय-असवरमारय्यकी उपस्थितिमें, तमाम सरदार और किसानोंने (बहुत-सोंके नाम दिये हैं), कुन्तलापुरके आचार्य नेमिचन्द्र-भट्टारक-देवके लिये⋯⋯⋯;—सावन्त मारय्यने जांच-पड़ताल करके, जबर्दस्ती, उस लिखे हुए शिला-शासनको मिटवा दिया और अधिकारी सावन्त-मारय्यके साथ मिलकर, नाळ्-प्रभुओंने, नेमिचन्द्र-भट्टारक-देवके पाद-प्रक्षालन-पूर्वक⋯ एक शिला-शासन लिखवा करके दिया ।]

[E C, VII, Shimoga tl., No 65.]

४५१

गोग्ग;—कन्नड़

[बिना काल निर्देशका, पर लगभग १२०५ ई० का]

[गोग्गमें, वीरभद्र मन्दिरके दरवाजेके साँचेके दोनों ओर]

(बाईं ओर)

माडिसिदं जिनालयमवू⋯⋯एल्लियुमिल्ल ऊरेनल् ।
नाडे विराजिसल् **वेळगवत्तिय**-नाडोळनून-भक्तियिम् ।
कूडे विभूतियष्ट-विधार्च्चनेयेम्बिऊ कुन्ददन्तु कोण्ड- ।
आडुतविप्पेनन्दुवेन**लोचण**नन्तिरे भव्यनावव (न) म् ॥
ऊरोळ् तप्पदे बसदियन् ।
ओरन्तिरे माडि **वेळगवत्तिय**-नाडम् ।

वारिणिगे नेगळ्द कोपणक् ।
ओरगे माडिदनुदार-र्नधियीचरस्तन् ॥

(दायीं ओर)

एरेयन देय्वनाऊद्दु तनय देय्वमदाऊदातनोळ् ।
नेरद गुणोन्नतिकेयद्दु तन्नय मिक्क-गुणोन्नतिके कण् ।
देरदडदात्र धर्म्मनधिनाथनोळन्तदे तन्न धर्म्मवेन्द् ।
एसकदे मन्त्रियीचणन वल्लभे सोवल-देवि माविनळ् ॥
नगेनगे मोगनम्बुचमम् ।
मिगे मृग-वीक्षणमनीक्षणं मिगे मृगवरनन् ।
तेगळे मोख-कान्ति चेल्वन् ।
त्रि-गुणिसिदुदु निन्न रूपु सोवल-देवि ॥

[ईचणने वेळगवत्ति-नाड्में ऐसा एक जिनालय बनवाया जैसा उस प्रदेशमें कहीं नहीं था। और इस तरह वेलगवत्ति-नाड्को कोपणके समान बना दिया। मंत्री ईचणकी पत्नी सोवल-देवीकी प्रशंसा।]

[EC, VII, Shikarpur tl., No 317]

४५२

बक्कलगेरे—संस्कृत तथा कन्नड़

[शक ११२७=१२०५ ई०]

[बक्कलगेरे (यगटे परगना) में, बाण-रङ्गनाथ मन्दिरके बाहरी आँगनके एक पाषाण पर]

नमः सिद्धेभ्यः ॥ भद्रमस्तु जिन-शासनाय ।
श्रीमत्-परमगंभीर स्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥

—स्वस्ति श्री-पृथ्वी-वल्लभं महाराजाधिराज परमेश्वर परम-भट्टारकं चालुक्याभरणं श्रीमद्-भू-वल्लभ पेर्म्माडि-रायं कल्याणद नेले-वीडिनोळ् सप्तार्द्ध-लक्ख-भूमियं दुष्ट-निग्रह-शिष्ट-प्रतिपालनं गेय्दु सुख-संकथा-विनोददिं राज्यं गेय्ये। स्वस्ति सम-

धिगत-पञ्च-महा-शब्द महा-मण्डलेश्वरं **द्वारावतीपुरवरा**धीश्वरं **यादव-कुला**-म्बर-द्युमणि सम्यक्त्व-चूडामणि त्रिभुवन-मल्ल तळकाडु-कोङ्गु-नङ्गलि-हानुङ्गल्-उच्चंगि-बनवसे- हलसिगे-हुलिगेरे- बेळुवल-गोण्ड भुज-बल- वीर-गंग- विष्णुवर्द्धन-होय्सळ-देवरु गंगपाडि-नोणम्बवाडि-बेळुवल-नाड दुष्ट-निग्रह-शिष्ट-प्रतिपालनं गेय्दु हानुङ्गल नेले-वीडिनोळ् सुख-संकथा-विनोददिं राज्यं गेय्युत्तमिरे । अन्तातनग्र-तनूज **नरसिंह**-भूपालकम् ।

वृत्त ॥ देवो देव-गिरीन्द्र-रुद्र-शिखर-व्याकीर्ण्ण-कीर्त्ति-ध्वजो ।

देवश्चण्डधर-प्रताप-महिमावन्यां च लङ्केश्वरः ।

देवो भव्य-विदग्ध-मुग्ध-सुदती-प्रख्यात-मीनध्वजो ।

देवश्श्री-**नरसिंह**-भूपतिरसौ जीयात् स्थिरं भूतले ॥

सरधि-व्यावेष्टितोर्व्वी-पति एनिसि सुखं बाळ्गे चन्द्रार्क्क-तारं ।

सुरराजं लीलेयिन्दं **यदु-कुळ**-तिळकं [वीर-] सङ्ग्राम-रामं ।

पिरिदुं विक्रान्तदिन्दं निज-भुज-विजयं गङ्ग-भूमण्डलेशं ।

नरसिंहं भूमि-पालं स्थिर-त...लक्ष्मी-वल्लभं होय्सणेशं ॥

आतन तनेयन तोल्-बलद पेम्मेयेन्तेन्दोडे ।

जय-जाया-प्रिय-वल्लभं सकळ-भूभृन्-मस्तक-न्यस्त-पा- ।

द-युगं दोर्व्वळ-दृप्तनप्रतिमनत्योदार्यनत्यूर्जितो- ।

दयनत्यद्भुत-विक्रमं [रिपु-बळ-प्रध्वंस निश्शेष-निर्- ।

दय निस्त्रिंश-निरर्गळ] नियमदिं **बल्लाळ**-भूपालकम् ॥

काळगदोळ् निशात-करवाळ-हतक्के हत-प्रभर् मही- ।

पाळकरोडि पोक्कु गहानान्तरदोळ् क्षुधेयळुवे वन्य -भू- ।

जाळदोळिर्द्द हङ्गलने हण्णेनलम्मदे कायि कायि **ब**-।

ल्लाळ-नृपाळ येम्बिदने पम्बलसिद्दुदु वैरि-संकुळम् ॥

स्वस्ति श्री-पृथ्वी-वल्लभं महाराजाधिराज परमेश्वरं परम-भट्टारकं **याद**व-कुलाम्बर-द्युमणि सम्यक्त्व-चूडामणि मलेराज-राज मलेपरोळ् गण्ड कदन-प्रचण्ड शूरनेकाङ्ग-

वीर निश्शङ्क-मल्ल प्रताप-चक्रवर्त्ति होय्सल-वीर-**बल्लाल-देवरु** गङ्गवाडि-नोण-म्बवाडि-बनवासि-हानुङ्गल्लु यरदरु-नूरर-राजधानियं दुष्ट-निग्रह-शिष्ट-प्रतिपालनं गेय्दु लोक्कु-गुण्डिय नेले-वीडिं सुख-संकथा-विनोददिं राज्यं गेय्युत्तिरे । तत्पादपद्मोपजीवि । स्वस्ति श्रीमन्महा-सामन्ताधिपति महा सामन्त-घसण **निगुण्डद चट्टय्य-नायकर** प्रतापं एन्तेन्दोडें ।

श्रियं श्री-गोरियं पेररदोळेडदोळप्पिर्द्दुवर्व्विश्व-लोक- ।
ज्यायं मालारिंथ-माला-घररमृत-पयोराशि-कैलाश-नित्य- ।
श्रेयोर्द्धर्द्धि-त्रि-यद्धं नेगर्द्दं हरि-हरक्कुं सामन्त-चट्टं -
मारिट्टम्बमं सुराचलमनोक्कैंबिट्टु दिक्किट्ट तत्-।
पारावारमनन्तुविन्तुवळेदुम्मुन्तूगियुं [पोगियुं] ।
पारं-गण्डरुण्डु पोलिपडे पेन्पि विण्पिनिं गुण्पिनिन्-।
दारं पोलिपरे वोलन्य-प्रितना-संघट्टनं चट्टनम् ॥
बन्देरेदङ्गे कोट्टु सले. वैरिगे वेङ्कडनेन्दु वेम्बिदा-।
वन्दमो तन्नोळिल्ला भयवा-भव्यमं पगेगीवनुन्ते चि-।
त्रं दलेनुतु मत्तं पोगळ्गुं वसुधा-तळवर्क्करिन्दे निर्-।
गुन्दद चट्टनं रिपु-घरट्टननिन्दु-ललाट-पट्टनम् ॥

आतनन्वयमेन्तेन्दोडे ।

दोरेवेत्त**आहवमल्ल-देव**-महिपं **कल्याण**दोळ् नोडे मच्-।
चरदिं **धर्म्म**-तनूजनेकतुळदिं दोड्डुङ्कदोळ् कादे निर्-।
भरदिं गेणुदंयाल्के पोय्दु तळदिं बायिं भूगिल्लेन्दु ने-।
त्तरुगल् कोन्दु तल-प्रहारि-वेसरं कैकोण्डना-**गण्डमम्** ॥

क ॥ तडेदिरदाहवमल्लं । कुडे नेगर्द तल-प्रहारियुं दोड्डङ्कम्-।
मुडिवन्नुवेने पडेदं मि-। कडकिल-वेसरं प्रचण्डरार् गण्डमनिम् ।
आ-गण्डम-वीर-मनो-। रागाविळे मुर्द्दियकनवरिव्व्रर्गम् ।
चागकं चलकं मिक्क् । आगरवेने तनयनादनाह**वमल्लम्** ॥

आ-नेगर्द्दाह्वमल्लन । मानिनि होन्नव्वेयवर्गे सुतनहित-मरुत्-।
सूनु-ह्विरिदीव दिनकर-। सूनुवेनळ् मिक्क **माच**नग्र-तनूजम् ।।
पेर्म्मेय **सितगर-गण्ड**-वे-सर्म्मिगे **विष्णु**-नृपनरियै कटकदोळेन्-।
दोर्म्मोदले **देवि-शेट्टि**य । वर्म्मननम्मेन्दु कोन्दु कूरने माचम् ।।
आ-सितगर-गण्डङ्गं । श्री-सतियम्मिगुव **माळियक्क**ङ्गं सन्-
त्रासित-रिपु-बळनधिक-वि-। ळासं सामन्त-**मल्ल**नाथं तनयं ।।
पुट्टलोडं चातुर्यं । कट्टायं शौर्य-त्राप्पुमोल्पुं सोन्नगुम् ।
नेट्टनिविन्तिवुतन्नोडव् । इट्टिदुवेने नेगर्द मल्लन सुहृत्-सेल्लं ।

आतन पराक्रमवेन्तेन्दोडे ।

प्रकटं दोर्व्वळदुर्व्विनिं सु-भटनासामन्त-मल्लं रणा-।
नकमुण्मल्किदिरागि तागिदरि-सेना-चक्रमं सीळ् पोय्-।
ये कबन्धं कुणिदाडे वीरर सिरं बीरेळे मारान्त-रा-।
वुकनं कोन्देरडानेयं ।पडिदना-**चङ्गळ्व**नुगराजियोळ् ।।
तोळ्वलद वलदे मल्लम् । वळुवळ वळेदोगेद कोपदिन्दं हयमं ।।
तळुविल्लदे पायिसि चं-। गाळ्वन मद-करियनिरिदु कोडेयं कोण्डम् ।।
आ-मल्लेय-सामन्तन । सीमन्तिनि **सोमियक्क**नवर्गे कोन्ति-।
प्रेमात्मवरेनलिवरोळ् । सामन्ता**दित्य**नादनग्र-तनूजम् ।।

स्वस्ति श्रीमन्हा-प्रधानं सर्व्वाधिकारि महा-पसाय्तं भेरुण्डन-मोत्तदिष्टायकं **अमितय्य-दण्णायकर** प्रतापमेन्तेन्दोडे ।

मनेयोळ् मन्त्रि-प्रधामं मोनेयोळदटना-कोपडोळ् निर्व्विकारं ।
घनदोळ् विश्वाशि देव्नोळ् सुचि निज- पदडोळ् भक्तनेन्दोल्दु **बल्ला**-।
ळ-नृपाळम् यादव-श्री-पति कुडे पडेदं दण्डनाथत्वमं ता-।
नेने दण्डाधीसरोळ् मिक्क मितनोळेणेयर् सामि-सम्पत्तियिन्दं ॥
गुणि गम्भीरं प्रसिद्धं पति-हितनदटं धार्म्मिकं गोत्र-चिन्ता-।
मणि धीरं दानि दर्त्तं पट्ठ शुभ-मति पुण्याधिकं मंत्रि-चूड़ा-।

अमर्दल्लिये नेलसिदनोसे- । दु महेश्वरनेन्दोडमृत-दण्डेश्वरनोल्द् ।
अमृत-समुद्रदोळेत्तिसिद् । अमृतेश्वर-निळयवगलिदिनेनुन् [न] तमो ॥

अवर गुरु-कुळान्वयमेन्तेन्दोडे ।

इदे हंसी-वृन्दमीण्टळ् वगेदपुदु चकोरी-चयं चञ्चुविन्दम् ।
कर्दुकल् सार्द्दप्पुदीसम्मुडियोळिरिसलेन्दिर्द्दपं सेज्जेगेरळ् ।
पडेदप्पं कृष्णनेम्बन्तेसेदु बिस-लसत्-कन्दली-कण्ड-कान्तम् ।
पुडिदश्री-मेघचन्द्र-व्रती-तिळक-बगद्वर्त्ति-कीर्ति-प्रकाशम् ॥

अवर शिष्यरु **प्रभाचन्द्र-सिद्धन्त-देवरु** ।

जिन-धर्म्मोद्यान-षण्ड-प्रथित-पृथु-लसत्-तोषमं वाग्वधूटी ।
स्तन-हारं भव्य-पङ्केरुह-दिवसकरं काम-मत्तेभ-सिंहम् ।
विनुतं सिद्धान्त-चन्द्रेश्वरनेने पेसर्व्वेत्तं **प्रभाचन्द्र**-योगी- ।
न्द्रन पुत्रं सच्चरित्रं मुनि-पति-**जिनचन्द्रं** गुणाम्भोधि-चन्द्रम् ॥

अवर शिष्यरु **नयकीर्त्ति-पण्डित-देवरु** । अवर पुत्र **चट्टिय नेमय केरेयण** । अन्ता-श्रीमन्महा-प्रधानं **अमितय्य-दण्णायकरुं** कल्लय्य-मसणय्य बसवय्य-दण्णायकरु तम्मदि··र **वोक्कलुगेरेयलु येक्कोटि-जिनाल**यव प्रतिष्ठेयं माडिसि तमगभ्युदय-निमित्तवागियुं धर्म्म-प्रतिष्ठेयं माडिसि बाडुवेयनायक आदेय-नायक······य-नायक चट्टेय-नायकनुं समस्त-प्रजे-गावुण्डगळुविद्दुं **शान्तिनाथ-देवरष्ट**-विधार्च्चनेगं ऋषियराहार-दानक्कवागि बिट्ट दत्तियेन्तेन्दडे (आगेकी ६ पंक्तियोंमें धानकी चर्चा है) विन्तिनितुमं **शक-वर्ष ११२७ नेय-दुन्दुभि-संवत्सरद उत्तरायण-संक्रमणदन्दु** श्रीमन्महा-प्रधान-अमितय्य-दण्णायक मरिमल्लेय-नायक चेट्टेय-नायकनुं **नयकीर्त्ति-पण्डितर** कालं कर्च्चि धारा-पू········(आगेकी पांच पंक्तियोंमें इमेशाके अन्तिम श्लोक हैं)

[प्रारम्भिक भागमें नारसिंह-देव तकके होयसळ राजाओंका वर्णन है । उसका पुत्र वल्लाळ था ।

जिस समय (अपने पदों सहित) होय्सळ वीर-बल्लाळ-देव गङ्गवाडि, नोळम्बवाडि, बनवासि, हानुङ्गल्, और दो छः सौ की राजधानीमें दुष्ट-निग्रह और शिष्ट-प्रतिपालन करता हुआ अपने लोक्कुगुण्डीके निवास स्थानमें था :—

उसका पद्मोपजीवी निडुगुण्डका चट्ट-नायक था, (उसकी प्रशंसायें)। उसकी परम्परा निम्न भाँति थीः—बम्मका पुत्र गन्डम था। बम्मको एक नाम और मिला था और वह था 'बलप्रहारी'। कारण यह था कि उसने आहवमल्ल-देवको कल्याणमें ऐसा हाथका प्रहार किया कि जिससे उसके गालोंसे खून बह निकला; अब एक उसका नाम 'बल-प्रहारी' पड़ गया। उसे आहवमल्लसे 'दोड्डुङ्क-बल्ल्वर्' का भी नाम मिला। गन्डम और मुद्दियक्कसे आहवमल्ल नामका पुत्र उत्पन्न हुआ था। उसकी पत्नीका नाम होवब्बे था, और उनका पुत्र माच था, जिसको राजा विष्णुने रवि-सेट्टिके पुत्र बम्मको पट्टावमें मारनेसे 'गण्ड-गण्ड' का नाम दिया। उससे और मालियक्कसे मल्ल उत्पन्न हुआ। उसने रेचुकको मारा और चङ्गाल्वकी लड़ाईमें उसके दो हाथियोंको पकड़ लिया; और उसके घोड़े पर भी प्रहार किया, चङ्गाल्वके कल्पच हाथीको भाला मारा और उसका छत्र ले लिया। उसकी पत्नी सोमियक्क थी, और उनका ज्येष्ठ पुत्र चाटिस्व था।

महाप्रधान (मंत्री), सर्वाधिकारी अमितय्य दण्डनायक था (उसकी प्रशंसा)। चौण्ड-सेट्टि और चक्कव्वेसे हिरियन-सेट्टि उत्पन्न हुआ था। उसकी पत्नी सुमाव्वे से अमृत-दण्डनाथ, कट्टय्य, मल्लय्य और कत्तय्य, ये चार पुत्र उत्पन्न हुये। अपने निवास स्थान लोक्कुगुण्डीमें अमृतदण्डाधीशने एक मन्दिर, एक बड़ा तालाब बनवाया, एक सत्र स्थापित किया एक अग्रहार बनवाया तथा एक प्याऊ बिठाई।

उसके गुरुओंकी परम्पराः—मेघचन्द्र-प्रभाचन्द्र-सिद्धान्त-देव। उनका पुत्र जिनचन्द्र-नयकीर्ति-पण्डित-देव, इनका पुत्र चट्टि-नेमय केरेयप। अमितय्य

दण्णायकने, अपने उन चारों भाइयोंके साथ, ओक्कुगेरेमें येक्कोटि-जिनालयकी स्थापना की और (उक्त मितिको) नयकीर्त्ति-पण्डितके पाद-प्रक्षालन-पूर्वक दान दिया ।]

[EC, VI, Kadur tl., No. 36.]

४५२

वलगाम्वे;—कन्नड़ ।

[शक ११२७ = १२०५ ई०]

सारांश

यह शासन हळ्ळ कन्नड़[1] भाषामें वेलगाँव (वलगाम्वे) में एक पेगोडा (वस्ति) की दीवालोंपर उत्कीर्ण है । काल शक ११२७ (१२०६ ई०) ।

यह एक जैन वस्तिके लिए एक जैन राजाके द्वारा दिया गया एक [illegible] दान है, जिसने कर्णाटकमें वेगिग्राम (वेल्गाम = वलगाम्वे) पर शासन किया था, (इस वंशका एक राजा **सेन राजा** है, जो भारतवर्षमें प्रसिद्ध है ।)

इस शासनमें पाँच राजाओंका वर्णन आया है, जो शक १०२७ से शक ११२७ तकके एक राजवंशका वर्णन करता है । वे पांच राजा ये **हैं:—१. सेन** राजा; २. उसका पुत्र **कार्त्तवीर्य**; ३. उसका पुत्र **लक्ष्मीभूपति**; ४ और ५. उसके पुत्र **कलि-कार्त्तवीर्य** और **मल्लिकार्जुन** । यह दान शक सं० ११२७, रक्ताक्षि संवत्सर, द्वितीय पौष सुद, बुधवार, मकरसंक्रान्तिके दिन किया गया था । यह दान कुल-गुरु चन्द्रदेव भटको जलधारापूर्व्वक दिया गया था । इसके वाद आठ दिशाओंकी सीमा आती है ।

---

१. यह एक पुरानी कन्नड़ भाषा है; लिपि और भाषा दोनों ही आधुनिक कन्नड़ लिपि और भाषा से बहुत कुछ भिन्न हैं, और थोड़े ही लोग इसको पढ़ सकते हैं ।

राय:—यह उल्लिखित कुल वही प्रसिद्ध जैन वंश माना जाता है, जिसने कर्नाटकमें, तुलनापुरके पास, कल्याणीमें राज्य किया था, और जिसके अस्तित्वके सूचक मैकेंजी (Makenzie) के संग्रहके अनेक शिलालेख हैं। इस लेखमें शिवबुद्ध राजाको पूजनेका भाव प्रगट किया गया है, जो जैनधर्मका रक्षक एवं पोषक था।]

[JRAS, 1835, p. 387-388, No 7, a.; 1839, p. 174-176, No 6 (sic), tr.]

४५४

बेलगाँव;—कन्नड़।

[शक ११२७ = १२०५ ई०]

[संभवतः मूल लेख पुरानी कन्नड़ लिपिमें है]

यह लेख दो लेखोंका समाहार (इकट्ठा) है। पहला लेख राजा सेनके वर्णनसे शुरू होता है, यह राष्ट्रकूट वंशी राजाओंकी सूचीमें उसी नामका धारी द्वितीय राजा है। यह वंशावली लेखमें कार्त्तवीर्य और मल्लिकार्जुन इन दोनों भाइयों तक जाती है। इसके बाद किसी एक राजा बीच और उसके पुत्रोंका वर्णन आता है। तत्पश्चात् लेखमें रक्ताक्षि संवत्सर शक वर्ष ११२७ (१२०५–६ ई०), जब सूर्य उत्तरायण हो रहा था पुष्य सुदी २ को शुभचन्द्र-भट्टारकदेवको राजा बीचके द्वारा बनाये गये रट्टोंके जैन मन्दिरके लिये दान करनेका उल्लेख आता है। इस समय वेणुग्राम (बेलगाँव) राजधानीमें महा-मण्डलेश्वर कार्त्तवीर्यदेव और उनके छोटे भाई युवराजकुमार मल्लिकार्जुनदेव शाही प्रभुताका उपभोग कर रहे थे। जो भूमि दान की गयी थी वह कुण्डी-३००० में अन्तर्गत कोरंवल्ली 'कम्पण' के मम्बरवाणी गाँवको दी गयी थी।

द्वितीय शिलालेखके, जिसका ऐतिहासिक भाग पहले ही लेख-जैसा है, दान भी ठीक उसी काल, उसी व्यक्ति, और उसी कार्यके लिये किये गये हैं। पर इस लेखमें दान स्वयं 'वेणुग्रामकी भूमिके थे। इस लेखमें कार्त्तवीर्य तृतीयकी पत्नीका नाम **पद्मावती** दिया हुआ है। यही नाम दूसरे कन्नड़ लेखोंमें पद्मल-देवी' आता है।

इन सब ऊपरके शिलालेखों परसे निष्पन्न रट्टोंकी वंशावली इस प्रकार प्रति-फलित होती है:—

[यहां यह ध्यानमें रखना चाहिये कि वंशपरम्परामें सिर्फ एक जगह टूट आती है और वह **शान्तिवर्मा** और **नन्न**के बीचमें है।]

एरेग, या एरग
अङ्क
सेन प्रथम, या काळसेन प्रथम,
मैळलदेवीसे विवाहित
कन्नकैर द्वि०,
या कन्न द्वि०
कार्त्तवीर्य द्वि०, या कत्त द्वि०,
भागलदेवीसे वि०
सेन द्वि०, या काळसेन द्वि०,
लक्ष्मीदेवीसे वि०
कार्त्तवीर्य तृ०, या कत्तम,
पद्मलदेवी या पद्मावतीसे वि०
लक्ष्मण, या लक्ष्मीदेव प्र०,
चन्द्रलदेवी या चन्द्रिकादेवीसे वि०
कार्त्तवीर्य चतुर्थ
मल्लिकार्जुन
एचलदेवी और (?) मादेवीसे वि०
लक्ष्मीदेव द्वितीय
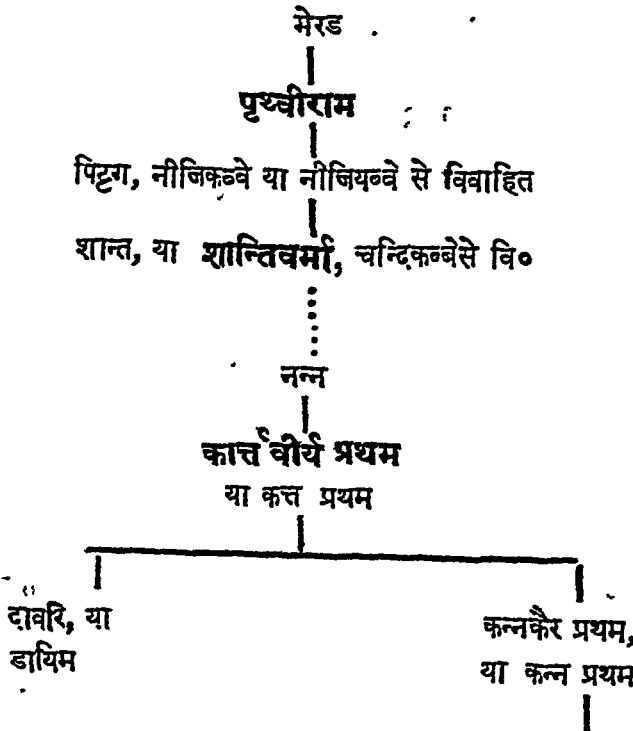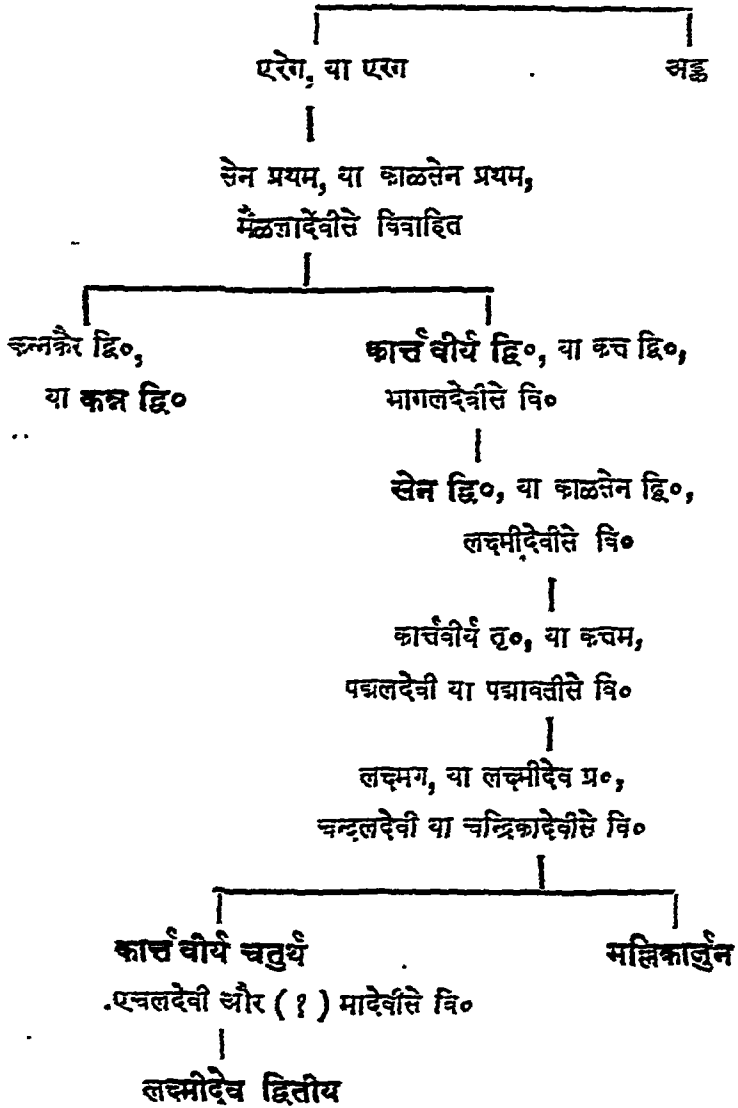
निम्नकोष्ठक से अब तक के आये हुए रट्टोंकी ऐतिहासिक कालावलीका पता एक ही बारके देखने में लग जायगा:—

रट्टका नाम	किसके अधीन	इन शिलालेखोंसे विदित काल
पृथ्वीराम······	राष्ट्रकूट कृष्णराज जो शक ७६८ तथा शक ८२५ में शासन कर रहा था।	लगभग शक८००
शान्तिवर्मा······	चालुक्य तैलपदेव द्वितीय, शक ८६५ से ६१६.	शक ६०२
कार्त्तवीर्य प्रथम···	चालुक्य सोमेश्वरदेव प्र०, शक ६६२ ? ६६१ ?	······
अङ्क·········	चालुक्य सोमेश्वरदेव प्र०	शक ६७१
कन्न द्वितीय······	············	शक १००६
कार्त्तवीर्य वि०···	चालुक्य सोमेश्वर द्वि०,शक ६६१ ? ६६८, और चालुक्य विक्रमादित्य द्वि०, शक ६६८ से १०४६.	शक १०१०
सेन द्वितीय······	चालुक्य विक्रमादित्य द्वि० का पुत्र जयकर्ण। बादमें स्वतन्त्र।	लगभग शक १०५०
कार्त्तवीर्य चतुर्थ, और मल्लिकार्जुन	स्वतन्त्र···········	शक ११२४ और ११२७
अकेला कार्त्तवीर्य च,	वही··· ··· ··· ···	शक ११४१
लक्ष्मीदेव द्वितीय···	वही··· ··· ··· ···	शक ११५१

[JB, X, p. 184-185, No 2 II and 12,] a.

४५५

गोग्ग;—कन्नड़—भग्न ।

[काल लुप्त—पर लगभग १२०७ ई०]

[वीरभद्र मन्दिरके पासके एक तीसरे पाषाण पर]

(अग्रभाग घिसा हुआ है)···नेक-ऋषिय ··· ··· ··· वैशाख सुद्ध ५ बृ··· ··· ··· ···अदके सीप्र वडगल् ··· ··· ···वण तुम्ब केळगे पडुवलु··· ··· ··· ··· ···मत्तरु १··· ···व ५० अदके चतुस्सीमे नट्ट कलु··· ··· ··· व ५ देवर नन्दा-दिविगेगे गाण १ इत्तेत्तिन अक्कलु··· ··· ···हुडिके-देरे हडियदे ग असगर वोकलु १ यिन्तिनितुम सुङ्क··· ··· ···विरुपय्यङ्गलु विट दत्ति समस्त-प्रजेगळिर्दु कोट्ट धान्यव ग नेल्लु को २ नवणे को २ एळु को १ यिन्तनितु धर्म्मम श्रीमतु सोवल-देवियरु ई··· ·· कन्या-दान माडि वासुपूज्य-देवर काल कर्च्चि ग्रा-पूर्व्वक माडिदरु यिन्ती धर्म्ममं नाग-गौडन् ··नय-प्रमेतेयागि प्रतिपाळिसुवरु ॥ (हमेशाके अन्तिम श्लोक) ।

[(प्रथम अंश नष्ट हो गया है, और उसका अधिकांश मिट गया है) विरूपय्यके द्वारा भूमिका दान । वासुपूज्य-देवके पाद प्रक्षालन-पूर्वक सोवल-देवीके द्वारा (उक्त) अनेक तरहके धान्यका दान, तथा एक कुमारीकी भेंट । इस पुण्यकी रक्षा नाग-गौड, अपनी आँखकी ज्योतिकी तरह, करेगा । हमेशाका अन्तिम श्लोक ।]

[EC, VII, Shikarpur tl., No 321 .]

४५६

गोग्ग; कन्नड़—भग्न ।

[शक ११३० = १२०८ ई०]

[गोग्गमें, वीरभद्र मन्दिरके पासके पाषाण पर]

ऊपरका भाग मिट गया है)··· ··· ··· ···अच्छरिये··· ··· ··· ···बुद्धि

... ...भोच्चण्ड ... ...वीर-चळ्काल... ... ... अरसंक-कर
... ...वोळगागनेक... ... .. चट्टरस... ... ...

आ-दम्पतिगळ पुण्यदिन् ।
आदं मगनधिक... ... ... ।
... ... ।
... ...विख्यात-सन्धि-विग्रहि यीच ॥
अभ्याहारादि-शास्त्र... ... ।
शुभ-चारित्र [ङ्ग] ळिन्दं पर-हित-गुणदिन्दं व्रताचार दिन्दम् ।
शुभ... ... ...उर्वी-नुतं कीर्त्ति-कान्त- ।
प्रभु-मन्त्रोत्साह-शक्ति-त्रय-युतनधिकं सेव्य... ।
पति-हिते सीतेयन्ते जिनपार्च्चकि तेवकियन्ते भर्तृ-सम्-
युते गिरिजातेयन्ते... ...लक्ष्मियन्ते सु- ।
व्रते नेगळ्द तिम्मवे... ...न्विते वाणियन्ते ता॥न् ।
अतिशयस् इर्द्दळ्... ... ...अङ्गने सोवल-देवि धात्रियोळ् ॥
...रति पद्मसंभवनोळद्रिजे चन्द्र... ...नोळ् ।
परम-सुख-प्रशस्ते सिरि विष्णुविनोळ् नेलसिप्प माल्केयिं ॥
स्थिरतर... ... ...सोवल-देवि मनोनुरागदिं ।
निरुपम-सन्धि-विग्रहि-सिखामणियोचनोळी-... ... ॥

[(लेखका प्रथम अंश नष्ट हो गया है, और उसका अधिकांश मिट गया है)।

ईच और उसकी पत्नी सोमल-देवीकी प्रशंसा। उनके गुरु-परम्परा (गुरु-कुल) की तारीफ—लेखमें सिर्फ चन्द्रप्रभाचार्यका नाम रह गया है।

महामण्डलेश्वर मल्लि-देवरस सन्धि-विग्रही मंत्री एचकी पत्नी सोवग-देवीने, अपने छोटे भाई ईचके मर जाने पर, एक वसदिका निर्म्माण किया,—भगवान शान्तिनाथकी अष्टविध पूजनके लिये, और मन्दिरकी मरम्मतके लिये, (एक मितिको) चन्द्रग्रहणके समय, (उक्त) भूमिका दान किया।]

[EC, VII, Shikarpur tl., No 320.]

४५७

सोरवं;–संस्कृत तथा कन्नड़ ।

—[शक ११३० (?)=१२०८ ई०]—

[सोरवमें, दण्डावती नदीके पूर्वी किनारे पर भवभूत-मण्डपके स्तम्भपर]

श्रीमत्परमगंभीर स्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥
अम्बुधि-कमळाकरदोळ् ।
जम्बु-द्वीपाब्जदोन्दु-कर्णिकेयेनिकुम् ।
पोम्बेट्टदरिं तेङ्कलु ।
चेम्बेट्टेय्देळेनिपुदल्ते भारत-क्षेत्रम् ॥
भरत-श्री-भूषणदन्तु-।
इरे कुन्तण-देस मज्जि नायक-मणियन्त् ।
उरुतर-शोभा-विक्रम-।
करमेने वनवास-देसमोळ्पं पडेगुम् ॥
तद्देशाद्यनेक-नर्ळानाथ-वळय-वळयित-देशाधिपति ।
यी-वसुधाग्रमं यदु-कुळङ्गे सळंगे कुडल्के कुन्तु॑ प-।
द्मावतियं सुदत्त-मुनिपर् व्वरिसल् पुलियागि वर्प्पुदुम् ।
माविसे नोडि पोय् शळयेनळ मुनिपर् स्सेळेयिन्दे पोय्दु तद्-
देविगे शौर्य्यमं मेरेदु पोय्सळ-नाममनान्तना-नृप ॥

अन्तु सुदत्ताचार्यिंयर् प्पद्मावती-देवियिं पदेदित्त······रदिं तदन्वयदोळनेकर मुदितोदितमागे राज्य गेंद वळिय ॥

उदयिसिदनमृत-वार्धियो ।
ळ् उदयं-गेय्दमर-भूजमेन्तिनेगं चेल्व-।
ओदविरे वल्लाळ-नृपम् ।

यदु-कुलदोळु विशद-कीर्त्ति दानाभरणम् ।
धुर-रङ्गं नृत्य-रङ्गं पर-नृपति-कपाळाळि ताळाळि नन्दन्-।
चरियर्कळ् पाडुवर् तद्विजय-दृढ-यशं दुन्दुभि-ध्वानमागुन्त् ।
इरे विद्विष्टोवनिपाळक-निकरद रुण्डङ्गळिं ताण्डवाडम्-।
वरमं माळ्पोळ्पिनिं नट्टविगनेनिसिदं **वीर-बल्लाळ-भूपम्** ॥
पगेवर पेण्डिर कण्णिन्द् ।
ओगेदञ्जन-पङ्कितांम्बुविन्दं वेळकम् ।
मिगुवुदु विचित्रमिन्तिदु ।
जगदोळु **बल्लाळ भूप**-निज-विशद-यशम् ॥

एने नेगळ्द **बल्लाळदेवं दोरसमुद्रद** नेलेवीडिनोळ् सुख-संकथा-विनोददि राज्यं गेय्युत्तमिरे ॥

दोरेयेने **कोडकणि वनवा**-।
से-रोहणाचळद पुरुष-कान्ता-विबुधोत्-।
कर-रत्नङ्गळ काणयेने ।
निरन्तरं तोळगि वेळगि राजिसुतिर्क्कुम् ॥

तद्ग्रामाधिपति ॥

वनवास-देश-भूषण-।
नेनिपं गावुण्ड-मण्डनं-दिक्-कान्ता-।
स्तन-मण्डल-परिशोभित-।
घनतर-तेजः-प्रकाश-घुशृणं **मसणम्** ॥

तदपत्य ॥

घु-नदी-प्रोतुङ्ग-रङ्गद्-बहळ-लहरिकान्दोळनोद्भूत-संघा-।
त-नमेरुवल्लतान्तावलि-वळयित-डिण्डीर-पिण्ड-प्रभा-मण्-।
ड्न-पाण्डु-प्रौढ-कीर्त्ति-प्रसर-विसरितोर्व्वी-नभश्चक-दिक्च-।
क्र-निकायं तानेनिप्पोन्देसकदिनेनसुं **कीर्त्ति-गावुण्डनादम्** ॥

मनमोल्दुव्वेरे कीर्त्तिकुं मसण-गावुण्डोत्तम-प्रेम-नन्-।
दननं वन्दि-जनार्थितार्त्थ-फळदं प्रत्यक्ष-कल्प-द्रु-नन्-।
दननं दुर्ज्जन-दर्प्प-खण्डननन्नुर्व्वी-जात-गाउण्ड-मण्-।
डननं कीर्त्तियनिन्दु-कुन्द-हर-हासोद्भासि-सत्-कीर्त्तियम् ॥
आर्त्तीव दानियं धरे ।
कीर्तिकुमभिमान-मूर्त्तियं घन-तेजस्-।
स्फूर्त्तियनी-प्रभु-मण्डन-।
कीर्त्तियनङ्गभव-मूर्त्तियं प्रियदिन्दम् ॥

तदपत्यर ॥

सोमं जननयनोत्पळ-।
सोमं मसणं विरोधि-जन-हृत्-खपणम् ।
श्री-महित-महादेवम् ।
प्रेम-महादेवनल्ते रामं रामम् ॥

आ-कीर्त्तिगावुण्डनणुगिनळियम् ॥

विततैश्वर्य्यन माधिनाथ-विभवं-राज-प्रियं वाहिनी-।
पति भोगीश्वर-भूपणं नुत-वृपाङ्कं केशव-प्रेम-वि-।
श्रुतनेम्बोळ्पेनसुं विराजिसे महादेवं महादेवनेम्-।
ब तदीयाङ्कमनन्वितार्थमेनलर्त्थ-व्यक्तियं माडिदम् ॥
सुमनो-भूधर-राजितं विपुळ-शाखं वन्धुर-स्कन्ध-मूर्-।
त्ति महीजात-वरं सु-पत्र-निचय-स्तुत्यं धरा-शेखराङ्-।
घ्रि महोदारि दलेम्ब तन्नेसकदिन्दं भव्य-कल्पावनी-।
जमेनिप्पं विबुध-स्तुतं विभु-महादेवं चमूपोत्तमम् ॥
ओदवल् कण्गिडे मर्व्वु पोगे रवि लोकक्केय्दे कण्णागि तान् ।
उदयं-गेय्देवोलिन्दु रेचरसनिन्द्रत्वक्के पक्कागे का-।
णदे मुन्दं देसेगेट्ट जैन-जनक्केल्लं लोचनं तानेनल्क् ।

उदयं-गेय्दनिला-तळ-स्तुत-**महादेवं** चमूपोत्तमम् ॥
कवि-रिपु गुरु गुरु-रिपु भृगु-।
ववरेवरेनल् धरित्रि कवि-गुरु-जनतोद्-।
भवमोदवे मन्त्र-गुणमोप्-।
पुवुदु **महादेव-दण्डनाथो**त्तमनोळ् ॥
अन्तु कीर्त्ति- गावुण्डं तन्नळिय **महादेव-दण्डाधिनाथ**नुं तदपत्यरुं बेरसु ॥
सल्ललित-गुण-गुणगणं श्री- ।
वल्लभनभिमान-मूर्त्ति कीर्त्ति-वधू-धम्- ।
मिल्ल-विराजित-मल्ली- ।
फुल्लं श्रेष्ठि-प्रतान-मण्डन मल्लम् ॥
एने नेगळ्द **मल्ले-सेट्टिग**- ।
मनुपम-चरित्र-सीते **माचाम्बिके**गम् ।
जनियिसिदं सुकृतं सज्- ।
जनियिसे निज-कुलके **नेम**नखिळ-ललामम् ॥
नेगळ्दर् गुरुगळ् **गुणचन्**- ।
द्र-गणि-वर**मूलसंग** (घ)-**काणूर्**-**गण**दोळ् ।
सोगयिसुव **तुन्त-वंश**दो- ।
ळेसेवररागे **नेम**नभिजन-रामन् ॥
पर-हित-मूर्त्ति भव्य-जन-कळ्प-कुजं विभु **नेमि-सेट्टि** बिन्-
तरदोळे कूडे **जिड्वळिगे-नाड् एडे-नाडे** निसिप्प नाळ्गवोळ् ।
परम-जिनेन्द्र गेहमननेकमनुद्धरिसुत्तमित्तलुद्- ।
धरिसिदनुत्तरोत्तरमेनल् निज-कीर्त्ति-लता-वितानमम् ॥
कोड कणि-पुर-लक्ष्मिय मेय्- ।
दोडवेनिसिरे **नेमि-सेट्टि** विभु माडिसिदम् ।
कडु-गोर्व्वि कीर्त्ति-लते दाङ्- ।
गुडि विडुविने शान्तिनाथ-जिन-मन्दिरमन् ॥

मनमर्हत्-प्रतिकृतिनिम् ।
तनु सु-व्रतदिं घनं जिनेन्द्रालयमम्- ।
जनन-क्रियेयिन्दति-पा ।
वनमागिरे **नेमि-सेट्टि** नेगळ्दं जगदोळ् ॥

अन्तु **नेमि-सेट्टि सक-वर्षद [साविरद] नूर मूवत्तनेय विभव-संव-त्सरद जेष्ठ शु १० शुक्रवारदोळ् शान्तिनाथ-देवर** प्रतिष्ठेयं माळ्प कालदोळ् **कीर्त्ति-गावुण्डनुं** तत्तनूजरुं तन्नाळय **महादेव-दण्डनायकनुं** परिवृत मागिरलु देवरष्ट-विधार्च्चनेगं ऋषियराहारदानकं कोट्ट गद्दे कम्म ५०

वरद-**श्री कण्ठ-व्रति-** ।
परिक्किदर् शान्ति-[जि] न-गृहाचार्य्यर्गोप्- ।
इरे योग-पट्टिगेयना- ।
दरदिन्दं वज्र-पञ्जरमनिक्कुववोलु ॥
यिदु जोग-वट्टिगेयनान्- ।
तुदु मद्-धर्म्मन् दलेन्द-संख्यात-गणा- ।
त्युदित-यशर् प्रतिपालिप- ।
रुदात्तदी- **शान्तिनाथ-जन-मन्दिरमम्** ॥

[जिन शासन की प्रशंसा ।

जम्बूद्वीप, उसमें भरतक्षेत्र, उसमें कुन्तण देश, उसमें वनवास-देश ।

जिस समय उस तथा समुद्र-परिवेष्टित अन्य देशोंका अधिपति यदुकुलके सळको यह मुख्य क्षेत्र देना चाहता था, सुदत्त मुनिपने पद्मावतीको एक चीतेके रूपमें प्रकट करवाया । पद्मावतीको चीतेके रूपमें देखते ही, उन्होंने सलसे कहा 'पोय् सल' (सल, मारो); जिसपर उसने चीतेको सल (डण्डे से) मारा और देवी पद्मावतीको उसके साहसका प्रदर्शन कराया, और इससे राजाका नाम 'पोय्सळ' पड़ गया ।

इस तरह सुदत्ताचार्यके पोय्सळ राज्यकी नींव गेरनेके बाद उस वंशमें बहुत-से राजा क्रमशः हुए। जिनके बाद राजा बल्लाळ उत्पन्न हुआ; उसकी कीर्त्तिकी प्रशंसा।

जिस समय बल्लाळ-देव दोरसमुद्रके निवास स्थानमें था और सुखसे राज्य कर रहा था:—

कोडकणि क्षेत्रका वर्णन। उसका अधिपति मसन था। पुत्र, (प्रशंसा सहित), **कीर्त्ति-गावुण्ड** था। उसके पुत्र **सोम, मसन, महादेव** और **राम** थे। उसका दामाद **महादेव-दण्डनाथ** था; (उसकी प्रशंसाएँ)।

मल्ल-सेट्टि और माचाम्बिकेसे नेम उत्पन्न हुआ था, जिसके गुरु मूलसंघ तथा काणर-गण के गुणचन्द्र थे। कुल-वंशके नेमि-सेट्टिने बिद्दळिगे-नाड् तथा एडे-नाड् में कई जिनेन्द्र-भवन बनवाये थे। कोडकणिमें उसने शान्तिनाथ-जिनालय बनवाया था।

इस प्रकार नेमि-सेट्टिने (उक्त मिति को[1]) शान्तिनाथ-देवकी प्रतिष्ठाके समय, कीर्त्ति-गावुण्ड, उसके पुत्र तथा दामाद महादेव-दण्डनायकसे परिवेष्टित होकर ५० दण्ड प्रमाण धान्य-क्षेत्र भगवानकी अष्टविध पूजाके लिए तथा ऋषियोंके आहारके लिये दानमें दिया।

और श्रीकण्ठ-व्रतिपने शान्ति-जिन मन्दिरके पुजारीको एक योग्य स्थान दिया।

[EC, VIII, Sorab, tl., No. 28]

१—'शक-वर्षदनूर-मूवतेनेय,' इसमें हजारकी संख्या लुप्त है।

४५८

अनवेरी;—संस्कृत तथा कन्नड़ भग्न ।

वर्ष प्रजापति [१२११ ई० (लू० राइस) ।]

[अनवेरी (होळलूरं परगना) में रंगप्पाके खेतमें पड़े हुए पाषाणपर]

स्वस्ति श्रीमतु ··· यणन्दि-भट्टारक-देवरु ··· अर्हन्त-बोवि-सेट्टि श्री-मूलसंघ-सुर ··· गण मार-सेट्टिय नग विट्टि-सेट्टि धर्म्मवं ··· माडिसिद ··· प्रजा-पति-संवत्सरद चैत्र-शुद्ध १० सोमवार श्रीमतु होय्सण-वीर-बल्लाळ-देव पृथ्वी-राज्यं गेय्युत्तिरलु कळु ··· तिन्दके ··· ··· २० कम्ब केय्य ······पूर्व्वकं माडि भूमि ······

······ ··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· लाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्य-नाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥

(अन्तिम श्लोक)

[कुछ सेट्टि लोगोंने (जिनके नाम दिये हैं), (उक्त मितिको),··· यनन्दि-भट्टारक-देवको, जब कि होय्सल वीर-बल्लाल-देव दुनियाँपर शासन कर रहे थे, दान किया । जिन शासनकी प्रशंसा । इनेशाके अन्तिम श्लोक ।]

[EC, VII, Shimoga tl., No103.]

४५९

बन्दलिके-संस्कृत तथा कन्नड़-भग्न ।

वर्ष श्रीमुख [१२१३ ई० (लू० राइस) ।]

[बन्दलिके में, शान्तीश्वर बस्तिके उत्तरकी ओरके द्वितीय पाषाणपर]

श्री-मूलसंघ-जलधौ समुदेत्य नित्यम्
क्राणूर्गणोज्ज्वल-सुधाम्भसि तिन्त्रिणीक- ।

गच्छाच्छके **ललितकीर्त्ति-मुने**र्व्विनेयः
आशाम्बर-श्रियमभाच्छु**भचन्द्र-देवः** ॥
वर्ष-श्रीमुख-मास-चैत्र-सित-पक्षाच्चैः-चतुर्थी-दिने
वारे चान्द्र [···] महति नक्षत्रेऽश्विनी-संज्ञिके ।
दैने ज्योतिपि कृत्तिका ··· परि ··· सौभाग्य-योगे वणिग्-
नामाद्योत्करणे स्व ··· य **शुभचन्द्रा**ख्य-व्रती योगतः ॥
सन्यस्य सर्व्वं-सङ्गानि पठन् पञ्च-पदानि च ।
समाहितो निर्व्वृते **शुभचन्द्र**-व्रतीश्वरः ॥
भरताधीश्वरनन्दमन्द-शुभचन्द्राभिख्यनिन्देन्दु भा- ।
सुर-जैन-व्रतिनाथनप्प विदितानन्दाभिधाचार्य्य ··· ।
··· ··· **शुभचन्द्र-देव**-मुनियिन्द् ··· आदुदत्यूर्जितम् ।
सुर-राज्योर्जितवप्प ··· ··· ··· जगत्पावनम् ॥
बन्दणिके-मठाधिपति-**शान्ति-जिनावसथा**ग्रदोळ् **जगम्** ।
ब ··· ··· मण्टपमनोप्पिरे मासिसि तन्न कीर्त्ति-या- ।
नन्द ··· नाडे भू-भुवन-मण्टपडोळ् ··· ··· ··· ।
सन्द समाधियन्द ··· ··· ना **शुभचन्द्र**-संयुतम् ॥ श्री ॥

[श्री-मूलसंघ, क्राणूर्-गण तथा तिन्त्रिणीक गच्छके, ललितकीर्त्ति-मुनिके आज्ञाकारी, शुभचन्द्र-देव थे। (उक्त मितिको) वह स्वर्ग गये। 'सन्यसन' (समाधि या सल्लेखना) में सब कुछ त्यागकर, पाँच शब्दों (परमेष्ठियोंके वाचक) को उच्चारण करते हुए, उनका मरण होगया। भरतेश्वरसे लेकर ··· ··· ··· ··· ·· बन्दणिकेके मठाधिपतिके लिये ··· ··· ··· शान्ति वसदिके सामने एक मण्डप खड़ा किया गया था।

[EC, VII, Shikarpur tl., No 226.]

४६०

होललकेरे;-संस्कृत तथा कन्नड़।

[बिना काल-निर्देशका, पर लगभग १२१४ ई० का ?]

[होळलकेरेमें, शान्तेश्वर मन्दिरके पश्चिमकी ओरके एक पाषाणपर]

श्रीमत्परम-गम्भीर-इत्यादि ॥

स्वस्ति य [म]-नियम-स्वाध्याय ध्यान-मौनानुष्ठान-जप-समाधिशील-गुण-सम्पन्नरुं ··· कढियाण-प ··· ह क्रमा रुं मध्याह्न-कल्प-वृक्षरुमप्प **पार्श्वसेन-भट्टारक-देवरु** होळलकेरेय शान्तिनाथ-देवर जीर्ण्ण-जिनालयोद्धारवनु माडिसिद दुर्गा ··· हुज्जिराय-गण्ड-भेरुण्ड **पाण्ड्य-राय**-प्रतिष्ठपनाचार्य्य गज-वेण्टेका ··· श्रीमं-महा-प्रताप-चक्रवर्त्ति **होयिसण-श्री-वीर-बल्लाळ-देवरु** वि ·· ··· **पट्टण-**दोः र सुख-संकथा-विनोददिं राज्यं गेय्युत्तमिरलु तत्पादपद्मोपजीविगळप्प श्रीमतु-म. ...र्वान ······ **दण्डनायकर** कुमार **सोम-दण्णायकरु हिरिय-बल्लाळ-दण्णायकरु वेम्मलूर-पट्टण**दोळु सुखसंकथा-विनोददिं राज्यं गेय्युत्तमिरे अवर मनेय वळ ··· नायक व ··· नायक नारायण मेच्चि मेच्चे-दन-गण्ड ना ··· नायकर गण्ड मूरु सङ्कण रावुत्तर गण्ड श्रीमतु-महा-सामन्ताधिपति **बाडद् ··· से-नायकन** मग मीसेयर गण्ड बाडद ··· पे-नायकनु **होळलकेरेय** वीर-वृत्तियागि ··· तं विद्दलि **शक-वर्ष ११३६ नेय श्रीमुख-संवत्सरद फाल्गुन-सु ··· बृहस्पतिवारद**लु होळलकेरेय शान्तिनाथ-देवरिगे नित्यो ··· वागि बिट्टदु हिरिय-केरेय हिन्दे होल ··· कोळग ··· ··· ··· ··· हट्टनद ··· ··· ··· वृत्ति ··· ··· ··· ···

[इस लेखका पहला अंश पूर्वगामी लेख नं० ३३८ के अंशसे मिलता है।

जिस समय महा-प्रताप-चक्रवर्त्ति होय्सण वीर-बल्लाल-देव ··· पट्टणमें राज्य करते हुए निवास कर रहे थे :—तत्पादपद्मोपजीवी, महाप्रधान, ··· ··· दण्ड-

नायकके पुत्र सोमदण्णायक जो पुराने वल्लाळ-दण्णायक थे, वेम्मतूर-पट्टणमें, शान्ति से राज्य कर रहे थे :—बहुतसे नायकोंने (जिनके नाम दिये हैं), (उक्त मितिको), होळलकेरेके शान्तिनाथदेवकी पूजाके लिये उक्त भूमिएँ हमेशाकी भेंटके रूपमें दीं।]

[EC, XI, Holalkere tl., No 2.]

४६१

श्रवणबेल्गोला;—कन्नड़-भग्न।

[बिना कालनिर्देशका]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

४६२

सियाल-बेट;—संस्कृत

[सं० १२७२=१२१५ ई०]

लेख श्वेताम्बर सम्प्रदाय का है।

[Revised Lists ant. rem. Bombay
(ASI, XVI), p. 254, t.]

४६३

श्रवणबेल्गोला-कन्नड़-भग्न।

[वर्ष ईश्वर = १२१७ ई० ? (लू० राइस)]

जै० शि० सं०, प्र० भा०]

४६४

गिरनार-संस्कृत-भग्न ।

(सं० १ [२७१] (?) = १२१६ ई०)

श्वेताम्बर लेख ।

[Revised Lists ant. rem. Bombay (ASI, XVI), p. 355 No 14, t. and tr.]

४६५

आर्सीकेरे- संस्कृत और कन्नड ।

[शक ११४१ = १२१६ ई०]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलांछनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥
श्री-रामावळयं जगज्जननुतं गोत्रास्पदं भूरि-गं- ।
भीरं सत्व-समन्वितं निखिल-वस्तु-स्थानमुर्व्वीतळा- ।
धारं नित्यमुदात्तवप्रतिमवेम्बी-परमेयिं वानिसल् ।
पारावारद-वोल् नेगल्ते-वडेदिक्कुं यादवाख्यान्वयम् ॥
सळनेम्ब तद्-यदुर्व्वीश्वर-कुळ-जनितं जैन-योगीन्द्रनं निर्- ।
म्मळ-चित्तं सादृढुं सन्दिर्प्पुदुवति-कुपितं व्याघ्रनेय्तप्पुदुं होय् ।
सल येन्दा-योगि पेळ् ... दे सेळेयोळदं पोय्दु गेल्दकरिं होय् ।
सळ-नामं यादवर्गादुदु वसदोदविन्दादवन्दिन्दवित्तल् ॥
आ-होय्सळान्वयदोळुर्व्वियिसिद विनयादित्य-पुत्रनप्पेरेयङ्ग-नृपङ्गव्-
एचल-देविगं पुट्टिद विष्णु-नृपन विक्रमं पेळ्वडे ॥
पर-भूपाळरनिक्कि तद्धरेयनार्न्तु यत्नमं माडे वित्- ।

तरदिन्देत्तिसिदा-सुरालय-समूहं प्रेमदिन्दा-तुला- ।
पुरुषं कट्टिसि ...... रेगळ् बिट्टग्रहारङ्गळी- ।
धरेयोळ् कूडे निमिर्च्चि ... बसवनेन्दुं **विष्णु**-भूपालन ॥
आ-विभुगं सति-लक्मा- ।
देविगवादं विशाल-निर्म्मल-क्रीर्त्ति- ।
श्री-वरनदटर जवनं ।
भूवर-गन्धेभ-सिंहनेनिप **नृसिंहम्** ॥
नेगळ्दा-वीर-**नृसिंह**-भूमिपतिगं शृंगार-वार ... ।
... यप्पेचल-**देविगं** नेगळ्दनुर्व्वी-मण्डनं कीर्त्तिग- ।
त्तिगनन्यावनिपाळ-दर्प्प-दळनं दानोन्नतं मा ... ।
जगती-रक्षण-दक्ष-दक्षिण-भुजं **बल्लाळ**-भूपालकम् ॥
बुधनन्तिळा-वरं वा- ।
र्धियन्ते विशाल-विलसद्षडक्षोणं ।
मधुसखनन्तसमाक्ष ं ।
सुधांशुधरनन्तुमा-धवं **बळ्ळाळम्** ॥
सिरि हरिय सङ्गदिं शं- ।
वर-रिपुवं पडेद तेरदे **बल्लाल**-मही- ।
वर-सति पद्मळ-माडे- ।
वि रमणि पडेदळ् नृसिंहनं गुण-निधियम् ॥
हृदय-कळंकनल्लद जडात्मकनल्लद शीतरोचियेम्- ।
बुदु गुरु-गोत्र-शत्रु-त्रणग्रल्लद कौशिकनल्लदिन्द्रनेम्- ।
बुदु विपरीतनल्लद कु-जन्मकनल्लद कल्पवृक्षवेम्- ।
बुदु विबुधाश्रयैक-निधियं कुवराग्रणि-**नारसिंहनम्** ॥

स्वस्ति समस्त-भुवनाश्रयं श्री-पृथ्वी-वल्लभं महाराजाधिराजं परमेश्वरं **द्वारावती-पुरवराधीश्वरं** **यादव-कुलाम्बर**-द्युमणि सम्यक्त्व-चूडामणि मलेराज-राज मले-परोळ् गण्ड कदन-प्रचण्डनेकाङ्ग-वीर निश्शङ्क-प्रताप चक्रवर्त्ति होय्सळ **वीर-**

बल्लाळ-देवर् सकल-धरित्रियं दुष्ट-निग्रह-शिष्ट-प्रतिपाल [न] दिं **दोरसमुद्रद** नेलेवीडिनोळ् सुखदिं राज्यं गेय्युत्तुमिरे तदीय-पाद-पद्मोपजीविगळप्प**रसियकेरेय भव्य-नकरङ्गळ** रत्नत्रयाधिष्ठितत्वमे धर्म्म-प्रतिपालन-शक्तियं **कळचुर्य्य-कुळ**-सचिवोत्तमं **रेचरस** केळ्दा बल्लाळन पद-पयोजमनाश्रयिसि तद् ··· वत्तियं ··· अरसियकेरेयोळ् सहस्र-कूट-जिन-बिम्बमं प्रतिष्ठेयं माडिसिया-देवरष्ट-विधार्च्चनक्कं पूजारि-परिचरकर जीवितक्कं जीर्णोद्धरणक्वेन्दा **बल्लाल**-भूपनिं हन्दर-हाळं धारा-पूर्व्वकं पडेदु तम्मन्वय-गुरुगळ् श्री-**मूल-संघद देशि-गणद पुस्तक-गच्छदिङ्ग-ळेश्वरद** बळियेनिसिद **माघनन्दि-सिद्धान्त-देवर** शिष्यर् **शुभचन्द्र-त्रैविद्य-देवर** शिष्यरप्प श्री-**सागरनन्दि-सिद्धान्त-देवर्गे** धारा-पूर्व्वकवागूरं कोट्टि-धर्म्ममं भव्य-नकरंगळ्गे कैय्-तडेयागित्त रेचरसन म ··· ··· नरसियकेरेय पेम्र्मेयं पेळ्वडे ॥

वदनं वाग्-वनिता-विलास-सदनं वक्षं रमा-नर्त्तकी-
विदितानर्त्तवुदारवर्त्थि-जनता-सन्तर्प्पणं कीर्त्ति-कौ- ।
मुदि जैनार्ण्णव-वर्द्धनं गुण-गणं भू-भूषणं मूर्त्ति-चा- ।
रु दयान्वितमेनल्के **रेचण-चमूपं** पेम्र्मेयं ताळ्दिदम् ॥
ओसेदवरिवरेन्नदे स- ।
न्तोसमप्पिनेवित्तु पडेदनी-वसुमत्तियोळ् ।
वसुधैक-बन्धुवेम्बी- ।
पेसरं **रेचरसनुन्तु** देशियिनाय्ते ॥
सारं नोळ्पर्गे पेम्पुळळरसियकेरेयोळ् विश्व-वेदाङ्ग-विप्रर्-
व्वीरर्क्कोव्याळुगळाढ्यप्परदरचल-वाक्यत्तु रीयर्व्विनूता-
कारं कान्ता-जनं कारुगळ-मदरिळा-मण्डनं देगुळं गं- ।
भीरोदारं तटाकं फळ-भरित-वनं पूत-पूदोटवेन्दुम् ॥
नत-भृङ्गाम्भोज-षण्डं शुक-पिक-विविधोद्यान-संकीर्णवापू-
र्णन-तटाकं गन्ध-शाळी-परिमळ-कळितं पुष्प-पुंड्रेक्षु-वापी-

वृतवुत्तुङ्ग-प्रभा-भासुर-सुर-गृह-संपन्नवुन्नतप्रजा-पू- ।
रितवुर्व्वी-मण्डनं सन्दरसियकेरेयं वण्णिसल् बल्लनावम् ॥
जिन-धर्म्मवादियागिर्- ।
द्द् निखिळ-धर्म्मङ्गळं समन्तनुनयदिन्- ।
दे निमिर्च्चि नडयिपर्स्सज्- ।
जनररसियकेरेय सायिरोक्कल् सततम् ॥

आ-सायिरोक्कल् तमगाधारवागिर्प्पं भव्यर पेर्म्मेयेन्तेने ॥
'नुडि सत्योद्योत-गेहं नडेवळे जिनधर्मानुगं शक्तिनिं नाल्- ।
मडि जैनाङ्घ्रि-द्वयाराधने घनद-निभं पेर्म्मे सत्पात्रदोळ् मेय्- ।
वडेदिर्क्कुं दानवर्त्यार्ज्जने निखिळ-जनोत्साहवावन्ददेम् नोळ् ।
पडे पेम्र्यं ताळ्दि सन्दीयरसियकेरेया भव्यरोळ् पाटियात्रम् ॥
भू-भुवनदोळरसियकेरे- ।
या भव्यर्गुण-गण-प्रसन्नर्स्सुजनर् ।
ल्लोभ-विवर्जितराहा- ।
राभय-भैषज्य-शास्त्र-दान-विनोदर् ॥
एसेये सहस्र-कूट-जिन-बिम्बमनग्रणि रेच मुं प्रति- ।
ष्ठिसि [.] वनक्के भव्य-तति कोटेयनिक्किसि गोटेयिन्दवे- ।
त्तिसि गृहमं नेगळ्दरसियकेरेयोळ् गृह-पतियागि पेम्प्- ॥
ओसेये नृपं ··· ··· द्दंस-निष्कमना-परिन्नियम् ॥
एळ्-कोटिगळी-धर्म्मम- ।
नळ्कर पेर्च्चिन्दे नडेयिप ··· नेळे- ।
योळ् ··· ल्वे ··· धर्म्म-मन्दिर- ।
र् पेल्कोटि-जिनालयाङ्कमादत्तादम् ॥

स्वस्ति समस्त-प्रशस्ति-सहितं श्रीमत्-तेङ्कणय्यावळे एनिसिद् सीताळमळिगेयरसियके- ·· रेय भव्य-नकरङ्गळु सहस्र-कूट-चैत्यालयमनेत्तिसिया-देवर्ष्ट-विधार्च्चनेगं पूजारि-

परिचारकर जीवितक्कं बन्द-चातुर्व्वर्णगळाहार-दानक्कं जीर्णोद्धारणकवेन्दु समस्त सायिरोक्कलुगळ कय्यलु धारा-पूर्व्वकं भूमियं पडेदा-भूमिय तेरेगा बल्लाल-भूपनिं इत्तु-होन ··· तेरेयोळगिळिहिचि सकळ-श्री-करङ्गळ सिवडियो ··· चन्द्रार्क-तार-म्बर सले सल्वन्तं वर·· **इङ्गळेश्वरद बळिये** नप्पा-**सागरणन्दि-सिद्धान्त-देव**रन्वयदवर वशं माडि निखिलभव्य-जनङ्गळारय्यागि **सक-वर्षद ११४१ नेय प्रमादि-संवत्सरद पुष्य-मासद पौ ··· दिवारदन्दु** बिट्ट दत्ति देविगेरेय मूड-गेरय तोण्टद कम्ब ४० । बसव-गेरय बेळगण तो ··· ·· द कम्ब ··· ··· ··· कम्बं ··· ··· वूर गडियलुं भट्टद हसरदलु समस्त-नकरंगळु बिट्ट गद्दे ··· ··· हरवर बिट्ट मानेण्णेगे गाणवेरडु ॥

नुत-भुवन-शान्तिनाथ- ।
प्रतिष्ठेयं भद्रमागे तद्-गृहमुमं ।
क्षिति पोगळे माडिदर्स्सन्- ।
नुतररसियकेरेय भव्य-नकर-प्रकरम् ॥

आ-देवर प्रतिमेगी-पट्टण-स्वामि **कलि** ··· ··· कोट्ट ग ··· ··· देवरर्च्चनेगे बद्धियिं बन्दु नडवन्तु बिट्टनङ्गडिय **जक्कि-सेट्टिय** मग नाडिगम-सेट्टियब्बय-भण्डार-वागे कोट्ट ग १२ प्रसन्न-**कलिसेट्टि** कोट्ट ग २

जिन धर्म्मं नेलसिक्कें भूतलदोळेन्दुं धर्म्मिगा ··· ··· ।
तनवी-धर्म्मद दत्तियं तिलिसिदर्गायुं जय-श्रियुमक्कु ।
ए नेरळ्दोवादेदक्कें कुन्दनोडरिप्पक्कावगं सार्गं सव्-
वन-गो-ब्राह्मण-सन्मुनि-प्रकरमं कोन्दा-महा-पातकम् ॥

[जिन शासनकी प्रशंसा । हमेशाकी तरह बल्लालतककी होय्सलोंकी वंशावली और उन्नतिका वर्णन ।

स्वस्ति (अपनी उपाधियों सहित), प्रताप चक्रवर्ती होय्सल वीर-बल्लाळ-देव शान्तिसे राज्य करते हुए, दोरसमुद्रमें निवास कर रहे थे:—

तत्पादपद्मोपजीवी अरसियकेरेके निवासी थे। उनकी रत्नत्रय और धर्म्ममें दृढ़ता सुनकर कलचुर्य्य-कुलके सचिवोत्तम रेचरसने, बल्लाल देवके चरणोंमें आश्रय पाकर अरसियकेरेमें सहस्रकूट जिनकी प्रतिमा स्थापित की। उन भगवान-की अष्टविध पूजन, पुजारी और नौकरोंकी आजीविका, और मन्दिरकी मरम्मतके लिये,—राजा बल्लालसे हन्दरहालु प्राप्त करके उसे अपने वंशके गुरू श्री-मूलसंघ, देशिगण, पुस्तक-गच्छ और इङ्गुलेश्वरबलिके माघनन्दि-सिद्धान्त-देवके शिष्य शुभचन्द्र-त्रैविद्य-देवके शिष्य सागरनन्दि-सिद्धान्त-देवको सौंप दिया।

रेच-चमूपकी प्रशंसा। अरसियकेरेकी शोभाका वर्णन। वहांके जैनोंका वर्णन।

रेच द्वारा स्थापित चमचमाते हुए सहस्रकूट जिन-बिम्बके लिये जैन लोगोंने १ करोड़ रुपया इकट्ठा कर प्रसिद्ध अरसियकेरमें एक मन्दिर तथा उसके चारों ओरकी चहारदीवारी बनवायी। इसमें जिससे जितना बन पड़ा, यथाशक्ति द्रव्य दिया, और राजा ··· ··· ने १० निष्ककी रेट (भाव) से जमीन दी। इस जिनालयमें समस्त ७ करोड़ लोगोंकी सहायता होनेसे, इसका नाम 'एल्कोटि-जिनालय' रखा गया। इस चैत्यालयके लिये १००० कुटुम्बोंसे जमीन खरीदी गयी थी और राजा बल्लालसे उस जमीन परसे १० होन्नुवाला कर छुड़ा लिया गया था। अरसियकेरके लोगोंने एक शान्तिनाथका मन्दिर और बनवाया था। उसके पूजा के प्रबन्धके लिये कल्ल ··· ··· ने एक दुकान दी तथा दूसरे लोगोंने (उक्त) दान दिया।]

[EC, V, Arsikere, tl., No. 77.]

४६६

नित्तूरु;—कन्नड़-भग्न।

वर्ष प्रमाथि [=१२१६ ई०? (लू. राइस)।]

[नित्तूर (गुब्बि परगना) में आदीश्वर बस्तिकी पश्चिमीय दीवालके एक पाषाणपर]

स्वस्ति श्री-मूलसंघ देशी-गण पोस्तक-गच्छ श्री-कोण्डकुन्दान्वयद श्री-पद्म-प्रभ-मलधारि-देवर गुड्डि जैनाम्बिके येनिसिद माळव-सेट्टिकब्बेयर मग मल्लि-सेट्टि ई-चैत्यालयद होर-भित्तिय सुत्तण प्रतिमेयं प्रमाथि-संवत्सरद ज्येष्ट-शुद्ध-पञ्चमी ... ... तण-वागि माडिद ... ... महा श्री

[श्री मूलसंघ, देसिय-गण, पोस्तक-गच्छ तथा कोण्डकुन्दान्वयके पद्मप्रभ-मल-धारि-देवकी गृहस्थ-शिष्या माळवे-सेट्टिकब्बेके पुत्र मल्लि-सेट्टिने,—(उक्त सालमें), इस चैत्यालयकी बाहरी दीवालोंको चारों ओर मूर्त्तियोंसे सजाया ।]

[EC, XII, Gubbi tl., No. 8.]

४६७

हुम्मच;—कन्नड़-भग्न ।

[काल लुप्त, पर लगभग १२२० ई० ?]

[पद्मावती मन्दिर के प्राङ्गणमें, छठे पाषाणपर]

श्री

स्वस्ति श्री-जिन-शासन- ।
विस्तारित-मूल-संघ-देशि-गणदोळ् ।
... ... ।
... ... निसिर्द्द कोण्डकुन्दान्वयदोळ् ॥

कोर्सि-देवर मुनिचन्द्र-मलधारि-देवर शिष्यरमय ... ... समाधियिं मुडपि स्वर्गक्के सन्दरु

[मुनिचन्द्र-मलधारिके शिष्य मूलसंघ, देशीगण तथा कुन्दकुन्दान्वयके अमय ... ... का स्मारक ।]

[EC, VIII, Nagar tl., No. 54.]

४६८

दानसाले;—संस्कृत तथा कन्नड़-भग्न।

११८० ?

—[··· ··· =लगभग १२२० ई०]

[दानसालेमें, उत्तरकी ओर, वस्तिके पासके एक समाधि-पाषाणपर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

नमो अरिहन्ताण ॥ स्वस्ति श्रीमतु शक वर्ष ११४ ··· नेय सार्वधारि-संवत्सरद कार्त्तिक-सुद्ध १० सोमवारदन्दु श्रीमन्महामण्डलेश्वरं कलिगणं-कुल मण्डळ-महीपालन सर्व्वाधिकारि-पद्मप्रभ-देवर गुड्ड वैजण-सेनबोवन पुत्र बय्ळ-सेनबोवन तम्म चळिग-सेनबोवनु निजायु··· ··· सानमनपिदु ॥ पोरेदा ··· ··· अगे पर-मण्डळद महीपाळर्गभिप्राय (२ पंक्तियां नष्ट हो गई हैं) सुखदिं वैजण-सेनबोव ॥ तनुजातं ··· ··· ··· कादर्ब्वलिग यिन्ती ··· ··· ··· सहितं मन्त्रि ··· ··· ··· दियकोगेद ··· ··· ···

[जिन शासनकी प्रशंसा।

स्वस्ति। (उक्त मितिको), चलिग-सेनबोव,—जो वैजण-सेनबोवके पुत्र बय्ल-सेनबोवका छोटा भाई और महामण्डलेश्वर मण्डल-महिपालका सर्व्वाधिकारी पद्मप्रभ-देवका गृहस्थ-शिष्य था,—अपना अन्त समीप जानकर, ··· ··· ··· ··· ···कादर्म्बलिगमें ··· ··· ··· स्वर्गको गया।

[EC, VIII, Tithahalli tl., No. 191.]

४६९

पुरले;—कन्नड़।

—वर्ष विजय [१२२७ ई० ? (लू. राइस)।]

[पुरलेमें, बस-सेट्टिके खेतके स्तम्भपर]

पूर्व-मुख

व्यय-संवत्सर-पुष्यद । बहुळद बारसिय कुजन बारदोळ् सद- ।

विनय-निधि **बाळचन्द्र** । नु-समाधियं मुडिपि नाकमेय्दिदनीगळ् ॥

अतिथिगम् ... । प्रतिमा-प्रागल्भ्य मनु-मुनिग् ... ।

... ... त्त-वाडिगळ दानम- । वतिशयमी-**बाळचन्द्र**नुळ्ळन्नेवरं ॥

ळले बुध-समिति सिरुटर । वळगं मेल्मल्लने मरुगे दान-विनोदम् ।

प्रळल-प्रक्षोभदवोल् । कळि श्री-**बालचन्द्र**नभिनव-चन्द्रम् ॥

पश्चिम मुख

मनमं निपमिसलरियर् । तनुमं ... तोर्प मुनियं मुनिये ।

मनमं तनुवं नियमिस- । लनुदिनमी **नेमि-देव**नोर्व्वने अल्लम् ॥

[(उक्त मितिको) विनयनिधि बालचन्द्रने समाधिमरण किया और स्वर्ग प्राप्त किया । (उनकी प्रशंसा) ।

मन और काय दोनोंके दैनिक नियमनमें, नेमि-देव ही अकेले योग्य हैं ।]

[EC, VII, Shimoga tl., No. 66.]

४७०

सौंदत्ति;—कन्नड़ ।

[शक ११५१=१२२९ ई०]

शिलालेखका परिचय

यह शिलालेख कुन्तलदेशके अन्तर्गत कुण्डी जिलेके अधीश्वर राष्ट्रकूटवंशके लक्ष्मण या **लक्ष्मीदेव प्रथम** के प्राथमिक वर्णनके बाद लक्ष्मीदेव द्वितीयका वर्णन करता है। ल० द्वि. **कार्त्तवीर्य चतुर्थ** और **मादेवी**का पुत्र था। इस तरह यह लेख और शिला लेखोंकी अपेक्षा रट्टोंकी वंशावलीको एक कदम

और आगे बताता है। यह कार्तवीर्य चतुर्थकी द्वितीय पत्नी होनी चाहिये, क्योंकि शि० ले० नं० ४४६ में उसकी पत्नीका नाम **एचलदेवी** दिया है। तत्पश्चात् हम देखते हैं कि **सुगन्धवर्त्ति बारह** का शासन लक्ष्मीदेव चतुर्थकी अधीनता में रट्टोंके राजगुरू मुनिचन्द्रदेवके द्वारा होता था, और मुनिचन्द्रके सहायको या परामर्शदाताओं में शान्तिनाथ, नाग और **मल्लिकार्जुन** थे। मल्लिकार्जुनकी वंशावलीके देनेमें स्थानीय दो महत्वशाली वंशोंका विशेष वर्णन है—१८ गाँवोंके वृत्त (समूह) के अधिपति (इन गाँवोंमें **बनिहट्टि** मुख्य था जो आजकल जामखण्डीके पासका एक छोटा शहर मालूम पड़ता है), और **कोलार** के अधिपति (आजकलका कोर्त्ति-कोल्हार जो कलाद्रीसे नातिदूर कृष्णाके किनारे है)। कोलारके वंशमें पुरुष-उत्तराधिकारीके न होनेसे वहाँका अधिपतित्व विवाहके द्वारा बनहट्टिके अधिपतियोंके वंशमें चला गया। कोलारके अधिपतियोंका वंश गृहपति **वशिष्ठ**के वंशसे शुरू होता है, और उसमें निम्न नामोंका वर्णन आया है :—
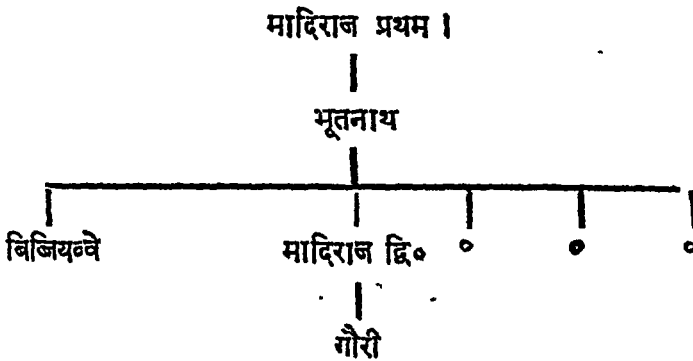
मादिराज द्वि० अपने छोटे भाइयोंके साथ—जिनके नाम नहीं दिये हैं—युद्धमें मारा गया था। उसकी मृत्युके बाद उसकी बहिन विजियब्बेने शासन-सूत्र अपने हाथमें ले लिया और कुछ समय बाद इसे बनिहट्टिके मल्लिकार्जुनके साथ गौरीके विवाहमें दहेजके रूपमें दे दिया। बनिहट्टिके शासकोंके वंशका नाम 'सामासिग-वंश' था और यह अत्रि ऋषिसे प्रारम्भ होनेवाले इन्दुवंशकी एक

शाखा थी। इस खानदानकी वंशावली, जिसमें ६३वीं केसिराजके पुत्र मादिराज का भी नाम आ जाता है, निम्नभाँति है :—
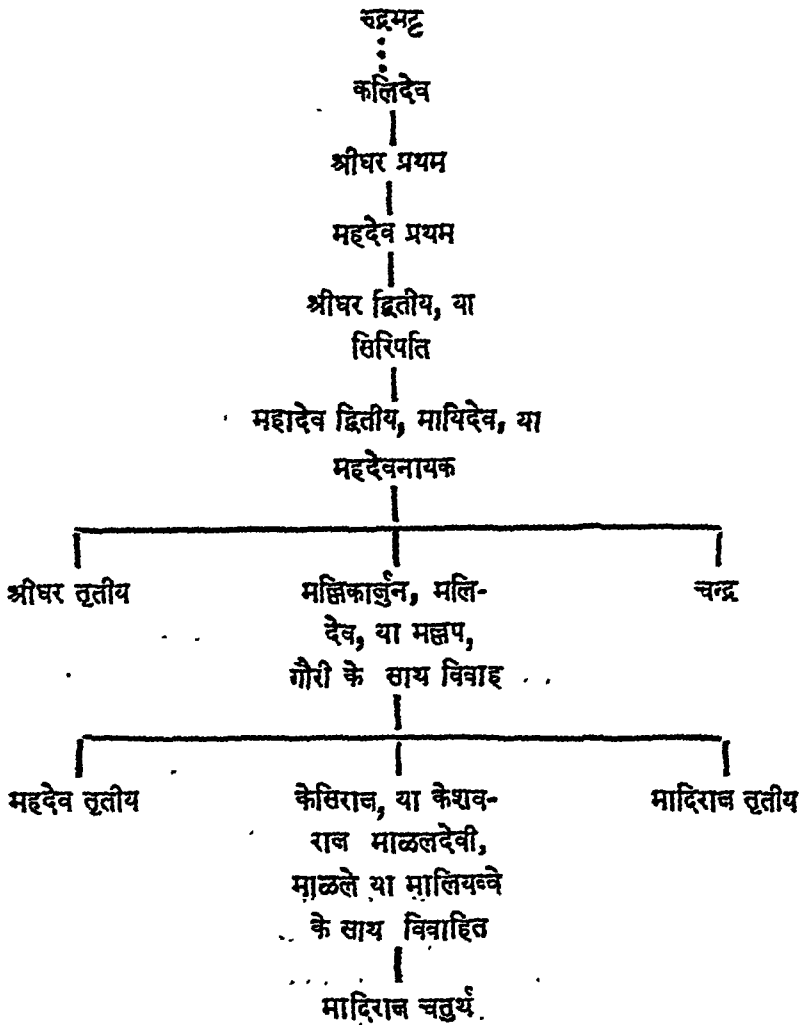
जैसा कि ऊपर निर्दिष्ट है; यह खान्दान रुद्रभट्टसे शुरू हुआ।

इसके बाद लेखमें बताया है कि किस तरह केसिराज, श्री-शैलके मल्लिकार्जुन देवकी वेदीके 'लिङ्ग' की तीन यात्रा और वहाँ कठिन व्रत धारण करनेके बाद, पवित्र पर्वतकी चट्टानसे बने हुए 'लिङ्ग' को अपने साथ लाया और उसे सुगन्धि-वर्त्ति नगरके बाहर नागरकेरें तालावके पास अपने पिताके नामपर बनानेवाले मल्लिकार्जुन देव या मल्लिनाथ देवके मन्दिरमें स्थापित किया। बादमें इस मन्दिरके उच्च-पुरोहितका पद उसने लिङ्गय्य, लिंगशिव, या वामशक्तिके पुत्र देवशिव, उसके पुत्र वामशक्तिको दे दिया। इसके बाद लेखमें इस मन्दिरके लिये भूमि और उसके दशवें अंशके कई दानोंका उल्लेख आया है। ये दान सर्वधारी संवत्सर, **शक वर्ष ११५१ में,** राजगुरु मुनिचन्द्रकी आज्ञासे किये गये थे। उस समय शासनकर्त्ता वेणुग्राम राजधानीमें महासामन्त **राजा लक्ष्मीदेव** थे। अन्तमें इस लेखके लेखकका नाम मादिराज दिया है। यह केसीराजका पुत्र था।

समस्तुंग शिरश्चुम्बिचन्द्रचामरचारवे [।] त्रैलोक्य नगरारम्भमूलस्तम्भाय शंभवे ॥ ईगे निरन्तरं सुखमनाश्रितर्गी गिरिजाधिनाथनुर्व्वीगगनेन्द्विनानळमरुत्ख-लिलात्मवराष्टमूर्तियं रागदे लोक यात्रेमे निर्भोगिसि तन्न मनोनुरागदि श्रीगिरियोळ् विराजिप सदाशिवनी विभु मल्लिकार्जुन। वनधिमृतावनिमध्यद कनकाद्रिय तेंकदेसेय भरतवनियोल् जनपदमेसेपुदु कुन्तळवेनसु सोगयिसुवुदल्लि कूण्डीदेशं [॥] आ देशाधि ईश्वरं **लक्ष्मणनृ**पनेसेदं तत्सुतं कार्त्तवीर्य्यंगादळ् महादेवि तां श्रीसतिय-वर्गों जगज्जात विद्व(ज्ज)नक्काहादं (पेळ्के) ळ विद्विद् क्षितिपति निवहक्कुब्बेगं पुट्टे तद्रामादिक्षोणि ईश शौर्य्ये सकळगुणयुतं पुट्टेदं **लक्ष्मीदेवं** [॥] सुकुमारा-कारने श्रीसतिगुदयिसिदं धारणीचक्र संरक्षकने श्रीकार्त्तवीर्य्यावनिपतिसुतने रट्टवंशो-द्भवं राजकदोळ्सम्सेव्यने भाविसुवडे निजदिं **लक्ष्मीदेवं** प्रभावाधि(कने) तिग्मांशुवंश प्रकटित विभवं नोर्प्पडी **लक्ष्मीदेवं** ॥ इदमोघं राष्ट्रकूटान्वयनतुळनळं लक्ष्मीदेवं सुरूपन्वदोळुद्य (तेजदोळ् शौर्य्यदो) ळखिलजनानन्ददोळ् आर्य्योदा-दार्य्यदोळा कन्दर्प्पनं भानुवननिलजनं रोहिणीनाथनं पूर्व्वदिशाकान्तेशनं कर्णनन-नतिशयदिं पोल्वु विख्यातिवेत्तं आ रट्टराज्यमं विस्तारिसि नलविन्दे रट्टराज्य स्थिर

निस्तारक नेनिपं लक्ष्मीनारीशं रट्टराजगुरु मुनिचन्द्रं [॥] कुमुदानन्दतेयिन्द बोन्दि मुनिचन्द्रं शत्रुभूभृन्मुखाब्जमनिष्पीडिप तेजदिंदे मुनिचन्द्रं रट्टराजान्वियं क्रमदिं [...]त्तमं पळंचलेविनं पेच्चेप्प तन्तोन्दु विक्रमदिंदं मुनिचन्द्रनिन्तु मुनिचन्द्रं चन्द्र-नामान्वितं [॥] गुरुवादं कार्त्तवीर्य्यक्षितिपतिगेनतुं मन्त्रदिं ताने शिक्षागुरुवादं शस्त्रशास्त्रस्थिरपरिणतेयोळ् लक्ष्मीदेवंगे दीक्षागुरुवादं प्राज्यराज्यापहरणदे परक्षोणि-पाळर्गेनल्नेळ्शब्दं वाग्जवाग्तन्नदे वरमुनिचन्द्रंगिदें देसेगाग्दे [॥] धरणीशाग्रणि कार्त्तवीर्य्यसुतनप्पी लक्ष्मीदेवंगे सुस्थिरवप्पंतिरे धात्रियं नयदिनेकायत्तमं माडिदं वरबाहाङ्कदिं (विरो) धिनृपरं वेंकोण्डनी वाणसा भरणं श्रीमुनिचन्द्रदेवन सुहृग्मा-तंगकण्ठीरवं [॥] आर्य्यं सचिवरोळतिचातुर्य्यं रट्टोर्व्वीप प्रतिष्ठाचार्यं कार्य्य-धुरन्धरतेयोळौदार्य्यंदोळादिंदधिकनी मुनिचन्द्रं [॥] आ मुनिचन्द्र देवमल मात्यरिळास्तुतरिष्टचिंतामणिक्रामराजतनयं करणाग्रणि शान्तिनाथनुद्दामपराक्रमं नेगळ्द कूण्डिय नागानुदारचावलक्ष्मी महिमावळम्बनसुखानुभवं मले मल्लिका-[...]॥] एने नेगळ्द मल्लिकार्ज्जुननतुपम दंशावतार मेन्तेने चतुराननन सभे-यल्लि पूर्व्वं मुनिसत्तकमदरोळत्रिमुनिवरनधिकं ॥ (आ) मुनि मुख्य कान्तेयनसूये पतिव्रते बोल्दु धर्म्ममं कामामनर्थमं परमसंपदमं पुरुषंगे माडे तत्का (मि) निगदरा हरिहराब्जभवर्स्सुतरत्रिनेत्रदिं सोमन जन्मवाग्नुद इन्तकुलविन्दुकुलं धरित्रियोळ् [॥] धरेगिन्दुवंशमेने विस्तरवं तळेदत्रिगोत्रदोळ् वरविद्यापरिणतरिळामरप्पलेवरोगेदरव-रोळतो रुद्रभट्टकवीन्द्रं [॥] तनय वंशजक्कळरुदिंगळोवुद्ध कवीश्वरप्प वाक्योन्नतियं सरस्वतियिनूर्प्पदिनेंटरोळं प्रमुखमं कन्नरनिंदवन्दु पडेदं दोरेमा कविताविळास दोन्दु-न्नतियोळ् प्रमुखद नेगर्त्तेयोळा विभु रुद्रभट्टनोळ् [॥] आ सुकवि रुद्रभट्टनिन्न सोमकुलाख्यनेनिसुव त्रिकुलं सामासिग कुलवेनिसिदुदन्ता सन्कुलदोळगे पुट्टिदमळि-चरित्रं ॥ अदरोळ् निब रामात्तरविदे सासिर पोंगे कोट्टदं चिडिय निवुदिनं पडेदं रुद्रटनेम्बी पडेमातं रुद्रभट्टमुर्व्वी (र्व्वी) जनदिं नुतसामासिग वंशदोळतुळनळप्पंलवरा-[...] भुवन स्तुतनेनिसि विभुतेवेत्तुन्नतिवडेदं विमलकीर्तियं कलिदेवं ॥ तदपत्यं वनिहट्टिनामपुरमुख्याष्टादशक्कं प्रमुखदिना श्रीधरनोप्पुवं तनुजनातगादनुधन्तु-खासपदनप्पं महदेवनावन सुपुत्रं श्रीधरं विक्रमोन्मदनप्पं महदेवनेम्त्र सुतनागल्

लीलेवेत्तिप्पिनं ।। गगनसरोवर पुरदवरिगमा सिरिपति गवागे वैरं होलवे रेगे सिरिपति तत्पुरवासिगळिं. यमपुरमनेमिन्दं रणमुखदोळ् ।। ननकं शत्रुशराळिगळ्गे गुरियागळ् तानदं केळ्दु भोंकेने देशान्तरमेद्दुं पोगि रविसंख्याब्दं वरं द्वीपदोळ्, धनमं सादिसि तन्दु भूपतिगे कोट्टा शत्रुवं कोपदुर्व्विनदिं गन्धगजंगळिं तुळिदु कोन्दं भायिदेवोत्तमं ।। मुं जमदग्निरामनखिलक्षितिनाथरनिप्पतोन्दुळ्सूमांबन गाळियन्ते तवे कोन्दुवोली महादेवनायकं कुंबरदिंदे वैरिकुलमं तवे कोन्दु पितंगे माडिदं तां अवदानविक्रियेगळं बनिहट्टि समुद्भवेश्वरं ।। शरणागतरं रक्षिप विरुदं धरे पोगळे- हगवदोळ् सीयल् कळ्करेनिप मातंगरनन्दुरियोळ् तां पोक्कु कायिद ना महादेवं ।। शरणागतरं रक्षिसि परबळमं गेय्दु मान्यरं मन्निसि दिक्करि वेरवायतियं विस्तरिंसिये महादेवनायकं धरेगेसेदं ।। एनिसिप्पी महदेवनायकन पुत्रर् श्रीधरं मल्लिकार्ज्जुननुं- चन्द्रनुमेम्ब मूवरोगेदर्त्तत्पुत्ररोळ् वंशवर्धनमुं पुण्ययशोवर्धनमुमागळ् तन्नोळा- मल्लिकार्जुन नात्मीय कुळाब्जषण्डवनमार्त्तण्डं करं रंचिपं ।। गुणजळदिं [illegible]बद वलुकणि बुध शिष्टेष्टजन मनोरथ चिंतामणि सामासिगवंशाग्रणियेने विभु मल्लि- कार्ज्जुनं रंजिसुवं ।। एने पंपुक्त्ते मलिदेवन पुण्यांगने पितृ द्विजाभरसंपूजनरते पतिहिते गौरी वनिते तदंगनेय कुलमनभिवर्ण्णिसुवे ।। मुनिससकदोळ् पेंपिगे नेलि- यिनिप्पं **वशिष्ठ**मुनिमुख्यं तन्मुनिगोत्रदोळुदयिसि **कोलार**नगरविभु **मादिराज** पुण्यचरित्रदोळेने **माळलदेवि** भुवनवन्दितेयादळ् । पतिहितवप्प चारुचरितं पति- भक्तियोळोंदिदा मनं पतियने वणिग्गेन्दु वचनं सति लक्षणविन्नु तन्नोळूर्जितवेने **केसिराज**न मांगने **माळलदेवि** गोत्रसन्नुते वरपुत्रपौत्रबहुसंततियिं धरेयोळ् चिरा- जिकुं ।। मनेयोळगेनुळ्ळडविल्लनुतं स्वयमर्थभूरियागुत्तिप्पंगनेयम्मळिज्ञदेविय विन- याम्भोनिधिय गुणदोळेन्तेणेयप्पर् ।। मनेयोळगुळ्ळुडं मडगे तत्पतिगं मनेभक्कळिग- वेळ्ळनितुवनिक्कला इदे केलं कडेयुं सुडेनल्के जीविपगेनेयरर्नें कुलांगने भरेन्देन- लक्कुमे **केसिराज**नंगने पतिभक्ते चारु गुणयुक्ते कुलंगने भूतळाग्रदोळ् ।। मनेगो वन्दरे बिट्टमरेनलोळयिंगोडि होगियडगुव समुखं तनगादडे नीवारेम्ब [illegible]यरि माळियब्बेगेन्तेणेयप्पर् ।। कुटिळे कुमार्गे कुत्सिते कुरूपि कुभाग्ये, कुशीले, जिह्व- लंपटे, शठे धूर्ते दुग्गुणि दुरन्विते दुर्ज्जने दुष्टे कष्टेयेम्ब दमटकार्त्तिस्सतियरे

गुणदोळ् सले माळियब्बेयुंगुटकेणेयागरेन्दोडितरांगनेयम्मुंवनांतराळदोळ् ॥ पुरुष-रमेळिद्दवं माळ्वरिदुं हिन्दिगे वगेव परं मायान्वरणदोळेसगुव सतियद्दोरेये हेळ् ओळियब्बेयोळ् कुत्सितेयर असवने गंगलक्के तलेमांगिलेगन्द्वने नोडली इलिंगो-सगेगे नोपिंगेंगडिगे वाडिन सन्तेगे वायिनक्के पोपेसकद्दे पाम्वगोळ् नेरेवरं कुल-नारियरेम्बुदे विचारिसे पतिभक्तिवेत्तेसेव **माळलदेवि**यनल्लदन्यरं । गाळुतनदिदे पुरुषरने विद्दवं माळ्पं दुच्चरित्रेयरं वाचाळेयरं कण्डघतति **माळलदेविय** गुणानु क्रयनदे केड्डुं ॥ पति वसदक्कुमिन्तुतमगेन्दु दुरीयघमं प्रयोगिप क्रितकेयरन्तयिन्दे परपत्तय कामळे पाण्डु गुल्मदिंद तिक्तषरागे विचळिसुतिप्पवरेन्त् कुलांगवनं पतिहिते माळियब्बेये कुलांगने वार्धिपरीत धात्रियोळ् कृतयुगचरितद सतिगुणवतिशयदिं तन्नोळिक्कुवेने नेगळ्द महासति **माळलदेवि** पतिवृते **मल्लिदेवन** सुवननि रंचि-सुतिप्पळ् ॥ वननुते **माळलदेवि**यननुपमगुणवतियनी महासतियं कण्डनितरोळ-मरकदीसेवनेय फलप्रातियेन्द्दे वण्णिपुदो । अत्रिमुनीन्द्रपत्नियनसूये पतिवृत-यिंदे लोकत्रयवेद्दं वाण्णिसे विरिंचेयनच्युतनं त्रिनेत्रनं पुत्ररेनळ्के पेत्तळेसत्रीयुगदोळ् पतिभक्ति तन्न चारित्र दिनत्रिगोत्रदोळगुण्डेने **माळलदेवी** रेविगळ् ॥ कुलवधुविन नडवळियोळ् कुळनुं पतिव्रतागुणदिंदं नेलसिक्कुमेम्बु-दिदु **माळलदेविय** चरितदिंदे धरेगतिविदितं ! वननि महापतिवृते वशिष्ठकुलो द्भवे गौरि **मल्लिकार्जुन**नभवान्श्रीपंकरुहषट्चरणं नितनग्रतानुजर्व्वनधिगमीरनप्प महदेवनुमा विभु **मादिराज**नुं वनिते विनूते माळलेयेनल् विभु **केशवराज**-नोप्पुवं ॥ वचन ॥ आपुण्यांगनेयर शिष्टकाम भोगंगळननुभविसुत्तं मल्लिकार्जुननुं मादिराजनुमेम्बीर्व्वप्पुत्ररं पडेयसवरीर्व्वरं श्रीरट्ट राज्यप्रतिष्ठाचार्यनुं अरिविरुदमण्ड-लिकवराजनुमप्प श्रीमद्राजगुरुगळ् **मुनिचन्द्र**देवरनोलगिसि कूण्डि मूरु सुसासिरद वळिय वाडं श्रीमद्राजगुरुगळ् **मुनिचन्द्र**देवराळ्के वाडं **सुगन्धवर्त्ति** हन्नेरडुमं ददाचेयिं प्रतिपालिसुत्तीमरसा कंपणद मोदलु बारं पट्टणं **सुगन्धवर्त्तिय** विळास-मेन्दडे ॥ होस्वोळलोल् विराजिसुव चूतवनं गिरसंकुळं फलं दुधुगिदनारि केरवन-वोप्पुवशोकननं शिवालयं मिसुप जिनेन्द्र गेहमेत्रिपिंतिवलन्दव शेषसौख्यदोन्नेसेदु सुगन्धवर्त्ति सले कूण्डि महीतळदोळ् विराजिकुं । पन्नीर्व्वंर्गाऊण्डुगळुन्तत सत्वप्रता-

प्रगुणगण निळयर्स्सनुत चरित कीर्ति महोन्नतरप्रतिमरा स्थळकधिपतिगळ् आ स्थल दोळ् ॥ आराधिपनभवनन सुरोरगखचरामरेन्द्रवन्दितपदपंकेरुहननर्थियिं कोलारद विभु केसिराजनमळचरितं । विदितं श्रीपर्व्वताधीश्वरन चरणमं काणली केसिराजं मुददिं नेसेदं घरेयोळ् ॥ सुतनादं मादिराजं गभळ चरितन्त भूतनाथं यशोरंजित रप्पयन्नस्तुतर्त्तप्रभु गोगे दरिळास्तुत्यरन्तय्नरोळ् सन्नुतनादं मादिराजं सेणमुवन्नर गंटळ्गे गाळं प्रतापोनंतनेन्दुर्व्वी जनं वर्णणेसि पेसेर्व्वडेदं तेनदोंदेळ्गेग्गिंदं ॥ शरणागतजनमं नित्तरिपेडेयोळ् वज्रपंजरं तानेने डोंकरमादिराज विभु तोडर्दर् डोंकिनिप्प बिरुदनिरदेत्तिसिदं ॥ इरे कोलारदोळा समानविभुपुगर्व्वेत्तिलोपार्त्तता तुरचेतम्मंरेवोक्कडन्तवरनादं कादु तानुप्रसंगरदोळ् सानुजनेयिद् वीरसिरियं पंचत्वमं पोर्द्दिं विस्तर देवानकऊण्मे दिव्यगतिवेत्तं घात्रि वाप्पेम्बिनं । आ मादिराजनग्रजे भूमिस्तुते विजियव्वेयनुजर महिमोद्दामभुमंनन्प्रतेयन्त माळ्केयिनधिकवागे नडेयिमुतिर्द्दळ् ॥ सले कोलारदोळ् प्रभुत्ववेसे गुं तेनामदोळ् मादिराजळ सत्पुत्रियन्त प्रभुत्वसहितं श्रीगौरियं पोण्मे मंगळतूर्य्यं विभु मल्लिकार्ज्जुन नोव्वेळिप त्रिविध्व्वे प्रभुत्वलताविस्तरयागे तां नेरपि चिन्तोत्साहमं ताळ्दिदळ् ॥ इन्तप्न विभवर्दि पेंपं तळेद महाप्रसिद्धवंशजे गौरीकान्ते निज कान्तेयेने चैरन्तनरोळ् मल्लिकार्ज्जुनं समविभवं ॥ आ दंपतिगळ् सुखदिनिरे ॥ पिन्त्येपार्त्तं तदीयप्रभु तेयेनिसुवष्टादशग्राममुं दौहित्रं तां मादिराजंगद इनमरे कोळारदोन्दु प्रभुत्वं पुत्रं श्रीगौरिगं मल्लपविभुगोगेदं केसिराजं लसच्चारित्रं श्रीशैलकन्या पति पदनखचन्द्रांशुचंचच्चकोरं ॥ सात्विकदादिनन्दे परमेश्वरनी गिरिजेशनेम्बुब तत्वविचारादेदे इदु नम्बद निश्चळभक्तियिद्दरे शान्तत्वमे रूपगोण्डु मुदमानविषाददोळेंददिर्प्पं शूरन्वदोळी घरावळयदोळ् विभुकेशवराजनोप्पुवं ॥ परक्तिक्कळिपदेयं परवधुविंगेन्तुवे इकमं माडदेयं हरचरणपरिणतान्तःकरणतेयिं केसिराजनें कृतकृत्तं ॥ एने नेगळ्द केसीराजन वनिते नुतागस्त्यगोत्रसंभवे पुरुषंगनुवशपोपल्लि तां रचिसुवनिवरोळं पिन्ते रोगादिगळ् तोसिडोदं भक्तिं वारें दिडवेनलभवं कूत्तु तत्पुत्र वर्ग्गं तुळं निश्चित विघ्ननिरिसिदनधिकं धात्रिगाश्चर्य्यमागळ् ॥ मत्तमा तीर्थयात्रेयोळ् ॥ गाडं परिच्चर्य्यमं मुददे माडम्बाय्दव्दोगें तन्ननेरं वाद्योंद गुडि बप्पवर्गें काळ-

मासिथन्दादो डोय्कमे सावन्तवर्गंगळागदेनिपी वीरवृतं मल्लिकार्ज्जुनदेवं दृप्तेगेय्यली प्रभुगे सन्नुं केशवंगुर्व्वीयोळ् ॥ इन्तिवादियागिरनन्तवीरवृतंगळिं श्री-शैळेद मल्लिकार्ज्जुन देवरं मूरुसूळ् दर्शनं माडि तन्नीतियिं पर्व्वतलिंगमं तन्दु कूण्डि मूल्लुसासिरद वलिय कपणं सुगन्धवर्त्ति इन्नेरदर मोदळ वाडं श्रीमद्राजगुरुगळ् मुनिचन्द्र देवराळ्केवाडं पट्टणं सुगन्धवर्त्तिय होळत्रोळम मागरकेरेयसि तन्न तन्दे मल्लिकार्ज्जुन पेसरोळ् श्रीमल्लिनाथदेवर प्रतिष्ठेयं माडि ॥ स्वस्ति समधिगत पंचमहाशब्द महामण्डलेश्वरं सत्तनुप्पुरवराधीश्वरं गोवळीतूर्य्यनिर्घोषणं रट्टकुळ भूषणं सिंधूरलाञ्छनं शशिविशदयशोलाञ्छनं सुवर्णं गुरुडध्वजं विदग्धमुग्धांगनाम-करध्वजं वैरिवळवीरवृकोदरं परनारिसहोदरं मण्डलिकगण्डतळप्रहारि उद्दण्डरिपुमद-निवारि साहसोत्तुगं बोप्पनसिंग नामादि समस्तप्रशस्तिसहितं श्रीमन्महामण्डलेश्वरं लक्ष्मीदेवरसर् वेणुग्रामेय नेले वीडिनळ् सुखसंकथाविनोददिंदनवरतं राज्यं गे-य्युत्तमिरे शकवर्षं ११५१ नेय सर्वधारि संवत्सरद आषाढदमवासे सोम-वारदंदिन सर्व्वग्रासिसूर्य्य ग्रहण दुत्तमतिथियोळा मल्लिनाथ देवर अङ्गभोगरंग-भोगक्कं खण्डस्फुटितजीर्णोद्धारक्कं श्रीमद्राजगुरुगळ् मुनिचन्द्र देवर कोट्टकेय्यन वर नियामदिंदा सुगन्धवर्त्तिय हेनीर्वर गाऊण्डगळ् बूर्प पडुवणं होळनोळ् मुळगुन्दवळिळय होळवेरेय हन्निमत्तर.मान्यद होलवेरेयिं तेकळ् हमुडिय दारियि बडगळ् कडिमण्ण कोळिनलळेन्दु सर्व्वसमस्यमागि कोट्ट केयि कंबवरनूरु ६००[illegible]सिरिवगिळिं पडुवळ् राजवीदियिं पडुवण केरियोळ् राजहस्तद सेव्कय्यगळ इप्पत्तोन्दु कैनीळद मनेय कोट्टर ॥ मत्तमा हीनीर्व्वर गावुण्डगळ् मुख्य समस्त-प्रजेगळ् देवर नित्योपहारक्केन्दु चन्द्रार्कस्थायियागि मेटेगोळगव कोट्टर् ॥ मत्तमा-इन्नीर्व्वर गाऊण्डगळ् कौदिय मादिगाऊण्डनुं पंचमठतपोधनरुं एण्डहिट्टु सहित विद्द सभेय समक्षदलि कडसेय नागगाऊण्डनु मोदलूर गौडुवान्यदोळगे तन्न गौडु-मान्यं कडळेयवळनहग्ळहसुगेयत्तिमा गौडुमान्यद कोलिनलळेदु सर्व्वसमस्यमागि कोट्टकेयि कम्बविन्नूरु २००, [॥] मत्तं ॥ स्वस्ति समस्त भुवनविख्यात पंचशत-वीरशासनलब्धानेकगुणगणाळंकृतसत्यशौचाचारचारुचारित्रनयविनयविज्ञानवीरावता-रवीरत्रणम्बुसभयधर्म्मप्रतिपाळकरप्प सुगन्धवर्त्तिय हनीर्व्वगौऊण्डुगळ् मुख्य

स्थळसमस्त नरवर मुम्मुरिदंडंगळ् सन्तेय देवस महासभेयागिदुं तम्मोळैक्यमतवागि आ मल्लिनाथदेवरिगे बिट्ट आयवेन्तेन्दडे [।] एळेय हेलिंगेनूरेळेय कोट्टर् होत्त-लिंग येव्वत्तेलेय कोट्टर् [।] अरो गेयुं सतेयोळगेयुं माळुव धान्यवर्गदलुं भत्तं वसरदलुं सट्टुगवत्तवकोट्टर् [।] पसारकरडकेय कोट्टर् [।] अल्ल व्वेल्ल अरिसिन मोदलागि किरिकुळवेल्लवं पसारक्कोन्दोन्दु कोट्टर् [।] हत्तिय पसारक्के हिडिचत्तिय कोट्टर् [।] मत्तमा देवर नन्दादीविगेगेय्वत्तोक्कळ् गाणके सोहिगण्णेय कोट्टर् [।] बेऊरिन्द बन्ध माळुव एण्णेय हाडकेयद्दैण्णेय कोट्टर् आस्थळद अयसावन्तर् ।

देवरग्वणिय बिन्दिगेगे आवलेगळन कोट्टर । मत्तवन्यूर्व्वर वाडुकाय मावुव बल्लगेरडु सूडु हेचिंगे नालक्कु काय कोट्टर [।] बोव कट्ट तन्दु मारुव वाडुकायिगे तिप्पे सुंकव कोट्टर ॥ मत्तमा देवर्गे एळरावेव हंनीर्व्वर गावुण्डगळ् तम्मूर तेंकण होलनोळ् सवषवत्तिय तम्म होलन सीमेयोळ् सिरिवारिंगे होद हेव्वेट्टेयिं मूडळ कद्दिगुरुहल्लारं बडगळ् नविलगुन्द गोलिनलळेदु सर्व्व समस्यमागि कोट्ट केयि मत्तनाल्कु ४ अयुग्यगल हंनिकैनीळद मनेय कोट्टर । मत्तं बेट्टगुरद मेनेय सिंदर भैलेय नायकनुं अ स्थलदलुवर्गगौऊण्डु गळुं तम्मूरि तेंकण होळनोळ कद्दिगुरुहव्ळदिं तेकल् नविलुण्द गोलिनलळेदु सर्व्वमसमस्यमागि कोट्ट केयि मत्तनाल्कु ४ अयिगय्यगळ हंनिकैनीळद मनेय कोट्टर ॥ मत्तमा देवर्गे हूलिय **माणिक्य तीर्थद** बसदियाचार्य **प्रभाचन्द्र सिद्धान्तिदेवर** सहधर्म्मिगळप्प **शुभचन्द्रसिद्धान्तिदेवरुं** या **प्रभाचन्द्र सिद्धान्तिदेवर** शिष्यरप्प इन्द्रकीर्ति-देवर श्रीधरदेवर मुख्यवा संघसमुदायंगळुं आ माणिक्य तीर्थद बसदिय स्थलं हिरिय कुंवियल् आल्लियकवर्गगावुण्डगळ् सहितविद्दुं आ ऊरिं तेकददेसेयल नल्लियचट्ट गौडन बळबोळगे नेमणन केयिं तेकल् उरुगोळनहोल सीमेयं मूडल् नविल्गुन्द गोलिनलळेदु सर्व्वसमस्यमागि कोट्ट केयि मत्तनाल्कु ४ अमिगय्यगळ हन्निकै-नीळद मनेय कोट्टर । मत्तमा देवर्गे श्रीमदनादिय पिरियग्रहारं हसुर्जियंर्न्नूर्म्महाजनं-गळुं हन्नीर्व्वर्गगावुण्डुगळुं तम्मूर तेकण घेरसगेरियिं तेंकल् **समन्धवत्तिय** सबलुवलद होलवेरेयिं पडुवल् तम्म बासिगवाडद पडुवण हेब्बसुगेय स्थळदोळगे सोगळद दर्भ... बोललळेदु सर्व्वसमस्यमागि कोट्ट केयि कंबं मून्नूरु ३०० [॥]

मर्त्तं श्रीमुनीन्द्रदेवर आयद चट्टिमरगर विन्नपदिं गाणायदायकारदह्लि सोमवारं प्रति वोन्दु सोल्लगे एण्णेयं कोट्टर ।

इन्तिनितुमना कोलारद केसिराजं सुगन्धवर्त्तिय नागरकेरेय श्रीमल्लि-नाथदेवरिगे वृत्तियं पडेदु आकेरेय कट्टिपि सुचलु मारवेयनिट्टु तन्नाराधिसुव माल्लेय शुद्ध शैवमार्गिळप्प तन्न गुरु मागिगळ शिष्यर् वामशक्तिनामाभिधेयरप्प चल्लिटगेय श्रीमूलस्थानदाचार्य्यलिंगर्य्यंगळिगी स्थानमं धारापूर्व्वकं कोट्टनवर वंशा-नुकथनमेन्तेने ॥ आ मुनि दूर्व्वासान्वयनेमातनुपहतनेन्दु दिव्यम्निविदिदा वामशक्ति-वृतीशं भूमिस्तुतनेनिसि नयसि पेसवंसेदेसेदं तत्तनयर्द्देवशिववरदात्तयशस्सकलशास्त्र संपन्नस्सद्वृत्तस्सुबोपार्जितवृत्ति समाव ल्वीराजिसिदरुर्व्वरेयोळ् तदपत्यलिंग शिव-व्विदितशिवा गमररतक्वर्यं गुणगणनिलयस्सदमळ चरित श्रीशैळदमवनं भक्तियुक्त-वादाधिलुवर ॥ सिगननाराधिपर्ढ श्रीमल्लिनाथपदसरसिजदोळ् भृंगनवोलेसेवनेन्दु मनंगोण्डा केसीराजन वर्णिसिदनिचं । ततशासनार्थवप्पी क्षितियं विमवोनंति संतत-वोद्धिोदित वक्कुं प्रतिपाळिसलोल्लदक्किनसुगतिगिळिगुं ॥ गये वारणासि कुरु-भूमि येनिप तीर्थंगगळल्लि गोकुलयं तन्नय कुलमं ब्रह्मणरं द्येगिडे कोन्दनितु पापमिदनळियलोडं ॥

स्वदत्तां परदत्तां वा यो हरेत वसुन्धरां ।
षष्टिर्व्वर्षसहस्राणि विष्ठायां जायते कृमिः ॥

तंनित्तुद मेणन्यकुलोन्नत रित्तुट्टु मनवनियं धर्म्मात्मळं मन्निसदळिदा मनुचं भुन्नं क्रिमियागि वळिके. नरककिळिगुं ॥

मद्वंशजा परमहीपतिवंशजा वा पापादपेतमनसा भुवि भावि भूपाः ।
ये पालयंति मम धर्म्ममिदं समग्रं तेषां मया विरचितांजलिरेष मूर्ध्नि ॥

वानोसगिसिद नृपकुलदा नृपरकम्य भूपरकी धर्म्मक्केनुमनळिवं तारदडा नृप-रिगविन्दे सुगिन्द कर्य्यान्दिर्प्पे इदा केसिराजन वचन ॥ एसेवी शासनमं विरसि वरेदं पूर्व्वं जन्मदोळ् सुकृतमनर्ज्जिसि केसिराजविभुविन सिसुवेनिसिद मादिराज-नार्थिमुगंतदिं ॥ ई धर्म्ममं सुगंधवर्त्तिय हेनीर्व्वर्म्माळिण्डुगळुं प्रतिपाळिसुवर् ॥]

[*JB, X, p. 176-179, a; p. 260-272, t.; p. 273-286, tr.* (Ins. No. 7.)]

४७१-४७२

पर्वत आबू—संस्कृत

[सं० १२८७=१२३० ई०]

श्वेताम्बर सम्प्रदायके लेख

[EI,VIII, No 21, No 1. f.-p., t. aud tr.]

४७३-४७४

पर्वत आबू—संस्कृत

[सं० १२८८=१२३१ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[EI, VIII, No 21, No 12, t.
and
[EI, VIII, No 21, No 4o-11 and 13-18, t.]

४७५

श्रवणबेलगोला;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[वर्ष खर = शक ११५३ = १२३१ ई० (कीकहौनं)]

[जैन शिलालेख संग्रह, प्रथम भाग]

४७६

गिरनार;—संस्कृत।

[सं० १२८८ = १२३२ ई०].

श्वेताम्बर सम्प्रदायका लेख।

[Revised Lists ant. rem: Bombay (ASI, XIV), p. 328-331, No. 1, t, and tr.]

कलि-धर्म्म-नृपतिगं बा-।
-चल-देविगवुदित-भद्र-लक्षण-वक्षस्-।
-स्थळकनिरुङ्गोळ-धारा -।
तिळकं नळ-नहुष-भरत-चरितं नेगळ्दम् ॥
हरि गोवर्द्धन-गोत्रमं दशमुखं रुद्राद्रियं राम-कि -।
ङ्करगाचळ-कोटियं रविसुतं तेर्-गालियं पूण्डु दु -।
र्द्धर-संरम्भदिनन्दु मेट्टि किळे नोन्दायासविन्दारितु -।
व्वैरेगी-दक्षिण-बाहु-सङ्गदिनिरुङ्गोळ-क्षमापाळन ॥
कुळिकन लवलविके लया -।
नळनुरुवणि सिडिल सडगरं मिल्तुविन -।
गळिके जवनुज्जगं मार्प्प -।
ओळेवुदिरुङ्गोलनाजिगेत्तिद बाळोळ् ॥

अन्तु नेगळ्द निगलंक-मल्लं परनारी-सहोदरनरुवत्तनाल्वर् म्मण्डळिकर तले-गोण्ड मण्ड वुद्दण्ड-मण्डळिक-दानव-मुरान्तकं रोद्द गोवं बाण्टर बावं खड्ग-सहदेवं देव-देव-सदाशिवपादाब्ज-सेवा-समुन्मिषत्-प्रभाव **निरुङ्गोळ-देवं** राज्यं गेय्यु-त्तमिरे तत्पाद-पद्मोपजीवियप्प **गङ्गेय-नायकङ्गं चामाङ्ग** नेगवुद्भविसि **गङ्गेयन मारेयं** श्री-**मूल-संघद देशिय-गणद कोण्डकुन्दान्वदय पुस्तक-गच्छद** वाणद-वळिय श्री- **वीरनन्दि-सिद्धान्त-चक्रवर्त्तिगळ** शिष्यराद मेदिनीसिद्धर **पद्मप्रभ-मलधारि-देवर** चरण-परिचर्य्येयिं पर्य्याप्त-कामितराद **नेमि-पण्डित**-रिनङ्गीकृत-व्रतनादम् । आगि ॥

काळाञ्जनवेम्बुदिरुङ् -।
गळन गिरि-दुर्ग्गवन्तदभ्रङ्कषदा -।
भीळतर-चूळवदरुत् -।
ताळतेयने नोडि घात्रि **निडुगल्लेन्दुम्** ॥
आ-कुस्कीळद बदर-त -।

टाकट दांचण-शिलाग्रदोळ् **पार्श्व-जिन** -।
ब्याकोशि-वसतियं प्रिय -।
लोकं गङ्गेयन मारनिदनेच्चिसिदम् ॥
इदु **जोगवट्टिगेय बस** -।
दि दला-चन्द्रार्कवि सनातनविं सल् -।
वुदु पञ्च-महा-शब्ददद् ।
इदर्के पालिसुवरिन्नसङ्ख्यातर्कळ् ॥

स्वस्ति निरस्ततम-कमठानेक-वैकुर्व्वाणिनप्प पार्श्व-जिनेश्वरन दैनन्दिन-सपर्य्या-कार्य्यकं महाभिषेककं चातुर्व्वर्ण्ण-दानकं **गङ्गेयन मारेय**नुं नारि **वाचलेयुवा**-चन्द्र-तारमिनिचने सलुपुदेन्दो **डिरुङ्गोळ-देवं** धारा-पूर्व्वकविच दत्ति (दानकी विगत तथा वे ही अन्तिम वाक्य और श्लोक) ।

(प्रथम लेख)

[स्वस्ति । (उक्त मिति को), नेमि-पण्डितके पुत्रने इस वसदि की भूमि प्राप्त की ।]

(द्वितीय लेख)

जिन शासनकी प्रशंसा ।

स्वस्ति । चोळ राजाओंमें,—मङ्गि-नृपका पुत्र वप्पि-नृप, (और) गोविन्दरका पुत्र इरुङ्गोळ हुआ, जिसके भोग-नृपका जन्म हुआ था, जिसके वम्म-नृप हुआ । जिससे और वाचल-देवीसे **इरुङ्गोळ** (प्रशंसा सहित) उत्पन्न हुआ था ।

जब (अपने पदों सहित), इरुङ्गोळ-देव राज्य कर रहा था:—तत्पादपद्मोपजीवी **गङ्गेयन-मारेय** गङ्गेय-नायक और चामासे उत्पन्न हुआ था । इसने नेमि-पण्डितसे व्रत लिये थे । ने० प० को पद्मप्रभ-मलधारि-देवसे मनोमिलषित अर्थकी प्राप्ति हुई थी । प० म० देव श्रीमूलसंघ, देशिय-गण, कोण्डकुन्दान्वय, पुस्तक-गच्छ तथा वाणद-वलियके वीरनन्दि-सिद्धान्त-चक्रवर्तीके शिष्य थे ।

काळाञ्जन इरुङ्गोळके पहाड़ी किलेका नाम था। यह देखकर कि इसकी चोटियाँ बहुत ऊँची हैं, लोगोंने इसका नाम निडुगळ् रख दिया। उस पर्वतके बदर तालाबके दक्षिणकी तरफ एक चट्टानके सिरेपर गङ्गेयन मारने पार्श्व-जिनं, वसति खड़ी की थी। इसीको 'जोगवट्टिगे बसदि' भी कहते थे।

पार्श्वनाथ-जिनेशकी दैनिक पूजा, महाभिषेक करनेके लिये, तथा चतुवर्णको आहार दान देनेके लिये गङ्गेयन मारेय तथा उसकी स्त्री बाचलेने इरुङ्गुल-देवसे आ-चन्द्र-सूर्य-स्थायी दान करनेके लिये प्रार्थना की और उसने तब यह (उक्त) भूमियोंका दान किया; तथा गङ्गेयनमारेयनहल्लिके कुछ किसानाने मिलकर बहुतसे (उक्त) अखरोट और पान प्रति बोझपर दिये; पेलिके किसानोंने भी कोल्हुओंसे तेल दिया। वे ही अन्तिम श्लोक।]

[EC, XII, Pavagada tl., No. 51 and 52]

४७९

गिरनार;—संस्कृत।

[सं० १२८८-१२८९ = ११३२ ई०]

श्वेताम्बर सम्प्रदायका लेख।

[Revised List ant. rem. Bombay (ASI, XVI), p. 361, No. 34, t. and tr.]

४८०

पर्वत आबू;—संस्कृत।

[सं० १२९० = १२३२ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[EI, VIII, No. 21, No. 19-23, t.]

४८१

एलूरा;—संस्कृत ।

[शक ११५६ = १२३५ ई०]

[फाल्गुण सुध त्रीतिया[1] बुधे]

[१] स्वस्तिश्री शाके ११५६ जयसवद्वरे (संवत्सरे)
श्रीर्द्धना (श्रीयर्द्धना) पुर । जमा — चनि राणगिः ।
तत्पुत्रो म्हालुगिः स्वर्ण्णा वल्लमो जगतोप्यभूत् ॥१॥
ताभ्यं (भ्यां) बभूवुश्चत्व (त्वा) रः पुत्राश्चक्रेश्वरादयः ।
मुख्यश्चक्रेश्वरस्तेषु दा[न]धर्मगुणोत्तरः ॥२॥

[२] चैत्यं श्रीपार्श्वनाथस्य गिरौ वा (चा) रणसेविते ।
चक्रेश्वरोसृजद्दानादधृ (ना घृ ?) ताहुतीं च[2] कर्मणां ॥३॥
बहूनि विंबानि जिनेश्वराणं (णां) महाति (हान्ति) तेनैव विरच्य सर्वतः ।
श्रीचारणाद्रिर्गमितः सुतीर्थतां कैलासभूभृद्भरतेन यद्वत् ॥४॥

[३] धर्म्मैकमूर्तिः स्थिरशुद्धदृष्टि द्ध्योसती (?)[3] वल्लमकल्पवृक्षः ।
उत्पद्यते निर्मलधर्मपालश्चक्रेश्वरः पञ्चमचक्रपाणिः ॥५॥
शुभं भवतु ॥
फाल्गुण त्रितीयां बुधे

अनुवादः—स्वस्ति श्री ! शक सं० ११५६, जयसंवत्सरमें । श्री (व) र्द्धना-पुरमें राणुगिने जन्म लिया था, उसका पुत्र म्हा (गा) लुगि था जिसकी पत्नी स्वर्ण्णा थी और जो जगत्को भी प्यारा था ।

२. उनके चक्रेश्वरादिक चार पुत्र हुए । इनमें चक्रेश्वर मुख्य था, वह दानधर्म गुणमें सबसे आगे था ।

---

१. तृतीया । २. भगवानलाल इसको ० छात्रीलता हंत्रवि० पढ़ते हैं ।
३. भगवानलाल इन्द्रजी इसे 'दोनो सती' पढ़ते हैं ।

३. चारणोंसे सेवित इस पर्वतपर उसने श्री पार्श्वनाथका बिम्ब बनवाया, (प्रतिष्ठित किया) और इस कृत्यसे उसके कर्मोंकी निर्जरा हुई।

४. जिस तरह भरतने कैलास पर्वतको पवित्र तीर्थ बना दिया था, उसी तरह उसने इस पर्वतपर जिनेश्वरोंके विशाल-विशाल बिम्बोंको बनवाकर इसे एक सुतीर्थके रूपमें परिवर्तित कर दिया था।

५. धर्म्मैकमूर्ति, स्थिरशुद्धदृष्टि, दयावान, सतीवल्लभ (अपनी पत्नीके प्रति एकनिष्ठ), दानादि गुणोंसे कल्पवृक्षके समान चक्रेश्वर निर्मलधर्मका रक्षक बन जाता है, पाँचवाँ वासुदेव। शुभ हो। फाल्गुन ३, बुधवार।

[Ins. Cave-tamples of western India, p. 99-100, t. and tr.]

४८२

पर्वत आबू ;—संस्कृत।

[सं० १२९३ = १२३६ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[EI, VIII, No. 21, Nos 24-31, t.]

४८३

दिलमाल (Dilmal);—संस्कृत तथा गुजराती।

[सं० १[२]९५ (?) = १२३८ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[EI, II, No. 5, No. 4, (p. 26), t. and tr.]

४८४

हेरेकेरी;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक ११६१ = १२३९ ई०]

[उसी बस्तिके दक्षिणके समाधि-पाषाणपर]

श्रीमत्-परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम्॥

स्वस्ति श्रीमतु कुमार-पण्डितर गुड्डि पेकम-सेट्टिय हेण्डतिं गुण-गण सम्पन्ने शीलवतियप्प मल्लव्वे शक-वर्ष ११६१ नेय विकारि-संवत्सरद् मार्ग्गशिर-मास बहुळ-पक्षद त्रयोदशि बृहस्पतिवारदन्दु दान-धर्म्म-परोपकार-निरतेयागि समाधि-विधियिं सुर-लोक-प्राप्तेयादळु केलसे सोवोजन माडिद।

[कुमार-पण्डितकी गृहस्थ शिष्या, पेकन-सेट्टिकी पत्नी, मल्लव्वेके जैन-विधिसे किये गये समाधिमरणका स्मारक। केलसे सामोजने इसको बनवाया।]

[EC, VIII, Sagar, tl., No. 161.]

४८५

कोरग्राम;—संस्कृत।

[सं० १२९६ = १२४० ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[EI, I, No. XVII (L.,118-119), t. and tr.]

४८६

पर्वत आबू;—संस्कृत।

[सं० १२९७ = १२४१ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[EI, VIII, No. 21, No. 32, t.]

४८७

रोहो;—संस्कृत तथा गुजराती।

[सं० १२९९ = १२४२ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[EI, II, No. v, No. 14 (p. 29), t. and tr.]

४८८

सियालबेट;—संस्कृत।

[सं० १३०० = १२४३ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[ASI, XVI, p. 253-254, t.]

४८९

हेरेकेरी;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक ११६५ = १२४३ ई०]

[उसी बस्तिके उत्तरकी ओरके समाधि-पाषाणपर]

श्रीमत्पवित्रमकलङ्कमनन्तकल्पम्
स्वायम्भुवं सकल-मङ्गळ-वस्तु-मुख्यम्।
नित्योत्सवं मणिमयं निलयं जिनानाम्
त्रैलोक्यभूषणमहं शरणं प्रपद्ये ॥

स्वस्ति श्रीमत्तु शुभकीर्त्ति-पण्डित-देवर गुड्डि पेकम-सेट्टिय मगळु कामब्बे सकळ-गुण-गण-सम्पन्ने श्रीस्वति शाक वर्ष ११६५ नेय शुभकृतु संवत्सरद

वैशाख-मास-शुक्ल-पक्ष-विदिगे-बृहस्पतिवारदन्दु आहाराभय-भैषज्य-शास्त्र-दान-निरतेयागि सन्यसन-समाधि-विधियिं सुरलोक-प्राप्तेयादळु ॥ **सोवोजन** बेस

[शुभकीर्त्ति-पण्डित-देवकी शिष्या, पेकम-सेट्टिकी पुत्री, कामव्वेका भी वैसा ही स्मारक। सोवोजका कार्य्य।]

[EC, VIII, Sagar tl., No. 162.]

४९०

कडकोल;—कन्नड़।

[शक ११६८ = १२४६ ई०]

[१] स्वस्ति श्रीमत्-यादव-**रायनारायण** बु (भु)जबल-प्र-
[२] ताप-चक्रवर्त्ति **सिंहणदेव** [र] वर्ष ३७ परा-
[३] **भव-संवत्सरद** मार्ग्गशिर सु (शु)ब(द्ध) पंचमी ब्रि(बृ)ह-
[४] स्पति वारदलु **सूरस्थगणद मूलसंघद श्री-नन्दि-**
[५] **भट्टारकदेवर** गुड्ड **कडकुळद सावन्त-बो-**
[६] **प्पगौड** हेग्गडे **सोमय्यनु** समादि (धि) ई (यि) म्
[७] मुडिपि स्वर्ग-प्रातनाद [नु] [।]
मंगळ-महा-श्री [॥]

अनुवाद:—स्वस्ति! यादवोंमेंसे श्रीवाले रायनारायण भुजबल-प्रताप-चक्रवर्ती **सिंहणदेव**के ३७वें वर्ष, पराभव-संवत्सरके मार्गशिर (महीने) के शुक्लपक्षकी पंचमी, बृहस्पतिवारको सूरस्थगणके मूलसंघके श्रीनन्दिभट्टारक देवके शिष्य या अनुयायी; तथा कडकुळ[1] के सावन्त-बोप्पगौडके 'हेग्गडे'[2] **सोमय्य**ने पूर्ण इन्द्रिय-विरतिकी हालतमें मरणकर स्वर्ग प्राप्त किया। मंगल-महा-श्री।

[IA, XII, p. 100, No. 1. t. and tr.]

---

१. दूसरे शिलालेखोंमें यही नाम 'कडकोळ' पाया जाता है। २. मैनेजर।

४९१

ऊद्रि;—कन्नड़ भग्न ।

[वर्ष दुन्दुभि (?)

[ऊद्रिमें, वन-शङ्करी-मन्दिरके मार्गके एक पाषाणपर]

(प्रथम अंश मिट गया है)··· गतिनयनेश-संखेय **शकाब्दद दुन्दुभि-नाम-संवत्सर**···वर-ज्येष्ठमासद सितेतर-पक्षदोळ् द्वितीय-सन्नुतमर्क्कवार मनुव ···तां वसवले लोक-विश्रुते···दळ् समाधि-र्विधियिन्दमर्मानेन्द्र-निवास-सौख्यमम् ॥ **नन्दि-देव**-पद-युग-सरसिरुहद पञ्च-पद-विनुतान्तःकरणे-महादेव-विभु-विधु वर-**सूरस्थगणे** सुगतिय नडे पडेदळु ॥

सुररोदद्दु पुष्प-वृष्टिय-।
नेरदागळे सुरिये देव-दुन्दुभि-रवमम्- ।
वरदोलेसेयल्के वसवले ।
सुर-लोकवोय्ददळु महोत्सवदिन्दम् ॥

नमो वीतराग ॥

[लेख स्पष्ट है । इसमें भी समाधिमरण धारणकर सुगति-प्राप्तिका उल्लेख है ।]

[EC, VIII, Sorab tl., No, 142.]

४९२

श्रवणवेलगोला—कन्नड़ ।

[वर्ष पराभव = १२८६ ई० (लु० राइस०)]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

४६३

गिरनार—संस्कृत।

[सं० १३०५=१२४८ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[Revised Lists ant. rem. Bombay (ASI, XVI), p. 358, No. 23, t. and tr.]

४६४

हुम्मच;—कन्नड़—भग्न।

[शक ११७०=१२४८ ई०]

[पद्मावती मन्दिर में, प्राङ्गण में दूसरे पाषाण पर]

भद्रं भूयाज्जिनेन्द्रस्य शासनायाघ-नाशिने ॥

स्वस्ति श्रीमत् स (श)क-वर्ष ११७० नेय प्लवंग-संवत्सरद् पुष्य-शुद्ध-पञ्चमी-बृहस्पतिवारदन्दु श्रीमतु ते ... ... सोमयन मग ... डे वेगाडे-व ... ... वतेयन ... दलिय समुदायमं ... मं करदु समस्त ... ग-लेविवनुमागि अवरोपगमं माडिकोण्डु समाधि-विधियिं मुडुपि सुर-लोक-प्राप्तनाद मङ्गळ महा श्री श्री

[सोमयके पुत्र ... ... डे-वेगाडेके लिये एक समाधिमरणपूर्वक सुरलोक-प्राप्तिका उल्लेख है।]

[EC, VIII, Nagar tl., No. 50]

४६५

मलालकेरे;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक ११७०=१२४८ ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

४९६

हीरेहल्लि;—संस्कृत और कन्नड—भग्न ।

[शक ११७० = १२४८ ई०]

[हीरेहल्लिमें, मल्लेश्वर मन्दिर की दक्षिणी दीवालके एक पाषाण पर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

नमोऽस्तु ॥

श्रीमत्-**पोय्सळ-वंश**दल्लि **विनयादित्या**ख्यनादं यशः- ।
प्रेमं तन्नृप-पुत्रनादनेरेयङ्गोर्व्वीश्वरं तत्सुतम् ।
भूमिपाळक-मौळि-लाळित-पदं श्री-**विष्णु**-भूपाळनुद्- ।
दाम-स्व-क्रम-विक्रमोर्जित-जय-भ्राजिष्णु जिष्णूपमम् ॥
मलेयेल्लं वसमाय्तदोन्दे तळकाडु कोयट्टूर् कोङ्गु नं- ।
गळि काञ्ची-पुरी गङ्गवाडि पेसर्वेत्तुच्चङ्गि वळ्ळारे बेळ्- ।
वल-नाडा-राचनूर्मुदुगनूर्व्वल्लूरिवं कोण्ड तोळ् ।
वलदिं पोल्ववरारो पेळ् भुज-बळ-भ्राजिष्णुवं विष्णुवम् ॥
आ-**विष्णुवर्द्धन**ङ्गम् ।
भावोद्भव-राज्य-लक्ष्मियेनिसिद लक्ष्मा- ।
देविगमुद्भवसिदिनव- ।
नी-विश्रुत-**नारसिंह**नाहव-सिंहम् ॥
आ-त्रिभुवन पट्ट-महा- ।
देवि मही-देवि विदित-यादव-लक्ष्मी- ।
देवि **जय-देवियेचल**- ।
देवि जगत्ख्याते सीतेगेणे गुण-गणदिम् ॥

आ-नरसिंह-देवंगं पट्ट-महा-देवियेनिप्पेचल-देविगम् ।
सकल-कला-परिपूर्ण्णं ।
सकलोर्व्वी-नयन-सुखदनकलङ्कं वान् ।
अकुटिळपूर्व्व-नव-सी- ।
तकरं बल्लाळ-देवनुदयङ्गेय्दन् ॥
चोळम्मुचिरे पल्लेगळ्-वरिलेकं कोळ्पोय्दे तां मोदनेम्व् ।
आळायं वरे साल्ददोन्दु मोळनं मेल्-डे ··· उच्चंगियुं ।
पेळासाप्पवदादुदेन्दु दिविज ··· घर वि. ये व- ।
ल्लाळाळ्दं गिरिदुर्ग-मल्ल-वेवरं बल्लाल-भूपालकम् ॥
सानिवारदन्दे पाण्ड्या- ।
वनिपन सप्ताङ्गमेय्दे सिद्धिसिदुदरिन् ।
सानिवार-सिद्धि-वेसरं ।
जनपति बल्लाल-देवनेलेदिरे तळेदम् ॥

स्वस्ति समधिगत-पञ्च-महा-शब्द महा-मण्डलेश्वरम् । द्वारावती-पुरवराधीश्वरन् । त्रिभुवनमल्ल तळकाडु-कोंगु-नङ्गलि-गंगवाडि-नोळम्ववाडि-वनवसे-हुलिगेरे-हानुङ्गल्-गोंड भुजबळ वीरगङ्गनसहाय-शूर सनिवार-सिद्धि गिरि-दुर्ग-मल्ल चलदङ्क-राम निश्शङ्क-प्रताप होय्सळ-वीर-बल्लाळ-देवर् दोरसमुद्रद नेलेवीडिनलि सुख-संकथा-विनोददिं पृथ्वीराज्यं गेय्युत्तमिरे ।

वृ ॥ मले-नाडन् तुळु-नाडनमाड वयल्-नाडं लवचोड-मण्-
डलमं पेर्द्दोरे मेरेयागे वडगल् श्री-विष्ण-भूपङ्गे भू -।
तलनं साधिसि कोट्टु माण्डु रणदोळ् मारन्तरं कोन्द दोर्-
व्वळदिं द्रोह-घरट्टनेन्दु पेसर्व्वेत्तं बोप्प-दण्डाधिपम् ॥

श्रीमन्महाप्रधानं हिरिय-दण्डनायकं द्रोह-घरट्ट-बोप्प-देवं आसन्दि-नाड कोण्डलियं तन्न हेसरिं द्रोहघरट्ट-चतुर्व्वेदिमङ्गलमेन्दु पेसरनिट्टु भुवन-वीरावतार-नेम्व तन्नपेसर्गनुरूपमप्पन्तत्यतिश्वरं मरणवागिं सर्व्व-नमस्यवागि बिट्टना-महाग्रहारद अशेष-महाजनङ्गळुम् ।

कौण्डलिय माचनं भू -
मण्डल-विदितं समस्त-शास्त्र-विचारा -।
खण्डित-मतिमद्-ब्राह्मण -।
मण्डलि-सरसीज-खण्ड-चण्डांशु-निभं ॥
भूतेय-नायकमुर्व्वी -।
ख्यातं कटकैक-रत्न-शक्त-तळारम् ।
भूतल-विदितं तत्तनु -।
जातं बल्लाळ-नृप-कुमारं मारम् ।

व ॥ इन्तिनिवरविर्द्दु तम्मूरिन्दं बडगण चक्कवेगेरेयं केम्मणनकेरेयत्ती-भी वूरं माडवेळकेन्दु प्रार्त्थिसि काळ-गवुण्डन तम्मनप्प होन्न-गवुण्डन जक्क-गवुण्डिय मगनप्प महा-प्रभु-आदि-गवुण्डङ्गे सन्तेयं कोट्टडायय्यनुं तन्न तम्म माडि-गवुण्डनुं मार-गवुण्डनुं अवर मक्कळुं माच-गवुण्डनुं मार-गवुण्डनुं नाक-गवुण्डनुं चिक्क-मारेयनोळगागि काडं कडिदु कन्नेगेरेयं कट्टिसि वूरं माडिदरु ॥

आ- यय्यन अन्वयवेन्तेन्दोडे ।

कञ्च-गवुण्डम्मुत्तेय ।
········हिरियय्यम् ।
सञ्चित-षड्-गुण-गण-मणि ।
सञ्चय ··· ळिद् होन्न-गौडण्डं जनकम् ॥
आ-नेगळ्द् होन्न-गवुण्डन ।
··· ··· ··· आदि गवुण्डुन ताय् ताम् ।
भू-नुत-पतिव्रता-गुणे ।
जानकियो जक्क-गवुण्डि गुण-निधियें ··· ॥
··· ··· ··· । ··· ··· ··· ··· ··· ॥
पसुगूसुगळिगे पालम् ।
पासट्टमानमन-वारियागिरे नचम् ।
दस-गालदोळ् ··· ··· अ ।

... सनदिनारादि-गौण्ड ... ... ॥
केरेयं कट्टिसुतिप्पुंदु- ।
मरवण्गोयिद्दिसुतिप्पुंदेसे ... ... ।
... ... ।
... ... उज्जुगवेन्दुम् ॥
... ... ॥

इसिदर मोगमं नोडम् ।
इसिवुं नीरळ्के यिछ्ल कण्ड ... ... ।
... ... एनिप ... ... ।
वसुधेयोळान्नोंळ्पडादि-गौडण्डन दोरेयर् ॥
अन्तेसेडादि-ग [व्] ण्डन ।
कान्ते मनः कान्ते नाग-गावुण्डि जगत्- ।
कान्ते पति-भक्ति-गुणदिन्द् ।
अन्तिल्लद जसदिनेसेदळवनी-तळदोळ् ॥
वन्दर् त्रिह्निनरेन्दन्द् ।
ओन्दिद सन्तोषदिन्द सासिरकं कय्- ।
सन्ददुणलु वड्डिप-गुण- ।
दिन्दं पेळु नाग-गौण्डि ... ... ॥
... ... । ... ... ।
... ... म् - । मण्डलदोळगिन्नु नोन्त कान्तेयरोळरे ॥
अवरिर्व्वर्मा पुट्टिद ।
... माच-गौडण्डनातन तम्मं ।
भुवनाधारं ... ... य- ।
नवननुबरु ... ... चिक्क-मारेयनेम्बर् ॥
अवरोळगं ... ... ।
भुवन-हितं माच-गौण्डनेम्ब महात्मन् ।

बवसेयिनोळ्पिन्दार्प्पिद् ।
इवन-बोलाग्गुणिगळेनिसि नेगळ्दं जगदोळ् ॥
... ... ।
... ... मत्तवधिक-बलदिं किरिदलु ... ।
... निपं समस्त-पुरुषा- ।
र्त्थ-निधानं माच-गौण्डनर्त्थि-निधानम् ॥
मार-गौण्ड ... ... ।
... ... निधानम् ॥
वारिनिधि-वेष्टितोर्व्वियो- ।
ळारुं तन्नन्नरिल्लेनिप्पं गुणदिम् ॥
लोकापकार-कारण- ।
नेक-क्रमव ... ... ।
... ... ।
... ... णनी-लोकदोळगे लोकं वडेवं ॥
मातृ-पितृ-भक्तनखिळ- ।
ख्यातं पुण्य-क ... त्रि-मूर्त्ति ... ... ।
... ... ।
... ... क तम्मनम्मङ्गणुगम् ॥

आदि-गौण्डन गुरु-कुळ-क्रमवेन्तप्पुदेन्दडे । श्रीमद्-**द्रमिळ** ... ...वारिसि ... ... धर्म-तीर्त्थं प्रवर्त्तिसुव ... ... **द्रस्वामि**गळिन्द ... ... पर-वादीश्वर ... ... वृन्द-वंद्य-श्री-पादरशेप-शास्त्र-वार्द्धिग ... ... रायणप्पर-हित-व्यापार ... ... गुण-धनं श्री-**वासुपूज्य-मुनि** ... ...न्त-देवर-शिष्य **पेरुमाळे-देव**रिगे ... ... न्तोपेद ... ... बसदि माडिसि श्री-देवर-प्रतिष्ठेयं माडिसि आ-देवरष्ट-विधार्च्चनेगं रिषियराहार-दानक्कं जीर्ण्णो-द्धारक्कं नडवन्तागि बिट्ट तळ-वृत्ति (आगेकी ५ पंक्तियोंमें दानकी चर्चा है)

सक-वर्ष ११७० नेय **प्लव-संवत्सर**दुत्तरायण-सङ्क्रमाण-व्यतीपातदन्दु

कोण्डलियशेश्नहावनङ्गळु आदि-गौण्डनुं माडि कोट्टर मङ्गल महा श्री (हमेशा का अन्तिम श्लोक) नमोऽस्तु वीतरागाय ॥

[इस लेखमें आदि-गवुन्डने अपने गुरु पेरमाळे-देवके लिये एक विशाल बसदि बनवायी और उसके लिये (उक्त) कुछ भूमिका दान दिया, और (उक्त मितिको) आदि-गवुन्ड, और उसके पुत्रों तथा गाँवके ४० कुटुम्बोंके साथ कोण्डलिके सारे ब्राह्मणोंने उस भूमि तथा मन्दिरको पेरमाले-देवको समर्पण कर दिया।]

[EC, V, Belur tl., No. 138.]

४६७

हुम्मच;—संस्कृत तथा कन्नड़—भग्न।

[शक ११७२=१२५० ई०]

[पद्मावती मन्दिर में, एक पाषाण पर]

...सेन... नाद... स्वस्ति

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥

स्वस्ति श्रीमत्-स (श) क-वर्ष ११७२ नेय कीलक-संवत्सरद शुद्ध-श्रावण-दशमी-शुक्रवारदन्दु श्रीमन्महामण्डलेश्वर श्री-ब्रह्म-भूपालकन सचि ... ... ब्रह्मय-सेनबोवन प्रिय-पुत्र पार्श्व-सेनबोव ... ... माडि ... ... सुर-लोक-प्रापितनादम् श्री (बाकीका पढ़ा नहीं जा सकता है)।

[महा-मण्डलेश्वरब्रह्म-भूपालके मन्त्री ... ... ब्रह्मय्य-सेनबोवके प्रिय पुत्र पार्श्व-सेनबोवने 'समाधि' की विधिसे स्वर्गलोक प्राप्त किया।]

[Ec, VIII, Nagar tl, No. 56]

४९८

श्रवणबेलगोला;—संस्कृत तथा कन्नड़—भग्न ।

[बिना काल निर्देशका]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

४९९

हलेबीड;—संस्कृत और कन्नड़ ।

[शक ११७७=१२५५ ई०]

हलेबीड से लगी हुई बस्तिहल्लिमें, पार्श्वनाथ बस्तिके बाहरकी दीवालके पाषाणके एक ओर]

श्रीमत्-सम्यक्त्व-चूडामणि **सल**-नृपना-वंश-सिंहासनस्थम् ।
सोमेशं नित्यनप्पन्तोसेदु **विजय-तीर्थाधिनाथङ्** नाल्कुम् ।
सीमा-संस्थानदोळ् मुक्कोडे यसेविनेगं नट्टु धर्म्मक्के कोट्टम् ।
भूमीशत्वक्के तानेन्दरिपुव तेरदि तत्सुतं **नारसिंहम्** ॥

शकवर्ष ११७७ नेय आनन्द-संवत्सरद मार्ग्गशिर-ब १ बृ-वन्दु श्रीमत् प्रताप-चक्रवर्त्ति-होयसळ-श्री-वीर-**नारसिंग-देवरस**र **बोप्प-देव-दण्णाय-क**र बसदिगे विजयं गेय्दु श्री-विजय-पार्श्व-देवरिगे काणिकेयनिक्कि आ-बसदिय मुण्डण शासनवं कण्डु तम्मन्वयराजावळियनोदिसि-गोडुत्तविद्वसरदोळु आ-शासन-स्थवह देव-दानद क्षेत्रदोळगे मय्दुनं **पद्मि-देव**र वट्टारव कट्टि मनेय माडि आ-बठारवु हलवु वरुसदिन्दवु हालागि यिद्दुदनु केळि तम्म अन्वयद धर्म्मबोप्पु ··· कारणवागियु श्रीमतु प्रताप-चक्रवर्त्ति-होयसळ-श्री-वीर-**सोमेश्वर-देवरस**र राज्या-भ्युदयत्वहन्तागियु पूर्व्व-देसे ··· ··· नट्ट कल्लिन्दोळगणभूमिसहित मय्दुन-**पद्मि देव**न बठारवनु भी ··· ···; मनेयमाडि आ-विजय-पार्श्व-देवन श्री-कार्य व नडिसुवन्तागि सर्व्व-बाधे-परिहारवागि आ-चन्द्रार्कस्थायियागि सलुवन्तागि अन्दिन

धनुस्-संक्रमणदलु आ-देवर सन्निधियलु आ-कुमार-**नारसिंह-देवरु** तम्म श्री-हस्तदलु पुन-[रु]-धारेयनेरेदु कोट्टरु मङ्गल महा श्री श्री श्री

[१२६]

आनन्द-संवत्सरद फाल्गुन-ब २ बु । वन्दु श्रीमतु प्रताप-चक्रवत्ति-कुमार-**नारसिंह-देवरसरु** तवगे उपनयनवादल्लि **बोप्प-देव-दण्णायकर** बसदिय **श्री-विजय-पार्श्व-देवर** श्री-कार्य्यक्के आ-चन्द्रार्क-स्थायियागि नडवन्तागि हिरिय-केरेय केळगे केम···द गाल-माविन गट्टिनोळगे कोळद-होलयन पट्टशालेगे कल्ल नट्टु बिट्ट भूमियिन्द मूडलु गद्दे गुम्मेश्वरद कोळगदलु गद्दे सलगे नाल्कुवम् धारा-पूर्व्वकं माडि सर्व्व-बाधे परिहारवागि कोट्टरु (परिचित अन्तिम श्लोक), मंगळ महा श्री श्री श्री

[सलके वंशमें **सोमेश** हुआ । उसका पुत्र **नारसिंह** था । सोमेशका सन्धि-विग्रहि (दण्णायक) **बोप्पदेव** था । (उक्त दिन) प्रताप-चक्रवर्त्ति होय्सळ वीर-नारसिंह देवरसने बोप्पदेव-दण्णायककी वसदिका निरीक्षणकर वसदिका पूर्व 'शासन' देखा और अपनी वंशावली पढ़ी । उसने अपने साले या बीजा पाम-देवके द्वारा बनवायी गई चहार-दीवारी और एक मकानको, जो कि ध्वस्त हो गया था, सुधरवाकर धनुस्-संक्रमणके समय में विजय-पार्श्व-देवकी सेवामें अर्पण कर दिया ।

[१२६]-कुमार **नारसिंह देवरसने** (उक्त मितिको) अपने 'उपनयन' संस्कारके समय (उक्त) कुछ दान दिये ।]

[EC, V, Belur tl., No. 125 and 126.]

५००

हुम्मच;—कन्नड़।

[वर्ष आनन्द = १२५५ ई० ? (लू. राइस) ।]

[पद्मावती मन्दिरके प्राङ्गणमें, ९वें पाषाणपर]

श्री-मूलसंघ-देशी-गणद ··· ··· दु-त्रैविद्य-देवर गुड्ड ··· ··· ··· जननी **बाळचन्द्र-देवर** गुड्डि व्रत-शील-गुण-सम्पन्ने **सोयि-देवि आनन्द-संवत्सरद पुष्य-मास-बहुळ-दशमि-बुधवारदन्दु** समाधि विधियिं मुडिपि सुर-लोकव सूरे गोण्डळु

माता **कामाम्बिका** श्रीमान् ··· **माधवाह्वयः** ।
पुत्री **सोमाम्बिका** तस्याः **सोयि-देवी** ··· न ··· ॥
कवित्वे गमकित्वे च वादित्वे वाग्मिता-जये ।
त्रैविद्य-बालचन्द्रस्य सदृशो नास्ति नास्ति हि ॥

मङ्गळ महा श्री

[श्री-मूलसंघ और देशी-गणके ··· दु-त्रैविद्य-देवके गृहस्थ शिष्य ··· की माँ, वाळचन्द्र-देवकी गृहस्थ-शिष्या, सोयि-देवि, (उक्त मितिको), समाधिकी विधिसे मर गयी और स्वर्गलोकको प्राप्त हुई। उसकी माँ कामाम्बिका थी, पिता माधव, तथा पुत्री सोमाम्बिका थी।

कवित्वमें, गमकित्वमें, वादित्वमें, वाग्मिता तथा जयमें त्रैविद्य-बाळचन्द्रके समान दुनियाँमें कोई नहीं है, कोई नहीं है।]

[EC, VIII, Nagar tl., No. 53.]

५०१

श्रवणबेलगोला;—कन्नड़।

[वर्ष नल = १२५६ ई० (लू. राइस.)

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

५०२

चिक-मागडि;—कन्नड़-भग्न।

[संभवतः लगभग १२५६ ई०]

[चिक-मागडिमें, बस्तिके पासके पाषाणपर]

स्वस्ति श्रीमतु यादव-नारायणं भुजबल-प्रताप-चक्रवर्त्ति श्री-कन्दार-देवन ११ नेय नळ-संवत्सरद ······ त्र-बहुळ-अमवासे-बड्डवारदन्दु मुडिय सा······वन्त सन्यसन-समाधियं माडि सुगति-प्राप्तनादं मङ्गळ महा श्री श्री गज-शैलेन्दु-शशांक ··· ·· कार्त्तिक-कृष्ण-पञ्चमेने हिमना ··· ··· शनिवार उत्तरायण ··· स ··· ··· प्रणष्ट ··· देवर गुड्डनेसेव शान्त ··· नवरनु सामन्त ··· ··· नु ··· मनदोळु ता पञ्च-पदवं चिन्तिसुत्त ··· ··· मरमु ··· स्वर्मा-जनके ··· आप्त-जनं परिवारं बन्धु-जनमुमाश्रित-जनमं निलेदेल्लरं ··· ··· शरणिल्लदेन्दु··· तुत्तिदरु।

पुरुष-निधाननं सकळ-भोगियनाश्रित-कल्प-वृक्षनम्।
नर-सुर-धेनु वन्दि-सुर-भूज नवीन-मनोज़-रूपन।
गुरु-पद-भक्ति ··· ळ् प्रभाव-सावन्त मुब्बन् ··· बोप्देनि ···।
करुणि विधात्रमूल ··· पद-लोभिगळि ··· ··· ··· ··· ···॥

(बाकीका मिट गया है)।

[स्वस्ति। यादव-नारायण भुजबल-प्रताप-चक्रवर्त्ति कन्दार-देवके ११वें वर्षमें,—मुडिके सा ··· वन्तने, 'सन्यसन' महोत्सवकी (विधि) को करते हुए, सुखी हालत प्राप्त की। उसकी और भी प्रशंसा। (शिलालेख बहुत घिसा हुआ है।]

[EC, VII, Shikarpur tl., No. 198.]

५०३

हुम्मच;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक ११७८=१२५६ ई०]

[उसी आङ्गनमें पार्श्वनाथ बस्तिके पूर्वकी ओरके पाषाणपर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

स्वस्ति श्रीमतु **शक-वर्ष ११७८ आनन्द-संवत्सरद** पुष्य-**बहुल-चौति-मंगलवारदन्दु** यम-नियम-स्वाध्याय-ध्यान-मौनानुष्ठान-जप-समाधि-शील-गुण-सम्पन्नरुं त्रि-पद-त्रिशल्यरुं त्रि-गारव-रहितरुं गुप्ति-त्रय-संयुतरुं सप्त-भयातीतरुं अस (श) रण-शरण्यरुं श्रीमतु महा-मण्डलाचार्य्यरुं राज-गुरुगळुमप्प श्री-**पुष्पसेन देव**रुमकलङ्क-देवरु सन्यसन-विधियिं मुडिपि मुक्ति-पथवं पडेदरु ॥

श्री-परमात्म-चिन्तेयोळे चित्तमनागळे पत्तु चिट्टनन्त- ।
आस्पद-सौख्यमं पडेव पञ्च-पदङ्गळनोदुतर्त्थियिम् ।
बाप्पुरे **वादिराज-मुनि**-पाद-पयोरुह-वृं (भृं) ग मुक्तियेम्- ।
वोपळ **पुष्पसेन**-यति कूडिदनैदे मनोनुरागदिम् ॥
आ-नन्दन-संवत्संरद् ।
आनन्ददे पुष्प-बहुळ-मङ्गळवारम् ।
ताना-चौतिय-दिनदोळु ।
ज्ञानात्मं **पुष्पसेन** मुडिपिदनोलविम् ॥
स्थिरदिन्द पञ्च-वसदिय ।
वर-मुनि-**गुणसेन**-सिद्धान्तर कय्योल् ।
भरदिं कय्येदे गोट्टा- ।
नर-लोकं पोगळे मुक्ति-पथवं पडेदम् ॥
परम-जिन-तत्व-चिन्तेये ।

स्थिरतरवागिरलु-भाव नेलेगोळे मुनिपा ।
धरेयोळगे मुडिपि मुक्तिगे ।
वरनादं निष्कळङ्कनीयकळङ्कम् ॥
अकलङ्क-देवरेय्दिद ।
सकळङ्कानन्दवप्प संवत्सरदोळ् ।
मुक्तिगे मार्ग्गशिरं ताम् ।
शुक्लं पौर्ण्णमिय दिनद बुधवारदोळम् ॥
प्रकटिसि जिन-धर्म्ममुमम् ।
सुकृतमुमागिरलु पेळ ··· यतियम ।
सकळागम-कोविदनम् ।
अकलङ्क-व्रतियनोय्य तक्कुदे धात्रा ॥
इल्लेम्बने कुडुववसरव् ।
अल्लेम्बो मुनिनन्दवल्लदु कालम् ।
हौल्लेम्बरे वेळ्पवसर ।
निल्लेम्बरे पुष्पसेन-यति-पति धरेयोळ् ॥
तर्क-व्याकरणादिविमस्वनमानेज्ञानेन यः पश्नुते ।
श्री-नन्द्यान्वय-राजभूषण-मणि- श्री- वादिराजो मुनिः ।
तच्छिष्यः पर-वादि-पर्व्वत पविः साहित्य-रत्नाकरः ।
जीयाद्-द्रविळ-जैनसंघ-तिलकः श्री-पुष्पसेनो मुनिः ॥
आयोजन मग सान्तोज माडिद ॥

[जिनशासन की प्रशंसा । स्वस्ति । (उक्त मिति को), साधुके गुणोंको र कर (गुणोंके नाम दिये हैं), त्रिशल्य रहित त्रिपद[1]को धारण कर,

---

1. त्रिपद अपूर्वकरण, अधःप्रवृत्तिकरण और अनिवृत्तिकरण हैं ।

त्रिगारव[1]से मुक्त होकर त्रिगुप्तिसे संयुक्त होकर, सप्त-भय[2]से रहित होकर, महा-मण्डलाचार्य और राज-गुरू **पुष्पसेन-देव** और **अकलङ्कदेव**ने सन्यसन-विधिसे शरीर त्याग कर मुक्तिका मार्ग प्राप्त किया। परमात्माके ध्यानमें अपनेको लगा-कर, शाश्वत सुख देने वाले पञ्च-नमस्कार मंत्रका उच्चारण करते हुए, वादिराज-मुनिके चरण-कमलोंके भ्रमर,—पुष्पसेन-यतिने मुक्ति-फल प्राप्त किया। उक्त मितिको, आनन्दके साथ संभले हुए पुष्पसेन मुनिने इच्छा-पूर्वक देहत्याग किया। मुख्य मुनि गुणसेन-सिद्धनाथको पञ्चवसदि स्थायीरूपसे सौंप कर उन्होंने मुक्तिका मार्ग अख्तियार किया।

अकलङ्कने भी उक्त मितिको मुक्तिका मार्ग अपनाया। वादिराज-मुनिके शिष्य **पुष्पसेन-मुनि** थे।

सायोजके पुत्र सान्तोजने इसे बनाया।]

[EC, VIII, Nagar tl., No. 44]

५०४

हीरेहल्लि—कन्नड़।

[शक ११७९=१२५७ ई०]

[हीरेहल्लिमें, मल्लेश्वर मन्दिरकी दक्षिणी दीवालके पाषाणके बायीं ओर]

नमोऽस्तु सिद्धेभ्यो नमः स्वस्ति श्री **शक-वरुष ११७९ नेय राक्षस-**[3] **संवत्सरद वैशाख-शुद्ध** ··· **सोमवारदन्दु आदिगौण्डन तल्लिय** वसदिय

1. त्रिगारव पञ्चसून (काटना, पीसना, रसोई बनाना, जल भरना, बुहारना), स्त्रीमोहादि, परिग्रह (भूमि, मकान, पशु, धान्य, द्विपद, चतुष्पद, सवारी, बिस्तर, दासी-दास, कुप्य-भाण्ड) हैं।

2. सप्त-भय मरण-भय, राज-भय, चोर-भय, व्याघ्र-भय, दुष्ट-देव-भय, परिषद्-भय और संसारभय हैं।

3. राक्षस=११७८।

आ-स्थानिक **पेरुमाळमा**-नूर माच-गौण्ड मार-गौण्ड चिक-गौण्ड चिक-मारेय अल्लिय स्थानिक कल्ल-बीय समस्त-प्रजेगळुं **वज्र-नन्दि-सिद्धान्ति-देवर मल्लि-षेण-देवर पेरुमाळु-कन्तियर माचय्यन** मग **माडय्यङ्गे** धारा-पूर्व्वकं माडि कोट्ट बसदियं मादय्यन हिरियमगं बेलनारण ·· अवचैय मचेलनुं (वे ही अन्तिम वाक्यावयव) **एकोटि-जिनालय** ··· मंगल महा श्री श्री

[(उक्त मितिको) आदिगौण्डनहल्लिकी बसादिके पुरोहित पेरुमालने दूसरों के साथ (जिनका नाम दिया है) मिलकर एक बसदि बनाकर पेरुमालु-कन्तिके पुत्र माचय्यके पुत्र मादय्यको दी। (वे ही अन्तिम श्लोक।)

एकोटि-जिनालयकी वृद्धि होवे ?]

[Ec, v, Belur tl. No 131]

५०५

श्रवणबेलगोला;—कन्नड़।

[वर्ष कालयुक्त=१२५८ ई० ? (लू० राइस)]

[जै० शि० सं०, प्र० भाग]

५०६

सियाल-बेट;—संस्कृत

[सं० १३१५=१२५८ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[ASI, XVI, p. 254, t.]

५०७

पर्वत सुन्ध (राजपूताना)—संस्कृत

[सं० १३१६ = १२६२ ई०]

श्वेताम्बर सम्प्रदायका लेख।

[EI, IX, No. 9, G, t. and a.]

५०८

कडकोल;—कन्नड़।

[शक ११८६ = १२६८ ई०]

[१] स्वस्ति श्री- **सं० (श) कवरुस (ष) ११८६ प्रभ**

[२] व- **संवत्सरद** माघ सु (शु) ध (द्ध) ५ सु (शु)-

[३] क्रवारदलु मूलमंघद सूर-

[४] स्थगणद **श्री-नन्दि भट्टारकदेवगु-**

[५] [ड] ड **कडकोळद सावन्त-देवगावुण्ड-**

[६] न मग **मारगावुण्ड** सर्व्व निव्रि (वृ) [त्ति] यं कै-

[७] यि- कोण्डु समाधियिं मुडिपि स्व-

(८) (र्गा) ग- प्राप्तनाद निषिधिय स्तंभ [।] मं-

(९) गळ-महा-श्री-श्री-श्री [॥]

अनुवाद स्वस्ति! मूलसंघ के सूरस्थगणके श्रीनन्दिभट्टारक देव के शिष्य या अनुयायी; (तथा) कडकोळ के सावन्त-देवगावुण्ड के पुत्र—मारगावुण्डकी स्मृतिमें यह 'निषिधि' का स्तम्भ है। मारगावुण्डने तमाम इन्द्रियों का निरोध करके, सर्व सांसारिक कृत्योंसे निवृत्ति लेकर प्रभव संवत्सर-जो कि शक वर्ष ११८६ था—के माघ (महीने) के शुक्ल पक्षकी पञ्चमी, शुक्रवार को समाधि पूर्वक स्वर्ग प्राप्त की। मंगल-महा-श्री-श्री-श्री।

[IA, XII, p. 101-102, No. 4.] t. and tr.

५०९

हुम्मच;—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

वर्ष विभव=१२६८ ई०] ? (लू. राइस) ।]

[पद्मावती मन्दिर के प्राङ्गणमें, दायें हाथ की तरफ के खम्भे पर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

श्रीमद्विभव-संवत्सरद् चैत्र-मा १२ दश्यां तिथौ... वैभव...जकपाख्यस्य पुत्राभ्यां राम-श्रेष्ठि-ब्रह्म-श्रेष्ठिभ्यां धन्य (आम्) आवासं प्रथम-मण्डप-निर्म्माणं कृतं चिर-कालं वर्द्धतां जैन-शासनं कर्तृणां सद्-धर्म्म श्री-बलायु-रारोग्यैश्वर्याभि-वृद्धिरस्तु मङ्गल महा श्री

[जिन शासन की प्रशंसा । (उक्त मिति को) धनिक जकपके दो पुत्रों, राम श्रेष्ठि और ब्रह्म श्रेष्ठि ने पहला मण्डप बहुशोभा-युक्त बनवाया ।

जैन-शासन चिरकाल तक बढ़े । इसके प्रचार करने वालों में सद्धर्म, बल, आयु, आरोग्य और ऐश्वर्य भी अभिवृद्धि होवे ।]

[EC, VIII, Nagar tl., No. 55]

५१०

कण्ठकोट;—संस्कृत

[सं० १३२.=१२७० ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

ASWI, Selections, No. CLII, p. 64, a; p. 86, t. (ins. No. 30).]

५११

वेतूरु;—कन्नड़-भग्न।

[वर्ष प्रजापति = १२७१ ई० (लू० राइस)]

[वेतूरुमें, सिद्धेश्वर मन्दिरके पास एक पाषाणपर]

··· स्तु ॥

श्रीमत्परमगम्भीर-स्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं ··· ··· ॥

··· नाना-नूत्न-रत्न-प्रवण ··· ··· समुद्रा ··· ··· ग् अनून-दान-विभव ···
··· जम्बूद्वीपमा-समुद्रदिं मुद्रितमागिप्पुदल्लि ॥

कन्द ॥ भरतावनि-घन-शोभा ···। ··· ग् आश्चर्य्ये ··· ··· खण्डम्।
··· ··· कण्णार्टक-। वर-विषयं सन्ततं ··· विषयम् ॥

··· ··· येनिप-भोग्य-नुत-वस्तु ··· ··· ··· ··· नीकानेक ··· ··· धामनेषे
सार-सौख्यारामम् ॥ ··· अन्तु सन्ततं मोदलाद्-अनेक-जनपदक् अधीश्वरनुमतुळ-प्रताप-लङ्केश्वरनुं यादवान्वय-वियत्-तळ-मार्त्तण्डनुं नय-वि ··· नाना-दान-गुण-मणि-करण्डनुं विजया ······ विधायकनुमप्प ·· रामचन्द्र-भूपाळनन्वय ··· ··· माळव ··· मागध-वङ्ग-कळिङ्ग-चेर-नेपाल व ··· ··· पाळर ··· ··· ··· एनितु जीविपुदी ··· जयसिंहं ··· —

कन्द ॥ आत ··· भुवन-भवनं ··· मातेनो ताने।
मत्तं ··· सु-ललित-प्रताप-निधि ··· गुण-मणियम् ॥

··· ··· प्रगूढ़मेनिसिर्प्प-वरूथव दोरे ··· ··· बलं ··· ··· दिं नेषेद ··· ···
धरित्रियोळ् मर्त्य-रूप ··· सहोदर महदेव ··· यन प्रतापमेन्तेने ॥

वृ ॥ सन्तत-रं ··· ··· मत्तु सन्ता ··· ··· ··· ।
··· ··· ··· ईश्वर-पदं ··· ··· ··· ··· ।
··· नोडलेयलोत्तिपनेन्दोडे ··· ··· बनं ··· ।

••• एनिप्पुदी-महदेव-महीपतियं निरन्तरम् ॥

व ॥ मत्तमा-कन्दर-राय,तनूभव-श्री-राम-देव-प्रतापमेन्तेने ॥

••• पदाम्बुज-युगानतरं सततं समन्तु ••• ••• ।

••• यदु-वंश-चक्रियुर्व्वी ••• ••• ••• ••• ।

••• इतनेम्त्र ••• ••• ••• ••• ••• ••• ।

••• रामदेव-भूपाळन तोळ-वळ-वयाङ्गने ••• ••• ।

व ॥ मत्तं तत्पाद-द्मोपजीवियप्प कूचि-राजन राज-गुरु श्रीमज्जिन-भट्टारक-देवरन्वय महोन्नतियेन्तेने ॥

वृ ॥ एळेयोळ् नेट्टने वीरसेन-जिनसेनाचार्य्यर्-नर्य्यर् सुधा- ।
बळ ••• कलिता ••• चार्य्यावळि श्री ••• ••• ।
••• गुणभद्र योगि-रमणं राद्धान्त-चक्रेश्वरम् ।
••• श्रीमज्जिनसेन-योगि ततं ••• रोळ् कीर्त्तियम् ••• ।
••• ग्रगण्यर महोन्नतियेन्तेने ॥

॥ श्री-मुनि-पद्मसेन-यति-गोत्तम ••• ••• ••• ।
••• महोन्नति-नि ••• र-वर्व्वनेयिन्दमे मत्ते ••• ।
••• राममेनिप्प शास्त्र ••• यिन्दमे ••• श्रेष्ठियं ••• ।
••• मद-विभञ्जनन् ••• त्व ••• रे भाविपुदी-धरित्रियोळ् ॥
••• ••• राद्धान्त-सम्पत्तियं ••• ••• ••• ।
••• करं विनष्टमेनिपा-तन्त्रौषदि मन्त्रदिम् ।
देवेन्द्र-स्तुत-जैन-मार्ग-तपदिं ••• यं ताळ्दिदम् ।
भू-वन्द्यं वर-पद्मसेन-मुनिपं भट्टारकाग्रेसरम् ॥
नत-जिन-पाद ••• त्र सु-चरित्र कळावळि-चारु-चि- ••• वि- ।
श्रुत-बुध-माळनेत्र निखिळाघ-दुरन्त-लता-लवित्र सम्- ।
स्तुत-महशे (से) न-पुत्र नय-पात्र लसद्गुरु-पुण्य-गात्र भू- ।
पति-नुत पद्मशे (से) न-यति-नाथ कृतार्थने नीने धात्रियोळ् ॥

व ॥ मत्तमा-मुनीश्वर-पादारविन्द-द्वन्द्व-भक्तनुमनून ··· धीरनुं निज-तुरग-दळ-खर-खुर-प्रद्य ··· ··· ··· मनेक-विरिदावळि-विराजमाननुमप्प श्री-**कूचि-राज**नन्वय-महोन्नतियेन्तेने ॥

धरणी-वन्दित-**सिं [ह] देव**-तनयं **मल्लाम्बिका**-नन्दनम् ।
शरदिन्दूज्ज्वळ-कीर्त्ति **चट्ट**तनुजं **लदमा**ङ्गना-वल्लभम् ।
वर-योगीश्वर-**पद्मसेन**-पद-पद्माराधकं कूचणम् ।
स्थिर-पुण्यं पेसर्वेत्तनुत्तम-यशं साहित्य-सत्याश्रयम् ॥
प्रणय-प्राणा ··· तम्मोळवरी-भू-भागदोळ् राम-ल- ।
द्मणरं पोल्वरे पोल्वरा-**भरत**-भास्वद्-**बाहुबल्या**ख्यरम् ।
गुणदिं पोल्वरे पोल्वरेन्दु बुध-बन्धु-व्रातमानन्ददिम् ।
गणियिक्कुं वर-मन्त्रि-**चट्ट**-नृपनं श्री-**कूच**-दण्डेशनम् ॥

व ॥ मत्तमा-कूचि-राजन सर्व्वाङ्ग-**लदिमय** महोन्नतियेन्तेने ॥

वृ ॥ भावज-मन्त्र-देवतेयनुत्तम चम्पक-वर्ण्ण-गात्रेयम् ।
पावन-शीलेयं गुणद शालेयनुद्घ-कळा-प्रवीणेयम् ।
भू-वळय-प्रणूत-मद-कुञ्जर-यानेयनोल्दु कीर्त्तिकुम् ।
श्री-विभु-कूचि-राजनेशेव्- ( ) अङ्गनेयं धरे **लदिम-देवि**यम् ॥

वा ॥ मत्तमा-कूचि-राज-तनूजन-प्रतापवेन्तेने ॥

कं ॥ सूरन सुतङ्गमधिकं । धारिनियोळ् कूचि-राज-तनुजं दानो- ।
दारतेयिं **बोण-देवं** । शूरतेयिं शूद्रकङ्गमग्गळमेनिपम् ॥
सङ्गर-रङ्गदोळदटं । सिङ्गद विक्रममनिरदे तानेळिसुवम् ।
मङ्गळ-निधि **बोण-देवं** । तुङ्ग-यशं-पद्मशेन-पद-युग-भक्तं ॥

व ॥ मत्तं **पाण्ड्य-देश**-मध्याध्यासितमाद **बेतूर**ल्वलुवेन्तेने ॥

कं ॥ निरुपम-देवागारं । सु-रुचिरमेनिसिर्द्द विपणि गणिका-वाटम् ।
करमेसेव-प्राकारम् । पिरिदेशेदुद्यानदिन्दे **बेतूरे**सेगुम् ॥

व ॥ मत्तमा-वेतूर मन्नेयर शेट्टि-गुत्तर गौडुगळ वूरोडेयर महोन्नति-येन्तेने ॥

क ॥ सन्नुत-गुण-त्रयाश्रित- । र् उन्नतमेनिसिर्द्द पाण्ड्य-देशाधीशर् ।
मन्नेय-कुल-सञ्जात- । प्रोन्नत-विक्रमिगळखिळ-गुण-गण-निळयर् ॥
कोण्डेयरं दुर्ज्जनरं । गण्डिगरं तेगदु तेगदु सिक्षिपरन्ता- ।
मण्डळद शेट्टि-गुत्तर् । म्मण्डित-विक्रमिगळेसेवरवनी-तळदोळ् ॥
क्षितियोळ् माचि-तनूजं । वितत-यशं **हरिप-गौड**नुदधि-गभीरम् ।
रति-पति-निभ-**माक**-प्रिय- । सुतनेसेवं **योग-गौड**नूर्जित-तेजम् ॥
श्री महित-**राम-गौडं** । भूमियोळमराद्रियन्ते सु-स्थिरनेनिपम् ।
सोम-सुतं गौड-कुळ- । व्योमाङ्कं सूरनन्ते वर्त्तिसुतिर्प्पम् ॥

व ॥ मत्तमा-कूचि-राजं वेतूर-प्रभृति-ग्रामगळं वळितमागि पडेदु सुखदिनिर्प्पुदुं श्री-**पद्मसेन**-भट्टारकरुपदेशदिं निज सर्व्वाङ्ग ... लक्ष्मि ... स्वर्गापवर्ग-सौख्यं कारणमागि **लक्ष्मी-जिनालय**मं माडिसिदनदेन्तेन्दोडे ॥

कं ॥ निरुपम-मूल-सु-संघद- । सु-रुचिरमेनिसिर्द्द-शे (से)**न-गण**-दोळ् मेपेत्रा- ।
वर-**पोगळे-गच्छ**दिन्दं । निरविसिदं कूचनेसेव-जिन-मन्दिरमम् ॥

व ॥ मत्तमा-कूचि-राजं प्रजापति-संवत्सरदल्लि श्री-**वीर-महदेव-राय**न प्रशस्त-हस्तदल्लि ग्राडमनग्रहारमागि विडुवल्लि लक्ष्मी-जिनालयक्के **हुणिसेयहळ्ळिय**नु इन्नेरडु होन्निनि नियत-क्षेत्रमागि पुण्यतिथियोळ् धारेयं पडेदु-वन्दु तज्जिनालयद श्री पार्श्वनाथ-देवर्गे शासन-पूर्व्वकं श्री-**पद्मसेन-भट्टारक-देव**र श्री-पाद-प्रक्षाळनवं माडि गौडुगळु समन्वितमागि कोट्टरवाबुवेन्दोडे ॥

कं ॥ अङ्गडियनडके-दोण्ड्म- । नङ्गज-निभरेनिप-गौडु-सहितं कूचम् ।
गङ्गन-मत्तरनेरड । ... गाणम धारेयनेषेदर् ॥
गुण-निधि धारा-पूर्व्वं । हुणिसेयहळ्ळियननन्त-भोग ... ।
... ... । प्रणुत-श्री-पार्श्वनाथ-बसदिगे कोट्टम् ॥

व ॥ मत्तमा-हुणिसेयहळ्ळि ... ... मेगण-नट्ट-कल्लु तेङ्कण-दिक्किनल्लि ... ... ।

[यह शिलालेख बहुत-कुछ घिसा हुआ है ।)

जिन-शासनकी प्रशंसा । जम्बूद्वीप, भरतक्षेत्र और कर्णाटक विषयको प्रशंसा ।

बहुत राष्ट्रों का स्वामी, लङ्केश्वर, यादववंशीय राजा **रामचन्द्र** थे । उसकी उत्पत्ति । जयसिंह नामके कोई राजा थे । उनके पश्चात् [कन्दर राय] और उसका भाई महदेव था । कन्दर रायका पुत्र **रामदेव** हुआ ।

तत्पादपद्मोपजीवी कूचि-राज था, और राजगुरु जिन-भट्टारक-देव थे । उनकी उत्पत्ति । वीरसेन और जिनसेनाचार्यकी परम्परामें ? गुण-भद्र-योगी और जिन-सेन-योगी हुए । इसके बाद महसेनके पुत्र मुनि पद्मसेन-यतिपकी प्रशंसा आती है ।

उक्त मुनीश्वरके चरणोंका भक्त कूचि-राज था । उसकी उत्पत्ति । वह सिं [ह] देव और मल्लाम्बिकाका पुत्र था, उसका छोटा भाई चट्ट था, पत्नी लक्ष्मा (या लक्ष्मी) थी । उसकी पत्नी लक्ष्मी-देवीकी प्रशंसा । उसका पुत्र बोणदेव था, जो पद्मसेन मुनिके चरणोंका भक्त था ।

पाण्ड्य-देशके मध्यमें स्थित **बेतूर** की प्रशंसा । माचिके पुत्र हरिप-गौड, माकवे पुत्र योग-गौड, तथा सोमके पुत्र राम-गौडका उल्लेख ।

और जब उस कूचि-राजको बेतूर तथा दूसरे गाँवोंका घेरा मिल गया,—और जब उसकी स्त्री स्वर्गस्थ हो गयी,—पद्मसेन-भट्टारककी सम्मतिसे, उसने लक्ष्मी-जिनालय खड़ा किया । और कूचने यह मन्दिर श्री-मूलसंघके सेनगणके पोगले-गच्छको दे दिया ।

कूचि-राजने (उक्त मितिको) वीर-महदेव-रायके शुभ हस्तोंसे अग्रहारके रूपमें, लक्ष्मी-जिनालयके लिये, हुणिसेयहल्लि प्राप्त करके तथा १२ होन्नुपर काम करनेवाला एक श्रोत्रिय सदाके लिये नियत कर, उसे पद्मसेन-भट्टारक-देवके पाद-प्रक्षालनपूर्वक, उस जिनालयके पार्श्वनाथ देवके लिये एक शासन (लेख) द्वारा सौंप दिया । तथा, गौड लोगोंके साथ-साथ चलकर, उसने एक दुकान तथा सुपारीका एक बगीचा भी दिया ।

[EC, XI, Davangere tl., No 13]

५१२

श्रवणबेल्गोला—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक ११३१ (ठीक ११२५ ?) = १२०३ ई० (कीलहौर्न)]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

५१३

चिक्क-मागडि; कन्नड़-भग्न।

[बिना काल-निर्देशका]

[चिक्क-मागडिमें, बस्तिके पासके पाषाण पर]

स्वस्ति श्रीमतु यादव-नारायण प्रताप-चक्रवर्त्ति ··· ··· ···देवर वर्षद २८नेय शर्वरि संवत्सरद कार्त्तिक ··· ··· चिक्कमागडिय अक्कारे बम्मोज स ··· ··· वदिर ··· ··· गति ··· नेय्दे पुण्ड्र लत्-पुरुष-शिवनुदात्त-निश्चिसबरित पडेद समाधियन् ॥

पडेदु समाधियनिन्तोर ··· ।
पडलडर्दमर-पुरकेणगि देव-निकायम् ।
गेडेगोडरे सुर-सुखमं ।
पडेदं बम्मोजं अमळ-जिन-भावनेयिन् ॥

[कुमार बम्मोजके लिये उसकी समाधिका प्रदर्शक यह लेख है।]

[Ec, VII, Shikarpur tl, No 199]

५१४

हलेबीड—कन्नड़।

[शक ११६७ = १२७४ ई० (चीकहॉर्न)]

[आदिनाथेश्वर बस्तिके पास-बस्तिहळ्ळिमें]

श्रीमन्नेमिचन्द्रं-पण्डित-देवरु केळिदरु

श्रीमद्बाळचन्द्र-पण्डित-देवरु सारचतुष्टयादि-ग्रन्थगळ व्याख्यानमं माडिदपरु*

(बायीं ओर) स्वस्ति श्री **मूलसंघ-देशिय-गण-पुस्तक-गच्छ-कोण्ड-कुन्दान्वयदिङ्गळेश्वरद वळिय श्री-समुदायद-माघनन्दि-भट्टारक-देवर** प्रिय-शिष्यरं श्रीमन्नेमिचन्द्र-भट्टारक-देवरं श्रीमदभयचन्द्र-सिद्धान्त-चक्रवर्त्तिगळुं दीक्षा-गुरुगळुं श्रुत-गुरुगळुमागे तन [सु]-श्रुतङ्गळि-नगदोळु विख्यातं-वेट्ट श्रीमद्बाळचन्द्र-पण्डित-देवरु **सक-वर्ष ११६७ नेय भाव-संवत्सरद भाद्रपद-शुद्ध १२ बुधवारद** मध्याह्न-कालदोळु यमगे समाधियेन्दु चातु-र्वर्ण्णिगळगरिपि नीवेल्लरुं धार्म्मिकरप्पुदेन्दु नियामिसि क्षमितव्यमेन्दु सन्य-सनपूर्व्वकं सकळ-निवृत्तियं माडि पल्यंकासनदोळिर्द्दु पञ्च-परमेष्ठिगळ स्वरूपमं ध्यानिसुतं स्व-समय-पर-समयंगळु मेच्चे उत्तम-समाधियं पडदरु श्रीमद्राजधानी-**दोरसमुद्रद** समस्त-भ-(दायीं ओर) व्य-जनं-गळु तत्कालोचितमप्प धर्म्म-प्रभावनेयं माडि परोक्ष-विनय-मागि गुरुगळ प्रतिकृति-समन्वितं पञ्च-परमेष्टिगळ प्रतिमेयं माडिसि यथा-क्रमदिं लोकोत्तरमागे प्रतिष्ठेयं माडि पुण्य-वृद्धि-यशो-वृद्धियं माडिकोण्डरु। भद्रमस्तु जयतु जिन शासनाय।

श्री-जैनागर्म-वार्द्धि-वर्द्धन-विधुः कन्दर्प्प-दर्प्पापहो

---

* उपर्युक्त पाषाणके सिरे पर दो मूर्त्तियोंके ऊपर यह लिखा हुआ है।

भव्याम्भोज-दिवाकरो गुण-निधिः कारुण्य-शीधोदधिः ।
स श्रीमानभयेन्दु-सन्मुनि-पति-प्रख्यात-शिष्यो नमो
...पात् कावनिशन्निबात्मनि रतौ बालेन्दु-योगीश्वरः ॥
पूर्व्वीचार्य्य-परंपरागत-जिन-स्तोत्रागमाध्यात्म-सच्-
छास्त्राणि प्रथितानि येन सहसामृतविळा-मण्डले ।
श्रीमन्मान्य-भयेन्दुयोगि-विबुध-प्रख्यात-सत्-सूनुना
बालेन्दु-व्रतपेन तेन लसति श्री-जैनधर्म्मोऽधुना ॥

श्री-बालचन्द्र-पण्डित देवाय नमः ॥

दूसरा लेख

(उसी बस्तिमें, समाधि-मण्डपके बायीं ओर)

...भयचन्द्र-सिद्धान्त-चक्रवर्त्तिगळ व्याख्यानमं माडिदवर ॥
श्रीमद्-बालचन्द्र-पण्डित-देवर केळिदवर ।
श्रीमज्जिनेन्द्र-मुख-निर्ग्गत-दिव्य-वाणी
यस्याननेन्दुमुपसृत्य विवर्द्धमाना ।
तं बालचन्द्र-मुनि-पण्डित-देवमस्मिन्
लोके स्तुवन्ति कवयः परमादरेण ॥
कस्त्वं कामः क एते हरि-हर-विधि-विध्वंसकाः पञ्च-बाणाः
कोऽयं धर्म्मः क एष भ्रमर-मद-गुणस्तेऽत्र किं, योद्धुकामः ।
संख्यातीतैर्गुणौघैर्ज्जगति दश-विधैश्चाद-धर्म्मैरनन्तैर्-
...ळेन्दु-योगी नमति कुरु ततस्तत्पदाम्भोज-सेवाम् ॥
येनाधातमतात-वाधर्मामितं स [त्]-ज्ञान-सम्पादकम्
... सर्व्व-जनापकार विहिताचारोचितां प्रेमतः ।
तस्मादनन्त-भव्य-कञ्ज-...ळेन्दु-योगीश्वराद्
आप्तं मुक्ति-सुखैक-साधनमनु प्रेक्षोपदेशादिकम् ॥

दक्षोऽयमक्षपादादि-पक्षमावीक्ष्य तत्क्षणे ।
प्रत्यक्षादि-प्रमाणेन भेत्तुं बालेन्दु-सन्मुनिः ॥

वर्द्धतां जिन-शासनम् । श्री-पञ्च-परमेष्ठिगळे शरणु । श्री-बालचन्द्र-पण्डित-देवाय नमः ॥

ॐ ह्रीं हं

[बालचन्द्र-पण्डित-देव 'सारचतुष्टय' तथा अन्य ग्रन्थोंपर टीका बनाते हैं (या करते हैं)। नेमिचन्द्र-पण्डित-देव सुनते हैं (ऊपर पाषाणके माथे पर लिखा हुआ)।

श्री-मूलसंघ, देशिय-गण, पुस्तक-गच्छ, कौण्डकुन्दान्वय, इङ्गलेश्वर-बलि, श्री-समुदायके माघनन्दि-भट्टारक-देवके प्रिय शिष्य,—नेमिचन्द्र-भट्टारक-देव और अभयचन्द्र-सिद्धान्त-चक्रवर्त्ती उनके क्रमसे 'दीक्षागुरु' और 'श्रुतगुरु' थे,—बालचन्द्र-पंडित-देवने चतुर्वर्णोंके सामने यह घोषणा की कि "(उक्त तिथिको) मध्याह्न-कालमें मैं समाधि (सल्लेखना) ले लूँगा।" तदनुसार उनके समाधि-मरण प्राप्त करनेके बाद दोरसमुद्रके भव्य लोगों (जैनों) ने उनके स्मारक के रूपमें उनकी (अपने गुरू की) तथा पञ्च-परमेश्वरकी प्रतिमायें बनवाकर उनकी प्रतिष्ठा की। इससे उनका गुण और कीर्त्ति खूब बढ़े।

१३२ वें लेखमें अभयचन्द्र-सिद्धान्त-चक्रवर्त्ती टीका करते हैं। बालचन्द्र-पण्डित-देव सुनते हैं। इसमें बालचन्द्र-पण्डित-देव की प्रशंसा भरी हुई है। कामको भी उनकी सेवा करनेका आदेश इसमें दिया हुआ है।]

[Ec, V, Belur tl. No 131 and 132]

५१५–५१६

श्रवणबेलगोला;—कन्नड़।

[वर्ष भाव = १२७४ ई० ? (लू. राइस.)

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

५१७

श्रवणबेल्गोला—कन्नड़।

[बिना काल निर्देशका]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

५१८

गिरनार;—संस्कृत

[सं० १३३३=१२७६ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[Revised Lists ant. rem. Bombay

ASI, XVI), p. 353, No. 10, t. and tr.]

५१९

चित्तौड़ (राजपूताना);—संस्कृत।

[सं० १३३४=१२७७ ई०]

[श्रृङ्गार चावडी मन्दिर के पास किले की दीवाल में एक पुराने मन्दिर

के उल्टे बनाये गये चौखट के ऊपरी भागपर]

(१) (चिह्न) ० ।। स्वस्ति श्री-सं०-१३३४ वर्षे वैशाख सुदि ३ बु (बु) ध-दिने श्री बृ (बृ) हद्-गच्छे सा० प्रल्हादन-पुत्र-सा०-रत्नसिंह-कारित-श्री-शान्ति-नाथ-चैत्ये सा०-समधा-पुत्र-सा०-महण-भार्या-सोहिणी पुत्री-कुम-
(२) रल-श्राविकया मातामह-सा०-ठाडा-श्रेयसे देव-कुलिका कारिता ।।

[लेखमें शान्तिनाथमन्दिरके प्राङ्गणमें एक छोटे मन्दिर (देव-कुलिका) के निर्माण का स्पष्ट उल्लेख है।]

[ASWI, progress Report 1903-1904, p. 59, t.]

५२०

श्रवणबेलगोला—कन्नड़ ।

[शक १२००=१२७८ ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

५२१

अमरापुर;—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[शक १२००=१२७८ ई०]

[अमरापुरमें, तालाब के नष्ट बाँध में एक पाषाण पर]

श्रीमत्परम-गंभीर-स्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासन जिन-शासनम् ॥

स्वस्ति समस्त-वसुमता-भार-धौरेय-दोर्-द्दण्डरुं अधः-कृतो-द्दण्डरुं **मार्त्तण्ड-कुल-भूषणरुमभिसम्पात-भीषणरु मोरेयूर-पुर**-वराधीश्वरमेनिप्प **चोळा**वनाशरोळु ॥ स्वस्ति श्रीमन्-महा-मण्डलेश्वरं त्रिभुवनमल्ल भुज-बळ-भीम रोद्द गाव खड्ग-सह-देव अरुवत्तारु-मण्डळिकर तलॆ-गोण्ड-गण्ड वण्टर बाव पर-नारी-सहोदर पडे मेच्चे गण्ड निगळङ्क-मल्ल भीतरं कोल्ल मरेवुगे काव शरणागत-वज्र-पञ्जरमसहाय-शूर येकाङ्गवीर निश्शंक-प्रताप-चक्रवर्त्ति वीर-दानव-मुरारि **पिरुङ्गोण-देव-चोळ-महाराजरु** श्री **पृथ्वी-निडुगल्लु**-नेलॆवीडिनोळु नेलास सुख-सङ्कथा-विनोददि राज्यं गेय्युत्तमिरलु **शक-वर्ष ॥ १२०० नेय ईश्वर-संवत्सरद आषाढ़-शुद्ध-पञ्चमी-सोमवारन्दु तैलङ्गेरेय जोग-मट्टिगेय** ब्रह्म **जिनालय**के मूल-संघ देशिय-गण कोण्ड-कुन्दान्वय पुस्तक-गच्छ यिङ्गळे-श्वद बळिय **त्रिभुवन कीर्त्ति-रावुळर** प्रधान शिष्यरु **बाळेन्दु-मलधारि**-द ... ... न **बोम्मि-सेट्टिगं मेळव्वेगं** पुट्टिद **मल्लि-सेट्टि तम्माडयहळ्ळिय** ... ... -डु-भागवू एरडु-माधिर-अडकय-मरनु **तैळङ्गेर**... बसदिय

प्रसन्न-पार्श्वदेवर प्रतिहस्तवागि मक्कळु-पर्य्यन्तं वृत्तिवन्तनेन्दुं **दक्षिण-पाण्ड्य-देशद दक्षिण-मधुरेय** उत्तर-भागदल्लि **पोन्नर** ··· न्नति-सीमेय **भुवलोक-नाथ-विषयद भुवलोकनाथन** वूर (पुर) जिन-ब्राह्मणरल्लि यजुर्व्वेददैत्रेय-**शाखे** वशिष्ठ-गोत्र कौण्डिन्य-मैत्रा-वरुण-वैशिष्टमेम्ब-प्रवरद **दीप-नायकङ्गं पोन्नव्वेगं** पुट्टिद श्री-**सयनगिरियुं** आ-**बाळेन्दु-मलधारि**-देवर प्रिय-शिष्यनु-मप्प **चेल्लपिल्ले**-हस्तदल्लि आ-चन्द्रार्क-त्तरं तन्न मेळि-भागवनु धारा-पूर्व्वकं वृत्ति-यागि कोट्ट ॥ यिन्तप्पुदक्के साक्षि इदिनेण्टु-समयं मल्लि-सेट्टि ओप्प श्री-वीतराग इदिनेण्टु-समयद ओप्प सदाशिव-देवरु (वही अन्तिम श्लोक)

[जिन शासनकी प्रशंसा ।

स्वस्ति । मार्त्तण्ड-कुल-भूषण, ओरेयूर्-पुरवराधीश्वर, चोळ राजा थे,—जिनमेंसे,—जिस समय महा-मण्डलेश्वर, यिरुङ्गोण-देव-चोळ-महाराज अपने पृथ्वी-निडुगलके निवासस्थानमें थेः—

(उक्त मितिको,) तैलङ्गेरेमें बोगमट्टिगेके ब्रह्मजिनालयके लिये, (मूल संघ, देशिय-गण, कोण्डकुन्दान्वय, पुस्तक-गच्छ, और इङ्गळेश्वर-बळिके त्रिभुवन-कीर्त्ति-रावुळके प्रधान शिष्य) बालेन्दु मलधारिके प्रिय गृहस्थ-शिष्य, सङ्गयके (पुत्र) बोम्मि-सेट्टि तथा मेळव्वेसे उत्पन्न,—**मल्लिसेट्टिने**, तैलङ्गेरे बसदिके प्रसन्न पार्श्व-देवके लिये, तम्मडियहळ्ळिमें सुपारीके २००० पेड़ोंके २ हिस्से वंशानुवंश तक जानेके लिये अलग निकाल दिये तथा दीपनायक और पोनव्वे-से उत्पन्न चेल्लपिल्लेको वे अर्पित कर दिये । (यहाँ दीपनायकके शहर, खानदान आदिका परिचय दिया है ।) चेल्लपिल्ले सयनगिरि और बालेन्दु-मलधारिका प्रिय शिष्य था । साक्षियों के हस्ताक्षर ।]

शाप ।

[EC, XII, Sira tl., No. 32.]

५२२

कलस—कन्नड़ ।

[शक १२००=१२७७ ई०]

[दूसरे ताम्बेके शासनपर]

स्वस्ति श्रीमत्-पट्टद पिरिपरसि **कळाळ-महादेवियरु** पृथ्वी-राज्यं गेयुत्तिरलु **शक-काल १२०० नेय ईश्वर-संवत्सरद** वृश्चिक ३ आ १ **कळसनाथ-**देवरिगे जिनेश्वर-देवरिगे मादेवसवागि **कलसेट्टिय मादव** दारेयनेरसिकोण्डा अक्कि मान २ नडवन्तागि निमानिय मेगे कोडङ्गिय नि ··· क सहितो गळु विट्टि वेसमा सलुव प १ सदे आव त्यरूगडेयू अल्ल अन्तप्पुदके साक्षि आ-मरसणिय नाळु कळसद हेब्बरुवकळु (औरों का नाम दिया है) कलसनाथदेवर अमृतयडिगे अक्कि कुडुते १ नील-कण्टकोबळ माकेयन कैयलि कोण्ड अलुगल-मकिय ··· हुलियहाळिय मेळे मुदुकिय तलेय गण्ण १ मेले न ··· अन्तप्पुदक्के साक्षि कळसद ग्राम आ-हेब्बारुवकळु ।

[जिस समय अभिषिक्त ज्येष्ठ रानी कलाल-महादेवी पृथ्वीका राज्य कर रहीं थीं :—(उक्त मितिको) जब कि यह कलसनाथ और जिनेश्वर दोनोंका महान् दिन था,—कलसेट्टिके पुत्र मादवने, सर्व करोंसे मुक्त; दो 'मान' धान्य (चावल) देनेके लिये (उक्त) दान दिया । साक्षी । उन्हीं देवताके लिये एक और भी (उक्त) भूमिका दान ।]

[EC, VI, Mudgere tl., No. 67 l.]

५२३

गिरनार—संस्कृत ।

[सं० १३३५ = १२७८ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

[Revised Lists ant. rem. Bombay (ASI, XVI p. 352-353, No. 9 (II part), t. and tr.]

५२४

हलेबीड—संस्कृत और कन्नड़।

[शक १२०१ = १२७९ ई०]

[बस्तिहळ्ळिमें, शान्तिनाथेश्वर बस्तिके पहिले ही प्रतिमा पाषाणपर]

(सामने)

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥
श्री-संघ-रै-कुमृति देशिय-सद्गणाख्य-
कल्याङ्घ्रिपो लसति पुस्तक-गच्छ-शाखः ।
श्री-कुण्डकुन्द-मुनिपान्वय-चारु-मूलः
सारेङ्गळेश्वर-वळि-प्रबळोपशाखः ॥
इन्तु पोगळ्ते-वेत्त यति-सन्ततियोळ् कुलभूषणाख्य-सै- ।
द्धान्तिक-शिष्यनूर्जित-जिनालय-कारक-निम्ब-देव-ना- ।
मान्तन सुव्रतक्के गुरु वाग्-वनिता-पति माघनन्दि-सै- ।
द्धान्तिक-चक्रवर्त्ति येसेदं वसुधा-पति-राजि-पूजितम् ॥
नमो ग्रन्थविमुक्ताय तच्छिष्याय विमुक्तये ।
विशुद्ध-जैन-सिद्धान्त-नन्दिने शुभनन्दिने ॥

तच्छिष्यरु ।

धवळ-यशो-नीरञ्जित- ।
भुवनं कवि-गमक-वादि-वाग्मि-वितान- ।
प्रवरं सार्त्थक-निज-ना- ।
म-विलासं चारुकीर्त्ति-पण्डित-देवम् ॥

तच्छिष्यरु ।

कु-मतौघ-निवारकनम् ।

नमस्करिप्पेम् जिनागमोद्धारकनम् ।
विमल-दयाधारकनम् ।
समुदायद माघनन्दि-भट्टारकनम् ॥
श्री-नेमिचन्द्र-भट्टारक-देवोऽप्यभयचन्द्र-सैद्धान्तोऽपि ।
इति शिष्याभ्यां गुरु-माघनन्द्यभूद्धर्म्म-इव ...भ्याम् ॥
तदुभयरोळ् अभयचन्द्र-सिद्धान्त-चक्रव (दायीं ओर) त्तिगळ महिमेयेन्तेने ।
वृ ॥ छन्दो-न्याय-निघण्टु-शब्द-समयालङ्कार-षट्-खण्ड-वाग्-
भू-चक्रं विवृतं जिनेन्द्र-हिमवज्जात-प्रमाण-द्वयी- ।
गङ्गा-सिन्धु-युगेन दुर्म्मत-खगोर्व्वीभृद्भिदा यत् स्व-धी-
चक्राक्रान्तमतोऽभयेन्दु-यतिपः सिद्धान्त-चक्राधिपः ॥
तदुभयमुं क्रमदिं दीक्षा-गुरुगळुं श्रुत-गुरुगळुमागे पेम्पु-वडेद ।
मालिनी ॥ नुत-गुण-मणि-कोशं कीर्त्ति-वल्लीवृताशं
वितत-सदुपदेशं शस्त-बोध-प्रकाशम् ।
कृत-मदन-निवासं नौमि निर्म्मोहपाशम्
हत-कुमत-निवेशं बाळचन्द्र-व्रतीशम् ॥
तन्मुनीन्द्र-शिष्यरु ।
स-विशेषागम-वाक्-सुधौषधमनीण्टल् कोट्टु कार-त्रि-दो- ।
ष-विकारङ्गळनेन्ति किल्तु विळसद्रत्नत्रयं रत्नया- ।
गे विनयाळिगे कट्टि रक्षिसिदनी-सिद्धान्त-चक्रेशनेम् ।
भव-रोगक्के सु-वैद्यनोवभयचन्द्रं बाळचन्द्रात्मजनम् ॥
सासिरदिन्नूरेरडेने- ।
या-शक-वर्ष-प्रमादि-समदूर्ज्ज-लसत्मा- ।
सासित-पक्षद नवमी- ।
शसिवार-त्रियामदोळ् तन्मुनिपम् ॥
अरिडात्मीय-समाधियं तोरदु सर्व्वाहारमं देहमं ।
मेरेदिप्पोभतेयं नगं पोगळे पर्य्यङ्कासन-प्रातियिम् ।

नेरेबल्पोद्द-कलांशुवं दिवदोळं वोर्प्पेन्दलेम्कन्ददिम् ।
तरिसन्दं सुर-मन्दिरक्कभयचन्द्रं सन्द्र सैद्धान्तिकम् ॥
- मुद्दमयचन्द्र-सिद्धान्- ।
ति-देवरमाद निशिधियं दोरसमु- ।   . . . . .
द्रद नरवरङ्गळ् निर्म्मिसि ।
विदित-यशः-पुण्य-वृद्धियं कैकोण्डर् ॥

मंगलमहा श्री श्री श्री ॥

(बायीं ओर) श्री-अभयचन्द्र-सिद्धान्ति-देवर् तम्म शिष्य-बाळचन्द्र-देवरिगे व्याख्यानं माडिदपरु ॥ श्री श्री

[इस लेखमें बालचन्द्रके श्रुतगुरु अभयचन्द्र महासैद्धान्तिकके समाधि मरणका उल्लेख है ।

जिन शासनकी प्रशंसाके बाद श्री-संघ (मूलसंघ) को एक पर्वत मानकर उसके ऊपर देशिय-गणको एकवृक्षकी उपमा दी है । इस कल्पवृक्षकी जड़ कुन्द-कुन्दान्वय है, इसकी शाखाएँ पुस्तक-गच्छ हैं, और इसकी उपशाखायें इङ्ग-लेश्वर वलि हैं । इसी प्रसिद्ध परम्परामें कुलभूषण-सैद्धान्तिक, उनके शिष्य एक जिन-मन्दिरके संस्थापक निम्बदेव-सामन्त हुए । उस सामन्तके चारित्र-गुरु माघ-नन्दि-सैद्धान्तिक-चक्रवर्त्ति हुए ।

एक गण्डविमुक्त हुए, उनके शिष्य शुभनन्दि-सैद्धान्त, उनके शिष्य चारु-कीर्त्ति-पण्डित-देव, उनके शिष्य समुदायद-माघनन्दि-भट्टारक थे । माघनन्दिके दो शिष्य हुए,—नेमिचन्द्र-भट्टारक-देव और अभयचन्द्र सैद्धान्ती । तत्पश्चात् अभय-चन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्तीकी महिमाका वर्णन । ऊपरके ये दोनों बालचन्द्र-व्रतीशके क्रमसे दीक्षागुरु और श्रुतगुरु थे । बालचन्द्रके पुत्र अभयचन्द्र बालचन्द्रके ... थे हुए । (उक्त मितिकी) रातको अपने सल्लेखनाके समयको जानकर, उसकी विधिको धारण करके अभयचन्द्र महासैद्धान्तिक दिवंगत हुए ।]

[EC, V, Belur tl., No. 133.]

५२५

कडकोल;—कन्नड।

[शक १२०१ = १२७९ ई०]

[कडकोल गाँवके अन्दर हणमन्त या हनुमान मन्दिरके पासके स्मारक पाषाण पर यह अभिलेख है]

[१] स्वस्ति श्री स (श) कवर्ष १२०१ प्रमाथि-संवत्स-
[२] रद भाद्रपद सु (शु) द्ध छ [ट्] टि सोमवारदन्दु श्रीम-
[३] न्-मूलसंघद पद्मसि (? से) न-भट्टारकदेवर गु-
[४] [ड्] डि कडकोळद सावन्त सिरियम-गौडन हेण्डति
[५] चण्डिगौडि सर्व्व-निव्रि (वृ) त्तियं कयि-कोण्डु स-
[६] माद्धि (धि) यिं मुडिपि स्वर्गप्राप्तेयाद निषिद्धि (धि)-
[७] य स्तम्भम् [।] मंगळ-महा-श्री-श्री-श्री [॥]
[८] हिर्य्य-बोप्पगौड चिक्क-बोप्पगौड चिक्कगौड
[९] क (?) लिदेव रुवा (?) घ (?) विरिदेव मुख्य इन्नेरडु-हि-
[१०] ट्टु समस्त-प्रजे बसदिगे कोट्ट येरे मत्तरु १ [।] श्री-
[११]-वान्य मङ्गल-महा-श्री-श्री-श्री [॥]

अनुवाद—स्वस्ति ! पवित्र मूल संघके पद्मसेन-भट्टारकदेवकी गुड्डि (शिष्या या अनुयायिन); (तथा) कडकोळके सावन्त-सिरियमगौडकी पत्नी चण्डिगौडिकी (स्मृतिका) यह 'निषिधि'-स्तंभ है। उसने यह समाधि सर्व इन्द्रियोंके विषयोंसे निवृत्त होकर तथा सर्व सांसारिक कार्योंका त्याग करके प्रमाथि संवत्सर—जो शक वर्ष १२०१ था—के भाद्रपद (महीने) के शुक्ल पक्षकी छठ, सोमवारको ली थी स्वर्ग प्राप्त किया था। मंगल और लक्ष्मी बढ़े ! १२ हिट्टु तथा हिर्य्य-बोप्प गौड, चिक्क-बोप्पगौड चिक्कगौड, (?) (कलिदेव, (तथा) रुवाघविरिदेव प्रमुख सब लोगोंने बसदिके लिये ! 'मत्तर' काली-मिट्टी वाली भूमि दी। मंगल-महा-श्री-श्री-श्री !

[IA, XII, P. 100–101. No 2. T and Tr]

५२६

चिक-मगलूर—संस्कृत तथा कन्नड़

[शक १२०२=१२८० ई०]

[चिकमगळूरमें, लालबागमें एक पाषाण पर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ।

श्रीमन्-नाळ्-प्रभु सु-चरितनेने विनय-निधियु निर्म्मल-चित्तं प्रेमं बुध-जननिकरका-लय वासुनेमं सकळजनकाधारं धार्मिष्टं वीरं धुरन्धरं पुरुषाकारं कामरूपं मसण-गावुण्डनग्र-तनूजं सोम-नामं धरेयोळ् ।

जिन-समय वर्धि-वर्द्धन [न्] । अनवरतं चातु-र्वर्णक्कितुं तणियम् ।
घन-महिम-श्रेयांस-। मुनियगुड्डनु विनय-निधि चलदङ्ग-रामनेनिपं सोमम् ॥
आरहि-गौण्डेयव्वे ··· । सारदे गुण-रत्न-भूमि-चिन्तामणिय ··· ।
··· रं नोव्वं ताय्वरे । तोरद ··· ··· सोम-गौण्डनेम्व निधानम् ।

स्वस्ति परम-जिन-समय-समुद्धरण-करण-परिणतनुमेनिसिद श्री-मूल-संघद देशि-गण-पोस्तुक-गच्छ हनसोगेय वळि कोण्डकुन्दान्वयद श्रेयान्स-भट्टा-रक गुड्ड चिकमुगुळिय मसण-गौडनग्र-सुत सक-वरुस१२०२ नेय विक्रम-संवत्सरद श्रावण-शुद्ध-तदिगे मंगळवारदन्दु सोम-गौड समाधि वडदु सुर-लोक-प्राप्तनाद ई-निषिधिय कल्ल आतन मग हेग्गडे-गौड प्रतिष्ठे माडिद अष्ट-विधार्च्चनें नडवगे कावविय ·· गुळिय गद्दे ··· कोम्ब ५ ··· ···

[जिन शासनकी प्रशंसा । मसण-गौडके पुत्र सोमकी प्रशंसा ।

चिक-मुगुळिके मसण-गौडके ज्येष्ठ पुत्र सोम-गौड, जो श्री-मूलसंघ, देशि-गण, पोस्तक-गच्छ, हनसोगे-बलि तथा कोण्डकुन्दान्वयके श्रेयान्स-भट्टारकका गृहस्थ-शिष्य था, के समाधिमरण धारणकर स्वर्ग जानेके बाद, उसका यह स्मारक-पाषाण

उसके पुत्र हेग्गडे-गोडने खड़ा किया था। उस समय अष्टविध पूजनके लिये (उक्त) भूमिका दान दिया था।]

[Ec, VI, Chikmagalur tl., No, 2]

५२७

श्रवणबेल्गोला—कन्नड़।

[शक १२०३ (ठीक १२०१ ?)=१२८१ ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

५२८

श्रवणबेल्गोला—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक १२०५ = ११८२ ई०]

[जैन शिलालेख संग्रह, प्रथम भाग

५२९

गिरनार—संस्कृत।

[सं० १३३९=१२८२ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[Revised-Lists ant rem Bambay (ASI, XVI), p. 352-353, No 9 (lst parh), t. and tr.]

५३०

गिरनार—संस्कृत।

[सं० १३३९ = १२८२ ई०]

श्वेताम्बर लेख

[Ant. Kathiawad. and kachh (ASWI, II), p. 169, tr.]

५३१

कण्ठकोट;—संस्कृत ।

[सं० १३४० = १२८३ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

[ASWI, Selections, No. CLII, p, 64, a.; p. 86, t. (ins, No. 26).]

५३२

सियाल-बेट;—संस्कृत ।

[सं० १३४३ = १२८६ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

[ASI, XVI, p. 254, t.]

५३३

श्रवणबेलगोला;—कन्नड़ ।

[वर्ष सर्वधारी=शक १२१०—१२८८ ई० (कीलहौर्न)]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

५३४

तवनन्दि;—कन्नड़ ।

[वर्ष सर्वधारी = १२८८ ई० ?]

[तवनन्दिमें, किलेकी बस्तिके दक्षिणकी ओरके समाधि-पाषाणपर]

स्वस्ति श्रीमतु सर्व्वधारी-संवत्सरद आषाढ़-सुद्ध-तदिगे-बृहस्पति-वारद श्रीमतु काणूर-गणद . माघवचन्द्र-देवर गुड्डि श्रीमत्-नाळु-प्रभु माळि-गौडन

सोसे अप्पे-गौडन हेण्डति श्रीमत्-नाळ-प्रभु उदरैयन मगळु सिरियव्वे समाधि-विधियिं मुडिपि स्वर्गस्तेयादळु मङ्गळ महा श्री श्री

[यह लेख भी समाधि-मरणकी विधि लेकर स्वर्ग प्राप्त करने का है ।]

[EC, VIII, Sorab tl., No. 195.]

५३५

हिरे-आवलि;—संस्कृत तथा कन्नड ।

[हिरे-आवलिमें, ध्वस्त जिन-बस्तिके सामनेके १३वें पाषाणपर]

श्रीमत्-परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ।।

श्री-रामदेव-राज्यद-विकृत संवत्सरद भाद्रपद-ब ४ सु मलधारि-देवर गुड्ड चोळय समाधियिं मुडिपि स्वर्गास्थनादनु मङ्गळ

[लेख स्पष्ट है । ईस्वी सन् १२६०; राम-देवका राज्य था ।]

[EC, VIII, Sorab tl., No. 113]

५३६

पर्वत आबू;—संस्कृत ।

[सं० १३२० = १२६३ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

[Asiat. Res., XVI, p. 311, No. XXII, a.

५३७

गिरनार;—संस्कृत-भग्न ।

[सं० १३५० = १२९३ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

[Revised Lists ant. rem. Bombay (ASI, XVI), p. 360–361, No. 33, t. & tr.]

५३८

हिरे-आवलि;—कन्नड़।

[?]

[हिरे-आवलिमें, ध्वस्त जिन-बस्तिके सामनेके २४वें पाषाणपर]

श्री स्वस्ति श्रीमतु यादव-नारायणं भुज-बळ-प्रौढ़-प्रताप-चक्रवर्त्ति श्री-रामचन्द्र-राज्योदयद २२ नेय जय-संवत्सरद पुष्य-बहुळ-अष्टमी-आदिवारदन्दु श्रीमन्-नाळ्-प्रभु अवलिय-माद-गौडन मग काम-गौडन तम्म बेळ-गौडन हेण्डति मूल-संघ सेन-गण कोण्डकुन्दान्वयद कन्तरसेन-देवर गुड्डि बक्कचि-गौडि समाधि विधियि मुडिपि स्वर्ग-प्राप्तळादळु मङ्गळ महा श्री

[लेख स्पष्ट है। ईस्वी सन् १२५५; रामचन्द्रका राज्य था।]

[EC, VIII, Sorab tl., No. 124.]

५३९

खम्भात (Cambay);—संस्कृत-भग्न।

[सं० १३५२=१२९५ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[Bhavnagar Ins., p. 227-233, t. and tr.]

५४०

तवनन्दि;—कन्नड़।

—[?] पर ई० १२१२

[तवनन्दिमें, पाँचवें समाधि-पाषाणपर]

कलि-बलि-महदेवण्णन।

कुलमुमनुद्धरिसलेन्दु रामन बसरोळ्।

सले पुष्टि कीर्त्ति-वर्द्धेदम् ।
बल-युत दण्डेश-माधवं वसुमतियोळ् ॥
सकळ-गुण-भरिते जिन-पा- ।
द-कमळ-युग भक्ते अरसलाङ्गने या··· ।
सु-कवि-सुरभूज- दण्णा- ।
यक-माधवनेसदनखिळ-वसुधा-तळदोळ् ॥
श्रीमच्चन्दन-वत्सरे परिलसज्-ज्येष्ठे तु मासे सिते
पक्षे रुद्र-(मिते) दिने गुरौ च विमळे वारे-कळा-कोविदः ।
श्रीमन्माघचन्द्र-देव-चरणाम्भोजात-भृङ्गो जगद्-
विख्याताभित-कल्प-वृक्ष-सदृश-श्री-माधवाख्य-प्रभुः ॥
स्वामि वञ्चकरोळ् गण्डस् सर्व्व-सांसारिकं पुरा ।
त्यक्त्वा जिनालयं कृत्वा ख्यातं तवनिधावळम् ॥
सोऽयं प्रभुगळादित्यस्समाधि-विधिना भुवि ।
नाक-लोकमगाद् दण्डनाथ-श्री-माधव-प्रभुः ॥

श्रीमद्-यादव-नारायणं भुज-बळ-प्रौढ़-प्रताप-चक्रवर्त्ति श्री वीर-रामचन्द्र-राय-विजय-राज्योदयद २३ नेय नन्दन-संवत्सरद ज्येष्ठ-व. ११ गुरुवार-दन्दु श्रीमत्-काणूर्-ग्गणद माघवचन्द्र-भट्टारकर गुड्ड श्रीमत्-नाळ्-प्रभु प्रभुगळादित्यं प्रजे-मेचे-गण्डं ··· ··· ··· दण्णायक-माडि-गौडं समाधि-विधियिं मुडुपि स्वर्गा-प्राप्तनादनु मङ्गल महा श्री श्री

[वीर महदेवणके कुलको आनन्दित करनेके लिये रामकी कुक्षिसे दण्डेश-माधव उत्पन्न हुआ था। वह माघचन्द्र-देवके चरण-कमलोंका भ्रमर था, उसने तमाम कौटुम्बिक बन्धनोंको छोड़कर, जिनमन्दिर बँधवाकर समाधिमरणपूर्वक स्वर्गको प्रयाण किया था। यादव-नारायण, भुजबल-प्रौढ़-प्रताप-चक्रवर्ती, वीर-रामचन्द्र-रायके विजय-राज्यमें, (उक्त मितिको), काणूर-गणके माघवचन्द्र-भट्टारकके गृहस्थ शिष्य-नाळप्रभु दण्डनायक माडि-गौड स्वर्गको गये।]

[EC, VIII, Sorab tl., No. 198]

५४१

हिरे-आवली;—कन्नड़।

—[१]=१२६१ ई० का

[हिरे आवलिमें, ध्वस्त जिन-वस्तिके सामनेके पाषाणपर]

स्वस्ति श्रीमतु यादव नारायणम् भुव-बळ प्रवुड-प्रताप-चक्रवर्त्ति श्री-रामचन्द्र-विजय-राज्यदोयद १ १३ नेय मनुमथ(मन्मथ)-संवत्सरद् मार्ग्गसिर-बहुळ १३ य ······ श्रीमन्-नाळ्-प्रभु आवलिय कामं काळ-गवुडनु श्री मूल-संग (घ) द कोण्डकुन्दान्वयद सुराष्ट्र-गणद देवणन्दि-देवर गुड्ड समाधि-विधियिं मुडिहि स्वर्गस्तनादनु मङ्गल महा श्री ॥

[स्वस्ति। यादव-नारायण, भुवबळ-प्रौढ़-प्रताप चक्रवर्ती रामचन्द्रके विजय-राज्यके २३वें (१) वर्षमें, जो कि मन्मथ वर्ष था, (उक्त मितिको), श्री-मूल-संघ, कोण्डकुन्दान्वय तथा सुराष्ट्र-गणके देवनन्दि-देवके गृहस्थ-शिष्य, नाळ्-प्रभु आवळि-काळ-गावुड, समाधि-विधिको धारण करके, स्वर्गको गया।]

[EC, VIII, Sorab tl., No. 101.]

५४२

हुम्मच;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक १२१८ = १२९६ ई०]

[उसी स्थानपर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥

स्वस्ति श्रीमतु शक-वर्ष १२१८ नेय दुर्म्मुखि-संवत्सरद् पुष्य सु-विदिगेतु श्री-गुणसेनर्-सिद्धान्त-देवर प्रिय-गुड्ड यादगवुड समाधि-विधियिं मुडिपि सुर-लोक-प्राप्तनाद मङ्गळ महा श्री

[जिन शासनकी प्रशंसा। स्वस्ति। (उक्त मितिको), गुणसेन सिद्धान्त-देवके प्रिय गृहस्थ-शिष्य याद-गवुडने 'समाधि'-विधि द्वारा देवलोक प्राप्त किया।]

[EC, VIII, Nagar tl., No. 43.]

५४३

श्रवणबेल्गोला—कन्नड़।

[वर्ष दुर्म्मुखि=१२१६ ई० ? (लू० राइस)]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

५४४

हिरे-आवलि;-संस्कृत तथा कन्नड़।

[वर्ष दुर्म्मुखि= १२१६ ई० ? (लू० राइस) ।]

[हिरे-आवलिमें, ध्वस्त जिन-वस्तिके सामनेके १४ वें पाषाण पर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम्॥

स्वस्ति श्रीमन्महामण्डलेश्वरं **कोटि-नायकन** विजय-राज्योदयद **दुर्म्मुखि-संवत्सरद भाद्रपद-ब १३ आ।** श्रीमन्-नाळ्-प्रभु अवलिय काळ-गौडन पुत्र सिरियम-गौडन मग श्री-मूलसंग (घ) देसि-गणद रामचन्द्र-मलधारि-देवर गुड्ड कल्ल-गौड सन्यसन-समाधियिं मुडिपि स्वर्गास्तनाद मङ्गल महा श्री श्री श्री

[लेख स्पष्ट है। ईस्वी सन् १२६६ (?); कोटि-नायकका राज्य था।]

[Ec, VIII, Sorab tl. No 114]

५५७

हिरे-आवलि;—कन्नड़ ।

[वर्ष विकारी = १२९९ ई० ? (लू० राइस) ।]

[हिरे-आवलिमें, ध्वस्त जिन बस्तिके सामनेके १२ वें पाषाण पर]

स्वस्ति श्रीमन्महामण्डलेश्वरं तुळुव-राय ······ ··· राय-बेण्टेकार मलेयमण्डलिक-मदेभ-कुम्भ-विदळन-वेदण्डारि-सदृश श्रीमन्महामण्डलिक कोटि-नायकन राज्याभ्युदयदन्दु विकारि-संवत्सरद श्रावण-मास-शुक्लपक्ष-पञ्चमी-शनिवारदन्दु श्री-मूल-संघ देशी-गण-कोण्डकुन्दान्वयद समस्त-गुण-शील-सम्पन्नरप्प गुणनन्दि-भट्टारकर गुड्डि खण्ड-स्फुटित-जीर्ण्ण-जिनालयोद्धरण-परिणतान्तःकरणनु आहाराभय-भैषज्य-शास्त्र-दान-विनोदनुं सम्यक्त्व-रत्नाकरनु जिन-गन्धोदक-पवित्रीकृतोत्तमांगनुमप्प श्रीमन्-नाळ्-प्रभु अवलिय शिरियम-गौडन सर्व्वांग-लक्ष्मि शिरियम-गौडि सकळ-सन्यसन-पूर्व्वकं समाधियिं मुडिपि स्वर्गस्तेयादळु ॥ मंगल महा ! श्री

[लेख स्पष्ट है । १२९९ ई०; कोटि-नायकका राज्य था ।]

[Ec, VIII, Sorab tl., No 122.]

५५८

हलेबीड—संस्कृत और कन्नड़ ।

[शक १२२२ = १३०० ई०]

[बस्तिहल्लिमें, दूसरे प्रतिमा-पाषाण पर]

(१सामने)

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

स्वस्ति श्री मूल-संघ-देशिय गण-पुस्तक-गच्छ-कुण्डकुन्दान्वयद पिङ्गलेश्वरद बळिय श्री-समुदायद **माघनन्दि-भट्टारकदेवर** प्रिय-शिष्यर श्री-**नेमिचन्द्र-भट्टारक-देवर** श्रीमद्**भयचन्द्र-सिद्धान्त-चक्रवर्त्तिगळुं** विद्या-गुरुगळुं श्रत-गुरुगळुमागे तपश्श्रुतंगळिं जगदोळ् विख्यातियं पेट्ट श्रीमद्**बाळचन्द्र-पण्डित-देवर** प्रियाग्र-शिष्यरमप्प श्रीमद्**रामचंद्र-मलधारि-देवरु सक-वरुष-सासि-रदिन्नूरिप्पत्तेरडनेय सार्व्वरि संवत्सरद-चैत्र-बहुल-बदिगे-बृहद्वार-दपराह्णकालदोळेमगे** समाधियेन्दु चातुर्व्वर्णंगळुगरिपि (बार्यी ओर) नीमेल्लरुं धार्म्मिकरप्पुदेन्दु नियामिसि क्षमितव्यमेन्दु सन्यसनपूर्व्वकं सकळ-निवृत्तियं माडि पर्य्यङ्कासनदिं पञ्च-गुरु-चरण-स्मरणेयं माडुत्त दिवके सन्दरु। अवर तपो-माहात्म्य-मेन्तेन्दोडे।

नडेवडे बाहु-युगड युगान्तरमं नेरे नोडदाक्रगम् ।
नुडेयद कामिनी-कनकमं सले शोकद कर्कसङ्कळम् ।
नुडियदहर्निशं विकथेयं मारेदाडद मोह-पाशदोळ् ।
तोडरट्ट ••• **मलधारिय** ••• ••• ••• विराविक्रमम् ॥

श्रीमद्रामचन्द्र मलधारि-
देवर तम्म प्रियाग्र-शिष्यरु-
मप्प **शुभचन्द्र-देवरिंगे** श्रे-
यो-मार्गोपदेशमं माडियरु
अवर केळिदरु ॥

श्रीमद्-बालचन्द्र-पण्डित-देवर
तम्म प्रियाग्र-शिष्यमरप्प श्री-
मद्-**रामचन्द्र-मलधारि-देवरिंगे**
सारचतुष्टयं मोडलाद ग्रन्थगळ
व्याख्यानं माडिदरु अवर केळिदरु ॥*

पिन्तु पोगळ्ते-वेत्त श्रीमद्रामचन्द्र-मलधारि-देवर प्रतिकृति-समन्वित-पञ्च-परमेष्ठिगळ प्रथुमेगळं श्रीमद्-राजधानि-**दोरसमुद्रद** मन्यजनंगळुं माडिसि पुण्य-वृद्धि-यशोवृद्धिय कैकोण्डरु ॥ भद्रमस्तु जिनशासनाय मंगल महा श्री ॥

[इस लेखमें रामचन्द्र-मलधारि-देवके सल्लेखना-व्रत लेनेका उल्लेख है। रामचन्द्र-मलधारिदेवके गुरु बालचन्द्र-पण्डित-देव, इनके गुरु माघनन्दि-भट्टारक

* ये दो प्रतिमाओं पर लिखे हुए हैं।

देव, जो मूलसंघ, देशिय-गण, पुस्तक गच्छ, कुण्डकुन्दान्वय, पिङ्गलेश्वर-
और श्री-समुदाके थे। वा० प० दे० के विद्यागुरु नेमिचन्द्र-भट्टारक-देव
श्रुत-गुरु अभयदेव-सिद्धान्त-चक्रवर्त्ति थे। रा० म० दे० के शिष्य शुभचन्द्र
थे। इनकी प्रतिमा दोरसमुद्रके जैनोंने बनायी थी।

[Ec, V, Bel w tl., No 134]

५४९

हलेबोड—कन्नड़।

[बिना काल-निर्देशका पर लगभग १२०० ई० ?]

[हलेबीडसे लगी हुई बस्तिहल्लिमें, पार्श्वनाथ बस्तिके बाहरकी
दीवालके स्तम्भ पर]

ईशान्यद-आदि-मोदलागि ईशान्यद हदिनैदु-कैयन्तरदलु आलगय्युं
शान्तिनाथ-देवरु भूमिस्थवागिद्दहरु आवनानुं पुण्य-पुरुषं तेगदु प्रतिष्ठेय
पुण्यमं माडिकोळुवुदु ॥

[ईशान दिशासे शुरू करके, उससे (ईशान दिशासे) १५ बित्त
अन्तरपर शान्तिनाथ देव, जिनकी ऊँचाई ६ बिलस्त है, जमीनके अन्द
हुए हैं। कोई पुण्य-पुरुष उनको बाहर निकालकर, उनकी प्रतिष्ठाकर पु
लाभ ले।]

[Ec, v, Belur tl. No 127]

५५०

पर्वत आबू—प्राकृत।

[सं० १२५० = १२०२ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[Asiat, Res, XVI, P. 311, No XX, a.]

५५१

होन्नेनहल्लि;—कन्नड़ ।

[शक १२२५ = १३०३ ई०]

[होन्नेनहल्लि (किज्जाजि प्रदेश) में, बस्तिके प्रवेशके बायीं ओरके पत्थरपर]

स्वस्ति श्री मूलसंघ देशियगण पोस्तकगच्छ कोण्डकुन्दान्वय हनसोगेय बळिय श्री **बाहुबलि-मलधारि-देवर** प्रिय-शिष्य-रुमप्प **श्री-पद्मनन्दि-भट्टारक-देवरु शक-वर्ष १२२५ शुभकृतु-संवत्सरदन्दु होन्नेयनहळ्ळिय** बसदिय गन्ध-गुडियनु गद्याणं हदिनय्दनू कोट्टु माडिसिदरु (**बाहुबलि-देवरु पारिश्व-देवरु** बरसिदरु) मङ्गळमहा श्री. इवनळिदवरु नरकक्के लोहरु ॥

[पद्मनन्दि-भट्टारक-देवने, जो मूलसंघ देशीगण पुस्तकगच्छ तथा कोण्डकुन्दान्वयके, और हनसोगेके बाहुबलि-मलधारि-देवके प्रिय शिष्य थे, होन्नेयनहल्लि बसदिको १५ 'गद्याण' (गद्याण एक सिक्का (मुद्रा) विशेष है) दिये और उसके लिये 'गन्ध-गुडि' भी बनवायी थी। (इस लेखको बाहुबलि-देव और पारिश्व-देवने लिखा था।)]

[EC, IV, Hunsur tl., No. 14]

५५२

श्रवणबेल्गोला;—कन्नड़ ।

[शक १२३५ = १३१३ ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भाग]

५५३

गिरनार,—संस्कृत

[सं० १३७०=१३१३ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[Revised Lists ant. rem. Bombay (ASI, XVI), p. 362, No. 36, t. and tr.]

५५४

पर्वत आबू—संस्कृत।

[सं० १३७९ = १३२२ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[Asiat. Res. XVI, p. 312, No XXII, a.]

५५५

कुप्पटूरु;—संस्कृत तथा कन्नड़।

वर्ष चित्रभानु [१३४२ ई० (या १४०२.) ? (लू. राइस)]

[कुप्पटूरमें, चौथे पाषाणपर]

श्रीमत्परम-गंभीर-स्याद्वादामोघ-लाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥
द्वीपे जम्बूमति क्षेत्रे भारते ओघराज्वते ।
चन्द्रगुप्तेन सु-क्षेत्र-धर्म्मगेहेन धीमता ॥
रक्षितो दक्षिणा-पा ··· -जन-सम्पद्-विराजितः ।
अखण्डैश्वर्य-निलयो नागरखण्डक-नाम-भाक् ॥

स्वस्ति-मागस्ति विषयो विषयोऽखिल-सम्पदाम् ।
निलयो लय-राहित्यादाश्रतां धीमतां सताम् ॥
॥ नाळिकेराम्र-पूगा [···] द्यारामेण विराजितः ।
विद्यते **कुप्पटूराख्यो** ग्रामो **गोपेश**-रक्षितः ।
तत्रास्ति **हरिहर**धीश-भू-सती-तिलकोपमः ।
जिन-चैत्यालयो नाम **कदम्बैः** कृत-शासनः ॥
तच्चैत्य-पूजनोद्योग-चातुरी-वार्द्धि-चन्द्रमाः ।
चन्द्रप्रभ इति ख्यातः **पार्श्वनाथस्य** बान्धवः ॥
पितृ-**दुर्गेश**-निर्दिष्ट-गुरु पण्डित-सेवकः ।
**वर्त्तमाने चित्रभानौ वत्सरे कार्त्तिके च सः ॥
मासे स कृष्ण-दशमी-तिथौ सोम-समाह्वये ।**
वारे दुर्व्वार-यम-राड्-दूत-ज्वर-गदार्द्दितः ॥
आयुः-परिसमाप्तेश्च कृत-पुण्य-परिग्रहः ।
सं-सुतः ··· ··· ··· ··· नित्य-सुखास्पदम् ॥

श्री श्री

[जम्बूद्वीप, भरतक्षेत्रमें श्रीधरपर्वतके पास नागरखण्ड नामका एक प्रदेश था। उसमें अनेक फल सहित वृक्षोंके बगीचों सहित, गोपेश द्वारा रक्षित कुप्पटूर् नामका गाँव था। उसमें राजा हरिहरकी भूमिमें एक जिन-चैत्यालय था, जिसमें कदम्बोंकी तरफसे एक शासन (दान-लेख) मिला था। उस चैत्यमें पार्श्वनाथके बान्धव प्रसिद्ध चन्द्रप्रभ थे जो कि एक पण्डितकें गुरू थे। (उक्त मितिको) उसे यमराजके दूतोंकी तरफसे बुखार आ गया और अपनी जिन्दगीका अन्त करके नित्य सुखके स्थान (अर्थात् स्वर्गको) चला गया।]

[EC, VIII, Sorab tl., No. 263]

५५६

हिरे-आवलि;—कन्नड़।

[वर्ष विजय = १३४६ ई० ? (लू. राइस) ।]

[हिरे-आवलिमें, ध्वस्त जैन-वस्तिके सामनेके पाषाणपर]

व्यय-संवत्सरद ज्येष्ठ-सु ५ गु **रामचन्द्र-मलधारि** गुरुगळ गुड्ड अवलिय **चन्द्र-गौडन** मग **राम-गौड** जिन-पदवनयिदिद।

[लेख स्पष्ट है। १३४६ ई०; राजाका उल्लेख नहीं है।]

[EC, VIII, Sorab tl., No. 123]

५५७

तिरुमलै,—तामिल।

[?]

१. स्वस्ति श्री [॥] **राजनारायणन् शंबुवराजक्कुं** या-

२. ण्डु १२ वदु **पोन्नूर् मण्णैपोन्नाण्डै**

३. मगळ् **नल्लात्ताळ् वैगैत्तिरुमलैक्कु** एरियरुळ-

४. प्पण्णिन श्री**विहारनायनार् पोन्नेयिल्**-

५. **नाथर्** [।] धर्म्मयिज्ञयतु [॥]

[यह लेख राजनारायण शम्बुवराजके १२वें वर्षका है और वैगै-तिरुमलै, अर्थात् वैगैके पवित्र पर्वतपर जैन प्रतिमाकी प्रतिष्ठापनाका उल्लेख करता है। इस प्रतिष्ठापनाकी करनेवाली पोन्नूरकी निवासी मण्णै-पोन्नाण्डैकी पुत्री नल्लाताल् थी।]

[South Indian ins., I, No. 70 (p. 101–102) t. & tr.]

५५८

हिरे-आवलि;—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[वर्ष विजय=१३५३ ई० (लु. राइस) ।]

[हिरे-आवलिमें, ध्वस्त जैन-बस्तिके सामनेके १०वें पाषाणपर]

श्रीमत्परम-गंभीर-स्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥

स्वस्ति श्रीमन्महामण्डलेश्वरं अरि-राय-विभाडु श्री-वीर **हरियप्प-वोडेयर** राज्योदयदन्दु **विजय संवत्सरद** पुष्य-शुद्ध ३० शु ॥ श्रीमनाळुव-प्रभु **राम-चन्द्र-मलधारि-देवर** गुड्ड सुरगियहळ्ळिय **गोप-गौडनु** मग अवलिय **काम-गौण्डन** मोम्म **काम-गवुडनु** पञ्च-नमस्कारदिं मुडिहिद मङ्गल महा श्री

[लेख स्पष्ट है । १३५३ ई०; उस समय हरियप्प-वोडेयरका राज्य था ।]

[EC, VIII, Sorab. tl., No. 110]

५५९

हिरे-आवलि;—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[शक १२७६=१३५४ ई०]

[हिरे-आवलिमें, ध्वस्त जैन-बस्तिके चौथे पाषाणपर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

स्वस्ति श्रीमन्महामण्डलेश्वरं अरि-राय-विभाडु **हिन्दुव-राय-सुरताळ** श्री-वीर-हरियप्प-वोडेयर राज्योदयदन्दु **शक-वरुष १२७६ विजय-संवत्सरद** पुष्य-बहुळ-त्तदिगे आ ॥ श्रीमनाळुव-प्रभु-आवलिय काम-गौडन मग सिरियम-गौड

सिरियम-गौडन सुपुत्र मल-गौडनु सन्यासन-समाधियिं मुडिपि स्वर्गस्तनादनु आतन अर्द्धाङ्गि चेन्नकनु सहगमनदिं स्वर्गस्तेयादलु । मंगळ मा (महा) श्री श्री

[ऊपरके उल्लेखोंके समान ही, महामण्डलेश्वर, शत्रु राजाओंका नाशक, हिन्दुव राजाओंका सुरताल, हरियप्प-वोडेयरके राज्यमें,—स्वर्गगत मालगौड तथा उसकी भार्या चेन्नके, जिसने 'सहागमन' करके स्वर्ग प्राप्त किया, के लिये भी उल्लेख है ।]

[EC, VIII, Sorab tl.. No. 104]

५६०

मलेयूर;—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[शक सं० १२७७=१३५५ ई०]

[उसी पहाड़ीपर, बड़े गोल पत्थरके पूर्वकी ओर]

स्वस्ति समस्त-प्रशस्ति-सहितं श्री **मूलसंघ देशिय-गण कोण्ड-कुन्दान्वय पुस्तक-गच्छ हनसोगेय बळिय** श्रीमद्-राय-राजगुरु-मण्डलाचार्य-समयाचरण-रुमप्प **हेमचन्द्र-भट्टारकर** शिष्यरु **तेलुग आदि-देवरु ललितकीर्त्ति-भट्टारकर** शिष्यरु **ललितकीर्त्ति-भट्टारकरु शक-वरुष १२७७ मन्मथ-संवत्सरद** चैत्र-बहुळ १४ गुरुवारदल्लु तम्म निषिधि-निमित्तागि कनकगिरि-यल्लु माडिसिद **विजय-देवर** प्रतिमेगे अवर मुख्यवाद आचार्य्य ओलगरु मङ्गलमहा श्री श्री श्री

[श्री-मूलसंघ, देशियगण, कोण्डकुन्दान्वय, पुस्तकगच्छ तथा हनसोगे-बळिके हेमचन्द्र-भट्टारकके शिष्य तेलुग आदि-देव और ललितकीर्त्ति भट्टारकके शिष्य ललितकीर्त्ति भट्टारकने अपनी निषिधिके निमित्तसे कनक-गिरिपर **विजय-देवकी** प्रतिमा बनवायी ।]

[EC, IV, Chamarajnagar tl., No. 153]

५६१

कणवे;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक १२८४ = १३६२ ई०]

[कणवेमें, मण्डगद्देके समीप, कस्लु-बस्तिमें एक पाषाणपर]

श्री-मूल-संघ-देशी-।
गण - क-गच्छ कोण्डकुन्दान्वयदोळ्।
भूमियोळखिळ-कला···।
काम-करं चारुकीर्ति-पण्डित यतिपम्॥
श्रीमत्परमगम्भीर-स्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम्॥

स्वस्ति श्रीमन्महा-मण्डलेश्वरमरि-राय-विभाड भासेगे तप्पुव रायर गण्ड समुद्र-त्रयाधीश्वर श्री-सङ्गमेश्वर-कुमार श्री-वीर-बुक्क-महारायरु राज्यं गेय्युत्तिरे अवर कुमार विरुपण्ण-वोडेयरु मले-राज्यवनाळुवल्लि हेद्दूर-नाडोळगे तडताळ पार्श्व-देवर देव-स्वद सीमा-सम्बन्धक्के आ-हेद्दूर-नाडवरु आस्थानद आचारियरु सूरिगळ कूडे संवादव माडिदल्डे श्रीमन्महा-प्रधानं नागण्णगळु प्रधानि-देवरसरु आ ··· ··· दा देवरसरु ··· ··· ··· जैन-मल्लप्पनु आरगद चावडियल्लि मूरु-पट्टणद हलरनू हदिनेण्टु-कम्पणवनू करसि विचारिसि आ-नाड-नोडम्बडिसि पडकोट्टु पूर्व-मरियादेयल्लि मूडलु वेट्ट तेङ्कलु बेट्ट पडवलु हळ्ळि वडगलु होळे सीमेयागि पार्श्व-देवर देवस्ववेन्दु चतुस्सीमेयनु विवरिसि शक-वर्ष १२८४ शुभकृत्संवत्सरद माघ-शुद्ध-पञ्चमी-गुरुवारदलु आ-अरसु प्रधान-रनू (औरोंके नाम दिये हैं) तडताळनु आ-चन्द्रार्क नडव हागे शासनव नडसि कोट्टरु (वे ही अन्तिम वाक्यावयव)!

अक्षय-सुख-मी-धर्म्ममन्।
ईक्षिसि रक्षिसुव पुण्य-पुरुषर्गक्कुम्।

भद्दिसुवातन सन्ता- ।

न-त्वयमायु-त्वयं कुळ-चयमक्कुम् ॥

श्री-मूलसंघ-देशिगण-पुस्तक-गच्छ-कोण्ड-कुन्दान्वय ··· ··· ··· ···

श्री-मूलसंघ, देशि-गण, पुस्तक-गच्छ, तथा कोण्कुन्दान्वयमें चारुकीर्त्ति-पण्डित-यतिप थे। जिन शासनकी प्रशंसा। जिस समय महामण्डलेश्वर, संगमेश्वरके पुत्र वीर-बुक्क-महाराय राज्यका शासन कर रहे थे'—हेद्दूर-नाड्के तडताळके पार्श्व-देव मन्दिरकी जमीनकी सीमाओंके विषयमें जब हेद्दूर-नाड्के लोगों और मन्दिरके आचार्योंमें झगड़ा चल रहा था,—प्रधानमंत्री नागण्ण और अनेक अरसू लोगोंने, इसकी जांच-पड़ताल करके, फैसला कर दिया। और इस बातका शासन (लेख) लिख दिया।]

[EC, VIII, Tirthahalli tl., No. 197]

५६२

हिरे-आवलि;—कन्नड़

[शक १२२६ (Sic), वर्ष पार्थिव=१२६६ ई० ? (लूं. राइस) ।]

[हिरे-आवलि में, ध्वस्त जिन-बस्तिके सामनेके द्वितीय पाषाण पर]

श्रीमतु। विजयानगर-मुख्यवाद-समस्त-पट्टणाधीश्वर श्री-अभिनव बुक्क-राय राज्यं गेय्वल्लि। सकल-गुण-सम्पन्न सिद्धान्त-देवर गुड्ड। रत्न-त्रयाराधकरुम्। आवलिय बेच-गौण्डन सुत चन्द-गौण्डन तम्म। सक-वरुष १२२६नेय पार्त्थिव-संवच्छरं च ११ सोमवारदलु। सन्यसन-समाधि-विधियिं मुडिहि स्वर्ग-प्राप्तियादनु। मङ्गळमस्तु।

मान-गर्व्ववनु ··· ··· लनु -।

मानदोळं नडिय वल्लमोल्दा-तेरदिम् ।

ज्ञानिगळ सलहुतिप्पम् ।

दान-रतं रा ··· पुरकभिरामन् ॥

[जिस समय विजयनगर और दूसरे समस्त पट्टण (नगरों) का अधीश्वर, अभिनव-बुक्क-राय राज्य कर रहा था :—

सिद्धान्त-देवका गृहस्थ-शिष्य, आवळि-चेन-गौडके पुत्र चन्द-गौडका छोटा भाई, (उक्त मितिको), सन्यसन और समाधि-विधिसे मरकर, स्वर्ग गया। उसकी प्रशंसामें श्लोक।]

[Ec, VIII Sorab tl, No 102]

५६३

कुप्पटूर;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक १२८१ = १३१७ ई०]

[कुप्पटूरमें, जैन-बस्तिके पासके वीरकल् पर]

शक-कालं नव-वारण-द्वि-शशि-संख्योक्त-प्लवंगाब्ददुष-॥
त्सुकदाषाढ्द मासदोळ् विधु-लसद् वारं समन्तोन्दिरल्।
प्रगटं-वेत्ततिसय्यवा-श्रुत-मुनि-श्री-पाद-सेवा-रतर्।
सु-कवीन्द्र-स्तुत-देवचन्द्र-मुनिपर् स्वर्-लोकमं पोद्दिदर् ॥
श्रुत-मुनिगळ शिष्यर् भू-। तुल-देशी-गणद देवचन्द्र-व्रतिपर्।
यति-कुल-ललामरल्तूर् -। जित-तेजरन्नेगळ्दरादिदेवर गुरुगळ् ॥
श्रुत-मुनि-वल्लभेन्द्र-गुरु दीक्षेयनीयलदादियागतूर् -।
जि [त]-गुण-शील-सच्चरि ··· ··· ··· ··· कूडि वेत्तु।
अतिश (श) य-जैन-धर्म्मद निमिर्क्कॆयोळोन्दि विराजिसिर्द दी -।
क्षितियोळु देवचन्द्र-मुनि-वर्य्यवमागम-कोविदर्न्निजम् ॥
जीर्ण्ण-जिन-भवनमं धरे। वर्ण्णिसलुद्धरिसि कीर्त्तियं तळेदरु सम् -।
पूर्ण्णतर-चरितरेनि [सि] द्द्। अर्णव-गाम्भीर देवचन्द्र-व्रतिपर् ॥
नेगळ्दा-मुनिपर् भव-भा-। लेगळिक सन्यसनदिं समाधियनेय्दिद्द्।

अगणित-महिमेयोलोन्दिद । मु-ग [ति] यनान्तर्व्विनेय-बन-नुत-चरितर् ॥
श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥
श्रुत-मुनि-वर्य्याद् भव्यात् पूज्य-श्री-देवचन्द्र-परम-गुरुः ।
तच्छिष्य आदिदेव ••• ••• ••• सत्-तपो-निळयः ॥

शुभमस्तु ॥

[(उक्त मितिको) प्रसिद्ध श्रुतमुनिके चरणोंका उपासक देवचन्द्रमुनिपने स्वर्गलाभ किया । श्रुतमुनिके शिष्य संसार-विख्यात, देशी-गणके देवचन्द्र-व्रतिप यतियोंके कुलमें तिलक-समान थे, वे आदिदेवके गुरू थे । उनकी और भी प्रशंसा, जिसमें कहा गया है कि उन्होंने एक ध्वस्त जिनमन्दिरका पुनरुद्धार करवाया था । श्रुतमुनिसे सन्मानित देवचन्द्र थे जिनके शिष्य आदिदेव थे ।]

[Ec, VIII, Sorab tl., No 260]

५६४

हिरे-आवलि;—कन्नड़ ।

[वर्ष प्लवंग = १३६७ ई० (लू० राइस) ।]

[हिरे-आवलिमें, ध्वस्त जैन-वस्तिके सामने १वें पाषाण पर]

स्वस्ति श्रीमतु प्लवंग-संवच्छरद अश्वैज-बहुळ-पञ्चमी-शुक्रवारदन्दु श्री-मूल-संघद वारिसेन-देवर गुड्ड मसण-गौडन मग गोरव-गौड पञ्च-नमस्कार-समाधि-विधियिं स्वर्गस्तनाद ॥

[लेख स्पष्ट है । १३६७ ई०; राजाके नामका उल्लेख नहीं है ।]

[Ec, VIII, Sorab tl., No 109]

५६५

श्रवणबेल्गोला;—कन्नड़।

[शक १२९०=१३६८ ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

५६६

कल्य;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक १२९०=१३६८ ई०]

[कल्य (सातनूर परगना) में, चिक्कण्णके खेतमें एक पाषाणपर]

स्वस्ति समस्त-प्रशस्ति-सहितम्

पाषण्ड-सागर-महा-बडवा-मुखाग्नि-
श्रीरङ्ग-राज-चरणाम्बुज-मूल-दासः।
श्री-विष्णु-लोक-मणि-मण्डप-मार्ग-दायी
रामानुजो विजयते यति-राज-राजः॥

शक-वर्ष १२९० नेय कीलक संवत्सरद श्रावण-शु २ सो-दलु श्री-मन्महा-मण्डलेश्वरं अरि-राय-विभाड भाषेगे तप्पुव रायर गण्ड श्री-**वीर-बुक्क-रायनु** पृथु (शु,) वी-राज्यवनाळुव कालदलि, जैनरिगे, भक्तरिगे संवादवादल्लि **आनेयगोन्दि-होसपट्टण-पेनगोण्डे-कळ्यहु**नोळगाद समस्त-नाड जैनरु बुक्क-रायङ्गे भक्तरु अन्यायदलु कोल्लुवदनु बिन्नहं माडलागि **कोविलु-तिरुमले पेरु-माळ्कोविलु-। तिरुनारायणपुर**-मुख्यवाद सकलाचार्य्यरु सकळ-समयिगळु सकळ-सात्विकरु मोष्टिकरु तिरुमणि-तिरुविडि तन्दवरु नाळ्वत्तेण्टु-तले-मक्कळु **समन्त-बोवक्कलु तिरुकुल-जाम्बवकुल**-चोळगाद पदिनेण्टु-नाडा-श्री-वैष्ण-वर कय्यलु महारायनु ··· निम्म वैष्णव-दरुसनद मषेवोकेरुवेन्दु कोट-सम्बन्ध पञ्च-बस्तिगळलि **कळस जगळे-जगटे**-मोदलाद पञ्च महा-वाद्यऊ सलुऊदु अन्यरि

[गे] वरकूडदु जैन-समयके सलुबुदेन्दु ··· ··· ··· ··· वृद्धिपाद (बायीं ओर) श्री-वैष्णव-समय ··· ··· ··· ··· ··· यी-मर्यादे ··· ··· ··· ··· ··· ओळगुळ बस्ति ··· श्री-वैष्णव ··· ··· ··· ··· नेट्टु कोट्टेवु (बाकी का पढ़े जाने लायक नहीं है)

[रामानुज की स्तुति ।

(उक्त मितिको), जिस समय महामण्डलेश्वर वीर-बुक्क-राय पृथ्वीपर राज्य कर रहे थे :—जैनों और भक्तों (वैष्णवों) में कोई विवादका विषय उपस्थित होने पर आनेयगोन्दि, होसपट्टण पेनुगोण्डे और कल्यह,[1] इन नाडोंके जैनोंने बुक्क-रायको इस बातका प्रार्थनापत्र देकर कि १८ नाडोंके श्री-वैष्णवोंके हाथोंसे जैन लोग अन्यायसे मारे जा रहे हैं,—महारायने (यह घोषणा करते हुए कि) "हम तुम्हारे वैष्णव दर्शनमें बाधक नहीं होंगे" निम्न हुकम दिया :—कलश इत्यादि पाँच बस्तियोंमें पाँच महा वाद्य बज सकते हैं। और में वे नहीं बजाये जा सकते। वे जैन समय (या समक्ष) की हैं। श्री-वैष्णव समय, जो बढ़ा था है ··· ··· ··· ··· (बाकीका अधिकांश अपठनीय है)]।

[Eo, IX, Magadi tl., No 18]

५६७

पचिगनहळ्ळि—कन्नड़।

[शक सं० १२१२ = १२९० ई०]

[पुचिगनहळ्ळि (नञ्जनगूड प्रदेश) में, नदीके पास, नेमिनाथ-बस्तिके उत्तर एक पाषाण पर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनं ।
जीयात्त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥१॥

---

१. जहाँ यह शिलालेख है, वहाँ कल्य कहते हैं।

धीरस्पार-सद्गुण-मणि-ञ्रद-वारिधिगळ् अपाय-सं-
हारिगळाद मानररिद्धविनेश्वरधर्म्मराविगळ् ।
कूरेन्नरिन्-बाहुबलि-देवर् अभिष्टुत-पार्श्व-देवरं ।
सूरि-विनूतवद्विशद-शक्तियनान्तेतेदर्न्निरन्तरम् ॥२॥
जिनमताम्बुराशि-परिवर्द्धना-चन्द्रनन् अल-तन्द्रनं ।
मानित-सार-सर्द्द-गुण-चन्द्रनन् उन्नत-कीर्त्ति-सान्द्रनन् ।
धीन-विमोह-मारण-मृगेन्द्रननुदून-कृपा-नदीन्द्रनन् ।
भू-नुत-मेघचन्द्रननशेष-जनं नलविन्दे बण्णिकुम् ॥३॥
अरियद विद्देयिल्ल किडदोदद केळद शास्त्रविल्ल कूर्च-
इ ... ...मुन्नरिल्ल सले सोलद वादिगळिल्ल सन्ततं ।
नेरेयदे समस्तरं पोगळदिर्द्द कवीशरं इल्ल लोकदो-
ळरे पार्श्वदेवस्तुत-बाहुबलि-व्रति-शक्तियद्भुतम् ॥४॥

शकवर्ष १२६२ नेय सन्द विरोधिकृतु-संवत्सरद मार्ग्गसिर-सु १५ आ । बारद दिवसदल्लि मेघचन्द्र-देवरु मुक्तिगे सन्दर मंगळमहा श्री यिवरिगे निशिधिय माडिसिद वरकीर्त्य मेघचन्द्र-देवर शिष्यर माणिक-देवर ।

[इस लेखमें दूसरे श्लोकमें बाहुबलि-देव और पार्श्व-देवकी प्रशंसा है। तीसरे श्लोकमें भूनुत (प्रसिद्ध) मेघचन्द्रकी प्रशंसा है। चौथे श्लोकमें पुनः पार्श्वदेव और बाहुबलि-व्रतीकी प्रशंसा है। उनके विषयमें कहा गया है कि ऐसी कोई विद्या नहीं थी जिसको वे न जानते हों, ऐसा कोई शास्त्र (Sciance) नहीं था जिसको उन्होंने पढ़ा या सुना न हो, ऐसा कोई राजा नहीं था जिसने उनके ऊपर कृपा न की हो, ऐसा कोई वादी नहीं था जिसको उन्होंने हराया न हो, ऐसा कोई कवि नहीं था जिसने कभी उनकी प्रशंसा न की हो,—क्या संसार उनकी अद्भुत शक्ति को माननेके लिये तैयार न होगा ? अवश्य होगा ही।' मेघचन्द्र-देवका देहान्त होनेके बाद, उनकी स्मृतिमें उनके शिष्य माणिक-देवने यह स्मारक खड़ा किया।]

[Ec, III, Nanjangud tl., No 43]

५६८

तवनन्दि;—कन्नड़।

[शक १२९२ = १३७० ई०]

[तवनन्दिमें, आठवें समाधि-पाषाणपर]

श्रीमतु शक-वर्ष १२९२ नेय साधारण-संवत्सरद माघ-शुद्ध ८ सोमवारदन्दु श्रीमन्माधवचन्द्र-मलधारि-देवर प्रिय-गुड्ड तवनिधिय माडि-गौडन सु-पुत्र बोम्मण्णनु समाधि-विधियि मुडिपि स्वर्ग-लोक-प्राप्तनादनु ॥

[(उक्त मितिको), माधवचन्द्र-मलधारी-देवका प्रिय गृहस्थ-शिष्य तवनिधि माडि-गौडका पुत्र बोम्मण्ण, समाधि मरणपूर्वक स्वर्गको गया ।]

[EC, VIII, Sorab tl.,:No. 201]

५६९

तवनन्दि;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक १२९३ = १३७१ ई०]

[उसी स्थानमें, छठे समाधि-पाषाणपर]

श्रीमत्परम-गंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥

श्रीमन्महा-मण्डलेश्वर अरि-राय-विभाड भासेगे तप्पुव रायर गण्ड हिन्दु-राय-सुरत्राण पूर्व-दक्षिण-पश्चिम-समुद्राधीश्वर श्री-वीर-बुक्क-राय विजय-राज्यं गेय्युत्तमिप्पंल्लि शक-वर्ष १२९३ नेय विरोधिकृत्-संवत्सरद फाल्गुन शु ११ मङ्गळवारदलु श्रीमद्-राय-राज-गुरु मण्डलाचार्य्य बलात्कार-गणाग्रगण्यरुमप्प श्री-सिंहनन्द्याचार्य्यर प्रिय-गुड्ड सोरबद विठ[ल]-गोण्डन सुपुत्रि श्रीम-

नाळ्व महाप्रभु तवनिधिय ब्रह्मन अर्द्धाङ्ग (ने) लक्ष्मि बोम्मकनु समाधि-विधिर्यि मुडिपि स्वर्ग-लोक-प्राप्तियादळु ॥

विनय-गुण-प्रगल्भे पेसर्वेत चतुर्विध-दान-युक्ते पा- ।
वन-जिन-राज-राजित-पदाम्बुज-भक्तियोळोप्पुवेत्तु तोर्प - ।
अनुपम-शीले विट्ठलन नन्दने सौन्दर-रूपे बोम्म-गौ- ।
डन सति बोम्मकं मेरेवळगाद पुण्य-वधू-जनङ्गळोळ् ॥

[जिन शासनकी प्रशंसा । जिस समय, (अपनी उपाधियो सहित), वीर-बुक्क-राय अपने विजयी राज्यपर शासन कर रहे थे:—(उक्त मितिको), राय-गुरु, बलात्कार-गणके अग्रणी, सिंहनन्द्याचार्य्यकी गृहस्थ-शिष्या, सोरब-वीर-गौण्डकी सुपुत्री, आळ्व-महा-प्रभु तत्रनिधि ब्रह्मकी पत्नी, लक्ष्मी-बोम्मक्क, समाधि-मरण-पूर्वक स्वर्गको गयी । उसकी प्रशंसा ।]

[EC, VIII, Sorab tl., No. 199]

५७०

हिरे-आवलि;—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[शक १२९३=१३७१ ई०]

[हिरे-आवलिमें ध्वस्तजैन-बस्ति के सामने १२ वें पाषाण पर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥

स्वस्ति श्रीमन्महामण्डलेश्वर अरि-राय-विभाडु श्री-वीर-बुक्क-राय-राज्योभ्युदयदन्दु (?) शया १२९३॥ प्रमाथि-संवत्सरद फाल्गुन-सुध-एकादशी-आदि-वार श्रीमनाळ्व-महा-प्रभु रामचन्द्र-मलधारि-देवर गुड्ड आवलिय चन्द-गौडन मग राम-गौण्डनु पञ्च-नमस्कारदिं मुडिहिद मंगळ (महा) श्री श्री श्री

श्री श्रीमतु हिरिय-जिड्डुवळिगेय आवळिय महाप्रभुगळु जिन-चरण-स्मरण-परिणातान्तः-करणरुमप्प आवलिय ज्ञान (?) अन्याय आवलिय मशण-गौण्डन- मग गोरव-गौण्डन मग रवळ-गौण्डन मग गोप-गौण्डन मग चन्द-गौण्डन मग गोप-गौण्डन तम्म राम-गौण्डन तम्म वेच-गौड अन्तु यिवरु मुक्तियन् यैदिदरु मंगल महा श्री श्री श्री मडिद तगरोजन मग मदोज नागोज आवळिय विल्ति-वन्तरु ॥

[लेख स्पष्ट है। १३७४ ई०; बुक्क-राय का राज्य था।]

[EC, VIII, Sorab tl., No. 115]

५७१

हुलुहल्लि;—संस्कृत तथा कन्नड़-भग्न

[शक सं० १२१४ = १२७२ ई०]

[हुलुहल्लि (कड़ले प्रदेश) में, वरदराज-स्वामी मन्दिर मुख्य प्रवेश द्वारके उत्तर की ओर के एक पाषाण पर]

श्रीमन्त्रैलोक्य ··· ··· मकुटस्य ··· ··· नेन्द्रस्य।
शासन ··· ··· ··· लाञ्छनं सततं ॥

पेरुमाळे-देवररु ··· ··· चक्रवर्त्तिदेवरु ··· ··· देवरु

वितत-मोदोभरं ··· ··· ··· । ··· ··· ···

निरुपम-विभवश्री-वैभवैर्व्वर्द्धमानो
दिशतु चरम-तीर्थाधीश्वरस्सम्पदं नः ॥
यस्य श्री ··· ··· जिनेन्द्रस्य दिव्य-वाक-तत्त्वार्थात्
अङ्गैस्सर्व्वैः पूर्व्वैस्संजगृहुर्गौतमादि-गणधर्मः ॥
तच्चरमजिनेश ··· ··· नमिह जगति साम्प्रतं भारतेऽस्मिन्

ते गणभृतस्तदुदितस्सिद्धान्त तदनुगश्च सकलसंघः ॥
तत्र श्री-जिन-शासनोन्नतकरे श्रीमूलसंघोदिते
श्री-देशीय-गणे सु-संयम-मरे श्री-कोण्डकुन्दान्वये ।
सुरलाख्यप्रिय इङ्गले ··· ··· चार्य-र्यावजो
श्रीमत्पुस्तकगच्छभाग्यतघरास्संवर्ज्जिरे ··· ··· ॥
श्रेदःपद्म-विकाश ··· रणिस्स्याद्वादरत्नामणिः
सद्विद्वज्जन ··· ··· ··· ··· चूड़ामणिः ।
··· ··· मुनिश्चादेष्ट-चिन्तामणिः ॥
··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ···
पादौ राज-समाज-पूजित-पदौ हस्तौ ··· ··· कवि-
व्रातानन्दनकारि-दान-विभवेनास्यं गिरो-लास्यदं ।
··· ··· कुण्ठित-नीलकण्ठ-ललना ··· रक्ष यस्याजनौ
सोऽयं ··· रजरो विजयते सङ्गीत-विद्यापतिः ॥
तदन्ववाय--दुग्धाब्धि-समुल्लास-कळानिधिः ।
मूल-श्रुतमुनि ··· चौद्वोषो ···
श्रुतमुनिरावः सशिष्यसंघस्तपश्चरणविह ··· ।
तरण-प्रम-पर्यन्त ··· विश्व-लोकं पुनानोऽस्थात् ॥
साकेऽब्देऽथ विरोधिकृत्‌समभिधे पाथोधि-नन्दांशुमत्
संख्ये [१२९४] मासि सुचौ सित-प्रतिपदि च्छायासुते यामके ।
कृत्वा पूतमिळातळं श्रुतमुनिस्सन्यस्य त्रिण्यापुरे
प्रीत्यार्या परमेष्टि-भावन-मतः प्रापत् प्रशस्तां गतिम् ॥
दुर्म्मुखाख्ये शकाब्दे वसु-मुनि-रवि-संख्याङ्किते [१२७८] मासि चैत्रे
पुष्यन्त्यां भौमवारे निशि ललित-रमे पत्तने केल्लहाख्ये ।
श्रेन्यि सन्यस्य सर्व्वं परम-गुरु-कुलं भावयन्नुद्यभावः
प्राप्तो दिव्यं गतिं श्री श्रुतमुनि-तनयश्चन्द्रकीर्त्ति-व्रतीन्द्रः ॥
तद्भक्तियुक्तिभजिका चयकीर्त्ति-देव-सूरीश्वर- श्रुतिमुनि-प्रमुखा ···

श्री श्रीमतु हिरिय-जिड्डवळिगेय आवळिय महाप्रभुगळु जिन-चरण-स्मरण-परिणातान्तः-करणरुमप्प आवलिय ज्ञान (?) अन्याय आवलिय मशण-गौण्डन- मग गोरव-गौण्डन मग रवळ-गौण्डन मग गोप-गौण्डन मग चन्द-गौण्डन मग गोप-गौण्डन तम्म राम-गौण्डन तम्म बेच-गौड अन्तु यिवरु मुक्तियन् यैदिदरु मंगल महा श्री श्री श्री मडिद् तगरोजन मग भदोज नागोज आवळिय विल्ति-वन्तरु ॥

[लेख स्पष्ट है। १३७४ ई०; बुक्क-राय का राज्य था।]

[EC, VIII, Sorab tl., No. 115]

५७१

हुलुहल्लि;—संस्कृत तथा कन्नड़-भग्न

[शक सं० १२१४ = १२७२ ई०]

[हुलुहल्लि (कड़ले प्रदेश) में, बरदराज-स्वामी मन्दिर मुख्य प्रवेश द्वारके उत्तर की ओर के एक पाषाण पर]

श्रीमन्त्रैलोक्य ... ... मकुटस्य ... ... नेन्द्रस्य।
शासन ... ... लाञ्छनं संततं ॥

पेरुमाळे-देवरसरु ... ... चक्रवर्त्तिदेवरु ... ... देवरु

वितत-मोदोभरं ... ... । ... ...

निरुपम-विभवश्री-वैभवैर्वर्द्धमानो
दिशतु चरम-तीर्थाधीश्वरस्सम्पदं नः ॥
यस्य श्री ... ... जिनेन्द्रस्य दिव्य-वाक-तरवार्थात्
अङ्गैस्सर्व्वैः पूर्व्वैस्संजग्रहुर्गौतमादि-गणधर्मः ॥
तच्चरमजिनेश ... ... नमिह जगति साम्प्रतं भारतेऽस्मिन्

सु-श्रावणश्च पुरुषोत्तम-राज-कामश्रेष्ठ्यादयो भुवि चरन्तु चिरं सुभव्याः ॥
श्री-श्रुतमुनीश्वर शिष्यरु । **माघनन्दि**-सिद्धान्ति-देवरु । सार्व्व-परमागमोपदेश-निपुणरप्प आ ··· ळु । **श्रुतकीर्त्ति**-देवरु । **मुनिचन्द्र**-देवरु । **बाहुबलि**-देवरु । ··· गिय-**पार्श्व**-देवरु । **जिनचन्द्र**-देवरु । सन्यसन-समाधियि ··· गतियन्नेय्दिदरु ॥ ··· ···

··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ···

··· ··· पेरुमाळु-महीशः कुशाग्र-बुद्धिर्व्विदितसकलनयसूत्रः ॥
श्री-माचिराज-मालाम्बिकयोरजनिष्ट **पेम्मि-देव**-नृपः ।
जनहितजैन-मतार्ण्णव-संवर्धन-पूर्ण्णिमा निशाधीशः ॥
शाके सिन्धु-गिरि-प्रभाकर मिते [१२७४] ऽब्देऽस्मिन् खराख्यान्विते
चैत्रे मासि ··· ह्वये क्षितिसुते वारे नवम्यां तिथौ ।
प्रत्यूषे सितपक्षके ··· ··· ··· ··· ··· ···
··· ··· ··· पेरुमाळ-देव-नृपतिः प्राप प्रकृष्टां दिवं ॥
शाकेऽब्दे शून्य-नन्द-द्वितय-विधु-मिते [१२९०] ऽस्मि **प्लवङ्गा**ह्वयोयद्-वैशाखे मासि शुद्धे दिनमुखनवमी सन्-तिथौ जीवनारात् ।
तज्जायांस ··· या जिनमुनि-वरिवस्यार्हं-शुद्धान्ववाया
अह्लस्वा प्राप दैवीं गतिममळमति भावयन्नर्हदादि ॥
··· वान्वयाम्भोज-दिवाकराभा **नरोत्तम-श्री-नृप**-नामधेया ।
यदीय-कीर्त्तिर्ध्वजति जहार जगत्त्रयं सद्गुणदानसम्भवा ॥

आ-पेरुमाळ-देव-अरसरु पेम्मि-देवरसरु **हुल्लनहळ्ळि**यलु सुखदिं राज्यं गेयुत्तिरलु तम्म इह-पर-लोक-साफल्य-निमित्त्वागि **त्रिजगन्मंगळ**मेम्बुत्तुंगचैत्यालयमं माडिसि आ ··· चिन्तामणि-प्रतिमरप्प **माणिक्य-देवर** प्रतिष्ठेयं गेय्दु आ हुल्लनहळ्ळियल्लि पुरातन-भव्य-जन-प्रतिष्ठितमप्प आ-परमेश्वर-चैत्यालयमं जीर्णोद्धारमं माडिसि आ-एरडु चैत्यालयङ्गळामृतपडिगे कोट्ट गद्दे बेद्दल सीमे यन्तेन्दोडे (इसके बाद की ९ पंक्तियोंमें सीमाओं इत्यादि की चर्चा है ।)

अल्लय-सुलदि धर्म्मम् ।
ईळिसि रचिसुव पुण्य पुरुषर्गंदकुम् ।
नळिसुवावनु ··· ··· ।
··· ळर्ध अ ··· नु ळर्ध ··· ळपनदकुम् ॥
स्याद्वादाय सदा स्वस्ति प्रवादि-मत-भेदिने ।
शुभमस्तु सर्व्व-जगतः । मङ्गलमहा श्री श्री श्री ॥

[इस लेखमें आरम्भमें जिनशासन, पेरुमाले-देवरस, तथा अन्य व्यक्तियोंकी, जिनके नाम दिए गये हैं, प्रशंसा है । बादकी गण (आचार्य) परम्परामें, जिनशासनके प्रभावक आचार्य हुए । उनमें मूलसङ्घ, देशीय-गण, कोण्डकुन्दान्वय तथा इङ्गुलेश्वरकी शाखामें बहुतसे पुस्तकगच्छके मुनी हुए । ऐसे ही मुनियों में एक अभयेन्दु थे । (इस जगह लेख बहुत घिसा हुआ है ।) बङ्गोल विद्य... दि ईश्वरकी प्रशंसा । इसके बाद श्रुतमुनि और उनके शिष्योंकी प्रशंसा है । श्रुतमुनि शक वर्ष १२९५ में, विरोधिकृत् नामक वर्षमें, आषाढ़ शुक्ल प्रतिपदाके दिन शनिवारको प्रातः प्रशस्त गतिको प्राप्त हुए । यह उनका स्वर्गमन त्रिण्यापुर (=हुलुहल्लि) में हुआ था । शक वर्ष १२७८, दुर्मुखी नामके संवत्सरमें ईश (आश्विन) महीनेकी पञ्चमी तिथि रात्रिको मंगलवारके दिन श्रुतमुनिके पुत्र व्रतीन्द्र चन्द्रकीर्त्ति दिव्य गतिको प्राप्त हुए । उनके भक्त उपासक—जयकीर्ति-देव, सूरीश्वर श्रुतमुनि तथा इतर, श्रावकोत्तम पुरुषोत्तम-राज, कामसेट्टी तथा अन्य लोगोंकी चिरकालतक जिन्दा रहनेकी मनोकामना की गयी है । श्रुतमुनीश्वरके शिष्य क्रमसे ये थे—माघनन्दि सिद्धान्ति-देव, श्रुतकीर्त्ति-देव, मुनिचन्द्र-देव, बाहुबलि-देव, ··· शिष्य पार्श्वदेव, जिनचन्द्र-देव । इन्होंने मरणके समय समाधि ली थी । पेरुमाळु-महीश की प्रशंसा । मन्त्रि-राज और मालाम्बिकाके पेम्मि-देव-नृप उत्पन्न हुए थे । शक १२७४ में पेरुमाळ-देव स्वर्गस्थ हुए । शक १२९० में उनके बड़े भाईकी स्त्री अल्लाम्बा स्वर्गस्थ हुईं । उसके पुत्र नरोत्तम-श्री-नृप थे ।

जिस समय पेरुमाल-देवरस शान्तिसे सुखपूर्वक राज्य कर रहे थे, उस समय उन्होंने 'त्रिजगन्मङ्गलम्' नामके चैत्यालयका निर्माण कराया, और माणिक्य-देवको प्रतिष्ठित किया; साथ ही कुन्नदहलिके प्राचीन मन्दिर 'परमेश्वर चैत्यालय' का भी जीर्णोद्धार किया, तथा दोनों चैत्यालयोंमें विधिवत् सतत पूजा चालू रहे, इसके लिये भूमिदान किया।

अन्तमें इन मन्दिरोंकी रक्षा तथा उनमें लगी हुई भूमिका जो गुणवान् आदमी रक्षण करेगा उसके लिए निरन्तर कुशलकी मङ्गल-कामना की गई है।]

५७२

श्रवणबेलगोला—संस्कृत भग्न।

शक १२१५ = १२७२ ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

५७३

श्रवणबेल्गोला—कन्नड

[बिना कालनिर्देशका]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

५७४

हिरे-आवलि;—कन्नड।

[शक १२१८ = १२७६ ई०]

[हिरे-आवलिमें, ध्वस्त जिन-बस्तिके सामनेके छठे पाषाण पर]

स्वस्ति श्रीमतु शक-वरुष १२९८ नळ-संवत्सरद आश्विज-शु[illegible]२ गु श्रीमन्नाळ्व-महा-प्रभु आवलिय चन्द-गौण्डन मग बेचि-गौण्डनु रामचन्द्र-

मलधारि ··· ··· ··· र गुड्डनु वेचि-गौण्ड नु वीर-बुक्क रायन राज्याभ्यु-दयदन्दु पञ्च-नमस्कारदिं मुडुपि स्वर्गास्तनादनु आतन किरिय-मदवळिगे आ-मुद्दि-गौण्डि सहगमनदिं यिब्बरु मुक्तिप्राप्तरादरु आवलिय प्रमुगळ सन्तान मसण-गौडन मग गोरव-गौड काल-गौड गोप-गौड चन्द्-गौड आ-चन्द्र-गौडन मग वेचि-गौड बू··· गौडन मनेय गोरवोजन मग मादोज नागोज माडिद निशितिय कल्लु मङ्गळ महा श्री श्री श्रीः

[(उक्त मितिको), आवलि चन्द्-गौडके पुत्र वेचि-गौड, जो रामचन्द्र-मलधारिका गृहस्थ-शिष्य था—वीर-बुक्क-रायके राज्य में,—पञ्चनमस्कार पूर्वक मर गया और स्वर्ग गया। उसकी नवीन स्त्री मुद्द-गौण्डिने 'सहगमन' किया, और दोनोंने 'मुक्ति' पायी। आवळि प्रमुओंने (जिनमें कईओंके नाम निर्दिष्ट हैं) यह स्मारक बनवाया। बनाने वाला गोरवोजका पुत्र मादोज नागोज था।]

[Ec, VIII, Sorab tl., No 106.]

५७५

श्रवणबेल्गोला;—कन्नड़।

[वर्ष नल=१२७६ ई० (लू. राइस)]

[जैन शि० सं०, प्र० भा०]

५७६

गिरनार—संस्कृत-भग्न।

[विना कालनिर्देशका]

श्वेताम्बर लेख।

[Revised Lists ant rem Bombay (ASI, XVI), p. 347-351, No 7 t. and tr.]

५७७

तवनन्दि;—कन्नड़-भग्न ।

[शक १२०१=१२७९ ई०]

[तवनन्दिमें, सातवें समाधि-पाषाणपर]

श्रीमन्महा-मण्डलेश्वर श्री-वीर-हरिहर-राय विजय-राज्यं गेय्युत्तमिर्प्पल्लि शक-वरुष १२०१ दनेय काळयुक्ताब्दि संवत्सरद श्रवण-शुद्ध १ शुक्रवारदल्लु श्रीमत्-तवनिधिय शान्ति-तीर्थकर-पाद-पद्माराधकरुं दासि-वेसि-पर-नारी-सहोदर श्रीमतु श्रीमन्नाळ्व-महा-प्रभु तवनिधिय बोम्मणणं मनेय ··· ··· नि श्रीरा ··· ··· ··· ··· मलधारि-देवर प्रिय-गुड्ड ··· ··· ··· (४ पंक्तियाँ पढ़ी नहीं जा सकती हैं)।

[जिस समय महामण्डलेश्वर वीर-हरिहर-राय विजयी राज्य पर शासन कर रहे थे :—(उक्त मितिको), तवनिधि के शान्ति-तीर्थंकरके चरणोंका पूजक, एक दासीके वेषमें, रा ··· ··· मलधारि देवका गृहस्थ-शिष्य, आळ्व-महा-प्रभु तवनिधि बोम्मणके घरका पवित्र व्यक्ति,···············]

[EC, VIII, Sorab tl., No. 200.]

५७८

तवनन्दि;—कन्नड़-भग्न ।

[शक १२०१ = १२७९ ई०]

[तवनन्दिमें ही, तीसरे समाधि-पाषाणपर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥

श्रीमन्महामण्डलेश्वरं अरि-राय-विभाड भाषेगे तप्पुव-रायर गण्ड हिन्दु-राय-सुरत्राण पूर्व्व-दक्षिण-पश्चिम-समुद्राधीश्वर श्री-वीर-बुक्क-रायन कुमार श्री **हरिहर-रायनु** राज्यं गेय्युत्तमिर्द्दल्लि ॥ स्वस्ति श्री **जयाभ्युदय शक-वरुष १३०१ नेय काळयु [क्ति]- नाम-संवत्सरद** पुष्य ब २ सोमवारदलु श्रीमन्**नाळुव-महाप्रभु** प्रजे मेच्चे गण्ड अळिय **हदिनेण्टु-कम्पण**क्के शिरोमणि एनिप महा-प्रभुगळादित्य **तवनिधिय बोम्म-गौडनु** सकल-सन्यसन-विधियिं मुडिपि स्वर्गं प्राप्तनादनु ॥ आतन गुणावलि एन्तेन्दडे ॥

पारावार-त्रयाधीश्वरनतुळ-बळं-बुक्क-रायङ्गे लोका- ।
धारङ्गं ··· माडिदन्तिनिय धर्म्मङ्गळं जैन-का-
चारं ··· ळं गड ··· ··· मर ··· ··· माडि पुण्या- ।
कारं ··· कीर्त्ति-वृत्तं **तवनिधि** यधिपं **बोम्मणं** नेर-वैर्य्यम् ॥
परस ··· यादि-देव परद ··· तान् ··· स्वर्ग ··· ··· ।
दरिसिद् जैननोर्व्व कलि ··· पाळकनिन्दु मक्तियिन् ।
परम-जिनेश्वर ··· ··· ··· नेम्ब ··· ।
··· दडु-जितनी-**तवनिधि**-प्रभु ब्रह्मनि ··· क-लोकदोळ् ॥
जिन-पतियन्तरङ्गदोळिगर्प्पं (बाकी का पढ़ा नहीं जा सकता ।)

[जिन शासनकी प्रशंसा । जिस समय, (अपने पदों सहित), वीर-बुक्क-रायके पुत्र हरिहर-राय शासन कर रहे थे :—(उक्त मितिको), आळुव महा-प्रभु, १८ कम्पणोंका शिरोरत्न, महा-प्रभुओंका सूर्य्य तवनिधि बोम्म-गौड 'सन्य-सन' की विधिपूर्वक, मर कर स्वर्गको गया । उसकी प्रशंसा ।]

[EC, VIII, Sorab tl., No. 196]

५७९

ऊद्रि;—संस्कृत तथा कन्नड़-भग्न ।

[शक १२०२ = १२८० ई०]

[ऊद्रि गाँवके मध्यमें एक पाषाणपर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥
यैदिदनु स्वामि-कार्य्यव ।
यैदि···रतिरलु कण्डनी-मार्व्वलमम् ।
यैदे कडि-खण्ड माडिद ।
यैदिद् जिन-पाद-पद्मम वैच्चप्पम् ॥

अदेन्तेने ॥

वारिधि-परिवृत-नर-धर ।
णी-रङ्गद-मध्यदमरगिरियिं तेङ्कलु
राराजिप-भरत-धरा- ।
नारी-भूषणमेनिप्प कुन्तळ-देशम् ॥
तां नेरे मेरेवुदु वनवसे ।
पन्निर्च्छासिर-समेतमदरोळ् मं- ।
···निजदिं पदिनेण्टेनिप् ।
उन्नत-कम्पणके राजधानियेनिक्कुम् ॥
मत्ता-कम्पण-निचयम- ।
नित्तरोळं नेगळ्द् हिरिय-बिदरेय-नाड्- ।
उत्तममदरोल् सुख-सम्- ।
पत्ति-स्थानाभिवृद्धि बुद्धरे मेरेगुम् ॥

वृ॥ अदु नाना-देव-हर्म्य-प्रयुतवतुळ-वापी-तटाकाञ्चितं सम्- ।

पदमं ताळ्दिर्प्प-विप्राधखिळ-वन-समेतं लसत्पुष्पवाटी-
विदितोद्यानादि-युक्तं प्रकट-कळन-नाळ-प्रसूता······ ।
तोर्प्पुदु सकळ-मुनि-प्रेन-वन्मीभिरामम् ॥
·······एने मेरे उद्धरे··· ।
·······नत-स्यळमागिरल्के तां सौन्दर्यदिम् ।
मनुज-मनोर्ज वैचप्पन् ।
अनुपम-कीर्ति-प्रभावदिन्दोसे[दि]प्पन् ॥
क्षितिनुत-शान्ति-चिन-क्रम- ।
शतपत्र-मधुव्रतं बुरज्जन-मित्रम् ।
चतुरं वैचय-नायक- ।
न तनूजं राजिसिप्पनी- वैचप्पम् ॥
भू-देवाशीर्व्वादा- ।
[.]द्वादं निज-शिर-करण्ड········· ।
[···]दं वर्त्तिले मेरेवन् ।
मेदिनि-मीसेयर गण्डनी-वैचप्पम् ॥

तदनन्तरम् ॥

विलसित-विजयानगरिय ।
नेलेवीडिनोळे वीर-बुक्क-राज-तनूजम् ।
वलि-निभ-हरिहर रायम् ।
सले राज्यं गेय्युतिर्द्दनति-मुददिन्दन् ॥

तत्पादपद्मोपजीवि ॥

वृ ॥ माधव-राय अप्रतिम-तिय ना···उ[द]प्र-साहसां- :
मोघिगळेन्दु··रणद दन्तिगे······मोघ-कालदोळ् ।
बोधद-रूपिनि···गोण्ड···रणं···बुद्धि-वि- ।
द्याधरन् आत्तणं तो···तोळेय··· ··· ··· ॥

वर-वस्त्राभरण··· ··· ··· च्छत्रमं··· ··· ।
··· व्रातम ··· ··· ··· रूर्गाळम् चामरो- ।
त्करमं कप्पुर दम्बुल-प्रकरमं कोण्डा··गीत··· ।
च्छुरदी-कोङ्कण-देशदर् खळर् एनुत्तागेच्चडं माडदे ।।
जल्लाम्बेयोळु धात्री- ।
वल्लभ माधव निरुत्तरमल्लिं तर ।
रल्लल्लिं निलुतं वरल् ।
एल्लर परेयल्के कण्डु कलि-वैचप्पम् ।।
वृ ।। हयमं देरेगेट्टं नेलक्किळिवुतं पाय्देरि नोड्डुत्ते मल्- ।
लेयनुक्कोंय्दि ··· ··· ··· तारं तट्टुगुत्तुत्ते वल्- ।
मेयोळड्डुं वरुत्तिप्पं कोङ्कणिगरं कीनाश-लोकक्के निश्- ।
चयदिन्देय्दिसुतं पराक्रमयुतं वैचप्पनिन्तिर्प्पिनम् ।।
केलवर् कोङ्कणिगर् म्मार्- ।
म्मलेवटटिं वण्डु-गट्टि नेट्टने परितन्द् ।
अलगड्डणमं चाळिसि ।
नेलनदिरलु ··· ··· ··· मेय्द ।।
तलेयिन्दं ··· सिडि ··· तूळ्दाडि खङ्गांशु कल्लोळ् ।
किडि सूसित्तेम्बिनं ··· रदटिनिं पाय्दु ··· ··· वन्- ।
दडे कट्टी-वैचपं माधव-नरपति नोडल्के सड्भ्रमदिम् ।
किडि-खण्डं माडिदं मार्व्वलमनदटिनिं भीमसेनोपमानम् ।।
आ-रण-रंगदोळ् विडदे कूगि नेगळ्द-वीर ··· ··· ।
··· ··· विट्टु नेट्टने समाधि-विधानमोन्···चित्तदोळ् ।
मार-विरोधि ··· ·· नूर्जित-नाक-लोकमम् ।
सारिदनुत्तम-प्रभु-कुलाम्बर-चन्द्र-मरीचि वैचपम् ।।
निरुतं श्री-शक-सङ्ख्ये सासिरद मूनूरोन्द···रौद्रि-व- ।
त्सर-वैशाख-सित-त्रयोदशि-लसद्-भौमाढ्यं वार··· ।

बरे वैचप्पनुदार-चारु-जिन-पदाम्भोज-सक्तं मनो- ।
हर रूपं वर-धात्रियोळ् मडिदु नाक-क्षेत्रमं पोर्द्दिदम् ॥

[वैचप्पने किस तरह जिन चरणों का आश्रय लिया, इसका इस लेखमें वर्णनहै। भरत क्षेत्र-कुन्तलदेश-बनवसे १२०००–१८ कम्पण-उद्धरे-और उसमें बैचप्पका वर्णन। बुक्करायके पुत्र हरिहर-राय विजयनगरीमें राज्य कर रहे थे। कोंकण-देशसे लड़ाई का वर्णन। उसमें बैचप्प की जीत हुई।]

[EC, VIII, Sorab tl., No. 152]

५८०

मलेयूर—कन्नड़।

[बिना काल निर्देशका, पर लगभग १२८० ई०]

[उसी पर्वतपर, पार्श्वनाथ बस्तिके प्राङ्गणमें दक्षिणकी ओरके पाषाणपर]

बाहुबलि-पण्डित-देवरु।

नयकीर्त्ति-व्रति-नन्दनं सकळविद्याचक्रवर्त्याह्वयं
द्वय-भाषा-कविता-त्रिणेत्रनुरु-होरा-शास्त्र-सर्व्वज्ञकम्।
नययुक्तमवर-मूल-सङ्घदोडेयं देशी-गणाग्रेसरं
प्रियदं पोस्तुक (पुस्तक)-गच्छ-पूर्ण्ण-तिलकं श्रीकोण्डकुन्दान्वयं॥

[बाहुबलि-पण्डित देव—नयकीर्त्ति-व्रतीके पुत्र, सकलविद्याचक्रवर्ती, द्वयभाषा कवितात्रिनेत्र, होराशास्त्रसर्वज्ञ, नययुक्त मूलसंघाधिपति, देशीगणाग्रेसर, पोस्तुक-गच्छके पूर्ण तिलक और कोण्डकुन्दान्वयी थे।

[EC, IV, Chamarajnagar tl., No. 157]

५८१

तिरुप्परुत्तिक्कुण्रू (काञ्जीवरम्‌के निकट)—तामिल।

(दुदुभि वर्ष=१३८२ ई० (हुल्ज)]

१—स्वस्ति श्रीः [॥] दुन्दुभिवर्षं कात्तिगै-मादत्ति । पूर्व्व-पक्षत्तु-तिङ्गत्-किळ-मैयुं पौर्णैयुं पेरं ताकात्ति-

२—गै-नाळ् महामण्डलेश्वरन् अरिहरराज-कुमारन् श्रीमद्- बुक्कराजन् धर्म्म आग वैचय-दण्डनाथ-पुत्रन्

३—जैनोत्तमन् इरुगप् [प]-महाप्रधानि ति [रुप्] प्परुत्तिक्कुण्रु-नाय-नार् त्रैलोक्यवल्लभक्कुं पूजैक्कु

४—शालैक्कुं तिरुप्पणिक् [कु] म् मावण्डूर्-प्पर्रिल् महेन्द्रमङ्गलं नोर्पी-कैल्लैयुं इटै-इलि पल्लिच्छन्दभाग चन्द्रादित्यवरैयुं नडक्कत्तरुवित्तार धर्म्मोयं जयतु

[काञ्जीवरम्‌के निकट तिरुप्परुत्तिक्कूण्रुमें वर्धमान जिनमन्दिरके भण्डारकी उत्तर तरफकी दीवालपर नीचेकी ओर यह तामिल तथा ग्रन्थ लेख उत्कीर्ण है। इसमें बताया गया है कि वैचय दण्डनाथ (सेनापति) का पुत्र इरुगप्प महामन्त्रीने मावण्डूर् तालुकेका महेन्द्रमङ्गलं गाँव जैनमन्दिरको दानमें दे दिया था। उसने यह दान हरिहर द्वितीय के पुत्र अरिहरराज, अर्थात् बुक्क द्वितीय, के पुत्र बुक्कराजके गुणके कारण किया था। अतः दुन्दुभिवर्ष, जिसमें दान किया गया था, १३८२ ई० से मिलना चाहिये।]

[EI, VII, No. 15 A.]

५८२

बस्तीपुर—कन्नड़।

[शक १३०५=१३८३ ई०]

[बस्तीपुर (यळगुळ तालुका) में, सीमा-पाषाण पर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥

श्री-मूलसङ्घ कानूर-गण तिन्तिणि गच्छ कोण्डकुन्दान्वयद श्री-वासुपूज्य-देवर शिष्यर श्री-सकलचन्द्र-देवर तपद प्रभावमेन्तेन्दोडे ॥

स्थिरवाक्यं सु-श्रताम्भोनिधि सकळ-जगत्-पावनं राजपूज्यं
परम-श्री-जैनधर्म्माम्बर-दिनकरनुग्रत्तपोमूर्त्ति ··· णा ।
भरणं त्रैविद्य-चक्रेश्वर-विमल-पदाम्भोज-भृङ्गं जिनश्री-
चरणालंकार-शीरुप (न) म् सुकविजन-व्रतप-सन्मुनि राजहंसं ॥

स्वस्ति श्रीशकवर्ष १३१५ नेय सुभकृतु-संवत्सरद श्रावण-मास-सुद्ध-पाड्य-आदित्यवार-सिंह-लग्नदल्लि कूरिगिहळ्ळिय प्रभु-गळु गौड-कुल-तिलकरु मरें-होक्कर-कावरु शिथिल-वेङ्कोम्बरु सत्यदल्लि कर्णरुमप्प केत-गौड राम-गौड सम्बुव-गौड मादि-गौड मोदलाद समस्त-गौडगळु बस्तिय प्रतिष्ठेयं माडिसि बस्तिय बडगण क्रिट्ट बेद्दलु को १० पारुप-देवर अमृतपडि ········· सब ।
देवोजन बहर मंगल महा श्री श्री श्री

[मूलसङ्घ, कानूरगण, तिन्तिणि गच्छ और कोण्डकुन्दान्वयके वासुपूज्यदेवके शिष्य सकलचन्द्रदेवके तपकी स्तुति या प्रशंसा है। कूरिग (गि) हल्लिके गौड़ोंने एक पारुप-देवकी वस्ति (मन्दिर) बनवाई और उसे दान दिया।]

[EC, III, Seringapatam tl. No. 144]

५८३

हिरे-आवलि;—कन्नड़।

[वर्ष उद्गारि = १२८३ ई० ? (लू. राइस) ।]

[हिरे-आवलिमें, १२ वें पाषाणपर]

स्वस्ति श्रीमतु रुधिरोद्गारि-संवत्सरद ज्येष्ठ शुध-पुण्णमि-सोमवार-दन्दु श्री-मूल-संघद **वीरसेन-देवर** गुड **मुद्द-गौड** मगळु एकमतियवे पञ्च-नमस्कार-समाधि-विधियिं स्वर्गस्थेयादळु अचेयवे गौडि माडिसिद कलु ॥ बोपोझोज गेयिद कलु ॥

[लेख पहिलेके ही लेखों के समान है, अतएव स्पष्ट है। सन् १२८३ ई० का है। किसी राजाका उल्लेख नहीं है।]

[EC, VIII, Sorab tl.. No. 112]

५८४

रावन्दूर—संस्कृत और कन्नड़।

[शक १२०६=१२८४ ई०]

[रावन्दूर (रावन्दूर प्रदेश) में, बस्तिके एक पाषाणपर]

श्रीमत्-परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥

स्वस्ति श्रीमद्-राय-राज-गुरु-मण्डलाचार्यरेनिसि श्री-मूलसंघदेशीय-गण पुस्तक-गच्छ कोण्डकुन्दान्वय यिङ्गळेश्वरद वळि श्री **मदभयचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्त्ति-**गळु तत्-शिष्यरु श्री-**श्रुतमुनि**गळु तत्-शिष्यरु **प्रभेन्दु**गळु अवर प्रियाग्रशिष्यरु श्री-**श्रुतकीर्त्ति-देवरु** शक-वर्ष १२०६ नेय **रुधिरोद्गारि-संवत्सरद** द्वितीय-भाद्रपद-ब ८ आदित्यवारदलु मुक्तिवधू-वल्लभरादरु तत्प्रतिनिधियनु सुमति-

तीर्थंकरन् ई-चैत्याल[य]द जीर्णोद्धारवनु अवर शिष्यरु **आदिदेव-मुनि**गळु श्रुत-गण-मुख्यवाद समस्तभव्यजनङ्गळु माडिसिद् शासन वर्द्धतां जिन-शासनम् ।

[मूलसङ्घ, देशियगण, पुस्तकगच्छ, कोण्डकुन्दान्वय, और इंगुलेश्वर-बलिके **अभयचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्त्ती**के शिष्य श्रुतमुनि उनके शिष्य प्रभेन्दुके प्रियाग्र शिष्य—श्रुतकीर्त्ति-देवके मुक्तिवधूके वल्लभ होनेके बाद (अर्थात् स्वर्गस्थ हो जानेपर), उनके शिष्य **आदिदेव मुनि** तथा श्रुत-गणके जैनोंने उनकी तथा सुमति तीर्थङ्करकी प्रतिमाकी प्रतिष्ठा कर इस **चैत्यालय**को सुधरवाया ।]

[Ec, IV, Hunsur tl., No. 123.]

५८५

विजयनगर—संस्कृत ।

[शक १३०७=१३८६ ई०]

(जैन मन्दिरके सामने दीपस्तम्भ पर)

यत्पादपंकजरजो रजो हरति मानसं ।
स जिनः श्रेयसे भूयाद्भूयसे करुणालयः ॥ [१]
श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥ [२]
श्रीमूलसंघेजनि नंदिसंघ [स्त] स्मिन् बलात्कारगणोतिरम्यः ।
तत्रापि सारस्वतनाम्नि गच्छे स्वच्छाशयोऽभूदिह **पद्मनंदी** ॥ [३]
आचार्य्यः **कुंड [कुंदा]** ख्यो **वक्रग्रीवो** महामतिः ।
एलाचार्यो गृध्रपिच्छ इति नन्नाम पंचधा ॥ [४]
केचित्तदन्वये चारुमुनयः खनयो गिरां [।]
जलधाविव रत्नानि बभूवुर्दिव्यतेजसः ॥ [५]
तत्रासीच्चारुचारित्ररत्नरत्नाकरो **गुरुः** ।
धर्म्मभूषणयोगीन्द्रो भट्टारकपदांचितः ॥ [६]

भाति भट्टारको **धर्म्मभूषणो** गुणभूषणः ।
यद्यशःकुसुमामोदे गगनं भ्रमरायते ॥ [७]
शिष्यस्तस्य **मुनेरा**सीदनर्गलतपोनिधिः ।
श्रीमा**नमरकीर्त्या**र्य्यो **देशिका**ग्रेसरः शमी ॥ [८]
निजपद्मपुटकवाटं घटयित्वानिलनिरोध [तो] हृदये ।
अविचलितबोधदीपं तममरकर्त्तिं भजे तमोहरणम् ॥ [६]
केपि स्वोदरपूरणे परिणता विद्याविहीनांतरा
योगीशा भुवि संभवंतु बहवः किं तैरनंतैरिह ।
धीरः स्फूर्ज्जति दुर्ज्जयातनुमदध्वंसी गुणैरूर्ज्जितै-
राचार्य्योमरकीर्त्तिशिष्यगणभृच्छ्री **सिंहनन्दो** व्रती ॥ [१०]
श्री**धर्मभूषो**जनि तस्य पट्टे श्रीसिंहनंद्यार्य्यगुरोस्सधर्म्मा ।
भट्टारकः श्रीजिनधर्म्महर्म्म्यस्तंभायमानः कुमुदेन्दुकीर्त्तिः ॥ [११]
पट्टे तस्य मुनेरासी**द्वर्द्धमान**मुनीश्वरः ।
श्रीसिंहनंदियोगींद्रचरणांभोजषट्पदः ॥ [१२]
शिष्यस्तस्य गुरोरासी**द्धर्मभूषण**देशिकः ।
भट्टारकमुनिः श्रीमान् शल्यत्रयविवर्जितः ॥ [१३]
भट्टारकमुनेः पादावपूर्व्वकमले स्तुमः ।
यदग्रे मुकुलीभावं यांति राजकराः परं ॥ [१४]
एवं गुरुपरंपरायामविच्छेदेन वर्त्तमानायां—
आसीदसीममहिमा वंशे यादवभूभृतां [।]
अखंडितगुणोदारः श्रीमान् **बुक्कम**हीपतिः [१५]
उदयद्भूतस्तस्माद्राजा **हरिहरेश्वरः** ।
कलाकलापनिलयो विधुः क्षीरोदधेरिव ॥ [१६]
यस्मिन् भर्त्तरि भूपाले विक्रमाक्रांतविष्टपे ।
चिराद्राजन्वती हंत भव [त्येषा] वसुंधरा ॥ [१७]

तस्मिन् शासति राजेन्द्रे चतुरम्बुधिमेखलां ।
धरामधरिताशेषपुरातनमहीपतौ ॥ [१८]
आसीत्तस्य महीजानेः शक्तित्रयसमन्वितः ।
कुलक्रमागतो मंत्री **चैच**दंडाधिनायकः ॥ [१६]
द्वितीयमंतःकरणं रहस्ये बाहुस्तृतीस्तुमरांगणेषु ।
श्रीमान्महा **चैच** [प] दंडनाथो जागर्त्ति कार्ये हरिभूमिभर्त्तुः ॥ [२०]
तस्य श्री**चैच**दंडाधिनायकस्यो [ज्जि] तश्रियः ।
आसी **दिरुगप**दंडेशो नंदनो लोकनन्दनः ॥ [२१]
न मूर्त्ता नामूर्त्ता निखिलभुवनाभोगिकतया
शरद्राकाराकाविदनिखिलनेत्रद्युतितया ।
प्रभूता कीर्त्तिस्ता चिर**मिरुग**दण्डेश कथय-
त्यनेकांताक्रांतात्परमिह न किञ्चिन्मतमिति ॥ [२२]
दृंशजोपि गुणवानपि मार्ग्गणाना-
माधारतामुपगतोपि च यस्य चापः ।
नम्रः परान्विनमय**न्निरुग**क्षितीश-
स्योच्चैर्ज्जनाय खलु शिक्षयतीव नीतिम् ॥ [२३]
हरिहरधरणीशप्राज्यसाम्राज्यलक्ष्मी-
कुवलयहिमधामा शौर्य्यगाम्भीर्य्यसीमा ।
इरुगपधरणीश**स्सिंहनन्द्या**र्य्यवर्य्य-
प्रपदन [लि] नभृंगस्स प्रतापैकभूमिः ॥ [२४]
स्वस्ति **शकवर्षे १३०७** प्रवर्तमाने **क्रोधनवत्सरे** फाल्गुनमासे कृष्णपक्षे द्वितीयायां तिथौ शुक्रवारे ॥
अस्ति विस्तीर्ण्ण**कर्णाट**धरामण्डलमध्यगः ।
[दे]शः **कुन्तलो** नाम्ना भूकांताकुंतलोपमः ॥ [२५]
विचित्ररत्नरुचिरं तत्रास्ति **विजया**भिधं ।
नगरं सौधसन्दोह दर्शिताकाण्डचन्द्रिकं ॥ [२६]

मणिकुट्टिमवीथीषु मुक्तासैकतसेतुभिः ।
दा[न]ांबूनि निरुंघाना यत्र क्रीडंति बालिकाः [॥ २७]
तस्मिन्निरुगदंडेशः पुरे चारुशिलामयं ।
श्रीकुन्थुजिननाथस्य चैत्यालयमचीकरत् ॥ [२८]
भद्रमस्तु जिनशासनाय ॥

सारांश

इस लेखमें २८ संस्कृत-श्लोक हैं और यह प्राचीन जैन मन्दिरके सामने दीपस्तम्भ पर खुदवाया है। इस मन्दिरको आजकल 'गाणिगिट्टी' मन्दिर, यानी, "तेलिनका मन्दिर" कहते हैं। पहले श्लोकमें जिन, दूसरेमें जिनशासनकी मंगलकामना है। तत्पश्चात् एक जैन संघके प्रधान **सिंहनन्दि**के आध्यात्मिक पूर्वजों तथा शिष्योंके वंशका वर्णन है। वह इस तरह है :—

मूलसंघ
|
नन्दिसंघ
|
बलात्कार-गण
|
सारस्वतगच्छ
|
पद्मनन्दी
⋮
धर्म्मभूषण प्रथम, 'भट्टारक'
|
अमरकीर्ति
|

सिंहनन्दि, 'गणभृत्'

|

धर्म्मभूष, 'भट्टारक'

|

वर्द्धमान

|

धर्मभूषण द्वितीय, उर्फ भट्टारकमुनि

लेखमें इन गुरुओंकी पदवियाँ ये लिखी हैं :—आचार्य, आर्य, गुरु, देशिक मुनि और योगीन्द्र। गुरुवंशावलीके बाद ही प्रथम **विजयनगर** वंशके दो राजाओं, **बुक्क** और उसके पुत्र **हरिहर**का संक्षिप्त वर्णन है। बुक्क यादववंशके राजाओंमें उत्पन्न हुआ था। हरिहरका कुलक्रमागत मंत्री दण्डाधिनायक **चैच** या **चैचप** था, जो जिन भक्त था। चैचका पुत्र दण्डेश या क्षितीश (युवराज) **इरुग** या **इरुगप** था, जो उपर्युल्लेखित सिंहनन्दि गुरूके सिद्धान्तोंका उपासक था (श्लोक २४)। १३०७ [अतीत] शकमें, क्रोधन संवत्सरमें इरुगने विजयनगरमें एक मन्दिर बनवाया और उसमें श्री कुन्थु-जिननाथकी स्थापना की। यह नगर कर्णाट प्रान्तके कुंतल जिलेमें था (श्लोक २५)।]

नोट :—इस मंत्री इरुग या इरुगपने 'नानार्थनाममाला' नामक ग्रन्थ बनाया था, ऐसा ई० हुल्श, पी० एच० डी० महाशयके लेखसे मालूम पड़ता है।

[South Indian ins, Vol. I, No. 152.

(p. 155–160)]

५८६

मसार;—संस्कृत ।

[सं० १४४३=१३८६ ई०]

नं० १

[वृषभ चिह्नवाली आदिनाथकी प्रतिमाके चरण-पाषाणपरका लेख]

१—सं० १४४३ ज्येष्ठ सुदि ५, गुरो महासारस्य न
२—राजनाथ देव राज्ये काष्ठसंघे आचा-
३—र्य्यं कमलकीर्त्ति जयसरङ्गाचार्य
४—* * वपुत्रल * * *

यह लेख सं० १४४३में, सारंग (या उसके पुत्र) द्वारा एक प्रतिमाके समर्पणका उल्लेख करता है। समर्पण महासारके राजनाथ देवके राज्यमें हुआ। गुरु काष्ठासंघके कमलकीर्ति आचार्य थे।

नं० २

[एक प्रतिमाके, जिसका चिह्न मिट गया है, चरण-पाषाणपरका लेख]

१—सं० १४४३ समये ज्येष्ठ सुदि ५, गुरो
२—राजनाथ देव प्रवर्द्धमाने[1] महासारस्य काष्ठसंघे मथुरान्वये
३—पुष्करगणे प्रतिथ वन कमलकीर्त्ति देव
४—जैसवल वेसल रगचर्ज * * *
५—पुत्र लवम देव सम * * *
६—यन प्रतिष्ट * *

इस लेख में पहलेके लेखके दिन ही एक प्रतिमाके समर्पणकी बात है। राजनाथ देव और उसके गुरु कमलकीर्त्ति का नाम स्पष्ट है।

१. मूलमें 'राज्ये' छूट गया है।

नं० ३

[शंख चिह्नवाली नेमिनाथकी प्रतिमाके पीठ-स्थलपरका लेख]

१—सं० १४४१, ज्येष्ठ सुदि ५, गुरौ महाराजस्य न (?)
२—काष्ठसंघे अचार्य-कमलकीर्त्ति देव
३—वै महन्साचार्य उदे सिदि

उसी राजा और उसी गुरुके तत्त्वावधानमें उसी दिन नेमिनाथकी प्रतिमाका दान।

[A. Cunningham, Reports, III, p. 68–69 No. 1–3.] t. & a.

५८७

तिरुप्परुत्तिक्कुण्रु;—संस्कृत।

[प्राभव (प्रभव) वर्ष = शक १२०९ = १२८७ ई० (हुल्ज़ और कीलहॉर्न)]

श्रीमद्वैचयदण्डनाथतनयस्संवत्सरे प्राभवे
संख्यातानिरुगप्प-दण्डनृपतेश्श्रीपुष्पसेनाज्ञया ॥
श्री काञ्चीजिनवर्द्धमाननिलयस्याग्रे महामण्डपं
सङ्गीतार्थमचीकरच्च शिलया बद्धं समन्तात् स्थजन् ॥१॥

[पूर्व शिलालेखवाले मन्दिरकी वेदीके सामनेके मण्डपकी छतमें यह ग्रन्थ-लेख उत्कीर्ण है। इसमें शार्दूलविक्रीडित छन्दका एक ही श्लोक है। इसमें उल्लेख है कि प्राभव (प्रभव) वर्षमें गुरु पुष्पसेनकी आज्ञासे सेनापति वैचप्पके पुत्र उसी (पूर्व वर्णित) सेनापति इरुगप्पने उक्त मण्डपको बनवाया है जिसमें यह लेख उत्कीर्ण है।]

[E C, VII, No. 15, B.]

५८८

ऊद्रि;—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[वर्ष विभव = १३८८ ई० (लु० राइस) ।]

[उसी तालावकी मोरीके पासके पाषाणपर]

श्री-शान्तिनाथाय नमः ।

श्रीमत्परम-गंभीर-स्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥
वर-वृषभ-तीर्त्थंकर गण- ।
धररेनिसिद **वृषभसेन-मुनि**-पुङ्गवरुद्- ।
धुर-वंश-सम्भवाचा- ।
र्य्यर पेम्पं पोगळलरिदपने फणिरमणम् ॥
आ-नियमाग्रणिगळु **जिन**- ।
सेन-श्री-वीरसेन रनिपाचार्य्यर् ।
भू-नुत-चरित्ररवरम् ।
जानिसुव विनेय-जनद पेर्म्मेयदार्म्मम् ॥
अमर्द तदन्वयदि वन्- ।
द मुनीश्वरु **लक्ष्मिसेन-भट्टारक**रत्- ।
तम-चरित्ररवर शिष्यरु ।
विमळ-गुणरु **चन्द्रसेन-सूरि**गळनघर् ॥
आ-मुनि-राजर शिष्यो- ।
द्दामरु **मुनिभद्र-देव**रवर चरित्रम् ।
भू-महितमेन्दोडदनिन्न् ।
ए-मतो वण्णिसल्के वल्लवनावम् ॥
वृ ॥ क्षेममनन्विनं विमल-कीर्त्ति दिगन्तमनेय्ददर्न्निनम् ।

कामन चाप चापळवे सार्व्वीनमोप्पिदरं पोगळ्दपेम् ।
श्री-मुनिमद्र-देवरनिळा-विनुतोरु-शुम-स्वभावरम् ।
प्रेमदोळर्त्थिगर्त्थमुमनीवरमुग्र-तपः-प्रभावरम् ॥
मुनिसं मन्मथ-युद्धदोळ् निरुतमं तत्त्वार्थदोळ् भक्तियम् ।
जिन-पादाम्बुजदोळ् द्रवाधिकतेयं सच्चित्तदोळ् देसेयम् ।
विनुताचार-चयङ्गळोळ् वचनमं वक्तृत्वदोळ् रुक्म रञ् ।
जनेयं देहद कान्तियोळ् निरिसिदर्वाक्यादि-वर्णाह्वयर् ॥

॥ हिरुगल्ल वसदियं मा- ।
डिवि मुळुगुण्ड जिनन्द्र-मन्दिरके सुधा- ।
प्रसरमनेमगिमि क्रममम ।
प्रसरिमि मुनिभद्र-देवगेळ्पं तळेदर् ॥
न्यायोपायद हरिहर- ।
रायं वर-विजयनगरियोळु नेलसिर्प्पन्द् ।
आयतिक्केय सेन-गण- ।
व्यायरु मुनिभद्र-देवररनेरकदवर् ॥
इन्तेसेव तपश्चरणा- ।
नन्तरमाप्तागम-प्रभावमनेसगुत्- ।
वं तूळ्दि दुरितमं निश्- ।
चिन्तरु मुनिभद्र-देवरिर्प्पन्नेवरम् ॥
कालावसान-संस्थतिग् ।
आलम्बमेनिप्प निर्णयं दोरकलोडम् ।
शीलाचार-समाव वि- ।
शालमुनिभद्र-देवररितं वनिसल् ॥
नीरोळगण-तावरेयेले ।
नीरं पोरदन्ते बाह्य-वस्तुवनेल्लम् ।

दूरं माडि वळिल्ळकम् ।
धीररु **मुनिभद्र-देव**रगणित-महिमर् ॥

वृ ॥ त्तमे निश्शल्यमेनुत्ते सन्यसनदिन्दात्म-प्रबोधादयम् ।
समसन्दोन्दिरे दिव्य-पञ्च-पद-चिन्ता-पंक्ति मुन्नेय्दुवुत्- ।
तम-ताणक्कदु सञ्चितार्त्थमेने धर्म-ध्यान-मौनोद्यम- ।
क्रमदिन्दं **मुनिभद्र-देव**रोडलिं वेर्म्माडिदर्जीवमम् ॥
लसित-शकाङ्कमुद्ध-नभ-चन्द्र-पुरेन्दुविनिन्दे सोभिसल् ।
पेसर्वडेदोप्पि तोर्प्प विलसद्-**विभवाब्दद-चैत्र-सुद्ध-ते-** ।
रसे-शनिवारदोळ् सकळ-सन्यसन-व्यसनं समाधि सन्- ।
दिसे **मुनिभद्र-देव**रुरे सद्-गति सौख्यमनेय्दिदर् न्निजम् ॥

क ॥ लसित-**मुनिभद्र-देव**र ।
निसिधियुमनवर शिष्यरेने सोगयिप **पारि-** ।
ससेन-देवरुरे मा- ।
डिसि कीर्त्तियनान्तरिन्तु कन्तु-विद्ररर् ॥

भद्रमस्तु जिनशासनम् श्री

[वृषभ-तीर्त्थंकरके गणधर वृषभसेन-मुनिप और उद्धुर-वंशके आचार्योंकी कीर्त्तिका वर्णन कौन कर सकता है? इस वंशके आचार्योंके अग्रणी जिनसेन और वीरसेन थे। उस परम्परामें लक्ष्मीसेन-भट्टारक अवतीर्ण हुए थे, जिनके शिष्य चन्द्रसेन-सूरि थे। उनके शिष्य मुनिभद्र-देव थे; उनकी प्रशंसाएँ। उन्होंने हिसुगल वसदिको बनवाया था, और मुलुगुण्ड जिनेन्द्र मन्दिरका विस्तार किया था। जिस समय हरिहर-राय विजयनगरीमें विराजमान थे, सेन-गणके वृद्धजनोंने उस यतिके गुणोंको नमस्कार किया था। तपश्चरणके बाद उन्होंने बहुत समय तक निश्चिन्त जीवन बिताया। अन्तमें, उन्होंने अपना अन्त नजदीक जानकर, विहित विधिका अनुष्ठान करके उच्चावस्थाके लिये अपनेको तैय्यार किया, तथा

(उक्त मितिको), 'सन्यसन' की विधिपूर्वक, प्राणोत्सर्ग करके शाश्वत सुखका आनन्द लिया। उनका स्मारक उनके शिष्य वा (पा) रिसेन-देवके द्वारा खड़ा किया गया था। जिनशासनका कल्याण हो।]

[EC, VIII, Sorab tl., No. 146]

५८६

हिरे-आवलि;—कन्नड़।

[शक १३११=१३८९ ई०]

[हिरे-आवलिमें, १६वें पाषाण पर]

श्रीमद्-राय-राजधानि-हस्तिनापुर-**विजयानगरि**-मुत्तवाद। समस्त-पट्टणाधीश्वर। अश्वपति-गजपति-नरपति-अरि-राय-तुरुस्क(ष्क)-विभाड। हिन्दूराय-सुरत्राण। मापेगे-तप्पुव-रायर गण्ड। समस्त-भुवनाश्रय पृथ्वी-वल्लभ। महाराजाधिराजम्। श्री-वीर-**बुक्क-राय**न कुमार **हरिहर-राय** राज्यं गेय्युत्तमिर्प्पं कालदल्लि महा-प्रधानि मन्त्रि-शिरोमणि **मादरस-वोडेयर** काल। स्वस्ति यम-नियम-स्वाध्याय-ध्यान-मौनानुष्ठान-जप-तप-समाधि-शील-गुण-सम्पन्नरप्प श्री-**मुनिभद्र-स्वामि**गळ गुड्ड। आहाराभय-शास्त्र-दान-विनोदनुं। रत्नत्रयाराधकनुं। जिन-मार्ग्ग-प्रभाव-करनुमप्प जिड्डुलिगेय-नाडिङ्गे मुख्यवाद **हिरियावलि**य पुराधीश्वरनप्प श्रीमन्नाळुव-महा-प्रभु **काम-गौण्डन** सुपुत्र कुल-दीपकनप्प। हिरिय-चन्दप्पनु **शक-वर्ष १३११ शुक्ल-संवत्सरद कार्त्तिक-बहुळ-रजनी-कुज-वार-चतुर्द्दशि-** शुभ-दिनदलु सन्यसन-समाधि-विधियिं मुडिहि स्वर्ग-प्राप्तनाद॥

क॥ कार्त्तिक-बहुळ-चतुर्द्दशि।

कीर्त्तिय मुनिभद्र-यतिय प्रियद गुड्डम्।

स्फूर्त्तिय देहव तोरदन-।

मूर्त्तद देवरने नेनेदु कीर्त्तिय पडेदम्॥

वोडने हुट्टिदरनेल्लर

कडु-मोहद मात-पितर-बन्धु-जनङ्गळ ।
यडवरियद मडदियरम् ।
कडु-गलितनदल्लि तोरेदु सन्यसनिन्दम् ॥
रजनि-कुलवार-शुभ-दिन ।
भनियिसिदं देव-गुरुव व्रतगळनेल्लम् ।
सुजनत्वद चन्द्रमनुम् ।
गजभजिसदे मडिहि स्वर्गमं नेरे पडेदम् ॥
अण्ण चन्द्रमगे गोपय ।
पुण्यद सम्बळ वनिते राम-गौण्ड-गौण्डिय पुत्रम् ।
वण्णिसुव हरिहरायन ।
पुण्णिदन कालदल्लि शुक्लोत्सरदोळ् ॥

गंगळ महा । श्री श्री

[लेख स्पष्ट है । हरिहर-रायके समयका है ।]

[Ec, VIII, Sorab tl., No 116]

५६०

मुल्लूर;—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[शक १३१३ = १३९१ ई०]

[मुल्लूरमें, वस्ति-मन्दिरमें चन्द्रनाथ वस्तिके पास]

स्वस्ति श्री शक-वर्ष १३१३ नेय प्रमोदूत-संवत्सरद वैशाख-शुद्ध ५ ... रदल्लु श्री-मूल-संघ देसी-गण पुस्तक-गच्छद ... कोण्डकुन्दान्वयराज्य-शुभेन्दु-कन्द- विजयकीर्त्ति-देवर प्र ... ... ल्लि देवरु ई-स्थानमं पडेदुद्धरिसिदरु श्री-राजा ... ... कोङ्गाळ्व सुगुणि-देविय ईश्वरद विजय-देवर द्वारा ... ... स्व-जननि ... ... आ-पोचब्बरसिगे पुण्यार्थ-वागि प्रतिष्ठेय माडूसि ... ... बिट्ट ऊरु अणिजवाडिय नेलविहळ्ळियम् (यहाँ

दान और सीमाओंकी विस्तृत चर्चा आती है; और वे ही अन्तिम वाक्यावयव) ।

[स्वस्ति । (उक्त मितिको), श्री-मूल-संघ देशीगण पुस्तक-गच्छ और कोण्डकुन्दान्वयके, आर्य शुभेन्दुकी सन्तान विजयकीर्त्ति देवके प्रिय······लि-देव-को यह मन्दिर मिलनेके बाद इसकी पुनः स्थापना की। और राजा ··· ··· कोङ्गाळ्व सुगुणि-देवीने, अपने शरीररक्षक विजयदेवके द्वारा,—इसलिये कि अपनी माँ पोचब्बरसिके लिये पुण्योपार्जन हो सके, —(प्रतिमाकी स्थापना की और इसके लिये जैसे कि लेखमें कहे गये हैं, सीमाओं सहित) दान दिये । शाप ।]

[EC, IX, Coorg tl., No. 39]

५९१

श्रवणवेल्गोला;—कन्नड़ ।

[विना कालनिर्देशका]

[जै० शि० सं०, प्र० भाग]

५९२

हिरे-आवलि;—कन्नड़ ।

[वर्ष आङ्गिरस=१३५२ ई० (लु. राइस)।]

[हिरे-आवलिमें, ११वें पाषाणपर]

स्वस्ति श्रीमतु आङ्गिर-सं [व] त्स (त्स) रद आश्र (पा) ड-सुध त्रयोदशे-गुरुवार दन्दु । मूल-संघद शुभचन्द्र-देवर गुड अर्वालय मसण गौडन मग चौन्डु-गौडन तम्म काळ-गौड समाधियिं मुडिपि स्वर्गा-प्रातनाद ॥

[लेख स्पष्ट है । राजाका उल्लेख नहीं है ।]

[Ec, VIII Sorab tl, No 111]

५९३

हुले-सोरब—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[शक सं० १३१७=१३९५ ई०]

[हळे-सोरबमें, उसके दक्षिण-पूर्वमें, तालाबके उत्तरीय नष्ट बन्धके पासके समाधि-पाषाणपर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनं ।
जीयात्त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

शक-वरुष १३१७ नेय भाव-संवत्सरद भाद्रपद-ब ७ बु सोरबद मोलेय-तम्म गाउडन मग **तम्म-गऊड** तनगे क्षय-व्याधियाद-निमित्त घट्टद केळगण **नगिलेयकोप्पक्के** होगि औषधिय माडिसिकोळुतिरलागि रोग बिडदे **सिद्धान्ति-देवरु** पञ्च-नमस्कारद ध्यानदिं जिन-चरण-सेवेगैदिदनु ॥

[जिनशासनकी प्रशंसा । (उक्त मितिको), सोरबके तम्म-गौडको क्षय-रोग हो जानेसे घाटोंके नीचे नगिलेयकोप्पमें दवाई लेनेके लिये गया । लेकिन चूँकि बीमारी (रोग) उसे छोड़नेवाला नहीं था,—सिद्धान्ति-देवकी आज्ञाके अनुसार, पञ्च-नमस्कारके उच्चारणपूर्वक, वह जिनके पाद-मूलमें गया ।]

[Ec, VIII, Sorab tl., No 52]

५९४

हिरे-आवली;—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[वर्ष भाव=१३९५ ई० (लू. राइस)]

[हिरे-आवलिमें, तीसरे पाषाणपर]

श्रीमत्परम-गंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥

श्रीमद्-राय-राजधानि-हस्तिनापुर-विजयानगर-मुख्यवाद-समस्त-पट्टणाधीश्वर अश्वपति-राजपति-नरपति-अरिराय-विभाड समस्त-भुवनाश्रय पृथ्वी-वल्लभ महा-राजाधिराजं श्री-हरिहर-राय राज्यं गेय्युत्तमिर्प्पल्लि तत्प्रधानि हरिय-प्पयन ••
कालदल्लि भाव-संवत्सर-फाल्गुण-मास-बहुळ-एकादशी-बुधवारद ......
कान-रामणन सति कामीगौण्डि सन्यसनि-विधियिं मुडिहि स्वर्गस्थेयादळु ॥

वृ ॥ सुरपति-वन्य-पार्श्व-जिन-पाद-सरोजद युक्त-कान्तियुम् ।
धरे-नुत-राय-राज-गुरु सिद्धान्ति-यतीशने तन्न राध्यनुम् ।
भर ••• न- नाड जिडडुळिगे आवलि-पुराधिप बेच-गौण्डनुम् ।
उरुतर-माम बोम्मरनुमत्तेयु शोभिप कामि-गौण्डियुम् ॥
कान-रामण [न] सतियेने ।
दानदोळं धर्म्मदल्लि सन्यसनियम् ।
येनु तडविल्ल मुडिहिदम् ।
मानि पतिव्रते नाकमं नेरे पडेदळ् ॥ मङ्गळ महा श्री श्री श्री ॥

[जिन शासनकी प्रशंसा । जिस समय राजधानी हस्तिनापुर-विजयनगर और समस्त शहरों (पट्टण) का अधीश्वर, महाराजाधिराज हरिहर-राय राज्य कर रहे थे :—उसके मंत्री हरिहर-रायके समयमें, (उक्त मितिको), कान-रामणकी स्त्री काम-गौण्डिने, 'सन्यसन' लेकर, मृत्युको प्राप्त होकर स्वर्ग गयी । आगेके श्लोको में बतलाया गया है कि राजगुरु सिद्धान्ति-यतीश उसका पुरोहित था; जिडुलिगे-नाड्के आवलि-पुरका अधिप बेच-गौण्ड चाचा था; बोम्मर उसकी सास थी ।]

[Ec, VIII, Sorab tl., No. 103.]

५९५

हिरेआवलि;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[—शक १३१९=१३९७ ई०]

[हिरेआवळिमें, २१वें पाषाणपर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥

स्वस्ति श्रीमन्महा-मण्डलेश्वरम्। अरि-राय-विभाड। श्री-वी'-**हरियप्प-वोडेयर** राज्योदयदन्दु **शक-वरुष १३१९ धातु-सं-आषाढ़**-शु० ११ म इंद्दं विठुलि-गेय-नाडोळ-गण हिर्यावलिय राम-गौडन सति माघनन्द्र-मलधारि-गळ गुड्डि रामि-गौडि श्री-जिन-पदवनेय्दिदळु

षड्ःदर्शन-सम-शीलम्।

दृढ़-व्रत-दृढ़ ध्यान-मौन-दृढ़-गुण-चरितव।

विडदे श्री-जिन-पदाब्जव।

नेनऽत्तं **रामि-गौडि** स्वर्गस्तेयादळ् ॥

[लेख स्पष्ट है। हरियप्प-वोडेयर्के समयका है।]

[EC, VIII, Sorab tl., No. 121]

५९६

श्रवणवेल्गोला;—संस्कृत।

[शक १३२०=१३९८ ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

५९७

हुम्मच;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[काल=शक १३२१=१३९९ ई०]

[पार्श्वनाथ बस्तिके मुखमण्डपके तीसरे पाषाणपर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

स्वस्ति श्रीमतु शक वरुष (वर्ष) गा १३२१ नेय बहुधान्यसंवत्सरद मार्गसिर-शुद्ध ४ ··· ··· श्रावण-नक्षत्रद ··· ··· मल्लप्पगळ मग होम्बुच्चद यि ··· पायण्ण सकल-सन्यसन-सल्लेखन ··· दणियं सरीर-भारमं बिट्टु स्वर्गस्तरादरु मङ्गळ श्री श्री

[होम्बुच्चके पायण्णने सन्यसन और सल्लेखनाके द्वारा अपनेको अपने शरीर-भारसे मुक्त किया और स्वर्ग प्राप्त किया। यह उसीका स्मृति-लेख है।]

[EC, VIII, Nagar tl., No. 51, t. & tr.]

५९८

हिरे-आवलि;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक १३२१=१३९९ ई०]

[हिरे-आवळिमें, पाँचवें पाषाण पर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम्।

स्वस्ति समस्त-भुवनाश्रय पृथ्वी-वल्लभ महाराजाधिराजं अश्वपति गजपति नरपति पूर्व्व-दक्षिण-पश्चिम-समुद्राधीश्वर श्रीमद्-राय-राजधानि-हस्तिनापुर-विजयानगर-मुख्यवाद समस्त-पट्टणाधीश्वर श्री-हरिहर-राय राज्यं गेय्युत्तमिप्प कालदल्लि।

शक-वर्ष १३२१ नेय बहुधान्य-संवत्सरद आषाढ़ शुद्ध १२ बुधवारदुदय-कालदोळु श्रीमन्नाळुव-महाप्रभु लिड्डुलिगेय-नाड्ङ्गे मुख्यवाद आवलिय **चन्द-गौण्डन** सति **चन्द-गौण्डि** सन्यसन-समाधि-विधियि मुडिहि स्वर्ग-प्राप्तेयादळु ॥

क ॥ वर-पार्श्व-जिनर. चरणम् ।
उरुतर-श्री-**विजयकीर्त्ति**-चरणाम्बुजमम् ।
शरणेन्दु मनदि नेनेवुत ।
वर-वडदळु यिन्द्र-स्वर्गमं सुखदिन्दम् ॥
नडव महा-लक्ष्मि-चौण्डक ।
यडवरिय ··· ··· ··· आवलियोळम् ।
कडयिल्लद कीर्त्तिय ··· ··· ।
पडेद सति सतियरोळगे ··· ··· गाद सतियळ् ॥

भद्रमस्तु ॥ मङ्गळ महा श्री श्री श्री

[यह लेख ऊपर के लेख नं० ५६४ से मिलता है, लेकिन चन्द-गौण्ड की पत्नी चन्द-गौण्डि, जिनके पुरोहित विजयकीर्त्ति थे, का उल्लेख है।

[EC, VIII, Sorab tl., No. 105]

५६६

ऊद्रि;—संस्कृत तथा कन्नड़-भग्न

[बिना काल निर्देशका, पर लगभग १३८० ई०]

[ऊद्रिमें ही, एक दूसरे पाषाणपर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥

स्वस्ति समस्त-भू-वळय-मध्यदोळ् इर्प्पुदु **मेरु-पर्व्वतम्** ।
प्रस्यदि दक्षिणाश्रयदोळिर्प्पुदु **कुन्तळ-देश** देशदोळ् ।

स्व-स्थिरत्वाद् बनवसेगवाश्रयमुं पदिनेण्टु-कम्पणम् ।
विस्तरदिन्द जिडुगुळिगेगोप्पुव दर्पणवुद्धरा-पुरम् ।
उद्धरेयोळ् वनिसिद्दम् ।
... द्धावं वयिचपास्यवं सिरियण्णम् ।
बद्दन्निगळ सुरद्रुम ।
... ... शिष्टरं पालिसुवं ॥
आतन सति चौडाम्बिके ।
भूपळरोळ् पुरुष-भक्ति कल्पुगंळता- ।
मान्नदि पुर-जनवडुदेने ।
गोत्रं पेच्चुंचे नडदळवाश्रयम्भन् ॥

व ॥ अन्ता-सिरियण्णं ... ... स्व-पत्नी-सहित-बन्धु-बान्धव ... परिजन-पुर-जनमं पालिसुत सुख-संकथा-विनोददिन्दमिरुत्तं विरलु ॥ वोन्दानोन्दु-दिनं अरहत्-परमे-

सुनिभद्र ... सिरियण्ण ... त्रिन्तानेयं माळ्प ...
मुनिभद्र-देवरान्नेयोळ् ।
अनुवर्चिसिद्द गुड्डनातनेम् ... ।
... ... तळ्ळ ।
अनुमत-पदवीवेनेन्दु नेनेवन्नरदोळ् ॥
अनु ... चदिं कुसुम-वृष्टिगळं सुरियल्के बेगदिन् ।
वन-स्व-भेरि-दुन्दुभि महा-सुरवं बहु-वाद्य-घोषदिन् ।
वन तनगादि पाड्डुत्तिरे ... ... ।
जिन-पद-पद्ममं बिडद ... सिरियण्णनेम् कृतार्थनो ॥

(बाकीका पढ़ा जाने योग्य नहीं है) ।

[इस लेखमें बयिचप्पके पुत्र सिरियण्णने किस तरह जिन-चरणोंका आश्रय लिया, इसका वर्णन है। नं० ५७६ लेखकी ही तरह यहाँ भी उद्धरेका वर्णन है। इसमें बयिचपके पुत्र जिन-भक्त सिरियण्णने जन्म लिया था। उसकी स्त्रीका

नाम वरदाम्बिके (?) था। एक दिन अर्हत् परमेश्वरने (?) मुनिभद्रको यह बतलाया कि वे पूर्ण गृहस्थ-शिष्य सिरियण्णको एक सुखी अवस्थामें पहुँचायेंगे। उस अनुकूल समयमें, जब कि पुष्प-वृष्टि हो रही थी और भेरी, दुन्दुभि तथा महा-मृदङ्गके बाजे बज रहे थे, साधु सिरियण्ण हमेशाके लिये जिन-चरणोंमें लिपट गया। कितना भाग्यशाली वह था!]

[EC, VIII, Sorab tl., No. 153]

५८०

मलेयूर—संस्कृत तथा कन्नड़।

[प्रमाथि वर्ष = १४०० ई० ? (लू. राइस) ।]

[उसी पहाड़ीपर, बड़े गोल पाषाणके पश्चिमकी ओर]

प्रमाथि-वत्सरे ज्येष्ठ-मासस्थ श्वेत-पक्षके।
पञ्चम्यां च तिथौ शुक्रवारे चन्द्रप्रभस्य तु ॥
प्रतिष्ठां कुरुते **चन्द्रकीर्त्ति-योगी** स्वयं मुदा।
स्व-निषिध्यर्थं उद्दाम-जिन-धर्म-प्रकाशकः ॥

श्री-मूलसंघ देशीगण पुस्तकगच्छ इङ्गलेश्वरद बळि कोण्डकुन्दान्वयद सम्बन्धिगळु **श्रुत-मुनि**गळ पद-पद्म-भृङ्गरुं, **शुभचन्द्र-देवर** प्रियाग्र-शिष्यरुं श्रीमतु सकल-कला-प्रवीणरुमप्प श्री-**कोपणद चन्द्रकीर्त्ति-देवरु** माडिसिदरु श्री-चन्द्रप्रभ-स्वामि-गळन्नु।

[सकलकलाप्रवीण, शुभचन्द्रदेवके प्रियाग्रशिष्य, मूलसंघ, देशीगण, पुस्तक-गच्छ, इङ्गुलेश्वर-बळि तथा कोण्डकुन्दान्वयके श्रुतमुनिके पद-पद्म-भृङ्ग, कोपणके चन्द्रकीर्त्ति-देवने चन्द्रप्रभकी एक प्रतिमा बनवायी और उसकी, अपनी निषिधिके लिये, प्रतिष्ठा करायी।]

[EC, IV, Chamrajnagar tl., No. 151]

६०१

हिरे-आवलि;—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[शक १३२५ = १४०३ ई०]

[हिरे-आवलिमें, १७ वें पाषाण पर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

स्वस्ति श्रीमतु **हरिहर-राय** राज्यं गेय्युत्तविप्प कालदलु ॥ श्रीमन्नाळ्व-महा-प्रभु अवलिय **बेचि-गोण्डन** महा-सति **सक-वर्ष १३२५ दनेय स्वभानु-संवत्सर-भाद्रपद-बहुळ-सप्तमी-शुक्रवार-रोहिणी-नक्षत्र-वेळ्प** - नावदलु **बोम्मि-गोण्डि** सन्यसन-समाधि-वि धि शरीर-मारभं बिट्टु स्वर्ग-प्राप्तियादळु ॥

क ॥ तन्नय दैवं जिन-पति ।
तन्न गुरुं **मारचन्द्र-मलधारि-देवर्** ।
तन्न पति **बेचि-गौण्डनु** ।
तन्न सुतं **चन्द्र-गौण्ड** अवलिपुरेशन ॥
यी-तेरद बन्धु-बळगद ।
ख्यातिय प्रभु-मनेगळेल्ल तन्नवरेल्लन् ।
··· ताय गुणके पासटि ।
भूतळदोळु बोम्मकक्के सरि दोरे उण्टे ॥
जिनर नेनेवुत्त वचनदोळ् ।
मनसिनोळं पुत्र-पौत्ररं तोरेवुत्तम् ।
येनगीग पञ्च-पदगळे ।
वनवेनुतले नुडिदि स्वर्गमं नेरे पडेदळ् ॥
महा श्री श्री ॥

[लेख स्पष्ट है । हरिहर-रायका राज्य था ।]

[EC, VIII, Sorab tl., No. 117.]

६०२

श्रवणबेलगोला;—कन्नड़ ।

[वर्ष तारण = शक १३२६ = १४०४ ई० (कीलहौर्न)]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

६०३

हले-सोरब;—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[शक १३२७=१४०५ ई०]

[हले-सोरबमें, उसके पूर्वमें आञ्जनेय मन्दिरके पासके समाधि-पाषाणपर]

श्रीमत्-परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ।।

स्वस्ति श्री शक-वरुष १३२७ नेय पार्थिव-संवत्सरद प्रथम-आषाढ़-ब
३० सु सोरबद महा-प्रभु देव-राजन अर्द्धाङ्गि मेचकं जिन-पदवनेय्दिदळ-
देन्तेने ॥

कन् ॥ पोडविपर नेलेवीडिदु
ध्रु (ट) उत्तर-पुर चन्द्रगुप्ति अदकाश्रयवी -।
एड-नाडु मोदल-कम्पण ।
कडेगं पदिनेण्टु-नाडनार् वण्णिपरो ॥
घनतर-तेजदेळेगेगेसदिप्पववेम् पदिनेण्टु-कम्पणक्क ।
अनितरोळोप्पु उद्धरेय श्री-वनिता-सति वयिच-राजनोळ् ।
जनिसिदळिल्लि बाळ्द ळेड-नाड महा-प्रभु देव-राजनङ् -।
गने एने मेचकं जिन-पादाब्जमनेय्दिदवेम् कृतार्थेयो ॥

कन् ॥ अरुहत्-परमेश्वरनम् ।
स्मरिसि महा-दुरित-दुर्घटङ्गळ कळिदळ् ।
गुरुगळ सम्बोधने उच्चरणेयलेयिदिदळु सु-समदिं जिन-पदमं ॥

[जिन शासनकी प्रशंसा। (उक्त मितिको), सोरव महाप्रभुकी अर्द्धाङ्गिनी मेचक जिन पदोंके पास गयी। उसकी प्रशंसामें श्लोक, जिनमें कहा गया है कि अठारह-कम्पणमें उद्धरेके वयिच्चि-राजकी पुत्री थी। १८-कम्पणमें पहिला कम्पण एडेनाड् था, जो कि बलवान् नगर चन्द्रगुत्ति पर आश्रित था।]

[Ec, VIII, Sorab tl., No 51.]

६०४

हिरे-आवलि;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक १३२९=१४०७ ई०]

[हिरे-आवलिमें, सात वें पाषाणपर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम्॥

स्वस्ति समस्त-भुवनाश्रयं श्री-पृथ्वी-वल्लभ महाराजाधिराज भुजबल-प्रताप चक्रेश्वर श्री-**वीर-हरिहर-रायन** कुमार **देव-रायर** पृथ्वी-राज्यं गेय्युत्तमिर्प्प-कालदल्लि **शक-वर्ष १३२९ सर्व्वधारि-संवत्सरदल्लु जिड्डुळिगेय नाडिङ्ग** मुख्यवाद **हिरि-आवलिय** ग्रामदल्लि श्रीमन्नाळ्व-महाप्रभु **राम-गौण्डन** सुपुत्र **हारुव-गौण्ड** स्वर्ग-प्राप्ति आद॥

वृ॥ परम-श्री-जिन-राज देव्व मुनिपं वैराग्य-सम्पत्तिन्द।

··· द श्री-**मुनिभद्र-देव** मुनियोळ् कैकोण्डुमिर्प्पसियुम्।

बरेयुं वल्लमेयेन्दु वीरतनदिन्दाश्रिवज-मानुदिनम्।

रिम्भु ··· तयाङ्गनेगक्कु हारुव-गौण्ड-प्रभु धर्मस्थ-कीर्त्ति ···॥

अण्ण **गोपण्णन** तम्मनु :

पुण्यद कणि धर्म-चित्त सच्चारित्रम्।

पुण्यदनपवर्गांकम् ।
वण्णिसली-हारुव-गौण्डगेयार् घरेयोळ् ॥
नोडिद्डे मदन-सन्निभ ।
रूढियोळतिकीर्त्ति वेत्त सज्जन-पुरुषम् ।
पाडरिदं हारुव-गौण्डम् ।
वेडिदवरिगन्न-होन्नु-वस्त्रवनीवम् ॥
जिनर नुडि जिनर भावने ।
जिन-विम्बकल्ददन्य-देय्वक्केरगम् ।
जिन-पद-नळिन-भ्रमरम् ।
जिन-धर्म्मोद्धार हरुव-गौण्डनुदारम् ॥
मंगल महा श्री श्री श्री ॥

[जिन शासनकी प्रशंसा । स्वस्ति । जिस समय, (अपने पदों सहित), वीर-हरिहर-रायके पुत्र देव-राय पृथ्वीका राज्य कर रहे थे :—(उक्त मितिको) हिरि-आवलिमें, जो कि जिड्डुलिगे-नाड्का मुख्य ग्राम है, शासक महाप्रभु राम-गौण्डका पुत्र स्वर्गको गया ।

आगेके श्लोक बताते हैं कि उसके पुरोहित मुनिभद्र-देव थे, और उसके ज्येष्ठ भाई गोप्पण, तथा उसकी उदारता और जिनभक्तिकी भी प्रशंसा की गयी है ।]

[EC, VIII, Sorab tl., No. 107]

६०५

कुप्पुटूरु—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[शक १३३० = १४०८ ई०]

[कुप्पटूरु में, जिन-बस्ति के उत्तर-पश्चिमकी ओर के पाषाण पर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥

स्वस्ति श्री-प्रणतामराधिप-हटत्-कोटीर-चूड़ामणि- ।
स्तोमोद्दाम-रुचि-प्रदीप-निकरैर्न्नीराजिताङ्घ्रि-द्वयः ।
श्री-गोपीश-महा-प्रभोर्व्वर-कुले स्वाम्यादि-चक्रादितः
श्रीमद्-**बान्धव-पुरि**णो विलयते श्री-शान्तिनाथ-प्रभुः ॥
तच्छान्तीश्वर-चन्द्र-सान्द्र-करुणा-पीयूय-संवर्द्धितात्
सत्-सन्तान-परिष्कृतात् स्वयमभूद् **गोपीपते** स्वत्तरोः ।
नाम्नाप्यर्थवता सदा नरकजित् सद्-धर्म-सन्नाहवद्-
धाम्ना **श्रीपति**राश्रितार्त्थि-सुमनश्-श्रेयः-फलं सत्-सुतः ॥
तत्पुत्रो जिन-धर्म्म-तामरस-सन्मित्रः सु-मित्रं सताम्
साहित्यामृत-वाहिनी-सरिदिनः संगीत-विद्या-घनः ।
सोऽपि स्वस्य पितामह-प्रतिनिधिर्न्नाम्ना च गोपीपतिः
स्वानूकाश्रम-योग्य-सद्-गुण-मणि-श्रेणी शुभालंकृतिः ॥
तेन श्री-मूलसंघ-प्रथित-गणि-गुणोंद्भासि-देशी-गणोद्यत्-
सिद्धान्ताचार्यवर्य्य-प्रियतम-वर-शिष्येण तेजस्विना च ।
श्रीमज्जैनेन्द्र-पूजा-जिन-गृह-कृति-सत्-पात्र-दानादि-पुण्य-
श्रेण्या ··· हानि त्रिदिव पथ-मुनिश्रेणि-कल्पान्यकारि ॥
तन्नोळगिर्द्द मौक्तिकविळा-धरवद्रि-धराङ्ग-रोच्चिगळ् ।
तन्नोळगोळ्पु-वेत्तु पोष्पोण्मुव-वोल्-जळ-शीकरङ्गळिन्द् ।
उन्नतमाद वल्-देरेगळित् तेरे-मालेय नील-रोचियिम् ।
तन्नति-गुण्पु घोषदोदवि लवणाम्बुधि नाडे रञ्जिकुम् ।
आ जळनिधि-परिवेष्टिसिद्- । आ-**जम्बू-द्वीप**-मध्यदोळ् **मेरुनगम्** ।
राजिपुदेण्देसेगमर-स- । मावदे सुर-घेनु-देव-तरु-पञ्चकदिम् ।
मेरु-गिरिय तेङ्कण-दिक्कितोळ्-धर्म्म-भूमि **भरतखण्ड**मिर्प्पुदडरोळति-रमणीय-
ना-देशमुण्टा-देशदोळ् ॥
जिन-धर्मावासवदत्तमळ-विनयदागारवादत्तु पद्मा- ।
सननिर्प्पी-सन्नवादत्तविशद-यशो-धामवादत्तु विद्या- ।

घन-जन्म-स्थानवादत्तसम-तरळ-गम्भीर-सद्-गेहवादत् ।
एनिसल्किन्तुळ्ळ नाना-महिमेयोळेसुगुं चारु-**कर्ण्णाट-देशम्** ॥
अदनाळ्वं शत्रु-भूभृद्-गिरि-कुळिशनिळा-दानि राजाधिराजम् ।
कदन-क्रीडा-त्रिणेत्रं पृथुल-भुज-बलाज्ञ-प्रभाव-प्रसिद्धम् ।
चदुरं बाण-प्रयोग-क्रमदे निरुपमोग्राग्रदेकाङ्ग-वीरम् ।
मदनाकारं गभीरं **हरिहर**-नृपनात्मोद्भवं **देव-रायम्** ।
आ-नरनाथं सुख-संकथा-विनोददिं राज्यं गेय्युत्तमिरे ॥
पलवुं देशक्के सोम्पिं सोगयिपुवुदु कर्ण्णाट-सम्पूर्ण्ण-भू-मण्- ।
डलवा-कर्ण्णाट-देशक्कतिशयवदरोळ् **गुत्ति-नाडो**प्पुगुं मत्त् ।
ओलविन्दा-देशवेल्लं सहजदे पदिनेण्टागियुं **कम्पण**ङ्गळ् ।
सले कूर्प्पिन्दिप्पुवा-कम्पणदोळतिशयं तानेनल् नाडे तोक्कुम् ॥
वोलविं **नागर-खण्डे**यं ललितदा-नाडिङ्गे दल् **कुप्पटूर्** ।
त्तिलकं तानेनिसुत्त भव्य-जन-धर्म्मावासदिं सन्ततम् ।
सले चैत्यालयदिन्दे पू-गोळगळिन्दुद्यानदिं गन्ध-शा- ।
ळि-लसत्-चेत्र-निकायदिन्दे रमणीयं-वेत्तु विभ्राजिकुम् ॥
पू-लते पू-गिडु-पू-मर । सालिन्दल्लल्लि केरि-केरिगळोळ् चै-
त्यालयद मुन्दे तुम्बिय । जाळं मदवेरे मेरेववा-परिमळदोळ् ॥
आ-एरमं तानाळ्' । **गोप-महाप्रभु** जिनेश-धर्म्म-विशुद्धम् ।
सोपानं स्वर्ग्गक्केने । पाप-रहित-सच्-चरित्रदिं सोगयिसुवम् ।
आ-गोप-गौण्ड-तनयं । सागर-परिवेष्टिसिर्द्द जम्बू-द्वीपक्क् ।
आगळ् वितरण-विभवदे । भोगद **सिरियण्ण**नेसेवनेळेगप्रतिमं ॥
आ-सिरियण्ण-तनूजम् । भासुर-गुण-निलयनुचित-दानि कृपाम्भो- ।
राशि गरुवर्गे गुरु जिन- । दासं **गोपण्ण**नखिल-गुण-निस्सीमम् ॥
आ-गोपण्णन वितरणदेळ्गेयेन्तेन्दोडे ॥
वारिजसद्मे सन्नदोळगिर्द्दवोलिन्-नुतिसिद्द पारदम् ।
पारदे बन्द-तोक्के सुमनो-मणि सन्मणि-हारदल्लि बन्द- ।

ओरणमागि निन्द-परि वन्दि-जनक्केनिपोन्दु दान-गम्- ।
मीरतेयादुदेम् पोगळ्वे नाम् सिरियण्ण-तनूज-गोपनम् ॥
मत्यद मेलणेन्दरिके धर्म्मद मेलण लोभविन्दु सा- ।
हित्यद मेलणासे जिन-पादद मेलण-निष्ठे नाडे सद्- ।
भृत्यर मेलणादरणे कीर्त्तिय मेलण कूर्म्मे लोक-सं- ।
स्तुद गोपण-प्रभुविगुण्टुळिदर्ग्गिनितुण्टे धात्रियोळ् ॥
करुण-रसं पोनल्-कविदु धर्म्म-महा-लतेगालवाल-नु- ।
स्थिर-जलमागे तल्-लते जिनागम-कल्प-महावमं मनो- ।
हर-तरदिन्दे पर्व्वि निले गोपन दुङ्ग-कृपानुमवनन् ।
निरुपम-धर्म्मम वर-जिनागम-वृत्तियं पोगळ्वरार् ॥
येनेन्दार् कीर्त्तिसल् बल्लरो विमल-महा-मोक्ष-लक्ष्मी-निवासन् ।
ज्ञानागिन्तोर्प्पि तोर्प्पी-जिन-पतिय लसत्-कोमलाङ्घ्रयब्ज-सम्यग्
ध्यानं कैगळ्दुवा-निर्म्मळ-मनदोळविन्देन्दे विभ्राजिपं सु- ।
ज्ञानाम्भोराशि-गोपण्णन तेरदोळिळा-लोकदोळ् धन्यनावम् ॥
गुरुगळ् सिद्धान्ति-देवर् तनगे वर-जिनेन्द्रागम-ज्ञानमं भा- ।
सुर-वाक्यादानीकदिन्दं तिळिपि बळिक मन्त्रोपदेश-प्रभा-वि-
स्तरमं वार्द्धक्कलर्द गुरु-कृपेय्यने कैकोण्डु सत्-सेव्यनादं ।
सिरियण्णात्मोद्भवं गोपणन तेरदोळिन्नावनं पुण्य-रूपम् ॥

आ-पुण्य-मूर्त्ति-गोपण्णन पुण्याङ्गनेयर गुण-समुदयवेन्तेन्दोडे ॥

स्थिरदिं निर्म्मळ-चित्तदिं सोवगिनिं शान्तत्वदिं रूपिनिम् ।
गुरु-पादाम्बुज-भक्तियिन्दे जिन-मार्गाचारदिं सन्मनो -।
हरमप्पा-पुरुष-व्रत-स्फुरणेयिं गोपायि-पद्मायिगळ् ।
निरुतं नाडे विराजिपर्गे दोरेयार् सर्व्वोर्व्वियोळ् कान्तेयर् ॥

सिरियण्ण-सुतु मले नाड महाप्रभु गोपण्णं पतिव्रतेयराद पुण्याङ्गनेयरोळ् पलवु कालं नलिदु तनगे संसार-सुखं हेयमागे ॥

गगनाग्नि-पुर-हिमांशुगळ ।
ओगेद शकं १३३० सर्व्वधारि-संवत्सरदा ।
मिगे वैशाख-[वि]- शुद्धदे ।
सोगयिसुवा-दशमो-मिसुप-शनिवासरदोळ् ॥

हिरण्य-धान्य-भूमि-गो-दान-मुख्यवाद समस्त-दानङ्गळं द्विजरर्गित्तु ॥

मनदोळ् जिह्वाग्रदोळ् सत्-कररुहदे जिन-ध्यानमं मन्त्रमं मन् -।
त्र निरूपं तानेनिप्पा-जप-गणनेगळं साच्चुतं मोक्ष-लक्ष्मो -।
विनयं कैगळ्मलागळ् त्रिदिवमनतिसन्तोपदिन्देय्दिदं सज् -।
जिनरेल्लं कूत्तु सैय्पि पोगळे सिरियणात्मोद्भवं गोप-गौडम् ॥

अदं कण्डु ॥

परम-श्री-निधि-गोपनङ्गने अरेल्ला-दानमं सद्-द्विजोत् -।
कर-हस्ताग्रदोळित्तु शुद्ध-मनदिं सिद्धान्त-योगीन्द्रना -।
चरणाब्जक्कोळविन्द वन्दिसि महा-श्री-वीतरागाङ्घ्रियम् ।
स्मरिसुत्तं दिवकेय्दिदर् व्नलविनिं गोपायि-पद्मायिगळ् ॥

[जिनशासनकी प्रशंसा ।

भगवान शान्तिनाथकी स्तुति । गोपीपति-श्रीपति-पुनः गोपीपति, इन राजाओंको परम्परा । जम्बूद्वीप, मेरु पर्वत और भरतखण्डका निर्देश । उसमें कर्णाट देशका वर्णन; उसके राजा हरिहरके पुत्र, देवरायका उल्लेख । उनके राज्यके समय गोपीपतिने, जो मूलसंघ तथा देशी-गणके आचार्य सिद्धान्ताचार्य्यका शिष्य था, एक जिनमन्दिर बनवाया और उसे दान दिया ।

कर्णाट प्रान्तके गुत्ति-नाड्के १८ कम्पणोंमेंसे अत्यन्त प्रसिद्ध नागरखण्ड था, जिसका तिलक 'कुप्पटूर' था । इसका कारण यह था कि इसमें जैन लोग निवास करते थे, उनके साथ बहुत-से चैत्यालय थे, सुन्दर कमलयुक्त तालाब थे इत्यादि उसकी शोभा थी ।

उसका शासक जैन धर्मावलम्बी गोप-महाप्रभु था। गोप-गौडका पुत्र सिरियण्ण था। उसका पुत्र गोपण्ण। उसकी प्रशंसाके श्लोक। उसकी पत्नियोंके नाम गोपायि और पद्मायि थे। वह सब कुटुम्बको छोड़कर त्यागी हो गया और स्वर्ग गया। उसका अनुसरण उसकी दोनों पत्नियोंने भी किया।]

[EC, VIII, Sorab., tl. No. 261]

६०६

हिरे-आवलि;—कन्नड़-भग्न।

मिति लुप्त (?)

[हिरे-आवलिमें, आठवें पाषाण पर]

(अग्र भाग मिट गया है)

... ... । स्वस्ति सम ... ... देव-रायरु ... भाद्रपद ... ... ड्ढुळिगेय ... ... ह्रोरगेय ... ...आडिद-वळिकं पेर-कोण्डाडनु ... ... नोडनु जिनपद ... ... द्रमनेन्दुम् ॥

मुनि-भ ... ... श्रुपिय करुणदे ।
... ... गिद्दुं सुख-सङ्कथदिम् ।
जिन-पद-कमळन मनदोळग् ।
अनुदिन तां नेनदु नाक-सुखमं पडदम् ॥
यिन्दु कळङ्कनेम्बवर मातुगळं पुसि-माळ्पेनेन्दु आ -।
न्ददे चात्रियल्लुदसिदं कळे कुन्ददे कोट्टु नष्टमम् ।
पोन्ददे कण्डुसिर्प्पवरे वळिद सर्व्व-जनाधिप-चन्द्रमम् ।
चन्द्रमनोप्पिदं मुद्दिद चोवयनात्मज भू-तळाग्रदोळ् ॥

मंगळ महा श्री श्री श्री

[इस लेखमें चीवयके पुत्र चन्द्रमके लिये एक वैसी ही स्मारकका उल्लेख है जैसा कि नं० ६०४ के लेख में है।]

[EC, VIII, Sorab tl.. No. 108]

६०७

श्रवणवेलगोला—संस्कृत तथा कन्नड़।

शक १३२१ =१४०१ ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

६०८

चैतनाथ (ग्वालियर); प्राकृत-भग्न।

[सं० १४६७=१४१० ई०]

ॐ सिद्धिः ; संवत् १४६७ वर्षे मार्गसुदि ५ सों, दिनं ॥ महाराजाधिराज श्री **वीलङ्ग देवः** । श्रीत्तियं काकौमनपुकर वासौः । प्रधान—जनार्द्दनः । भुजदानु रा —च— । सूत्र यारदान वाभुः ॥ माढा पेति—॥—

अनुवाद—सिद्धि ! संवत् १४६७ के माघ महीने के सुदी पक्ष के पाँचवे दिन। महाराजाधिराज **बिलङ्ग देव** (शेष पढ़ने में नहीं आता)।

कर्नल सी. उक्त नामको '**विरम**' पढ़ते हैं।

JASB, XXXI, P. 404, t.; p 422, tr.]

६०६

धर्मपुर;—संस्कृत तथा कन्नड़—भग्न।

[काक लुप्त, पर लगभग १४१० ई०]

[धर्मपुर (धर्मपुर परगने) में पुलिस स्टेशन के सामने के
एक पाषाण पर]

ॐ नमः शान्तिनाथाय ॥

श्रीमत्परम-गंभीर-स्याद्वादामोघ-लाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

स्वस्ति श्रीमन्महाराजाधिराज राज-परमेश्वर पूर्व दक्षिण-पश्चिम-समुद्राधिपति हिन्दू-राय-सुरत्राण भाषेगे-तप्पुव-रायर गण्ड श्रीमत्-प्रताप-चक्रवर्ति श्री-वीर-देव-राय-महारायरु विजयानगरद नेलेवीडिनोळ् सुख-संकथा-विनोददिं राज्यं गेय्युत्तमिरे

कन्द ॥ आ-देव-राय सकळ-ध-। रादेत्तं राज्य-रक्षणकोलवि ... ...
आदरिसले निङ्गमल्ल-म-। हा-दुर्गमनाळ्दनोसेदु गोप-चमूपम् ॥

वृत्त ॥ आतन ... शा-जरने वेसगोण्ड ... कौशिकान्वयोद् -।
भूतनुदग्र-मन्त्रि-पदवी-प्रथितं विभु ... ... ।
... ... तमनं जिनेन्द्र-समयाम्बुधि-वर्धन-पूर्ण-चन्द्रने-मातो
दिगन्त ... ... ॥

कं ॥ ... ... मन्त्रि-महा ।... ... ... ।
... ...। ... ... ॥

......गोपणन यशस्सुर-भूजद बीज-राजियन्ददिन् (बाकीका मिट गया है)।

[ॐ । शान्तिनाथ के लिये नमस्कार । जिनशासनकी प्रशंसा ।

स्वस्ति । जिस समय महाराजाधिराज राज-परमेश्वर, पूर्व्व-दक्षिण-पश्चिम-समुद्राधिपति, हिन्दू-राय-सुरत्राण, वीर-देव-राय-महाराय विजयनगरके अपने निवास-

स्थानमें थेः—जब वह देव-राय राज्य की रक्षा करनेमें प्रसन्न था—प्रधान मन्त्री के पदको सुशोभित करते हुए, जिन-समय रूपी समुद्र के बढ़ाने के लिये पूर्ण चन्द्र ऐसा गोप-चमूप महान् निडुगळ् किले पर शासन कर रहा था।]

[EC, XI, Hiriyur tl., No 28]

६१०

भारङ्गी;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक १३३७ = १४१५ ई०]

[भारङ्गीमें, कल्लेश्वर-बस्तिके पाषाणपर]

... ... खण्डितानङ्ग-राजस्

स्तुत-हित-**जिन-राजः** प्राप्त-सत्-पाद-पूजः।
धृत-सगुण-समाजो वादिनं **वादि** ... ...
... ... राजोऽभून्नताशेष-राजः॥

सरसि च सित-सरसिजमिव
गगने विधुरिव हरिरिव हर-हसनम्।
इव हलधर-रुचिरिव विलस ...
... ... मुनि-पति-वर-विशद-यशः॥

तच्छिष्यो **जयकीर्त्ति**-नाम-**मुनिपस्**तत्पाद-सेवा-रतः।
सिद्धान्त-व्रतीपो नताखिल-नृपस्सिद्धान्त-पारङ्गतः।
तच्छिष्योत्तम-**बुळ्ळ-गौड**-तनुजः श्री-**गोपिनाथो**ऽभवत्
तच्छिष्यः स्वयमप्यभूत् स्व-जननी श्री-**माळि-गावुण्ड्य**पी॥

क्रमदिन्दी येल्लर गुणस्तुति येन्तेन्दोडे॥

शेषोऽप्यस्तु सहस्र-रम्य-रसनस्स्तोत्रे समर्थो हि यो
भूयो या धिषणा [... ...] श्री-शारदाप्यस्तु सा।
सोऽप्यस्त्वत्र गुरुर्गुरुस्सुर-ततेर्यश्शुद्ध-बुध्या गुरुर्

स्याद्वाद-वाराकर-शीतभानोः
सिद्धान्त-देवस्य मनोज्ञ-शिष्यः ।
अभूदसौ बुळ्ळप-गौड़-नामा
चारित्र-वाराकर-शीतरोचिः ॥
जिनेन्द्र-गन्धोदक-पूत-गात्रो
जिनार्च्चना-पुष्प-निवास-मूर्द्धा ।
जिनार्च्चना-चन्दन-कान्त-भालो
जिनेन्द्र-मन्त्रालय-मानसाब्जः ॥
नित्यं विशुध्या कृत-धर्म-चक्रो
नित्यं ललाटे कृत-धर्म-चक्रः ।
नित्यं मुदा पालित-देहि-चक्रो
नित्यं यशः-पूरित-भूमि-चक्रः ॥
दिनेदिने सम्भृत-धम-बुद्धिर्
द्दिनेदिने वर्द्धित-दान-वृद्धिः ।
दिनेदिने वृत्त दयाभिवृद्धिर्
द्दिनेदिनेवृत्त-हिरण्य-वृद्धिः ॥
अमी गुणास्सन्त्यखिळे जनेऽपि
सम्यक्त्व-रत्नकरता तु नैव ।
सा बुळ्ळ-गौडे खलु सत्यमस्ति
को वा ततो वर्णयति प्रभुं तम् ॥
तत्पुत्रस्तत-सद्गुण-स्तुत-जिनसिद्धान्त-नाम्नो मुनेस्
सिद्धान्तोद्भट-वार्द्धि-वर्द्धन-विधोश्शिष्यःसुपुण्यद्वयः ।
सत्याब्जाकर-भास्करः प्रियकरश्चारित्र-वाराकरः ।
श्री-पूर्णो भुवि गोपण-प्रभुरभूत् सम्यक्त्व-रत्नाकरः ॥
सिद्धान्तदेव-गुरु-पाद-पयोज-भक्तः ।
श्री-बुळ्ळ-गौड़-हृदयाम्बुज-भानु-बिम्बः ।

सन्मल्लि-गौडि-कर-पङ्कज-बाल-भृङ्गः ।
श्री-**गोपणो** निखिळ-बन्धु-मणीष्ट-सिन्धुः ॥
कीर्त्तिर्दिक्कामिनीनां शिरसि वितनुते मल्लिका-पुष्प-शोभाम्
तेजस्सीमन्तिनीनां विलसति विमले कान्त-सीमन्त-भूमौ ।
सिन्दूर-श्रीरिवाशा-परवश-विदुषां प्रीति-कृद् दान-सम्पद्
वाणी पीयूष-साम्या समल-गुण-निधेर्गोपिनाथ-प्रभोःस्यात् ॥

श्रीमद्-राय-राज-गुरु-मण्डलाचार्य्य महा-वाद-वादीश्वर-राय वादि-पितामह सकल-विद्वज्जन चक्रवर्त्तिगळप्प श्रीमद**भयचन्द्र-सिद्धान्त-देव**र प्रियाग्र-शिष्यनह **चुळ्ळ गौड**न मग **गोप-गौड**नाव-पोरक्काधिपतियेन्दोडे ॥

द्विपङ्गळोळगे **जम्बू** -।
द्वीपं देशङ्गळोळगे **कन्नड-देशम्** ।
[illegible] -विमवदलि सत्या -।
लापदि सोगयिसुतमिर्प्पवतिमुददिन्दम् ॥

अन्ता-जम्बू-द्विपदोळगण कर्णाट-विषयदोळगे ॥

फल-भरवाद शालि तळ्देरिद् चूत-कुजालि तेङ्गु कण् -।
गोळिसुव कौङ्गु पूत लते पू-गिड्डु पू-मरदोळि पल्लवङ् -।
गळ पोळरोन्दि तां निमिर्व शाक-कुजं तिळि-नीर्गोळङ्गळिम् ॥
सुललितवागि रञ्जिपुदु **नागरखण्ड**मदेत्त नोळ्पडम् ।
आ-नाडिङ्गे शिरो-विभूषणवेनल् **भारङ्गि**-चेल्वागि सु -।
ज्ञान-व्यापकरप्प भव्य-जनदिं विद्वज्जनानीकदिम् ।
नाना-नीति-विदग्धरिं घनिकरिं तीविर्द्दु लक्ष्मी-महा -।
[illegible] तन्नोळगिर्प्पुदेम्ब बगे-दोरत्तिर्प्पुदेल्लागळुम् ॥

आ-पुरद मध्य-प्रदेशदोळु ॥

ओळकोण्डभ्रमनेय्दे चुम्बिपुदय-श्री-शलवा-मानु-मण् -।

ढलवो येम्बवोलुन्नतोन्नतदोळा-चैत्यालयं चेन्न पोण् -।
गळशं रञ्जिसे भित्तिगळ् पोळपु-दोरल्गा-महा-सद्मदोळ्।
विलसत्पार्श्व-जिनेशनिप्पनदरोळ् देवाधिदेवेश्वरम् ॥
अन्ता पुरदधिपति भ -।
चिन्तामणि **गोप-गौड**-सुत बुळ्ळप्पङ्ग ।
इन्तुदयिसि **गोपण्णम्** ।
कन्तु-समाकृतियोळोप्पुवं वसुमतियोळ् ॥
जिन-सद् धर्म्ममनेल्लमं तिळिपि मत्ता-मूल-सन्मन्त्रमम् ।
नेनेवुत्तिर्प्पुदेनुत्तल् च्चपिसिदं सिद्धान्त-योगीन्द्रना -।
तन कारुण्यमनप्पुकेय्दु मुददिं सर्व्वज्ञ-पादाब्ज-वन् -।
दनेयं माडुत धर्म्मदिन्द नडेवं **गोपण्ण**-भव्योत्तमम् ॥
गोपति-वाहन-प्रभेयनेळिसि गोपति-वाहनांशुमम् ।
रूप-गिडल्के नवेडु गोपति-वाहन-कान्तियं महा -।
टोपदे ताने निन्दिसि मनोहरदेळ्गेयोळोप्पुत्तं बहु -।
द्वीपमनेय्दे पर्व्विदुदु **गोपण**नग्गद-कीर्त्ति पाण्डुरम् ॥

पुनः ॥

अखण्डतर-पाण्डित्य-मण्डितानन-मण्डलः ।
पण्डिताचार्य्य-वर्योऽस्याखण्ड-श्री-कारणं किल ॥
यत्-कारुण्य-कटाक्ष-वीक्षित-पुमान् लक्ष्मी-पतिस्स्यात् किल
यत्-पादानति-मानितामल-मनास्स्वयं महेशः किल ।
तच्छ्री-पण्डित-देव संयत-कृपावामः किलासौ प्रभुम्
तस्मादस्य सु-गोपणस्य सुकृतं तत् केन वा कथ्यते ॥
एको निवर्त्तयति दुर्गति-मार्गतो यम्
अन्यो हि दर्शयति निर्वृति-वर्त्म यस्य ।
यौ पण्डित **श्रुत मुनि** मुनिपौ तयोस्तत्
तद्-गोपणस्य मुनि पुण्यं अगण्यमत्र ॥

मत्ते ॥ जिन-पद-सरोज-भृङ्गम् ।

जिन-वाणी-वारि-धौत-कलिल-मलौघम् ।

जिन-मुनि-जन-पद-भक्तम् ।

जिनपाल्यं गोप-गौडनखिळ-गुणाढ्यन् ॥

इन्तु कीर्त्तिगावासवागिद्दुं ॥ पुनः ॥

अन्यदा गुण-माणिक्य भूषणो गोपण-प्रभुः ।

मर्त्य-लोकोद्भवं सौख्यं साधितं भुक्तमुत्तमम् ॥

तस्मादनेन भुक्तेन सुखेनालमतः परम् ।

स्वर्ग-लोकोद्भवं सौख्यं भोक्तव्यमधिकं मया ॥

इत्थं स्वान्ते विचिन्त्यैव गोपणो वासरे शुभे ।

पुरन्दर-पुरं शीघ्रं हन्त गन्तु-मना अभूत् ॥

...भव्यासन्नदावुदेन्दोडे ॥

सप्त त्रिंशत्-समेत-त्रि-शत-दश-शतेऽब्दे शके मन्मथाब्दे

मासे चाषाढ-संज्ञे वर-गुरु-दिवसे सत्-त्रयोदश्युपेते ।

कृष्णे पक्षे मनोज्ञे निखिल-गुण-गणो गोपणो भूषणान्तो

भोक्तुं वा स्वर्ग-सौख्यं सुर-पुरमगमद् दिव्यमव्याहत-श्रीः ॥

आतन समाधि-विधानमेन्तेन्दोडे ॥

परम-जिनेन्द्र-मूर्त्तियने चानिसुतं हृदयाम्बुजातदोळ् ।

परम-जिनेन्द्र-मन्त्रमने जिह्वेयोळुच्चरिसुत्त निष्ठेयिम् ।

बेगळ्गळोलोय्यनोय्यनेणिसुत्त जपावधियागे देहमम् ।

त्वरितदि बिट्टु मुक्ति-वडेदं कलि-गोपणनेम् कृतार्त्थनो ॥

...॥

पूर्व्वस्मिन् शक-वत्सरे शुभतरे पक्षे च कृष्णेऽधिके

मासे भाद्रपदेऽष्टमी-तिथि-युते श्री-भौमवारे वरे ।

आ-तारापति-भानु-भूधर-धरा ताराम्बरं तिष्ट (ष्ठ) तु
श्री-**गोपीश**-परोक्ष-शासनमिदं सत्कर्म्मणा स्थापितम् ॥

[वादिराज मुनिकी प्रशंसा । उनके शिष्य जयकीर्त्ति-मुनिप थे; उनके शिष्य सिद्धान्त-व्रतिप थे । उनके शिष्य बुल्ल-गौड, उनके पुत्र गोपीनाथ, और उसकी माँ मल्लि-गावुण्डि । इन सबकी क्रमसे प्रशंसा । उनके शिष्य (प्रशंसा सहित) **सिद्धान्त-देव-मुनिप** थे, जिनका मस्तक बौद्धोंको चुप करनेके लिये हमेशा सन्नद्ध रहता था । सांख्य, योग, चार्व्वाक, बौद्ध, भाट्ट तथा प्राभाकर सभीको उन्होंने शास्त्रार्थमें जीता था । बुल्लप-गौड, तथा उनके पुत्र गोपण-प्रभु जो अपनी माँ मल्लि-गौडिके हाथमें मक्खीकी तरह था, की प्रशंसा ।

राय-राजगुरु-मण्डलाचार्य्य, महा-वाद-वादीश्वर, रायवादि-पित.मह अभय-चन्द्र-सिद्धान्त-देवका पुराना (ज्येष्ठ) शिष्य बुल्ल-गौड था, जिसका पुत्र गोप-गौड नागरखण्डका शासक था । नागरखण्ड कर्णाटक देशमें था । नागरखण्डका खास भूषण भारङ्गि था, जिसमें जैन लोग, विद्वान्, न्यायी एवं श्रीमन्त लोग भरे हुए थे । इसमें एक उत्तम चैत्यालय था, जिसमें पार्श्व जिनेश विराजमान थे, उस नगर (भारङ्गि) का शासक गोप-गौडके पुत्र बुल्लप्पका पुत्र गोपण था, जिसके दो गुरु थे, पण्डिताचार्य्य और श्रुत-मुनिप; इनमेंसे एक उनको अनीतिके मार्गसे हटाता था तो दूसरा अच्छे मार्गपर लगाता था । इस संसारकी अच्छी-अच्छी वस्तुओंका उपभोग कर, परलोकके फलोंकी इच्छासे, (उक्त मितिको), गोपणने समाधिकी रस्मसे शरीर-त्याग किया, और 'मुक्ति' प्राप्त की । भद्रमस्तु । यह समय उसी शक कालका था, जिसमें यह पाषाण लगाया गया था ।

[EC, VII, Sorab tl., No. 329.]

६११

हिरे-आवलि,—संस्कृत तथा कन्नड ।

[शक १३३९ = १४१७ ई०]

[हिरे-आवलिमें, १६ वें पाषाणपर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

व ॥ श्रीमद्-राय-राजधानि-विजयानगर-मुख्यवाद-समस्त-पट्टणाधीश्वर श्री-वीर-हरिहर-रायन कुमार प्रताप देव-रायनु राज्यं गेय्युत्तमिर्प्प कालदल्लि **शक-वर्ष १३३९ नेय विलम्बि-संवत्सरद चैत्र-बहुळ १० गुरुवारदलु** श्रीमत्-सेन गणाग्रगण्यरु **मुनि-भद्र**-स्वामिगळ् प्रिय-गुड्ड हिरि-अवलिय राम-गौण्डन सत्-पुत्र गोप-गौण्डनु समाधि-विधियिं मुडिपि स्वर्ग्ग-प्राप्ति आद ॥

वृ ॥ वीर-जिनेन्द्र-पाद-पङ्कज-भृङ्गनुदार-चित्तनुद्- ।
धारकनन्त-जीर्ण्ण-जिन-वासव निर्म्मित-दान-पारगम् ।
गोरद-दासि-वेसि पर-नारि-सहोदर मार- सन्निभम् ।
अपारद-गोप-गौण्ड-प्रभुवं पुर बण्णिसुतिर्क्कुमागळुम् ॥

क ॥ वसदि-कलु-वेसननेसगिये ।
वसुधेयोळ् पुण्य-कीर्त्तियं अवलियोळम् ।
दस-दिक्किनलि गोपण्णम् ।
पसरिसिदं राम-गौण्डनदेन् पवित्रनु ॥

वृ ॥ परमाराध्यं जिनेन्द्रं गुरु ऋषि-निवहं राम-गौण्डात्मजातम् ।
निरुतं रामाम्बिका जननि अनुजनुं हा राम-गवुण्डं गुणज्ञम् ।
गिरि-अण्णं चन्द्रमाङ्कं सरसिज-मुखि गोवकं पतियेम्बळ् ।
पिरिदुं स्वर्गापवर्ग्ग-प्रकरदोळेसेवं **गोप-गौण्डं** कृतार्त्थम् ॥

क ॥ पोडवि-पति देव-रायनु ।
तडेयदे राज्यवनु आळ्व-कालदोळन्दुम् ।
बिडदे जिन-चरण-सेवेय ।
कडु-गुणि **गोपण्ण** पडेदनुत्तम-गतियम् ॥
गुत्तिय-राज्यद वोळगम् ।
उत्तमवेनिसिहुदु हिरिय-जिड्डुळिगेयोळम् ।
अत्युत्तम-हिरि-अवलिय ।
पेत्तनु प्रभु-राम-गौण्ड-सुत गोपण्णम् ॥
गुरुगळु श्री-मुनिभद्ररु ।
धरिसिदमवरिन्द गोपणाङ्कनु व्रतमम् ।
नररोळगे पुण्यवन्तनु ।
पिरिदुं स्वर्गापवर्गमं नेरे पडदम् ॥
अळवह-चैत्र-वहुळदि ।
वेळगप्पा-नावदलि गुरुवारदोळम् ।
विलसित-विलम्बि-वत्सरद- ।
ओळगादुदु दुहूरण-योग **गोपि-देवर्ग**म् ॥
दासी-वेसिय-रूपम् ।
व···घोदं पिरिदेन्दु तो··· अनि व्रतदिम् ।
मासिद-कीर्त्तिर्गाळन्दम् ।
लेसेनिसिये **गोप-गौण्ड** स्वर्गव पोक्कम् ॥
मंगल महा श्री

[इस लेखमें वंशावलि वर्णित है। देव-रायका राज्य-काल था ।

[EC, VIII, Sorab tl., No. 119]

६१२

हादिकल्लु;—संस्कृत तथा कन्नड़-भग्न ।

[वर्ष हेमलम्बो = १४१७ ई० (लू. राइस) ।]

[हादिकल्लुमें, रते हक्लके पासके समाधि-पाषाणपर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात्त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

... ... श्रीमत्तु हेव(म)ळम्बि-संवत्सरद आषाढ़-सु १ बृह-स्पतिवारदन्दु श्री-गुणसेन-सैद्धान्ति-देवर गुड्ड ... ... हादिगलगुडि-ययप्प-गौडन हेडति काळि-गावुण्डि समाधि-विधियिं मुडिपि सुर-लोक-प्राप्तेयादळु मङ्गल महा

[जिन-शासनकी प्रशंसा । (उक्त वर्षमें), गुणसेन-सिद्धान्ति-देवके गृहस्थ शिष्य ... अयप्प-गौडकी पत्नी काळि-गौण्डि समाधि-विधिके द्वारा मृत्युको प्राप्त हुई और स्वर्गको गयी ।]

[EC, VIII, Tirthahalli tl., No. 121.]

६१३

हिरे-आवलि;— कन्नड़-भग्न ।

[शक १३४३ = १४२१ ई०]

[हिरेआवळिमें, २०वें पाषाणपर]

स्वस्ति श्रीमद्-राजधानि-विजयानगर-मुख्यवाद समस्त ... ... श्री-वीर-प्रताप-देव-राय-वोडेयरु राज्यं गेयुत्तमिर्प्प कालदल्लि शक-वरुष १३४३ प्लव-समाश्रिवद व-६ मु हिरियावलिय गोप-गौडन मगनु भैरव-गौडनु पञ्च-नमस्कारदिं स्वर्गास्तनादम् ॥

परम-जिन-पार्श्वनाथन
चरण ··· ··· ··· ··· ··· ।
··· ··· चरण-कमल-षट्पम् ।
··· ··· भयि(भै)रव ··· ··· भव्य ॥
जिन-रत्न ··· ··· ··· ··· ।
··· ··· जिनदासन उदित-वीर-व्रतदिम् ।
··· ··· प्टनेन्दा- ।
विनयाम्बुधि भयि(भै)रवं ··· ··· पोषकम् ॥
पित गोपीनाथनेनिपनु ।
मत ··· ··· मातेयु कञ्चि-गौडि-मातेयु तनगम् ।
··· ··· माते सुत ··· ··· ··· ।
··· ··· भैरप्प ··· ··· मुडिपि स्वर्गव पोक्कम् ॥
गुरु-पञ्च-पदव नेनेऊत ।
सु-रुचिर-सच्चित्तदिन्दनात्मन ··· ··· ।
पिरिदप्प गतिय पडदम् ।
··· ··· ··· सणि भैरप्प ··· ··· ··· ॥

[इस लेखमें भी समाधिके स्मारकका उल्लेख है। देव-रायके राज्यका काल है।]

[EC, VIII Sorab tl, No 120]

६१४

हिरे-आवलि;—कन्नड-भग्न ।

[शक १२४३ = १३२१ ई०]

[हिरे-आवलिमें, १८ वें पाषाणपर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

श्रीमतु राजधानी-**विजयनगर**-मुख्यवाद-समस्त-पट्टणाधीश्वर श्री-वीर-प्रताप-**देव-राय** राज्यं गेयिउत्तमिर्प्प कालदलि **सकवरुष** १३४३ नेय सार्व्वरि-सं [व] त्सर-फाल्गुण-सु. ४ सो श्रीमत्-सेन-गणाग्रगण्यर **मुनिभद्र-स्वामिगळ्गे** प्रिय-गुड्ड **हिरिय-आवलिय वेच-गौडन** सुपुत्र **मडुक गौडनु** समाधि-विधियिं मुडिपि स्वर्गासियादम् मङ्गळ महाश्री श्री वी-[क] ल्ल माडिदातमी-ऊर पूर्व्विक **मदोजन** मग **बनदोजनु** ॥

[लेखमें स्मारकका उल्लेख है । देव-रायका राज्यकाल है ।]

[Ec, VIII, Sorab tl., No 118]

६१५

पहला लेख

मलेयूर (ह);—संस्कृत तथा कन्नड ।

[शक १३४४=१४२२ ई०]

[मलेयूर (उय्यमबल्लि प्रदेश) में ग्राम-प्रवेशके एक पाषाणपर]

ीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

स्वस्ति श्री **शक-वरुष** १३४४ नेय शुभकृत्-संवत्सरद श्रावण-शुद्ध १५ लु. श्रीमद्राजाधिराज-राज-परमेश्वर श्री-वीरदेव-राय-महारायर कुमार श्री-वीर-हरिहर-रायर सोम-ग्रहणदल्लु **कनकगिरिय** श्री-**विजय-देव**र श्री-कार्यक्के सल्लुव अङ्ग-रङ्ग-भोग मोदलाद देवता-विनियोगक्के **मलेयूर** चतुस्सीमेयोलगाद तोट तुडिके गद्दे बेद्दलु सुवर्ण्णादाय होन्नु होम्बरि हुङ्क तळवडिके ग्राम्मद मणय बोसगे मडुके चोर डलपे सरदि निधि निक्षेप जल पाषाण अक्षीणि आगामि मुन्तागि ऐनुळ्ळन्था ऐश्वर्य-सर्व्वादाय-सहित आ-मालेयूरु-ग्रामवन्नु धारा पूर्व्वकवाद शासन-दत्तवागि वासुदेवर-केरे-गद्दे स्थान-मान्यगळु होरतागि बिट्ट दत्ति (हमेशाकी तरह अन्तिम श्लोक)

[राजाधिराज राजपरमेश्वर वीर-**देवराय**-महारायके पुत्र वीर **हरिहरराय** ने कनकगिरिके देव विजयकी उपासनाके लिये मलेयूर ग्रामको सारी भूमिका दान किया।]

दूसरा लेख

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य **वर्द्धतां** जैन-शासनम्॥

स्वस्ति श्री **जयाभ्युदय-शालिवाहन-शक-वर्ष १३४४** सन्द वर्तमान-शुभकृतु-संवत्सरद श्रावण-शु १५ आ लु कनकगिरिय श्री-विजय-देवरिगे श्रीमन्महा-राजाधिराज राजपरमेश्वर श्री वीरप्रताप **देवराय**-महारायर कुमार **हरिहररायर् ओडेयरु** आ-कनकगिरिय श्री-विजयनाथ-देवर अमृत-पडि अङ्ग-रङ्ग-भोग-वैभ-वक्के कोट्ट धर्म-शासन तमगे कोट्टिह **तेरकणाम्बेय राज्यक्के** सलुव **कोल-गणद** भागेय **मलेयूर** ग्राम १ र चतुस्सीमेयोळगल्ल गद्दे बेद्दलु तोट तुम्बिके आरु-बन्नु मेलु-ओन्नु अड-देरे कुम्बार-देरे कल्ल-मने कोडेगे देव-दान बिनुगु बेस-वक्कलु होन्नु होम्बळि होङ्ग दाग सुङ्क दण्णायकर स्वाम्य मुन्तागि प्राकु-मर्य्यादे ऐनुळ्ळ सर्व्व-स्वाम्यवनु अनुभर्विसकोम्ब **मलेयूर** ग्राम १ र कालुवल्लि **हुणु-सूरपुरद** ग्राम १ उभयं ग्राम २ क्कं हिरिय मनेय पट्टे प्रमाण ग २३० (आगेकी १३ पंक्तियोंमें दानका विस्तृत विवरण है) अक्षरदलु नूरिपत्त-ऐळु होन्निन मलेयूर ग्राम १ न् सोम-ग्रहण-पुण्य-काल शुभकृतु-संवत्सरद कार्त्तिक-शु १ आरम्भवागि **त्रियम्बक देवर** सन्निधियल्लि स-हिरण्योदक-दान-(दान)-धारा-पूर्व्वकवागि धारेयनेरेदु आ ग्रामद चतुस्सीमेयल्लि मुक्कोडेय कल्लनु नेट्टित्ति कोट्ट (IIb) वागि आ-ग्रामद चतुस्सीमेयोळगुळ्ळ अक्षिणी-आगामिनिधि-निक्षेप-जल-पाषाण-सिद्ध-साध्य अष्टभोग-तेजस्-स्वाम्य सर्व्व-पृथ्वी समस्तबलिसहित देवर अमृत-पडिगाङ्ग-रङ्ग-भोग-वैभवक्के धारयन्नु एरदु कोट्टवागि आ-चन्द्रार्क्क-स्थायियागि चित्तायसुवुदेन्दु कोट्ट, धर्म्मशासन-बिट्ट दत्ति (पूर्वकी तरह अन्तिम श्लोक) **कोलगणद वासुदेवरिगे** मले (IIIa) यूरलि कोट्टिह बूरु-मुण्डाग केरेय बेळगे

चतुस्सीमेयहिल प्राकु-मर्य्यादि नीर वरिदु बेळव इप्पु गद्दे होरंते स्थान-मान्य पूर्व्व मर्य्यादि वर् ... ओप्प श्री विरूपाक्ष (कन्नड अक्षरोंमें)

[इस लेखका विषय शिलालेख नं० १४४ (ए० क०, जिल्द ४ थी, चामराजनगर ताल्लुका) से भिन्न नहीं है। अतः १४४ और १५६ नं० के लेखोंका विषय एक ही है। इस लेखमें भी हरिराय ओडेयरने कनकगिरिके विजयनाथदेवकी पूजा, सजावट और रथयात्राके लिये हुणुसूरपुर ग्राम सहित मलेयूर ग्रामका दान किया। यह दान नियम्बक-देवके समक्ष किया गया था। मालेयूर गाँव तेरकनाम्बे राज्यके कोलगणका था।]

[EC, IV, Chamarajnagar tl., No., 144 & 159.]

६१६

श्रवणबेलगोला—संस्कृत।

[वर्ष शुभकृत=शक १२४४ (कीलहॉर्न)=१३२२ ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

६१७

देवगढ़;—संस्कृत।

[सं० १४८१ तथा शक १३४६=१४२४ई०]

[ललितपुर से लाये गये एक शिलालेख की नकल]

१—वृषभ जयत संश्रीमद्वर्द्धमानमहोदये विपुलं विलसत्कान्तो कान्तारव्येऽमृतसागरे। सुगत सुमतिमन्नेणाङ्काकलङ्क सकौमुद वितनुते सतां शान्त्यै शान्ति प्रियं सुमतिं जयं ॥१॥+ + + + मुँवः श्रोते नश्वरानुदयाय ते। तच्चिन्दुद्यज्ज्वलज्ज्योतिरार्हतं श्रेयसे श्रये ॥२॥ पायादपायात् सदयः सदा नः सदा शिवो यद्विशदो हितात्मा चक्षुच्चिदा-१

२—नन्दविशुद्धचन्द्रद्युतौ चकोरं त्वपि (?) शुद्धहंसाः ॥३॥ **श्रीशंकरं** श्रीरमणाभिरामं + + +लक्ष्मणमर्हणार्हं । जिनेन्द्रनन्दं वनदं सुमित्रमजातशत्रुं विभजे चकोरं ॥४॥ स्वाममायामममायं वामं लक्ष्मणमर्हणार्हं । सीतेशं सुग्रीवमहार्हणार्हं वन्दे—२

३— सहर्षं सहसैकशीर्षं ॥५॥ सशल्यदुःशासननाशहेतुमजातशत्रुं सहदेवसख्यं । वन्दे विशालार्जुन सद्य + + नन्दसूतां कर्णकुलं मृगाङ्कं ॥६॥ वामयेषाष्टकं (?) स्वेन कर्म्मौघार्द्दीद् यरत्नरं (?) । सावोदर्द्धे दुरेखं तम्हलीये विजयश्रिये ॥७॥ विगर्ज्जत्सागरवाङ्क—३

४—मन्वितं तक्षकं नमः । दुर्घटं सुवर्द्धमानजैनमहोत्सवं ॥८॥ वदनपरगिरीशो ···वित्रिदशन····· वेत्रवत्याकलेर्यत् । प्रभवतु स मृगाङ्कोप्यस्तदोषोऽकलङ्कः । कुवलयसुखहेतुर्नः श्रिये **शान्तिसोमः** ॥९॥ योदीदहच्च तिलकेक्षण वह्निनेह कामं—४

५—अमीमरदरं वनकं तदीयं । शक्त्यान्वितस्त्रिनयनोप्यपवामवामः शान्तीश्वरस्त्रिजगतां स शिवाय······पदपद्मयुग्म ··· छद्म उपास्महे तदहं मुदा यदमरयंमरर्यभुजङ्गमनम्रमौलिकुलारमन्वित् । विदलत्त्वमालसमुल्लसत्सुनखेन्दुमण्डलमण्डलीविगलांशुभिर्नवश्री—५

६—मूपः **शशिनो**ऽर्हतो भवसंभवे ॥११ क्षीरकर्पूरनीहार-हारहीरहरावरां कुन्देन्दुकुमु···क्षीरसमुद्रसान्द्र विलसत्कल्लोलमालोज्ज्वलां श्रीसर्व्वज्ञ सुधांशुमण्डलमिलत्स्वर्लोककल्लोलिनीं । विद्रावन् निजभक्तचेतसि समुन्मीलत्तमोपद्रवां वन्दे—

७—वाङ्मयमिदे मुदे च भगवद्वाणीञ्च सत्सम्पदे ॥१ श्रीमूल-लक्ष्म्या नृपनन्दिसंघे गच्छेपतुच्छे **मदसारदाख्ये** । क्षणे बलात्कारगणे गरिष्ठे **श्रीकुं**······ जिनेन्द्रचन्द्रागमदुर्गमार्गो यत्योडुपं त्यत्र सतां हि वाचः । अद्याप्युदञ्चन्त्य···सामजसन्धाश्च स **धर्म्मचन्द्रः** ॥२ यस्याशागजकर्णकैरववना—७

—नन्दैकसत्कौमुदीकीर्तिर्नागनरामरेन्द्रभुवने जेगीयतेऽहर्निशं । **धर्म्मेन्दुः**

सकलः कलङ्कविकलः स स्याच्छुभांशुश्रिये श्रीमूल··· ···विलसल्ल··· ···द्ये ॥३ धर्म्मचन्द्रमुनीन्द्रस्य पट्टोत्कृष्टोदयाचले। यस्योदयोऽभवत्तस्य तमस्तोमापनोदिनः ॥४ रत्नकोर्त्तेर्लसन्मूर्त्तेस्तिग्मांशोः क–८

९—मलोदये। सतामप्यपपङ्कानां तपसां स्युर्यशोऽशवः ॥५ अथाप्युच्चैर्जज्रम्भे चरणचर्चितसम्मदम्भाद् यदीया ज्योत्स्नेवानुष्णरश्मेः च्चरदमृतमयी··· ···। तस्या ··· ··· ··· ··· शमिनां पुण्यपुण्योपदेष्टा भट्टा सत्प्रतिष्ठावु च जिनशशिनो रत्नकीर्त्तिः प्रशस्यं ॥२ रत्नकीर्त्तिपदाम्भोजकमलालङ्कृतासने। ये नोयद्वाग्वि-९

१०—लासेन भारती भूषणायितं ॥१ गर्व्वद्दुर्व्वादिवृन्दाम्बुदव्दलनविधौ योऽभवत्ती-व्रवातस्त्वेकान्तध्वान्तभानुः कुवलयसुखकृद् यस्त्वनेकान्त ··· ··· द्रान्ताङ्को-ऽकलङ्कः ··· ··· सकलकलः शङ्करो + + वृत्तः स्याद्‌वृद्ध्यै मूलसङ्घामल-कमलनिधौ श्रीप्रभाचन्द्रदेवः ॥२ पदे ततो नमदशेषमहीशमाललग्ना-नि यत्क्रमरजस्तिलकान्यभूवन्-१०

११—कल्याणकारिकमलाकुचकेलिदानि पापापहानि समभूदिह पद्मनन्दी ॥१ कः सरीसर्त्ति साम्यत्वं सन्निधावज्जनन्दिनः। न ··· ··· न सम्ममे यस्य स ··· ॥ २ के के पुराणसारांण्यं शिष्यानाकर्ण्य कर्णयोः। श्रीपद्मनन्दिनः प्रापुः सस्मितां धर्म्मदेशनां ॥ ३ प्रेम्णा कवलितं विशच्छलमितं चेतोभुवा वर्त्ति—११

१२—तं रागाद्यैः स्मयदूषितैः परमतैर्भ्रस्यत्तमस्तोमितं। भावैः प्रस्फुटितं नयैर्वि-रचितं धर्म्मैः समुद्योतितं सत्पात्राम्बुजनन्दिदीपतपसि प्रागजैनधर्म्मालये ॥४ सै ··· ··· क+चलति सद्वंसत्पनुण्णा श्रुतिः क्षीराम्भोध्यतिचन्द्रमत्यदरदः स्पर्द्धन्ति हन्तो अति। श्रीमानम्बुजनन्दिनस्त्रिभुवने जेगीयमाना न यै–१२.

१३—र्वाग्वत्सद्यशसा न केन सुनटी कीर्त्तिर्नरीनर्त्यहो ॥५ ज्ञानार्णवः समयसार-गभीरशब्दसल्लक्षणः प्रणवलीनलयः प्रमाणः। सि ··· ··· भुवनोपकृत्यै···

···॥ ६ इन्द्रोपेन्द्रफणीन्द्रगीष्पतिमतिं यः कोऽपि धत्ते पुमान् मन्ये पङ्कजनन्दिनो गणगुणान् वक्तुं न सोपीशते । संसारार्णवतीर्ण-१३

१४—यामलधिया सत्रौकथा सन्मुनेर्निष्कल्लोलचिदम्बुधावचलया पद्मार्चितं लीलया ॥३ श्रीपद्मनन्दिसुगुरोःपदपद्मप ··· ··· ··· धर्मोपलक्षितदिशा ··· ··· मारमनोभिरम्यः प्रोद्भेद्य कौमुदमरं शुभचन्द्रदेवः ॥ १ अथ संवत्सरेस्मिन् नृपविक्रमादित्यगताब्द १४८१ शा-१४

१५—के श्रीशालिवाहानाम् १३४६ वैशाखमासशुक्लपक्षीय पूर्णमास्यां गुरुवासरे । स्वातिनः(न)क्षत्रे । सिंहलग्नोदये ॥ अतिविक्र+ +र्षेऽब्दे चन्द्राद्र्यब्धीन्दु ··· ··· वैशाखे पूर्णराकायां ··· ··· मृगयोदये ॥···साकृष्टकृपाणपाणिविलसत्तीव्रप्रतापानलज्वालाजालसमाकुलीकृतगलाधीशा-१५

१६—धरीशैणपे । श्रीमान् मालवपालकेशकनृपे गोरीकुलोद्योतके निष्क्रान्ते विजयाय मण्डपपुराच्छ्रीसाहि आलम्भके ॥१··· ··· सुमण्डलमण्डमानाखण्डलवालकुलमण्डमपी+ +न्ये । संनिर्म्ममे शिवशिरोमणिकर्मनोज्ञं सद्बोधिनः सुविधिना सुविधिः सुबोधः ॥ १ सोऽभूत्तस्मिन् त्रिभुवनपालो भुवने १६

१७—लसद्यशः कलशः । योऽलं त्रिभुवनलक्ष्म्या लेभे गणगुणं गणा + रणं ॥२ निर्दम्भः सम्भगर्वद् गलसकलकला + + लाङ्काकलङ्कं ··· ··· ··· विपुलयशसो यस्य चित्रं पवित्रं । तस्य श्रीपुण्यलक्ष्याखिलगुणनिलयो धीरधीरो गभीरः पुत्रो गोत्राभप + पममहिमनिधिर्धोरधीः साधुसाधुः ॥ ३ + + लवालकीर्त्तिलतावि- १७

१८—तानधारावरः सुसमयोप्यतमस्ककल्यः । सन्तापहारि ··· ··· कापसार्यभव ··· ··· ··· वनिवि + देवः ॥ विद्युल्लतेव विमला ··· ··· ··· पतिव्रताङ्का सौभाग्यभूधरसुता नररत्नगर्भा तस्याम्बिका च वनिता वनितावलेव ॥ ५ अभूत्समसौम्योपि तयोपि तयोर्वागर्थयोरिव होलीसुनन्दनः श्रीमान् १८

१६—स्तोत्साहाभिनन्दनः ॥ ६ वर्द्धमानार्थिनामर्थं वर्द्धमानान् मनोरथान् सार्थ-
यन्नर्थतः श्रीमान् होली कल्पाङ्घ्रिपायते ॥७ सन्मूलः सदलोल्लसत् ······
प्रशाखोच्छ्रितः श्लाघ्य स्वच्छ कुलैः फलैरविकलः सुच्छायकायश्रियः।
सन्तापेऽपि सुपाकरः कुवलये श्रीहोलिकल्पाङ्घ्रिपो जीयात्तर्जितदुर्ज्जनोऽ
र्जुनय- १६

२०—शोवासोऽर्कचन्द्रार्थिभिः (?)। ८ अविकल्पलल्पलतया सुकान्तया कान्तया
कान्तः। असकृत् सुकृतसदुन्नतधाराधरनिर्भरासारैः ॥ ६ यः कान्ता + +
लत ··· ··· ··· कमलाख्ययाधनाख्यं धनदं सुधनञ्जयं साधुः ॥१०
वधूधनश्रीफलमालयालं गल्हेशवंशानुजनन्दनैश्च सुवर्णरक्माहिरमा- २०

२१—नरैभिः सरत्नभूगजरठकुराग्यैः ॥११ गाम्भीर्य्यजलदासये विचलतां दैवाचलो
मार्द्दवं नृत्यत्कार्त्तिककेकिकाय विगलत्त + + तं + दयः ··· ··· ···
सदाश्रिततया सर्व्वे सहत्वं धरा यस्मादेव मिता ददुः स जयतात् श्रीहोलि-
सङ्घाधिपः ॥१२ विस्मयन्ते चरित्राणि··· ··· ···होलिसाधुना। य- २१

२२—यशोऽकृतदुग्धाब्धौ वृपः कौमुदमेधते ॥१३ यद्यशो विष्णुनाप्युच्चैः
कलावप्यकलङ्किना। + +स भेशशेपत्वं विश्वविश्वमुपाददे ॥१४ + दैव
+ ति सुजनवाञ्छ ··· ··· णां। अनुभवति वचांसि गुरुर्विश्वं विस्मयति
होलिकृती ॥१५ गुणवानपि धर्म्मात्मा वक्रः सद्धर्म्मलोपि यः। यद +
सोमदो हो- २२

२३—ली ऋजुरन्याप्यलोभमाक् ॥१६ रोदसांवरसच्छुक्लशालंपुराद् यद्यशो-
लसत् मुक्ता मुक्त्यङ्गना मुक्ताहारं होल्या रसोर्हतात् ॥१७ सत्केत श्रीकु
··· ··· कायसंकास ··· ··· यशसात्ममयीकृताशः। सोल्लासससारसनि-
वासिमया महान्तो होलीश्वरोऽस्तु सघनञ्जयसार्थवाहः ॥१८ नाको- २३

२४—धि त्वमहं वृपत्तनुतनुः किं पुत्रपित्रोः शुचा सानन्दं वद सत्र किं मृगयसे
भूयोवतारस्तयोः। त + +क्त्र कलौ वदाशु नृकवे किं वर्द्धमानेऽन्वये···
··· मद्रूपो··· ··· ·· होलि सं + +रे ॥१६

श्रीह्लोलीकमलाकरे कुवलयं सत्कीर्त्तिकञ्जायते शेषेनालसि सद्दलीयति गजै-र्दिन्तु प्रकाशीयति । मेरौ चित्रम- २४

२५—नात्र चित्रमपि तन्मित्रास्तच्चिन्तापभृद् यन्नालीयति सन्मरालति कलङ्की यत्र दोषाकरः ॥२० चन्द्रो निर्हसिता +तिप्रविकशद्र··· ··· ···जम्बालति । सिद्दीपत्यखिलाचलाचलविभुमं + + नन्तमितत्युद्यद्धोलियशोम्बुधौ सम ··· ···धम्मकनौकेत्यहो ॥

२६—२१ तत्रप्यत्रैको हेतुस्तद् यथा तथा हि ॥ विविक्तः शक्तिमान् ह्लोली विविद्यश्चोक्तिमानहं । इत्यावयोर्महान् स्नेहः सततं ववृधे बुधाः ॥२२ येनाकारि मनोहारि···पुरन्दर··· ··· श्रीलजिनाज्ञयं ॥ २३ सतां सन्तोष-पोषाय श्रेयसे चात्मनः श्रिये । सुखाय विमुखात्ताणां चेह स्नेहाय पश्यतां ॥२४ खण्डे भू + त + शो···२६

२७—तंसोभूत् **साधुदेहा**ख्यः । वेदश्रिया स लेभे सुसुतं श्री**वल्लदेवा**ख्यं ॥ स वल्लणश्रीरमणोपि सूनुं विचक्षणं लक्षणलक्षिताङ्गं । लेभे नृपं **लक्षण-पालदेवं** देवा··· ··· ···श्रिया श्रीमत्**क्षेमराज्ञा**भिधाङ्गजं । धर्म्मार्थ-कामसंसिद्धिसाधकं भाग्यतोऽलभत् ॥३ द्वितीयर्माद्वतीयोद्यत्प्रतापातापि–२७

२८—तद्विषं । + +भाग्धुराधूर्य्यंवर्य्यं माधुर्य्यसागरं ॥४ नाम्ना देवरतिं सदो-दयमतं सन्मर्त्यलक्ष्मीपतिं धर्म्मध्यानगतिं निरस्तकुमतिं यो नित्यमेवाददे । यश्चक्रे जिन+र्च्चनेऽचलरतिं स ··· ··· साधुननेवि···॥५ श्रेष्ठः **पद्म-श्रिया** श्रेष्ठं स्ववंशाम्भोजभास्करं सूनुं नयनसिंघाख्य लेभे रत्यामरावरं ? ॥६ नृरत्नं **रत्न**नामानम- २८

२९—यत्नाभ्यस्तपादवं ? सुतमाप्य समस्तास्तकुमति स दिवं ययौ ॥७ अलभन्मल्ह-णदेगनयार**म्भाभया**ङ्गजं चाथ । बालकलेशमिवालं कलया कलय··· ···पतिसङ्घनाथो··· दिल्हणदेव्याभिनन्दितनन्दनः । अथ **पद्मसिंह**नन्दन-मुख्यैरपि नन्दतादनिशं ॥९॥ प्रतिष्ठयाति गारिष्ठ्यं यन्नामादेव देहिनां । तस्याञ्जनन्दि- २९

३०—नो मूर्त्तेः कः प्रतिष्ठावशामवेत् ॥१ शुभशोमान्वया सोसौ तथापि गुण-
कीर्त्तिना। वर्द्धमानाभिधैः श्रीमद्गुरपत्या दिभिर्बुधैः ॥२ श्रीपद्मनन्दि···
दमवसन्तमहात्मने मूर्त्योन्तिवाय विधिनाभिमतां प्रतिष्ठानेतां हि नन्दन-
सुनन्दन नन्दनाद्यैः ॥३ सङ्घेश्वरः कुवलयेऽमलहोलिचन्द्रः सङ्घेश ३०

३१—देवपतिवाप्यतिनेन्द्रचन्द्रः। सन्मङ्गलैः सकलकन्दुवनो + वृन्दैर्वर्द्धतु सहर्षमनुप-
कारनुवाङ्गधारां ॥४ परोपकर्त्ता यो दद् यशा ··· ··· ··· श्रीमान् सतत-
कर्मान्निवृष्टिं यो दानवारिणा। वर्त्ते स सत्यकर्म्मेशो जीयाद्धोलो नरो-
त्तमः ॥२ मोदत् कुवलयं यस्य यशस्तिलकमुत्तमं। दि- ३१

३२—द्वीपे उत्तमं सोमः स जीयाद्धोलिशङ्करः ॥१ प्रातः कालीयरागदलदखिलत-
मोरेणुरेपादपद्मद्युत्पद्मोल्लासिशदम्यात्तदण ··· ··· ··· चञ्चचान्द्रीयश्चा-
प्यङ्क सकलकुवलये साधुतां होलिसाधोः ॥४ सद्योतकान्वये गर्गगोत्रे
हाटवुधाङ्गजाः वम्- ३२

३३—तुः साधवः श्रीमाहदवङ्गामरानिधाः ॥५ तेषामाद्यात्मजस्तत्र जीलहो-
नृपल्हिकाङ्गव हरराज्ञश्रियोः सूनुस्ततो मृत्तल्हणः सुतक् ॥२ ··· ···
··· गनया ततः ॥३ तनवनि वसन्तश्रीर्यार्थो वोल्हणवर्द्धमाननन्ना
मृगदन् मातानयितश्रीदाल्हीनाम्यांकरो हिमाछतुवः ॥३३

३४—प्रशस्तिनुवद्वृषमार्हचन्द्रसान्द्रार्थतीर्थो + + वा चकोरः। सतां मुदे सत्कवि-
वर्द्धमनो जिनं समाराध्य विवर्द्धमानं ॥५ श्रीवर्द्धमानाद्बुधाननपद्मचञ्चद्
पीयू ··· ··· धारां पीत्वा कृतां श्रुतियुगाञ्जलिभिस्त्वमीमां नन्दन्तु संसुमनसः
शुचिचञ्चरीकाः ।६॥ शुभमस्तु सतां सदा ॥ ··· सुतश्चिरं जीयात्। रिपुनृप-
शिन्धुरसा ··· ··· विभू ··· ··· पल्लाहि आलन्नः ॥१ श्रीशालालम्माधि-
पूवतुदे रिपूम्मौलिमाणिके। गर्जति गर्जनस्थाने ग + + गोरीकुलं
कुवलयेस्मिन् ··· ··· ···

सार

इस शिलालेखको मिस्टर एफ़० सी० ब्लैक (Mr. F. C. Black)

ने ललितपुर जिलेमें पाया था। यह देवगढ़के पुराने किलेके भग्नावशेषोंके ऊपर उगे हुए जङ्गलमें मिला था। मि० ब्लैकका अनुमान है कि यह शिलालेख किसी ध्वस्त जैन मन्दिरका है।

इस शिलाखण्डका माप ६ फीट २ इञ्च × २ फीट ६ इञ्च है तथा मोटाई ३ इञ्च है।

लेख की भाषा अत्यन्त शब्दाडम्बर सहित है।

लेखके करीबन मध्यमें (पंक्ति १५) में दिया हुआ काल अक्षरों और अङ्कों दोनोंमें खूब संभालके साथ दिया हुआ है। वह यह है ... "गुरुवार, विक्रम सं० १४८१ के वैशाख मासकी पूर्णमासी तथा शालिवाहन (शक) सं० १३४६ के स्वाति नक्षत्र और सिंह लग्नके उदयमें।" राजाका नाम घोरी (गोरी) वंशका **शाह आलम्भक** दिया हुआ है, यह मालव या मालवाका राजा (शासक) था। श्री राजेन्द्रलाल मित्र, एल एल० डी, सी० आई० ई (Rajendralala Mitra, LL. D., C. I. E.) अपने नोट (पृ० ६७) में कहते हैं कि उन्हें इस नामके किसी राजाका पता नहीं है; लेकिन सुल्तान दिलावर गोरी (Ghori) के द्वारा संस्थापित मालवाके गोरी वंशमें द्वितीय सरदार **सुल्तान हुशंग गोरी** उर्फ़ **अलप् खाँ** था, जिसने माण्डुका शहर बसाया, राज्यकी राजधानी धारसे वहाँ हटायी, और १४०५ ई० से १४३२ ई० तक राज्य किया, और इसमें कोई संशयकी बात नहीं है कि इसी सरदारको संस्कृतमें **'आलम्भक'** लिखा है। उसकी नयी राजधानीका नाम शिलालेखमें **मण्डपपुर** दिया हुआ है।

लेखका विषय **होली** नामके जैन पुरोहित द्वारा **पद्मनन्दि** और **दमवसन्त**की दो मूर्त्तियोंका समर्पण है। यह समर्पण **शुभचन्द्र**की आज्ञासे किया गया था। उनके नाममें कोई शाही विशेषण नहीं लगा हुआ है।

लेखका प्रारम्भ वर्द्धमान नगरमें कान्तमें स्थापित होनेवाले वृषभ (वृषभदेव, प्रथम तीर्थंकर) की स्तुतिसे होता है। और इसका अन्तमें लेखकके अपने विषय

के संक्षिप्त वर्णनसे होता है। बीचमें कुछ नामोंकी वंशावली आती है, वह इस तरह है :—१. मादेव, २. उसका पुत्र बलदेव, ३. उसका पुत्र लक्ष्मीपालदेव, ४. उसका पुत्र जैनराज, ५. ?, ६. पद्मश्री, ७. रत्न, ८. रत्नाकर, १०. पद्मसिंह।

[JASB, LII, p. 67-80] t. & tr.

६१८

सरगूरु;—संस्कृत और कन्नड़-भग्न।

[शक १२४६ = १३२४ ई०]

[सरगूरु (सरगूरु प्रदेश) में, गाँवके दक्षिणकी ओर पञ्च-बस्तिमें एक पाषाणपर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥

स्वस्ति शक-वरुष १२४६ नेय श्रीमन्नु-संवत्सर वैशाख शु १२ गु। प्रचण्ड-दोर्-दण्ड-मण्डली-मण्डन-मण्डलाग्र-खण्डितारातिप्रकाण्ड महा-मण्डलेश्वर मन्नु-नायाधीश्वर श्री-मन्नु विरूप-बुक्क-राय-राज्याभ्युदये श्रीमद्गजराहुत्तनेश्वर श्रीपाद-पद्माराधकरप्प श्रीमन्महाप्रधान चयिचय-दण्डनायक पादपद्मोपजीवी हॊय्सल-राज्याधिपति नागण्ण-वॊडेयर ··· इम्मिन्नूरु ······ ताम-द्वार दण्डेले-कनाग्रगण्यर् अप्प श्रीमत्पण्डितदेव इवर शिष्यरु चयि-नाड महाप्रभु मसणेयहळ्ळिय कल्लण-बाबुडरु तम्मो स्वर्गावर्-निमित्तवागि बेळगुळद श्री-दुत्त्नाथ-स्वामिगळ अङ्ग-रङ्ग-भोग-संरक्षणार्थवागि तम्म चय-नाडोळगण तोट-हळ्ळि ग्राम १ आ चतुस्सीमेयोळगण केरे-गद्दे-बेद्दलु-तोट-तुडिके-कुळ-होन्नोळ आद-होन्नु ··· ··· होन्नु इन्तुव-मिक्क-होति मादारं-तोट-गुक्क-लिपि-निक्षेप-जल पाषाण-मुन्ताद सकल स्वाम्यद कुळवन्नु धारा पूर्वकं ··· ··· वलि नागण-

ओडेयर कयिन्दवु विडिसि श्री-गुम्मटनाथ-स्वामिगळिगे आ-चन्द्रार्क सलुवन्तागि गुम्मटपुरवेन्दु कोट्ट दान-शासन ॥

स्वदत्तां परदत्तां वा यो हरेत वसुन्धरां ।

षष्टि-वर्ष-सहस्राणि विष्टायां जायते कृमिः ॥

अन्वयसुखमी-धर्म्ममनीक्षिसि रक्षिसुव पुण्य-पुरुषर्गक्कुम् ।

भक्षियिपातन सन्तानक्षयमायुःक्षयं कुलक्षयमक्कुम् ॥

(हमेशाकी तरह अन्तिम श्लोक)

[जिन शासनकी प्रशंसा ।

इस लेखमें विजयी बुक्करायने, स्वर्गप्राप्तिके लिये, बेळगुळ (श्रवण-बेल्गोल) के गुम्मटनाथ-स्वामीकी पूजा एवं सजावट के लिये तोटहल्लि गाँव भेंटमें दिया है। बुक्कराय भगवदर्हत्परमेश्वर का आराधक था। बयिनाड्, मसन-हल्लि कम्पनगवुडका अधिपति था। तोटहल्लि गाँवके साथ-साथ उसकी चारों तरफ-की सीमाओंके अन्दरके तालाब, धान्य (चावल)-भूमि, सूखे खेत, बगीचा, भण्डार, आसामी, 'होन्नलि', आयका रुपया,··· , छप्परखाने,··· ·· ··· निम्न श्रेणीकी चीजोंपर कर, चुङ्गी, भूमि-भण्डार, निधि, रहन (निक्षेप), जल, पाषाण तथा पूरे स्वामित्व (मालिक) के जितने अधिकार हैं, वे सब दिये। इन चीजों को नागण्ण-ओडेयरके हाथ से दिलवाया तथा इन सबमें राजा तथा दण्णायककी भी आज्ञा ले ली, जिससे कि यह सब दान तबतक जारी रहे जबतक चन्द्र और सूर्य गुम्मट स्वामीकी रक्षा करते हैं। और गाँवका नाम गुम्मटपुर रख दिया। इस सबका उसने दान-पत्र (शासन) लिख दिया।]

[EC, IV, Heggadadevankote tl., No. 1]

६१६

वराङ्गना—संस्कृत तथा कन्नड़

काल-शक सं० १३४६ (A. D.1424)

(साउथ कैनरा के Sub-Court में)

कन्नड़ लिपिमें संस्कृत और कन्नड़ भाषामें तीन ताम्र-पत्रोंपर जो एक अंगूठीके द्वारा जुड़े हुए हैं। इस अंगूठीपर एक मुहर लगी है जिसपर एक जैनमूर्ति है। दानदाता विजयनगरके राजा देवराय हैं। दान का काल शक सं० १३४६ (१४२४ ई०), क्रोधी संवत्सर है। इस दानपत्रके द्वारा वराङ्गनाका गाँव वराङ्गनेमिनाथके मन्दिरको दान किया गया था। राजा की वंशावली इस प्रकार दी हुई है :—

बुक्क महीपति
|
हरिहर
|
देवराय
|
विजय भूपति,
नारायणीदेवीसे विवाह किया
|
देवराय

* शकसंवत् उस राजाके राज्यकालसे मिलता है जिसे बर्नेल Burnell ने (South Ind. Paleography, p. 55) देवराव, वीरदेव या वीरभूपति बताया है। लेकिन उसके वंशजका नाम उक्त लेखक के द्वारा दिये गये नामसे

भिन्न पड़ता है। (८२, ८७ अङ्कोंसे तुलना करो, जिनमें दी गई वंशावली इस दानपत्रगत वंशावलीसे मिलती-जुलती है।) लेखकी भूमिकामें कुन्तल देशकी राजधानी **विजयनगर** बतलाया गया है।

[R. Sewell, Archaeslojical Survey of Southern India (ASSI, II), p. 14. No 89, a.]

६२०

विजयनगर—संस्कृत ।

[शक १३४८ = १४२६ ई०]

A. मन्दिर के महाद्वारके समीप बायीं ओर ।

शुभमस्तु ॥ श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात्त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥१॥

श्रीमद्यादवान्वयार्णवपूर्णचन्द्रस्य श्रीबुक्कपृथ्वीभुज [:] पुण्य [परिग]-क परिणतमूर्त्तेर्**हरिहर**महाराजस्य पर्य्यायावतारादधीराद्**देवराज**नरेश्वराद्देवराजादिव **विजय**श्री**वीरविजय**नृपतिस्संजातस्तस्माद्रोहणाद्रेरिव महामाणिक्यकांडो नीतिप्रतापस्थिरीकृतसाम्राज्यसिंहासनः । राजाधिराजराजपरमेश्वरादिविरुदविख्यातो गुणनिधिर**भिनवदेवराज**महाराजो निजाज्ञापरिपालित**कर्णाट**देशमध्यवर्त्तिनः स्वावासभूत**विजयनगर**स्य क्रमुकपर्णापणवीथ्यामाचंद्रतारमात्मकीर्त्तिधर्म्मप्रवृत्तये । सकलज्ञानसाम्राज्यविराजमानस्य स्याद्वादविद्याप्रकटनपटीसः **पार्श्वनाथस्यार्हतः** शिलामयं चैत्यालयमचीकरत् [। ।]

देशः **कर्णाट**नामाभूदावासः सर्व्वसंपदां ।
विडंबयति यः स्वर्ग्ग पुरोडाशाशनाश्रयं ॥ [२]

विजयनगरीति तस्मिन्न [ग] री नगरीति रम्यहर्म्यास्ते ।
नगरि (री) षु नगरी यस्या न गरीयस्येव गुरुभिरैश्वर्य्यैः ॥ [३]

क्रूरक्रोधेद्धयुद्धोद्धुरकरटिघटाकर्णशूर्प्पप्रसर्प्पद् -
वातव्रातोपघातप्रतिहतविमतादभ्रभृत्यभ्रसंघः ॥ [९ [

यद्धाटीघोरघोटीखुरदलितधरारेणुभिर्व्योर्य्यवहे -
द्रूम [स्तो] मायमानैः प्रतिनृपतिगणस्त्रीदृशः साश्रुधाराः ।

प्रोद्यद्दर्प्पप्रभूतप्रतिभटसुभटास्फोटनाटोपजाग्रद् -
रोपोत्कर्षांधकारद्युमणिरुदयते देवराजेश्वरोऽयं ॥ [१०]

विश्वस्मिन्विजयक्षितीशतनुजः श्रीदेवराजेशितु-
स्तद्धर्मी कीर्त्तिसितांबुजं कलयते शौर्य्याख्यसूर्य्योदयात् ।
आशा यत्र पलाशतामुपगताः स्वर्णाचलः कर्णिका
भृंगा दिक्षु मतंगजा जलधयो मारंदबिंदूत्कराः ॥ [११]

विख्याते विजयात्मजे वितरति श्रीदेवराजेश्वरे
कर्णस्याजनि वर्णना विगलिता वाच्या दधीच्यादयः ।
मेघानामपि मोघता परिणता चिंता न चिंताम [णे] :
स्वल्पाः कल्पमहीरुहाः प्रथयते स्वर्णैचिकीनीचतां ॥ [१२]

सोयं कीर्त्तिसरस्वतीवसुमतीवाणीवधूभिस्समं
भव्यो दीव्यति देवराजनृपतिर्भूदेवदिव्यद्रुमः ।
यश्शौरिर्व्वलियाचनाविरहितश्चंद्रः कळंकोज्झितः
शक्रस्सत्यमगोत्रभिद्दिनकरश्चास्तरथोल्लंघनः ॥ [१३]

मदनमनोहरमूर्त्तिः महिळाजनमानसारसंहरणः ।
राजाधिराजराजादिमपदपरमेश्वरादिनिजविरुदः ॥ [१४]

शक्तौ बुक्कमहीपालो दाने हरिहरेश्वरः ।
शौर्य्ये श्रीदेवराजेशो ज्ञाने विजयभूपतिः ॥ [१५]

सोयं श्रीदेवराजेशो विद्याविनयविश्रुतः ।
प्रागुक्तपुरवीथ्यंतः पर्ण्णपूगीफलापणे ॥ [१६]

c

शाकेऽब्दे प्रमिते याते वसुसिंधुगुणेंदुभिः ।
पराभवाब्दे कार्त्तिक्यां धर्म्मकीर्त्तिप्रवृत्तये ॥ [१७]

स्याद्वादमतसमर्थं [न] खण्डितदुर्व्वादिगर्व्ववाग्वितते: ।
अष्टादशदोषमहामदगजनिकुरुंबमहितमृगराजः ॥ [१८]

भव्यांभोरुहभानोर्द्विडिन्द्रुरेंद्रवृंदवंद्यस्य ।
मुक्तिवधूप्रियभर्तुः श्रीपार्श्वजि[ने]श्वरस्य करुणाब्धेः ॥ [१९]

भव्यपरितोषहेतुं शिलामयं सेतुमखिलधर्म्मस्य ।
चैत्यागारमचीकरदावरणित्रुमणिहिमकरस्थैर्य्यम् ॥ [२०]

सारांश

विजयनगर प्राचीन समयमें जैनियोंकी राजधानी थी। शक १२७६ (सं० ११ २) से यादववंशी दि० जैन राजाओंका राज्य था। इस वंशकी वंशावली निम्न भांति है :—

१. यदुकुलके बुक्क।
२. उसके पुत्र, हरिहर (द्वितीय), 'महाराज'
३. उसके पुत्र, देवराज (प्रथम)
४. उसके पुत्र, विजय या वीर-विजय (पं० २)।
५. उसके पुत्र देवराज (द्वितीय), अभिनव-देवराज।

अन्तिम महाराजा देवराजने अपने पराक्रमके कृत्य और अपना नाम अजरा-मर करनेके लिये अपने राजमहलके पास 'पान-सुपारी-बाजार' (पर्ण-पूगीफलापण, श्लो० १६) नामक बगीचेमें एक चैत्यालय (चैत्यागार) बनवाया और मन्दिरमें श्रीपार्श्वनाथस्वामीकी प्रतिमा विराजमान की।

नोट :—इस वर्णित विजयनगरके प्रथम या यादव वंशावलिके क्रममें बुक्कके पिता और बड़े भाईके नाम तथा वे शक मितियाँ, जिनका लेखमें कोई संकेत

नहीं हैं और न यहाँ ही नीचे टिप्पणीमें दी गयीं हैं," मि० फ्लीटके उसी वंशके कालक्रम-चक्रसे[1] उद्धृत की जाती हैं। वे इस प्रकार हैं :—

संगम

हरिहर प्रथम (शक १२६१)

बुक्क (शक १२७६ [चालू], १२७७, १२७८, १२९०)

हरिहर द्वितीय (शक १३०१, १३०७[2], १३२१.)

देवराज प्रथम (शक १३३२, १३३४.)

विजय[3]

देवराज द्वितीय (शक १३४६, १३४७, १३४८, १३५१ [चालू], १३७१

[South-Indian ins., Vol I, No 153 (p 160-167).]

---

1 Jour. Bo. Br. R. A. S. Vol XII. q. 339.

२ यह मिति शि० ले० नं० ५८९ की है।

२ मि० सोवैल (Sewell), Lists, Vol. I, p. 207, इस राजा के एक शिलालेख का उल्लेख करते हैं, जिसकी मिती शक १३४० (व्यतीत) कही जाती है।

६२१

वेगूर;—संस्कृत तथा कन्नड़-भग्न।

[शक १३४९ = १४२७ ई०]

[वेगूरमें (वेगूर परगना), ध्वस्त जिन-बस्ति श्रवणप्पनदिन्नेमें पाषाणपर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्य-नाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

स्वस्ति शक-वरुष १३४९ नेय पराभव-संवत्सरद्दु श्री-मूल-संघद देशीय-गणद कोण्डकुन्दान्वयद पुस्तक-गच्छद ... ... श्रीमतु प्र ... ...सिद्धान्ति-देव, शिष्यरप्प श्रीम च्छुभचन्द्रसिद्धान्तिदेवर गुड्ड चक्किमय्यन नागिय करियप्प -दण्डनायक, रप्प दण्ड ... ... मोरसु-नाडाळुत्तन्दे काटि ... ... कलियूरग्रहार कोट्ट सर्व.बाध-परिहारवागि चोक्किमय्य जिनालयं चन्द्रादित्यरुळ्ळनक सल्वन्तागि ... ... धर्मम नडसुवन्तागि ... ... (वे ही शापात्मक वाक्य) श्रीम ... ... ण्डनायक चोक्किमय्य ... ... रड्डु निलिसिदनु कल्लु ... ... मडिसिकोट्ट ... ...

[जिनशासनकी प्रशंसा।

(उक्त मितिको), श्री-मूलसंघ, देशिय-गण, कोण्डकुन्दान्वय तथा पुस्तक-गच्छके प्र ... ... सिद्धान्ति-देवके शिष्य शुभचन्द्र-सिद्धान्ति-देवके गृहस्थ-शिष्य चक्किमय्यके (पुत्र) नागिय करियप्प-दण्डनायकने ... ... जब वे मोरसु-नाड् पर शासन कर रहे थे, कलियूर् अग्रहारके लिये दान (जो कि मिट गया है) किया, ताकि चोक्किमय्य, जिनालय तबतक जारी रहे जबतक सूर्य और चन्द्रमा हैं। शाप]

[EC, IX, Bangalore tl., No. 82]

६२२

गिरनार—संस्कृत।

[सं० १४८५ = १४२८ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[Revised Lists ant. Bombay (ASI,,XVI),
p. 354-355, No 12, t. & tr.]

६२३

आनेवाळु—संस्कृत और कन्नड़।

[साधारण वर्ष[1] १४३० ई० (लू० राइस)]

[आनेवाळु (वेट्टदपुर प्रदेश) में, बस्तिके रङ्ग-मण्डपमें भीतरके
दाहिनी ओरकी दीवाल पर]

श्रीमतु साधारण-संवत्सरद माग-सुध १० यलु आनेवाळ-चिक्कण्ण-गौडर मक्कळु होन्नण-गौडरु तम्म मग हुट्टिद बोम्मण्ण-गौडरिगे पुण्यवाग-वेकेन्दु कट्टिसिद ब्रह्म-देवरु पद्मावतिय बस्तिय धर्म्म-शासन श्री श्री।

[आनेवाळके चिक्कण्ण-गौडके पुत्र होन्नण-गौडने अपनी चिरञ्जीव बोम्मण्ण-गौडकी पुण्यकी प्राप्तिके लिये ब्रह्मदेव और पद्मावतीकी बस्तिको बनवाया।]

[EC, IV, Hunsur tl., No. 62]

---

१. कंसके शक नागरी अक्षरोंमें हैं।

६२४

कारकल;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक सं० १२५३ = १४३१ ई०]

[गोम्मटेश्वर-मूर्तिस्तम्भके ठीक बाँयीं तरफ]

१. सूरितनु भैरवें-
२. द्रकुमार श्री पाण्ड्य
३. रायनिंदतिमु-
४. दर्दि । कारित गुंमट-
५. जिनपति चारु श्री मू-
६. र्त्ति कुडुगे निमगभिम-
७. तमं ॥ श्री पाण्ड्यराय जय [॥]

[EI, VII, No. 14. D.]

[गोम्मटेश्वर-मूर्ति-स्तम्भके ठीक दाहिनी तरफ]

पंक्ति १. श्रीमद्देशीगणे
२. ते पनसोगे वलीश्वरः । ख्या -
३. योऽभूल्ललितकी-
४. र्त्याख्यस्तन्मुनीन्द्रोपदे-
५. शतः ॥ स्वस्ति श्रीशकभूपते-
६. स्त्रिशरवह्नी (न्) दो विरोध्या-
७. दिकृद्वर्षे फाल्गुनसौ-
८. म्यवारधवलश्रीद्वा-
९. दशीसत् तिथौ । श्री सोमा-
१०. न्वय भैरवेन्द्रतनु-

११. नश्री वीरपाण्ड्येशिना नि-
[१२. र्माप्य प्रतिमाऽत्र बा-
१३. हुबलिनो जीयात् प्र-
१४. तिष्ठापिता ॥ शकवर्ष
१५. १३५३ श्री पाण्ड्यराय ॥

[शक राजाके विरोध्यादिकृत् वर्ष, अर्थात् १३५३वें वर्षके फाल्गुन शुक्ला १२, बुधवारके दिन सोम वंशके भैरवेन्द्रके पुत्र श्री वीर पाण्ड्येशी या श्री पाण्ड्यरायने यहाँ (कारकलमें) बाहुबलकी प्रतिमा बनाकर प्रतिष्ठित कराई। वह प्रतिमा जयवन्त रहे। यह कार्य उन्होंने देशीगणके पनसोगे शाखाकी परम्परामें होनेवाले ललित कीर्त्ति मुनीन्द्रके उपदेश से किया।]

[EI, VII, No. 14, C. IA, II, q. 353-354]

६२५

श्रवणबेल्गोला;—संस्कृत।

[शक १३५५=१४३२ ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

६२६

आनेवाळु;—कन्नड़।

[काल—वर्ष प्रमादीच = १४३३ A. D.]

[आनेवाळुमें ध्वस्त वस्तिकी छोटी सी जैन-प्रतिमाके पृष्ठपर]

प्रमादीच—संवत्सरद फाल्गुन-सु १०मी भानुवार अनन्तन प्रतिमे
[अनन्तकी प्रतिमा]

[EC, IV, Hunsur tl., No. 60, t & tr.]

६२७

कार्कल—कन्नड़।

[शक सं० १३५८=१४३६ ई०]

[गोम्मटेश्वर मूर्ति स्तम्भके सामनेके ब्रह्मदेव स्तम्भ पर]

१. श्री शकनृपन १३५८ राक्षससंवत्सर[द] फा]ल्गुन शु
२. १२ लु ॥ जिनदत्तान्वय भैरवतनय श्री [वी]रपां-
३. ड्यनृपतिगे वरमं । मनमोलदोय [लु] नेल [सि] द
४. जिनभक्तं ब्रह्मनीगे निमगमि [मत] मं ॥

अनुवाद—शक नृपके राक्षस नामके १३५८ वें वर्षमें फाल्गुन शुक्ला १२ के दिन, जिनदत्तके वंशमें होनेवाले भैरवके पुत्र श्री वीरपाण्ड्य नृपतिकी ... इच्छाको पूर्ण करने के लिये यहाँपर प्रतिष्ठापित, जिनभक्त ब्रह्म [की प्रतिमा] तुम्हारी [प्रत्येक] मनोकामनाको पूरा करे।

[EI, VII, No., 14 E.]

६२८

देवगढ़;—संस्कृत।

[सं० १४९३ तथा शक १३५८=१४३६ ई०]

(पंक्ति ५)—संवतु १४९३ शाके १३५८ वर्षे वैशाष (ख) –वि (व) दि ५ गुरै (रौ) दिने मूल-नक्षत्रे ॥

बृहस्पतिवार, ५ अप्रैल १४३६ ई०

शक १३५८—देवगढ़ जैन शिलालेख।

[INI, Nos. 287 & 375.]

६२९

पर्वत आबू—संस्कृत ।

[सं० १४९४ = १४३७ ई०]

श्वेताम्बर सम्प्रदाय का लेख ।

[Asiat. Res., XVI, p. 313, No. XXV, a.]

६३०

नागदा—संस्कृत ।

[सं० १९१४=१४३८ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

[Bhavnagar inscriptions, p. 112-113, t. & tr.)]

६३१

गिरनार—संस्कृत ।

[सं० १४९६ = १४३९ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

[Revised Lists ant. rem. Bombay (ASI, XVI), p. 355, No. 13, a, t. & tr.]

६३२

राणपुर (जोधपुर जिला) संस्कृत ।

[सं० १४९६ = १४४० ई०]

[Rhavnagar ins criptions, p' 113-117, t. & tr.]

६३३

ग्वालियर;—आकृव ।

[सं० १४९७=१४४० ई०]

श्री आदिनाथाय नमः ॥ संवत् १४९७ वर्षे वैशाख ··· ७ शुक्रे पुन-र्वसु नक्षत्र श्रीगोपालचलदुर्गे महाराजाधिराजराजा श्रीडुंग ··· [र विहराज्य] संवर्त्तमानो श्रीकाष्ठासंघे माथू[थु]रान्वये पुष्करगणभट्टारक श्रीग (गु)णकीर्त्ति-देव तत्पदे यत्नः (शः) कीर्त्तिदेवा प्रतिष्ठाचार्य श्रीपंडितरघू (इधू) तेषं । आम्माये (म्नाये) अग्रोतवंशे मोद्गलगोत्रा सा ॥ धुरात्मा तस्य पुत्र साधुभोपा तस्य भार्या नान्हो । पुत्र प्रथम साधु क्षेमसी द्वितीय साधुमहाराजा तृतीय अस ' ज चतुर्थ धनपाल पञ्चम साधु पालका । साधुक्षेमसी भार्या नोरादेवी पुत्र—ज्येष्ठपुत्र भधायि पति-कौल ॥ भ—भार्या च ज्येष्ठस्त्री सरसुती पुत्र मल्लिदास द्वितीय भार्या साध्वीसरा पुत्र चन्द्रपाल। क्षेमसीपुत्र द्वितीय साधु श्रीभोजराजा भार्या देवस्य पुत्र पूर्णपाल ॥ एतेषां मध्ये श्री ॥ त्यादिजिन-संघाधिनति काला सदा प्रणमति ॥

अनुवाद—आदिनाथको नमस्कार । सं० १४९७ के वैशाख सुदी ७, जब पुनर्वसु नक्षत्र उदित हो रहा था, और जिस समय महाराजाधिराज डूंगरेन्द्रदेव गोपाचल (आधुनिक ग्वालियर) के किलेमें राज्य कर रहे थे । तब काष्ठासंघके मथूर अन्वयके, पुष्कर गणके भट्टारक गुणकीर्त्तिदेवके बाद उनके पट्टाधीश कीर्त्तिदेव हुए । इसके बाद लेखमें पट्टाधीशके पदपर आसीन होनेवालोंमें प्रतिष्ठाचार्य पण्डित (पुरोहित) श्रीरघू, तत्पश्चात् पण्डित श्रीभायाके नाम आये हैं । श्री भायाके पुत्र 'साधु' भोपा, उसकी पत्नी नन्ही थी । इसके बाद उनके पुत्र और पुत्रों की पत्नियाँ तथा उनके पुत्रोंके नाम आये हैं । अन्तमें

मायदेवके पुत्रका नाम पूर्णपाल बतलाया है। इनमेंसे आदिजिनसंघाधिपति काला[1] सदा प्रणाम करते हैं।

[JASB, XXXI, p. 404, a. ; p. 422-423, t. & tr.]

६३४

पर्वत आबू ;—संस्कृत।

[सं० १४९७=१४४० ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[Asiat. Res. XVI, p. 313, No XXVII, a.]

६३५

श्रवणबेल्गोला;—संस्कृत।

[वर्ष क्षय=शक १३६८=१४४६ ई० (कीलहौर्न)]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

६३६

म्यूनिच;—संस्कृत।

[सं० १५०३ = १४४६ ई०]

[J. Klatt, IA, XXIII, p. 183, t. & tr.]

१—उपर्युक्त अनुवादकी शुद्धता बाबू राजेन्द्रलाल मित्रकी दृष्टिमें सन्देहास्पद है। 'काला' नाम उन्हें अशुद्ध मालूम पड़ता है। यह अनुवाद खाली काम चलाऊ है।

६३७

माण्ट निड्डुगल्लु;—कन्नड़ ।

[बिना काल-निर्देशका, पर लगभग १४५० ई० ? (लू. राइस) ।]

[निड्डुगल्लु-बेट्टपर मळे-मल्लिकार्जुन मन्दिरके पासके पाषाणपर]

श्री-मूल-संघद वृषभसेन-भट्टारक-देवर गुड्ड वैश्यर

रामि-सेट्टियर मग विमी-सेट्टिय हेण्डति चन्द्रवेय निषिधि ॥

[मूलसंघके वृषभसेन-भट्टारकके गृहस्थ-शिष्य, वैश्य रामि-सेट्टिके पुत्र विमी-सेट्टिकी पत्नी चन्द्रवेका स्मारक यह है ।]

[E C, XII, Pavugada tl., No 56]

६३८

पर्वत आबू;—संस्कृत ।

[सं० १५०१=१४५२ ई०] श्वेताम्बर लेख ।

[Asiat. Res., XVI, p. 311, No XXI, a.]

६३९

टोंक;—संस्कृत (देवनागरी लिपि)

[काल—सं० १५१०=१४५३ ई०]

टोंक (राजपूताना) के नवाबके महलके पास जनवरी सन् १६०३ ई० में खुदाई होनेसे अचानक ११ जैन प्रतिमाएँ निकलीं । ये प्रतिमाएँ भिन्न-भिन्न ११ तीर्थङ्करों की हैं, जो पद्मासन-स्थित हैं, गोदके ऊपर जिनके बाएँ हाथके ऊपर दाहिना हाथ है और दाहिने हाथकी हथेलीका मुख ऊपरकी तरफ है । ये सब प्रतिमाएँ समानाकृति हैं, सिर्फ पार्श्वनाथ और सुपार्श्वनाथकी प्रतिमाके ऊपर सर्पका फण है तथा और प्रतिमाओंपर उनके भिन्न-भिन्न लाञ्छन (चिह्न)

हैं। वे सफेद संगमरमरके पत्थर की बनी हुई हैं और अच्छी तरह सुरक्षित दशामें हैं। उनकी बनावट कुछ भद्दी है। तीर्थङ्करोंके नाम तो नहीं प्रकट किये गये हैं, पर चिह्नोंसे उन्हें मालूम किया जा सकता है। वे निम्नलिखित भाँति हैं :—

१. **पार्श्वनाथ** (२८ इञ्च × २३ इञ्च) सतफणी सर्प सिर के ऊपर है, और सर्प चिह्न के तौरपर है।

२. **सुपार्श्वनाथ** (करीब २२ × १८ इञ्च). पञ्च-फणी सर्प सिर के ऊपर। स्वस्तिक चिह्न।

३. **महावीरनाथ** (करीब २२ × १८ इञ्च), सिंह का चिह्न है।
४. **नेमिनाथ** (करीब १६ × १५ इञ्च) शंख का चिह्न है।
५. **अजितनाथ** (करीब २१ × १७ इञ्च), हाथी का चिह्न है।
६. **मल्लिनाथ** (करीब २१ × १७ इञ्च) कलश का चिह्न।
७. **श्रेयान्सप्रभु** (करीब २१ × १७ इञ्च) गेंडे का चिह्न है।
८. **सुविधिनाथ** (करीब २१ × १७ इञ्च), मछली का चिह्न।
९. **सुमतिनाथ** (करीब १८ × १७ इञ्च) चकवे का चिह्न।
१०. पद्मप्रभ (करीब १६ × १३ इञ्च), कमल का चिह्न।
११. शान्तिनाथ (करीब १६ × १३ इञ्च), कच्छप (कछुआ) का चिह्न।

इन प्रतिमाओं के नीचे के पाषाणपर लेख है जो कि प्रायः मिलते-जुलते हैं और देवनागरी लिपि में भद्दे रूप से अशुद्ध **संस्कृतमें** लिखे हुए हैं। सबका काल **संवत् १५१०, माघ शुक्ला दशमी,** तदनुसार **रविवार १९ फरवरी,१४५३ ई०** है।

ये सब प्रतिमाएँ जैनोंके दिगम्बर सम्प्रदाय की हैं। यह इस बात से प्रमाणित होता है कि सब के ऊपर 'मूलसंघ' लिखा हुआ है और सब नग्न हैं। लेखों के अनुसार, इन सबकी प्रतिष्ठा **लापू** नाम के एक वनिक, तथा उसके पुत्र **साल्हा** और **पाल्हा** और उनकी क्रमशः **लक्ष्मिणी, सुहागिनी** (**सुगनश्री** भी कहते

थे) और गौरी नामक स्त्रियों के द्वारा हुई थी। ये लोग अपने को जिनचन्द्र का भक्त कहते थे और दिगम्बराम्नायी खण्डेलवाल जाति तथा पाकलीवाल गोत्र के थे।

पार्श्वनाथ की प्रतिमा का लेख बताता है कि ये पाषाण-लेख लूकरदेव के राज्यकाल में उत्कीर्ण किए गए थे। ये लूकरदेव उस समय के स्थानीय शासक रहे होंगे लेकिन इतिहास में उनका कोई पता नहीं चलता। उन प्रतिमाओं को संभवतः किसी मूर्तिभञ्जक द्वारा आपत्काल प्राप्त होनेपर किसीने छिपाया होगा।

श्रीमान् नवाब महोदय ने इन ११ प्रतिमाओं को, अजमेर के गवर्नमेंट म्यूजियम के बन जाने पर उसे उन्हें टोंक स्टेट के उपहार के रूपमें भेंट देने का संकल्प प्रकट किया था।

[Hiranand Shastri, A S P & U P annual Report 1903–1904 p. 61–62, a.]

६५०

ग्वालियर;—प्राकृत।

[सं० १५१०=१४५४ ई०]

(१) सिद्धि संवत् १५१० वर्षे माघसुदि ८ (अ)ष्टमै (म्यां) श्री गोपगिरौ महाराजाधिराज-

(२) जा श्री डं(डु)गरेन्द्रदेवराज्यप्र [वर्त्तमाने] श्रीकाष्ठीसंघे माथु (थु)-रान्वये भट्टारक श्री

(३) क्षेमकीर्त्तिदेवस्तत्पदे श्री हेमकीर्त्तिदेवास्तत्पदे श्री विमलकीर्त्ति-देवाः ··· ··· ···

(४) हिता ··· ··· तदाम्नाये अग्रोतवंशे गर्गगोत्रे सा···· ···त

(५) योः पुत्रा ये दशाय श्रीचंद भार्या मालाही तस्य प्रवत्तापेशार रा··· चीता··· ···हु

(६) तीयसा० हरिचंदभार्या जसोधर हितये ··· ··· ··· ··· णसीसा० सघासा० वृती

(७) यहेमा चतुर्थसा० रतीपुत्रसा० सह सापं ··· मु सा० धंसा० सल्हाकुा अेसेवं ए

(८) तेषां मध्ये साधु श्रीचंद्रपुत्र शेषा तथा हरिचंद्रदेवकी भार्या ··· ···

(९) दीप्रमुखा नित्यं श्रीमहावीरप्रतिमा प्रतिष्ठाप्य भूरिभक्त्या प्रणमंति ॥

(१०) अङ्गुष्ठमात्रां प्रतिमां जिनस्य भक्त्या प्रतिष्ठापयतो महत्या। फलं वलं राज्य

(११) मनन्तसौख्यं भवस्य विच्छित्तिरथो विमुक्तिः ॥ शुभं भवतु सर्वेषां ॥

अनुवाद—संवत् १५१०की माघ सुदि ८मी को महाराजाधिराज राजा श्री डूंगरेन्द्रदेवके शासनकालमें काञ्चीसंघके मायूर अन्वयके भट्टारक श्री क्षेम-कीर्त्तिदेव हुए। उनके बाद हेमकीर्त्तिदेव तत्पश्चात् अ (वि)मलकीर्त्तिदेव हुए। (शेष अपठनीय है।)

[JASB, XXXI, p. 404, a.; p. 423-424, t. & tr.]

६४१

आरङ्गी;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[वर्ष धातु = १४५६ ई० (लू० राइस)]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम्।
निरुपम-धातु-वत्सरद माधव-मासद शुद्ध-सप्तमी -।
रवरकरवारदोळ् दिनकरोदयवागद मन्ने सन्द सच्च् -।
चरिते जिनेन्द्र-चन्द्र-पद-पद्मननोप्पिरे चित्त-वृत्तियोळ्।
··· रयिसि नाडे भागिरथि ताळ्दिदळायत-स्वर्ग-सौख्यमं ॥

अमवं श्री-वीतरागं तनगे निवदोळं दैवमा-योगि ••• ।
विनु सिद्धान्ताख्यराराध्यर जिन-मत-वाराशि-संपूर्ण-चन्द्रं ।
प्रभु बुळ्ळप्पं पितं मातुर-गुणवति मल्लव्वे तायेन्दोडी-सद्-
विम नोन्तर् ••• अरिविरे धरणी-चक्रदो ••• ••• ॥
सुखमय ••• ••• ••• भागीर् [अ] थि निरुपम-सौख्य यिप्प ••• प्रीतियं
••• ••• ••• ••• ••• भद्रमस्तु ••• •••

[भागीरथीका, जैन विधि-पूर्वक, मृत्युका स्मारक यह है। उसके पिताका नाम प्रभु बुल्लप्प, और माँका मल्लव्वे था]

[EC, VIII, Sorab tl., No. 331]

६४२

चित्तौड़;—संस्कृत ।

[सं० १५१४=१४५७ ई०]

[एक चिकनी चट्टानपर जिसके बीचमें चरण-चिह्न हैं और जिसके अन्तमें गणेश और भैरवकी मूर्त्तियाँ हैं।]

(१) ॥ संवत् ५१४ (१५१४) वर्षे मार्ग (र्ग)-शुदि ३ श्री-भर्तृपुरीय-गच्छे श्री-चूडामणि-भर्तृपुर-महा-दुर्गे श्री-गुहिलपुत्रवि-
(२) हार-श्री-वडादेव-आदिजिन-वामाङ्गे दक्षिणाभिमुखद्वारगुफा (म्फा) यामेकविंशति-देवीनाम् चतुर्णाम् ••• पा-
(३) लानाम् चतुर्णाम् विनायकानां च पादुका-पङ्क्ति-सहकार-सहिता च श्री-देवी-चित्तोदरि-मूर्ति (र्तिः) स्था ••• (पिता ?)
(४) श्री-भर्तृ गच्छीय-महा-प्रभावक-श्री-आम्रदेव-सूरिभिः ॥ अस्यां मूर्त्तौ सा० सोमा-सु०-सा०-हरपालेन मातृ-लोक-
(५) श्रेयसे = पुण्योपार्जना व्यधीयत ॥

[लेख स्पष्ट है। इसके अन्दर आये हुए 'भर्तृपुर' से भरतपुरका संकेत होता है, क्योंकि यह भी एक 'महादुर्ग' कहा जाता है। चट्टानके मध्यमें चरणचिह्नोंके नीचे "श्री-ब्राशि (खि) णि" अक्षर खुदे हुए हैं।]

[ASWI, Progress Report 1903-1904, p. 59, t.]

६४३

बघागञ्ज (मालवा);—संस्कृत।

[सं० १५१६=१४५९ ई०]

मन्दिरके दरवाजे पर।

स्वस्ति श्रीसंवत् १५१६ वर्षे मार्गशीर्षे वदि ६ रवौ सूरसेन-मेहमुन्द-राज्यश्रीकाष्ठासङ्घे माथुरगच्छे (च्छे) पुष्करगणे भट्टारकः श्रीश्रीक्षेमकीर्त्ति-देवः व्रतनियमस्वाध्यायानुष्ठान-तपोपशमैकनियमभट्टारक श्रीहेमकीर्त्तिदेवशिष्य महावादवादीश्वर रायवादीपितामहसकलविद्वज्जनचक्रवर्त्तिनलः श्रीकमल-कीर्तिदेवा सच्छिष्यजिनसिद्धान्तपाठपयोधिनायकान्तरोपासीन मण्डलाचार्य श्री-रत्नकीर्त्तिना जीर्णोद्धारः कृतः वृहच्चैत्यालयपार्श्वे दशजिनवशतिकाहा कारोपीता भट्टेश्वर द्वितीयसं डालुभार्य्याखेतु द्वि (०) ना (०) पद्मिनी खेतुपुत्रसं० वाढामं० पारस एतैः इन्द्रजितः प्रतिमां प्रतिष्ठाप्य नित्यमर्चयन्तो पूजयन्तों वा शुभं तावच्छ्रीसङ्घस्य।

मन्दिरके उत्तरकी ओर।

संवत् १५१६ वर्षे शिल्पनागसुतरसालाशिलपड़ाला सूत्रशाला जीर्णो यतः।

मन्दिरके पश्चिमकी ओर।

आचार्यश्रीरत्नकीर्त्तिपंडितपाहु।

मन्दिरके दरवाजेके स्तम्भ पर।

योगीदंगमयाउसवोतराउल ।

प्रतिमाके चरणपरसे ।

कण्ठरनायसाधु

चतुर विहतिहिलि

साकसाला हइ प्रणति

लेख स्पष्ट है ।

[JASB XVIII, p. 951-953, No 3 t. & tr.]

६४४

पर्वत आबू—संस्कृत ।

[सं० १५१८ = १४६१ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

[Asiat. Res., XVI, p. 298-299, Nos XIII & XIV, a.]

६४५

गिरनार—संस्कृत ।

[सं० १५२२=१४६५ ई०]

[नेमिनाथ मन्दिरके दक्षिणको तरफके प्रवेशद्वारके प्राङ्गणमें टूटे हुए खम्भेकी पश्चिमी दीवालपर]

संवत् १५२२ श्री मूलसंघे श्री हर्षकीर्त्ति श्री पद्मकीर्त्ति भुवनकीर्त्ति ... ...

अनुवादः—सं० १५२२, श्री मूलसंघके श्री हर्षकीर्ति, पद्मकीर्ति, भुवनकीर्ति, ...

[ASI, XVI P. 355, No 13, b.]

६४६

भारङ्गी;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[वर्ष पार्थिव = १४६६ ई० (लू. राइस)]

[भारङ्गीमें, कल्लेश्वर-वस्तिके दूसरे पाषाणपर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥
स्वस्ति श्रीमति **मूल-संघ**-तिलके श्री-**नन्दि-संघो**द्भवे
स्वच्चे (च्छे) **पुस्तक-गच्छ**-शालिनि शुभे **देशी-गणे** यस्सुखी।
स्याद्वादारि-नगाशनिर्ग्गुण-मणि-श्रेणी-महीयः-खनिः
श्रीमानेष जयत्यलं **श्रुति-मुनिः** कैवल्य-जन्मावनिः ॥
शिष्यस्तस्य मुनेस्तिरस्कृत-तमस्तोमः समुद्यंश्चिरात्
स्याद्वादचलर्ताश्चदम्बरतले देदीप्यमानस्सदा ।
दीनं विश्वमिदं कृपामृतभरैरुज्जीवयन् पावनः
चिह्नातीत-कलानिधिर्व्विजयते श्री-**देवचन्द्रोमुनिः** ॥
तच्छिष्यो**ऽभयचन्द्र**-चन्द्र-करुणा-सौधोल्लसन्निर्भरी-
सम्पूर्णामल-मानसः कलि-युगे श्रेयांश्च **गोपीपतेः** ।
सुनुस्सूनृत-धर्म्म-कर्म्मणि रतः श्री-जैन-चूडामणिर्
दूरं **बुल्लप** इत्ययं प्रभुरयं ख्यात्यात्मना शोभते ।

यिन्तु नेगळ्तेवेत्ता-विभुविर्प्प ग्रामवावुदेन्दडे ॥

सारं **गुत्तिगे** सन्दु वर्प्प **पदिनेण्टुं-कम्पणं** भूमियोळ् ।
सारं **नागरखण्ड**मन्तदोरोळिर्प्पा-ग्राम-सन्दोहदोळ् ।
भारङ्गी-पुरमब्ज-षण्ड-लसितं चैत्यालयानीक-वि- ।
स्तारोद्यत्-कलशांशु-शोभित······सारं जयत्-संस्तुतम् ॥

आ-पुरमं भू-कान्ता- ।
नूपुरमं नूत्न-रत्नमय-गोपुरमम् ।
भूपति-सभाभिरामम् ।
गोप-प्रभु-सुनु-बुळ्ळपार्य्य पोरेवम् ॥
कलियं माङ्करिसित्त तन्न चरितं कल्यावनीजातदोळ् ।
चलमं माडिदुदत्युदारते महा-धैर्य्यं सुरोर्व्वीध्रदोळ् ।
मलेतत्तेन्दोडे बुळ्ळप-प्रभुगे भव्याचारदिं चागदिम् ।
विलसद्-धैर्य्यदिनी-धरातळदोळन्यर् प्पोललेनार्प्परे ॥

कं ॥ चागदे धन-राशियनुरु- ।
भोगदे तन्नायुराशियं समेयिसिदम् ।
त्यागं श्रेयांसनोळुरु- ।
भोगं सुकुमारनल्लि समनेम्त्रिनेगम् ॥

वृ ॥ यिनितुं चोद्यमे राय-राज-गुरु-लोकाचार्य्यरास्थान-रञ्- ।
जन-विद्विजन-चक्रवर्तिगळनिं दुर्व्वादि-मातङ्ग-भे- ।
दन-पञ्चाननरोल्दु बोधिसिदवर् स्सिद्धान्त-योगीन्द्ररेन्द् ।
एने बुळ्ळप्पनोळुद्ध-कीर्त्तियुमनूनाचारमुं धर्म्ममुम् ॥
चिरमल्लितनुवाप्त-पूजेयोदवं सत्-सेवेयं भक्तियिम् ।
गुरुगळ्गिम्मिगे माळ्परप्परो पेरर् मेणागरो माळ्पेनाम् ।
चिरमं धर्म्ममतेन्दु कोट्टदके भू-दानङ्गळं दीर्ग्घको- ।
त्करमं कट्टिसि बुळ्ळप-प्रभुवदेम् धर्म्मकडर्प्पादनो ॥

कं ॥ जिन-पद-युगदोळ् जिन-मुनि- ।
जन-सेवेयोळुचित-दानदोळ् सलियिसिदम् ।
मनमं तनुवं धनमम् ।
विनय-परं बुळ्ळपार्य्यनचलित-धैर्य्यम् ॥

इन्तु सुखदिनिर्प्पन्नेगं समाधि-कालमत्यासन्नमागे ।।

वृ।। जिन-नतियं जिनेश्वरन नाममना-जिन-नाम-सङ्कथेयम् ।
मनदोळमास्य-पङ्कजदोळं कर-शाखेयोळं समाधि सन्-।
दनियिप कालदोळ् निलिसि सर्व्व-निवृत्तिगे सन्दु मुक्ति-सा-
धन-मननैदिदं त्रिदश-धाममनी-क्रमदिन्दे बुळ्ळपम् ।।

व ।। अन्तु पञ्च-परमेष्ठिगळ ध्यानदिं तां पडेद समाधि-कालद जय-क्रम मेन्तेन्दोडे ।।

अदु मूवत्तैदरिन्दं क्रमदोळे पदिनारागि मत्तारोळ् सन्-।
दुदु वन्दत्तैदरोळ् नाल्करोळेराडरोळिर्दोन्दरोळ् विन्दु नाका-
स्पदमं सैतित्तुदात्त-सत्त्व-जय-विलसद्-वर्ण्ण-सन्दोहमीयन्-।
ददिना-जिह्वाग्रदोळ् सन्मतियिनेनलदेम् धन्यनो बुळ्ळपार्य्यम् ।।
सरिगाणेम् धरेयल्लि चागिगलोळेन्नोळ् पोल्के-वप्पन्नरम् ।
सुर-भूजं समनप्पोडप्पुददनां नोळ्पेम् समन्तेम्बवोल् ।
धरेयोळ् पोम्-मले सोर्द्द पाङ्गिनोळे चागं गेय्दु सोपानमाग् ।
इरे धर्म्मं त्रिदिवक्के बुळ्ळपनमर्त्यावासमं पोर्द्दिदम् ।।
मान्यो राज-सभासु बुळ्ळप-विभुर्य्यः पार्त्थिवे वत्सरे
मासे भाद्रपदे त्रयोदशि-तिथौ पक्षेऽर्क्कवारे सिते ।
श्रीमत्पञ्च-नमस्क्रियामय-सुधां स्वैरं पिवन् श्री-गुरून्
ध्यांस् ... ... समाधि-विधिना स प्राप दिव्यं श्रियम् ।।
आ-कल्पं भुवि बुळ्ळ [प]-प्रभु-यशस् स्थाय्यस्तु सं ... ...
... ... इत्यचीकरदिमामस्मै निपद्यां कलाम् ।।
तत्प्रेमात्म ... ... नाथ-परमाराध्य ... ... ।
... ... चन्द्र-सूरिरनिशं जीयादिदं शासनम् ।।
वर्ष-सहस्रदोळ् ... दश-स ... ... ।
वर्षमे पार्त्थिवं पुदिये भाद्रपदं वर-मासदोन्दु .. ... ।

... ... स्ति-प ... ... प्रमा- ।
कर-वर-वारमागे विमु-हुल्ळनैदिद् ... ... ॥

[जिन शासनकी प्रशंसा। मूल-संघ, नन्दि-संघ, पुस्तक-गच्छ, और देशि-गणके श्रुत-मुनिकी प्रशंसा। उनके शिष्य देवचन्द्र मुनि थे। उनके शिष्य गोपिपतिके पुत्र हुल्ळर थे, जिन्हें अभयचन्द्रकी कृपासे वह अवसर प्राप्त हुआ था। जिस गाँवका वह अधीश था, वह नागरखण्ड था, जो १८ कम्पण देशके गुत्तिका गाँव था। इस नागरखण्डके गाँवोंमें एक गाँव मारङ्गि था, जिसमें उत्तमोत्तम चैत्यालय थे। बुल्लप की प्रशंसा, जिसने भूमिदान किया था और तालाब (दीर्घिका) बनवाये थे। अपना अन्त नजदीक जानकर, उसने सभी नियत विधियोंको किया, और समाधि-की विधिसे (उक्त मितिको), स्वर्गको गया।]

[EC, VIII Sorab tl, No 330]

६४७

पर्वत आबू;—संस्कृत।

[सं० १५२१=१४६८ ई०] श्वेताम्बर लेख।

[Asiat. Res. XVI, p. 301, No. XVII, a.]

६४८

पर्वत आबू;—संस्कृत।

[सं० १५२६ = १४७२ ई०] श्वेताम्बर लेख।

[Asiat. Res. XVI, p. 299, No. XV, a.]

६४९

यिड्डुवणि;—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[शक १३१५ = १४७२ ई०]

[यिड्डुवणिमें, पार्श्वनाथ बस्तिके पाषाणपर]

श्री-पार्श्व-तीर्थेश्वराय नमः निर्विघ्नमस्तु ॥

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

श्री-पञ्च-परमेष्ठिभ्यो नमः ।
नमस्तुङ्ग-इत्यादि ॥

स्वस्ति समधिगत-भु[व]नाश्रय श्री-पृथ्वी-मनो-वल्लभ महा-राजाधिराज राज-परमेश्वरनीश्वर-कुल-तिलक श्रीमन्महा-**विरूपाक्ष-महारायरु** राज्यवनु सुख-संकथा-विनोददिं प्रतिपालिसुत्तमिद्दल्लि श्रीमन्महा-प्रभु **मलेय-हुलि**-मार्त्ताण्ड **निडि**गेण्ड-दण्डिगेय मनेयर गण्ड श्रीमन्महा-प्रभु **अयिसूर मुन्दुवण्ण-नायकर** वर-कुमार **भैरण्ण-नायकरु होरुगुप्पे-हेब्बयल-नाडनु** प्रतिपालिसुत्तमिद्दलि **इड्डुवणिय बलिय-गौडर** मग **नगिर-ठाविण आनेवळिगे** अग्रगण्यरप्प कोडे-हडप दीप-मालेय कम्म अङ्क-टेङ्के-मुन्ताद-तेज-मान्य-व्रनुळ्ळ **हैवण्ण-नायकरु बुक्कण्ण-नायकर** अळिय **माळक-नायकितियर** मग आहाराभय-भैषज्य-शास्त्र-दत्तावधा[त]रुमप्प **पारिस-गौडरु** तम्म वोडय भयिरण्ण-नायकरिगू तमगू पुण्य-वृद्धि-यशो-वृद्ध्यर्थ-निर्मित्तवागि तम्म दानमूलद-सीमेय यिड्डुवणेयोळगे श्री-पश्र्व-तीर्थङ्कर-चैत्यालयवनु माडिसिदनु तन्मुहूर्त्तके शुभमस्तु ॥ स्वस्ति श्री **जयाभ्युदय शालिवाहन-शक-वर्ष १३९५ नेय नन्दन-संवत्सरद वैशाख-शुद्ध १२ यन्दु** सूर्य-प्रतिष्ठेयाद घ २ ळिगेयल्लि चतुस्संघ-समन्वितदिं पञ्च-कल्याण-महोत्साहदिं सु-मुहूर्त्तदिं श्री-पार्श्व-तीर्थेश्वर प्रतिष्ठेयं भैरण्ण-नायकर कारुण्य-वर-प्रसाददिं पारिस-गौ[ड]रु तम्मोडेरु भैरण्ण-वोडेयरिगु तनगू अभ्युदय-निश्रेयस-सुख-प्राप्ति-निमित्त-वागि माड्सिदुदक्के भद्रं शुभं मङ्गलम् ॥

स्वस्ति-नवरत-विनमन्नरेन्द्र-मौळि-माणिक्य-मयूख-बालातप-विलसित-पादारविन्द श्री-नन्नादि-नन्दि-प्रसिद्धरनम्प विद्दुवाणिय श्री-पार्श्व-तीर्थेश्वररिगे मलेय-हुलिय मार्त्तण्डनिडिग मेण्ड-दण्डिनायक मन्नेयर गण्ड उभय-नाना-देशिगळगे तवर्म्मनेयाद ऐरवद्दपुर-वरावीश्वर श्रीमन्महामनु भैरण-नायकर तम्म अम्म सिरु-मादेविय-वरिगू तन्नू तम्म कादम्ब-वर-प्रसादरिं सेवेयं माडुत्तं विद्द पारिस-गौडरिगू पुण्य-वृद्धि-यशो-वृद्ध्यर्थ-निमित्तवागि कोट्ट धर्म्म-शासनद् भाषा-क्रमवेन्तेन्दरे। नाऊ आळुत्तं विद्द होर-गुन्दे हेग्गवल-नाडोळगन अप्पु-गौडन वक्कगन पाल कुळ ग २ ॥ २ अस्तरल्लु दिन्गु-वड्डु-इगविन कुळवनु श्री पार्श्व-तीर्थेश्वर नित्य-पूजा-महोत्साहके अमृतगडि वड्डु-सोचिन द्विविध-देवर हाल-धारे मृत्युञ्जय-चक्र-पूजे पञ्चामृतद् अभिषेक सिद्ध-चक्र-पूजे सिद्दर हाल-धारे अडके पत्त गन्ध धूप एण्णे वाद्य-मुन्ताद् समस्त-पूजा-वेचके नाडु दोन-सूर्य-ग्रहणदलि धारा-पूर्व्वकदि विट्टु कोट्ट गद्दे ग २ ॥ २ इगविन कुळ-स्थळद् वृत्ति-भूमिगळ विवर (यहाँ दानकी विस्तृत चर्चा है) मिन्ता-वृत्ति भूमिगळ चतुस्सीमेगळिन्दोळगाद मोदल सिद्धायि ई-माळल सिद्धाय अडके वन्द अडके-दले-मुन्ताद होरगुन्दे हेग्गवल-नाडोपादियल्लि वन्द् नाना-उपोत्र मुन्दे वेनु वन्द हडिके-होदके-मुन्तागि सल्लवनू नाऊ नम्म स्त्री-पुत्र-ज्ञाति-समस्त-दायादानुमतदिं नम्म स्व-रुचियिं चन्द्र-सूर्य-अग्नि-वायु-साक्षि-यागि······ ण-नायकर कुमार भैरण्ण-नायकर बरसिकोट्ट शिला-शासनके मङ्गळ महा श्री श्री (यहाँ इसेयाका अन्तिम श्लोक तथा दानकी विस्तृत चर्चा आती है)।

- स्वस्ति श्री विजयाभ्युदय-शालिवाहन-शक-वर्ष १२९६ नेय विजय-संवत्सरद कार्त्तिक शुद्ध ५ बुद (ध) वारदलु स्वस्ति श्रीमद्-वादीन्द्र-विशालकीर्त्ति-भट्टारक-स्वामिगळ उपदेशदिन्द स्वस्ति श्रीमन्महा-प्रभु-गुण्डु-बसु-नायकर कुमार भैरण्ण नायकर तमगे अभ्युदय-निश्रेयस-सुख-प्राप्ति-निमित्त-वागि प्रेक्षेयखेडद नेमिनाथ-स्वामिगळ नित्य पूजा-महोत्सवके विट्ट धर्म्म-शासनद क्रमवेन्तेन्दरे (यहाँ दानकी विस्तृत चर्चा आती है) नम्म स्त्री-पुत्र-ज्ञाति-समस्त-दायादानुमतदिन्दलू नाऊ नम्म स्व-रुचियिन्द चन्द्र-सूर्य-वायु-अग्नि-

साक्षियागि भैरण्ण-नायकर कुमार यिम्मडि-भैरवेन्द्रनू वरद शिला-शास[न]के मङ्गल महा श्री ॥ (हमेशाके अन्तिम श्लोक)।

इन्द्रः पृच्छति चाण्डालीं किमिदं पच्यते त्वया ।
श्वान-मांसं सुरा-सिक्त कपालेन चिताग्निना ॥
देव-ब्राह्मण-वित्तानां वलादपहरन्ति ये ।
तेषां पाद-रजो-भीत्या चर्मणा पिहितं मया ॥

(हमेशाका अन्तिम श्लोक)।

[पार्श्व-तीर्थेश्वरको नमस्कार। यह निर्विघ्न होवे। जिन-शासनकी प्रशंसा। पञ्च-परमेष्ठियोंको नमस्कार। शम्भुको नमस्कार इत्यादि।

जिस समय महाराजाधिराज, राज-परमेश्वर, ईश्वर-कुल-तिलक, महानिरूपाद्र महाराय शान्ति एवं बुद्धिमत्तासे राज्य कर रहे थे:—और महाप्रभु, कुयिसूर मुन्दुवण्ण-नायकका पुत्र भैरण्ण-नायक होरुगुप्पे हेव्वयल-नाड्की रक्षा कर रहे थे;— इदुवणि वलिय-गौडका पुत्र, जो नगिर-ठावुमें आनेवालिगेमें अग्रणी था, हैवण्ण-नायक, तथा दुकण्ण-नायकका दामाद, मालक-नायिकितिके पुत्र पारिस-गौडने ताकि पुण्य और ख्याति स्वयं अपनी तथा अपने शासक भयिरण्ण-नायककी बढ़ सके,—अपने दानमूल सीमेमें इदुवणेमें पार्श्वनाथ-तीर्थङ्करका चैत्यालय वनवाया था। और (उक्त मितिको) (पूर्व विगतोंको दुहराते हुए) भगवान्‌की स्थापना की गयी थी।

(नाना उपाधियोंवाले) इदुगणिके पार्श्व तीर्थेश्वरके लिये, ऐश्वर्यपुर-वराधीश्वर, महाप्रभु भैरण्ण-नायकने, जिससे कि पुण्य और ख्याति अपनी माता सिरु-मादेवी तथा अपनेतक, और उसकी सम्पत्तिके दास पार्श्व-गौडतक बढ़ सके,—निम्नलिखित शासन (लेख) प्रदान किया;—यहाँपर दैनिक पूजा, महोत्सव, भेंटें, तथा अभिषेक आदिके लिये तथा और भी खर्चोंके लिये,—हमने

सूर्यग्रहणके समय (उक्त) भूमियाँ, सूर्य और चन्द्रको साक्षी बनाकर दी हैं। इनेशाका अन्तिम श्लोक।

पारिश (पार्श्व)-गौड तथा दूसरे गौडोंने (जिनके नाम दिये हैं) (उक्त) भूमियाँ प्रदान कीं।]

[EC, VIII, Sagar tl., No. 60]

६५०

गोडि;—संस्कृत-ध्वस्त।

[सं० १३२६ = १२७१ ई०] श्वेताम्बर लेख।

[D. P. Khakhar, Report on remains in Kachh (ASWI, Selections, No. CLII), p. 88, No. 40, t.]

६५१

भिलरी;—संस्कृत और गुजराती।

[सं० १३३८ = १२८१ ई०] (श्वेताम्बर)

[J. Kirste, EI, II, No. V, No. 1, (p. 25), t. & tr.]

६५२

हरवे;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक सं० १२०४ = १२८२ ई०]

[हरवे (उच्चम्बळ्ळि परगना) में, शिवलिंगय्याके खेतके दक्षिणकी तरफ एक पाषाणपर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

स्वस्ति श्री शक-वर्ष १२०४ नेय वर्द्धमान-शुभकृत्-संवत्सरद चैत्र -शु ५ बु हरवेय देवप्पगळ मग चन्द्रप्पनु तम्म कुल-स्वामी हरवेय नत्तिय आदि-परमेश्वरन

अमृत-पडि चातुर्व्वर्णद दान तदर्त्थवागि **तगडूर** प्रभुगळु एनेगे दानात्र्थवागि कोट्ट क्षेत्रद स्थान-निर्द्देशद विवर । अरिन्द नैऋत्य-दक्किनल्लि विभूतिय लिङ्गप्पयगळ गद्दे होल ग ३० तेङ्कलु विभूति-नञ्जप्पन होल तोटदिं पडुवलु येरे-होलके होह. वोणियिं वडगलु शिवनैय्यन अडुविं मूडण चतुस्सीमेयोळगाद स्थळ होल गद्दे अडके-तेङ्गु-एलेय-तोट ओळगाद क्षेत्रद सर्व्व मान्यवनू स्त्री-पुत्र-ज्ञाति-सापत्न-दायाद्यनुमति पुरस्सरवागि आदीश्वरगे एनेगे धर्म्मार्त्थवागि त्रिवाचा कोट्टेनु । (हमेशाकी तरह अन्तिम श्लोक)

[हरवे के देवप्पके पुत्र चन्दप्पने, हरवे बस्तिके अपने कुल-देवता आदि-परमेश्वरकी पूजा का प्रबन्ध करने, तथा चतुर्व्वर्णको दान देनेके लिये, तगडूरके सरदारोंके द्वारा दी गयी भूमिका, सूखे खेतों, धान्यके खेतों, सुपारी, नारियल और पानके उद्यानों सहित—जो कि इस भूमिमें लगे हुए थे, दान किया । यह दान उसने अपनी स्त्री-पुत्र-ज्ञाति-सौतेली स्त्रियोंके पुत्रों और दायादों (उत्तराधिकारियों) की अनुमतिसे किया था ।

[EC, IV, Chamarajnagar tl., No., 189]

६५३

चित्तौड़—संस्कृत ।

[सं० १५४३ तथा शक १४०८ = १४८६ ई०]

[गोमुखके पासके जैन-मन्दिरका लेख जो कि एक चट्टानपर है, जिसमें ३ प्रतिमायें उत्कीर्ण हैं ।]

(१) ॥ (चिह्न) ॥ संवत् १५४३ वर्षे शाके १४०८प्र० मार्ग(र्ग) शीर्ष वदि १३ तिथौ गुरु-दिने । श्री-**चित्रकूट**-महा-दुर्गे । श्री-**रायमल्ल**-राजेन्द्र-विजे (ज) य-राज्ये । सकल-श्री-सङ्घेन । स-तीर्थ । श्री-स (सु)कोशलेश-प्रतिमा कारिता । प्रतिष्ठि-

(२) ता । श्री-**खरतरगच्छे** । श्री **जिनसमुद्र-सूरिभि** (:भः) ॥

['रायमल्ल' स्पष्टतः वही राजमल्ल है जो कुम्भकर्णका पुत्र है, और उसके लिये विक्रम सं० १५४३, इस लेख द्वारा निर्दिष्ट, सबसे पूर्ववर्ती मिति है। लेखमें ...तरगच्छके जिनसमुद्र-सूरि द्वारा सुकोशलेश या ऋषभदेव तथा अन्य तीर्थों (जो कि दो से अधिक नहीं हो सकते हैं, क्योंकि पाषाणपर उत्कीर्ण केवल ३ मूर्त्तियोंका ही उल्लेख है।) की प्रतिमाओंकी स्थापनाका वर्णन है।]

नोट :—जिनसमुद्रसूरिके विषयमें जाननेके लिये Ind. Ant. Vol XI. p. 249, No. 58 देखना चाहिये।

[ASWI, Progress Report 1903-1904, p. 59. t.]

६५४

होंगेकेरी;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक १४०९=१४८७ ई०]

[होंगेकेरीमें, पार्श्वनाथ वस्तिके एक पाषाणपर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम्॥
श्रीमद्भू-भुवन-प्रसिद्धतर-जम्बूद्वीप-मध्यस्थ-तुङ्- ।
गामर्त्याचल-दक्षिणान्त्य-भरताख्यी-खण्ड-नैरृत्य-दिक्- ।
सीमोपाब्धि-तटोपकण्ठ-विलसद्-वर्णाश्रमाकीर्ण-भू- ।
वामं तौळव देशमिर्प्पुदिळेयोळ् सप्ताङ्ग-सम्पत्तियिम्॥
अदरोळ् माङ्गल्यगेहं बहु-विध-विभव-प्रोल्लसच्चैत्यगेहम्।
सुदती-सन्तान-जन्मालयमखिल-सुखि-त्यागि-भोगि-प्रवाहम्।
मृदवद्-हस्त्यश्व-यूथ-प्रबळ-पटु-भटाकीर्णमुत्तुङ्ग-सौधो-
दय-रावद्-राज-संगीतपुरमदेशेयल् प्रौढ़-सङ्गीयमानम्॥
कवि-गमकि-वादि-वाग्मि- ।
प्रवेक-सङ्गीत-विषय-साहित्य-रसो- ।

द्भव-चतुर-संस्तुत- ।
विविध-कला-भङ्गि-संगि सङ्गीतपुरम् ॥
अद्गनाळ्वं **साळुवेन्द्र**-क्षितिपति रिपु-मत्तेभ-कण्ठीरवं शा
रद-चञ्चच्चन्द्रिका-निर्म्मळ-ललित-यशः-पूरिताशान्तराळम् ।
मदन-प्रध्वंसि-चन्द्रप्रभ-जिन-चरण-द्वन्द्व-संसक्त-चित्तम् ।
सुदती-नेत्रान्तरङ्गोत्सव-कर-निज-सौभाग्य-कन्दर्प्प-देवन् ॥

अन्तातनखण्डित-प्रचण्ड-प्रताप-खर्व्वी-गर्व्व-निर्ज्जित-भीष्म-ग्रीष्म-मार्त्तण्ड-मण्डलनुम-प्रतिहत-देदीप्यमान-निज-तेजः-पुञ्जनुं दन्दह्यमान-रिपु-वधू-हृदयनुं विशाल-भाल-तल चोचुम्ब्यमान-जिन-चरण-नख-मयूखनुं दुष्ट-निग्रह-शिष्ट-प्रतिपाळन-क्रिया परिष्ठनुं चतुर-चतुष्षष्ठि-कला-कलापनुं रत्न-त्रय-मणि-करण्डायमानान्तःकरणनुं श्रीमन्महा-मण्डलेश्वरं श्री- **साळुवेन्द्र-महाराजं** निःकण्टकनागि सुखदिं राज्यं गेय्युत्तम् ॥

विनुत-प्रासाद-चैत्यालय-तल-विलसन्-मण्डपौघङ्गळिं कञ्-
चिन-मान-स्तम्भदिन्दा-पुरद वनद विन्यासदिं लोह-पापा-
ण-निवद्धानेक-बिम्बङ्गळिलुपकरण-व्रातदिं नित्य-दाना-
र्च्चनेयिन्दम् शास्त्र-दानं नेगळे नडसिदं धर्म्ममं शाळुवेन्द्रम् ॥

अनितु राज-धर्म्ममं धर्म्ममुमं पालिसुत्तम् ।
वरे साळवेन्द्रन चित्तम् ।
परितोषमनेयिदुवन्ते सेवा-तत्- ।
परनागि भक्ति-भरदिन्द् ।
इरे विगत-च्छद्म सुगुण-सद्मं **पद्मम्** ॥
हितनीतं प्रिय-सत्य-वाद-निपुणं धर्म्मार्त्थ-सम्पादकम् ।
चतुरं सच्चरित्रं दयार्द्र-हृदयं शास्त्रतानेम्मन्वया- ।
गतनी-पद्मण-मन्त्रियेन्दडे कुळिर्-क्कोडल्के साल्वेन्द्र-भू-
पतिया-चन्द्र-धरार्क्कमित्तनुरे मान्य-ग्राम-सम्पत्तियम् ॥
श्रीमद्-विश्रित-शालिवाहन-शकाब्दं नन्द-खाब्धीन्दु-सं-
ख्या-मानं नडेव प्लवंग-गत-पुष्य-स्याम-सत्-पञ्चमी- ।

स्तोमं गीष्पतिवारमोन्दिरे मनो-वाक्-काय-शुद्धं चतुस्-
सीमान्तोल्लियनष्ट-भोग-सहितं हेमाम्बु-धारा-युतम् ॥
प्रभुगळ् पुर-जन-परिजन- ।
सभासदर्म्मेच्चे साळुवेन्द्र-नृपाळम् ।
विभवदि पद्मण-मन्त्रिगे ।
शुभमस्त्वेन्दोगेयकेरेयनवनोल्दित्तम् ॥

अन्तु स-हिरण्योदक-दान-धारा-पूर्व्वकमागि कोट्ट वोगेयकेरेय-ग्राम-वोन्दर चतुस्सी-मेयोळगण गद्दे-वेद्दलु-तोट-तुडिके-कळ-मने-कोठार-होन्नु-होम्बळि-वरि-वड्डु-काणिके-कडाय-चेहिगे किनगु-वेमवोरकलु-अक्कि-सुङ्क-स्थळाळ्वे-तळवारिके निधि-निक्षेप-जल-पाषाण-अक्षिणि-आगामि-सिद्ध-साध्यमेम्बष्ट-भोग-सर्व्व-स्वाम्य-सर्व्वादाय-प्राप्ति-सहित-मागिया-चन्द्रार्क्क-स्थायियागि पद्मणामात्यननुभविसुवुदेन्दु कोट्ट सर्व्वमान्य-ग्राम-दान-शासन-वचनम् ॥

[जम्बूद्वीप, भरतक्षेत्र, उसमें तौलव-देशका वर्णन । उसमें संगीतपुर नगर तथा उसके राजा शाळुवेन्द्रका वर्णन ।

जिस समय महा-मण्डलेश्वर शाळुवेन्द्र-महाराज सुखसे राज्य कर रहे थे :— सुन्दर, ऊँचे-ऊँचे चैत्यालयों, मण्डपसमूहों, घण्टी सहित मानस्तम्भों और उद्यानोंसे साळुवेन्द्र धर्म्मको बढ़ा रहे थे। उनकी सेवामें तत्पर पद्म नामका व्यक्ति था। यह पद्मण (पद्म) हमारे खानदानमें से हुआ है अतः राजाने मन्त्री-पद्मणको ओगेयकेरे नामका गाँव दिया। उस गाँवमें बहुतसे शस्य (चावल) के खेत थे। ये सब उसने उसको दिये तथा इन सबका शासन (लेख) भी लिख-कर दिया।]

[EC, VIII, Sagar tl., No 163, Ist part]

६५५

होंगेकेरी;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक १४१२ = १४६० ई०]

[होंगेकेरीमें, पार्श्वनाथ बस्तिके एक पाषाणपर]

नमस्तुङ्ग-इत्यादि ॥

स्वस्ति श्रीमन्महा-मण्डलेश्वरं **सङ्गि-राय-वोडेयरवर** कुमार **यिन्दगरस-वोडेयरु संगीतपुर**-वर-राजधानियलु यिद्दु **हाडवल्लिय** राज्य-मुन्ताद समस्त-राज्यङ्गळनु सद्धर्म्म-कथाप्रसङ्गदिं प्रतिपालिसुत्तं यिर्द्दन्दिन **शालिवाहन-शक-वरुष १४१२ नेय सौम्य-संवत्सरद कार्त्तिक-व ७ शुक्र**वारदलु श्रीमन्महा-मण्डलेश्वरं **यिन्दगरस-वोडेयर** निरूपदिन्द **वोम्मण-सेट्टियर** मग **पद्मण-सेट्टियरु** वरसिद धर्म्मशासनद भाषा क्रमवेन्तेन्दरे यिन्दगरस-वोडेयर कैयलु **पदुमण-सेट्टि** मूलवनु कोण्डु आळुत्तं यिद्द **वोगेयकेरेय**-वोळगे चयि (चै) त्यालयवनु कट्टिसि पारिश्वतीर्त्थेश्वर प्रातष्ठेयनु माडि आ-पारिश्व-तीर्त्थेश्वररिङ्गे प्रतिदिन त्रि-काल-अभिषेक-पूजे मूरु कार्त्तिक-पूजे मूरु नन्दीश्वरद अष्टाह्निक शिवरात्रे अक्षय-तदिगे श्रुत-पञ्चमी कैयक्किय होयिर्वाल्लि जीवदयाष्टमी कैयक्किय सुसवल्लि गर्भावतरण जल्मा (जन्मा) भिषेक दीक्षा-कल्याण केवल-ज्ञान-कल्याण निर्व्वाण-कल्याणङ्गळेम्ब पारिश्व-तीर्त्थेश्वर पञ्च-कल्याण-मुन्ताद नैमित्तिकङ्गळल्लि माडुव अभिषेक-पूजे-धर्म्मङ्गळिङ्गे अङ्गरङ्ग-नैवेद्यंगळिङ्गे वोन्दु-तण्डु-तपस्विगळ आहार-दानके पूजक-भान्दारिगळु मालेयवरु मुन्तादवरिगे विङ्गडिसि माडिद धर्म्म-स्थळङ्गळ विवर (शेषमें दानकी विस्तृत चर्चा आदि है)।

[शम्भुको नमस्कार इत्यादि।

जिस समय महा-मण्डलेश्वर सङ्गी-राय-वोडेयर् का पुत्र इन्दगरस- वोडेयर् राजधानी सङ्गीतपुरमें था:—(उक्त मितिको) महा-मण्डलेश्वर इन्दगरस-

वोडेयरके हुक्मसे,-बोम्मण-सेट्टिके पुत्र पदुमण-सेट्टिने एक धर्म्म-शासन-पत्र लिखवाया, जिसकी भाषा इस प्रकार थी :—इन्दगरस-वोडेयरके हाथोंसे, पदुमण सेट्टिने ने द्वारा शासित वोगेयकेरेके मौलिक अधिकारको प्राप्त करके उसने वहाँ एक चैत्यालय बनवाकर पार्श्वतीर्थेश्वरको विराजमान किया। तथा पूजा और अभिषेक का प्रबन्ध करनेके लिये (जिसकी कि विस्तृत सूची दी हुई है) उसने (उक्त) भूमियोंका दान दिया। और इन सब लिखे हुए धर्म्मोंको चैत्यालयके उत्तरमें बनवाये गये मकानमें सुरक्षित रक्खा। मेरे एक हजार वर्ष बाद मेरे पुत्र, मेरी पीछेकी पीढ़ी और सन्तान मकानपर अधिकार कर सकते हैं, लगानकी देखभाल करते हुए (उक्त) धर्मोंको सञ्चालित कर सकते हैं। प्रत्येक चीजका खर्च नियमित रूपसे व्यवस्थित कर दिया गया है। (अन्तका लेख पढ़ा नहीं जा सकता।)]

[EC, VIII, Sagar tl., No. 163, III part.]

६५६

विदुरूरु;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक १४१२ = १४९१ ई०]

[विदुरूरुमें, जनार्दन मन्दिरके ताम्बेके पत्रपर]

श्रीमत्परम-गंभीर-स्याद्वादामोघ-लाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम्॥
श्रीमत्-तौळव-देश-मिश्रित-महा सङ्गीत-सत्-पत्तने
वामातीन्द्र-महीन्द्र-चन्द्र-तनयः श्री-सङ्गि-राजात्मजः।
भास्वत्-काश्यप-गोत्र-सोम-कुलजः श्री-सङ्कराम्बोदर-
क्षीराम्भोधि-सुधाकरो नुत-जिनः श्री-साळुवेन्द्राधिपः॥
साक्षीकृत्य निज-प्रताप-दहनं गन्धर्व्व-पादाहति-
प्रोद्भूतोद्भट-धूळि-काण्ड-चयनं संवीक्ष्य नीराजनम्।

खड्गाखड्गि-ज-विस्फुलिंग-निवहैर् द्विट्-काष्ठ-भेदारवैः
वाद्यानोम्मडि-साळुवेन्द्र-नृपति र्व्वीर-श्रियं लब्धवान् ॥
असूत सूर्य्यो यमुनां पुरेति
कथा पृथिव्यां प्रथिता तथापि ।
श्री-साळुवेन्द्रासि-दिनेश-पुत्री
प्रताप-सूर्य्यं सुषुवे विचित्रम् ॥
प्रताप-तपनोत्फुळ्ळ-कीर्ति-कञ्जेष्ट-दिग्-दळे ।
तारोद-विन्दुके यस्य लेभे हंस-श्रियं शशी ॥
विख्यातेम्मडि-साळुवेन्द्र-नृपतेः श्यामासि-सोमोद्भवा
मध्योन्मग्न-विराजमान-कमला प्रासूत * पत्यामहो ।
एकां शत्रु-करीन्द्र-मस्तक-गलद्-रक्तौघ-शोपा-नदीम्
अन्यां श्री-विबुधेश-सेवित-तटीं सत् कीर्त्ति-भागीरथीम् ॥
पातालोत्पललोचना-कटि-तटे चञ्चद्दुकूल-द्युतिम्
दिक्-कान्ताकुच-कुम्भयोः कलयते मुक्ता-कलाप-श्रियम् ।
देव-स्त्री-कुटिलालकेषु नितरां मन्दार-माला-छविम्
कीर्त्तिः कार्त्तिक-कौमुदी-प्रविमला श्री-साळुवेन्द्राधिप (:) ॥
व्यानम्रामर-पद्मराग-मकुट-ज्योतिश्छटा-रञ्जितौ
पादौ यस्य सरोजयोः कलयतो वालातप-श्री-युजोः ।
शोभां वेणुपुराधिपः स भगवान् श्री-वर्द्धमानो जिनः
पायादिम्मडि-साळुवेन्द्र-नृपतिं भूपाळ-चूडामणिम् ॥

इत्याद्यनेक-विरुदावळी-विराजमानसङ्गि-राय-वोडेयरवर कुमार शुद्ध-सम्यक्त्व-रत्नाकरनेनिसिद श्रीमन्महा-मण्डलेश्वर यिन्दगरस-वोडेयरु संगीतपुरद राज-धानियल्लिद्दु विदिरुनाडु-मुन्ताद समस्त-राज्यवनु प्रतिपालिसुत्त यिद्दद्दिन जयाभ्युदय-शालिवाहन-शक-वरुष १४१८ नेय वर्त्तमानक्के सलुव विरोधि-

* ऐसा ही मूल में है : शायद 'पुत्र्यावहो' की जगह ऐसा हो गया है ।

क्रतु-संवत्सरद वैशाख-सुद्ध ५ आदिवार दलु श्रीमन्-महा-मण्डलेश्वर इन्दगरस-वोडेयर तमगे पुण्यार्थवागि बसदि धर्म-शासनद क्रमवेन्तेन्दरे विदिरूरं वसितय वर्द्धमान-स्वामिगळ अङ्ग-रङ्ग-नैवेद्य-नित्य-नैमित्तिक-जिन-पूजाङ्ग-विनियोग-मुन्ताद-श्री-कार्य्यक्के पूर्व्वदलि बिट्टु-देवस्वागि हिरण्योदक-धारा-पूर्व्वक-वागि-आ-चन्द्रार्क्क-स्थायियागि सर्व्वमान्यवागि बिट्ट भूमिगळ विवर (यहाँ दानकी विगत आती है) ई-बिट्ट-कुळ-स्थलङ्गळ नीरञ्चु नेलनरकलु नट्ट-कल्लु तेगदगळु गडियिन्दोळगाद चतुर्सीमेगे सन्द मक्कि हक्कलु कानु काडाग्ग्म नीर दारि निधि-निक्षेप-अक्षीणि-आगामि-सिद्ध-साध्य-मुन्ताद तेज-मान्यगळनुळ ई-कुळ-स्थळंगळ नेले कासिगे सल्लुव बीडुगळु बिराड-मुन्तागि आचंद्रपुत्र-इल्लदे सर्व्वमान्यवागि आ-वर्द्धमान-तीर्थ-करिगे हिरण्योदक-धारा-पूर्व्वकवागि आ-चन्द्रार्क्क स्थायियागि बिट्टु-देवस्वागि शासनाङ्कितवागि नावु बिट्टु-कोट्ट धर्म्म-शासनद पट्टे यिन्तप्पुदक्के साक्षिगळु ।

आदित्य-चन्द्रावनिलो-इत्यादि ॥

ई-धर्म्मक्के आ रोब्बर तप्पिदवरु ऊर्ज्जन्त-गिरियल्लि सहस्रगो-ब्राह्मणर हतिय माडिद पापक्के होहर वरदूवरे-द्वीपदोळगुळ चैत्य चैत्यालयदोळगुळ जिन-मुनिगळ वधसिद पापके होहर (हमेशाके शापात्मक वाक्यावयव और श्लोक) यिन्दगरस बरह ।

[जिनशासनकी प्रशंसा ।

तौलव देशमें, प्रसिद्ध सङ्गीतपट्टनमें काश्यपगोत्र और सोम कुलके महाराज इन्द्रके पुत्र सङ्गि-राजके पुत्र राजा साळुवेन्द्र शोभायमान था । वह जिनभक्त था और उसकी माता सङ्करम्बा थी । इम्मडि-साळुवेन्द्रके पराक्रमकी प्रशंसा. उसके यशकी प्रसिद्धिका कीर्तन ।

जिस समय इन और अन्य उपाधियों सहित, सङ्गी-राय-वोडेयरका पुत्र, महामण्डलेश्वर इन्दगरस-वोडेयर शाही नगर सङ्गीतपुरमें थे :—(उक्त मितिको),

पुण्यकी प्राप्तिके लिये, उसने निम्नलिखित दान दिया;—जो दान बिदिरूर बस्तिके वर्धमान-स्वामीकी (उक्त) उपासना और पूजाके लिये पहले दिया गया था और फिर छोड़ दिया गया था निम्नलिखित थे;—(यहाँ पूरी पूरी विगत दी हुई है)। ये भूमियाँ, (उक्त) सर्व अधिकारों सहित, वर्धमान-तीर्थंकरके लिये दे दी गयीं थीं।]

[EC, VIII, Sagar tl. No 164]

६५७

मलेयूर;—कन्नड-भग्न।

[शक १४१४ = १४९२ ई०]

[उसी पहाड़ीपर, सप्पिगे-बागलुके पश्चिमकी ओर]

शुभमस्तु शक-वरिष १४१४ नेय वर्त्तमान-परिधावि-संवत्सरद चैत्र-शु १ लू कनक-गिरिस्थ श्री-विजयनाथ ··· ··· ··· यक्षे मलेयू ··· ··· दिमण्ण-सेट्टिय ··· ··· ··· ट्टियरु कनकगिरिय ··· ··· समस्त ··· ··· १ के हत्तु होन्निगे यरडु हण वड्डियलु कोट्टद् अन्तरदलु इप्पत्तु होन्निगे वोप्पत्तु··· ··· ··· ··· १ के लक्ष ··· ··· ··· खं ३ कोळगद ··· ··· ··· दीप आरति-सेवे ··· ···

[मलेयूरके दिमण्ण-सेट्टिके [पुत्र] ··· ··· सेट्टिने कनक-गिरिपर स्थित विजयनाथदेवकी दीप-आरतिकी सेवाके लिये, प्रत्येक १० होन्नुपर २ हणके ब्याजके हिसाबसे, २० होन्नुका दान किया था।]

[EC, IV, Chamarajnagar tl., No. 160]

६५८

होगेकेरी;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक १४२० = १४६८ ई०]

[होगेकेरीमें, पार्श्वनाथ बस्तिके पाषाणपर]

श्रीमत्पार्श्व जिनेन्द्र-भक्तनमल-श्री-पण्डिताचार्य-सत्-।
प्रेमोद्यत्-प्रिय-शिष्यनप्रतिम-नागाम्बात्मजं सद्-गुण-।
स्तोम-श्लाघ्य-तनूजनुत्तम-सु-पद्मा-वल्लभं मल्लिका-।
कामं पद्मण-मन्त्रि-मुख्यनेनेदं साल्वेन्द्र-चित्तोत्सवम् ॥
जिन-पादानति मस्तकक्के जिन-बिम्बालोकनं दृष्टिगा-।
जिन-शास्त्र-श्रवणं स्व-कर्ण-विवरक्के श्री जिन-स्तोत्रमा-।
... पद्मके चिदात्म-भावने मनक्कं पात्र-दानं-कर-।
क्के निजालङ्कृतियागे पद्मण-महा-मन्त्रीशनेम् धन्यनो ॥
चेनेगां-भूर-कुरावलोकनदिनेम्री-पोष्य-वर्गक्के तक्क्।
अनितुण्टी-धन-धान्य-सम्पदमदी साल्वेन्द्रनोल्देन्तु को-।
ट्टनितुं ग्राममनेन्तु धर्म्ममेनगा-चन्द्रार्क्कमप्पन्तु माळ्प्-।
इनिदोन्दे-कडे गण्ड-कज्जमेनितुं निश्चयिसदं चित्तदोळ् ॥
जिन-चैत्यावासमं माडिसि समुचित-सालादियिं कूडे पार्श्वे-।
सन बिम्ब-स्थापनं गेय्दनुदिनमेसेयल् नित्य-पूजाभिधानम्।
मुनि-दानं तप्पदोळियन्दोगेयकेरेयोळप्पन्ते तां कोट्ट शा-।
सनमं तच्छासन-प्रान्तदोळे बरसिदं पद्मणांक-प्रधानम् ॥
शकाब्दे कालयुक्ते नरभट-गणिते १४२० चैत्र-शुक्लाष्टमी-सत्-
... वर्षे जीववारे गजरिपु-करणे शूल-योगे मनोज्ञे।
निर्द्दोषे मीन-लग्ने सु-रुचिरमकरोत् पार्श्वनाथ-प्रतिष्ठाम्।
श्री-पद्मोद्भासि-पद्माकर-पुर-वसतौ पद्मनाभ-प्रधानः ॥

पल-कालं नित्य-पूजा-विधिगे मेपव तोण्टङ्गळं द्याणमं तान् ।
ओलविं नन्दादि-दीप्ति-प्रमुख-सकल-दीपक्के नैमित्तिकक्कम् ।
स्थलमीयाष्टाह्निकादि-प्रमुख-तिथिगमीयापणं पात्र-दानम् ।
नेलेयप्पन्तावगं बेप्पंडिसि वरसिदं वृत्ति यं पद्मनाभम् ॥

कं ॥ अपरिमितमुचितमेम्त्रीय- ।
उपकरणङ्गळने कोट्टु वैदिक-लौकिक- ।
निपुणनं ई अद्मण-सचिवं ।
सुपरीक्षितमागि बरसिदं शासनमम् ॥
पद्मं विनमित-जिन-पद- ।
पद्मं सज्जनरोळेसेव विगत-च्छद्मम् ।
पद्मा-प्रिय-कर-गुण-गण- ।
सद्मं नित्य-प्रसन्न-निज-मुख-पद्मम् ॥

[पार्श्व जिनेन्द्रका पूजक, पण्डिताचार्य्यका शिष्य, नागाम्त्र और ब्रह्मोका पुत्र, पद्माका पति तथा मल्लिकाका प्रिय,—साल्वेन्द्रका कृपापात्र, मुख्य मन्त्री पद्म था। उसकी जैन भक्तिका वर्णन। उसने एक जिन चैत्यालय बनवाया था, उसमें पार्श्वनाथ भगवान्की स्थापना कर दैनिक पूजा और मुनियोंके आहार दानके लिये प्रबन्ध किया था। (उक्त मितिको), मंत्री पद्मनाभने पद्माकरपुरमें पार्श्वनाथकी स्थापना की, और इसमेंसे (उक्त) विभिन्न कार्योंके लिये अलग-अलग हिस्से निकाल दिये, और एक शासन लिख दिया। पद्मकी प्रशंसा।]

[EC, VIII, Sagar tl., No. 163. part II.]

६५६

शत्रुञ्जय;—प्राकृत।

सं० १५···(······ई०)

यह लेख श्वेताम्बर सम्प्रदाय का है।

[G. Buhler, EI, II, No. VI, No. 117 (p. 86), a.]

६६०

पर्वत आबू ;—संस्कृत ।

[सं० १५६६ = १५०६ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

[Asiat. Res., XVI, p. 298, No. XII, a.]

६६१

श्रवणवेल्गोला;—कन्नड़ ।

[शक १४३२ = १५१० ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

६६२

बहादुरपुर (जिला अलवर);—संस्कृत

[सं० १५७३ = १५१६ ई०]

(श्वेताम्बर लेख ।)

[A. Cunningham, Reports, XX, p. 119-120]

६६३

मलेयूर;—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[शक सं० १४४० = १५१८ ई०]

पहला लेख

[उसी पहाड़ीपर, दोणेके उत्तर और वलि-कल्लुके दक्षिण एक चट्टानपर]

श्री ॥ शाकेऽङ्के व्योम-पाथोनिधि-गति-शशि-संख्येश्वरे श्रावणे तत्-
कृष्णे पक्षेऽत्र तद्द्वादश-तिथि-युत-सत्-काव्य-वारे गुरोर्मे ।
आचङ्क्रो कन्यकायां यतिपति-मुनिचन्द्रार्य्य-वर्य्याग्रशिष्यो
लेभे चेतः-कृतार्हत्पद्युग-मुनिचन्द्रार्य्य-वर्य्यस्समाधिम् ॥

तच्छिष्य-वृषभदास-वर्णिना लिखितं पद्यमिदं विद्यानन्दोपाध्यायेन कृतम् । श्री ।

[यतिपति-मुनिचन्द्रार्य्यके मुख्य शिष्यने मुनिचन्द्रार्यके लिये समाधि बनाई ।[1] यह श्लोक उनके शिष्य वृषभदासने लिखा और इसको बनानेवाले थे विद्यानन्दोपाध्याय ।]

दूसरा लेख

[उसी पहाड़ीपर, सेनगण निषधिकी उत्तर-पूर्वकी चट्टानपर]

कालोग्र-गणद **मुनिचन्द्र-देवर** पाद अवर शिष्य **आदिदास** वरसिद

[कोल्लारगणके मुनिचन्द्र-देवके चरणचिह्न उनके शिष्य आदिदासके द्वारा स्थापित किये गये थे ।]

तीसरा लेख

[उसी पहाड़ीपर, मुनिचन्द्र-निषधिके एक पाषाणपर]

ईश्वर-संवत्सरद श्रावण-बहुल श्री-मूलसंघ-कोलाग्र-गणद **मुनिचन्द्र-देव**रिगे निषिधि ••• ••• अवर पादवन्नु अवर शिष्य **आदिदास** ••• **आवियण्ण**गळु माडिसिदरु श्री श्री श्री

श्रीमूलसंघ और कोलाग्र-गणके **मुनिचन्द्र देव**का स्मारक । उनके चरण-चिह्नोंकी स्थापना उनके शिष्य आदिदासने की थी । (यह कार्य) आवियण्णके द्वारा संपन्न किया गया था ।]

[EC,IV, Chamrajnagar tl., no 147, 148 and 161]

---

१ इस श्लोक का उपर्युक्त अर्थ गलत मालूम होता है । श्लोकार्थ.से तो समाधि लेनेवाले स्वयं मुनि चन्द्रार्यके प्रधान शिष्य थे, न कि प्रधान शिष्य ने मुनि चन्द्रार्य के लिये समाधि बनायी । 'समाधि लेने'का अर्थ होता है 'समाधिको प्राप्त हुआ' न कि 'समाधि बनाई' । इसका कर्त्ता भी 'अग्रशिष्यो है।

६६४

कल्लबस्ति;—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[शक १४५२=१५२१ ई०]

[कल्लबस्ति (बगुञ्जी परगना) में, कल्ल-बस्तिके सामनेके एक पाषाणपर]

श्री गणाधिपतये नमः ।

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥
श्रीमानादि-वराहोऽयं श्रियं दिशतु भूयसीम् ।
गाढ़मालिङ्गिता येन मेदिनी मोदते सदा ॥
नमस्तुङ्ग इत्यादि ॥

स्वस्ति श्री जयाभ्युदय-शालिवाहन-शक-वरुष १४५२ सन्द वर्त्तमान । विकृतु-संवत्सरद । चैत्र-शुद्ध १० बुधवारदलु श्रीमतु अरि-राय-गण्डर दावणि बोम्मल-देवियर कुमार श्री-वीर-भैररस-वोडेयरु । कारकळद सिंहासनदल्लि सुख-संकथा-विनोददिं राज्यं प्रतिपालिसुत्तिह कालदलि । अवर तङ्गि काळल-देवियरु । बगुञ्जिय सीमेयनु स्व-धर्मदलु प्रतिपालिसुत्तिह कालदलु तम्म कुल-स्वामि कल्ल-बस्तिय पार्श्व-तीर्थंकररिगे नित्य-धर्म्मक्के बिट्ट भूमिय क्रमवेन्तेन्दरे । तावु तम्म कुमारति रामा-देवि-यरु । कालव माडिदलि । अवर हेसरलि । माडिद धर्म्मं (यहाँ दानको विस्तृत चर्चा आती है) मंगल महा श्री-बोम्मरस बिट्ट हळि ··· यी-भूमियनु नावु नम्म बगुञ्जिय सीमेय पूर्व्व-प्रधानिगळु महाजनङ्गळु हलरु नाडु कोलविळियरु मुन्तादवर् समस्तरु साक्षियल्लि स-हिरण्योदक-दान-धारा-पूर्व्वकवागि धारेय-नेरदु कोट्टेवु आ-चन्द्रार्क-स्तिरवागि कोट्टेवु । इरुगोल वोर ... गदेय कल्ल-बस्तिय देवर अमृतपडिगे पूर्वदल्लि बिट्ट दा नम्म क ··· कालव दल्लि बिट्ट भूमि ख ६ उभय बीजवरि ख ११ ··· ··· भूमियनु देवरिगे बिट्टेवु इदके राजिक ··· ··· वरसिद कल्ल-शासन (हमेशाके अन्तिम श्लोक)

अनुगच्छन्ति ये ··· ··· तुकं कौतुकान्वितम् ।
पदे पदे क्रतु-फलं लभते नात्र संशयः ॥

[जिस समय बोम्मल-देवीके पुत्र वीर-भैररस-वोडेयर कारकलकी गद्दीपर थे : और उनकी छोटी बहिन काळल-देवी वगुञ्जि-सीमेकी रक्षा कर रही थी;— उसने अपने कुल-देवता कल्ल-वस्तिके पारिश्व (पार्श्व)-तीर्थङ्करकी दैनिक पूजाके लिये दान दिया । और जब उसकी पुत्री रामा देवी मर गई तब उसने अग्र-लिखित पुण्य-दान किया :—प्रतिदिन चावलकी २ अञ्जलि देना, पहिले मिले हुए ४० खमें भट्टके १५ ख और मिलाकर कुल ५५ ख; २ हमेशा जलनेके लिये दिये, और वार्षिक २४ ग धातुमें;—साथियोंके सामने (उक्त) भूमिका दान दिया । पाषाणका शासन उसीने उत्कीर्ण करवाया ।]

[Ec, VII, Koppa tl. No .47.]

६६५-६६६

शत्रुंजय—प्राकृत ।

[संवत् १५८७ और शक सं० १४५३ = १५३० ई०]

ये दोनों लेख श्वेताम्बर सम्प्रदायके हैं ।

[G. Buhler, EI. II, No. VI, No. I (P. 42–47), t.]

६६७

हुम्मच—कन्नड़ ।

[बिना काल-निर्देशका, पर लगभग १५३० ई० का (लू० राइस) ।]

[पद्मावती मन्दिरके प्राङ्गणमें एक पाषाण पर]

विद्यानन्द-स्वामिय ।
द्योपन्यास-वाणि घरेयोळ्गेन्दुम

माचद्वादि-गजेन्द्रर ।
मेघोद्धुर-सिंहं-विरुतियन्तेवोलेसेगुम् ॥
[illegible]यतियोळ् **विद्यानन्द**- ।
अतिपति-मुख्य-जात-वाणि विबुधर मनदोळ् ।
सततं रञ्जिसुतिर्क्कुम् ।
अति-विरहित-कान्त-रचित-माघ्यद तेरदिम् ॥
विद्यानन्द-स्वाम्यन- ।
वद्योपन्यास-मुद्रे कविगळ मनदोळ् ।
सद्यं सुखकर **वाणन** ।
गद्यात्मक-काव्यदन्ते रञ्जिसि तोर्क्कुम् ॥
श्री-नञ्जरायपट्टणद् ।
आ-नरपति-**नञ्ज-देव**-भूपन सभेयोळ् ।
[illegible]**नन्दन-मल्लि-भट्टो**- ।
दानमनुषे किडिसि मेपद **विद्यानन्द** ॥
श्रीरङ्ग-नगरकार्थन ।
पेरङ्गिय मतमनळिदु विद्वत्-सभेयोळ् ।
शारदेयं वस-माडिये ।
धारिणिगभिवन्द्यनादे **विद्यानन्दा** ॥
श्री-**सान्तवेन्द्र**-राजन ।
केसरि-विक्रमन वङ्गुरास्थानदोळिन्त् ।
ई-साहित्यमनुर्व्वरे ।
गोसिसुवन्तुसुर्दे वादि-**विद्यानन्दा** ॥
श्री-**साळुव-मल्लि रायन** ।
[illegible]गणेयेनिसि तोर्प्प जाणन सभेयोळ् ।
सासनदोळधिकरादर ।

वासेयनु मनिसिदे वादि-**विद्यानन्दा** ॥
अर्ण्णव-वेष्टित-वसुधा- ।
कर्ण्णोपम-गुरु-नृपालनास्थानदोळेम् ।
कर्ण्णाट-दन्त-कृतिथम् ।
वर्ण्णिसि जस वददे वादि-**विद्यानन्दा** ॥
वासव-समान-भाग्य- ।
श्री-**साळुव-देव-राय**नास्थानिकेयोळ् ।
पुसियेन्दखिळ-वायुरु- ।
शासनमं गेल्दु मेच्चिदे **विद्यानन्दा** ॥
नागरी-राज्यद राजर ।
••• लेनिसुव सभेगळल्लि विबुध-व्रातक् ।
अगणित-वाक्यामृतमं ।
सोगसिन्दीण्टिसिदे वादि-**विद्यानन्दा** ॥
कळशोद्भव-सम-शौर्य्यन ।
बिळिगेय नरसिंह-भूपनास्थानिकेयोळ् ।
वेळगिदे जिन-दर्शनमम् ।
नाळिनास्वक-सूनु-वैरि **विद्यानन्दा** ॥
कारकळ-नगरदाण्मन ।
भैरव-भूपाल-मौळियास्थानदोळेम् ।
सारतर-जैन धर्म्मन् ।
ओरन्तिरे वेळगि मेपदे **विद्यानन्दा** ॥
बिदिरेय भव्य-जनङ्गळ ।
विदमल-चारित्र-भूष्य-हृदयर सभेयोळ् ।
पडे सिद्धान्तित-मतमम् ।
मुडदिं प्रकटिसिदे वादि-**विद्यानन्दा** ॥
नरपति-मणि-मुक्ताञ्चित- ।

नरसिंह-कुमार-कृष्ण-रायन सभेयोळ् ।
पर-मत-वादि-वृन्दमन् ।
ओरसिदे वाग्वलदे वादि-विद्यानन्दा ॥
कोपण-मोदलाद-तीर्थदोळ् ।
अपरिमित-द्रव्यदिं देहाश्रा-विधियिन् ।
स्वपवर्ग्गद फलकागिये ।
विपुलोदय माडि मेरदे विद्यानन्दा ॥
बेळगुळद गुम्मटेशन ।
चळन-द्वयदल्लि जैन-संघक्के महा- ।
कळ मुददे वसन-भूषण- ।
कळधौतद मळेय करदे विद्यानन्दा ॥
श्री-गेरसोप्पेयोळगण ।
...गम-वाद-सक्त-मुनिगळ गणमन् ।
रावदे पालिप कज्ञकि- ।
दी-गुरु-कणियन्ते मेरदे विद्यानन्दा ॥

१ ॥ वीर-श्री-वर-देव-राज-कृत-सत्-कल्याण-पूजोत्सवो

विद्यानन्द-महोदयैक-निलयः श्री-सङ्गि-राजार्चितः ।
पद्मा-नन्दन-कृष्ण-देव-विनुतः श्री-वर्द्धमानो जिनः
पायात् साळुव-कृष्ण-देव-नृपतिं श्रीशोऽर्द्धनारीश्वरः ॥
श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥
वर्द्धमानो जिनो जीयात् गौतमादि-मुनि-स्तुतः ।
...मार्चित-पादाब्जः परमार्हन्त्य-वैभवः ॥
स चतुर्दश-पूर्वेशो भद्रबाहुर्ज्जयत्यरम् ।
दश-पूर्व्व-धराधीश-विशाख-प्रमुखार्चितः ॥

तत्वार्थसूत्र-कर्त्तारमुमास्वाति-मुनीश्वरम् ।
श्रुतकेवलि-देशीयं वन्देऽहं गुण-मन्दिरम् ॥
श्री-कुन्दकुन्दान्वय-नन्दि-संघे
योगीश-राज्येन मतां ··· ··· ।
जाता महान्तो जित-वादि-पत्ताः
चारित्र-वेषा गुण-रत्न-भूषाः ॥
सिद्धान्तकीर्त्तिर्जिनदत्तराय-
प्रणूत-पादो जयतीद्ध-योगः ।
सिद्धान्त-वादी जिन-वादि-वन्द्यः
पद्मावती-मन्त्र ··· ती-कृतेज्यः ॥
जीयात् **समन्तभद्रस्य** देवागमन-संज्ञिनः
स्तोत्रस्य भाष्यं कृतवान**कलङ्को** महर्द्धिकः ॥
अलङ्चकार यस्सर्वमाप्तमीमांसितं मतम् ।
स्वामि-विद्यादिनन्दाय नमस्तस्मै महात्मने ॥
यः प्रमाता पवित्राणां ·· ··· ··· ··· ।
विद्यानन्द-स्वामिनश्च **विद्यानन्द**-महोदयम् ॥
विद्यानन्द-स्वामी
विरचितवान् श्लोकवार्त्तिकालङ्कारम् ।
जयति कवि-विबुध-तार्किक-
चूडामणिरमल-गुण-निलयः ॥
माणिक्यनन्दी जिनराज-वाणी-
प्राणाधिनाथः पर-वादि-मर्द्दी ।
चित्रं **प्रभाचन्द्र** इह क्षमायम्
मार्त्तण्ड-वृद्धौ नितरां व्यदीपित् ॥
सुखी ··· **न्यायकुमुद चन्द्रोदय**-कृते नमः ।
शाकटायन-कृत्सूत्र-न्यास-कर्त्रे व्रतीन्दवे ॥

न्यासं जिनेन्द्र-संज्ञं सकल-बुध-नुतं पाणिनीयस्य भूयो-
न्यासं शब्दावतारं मनुज-तति-हितं वैद्य-शास्त्रं च कृत्वा ।
यस्तत्त्वार्थस्य टीकां व्यरचयदिह तां भात्यसौ **पूज्यपाद-** ।
स्वामी भूपाल-वन्द्यः स्व-पर-हित-वचः-पूर्ण-दृग्-बोध-वृत्तः ॥
वर्द्धमान-मुनीन्द्रस्य विद्या-मन्त्र-प्रभावतः ।
शार्दूलं स्व-वशीकृत्य **होय्सळो**ऽपालयद्धराम् ॥
होय्सळान्वय-भूपानां वृत्त-विद्या-प्रदायिनः ।
श्री-वर्द्धमान-योगीन्द्र-मुखास्ते गुरवोऽभवन् ॥
वासुपूज्य-व्रती भाति भव्य-सेव्यो बुधार्च्चितः ।
सिद्धान्त-वार्द्धि-शीतांशुः ··· रित्राधार-विग्रहः ॥
रिपु-वर्द्धन-**बल्लाळ-राय**-वन्द्य-क्रमाम्बुजः ।
अनेकान्त-नयोद्भासी **श्रीपालो** राजते सुखी ॥
भूभृत्पादानुवर्त्ती सन् राज-सेवा-पराङ्मुखः ।
संयतोऽपि च मोक्षार्थी ··· ··· **पात्रकेसरी** ॥
त्रिलोकसार-प्रमुख ··· ···
··· ··· ··· भुवि **नेमिचन्द्रः** ।
विभाति सैद्धान्तिक-सार्व्वभौमः
चामुण्ड-रायार्च्चित-पाद पद्मः ॥
रेजे **माधवचन्द्रो**ऽसौ निराकृत-मधूत्सवः ।
चैत्याश्रयी शुचि-रतिस्सदा श्रावण-तत्परः ॥
जीयाद**भयचन्द्रो**ऽसौ मुनिस्सिद्धान्त-वेदिनाम् ।
चरमः **केशवार्य्येण** ··· ··· सत्य-पाणाश्रयः ॥
··· ··· ··· स-राज-सूर्यो
···या-परः श्री- **जयकीर्त्ति-देवः** ।
विराजते शास्त्र-विदां वरेण्यः
सः···रमालिङ्गित-रम्य-गात्रः ॥

••• ••• शासन-श्रीमन् ••• ••• सेन इवावनौ ।
राजते **जिलचन्द्रार्य्यं** ••• ••• ••• यः ॥
आचार्य्य-वर्य्यं ••• ••• विभाति विजिते ••• •• ।
कुन्दनन्दी जिनेन्द्रोक्तसंहिता-शास्त्र-विद्-वरः ॥
वसन्तकोर्त्तिर्व्वन-देश-वासी
विशालकोर्त्तिश्शुभकोर्त्ति-देवः ।
श्री-**पद्मनन्दी मुनि-माघनन्दी** ॥
जटा-प्रसिद्धामल-**सिंहनन्दी** ॥
व्यतिभाते गुणाधीशो धीमान् **चन्द्रप्रभो मुनिः** ।
वसुनन्दी माघचन्द्रो वीरनन्दी धनञ्जयः ।
वादिराजो धराधीश-वन्दितांघ्रि-सरोरुहः ॥
षट्-तर्क-वादि-जनताभय-दान-दक्षः
साहित्य-नन्दन-वनालि-विकासि-चैत्रः ।
श्री-**धर्म्मभूषण**-गुरुर्म्मुनिराज-सेव्यो
भट्टारको जयति सत्कविता-कलेन्दुः ॥
राजाधिराज-परमेश्वर-**देव-राय**-
भूपाल-मौळि-लसदङ्घ्रि-सरोज-युग्मः ।
श्री-वर्द्धमान-मुनि-वल्लभ-मौरव-मुख्यः
श्री**धर्म्मभूषण**-सुखी जयति क्षमाढ्यः ॥
विद्यानन्द-स्वामिनस्सूनु-वर्य्यस्
सञ्जातस्ते **सिंहकीर्त्ति-व्रतीन्द्रः** ।
ख्यातश्श्रीमान् पूर्ण-चारित्र-गात्रो
दान-स्वर्भू-धेनु-मन्दार-देश्यः ॥
श्वेत-वर्णाकुलो भूमौ सर्व्वदा मरुदावृतः ।
सुदर्शनो **मेरुनन्दी** राजहंस-परिष्कृतः ॥
वर्द्धमानः प्रभाचन्द्रोऽमरकीर्त्तिर्गुणाकरः ।

विशालकीर्त्तिश्श्री-नेमिचन्द्रस्सिद्ध-गुणा इव ।
बामात्यश्च्छपतेर्द्दिने तत-नयो वङ्गाळ्य-देशावृत-
श्रीमद्-दिल्लि-पुरेड्-महम्मुद-सुरित्राणस्य माराकृतेः ।
निर्ज्जित्याशु सभावनौ जिन-गुरुर्व्बौद्धादि-वादि-व्रजम्
श्री-भट्टारक-सिंहकीर्त्ति-मुनि-रा ... द्यैक-विद्या-गुरुः ॥
विशालकीर्त्तिर्व्वादीन्द्रः परमागम-कोविदः ।
भट्टारको बलात्कार-गणाधीशो महा-तपः ॥
सिकन्दर-सुरित्राण-प्राप्त-सत्कारवैभवः ।
महा-वाद-जयोद्भूत-यशो-भूषित-विष्टपः ॥
श्री-विरूपाक्ष-रायस्य श्री-विद्यानगरेशिनः ।
सभायां वादि-सन्दोहं निर्ज्जित्य जय-पत्रकम् ॥
स्वीकृत्य च महा-प्रज्ञा-बलेन बुध-भू भुजैः ।
...तं सरस्वती-मूल-शासनं वा सदोज्वळम् ॥
देवप्प दण्डनाथस्य नगरे श्रीमदारगे ।
प्रकाशित-महा-जैन-धर्म्मोऽभूद् भूसुरार्च्चितः ॥
विशालकीर्त्तीश्श्री-विद्यानन्द-स्वामीति शब्दितः ।
अभवत् तनयस् साळ्व-मल्लिराय-नृपार्च्चितः ॥
आगम-त्रय-सर्व्वज्ञः कवित्व-गुण-भूषितः ।
नानोपन्यास-कुशलो वादि-मेघ-महा-मरुत् ॥
स्वामि-विद्यादिनन्दस्य भारती भाललोचनः ।
सूनुर्द्देवेन्द्रकीर्त्याख्यो जातो भट्टारकाग्रणीः ॥
श्रीमद्देवेन्द्रकीर्ति-व्रति-पद-नख-रुग्-मञ्जरी मंगलं मे
भूयात् तत्पादपार्श्वे मम नुति-विनमन्मस्तके मल्लिकाभा ।
नेत्रे कर्प्पूर-पा ... वदन-सरसिजे स्फार-पीयूष-धारा
कण्ठे मुक्ता-कलापस्त्ववयव-निकरे चन्द्र-युक्-चन्दन-श्रीः ॥
आनन्दबाष्प-सलिलैरपि भावयित्वा

भाल-स्थली-विरचिताञ्जलि कुट्मलेन ।
देवेन्द्रकीर्त्ति-चरणे मुखमर्प्पयामि
कामातुरः कुच-भरे स यथा तरुण्याः ॥
यत्पादाब्ज-नखेन्दु-कान्ति-लहरी-स्थानं जगत्पावनम्
यत्पादाब्जरजो-विलेपनमहो संसार-सन्ताप-हृत् ।
यत् कारुण्य-कटाक्ष-वीक्षणमपि क्षीरोद-पट्टाम्बरम्
यत् प्रेम् ··· सुधाशनं भव-भवे सोऽस्तु प्रियो मे गुरुः ॥
श्रीमान् देवेन्द्रकीर्त्तिर्य्यति-पति-मुकुरो मन्त्र-वादीभ-सिंहः
साहित्याम्भोधि-सूर्य्यो विमलतरतपः-श्री-समालिङ्गिताङ्गः ।
विद्यानन्दार्य्य-सूनुः कवि-विबुध-महा-पारिजातो विभाति
प्रायो भूताचलेन्द्रः पर-हित-चरितः शारदा-कर्ण्णपूरः ॥
श्री-कृष्ण-राय-सहजाच्युत-राय-मौलि-
विन्यस्त-पाद-कमलः कमनीय-मूर्त्तिः ।
देवेन्द्रकीर्त्ति-मुखिराड् जयति प्रसिद्धः
स्याद्वाद-शास्त्र-मकराकर-शीतरोचिः ॥
श्रीमद्देवेन्द्रकीर्त्ति-व्रतिप जिन-मताम्भोजिनी-भासि-भानो
सद्विद्या-नाथ-पाथोनिधि-विशद-शरत् ··· र-पीयूषभानो ।
एनो-वन्धासिधेनो मयि कुरु करुणां वाक्-सुधा-कामधेनो
विद्यानन्दार्य्य-सूनो गुण-मणि-विलसद्-रोहणादीन्द्र-सानो ॥
वादावसान-विनमद्-वर-वादि-वक्त्र-
कञ्जात-जात-मुदिताश्रुज-बिन्दु-वृन्दैः ।
मुक्ताफलैरिव मुहुः परिपूज्यमानम्
देवेन्द्रकीर्त्ति-चरणं शरणं व्रजामि ॥
सन्मार्गासक्त-चित्तं कुवलय-जनितामोद-सद्-वृद्धि-हेतुम्
सद्-वृत्तं चारु-बोधोज्वल-विबुध-नुतं सत्-कळानामधीशम् ।
क्षोणीभृत्-तुङ्ग-मौळि-प्रणिहित-विलसत्-पादमुच्चैरजस्रम्

विद्यानन्द-यतीन्द्रामृतकरमवतु श्री-पतिर्व्वर्द्धमानः ॥
वादि-प्रोद्दाम-वाचा-तिमिर-समुदय-प्रोज्वलद्-बाल-भानुस्
त्रैलोक्याखर्व्व-गर्व्व-स्मर-विपिन-महा-दीप्र-तेजः-कृशानुः ।
शास्त्राम्भोराशि-ताराधरमण-सदृश-देवेन्द्रकीर्त्यार्य्य-भानुर्
व्विद्यानन्दार्य्य-वर्य्यो जगति विजयते धर्म्म-भूमीध्र-सानुः ॥
साकारो वा भाति सौजन्य-राशिस्-
सर्व्वज्ञो वा मर्त्य-वेषस्समिन्धे ।
सञ्चारी वा सर्व्व-शास्त्र-प्रपञ्चः
विद्यानन्द-स्वामि-वर्य्यो विभाति ॥
का सर्व्वं विशदीकरोति विनतापत्यं भवेत् किं हरेः
भुंक्ते पूत-हविश्च कः खग-मृगादीनां च को वाश्रयः ।
क्वास्ते देव-ततिः प्रथा क्व नु कुतस्सन्तो भजन्ते मुदम्
विद्यानन्द-मुनावनङ्ग-विजयिन्युद्वीक्ष्यमाणे सति ॥
कियानं दमुनाः वनं गवि जयिनि ॥
देवेन्द्रकीर्त्तिर्जिन-पूजनेषु
विशालकीर्त्तिर्व्विबुधाधिपेषु ।
विश्वावनी-वल्लभ-पूज्य-पादो
विद्यादिनन्दो जयताद् धरित्र्याम् ॥
विद्यानन्द-स्वामि-शास्त्रोपमायै
शेषश्शम्भुं सेवते हार-भावात् ।
प्रायो लक्ष्म्यालिङ्गितांसं पुमान्सम्
पर्य्यङ्कत्वं प्राप्य साक्षादुपास्ते ॥
व्याचिख्यासति वैदुषी-भर-लसद्-व्याख्यान-कोलाहले
विद्यानन्द-मुनौ सभासु विदुषां कान्यस्य सूरेः कथा ।
खाद्योति किमुदेति कान्तिरुदिते राका-सुधाधामनि
प्रौढे भास्वति भासि भाति ••• दैवी कथं दीधितिः ॥

वीर-श्री-वर-**देव-राय**-नृपतेस्सद्-भागिनेयेन वै
पद्माम्बा ••• गर्भ-वार्द्धि-विधुना राजेन्द्र-वन्द्याङ्घ्रिणा।
श्रीमत्-**साळुव-कृष्ण-देव**-धरणीकान्तेन भक्त्यार्च्चितो
विद्यानन्द-मुनीश्वरो विजयते स्याद्वाद-विद्या-फलः ॥
श्रीम**द्विद्यानन्द-स्वामिन**ममराचलं मन्ये।
द्विज-विबुध-कवि-गुरूणां सन्दोहस्सेवतेऽन्यथा कथं भुवने ॥
किं वाणी चतुराननः किमथवा वाचस्पतिः किन्वसौ
विद्यानां विभवस् सहस्रवदनः साक्षादनन्तः किमु।
इत्थं संसदि साधवस्समुदितास्संशेरते सादरम्
विद्यानन्द-मुनौ बुधेशभवन-व्याख्यानमातन्वति ॥
यो विद्यानगरी-धुरीण-विजय-श्री-**कृष्ण राय**-प्रभोर्
आस्थाने विदुषां गणं समजयत् पञ्चाननो वा गजम्।
सद्-वाग्भिर्नखरैरुदात्त-विमल-ज्ञानाय तस्मै नमो
विद्यानन्द-मुनीश्वराय जगति प्रख्यात-सत्-कीर्त्तये ॥
विद्यानन्द-स्वामिनोऽभूत् सधर्म्मा
विख्यातोऽयं **नेमिचन्द्रो मुनीन्द्रः**।
भू-त्राताम्भोज-वैकासकारो
[•••] शास्त्राम्भोराशि-संवृद्धिकारी ॥
पोम्बुर्च्य-पार्श्वनाथस्य वसतिं श्री-त्रि-भूमिकाम्।
कृत्वा प्रतिष्ठां महतीं सन्तनोति स्म भक्तितः ॥
विद्यानन्द-स्वामिनः पुण्य-मूर्त्तेः
जीयात् सूनुश्श्री-**विशालादिकीर्त्तिः**।
विद्वद्वन्द्यः सर्व-शास्त्रावतारो
माद्यद्-वादीभेन्द्र-संघात-सिंहः ॥
वादि-**विशालकीर्त्ति**-मुनि-राड् विबुध-स्तुत-सद्-गुणोदयः
क्ष्माधिप-संसदप्रतिम-वाक्य-निराकृत-सूरि-सन्ततिः।

स्यात्पद्-लाञ्छनान्वित-जिनागम-भावन-पूत-मानसो
भाति नृपाल-पूजित-पदः स-दयो जित-पुष्पसायकः ॥
जीयाद**मरकीर्त्त्याख्य**-भट्टारक-शिरोमणिः ।
विशालकीर्त्ति योगीन्द्र-सधर्म्मा शास्त्र-कोविदः ॥
विशालकीर्त्तियोगीन्द्र-भट्टोदय-महीभृतः ।
देवेन्द्रकीर्त्ति-मुनि-राड् बालार्क्क इव भासते ॥
श्री-भैरवेन्द्र-वंशाब्धि-राज-**पाण्ड्य**-नृपार्च्चितः ।
जीयाद् देवेन्द्रकीर्त्यर्य्यो **विद्यानन्द**-महोदयः ॥
देवेन्द्रकीर्त्तिस्सिद्धार्थस् तद्वाणी प्रियकारिणी ।
धीमांस्तदुदितो वर्ण्णी वर्द्धमानो न किं भवेत् ॥
निर्भ्मंगनात्म-निबन्धनस्स-करणो निर्व्वाण-वाञ्छान्वितो
बाह्यार्त्थागमाभिलाष-रहितो दूरीकृतोत्कल्पनः ।
स्व-च्छन्द-स्व ··· ··· ना भद्राङ्ग-जद्म्या परम्
क्षित्यां मत्त-महा-करीव जयति श्री-**वर्द्धमानो मुनिः** ॥
ख्यात-श्री-वर्द्धमानोऽभूद् वीत-संसार-विभ्रमः ।
ज्ञातानुयोग-शास्त्रार्त्थो जातरूपा··· ··· स्वरः ॥
यति ··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· दन ।
नूत-सद्-गुण-सन्तान-पूत-चिद्-भावना-मतिः ॥
जयति भुजबल-श्रीरार्य्य ··· सज्ञयस्य
जिन-पति-मत-शुद्धिः स्वर्ग-मोक्षैक-सिद्धिः ।
जन-हित-मित-वाणी-लुप्त-कन्दर्प-त्राणी
नव-तपन ··· ··· ··· ··· ··· ··· ॥
··· **दिन्द्रकीर्त्ति**-योगीन्द्र **विद्यानन्द**-महोदय ।
वर्द्धमान-बुधाराध्य भूयो भूयो नमोऽस्तुते ॥
सत्पुत्रो-जननीं निदाघ-तृषितः शैत्यं जलं कामिनी
कान्तं वारवधूः धनं यतिरतिः ··· ···यितं चातकः ।

मेघं भूरमणो नयं युधि यथा ध्यायत्यजस्रं तथा
विद्यानन्द-सुखीश्वरस्य चरणाम्भोजं मदीयं मनः ॥
वन्दे पद्मावतीं देवीं धारिणीन्द्र-मनः-प्रियाम् ।
श्री-सिन्धु ··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ॥
देवेन्द्रकीर्त्ति-मुनिराज-तनूभवेन
श्री-**वर्द्धमान-सुखिना** गदितानि भान्ति ।
पद्यानि सद्-गुण-युतानि महोज्ज्वलानि
विद्वत्-कवीन्द्र-गल-कर्ण्ण-विभूषणानि ॥
··· ··· दया धर्म्मस्तावत् सद्-धर्म-शासन ।
श्रीरस्तु जगतां राजा धरां न्यायेन रक्षतु ॥
भान्तु षड्-दर्शनान्यु ··· ··· ··· ··· ॥
(वही अन्तिम श्लोक) ।
वर्द्धमान-मुनीन्द्रेण विद्य ··· ··· बन्धुना ।
देवेन्द्रकीर्त्ति-महिता लिखिता ··· ··· ··· ॥

[विद्यानन्द-स्वामीकी वाणीके तर्कसे वादि-राजेन्द्र भयभीत रहते हैं। विद्यानन्दि-व्रतिपतिके मुखसे निकली हुई वाणीको विद्वान् लोग भाष्य समझते हैं। उनके तर्ककी प्रशंसा। नञ्जराय पट्टणके राजा नञ्ज-देवकी सभामें उन्होंने नन्दन-मल्लि-भट्टका मुँह बन्द करके अपनेको 'विद्यानन्द' प्रसिद्ध किया। श्रीरङ्गनगरके कार्य्य (प्रवर्द्धक) यूरोपियनके मतको ध्वस्त करके एक विद्वत्परिषद्में उनने शारदा (सरस्वती) को बुलाया था। उन्होंने सातवेन्द्र (या शान्तवेन्द्र) राजके अनुपद्रव-दरबारमें दुनियाँ में प्रसार पा जानेवाली एक कविता पढ़ी थी। साल्व-मल्लि-रायकी एक विद्वत्परिषद्में अच्छे वादियोंको परास्त किया। गुरु-नृपालके दरबारमें एक कर्णाटक ग्रन्थका निर्म्माण करके उन्होंने प्रसिद्धि प्राप्त की। साल्व-देव-राय के दरबारमें सब वादियोंके सिद्धान्तोंको मिथ्या सिद्ध करनेमें उन्होंने महती सफलता प्राप्त की थी। नगरी राज्यके राजाओंकी सभाओंमें उन्होंने विद्वानोंको

अपनी वाणीके अमृतकी मधुरताका पान कराया। बिल्लिगेके राजा नरसिंहके दरबारमें उन्होंने जिनदर्शनको स्पष्ट रीतिसे समझाया। कारकल-नगरके शासक भैरवके दरबारमें उन्होंने जैन-धर्मकी बहुत अच्छी प्रभावना की थी। बिदिरेके जैनोंकी सभाओं की सम्पति प्राप्त करनेके लिये उन्होंने सिद्धान्तका प्रतिपादन किया। नरसिंहके पुत्र कृष्ण-रायके दरबारमें तुमने अपनी वाणीके बलसे परमतवादियोंके वर्णको हटा दिया। कोपण तथा अन्य दूसरों तीर्थोंमें तुमने महोत्सव करके अपनेको विद्यानन्द प्रसिद्ध किया। बेळगुळके गोम्मटेशके दोनों चरणोंमें उन्होंने वर्षाके समान जैन संघके ऊपर बड़े प्रेमसे एक कपड़ों, आभूषणों, सोना और चान्दीका 'महाकल' डाला। गेरसोप्पेमें 'योगागमकी चर्चामें लगे हुए मुनिगणको मुख्य गुरुके तौरपर उनको सहायता देनेका कार्य अपने हाथमें लिया था।

वर्धमान जिन—जिन्हें वे देव-राज, मल्लि-राज और कृष्ण-देव पूजते थे—साळुव-कृष्ण-देवकी रक्षा करें।

जिन शासनकी प्रशंसा। वर्द्धमान स्वामीकी स्तुति। चतुर्दशपूर्व्वियोंमें सिर-मौर भद्रबाहु थे, जिनकी पूजा विशाख तथा अन्य दशपूर्वी करते थे। तत्वार्थसूत्रके कर्त्ता उमास्वाति-मुनीश्वर हुए। जिनदत्त-रायके द्वारा पूजित सिद्धान्तकीर्त्ति थे, जिन्होंने एक विधिसे पद्मावतीको भी मन्त्रमुग्धकर दिया था। समन्तभद्रके देवागम-स्तोत्रका भाष्य बनानेवाले महर्धिक अकलङ्क हुए। श्लोक-वार्त्तिकालङ्कारके रचयिता विद्यानन्द-स्वामी हुए। माणिक्यनन्दी जिनराज-वाणीके पति, विरोधी वादियोंके परास्त करनेवाले थे। प्रभाचन्द्रने प्रमेयकमलमार्त्तण्ड और न्यायकुमुद-चन्द्रकी रचना की थी तथा शाकटायनके सूत्रोंपर न्यास बनानेवाले भी यही थे। पूज्यपाद-स्वामीने जैनेन्द्र नामका न्यास बनाया था, पाणिनीके सूत्रोंपर 'शब्दावतार' नामक न्यासका भी प्रणयन किया था, वैद्य-शास्त्र तथा तत्त्वार्थकी एक टीका (सर्वार्थसिद्धि नामकी) भी बनायी थी। वर्द्धमान मुनीन्द्र वे ही थे जिनके मंत्रके प्रभावसे होय्सलने बाघको वश किया था तथा फिर दुनियांपर शासन किया था। वासुपूज्य-व्रती हुए। बल्लाल-रायसे पूजित श्रीपाल सुखी हुए। पात्रकेसरी

हुए। त्रिलोकसार तथा अन्य दूसरे ग्रन्थोंके कर्त्ता नेमिचन्द्र सैद्धान्तिक-सार्व्वभौम हुए, जिनके चरण चामुण्डराय पूजते थे। माघवचन्द्र, अभयचन्द्र, जिनचन्द्रार्य्य, इन्द्रनन्दि, वसन्तकीर्त्ति, विशालकीर्त्ति, शुभकीर्त्ति-देव, पद्मनन्दि-मुनि, माघनन्दि तथा सिंहनन्दी हुए। चन्द्रप्रभ-मुनि, वसुनन्दि, माघ-चन्द्र, वीरनन्दि, धनञ्जय, वादिराज हुए। पट्-तर्क्कवक्ता धर्म्मभूषण-गुरु, जिनके चरण-कमलोंको राजाधिराज परमेश्वर, राजा देवराय नमन करता था। विद्यानन्द-स्वामीके एक अत्युत्तम पुत्र सिंहकीर्त्ति-व्रतीन्द्र हुए थे। अश्वपतिके समयमें यही एक महान् तार्किक था जिसने दिल्लीश्वर महमूद सुरित्राणकी सभामें बौद्ध और दूसरे वादियोंको परास्त किया था। विशालकीर्त्तिने जो एक अच्छे वक्ता थे और बलात्कारगणके मुख्य अग्रणी थे, सिकन्दर सुरित्राणसे अच्छा सन्मान पाया था। उन्होंने विद्यानगरके शासक विरूपाक्ष-रायकी सभामें परवादियोंके समुदायको परास्त कर एक विजयपत्र (a certificate of victory) प्राप्त किया था। देवप्प दण्डनाथके नगर आरगमें उन्होंने जैनधर्म्मका प्रतिपादन किया था और ब्राह्मणोंने उनका सन्मान किया था। विशालकीर्त्तिके विद्यानन्द-स्वामी नामका एक पुत्र था, जिसका साल्व-मल्लि-राय आदर करते थे। वह पुत्र तीनों आगमोंमें (धवल, जयधवल और महाबन्ध ही तीन आगमोंके नामसे प्रतीत होते हैं।) पारङ्गत, काव्यके गुणोंसे अलङ्कृत, कई टीकाओंके बनानेमें प्रवीण, परवादीरूपी मेघोंके लिये प्रचण्ड वायुके समान था।

स्वामी-विद्यानन्दके देवेन्द्रकीर्त्ति नामका एक पुत्र उत्पन्न हुआ था, जो भट्टारकोंमें अग्रणी था। उनकी स्तुति व प्रशंसा। उनके चरण-कमल कृष्ण-रायके भाई अच्युत-रायके मुकुटसे पूजित थे।

विद्यानन्द-मुनीश्वर राजा साळुव-कृष्ण-देवकी भक्तिसे पूजित थे। साळुव-कृष्ण-देव राजा वीर-श्री-वर देवरायकी बहिनके पुत्र थे, पद्माम्बा उनका नाम था।

विद्यानन्द-स्वामीके एक सधर्म्मा थे, जिनका नाम नेमिचन्द्र-मुनीन्द्र था। उन्होंने पोम्बुर्च्चमें पार्श्वनाथकी वसति (मन्दिर) तीन मञ्जिलकी बनवायी थी और बड़ी भक्तिके साथ इसकी प्रतिष्ठा की थी।

विशालकीर्त्तिके सधर्मा अमरकीर्त्तिका उल्लेख । विशालकीर्त्ति-योगीन्द्र-भट्टसे देवेन्द्रकीर्त्तिकी उत्पत्ति । देवेन्द्रकीर्त्यार्य्य—जो पाण्ड्य राज्यसे पूजित थे—वर्द्धमान-... उत्पन्न हुए थे । उनकी प्रशंसा ।

देवेन्द्रकीर्त्ति मुनिराजके पुत्र वर्द्धमान-मुखीके द्वारा निर्मित श्लोक बहुत अच्छे हैं । जबतक पृथ्वीपर दया और 'धर्म्म' है तबतक यह 'धर्मशासन' स्थिर रहे ।

रामचन्द्रके समयका यह धर्म शासन है ।

विद्यानन्दके सम्बन्धी वर्द्धमान-मुनीन्द्रके द्वारा लिखित तथा देवेन्द्रकीर्त्तिके द्वारा आहत और सम्मति-प्राप्त यह धर्मशासन हमेशा स्थिर रहे ।]

[EC, VIII, Nagar tl., No. 46]

६६८

मद्दगिरि;—संस्कृत तथा कन्नड़-भग्न ।

[वर्ष खर = १५३१ ई० ? (लू० राइस) ।]

[मद्दगिरि (दोड्डेरि परगना) में, जैन-बस्तिमें एक पाषाणपर]

श्रीमत्परम-गम्भीर-इत्यादि ॥

क(ख)र-संवत्सरद वैशाख-शुध (द्ध) ५ लु जिनसेन-देवर शिष्यराद माणिक्य ··· ळचिसेनरु मल्लिनाथ-स्वामि ··· ··· ··· गोवि-दानि-मयर हेण्डति चयम मल्लिनाथ-देवरिगे अमृत-पडिगे आहार-दानके ··· ···

[जिन शासनकी प्रशंसा । (उक्त सालमें), जिनसेन-देवके शिष्य माणिक्य ··· लचिसेन, मल्लिनाथ-स्वामिके ··· ··· ··· ··· ··· गोवि-दानिमयकी स्त्री चयमने (उक्त) भूमि पूजाके लिये मल्लिनाथ-देवको प्रदान की ।]

[EC, XII, Maddagiri tl,. No. 14]

६६९—६७०—६७१

श्रवणबेलगोला;—संस्कृत तथा कन्नड ।

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

६७२

नरलै;—संस्कृत

[सं० १५९७ = १५४० ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

[Bhavnagar ins., p. 140–143, t. & tr.]

६७३

अञ्जनगिरि;—कन्नड-भग्न ।

[शक १४६६ = १५४४ ई०]

(अञ्जनगिरिमें एक पाषाणपर)

श्री शान्तिनाथाय नमः ॥ निर्व्विघ्नमस्तु ॥ शुभमस्तु ॥

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

स्वस्ति श्री-**मूलसङ्घदेशीगण पुस्तकगच्छ कुण्डकुन्दान्वयद** **यिङ्गुलेश्वर-बळिय** श्रीमद् **बेळुगुल-पुर**वराधीश्वर गुम्मट-जिनेश्वर-पादपद्ममत्तमधुकरायमानराद तत्कालधर्म्मप्रवर्त्तकराद धर्म्माचार्य्यर बिरुदावलि येन्तेन्दोडे ॥ पंडित-पुण्डरीक-कुलमं परिबोधिसियुर्व्वी-कोर्म्म-उद्दण्ड-कुवादिहृत्-तममनोडिसि कूडे दिगम्बर-प्रभा-मण्डन-वृत्तमं तळेदु भव्य-रथाङ्गमनोवुतावगं **पण्डित-देव**-सूर्य्यनेसेदं नयवाग्-रुचियिं निरन्तरम् ॥ स्वस्ति श्रीमद्-राय-राज-गुरु-मण्डलाचार्य्य महावाद-वादीश्वर रायवादि-पितामह सकल-विद्वज्जन-चक्रवर्त्तिगळुं **बल्लालराय-जीवरक्ष-पालका**द्यनेक-बिरुदावलि-विराजमानरुमप्प **श्रीमच्चारुकीर्त्ति-पण्डित-देव**रुगळ

प्रशिष्यराद तच्छिष्य श्रीमदभिनवचारुकीर्त्ति-पण्डित-देवरगळ प्रियशिष्यराद तस्याग्रशिष्य श्रीमच्चारुकीर्त्तिपण्डित-देवरगळ सतीर्थ्यराद श्रीमच्छान्ति-कीर्त्ति-देवर [ग] ळु शक-वर्ष ॥ १४६६ सन्द वर्त्तमान क्रोधि संवत्सरद कार्त्तिक शुध १५ लु बरसिद शिला-शासनद क्रमवेन्तेन्दोडे तम्म गुरु श्रीमदभि-नव-चारुकीर्त्ति पण्डित-देवरगळु । कलि-काल-धर्म्म-तीर्थ-प्रवर्त्तन-निमित्त-वागि सुवर्न्नवित-नदियिन्द स्वयं-प्रत्यक्षरागि शान्ति-तीर्थेश्वररु अनन्तनाथ-स्वामियु शक-वरुष १४५३ नेय विकृतु-संवत्सरद चैत्रदलु विजे-माडलागि अञ्जनगिरिय-अग्र-निवासियागिर्द्द शान्तिनाथ-स्वामिय बसदिगे विजेमाडिसि गिरि-यग्रदल्लि दारुमयद-बसदिय माडिसि खर-संवत्सरद चैत्रमासदल्लि स्वानुबराद कोणसनगरद (गुड्ड) शान्तोपाध्यायर कय्यिन्द प्रतिष्टेय माडिसि शिला-मयवाद बसदिय माडिसेन्दु बुद्धि गविसलागि आल्लन्द मुन्दे क्रोधि-संवत्सरद कार्त्तिक शु १५ नेलेगे कलु-गेलस हालदारेगल नर्डासिद विवर नञ्जरायपट्टणक्के सलुव ... वृतन्हळि-मलगनकेरेय समस्त-हलरिं कलु-गेलसक्के सन्द होन्नु ग २०० हनसोगेय आदि-श्री-अव्वगळु अम्मन-होसहळ्ळिय भुवनलि-श्री-अव्वगळिन्द गर्व्व-गृहव गैवल्लि कलु-गेलसक्के सन्दतु ग ३० होन्नु तम्म गुरु श्रीमच्चारुकीर्त्ति-पण्डित-देवरगळिगे तानित्तण्डक्के मूरु हालदारे मध्यवागिललि वोन्दु-होत्तिन नैवेद्यक्के शेल सन्दतु ग ५० आहार-दानक्के शेल सन्दतु ग [५०] । शुभकृतु-संवत्सरद पा (फा) ल्गुन शु १५ लु अञ्जनगिरिय शान्तीश्वरगे विद्दिरे सीताळ-मळिगेय समस्त हलरु कलडिग-हलरु नानादेसिय-हलरु माडिद धर्म्म । [नू] आड कट्टिद कालु-नडे बोण्डक्के ग ०-१ वनु आहार-दानक्के कोडुवेवु येन्दु बरसिद ई धर्म्म-शासन धी-धर्मक्के तप्पिदवरु गो ब्राह्मर कोन्द दोषक्के होवरु [॥] (बायीं ओर) शक वरुषं १४६५ नेय शुभकृतु-संवत्सरद चैत्र शुद्ध १३ वुधवार वृषभ-लग्न (ग्न) दल्लि गुरु तण्ड देहारगळु कुल-प्रतिष्टे यायितु ॥ दाजर्णलेगे हल्लि बयल गद्देय क्रयद मौल्य ग ७० कोलायरु होस गद्दे गेंदुदक्के कोट्टदु ग ५० उभयं वेच ग १२० क्के आदाय श्रीमच्चारुकीर्त्ति-पण्डित-देवर गळ शिष्यरु हनसोगेय आदि-श्री-अव्वगळु भुवनलि-श्री-अव्वगळि ग २४ बस-

वप [त्न] द् अनन्तमति-अव्वगळु नेमि-श्री-अव्वगळिं सन्दद्दु ग २४ मुड्डि-सट्टिय विजेयू [अ]-श्री-अव्वगळिं सन्दद्दु ग १० मलुगनइळिय आय्यकगळिं सं ग १२ हारुव-सट्टिय विजेय-ण-शट्टरिं ग ३० कण्णनूर देव-रम्म-शट्टियरिं ग १२ [मु] मुं [डि] य अ [र] स ··· ··· (शेप भूमिमें गड़ा हुआ है) : (दायीं ओर) [पंक्ति ६९—१०७ में तीन वे ही अन्तिम श्लोक हैं जो 'स्वदत्तां परदत्तां, दानपालनयोर् तथा 'स्वदत्ताद्द्विगुणं' हैं] । ई माडिद धमवु आचन्द्रार्क्क-स्थायियागि नडेयलि येन्दु वरसिद धर्म्म-शासनक्के मङ्गल-महा श्री श्री ।

[श्री-मूलसङ्घ, देशीगण, पुस्तकगच्छ, कुण्डकुन्दान्वय, और इङ्गलेश्वर शाखाके एक पण्डित-देव थे । इनका नाम **चारुकीर्त्ति**-पण्डित-देव था । इन्होंने **बल्लाल-रायके** प्राणोंकी रक्षा की थी । इसीलिए इनको लेखमें 'बल्लालराय-जीवरक्षपालक' कहा गया है । इनके प्रशिष्यके शिष्य श्रीमदभिनवचारुकीर्त्ति-पण्डित-देव हुए । इनके प्रिय शिष्य श्रीमच्छान्तिकीर्त्ति-देव ने, शक वर्ष १४६६ के बीत जानेपर जब क्रोधी संवत्सर विद्यमान था, तब कार्त्तिककी पूर्णिमाको एक शिलालेख इस तरह लिखवाया :—

उसके (शान्तिदेवके) गुरू श्रीमदभिनवचारुकीर्त्ति-पण्डितदेवने—जब कि, कलिकालमें धर्मतीर्थकी प्रवृत्तिके लिये स्वयं शान्तितीर्थेश्वर और अनन्तनाथ-स्वामी शक-वर्ष १४५३, जो कि विकृत संवत्सर था, के चैत्रमें सुवर्णवती नदीके किनारेसे आकर प्रगट हुये,—अञ्जनगिरिके शिखरपर स्थित शान्तिनाथ स्वामीकी वसदिके दर्शन कर, तथा खर संवत्सरके चैत्र महीनेमें पहाड़ीकी चोटीपर एक लकड़ीकी वसदि बनवाकर उसकी प्रतिष्ठा अपने छोटे भाई कोनसनगुड्ड शान्तोपाध्यायके हाथ से करायी और एक पत्थरकी वसदिके बनानेका निर्देश किया ।

तत्पश्चात्, अगले वर्ष क्रोधी संवत्सरमें, कार्त्तिकी पूर्णिमाको जब पाषाणकी नींव पड़ गयी तब 'हालदारे' (शायद मन्दिरके खर्चके लिये किया गया चावाद), का जो संग्रह हुआ वह लेखमें दिया हुआ है । 'होन्नु' और 'गद्याण' ये उस समयके सिक्के विशेष हैं ।

शुभकृतु संवत्सरमें, फाल्गुणकी पूर्णिमाको समस्त 'हलरु' का 'धर्म्म' (शायद ट्रस्ट) 'धर्म्म-शासन (ट्रस्टडीड) में लिखकर किया गया। १४६५ शक वर्ष, जो कि शोभकृतु वर्ष था, चैत्रशुक्ला त्रयोदशी, बुधवारको ३ शरीर रक्षक (देहारगळु) कुल-प्रतिष्ठाके लिये नियत किये गये थे ; इसके बाद एक दान-शालेके लिये जो चन्दा भरा गया था उसका वर्णन है।]

[EC, I, Coorg. ins., No. 10.]

६७४

गोवर्द्धनगिरि;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[विना काल-निर्देशका, पर लगभग १५६० ई० का (लू. राइस)]

[गोवर्द्धनगिरिमें, वेंकटरमण मन्दिरके सामनेके पीतलके खम्भेपर]

(पूर्व मुख) श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥

नमश् श्री-**नेमिनाथाय** जगदानन्द-दायिने ।
यद्-बुद्धि-कामिनी-मध्ये त्रिलोकी त्रिवलीयते ॥
लीलाघ्रातैकवल्ली-कुसुमवदभवत्कम्बुराराजमानाः
शैयाभूद् व्यालरूत्रा झटिति मुकुळिता तूणिवच्चाहशर्णम् ।
पञ्चेषोरिक्षु-चाप-प्रतिनिधिरभवद् भूतले यस्य शक्त्या
तं वन्दे मुक्ति-कान्ता-वश-गत-मनसं **नेमिनाथं** नितान्तम् ॥
यत्कान्त्या भुवन-त्रये चुलुकिते कृष्णन्ति सर्व्वे जनाः
सर्व्वं विष्णुमयं जगत् प्रवचनं तस्मादभूद्भूतले ।
सोऽस्मान् पातु जलोऽच्युतेश्वर-शिरोलङ्कार-पादाम्बुजो
दिव्य-ध्यान-पवित्रित-त्रि-भुवनः श्री-**नेमि-भट्टारकः** ॥
अमृत-श्री-कान्तमागिर्दखिल-सुख-समुच्छ्राय मागिर्द्दनाना-

समल-प्रध्वंषि (सि) यागिद्दँनिमिप-खग-संसेव्यमागिद्दँ देवो-
त्तमंनागीशोत्तमङ्गार्प्पित-निज-पदमागिद्दँ वाराशि-चन्द्रो- ।
पमंमागिर्द्दि-निजाकारमे रामेगे विळासास्पदं **नेमिनाथा** ॥
यत्कारुण्यमशेष-भव्य-जगतां भास्वत्-तनुत्रायते
यद्-दिव्य-क्रम-मञ्जु-कञ्ज-युगळं श्री-देव-रत्नायते ।
यद्-वाक्-पंक्तिरपार-जन्म-जलधेः सेतु-प्रबन्धायते
सोऽयं रक्षतु रक्षिताखिळ-जनः श्री-**गुम्मटाधीश्वरः** ॥
बगेयल् श्री-चोवण-श्रेष्ठिय-विशद-यशो-मूर्त्ति सुस्फाटिकोद्यन् ।
मृगराजोद्धासनं चन्द्रनवोलेसेये तल्लक्ष्म-लक्ष्मी-प्रभा-पुञ्-
जगळेम्बन्तात्म-देह-प्रभेगलेसेयलोप्पिर्द्दं नोल्द **चवण-श्रे-** ।
ष्ठिगे निच्चं माळ्के नित्योत्सवमननुपमं **नेमिचन्द्रं** जिनेन्द्रम् ॥
जम्बू-द्वीप-महाब्ज-दक्षिण-दले श्री **भारते** विद्यते
देशः पश्चिम-वार्धि-पूर्व्व-तटगः श्री-**तौळवा**ख्यो महान् ।
तस्मिन्नम्बु-नदी-सु-दक्षिण-तटे श्री-पुण्ड्रवद्भासते
श्रीमत्**क्षेमपुरं** पुरन्दर-पुर-प्रख्यं स्फुरद्-गोपुरम् ॥
वर-जिन-चैत्य-गेह-नृप-सद्म-नियोगि-[···] वास-वैश्य-मन्
दिर-निकुरम्बदिं विमल-धर्म्म-दयान्वित-दान-शौण्डरिम् ।
गुरु-यति-वृन्ददिं कवि-बुधोत्करदिं वर-भव्य-कोटियिम् ।
सुरुचिर-**गेरसोप्पे**यवोलाव-पुरं जगदोळ् प्रसिद्धमे ॥
श्रीमत्-क्षेमपुरेश्वरस्सकल-भू-भूपाल-चूड़ामणिः
श्रीमद्**देव-महीपति**र्व्विजयते सद्-राज-विद्या-पतिः ।
येनकारि कलौ महेन्दर-विषयं श्री-**गुम्मटाधीशितुर्**
ल्लोकात्यद्भुत-मस्तकाभिषवणं जन्माभिषेकोपमम् ॥
आ-महाराजनन्वयमेन्तेन्दोडे ॥
जलनिधि-रेखे पत्र-वळयं घन-वेले सु-केशराळि भू- ।
तळमे नवाम्बुजं निज-यशं विशरन्मकरन्द गन्धमु- ।

न्वल-जिन-धर्म्म-सूर्य्यनिनलाच्छिदुदं निज-हस्त-पञ्चदोळ् ।
वळेदु सु-लीलेदिन्दिरेवरा-पुरमं नृपराळ्दु पोगलुम् ॥

· ैन्तगम्य-पुण्य-निविगळुं कलि-मुख-हस्त मावनियङ्कार क्कारिनिर्णेत्राद्यनेका-न्वर्य-विरुदावळी-विराजमानरुं **सोम-वंश काश्यप-गोत्र**-पवित्रपमेनिसिद अनेक-भूपालकरा-पुरमनाळ्द् अळियम् ॥

यस्मिन् क्षेमपुरे नृपत्वमभवत् सद्-वंश-मुक्ता-मणिः
देवो-राशिरचिन्त्य-निर्म्मलतरज्ञानोज्जितास्तोदयः ।
तद्-वृत्त-प्रथित-स्फुरद्-गुरु-गुण-स्थानं जगद् भूषणम्
श्रीमद्-**भैरव-भूपति**र्जिन-मत-क्षीरोद-राकापतिः ॥
तदनुजवर-रत्नं **भैरवाख्य**स्ततोऽभूत्
तदवरज-शशाङ्कः श्रीमद्-**सम्य-क्षितीशः** ।
तदुभय-नरपाभ्यामुत्तरे **साल्व-मल्लः**
समभवदवनीशस्तत्कुलोत्थान् महीधान् ॥
बुध-जन-सुर-धेनुः सोम-वंशाब्ज-भानुः
कृत-जिन-रथ-यात्रः काश्यपोदार-गोत्रः ।
वर-कलि-मुख-हस्तः सद्गुण-व्रात-शस्तत्
त्रिगवत-मद-मल्लः शो(सो)ऽभवत् **साल्व-मल्लः** ॥
पश्चात् **साळुव-मल्ल-राय**-नृपतेः श्री-भागिनेयाग्रणीः
सत्तोपाय-विचार-चारु-चतुरः श्री-**देव-रायो**ऽभवत् ।
श्रीमत्**पण्डित-राय**-राज-गुरु-सत्-पादाब्ज-पुष्पन्धयः
समाश्रितत-वैभवाढ्य-नगरी-राल्यैरु-रत्नामणिः ॥
(दक्षिण मुख) तद्-भागिनेयोऽवनि **साल्व-मलस्**
तुल्यानुजोऽभूद् वर-**भैरवेन्द्रः** ।
यौ लोक-पुण्येन वरां विभाताम्
जिनेन्द्र-चन्द्राविव सत्ययेशौ ॥

वृ ॥ समराम्भोराशियोळ् सुत्तुव सुळिगळिवेम्बन्ते नीनेरिदश्वो- ।
त्तमदिन्दं वेडेयङ्गळ् पसरिसे रिपु-राजेन्द्ररेरिद्दं मत्ते- ।
भ-महा-वाजि-व्रजङ्गळ् पडगुगळन्तोलद्दल्के नुङ्गुत्तमिक्कुम् ।
क्रमदिं त्वत्पादयुग्मं मकर-युगदवोल् साल्व-मल्ल-क्षितीश ॥
श्रीमद्-भैरव-भूप-मेरुमनिशं ... सर्व्व-देवालयम्
सद्-गो-मण्डलमाश्रमत्यपि यं अस्पृष्ट्वा द्विजेशं करैः ।
तन्मन्ये तवक-प्रताप-सवितुः साम्यश्च सद्राम्वरो
नाहं नाथमिति प्रकम्पित-तनुः सत्यापथत्यंशुमान् ॥

अन्ततिप्रसिद्धराद युवराजरेनिसिद इर्व्वरळियन्दिरिं भक्ति-युक्तराद उळिद राज-कुमाररिं दण्डोपनतराद अन्य-मण्डलिकरिन्दोलगिसिकोळ्पट्ट देव-रायं तुळु-कोङ्कण-हैवे-मुन्ताद भूमण्डलमं भूमण्डलाखण्डल-नेनिसि आळुत्तमिरेम् ।

आ-पोळल्लोळ् श्री देव-म- ।
हीपाल-सुपालितोरु-तेजोमान्य- ।
व्यापित-राज-श्रेष्ठि र- ।
मा-परिवृढनिर्प्पनम्कण-श्रेष्ठि-वरम् ॥
आतन कान्ते शील-गुणवन्ते कला-गुणवन्ते जैन-मार्ग्ग-
आतत चित्ते धर्म्म-पर-वित्ते जन-स्तुत-वृत्ते सत्कुल-
ख्यात सुरूपे सन्मति-कलापे विनिर्ग्गत-कोपे एन्दुधा-
त्री-तळमोप्पे देवरसियं पोगुल्गुं गुण-रत्न राशियम् ॥

अवरिर्व्वरन्वयमन्तेन्दोडे ॥ श्रीमद्-राजाधिराजं बनवसि-पुर-वराधीश्वरं कोङ्कण-हैव राज्याधीशनप्प चन्द्राकरद कदम्ब-कुल-तिलक कामि-देव-महाराजन दण्डाधिनाथ कामेय-दणायकन सु-पुत्र रामण-हेग्गडेगं रामकगं पुट्टिद अष्ट-पुत्ररोळगे अतिप्रसिद्धनाद योजन-श्रेष्ठिगे तङ्गणनुं रामकनुमेम्ब इर्व्वरु कुल-वधुगळादरवरोळु तङ्गणङ्गे रामण-श्रेष्ठियुं रामकङ्गे कल्प-सेट्टियुमेम्ब तनुजरादर-वरोळ् कूडि ॥

कं ॥ प्रियतमेय दर्व्वदिन्दं । नयन-द्वयदिन्दे वक्त्रमोप्पुव-वेरदिम् ।
दयदङ्कदाने दन्त- । द्वयदिन्देसेवन्तेयोप्पिदं योवौणम् ॥

व ॥ अन्तेनिसिद योजण-श्रेष्ठी श्रीमदनन्तनाथन चैत्यालयमं चेमपुरदोळ् माडिसि अन्तमिल्लदिर्द्द कीर्त्ति-पुण्यक्के नेलेयागिदर्द्दु अन्त्य-कालदोळ् तन्न राज-श्रेष्ठि पदवियं तन्न पुत्ररिगोप्पिसि सुर-लोक-प्रातनादनिन्तु ॥

कं ॥ रामण-सेट्टिय तनुजन् ।
कामनिमं तम्मण.ङ्कनातन तनयम् ।
श्री-महित-नागपङ्कन् ।
भूमीश्वर-मान्यनादनेंदे वदान्यम् ॥

व ॥ आ-नाग-सेट्टिय कुल-क्रियदारेन्दोडे तातमनुं नागमनुमेन्दु पिन्ददादर नगरी-राज्यदोळ् प्रसिद्धमाद कुडुर-पुरदोळ् पुट्टिद सर्व्व-जनो मान्यदिन्देसेव तोळदळ-वळिय आ-तातम्मनं हट्टिगन-वळिय आ-नागण्प-श्रेष्ठिगं तोन्दियण्ण-सेट्टियेम्ब सुपुत्रनादन् ॥ मत्तं नागमनन्वयमेन्तेन्दोडे ॥

कं ॥ पिट्टु विरिगे तवमनेयेनि- ।
सिद नगरी-सीमेयाद मागोडोळ् पु- ।
ट्टिद दण्डुवळिय सोनगिन ।
मोदलेनिसिदनल्ते नरल-नायकनेम्बम् ॥

अन्तेनिसिद नरलण-नायक्कं तन्न जन्म-स्थानमाद मागोडोळु चैत्यालयमं कट्टिसि श्री-पार्श्व तीर्त्थेश्वररनल्लि प्रतिष्ठेयम् माडिसि चतुर्व्विध-दानक्के यथायोग्यमागि क्षेत्रादिकमम् कोट्टु पुण्यके भाजननादम् ॥ मत्तमातन मोम्मगळु मारक्कनं हैवे-राज्यक्के मुख्यवाद हरियट्टेय-सीमेगे बन्द अन्तरवळियल्लि हुट्टिद हट्टिगन-वळिय नेमण-सेट्टिगे कोडे अवर्गे पुट्टिद नागमनमा-नेमण-सेट्टि तन्न तोदरळिय नाग[illegible]-सेट्टिगे धारापूर्व्वकं कोडे ॥

वृ ॥ पति-चित्तानुगुण-प्रवर्त्तनदिनत्याश्चर्य्य-सौकर्य्य-सं- ।
युत-शीलोन्नतियिं जिनेन्द्र-पद-पूजायक-सद्-भक्तियिम् ।

सततोत्साह-सुदानदिं पर-हित-व्यापार-चातुर्य्यदिम् ।
क्षितियोळ् नागमनान्तळुत्तम-यशः-सौभाग्यमं भाग्यमम् ॥

कं ॥ आ-**नागप्प-श्रेष्ठिगम्** ।
आ-नागम्मङ्गे पुट्टिदर् स्सुतरिर्व्वर् ।
भू-नुतरुणेरम्बी- ।
दानोन्नत-**मल्लि-सेट्टि**येम्बी-पेसरिम् ॥

व ॥अन्ता-**नागप्प-श्रेष्ठि** पुत्र-कळत्र-मित्ररोळ् कूडि सुखदिनिर्द्दम् ॥ (पश्चिम मुख) मत्तमम्मण-श्रेष्टिय कुल-स्त्रीयरारेन्दोडे मल्ल मनुं देवरसियुमेम्बिर्व्वरोळ् देवरसिय अन्वयमेन्तेन्दोडे ॥ घरेयोल् नेगळ्ते-बडेद पिरि-**योजण-श्रेष्टीय** पुत्र **रामण-सेट्टि**य सापत्नं **रामकाम्बा**-गर्भाब्धि-चन्द्रनेनिसिद **कल्लप्प-श्रेष्ठि** दान-पूजादि-सत्-कृत्यदिं घरणियोळ् प्रसिद्धनादम् ॥

कं ॥ **कल्लप-सेट्टि**य तनुजम् ।
पुल्लशराकार-**योजण-श्रेष्ठि**-वरम् ।
सल्ललित-यशं जिन-पद- ।
पल्लव-कमनीय-भक्ति-लतिकान्वीगम् ॥

अन्ततिप्रसिद्धिनाद राज-श्रेष्टियाद योजण-श्रेष्टिगे तोगरसियोळ् पुट्टिद होलेयबळिगे श्रेष्टनाद देवी-सावन्तन वडहुट्टिद वङ्कन वळिलोळु चैत्यालयमं कट्टिसि धर्म्मं माडि प्रसिद्धनाद विदरु-नाडिगे मुख्यनाद माबु-गौडन तङ्गि वीरकनेम्ब कन्निके वधुवागे आ-योजन-श्रेष्टि सुखदिनिरुत्तं तन्न पितृ **कल्लप्प-श्रेष्ठिय** नियोगदिं **क्षेम-पुर**-दोळु चैत्यालयमं द्वि-तलमागि कट्टिसि केळगण नेलेयोळु श्री-नेमीश्वरन प्रतिमेयं मेगण नेलेयोळु श्री-**गुम्मटनाथन** प्रतिकृतियं प्रतिष्ठेयं माडिसिद आ- **योजन-श्रेष्ठिय** कीर्त्तिय मूर्त्तियन्ते पुण्यद पुञ्जदन्तिर्द्दी-चैत्यालयमेन्तेन्दोडे ।

वृ ॥ हरि-वंशारिष्टनेमि-स्थिर-निवसनदिन्दूर्ज्जयन्ताद्रियिं भा- ।
स्कर-रत्न-स्पर्श-कूपोन्नतियिननुदिनं रोहणाद्रीन्द्रमं भा- ।

सुर-सौधर्म्मागमपिं-रियतियिनमर-शैलेन्द्रमं सत्पताको -।
त्करदिं नाट्याङ्गमं पोल्तेसवुट्ट भुवन-स्वामि-नेमीश-त्रासम् ॥
..न्तेसेव चैत्यालयमं कट्टिसि सुखदिनिरुत्तमा-योवण-श्रेष्टि तनगं वीरक्कंगं पुट्टिद सुतरोळु ।

कं ॥ संगरसनिन्दे किरियळु ।
मंगल-गुणि कल्लपाङ्गनिन्दं पिरियळ- ।
नङ्गन वय-सिरियन्ते म- ।
नङ्गोळिर नतक्नेम्व कन्या-रत्नम् ॥ ,

व ॥ आ-कन्निकेयं वट्टकळद सेट्टिकाररोलु मुख्यनेनिसिद संघकोन्त्रं ··· होळे-योळु चैत्यालयमं कट्टिसि दान-पूजादिगळिन्दति-प्रसिद्धेयाद कब्बधिकारिय पेण्डाति माळधिकारितिगे पुट्टिद पारिसणधिकारिय वङ्के गुम्मट-देविगं पुट्टिद कब्बुण-सेट्टिगे विवाह-पूर्व्वकं कोडे ।

कं ॥ आ यिर्व्वरिगं पुट्टिद- ।
ळायत-नलवात्ति देवरसियेम्बळ् ताम् ।
कायज-रायन मोह-स- ।
हायद शक्तियवोलेसेव रूपोन्नतियिम् ॥
आकेयनुजाते मदन-प- ।
ताकेयवोल् वनद मनद कोनेयोल् निमिर्दा- ।
लोके सुते पुट्टिदळ् सी- ।
लोन्नते मल्लि-देवियेम्बी-पेसरिम् ॥

आ-(अ) नतकमिन्तोप्पुव पेण्-मक्कळिर्व्वरं पडेदु अवरिर्व्वरोळ् पिरिय-मगळु देव-रसियम् । तनगण्णनागल् वेडिद नागप्प-श्रेष्टिय मग अम्बुवण-श्रेष्टिगे विवाह-पूर्व्वं. कुडे ।

कं ॥ रतियुं रतिपतियुं श्री-
सतियुं श्रीपतियुमिर्प्प-तेरदिं भोग- ।

स्तितियननुभविसुत्तं जिन- ।
मतदोळति-प्रियरागि सुखदिन्दिर्द्दर् ॥

व ॥ अन्ता-दम्पतिगळिर्व्वरुं सुखदिनिरुतमोन्दानोन्दु-दिवसं वन्दना-भक्तियिं **नेमि-जिन**-चैत्यालयक्के बन्दु ।

वृ ॥ जन-नेत्र-भ्रमरावली-कुसुमितोद्यानं मुनीन्द्रौघ-चि- ।
त्त-नवीनाम्बुरुह-प्रभात-समयं विद्वज्जनस्तोत्र-दि- ।
व्य-नदी-पूर-हिमाचलं निज-महा-सौन्दर्य्यमेन्देम्ब सज्- ।
जनता-संस्तुति निन्नोळेनमदुंदै श्री-**नेमि**-तीर्त्थेश्वर ॥

एम्बिवु मोदलाद स्तुतियिं **नेमि**-स्वामियं स्तुतियिसि मुनि-वृन्दारकरं बन्दिसि बळियं अभिनव-**समन्तभद्र**-मुनियिं धर्म्मं केळ्दु मनदे गोण्डु आ-दम्पतिगळिर्व्वरुं तमगे पुण्यार्थवागि तमगे अजनाद **योजण-श्रेष्ठि** कट्टिसिद **नेमीश्वरन** चैत्यालयद मुन्दे मानस्तम्भमं माडिदयेवेन्दु गुरुगळिगे विन्नविसि तम्म गृहक्के पोगि तम्म वडवुट्टिदराद **कोटण-सेट्टि-मल्लि-सेट्टि**-मुन्ताद बान्धवानुमतदि तम्म वोडेयनेनिसिद देव-भूपालङ्गे ई-धम्मगार्य्यवनेचरिसि आ-महाराजननुमतदिं चतुस्संघदनुमतदिम् (उत्तर मुख) शुभ-दिन-दोळ् कांस्यमय-मानस्तम्भमं माडिसि दयेवेन्दु निश्चयिसिप्पंन्नेगम् ।

कं ॥ कमलिनियुं कुमुदिनीयुम् ।
क्रमदिं कासार-लक्ष्मिगुदयिपवोल् श्री- ।
सम-देवरसिगे पुट्टिद- ।
रममेने पद्मरसि देवरसियेन्दिर्व्वर् ॥

अन्तिर्व्वरु-सुतेयरं पडेदु अदे-शुभ-सकुनमादन्ते कांस्यमय-मानस्तम्भमं माडिसि आ-चैत्यालयद मुन्दे प्रतिष्ठेयं माडिसिदरु । आ-(मा) मानस्तम्भक्के

कं ॥ पोन्न-कळसमने माडिसि ।
सन्नुत-पद्मरसि-देवरसि इर्व्वर् ताम् ।

उन्नत-मानस्तम्भकेय् ।
उन्नतियागिप्प-तेरदे पद्विन्दित्तर् ॥

भा-मानस्तम्भमेन्तेन्दोडे ॥

वृ ॥ भरदिं जन्माब्धियं दाण्टिसुव वर-महा-धर्म्ममेन्देम्ब पोतक्
उरुकूप-स्तम्भमम्बाङ्कन विशद-यशः-पट्टिका-स्तम्भमेम्बन्त्- ।
इरे मानस्तम्भमा-कूटदोळेसेव चतुर्ज्जैन-बिम्बाङ्घ्रि-पूजा- ।
परिकीर्ण्णास्फार-पुष्पाञ्जलियोलेशेवुदी-व्योम-तारा-कदम्बम् ॥
श्रीमन्नेमीश्वरोद्यज्-जिन-गृह-पुरतः प्रस्फुरत्-कांस्य-मान-
स्तम्भं सद्धेमकुम्भं शुभमभिनव-सामन्तभद्रोपदेशात् ।
नागप्प-श्रेष्ठि-पुत्रः स्फुरदुरु-विभवादम्बवण-श्रेष्ठि-वर्य्यः
सद्-धर्म्म-च्छत्र-दण्डं प्रमुदित-मनसाकारयद् भूरि-शोभम् ॥

अन्तु मान-स्तम्भमं माडिसिदरु ॥

[जिन-शासनकी प्रशंसाके बाद, नेमिनाथ भगवान्को नमस्कार और उनकी प्रशंसा । गुम्मटाधीश्वरसे रक्षा की कामना । अम्बवण-श्रेष्ठीको नेमिचन्द्र जिनेन्द्र की ओरसे मङ्गल-कामना ।

जम्बू-द्वीपमें भारत देश, उसमें तौलव देश; उसमें अम्बुनदीके दक्षिण किनारे पर क्षेमपुर है । उसमें गेरसोप्पे नगरकी शोभाका वर्णन ।

क्षेमपुर का अधीश देव-महीपति था । इस महाराज के वंशावतार का वर्णनः—क्षेमपुर में पूर्व में कई राजा हुए । उनमें एक भैरव-भूपति था । यह जिन धर्म रूपी समुद्रके लिये चन्द्रमा था । उसके छोटे भाई भैरव, अम्ब-क्षितीश तथा साल्व-मल्ल थे । इनमेंसे साल्वमल्ल यद्यपि सबसे छोटा था, तथापि सबसे महान् था । उसको सोम-वंश तथा काश्यप-गोत्र का बताते हुए उसकी प्रशंसा की गयी है । उसके बाद, उसकी बहिनका पुत्र देवराय नगर और राज्य का वैसा ही बराबरीका रक्षक रहा । उसकी बहिनका पुत्र साल्व-मल्ल रहा, जिसका छोटा

भाई भैरवेन्द्र था। राजा साल्व-मल्लकी प्रशंसा। राजा भैरवकी मेरु-पर्वतसे उपमा देते हुए उसकी प्रशंसा।

जिस समय देवराय, इस तरह अनेकोंकी भक्तिके साथ तुळु, कोंकण, हैवे तथा दूसरे देशोंपर राज्य कर रहा था: —

उस नगरमें, राजा देवसे रक्षित, महाप्रसिद्ध, राजश्रेष्ठी अम्ब्वण-श्रेष्ठी रहता था। उसकी पत्नी (प्रशंसा सहित) देवरसि थी। उनकी वंश-परम्पराका वर्णन:— राजाधिराज, वनवसि-पुरका मुख्य अधीश, कोंकण और हैव राज्यका मुख्य अधीश, चन्द्राउर कदम्ब-कुल-तिलक कामिदेव-महाराज थे। उसके दण्डाधिनाथ कामेय-दण्णायकका पुत्र रामण-हेग्गडे और रामकके ८ पुत्र उत्पन्न हुए थे, जिनमें सबसे प्रसिद्ध **योजण-श्रेष्ठी** था, जिसको दो स्त्रियें तङ्गण और रामक्क थीं। पहिलीके रामण-श्रेष्ठी तथा दूसरीके कल्ल-सेट्टि हुआ। इन अपनी प्रिय दो भार्याओं सहित योजण समृद्ध हुआ। इस योजण-श्रेष्ठी क्षेमपुरमें अनन्तनाथ चैत्यालय बनवाकर तथा इसके अतिरिक्त और भी अगणित पुण्य प्राप्त करके अपना राज-श्रेष्ठिका पद अपने पुत्रोंको सौंपकर स्वर्गलोकको चला गया। दूसरी तरफ, रामण-सेट्टिका पुत्र तम्मन था, जिसका पुत्र नागप हुआ। उसके दो पत्नियाँ थीं, सातम और नागम। सातमसे हट्टिगमें तोटियण्ण-सेट्टि नामका पुत्र उत्पन्न हुआ। इसके बाद नागमका अवतार (उत्पत्ति) कैसे हुआ, यह बताया है। नागम और नागप्प-सेट्टिसे दो लड़के उत्पन्न हुए थे, अम्ब्वण-श्रेष्ठिके मल्लम और देवरसि नामकी दो पत्नियाँ थीं। इसके बाद देवरसिकी उत्पत्तिका वर्णन है।

जब ये दोनों अम्ब्वण-श्रेष्ठी और देवरसि पूर्ण शान्ति और सुखसे रह रहे थे, एक दिन वे नेमि-जिन चैत्यालयमें आये, और नेमि-तीर्थेश्वरकी (उद्धृत) स्तुतिको दुहराते हुए मुनिगणका सम्मान किया। इसके बाद, अभिनव-समन्तभद्र-मुनिसे धर्म सुनकर और इसे हृदयमें धारण कर गुरुको सूचित किया कि वे अपने पितामह योजन-श्रेष्ठिके द्वारा बनवाये गये नेमीश्वर-चैत्यालयके सामने मानस्तम्भ बनवायेंगे। इसके बाद घर जाकर, अपने भाई कोरण-सेट्टि और मल्लि-सेट्टि और

अन्य रिश्तेदारोंसे सम्मति लेकर इन्होंने इस पुण्य-कार्यको करनेका इरादा देव-भूपालसे प्रकट किया। और महाराजकी सम्मति, चतुर्विध संघकी सम्मतिपूर्वक, ऐसे शुभ दिन उन्होंने अपना इरादा पूरा किया तथा घण्टेकी धातु (Bell-metal) का स्तम्भ बनवा दिया। इसी अन्तरालमें, देवरसिके पद्मरसि और देवरसि नामकी युगल पुत्री उत्पन्न हुईं। उनकी ही ऊँचाई जितनी ऊँचाईका सुवर्ण-कलश चैत्यालयके सामने उस स्तम्भपर चढ़वाया।

इसके बाद मानस्तम्भका वर्णन है।]

[EC, VIII, Sagar tl., No. 55]

६७५

शत्रुञ्जय—प्राकृत।

[सं० १६२० = १५६३ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

६७६

सिरोही—संस्कृत।

[सं० १६३४ = १५७७ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[H. H. Wilson, Asiat. Res., XVI, P. 316, No XLIII, a]

६७७

हेग्गेरे;—कन्नड़।

[शक १५०० = १५७८ ई०]

[हेग्गेरेमें, बस्ति के एक पाषाणपर]

श्री शुभमस्तु स्वस्ति श्री जयाभ्युदय-शालिवाहन-शक-वरुषङ्गळु १५०० नेले प्रमाथि-संवत्सरद माघ-सुद्द १ लू श्रीमन्महामण्डलेश्वर श्रोपति-

राजगळ मग राजय्य-देव-महा-अरसुगळ कुमारर वल्लभराज-देव-महा-अरसुगळु तावु आळ्विद मगरनाड होयिसळ-राज्यक्के सलुव बूडिहाळ-सीमे योळगण बस्तिय जिन-देवरिगे कोट्ट भू-दानद हेग्गेरेय बस्तिय मान्यद जीर्णोद्धारद क्रमवेन्तेन्दरे गुत्तिय इरदर सूरय्यन मग चिन्नवरद गोयिन्द-सेट्टियु हेग्गेरेय बस्तिय देवर-मान्यव पालिसबेकेन्दु बिन्नह माडिकोळलागि आतन बिन्नहव पालिसलु तमगू अनेक-धर्माभिवृद्धियागबेकेन्दु हेग्गेरेय गौडनकेरेय केळगण (दानकी विगत) अक्षरदल्लू हदिनैदु-कोळग देवदायमान्यद गद्देयनू यी-आरभ्यवागि प्रतिवर्ष प्रति-फलदल्लू नीर-सरदियलि कोट्टु बहेऊ एन्दु श्रीपति-राजगळ वल्लभराज-देव-महा-अरसुगळू पालिस्त बस्तिय देवदाय भू-दान जीर्णोद्धारवह ... शासन (ये ही अन्तिम वाक्य) श्री हेग्गेरेय स्थळदलु काडारम्भद होल ख...४

[शुभमस्तु । स्वस्ति । (उक्तमितिको), महामण्डलेश्वर श्रीपति राजके पुत्र राजय्य-देव-महा-अरसुके पुत्र वल्लभराज-देव-यह अरसुने अपने द्वारा शासित मगर-नाड्में होय्सल राज्यके बूदिहाळ-सीमेमें बस्तिके जिन देवके लिये निम्न शासन, हेग्गेरे बस्तिके 'मान्य' की पुनः स्थापनाके लिये प्रदान किया; गुत्ति इरदरे-सूर्य्यके पुत्र चिन्नवर-गोविन्द-सेट्टिने इस बातका प्रार्थनापत्र देकर कि हेग्गेरे बस्तिके देवकी 'मान्य' चालू होनी चाहिये,—इस प्रार्थनापत्रको मान्य करनेके लिये, तथा अपनी समृद्धिके लिये, हम (उक्त) भूमियाँ जो कि कुल मिलाकर धान्यक्षेत्रके १५ कोळग (एक नाप-विशेष) होते हैं, फसलके समय जलका वार्षिक क्रम भी आजसे ही चालू करते हैं। वल्लभराज-देव-महा-अरसूके द्वारा प्रदत्त, बस्तिके देवदायका प्रस्थापक भूमिके दानका शासन ऐसा है। हेग्गेरे-स्थलमें (उक्त) शुष्क भूमिका दान भी हुआ।]

[EC, XII, Chik-Nayakan halli tl., No 22.]

६७८

शत्रुञ्जय—प्राकृत ।

[सं० १६४०=१५८३ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

६७९

तारंगा—संस्कृत और गुजराती ।

[सं० १६४२=१५८५ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

[J. Kriste, EI, II, no v, No 29 (P. 33-34),t. et. a.]

६८०

कारकल;—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[शक सं० १५०८ =१५८६ ई०]

श्री वीतरागाय नमः ॥

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥१॥

आचन्द्रार्कं स्थिरं भूयादायुःश्रीजयसम्पदां ।

भैरवेन्द्रमहीकान्तः श्रीजिनेन्द्रप्रसादतः ॥२॥

अविघ्नमस्तु ॥ भद्रमस्तु ॥

तीर्थोघः सुखमक्षयं च कुरुताच्छ्रीपार्श्वनाथो बलं;

कीर्तिं नेमि-जिनः सुवीर-जिनपश्चायुःश्रियं दोर्ब्बलिः ।

कल्याणान्यर-मल्लि-सुव्रत जिना [:] पोम्बुच्च पद्मावती;

त्वाचन्द्रार्क्कमभीष्टदास्तु सुचिरं श्री-भैरव-क्ष्मापतेः ॥३॥

श्रीमद्देशीगणे ख्याते पनसोगावलीश्वरः ।

योऽभूल्ललितकीर्त्याख्यस्तन्मुनीन्द्रोपदेशतः ॥४॥

श्रीमत्सोमकुलामृताम्बुधिविधुः श्रीजैनदत्तान्वयः
श्रीमद्भैरवराज तुङ्गभगिनि श्रीगुम्मटाम्बासुतः ।
श्रीमद्योगिसुरेन्द्रचक्रिमहिम श्रीभैरवेन्द्रप्रभुः
श्रीरत्नत्रयभद्रधामजिनपान्निर्माप्य संसिद्धिभाक् ॥५॥
श्रीमच्छालिशकाब्दके च गलिते नागाभ्रबाणेन्दुभि-
श्चाब्दे सद् व्यय नाम्नि चैत्र-सित-षष्ठ्यां सौम्यवारे वृषे ।
लग्ने सन्मृगशीर्ष-भे चिरतरां श्रीभैरवेन्द्रेण ते
श्रीरत्नत्रयभद्रधामजिनपा भान्तु प्रतिष्ठापिताः ॥६॥

जिनाय नमः ॥ स्वस्ति श्री [॥] शालिवाहन शक वर्ष १५०८ नेय व्यय संवत्सरद चैत्र शुद्ध षष्ठियु बुधवार मृगशीर्ष-नक्षत्रवु वृषभलग्नदल्लु कलियुगाभिनव-भरतेश्वरचक्रवर्त्ती गुत्ति-हम्मिव्वरगण्ड [प] त्ति-पोम्बुच्च-पुर-वराधीश्वर मरे-होक्करकाव मारान्तवैरि मन्नेय-राय-मस्तकशूल षड्दर्शन स्थापना चार्य्य सोमवंशशिखामणि काश्यपगोत्रपवित्रीकरणदक्ष पोम्बुच्च-पद्मावती-लब्धवरप्रसाद सम्यक्त्वाद्यनेकगुणगणालंकृत जिन-गन्धोदक-पवित्रीकृतोत्तमाङ्ग अरु-वत्तारु-मण्डलीकर-गण्ड होम्नमाम्बिका-प्रियकुमार-भैररस-वोडेयर-अळियरे-निप श्रीमज्जिनदत्तराय-वंश-सुधाम्बुधिपूर्णचन्द्र श्रीमद्वीर-नरसिंह-वङ्गनरेन्द्र श्रीगुम्मटाम्बा-कुलदीपक-प्रियसूनु अरिराय-गण्डरडावणि श्रीमदिम्मडि-भैररस-वोडेयरु तमगे अभ्युदय-निःश्रेयस-लक्ष्मी-सुख-सम्प्राप्ति-निमित्तवागि कारकळद पाण्ड्यनगरियल्लि श्री-गुम्मटेश्वरन संनिधानदल्लि कैलासगिरि-सन्निभ-चिक्कवेट्टदल्लु ॥

श्रीकान्ताकुलवेश्म किं वरयशः-कान्ताप्रमोदागारं
भूकान्तारतिसद्म सज्जयवधू-क्रीडास्पदं किं पुनः ।
स्यात्कारोज्ज्वल-सन्नयद्वयमयी श्रीभारतीरङ्गभूः
स्वः श्री-मुक्ति-रमा-स्वयम्वरगृहं श्रीजैनगेहं वृषे ॥७॥

इन्तप्प सकलजनानन्दमन्दिरवाद सर्व्वतोभद्र-चतुर्म्मुख-रत्नत्रयरूप-**त्रिभुवन-तिलक-जिनचैत्यालयवनु** रोद्द-गोव निकलङ्क-मल्ल बन्टरभाव परनारिसहोदर नहिदु-मारेगे-तप्पुव-रायर-गण्ड सुवर्णकलशस्थापनाचार्यरादकारण धर्म्म-साम्राज्य नायकरागि निजपुण्यानुबन्धि-पुण्यद प्रेरणेयिन्द तमगु तज्जिनभवन प्रेक्षकराद सकल-शीलगुणसम्पन्नराद चतुस्संघक्कू साक्षात्स्वर्म्मोक्षलक्ष्मीस्वयम्वरशालोपमन् आगि निर्म्मापिसि अनन्तसुखद सम्प्राप्तिनिमित्तागि। आ नाल्कु-दिक्किनल्लू **अर-मल्लि-मुनिसुव्रत-तीर्थंकर**-प्रतिमेगळनू स्थापिसि। आ पश्चिम-दिग्भागदल्लि **चतु-र्विंशति-तीर्थंकर**-प्रतिमेगळनू हदिनाल्कु बोक्कलु स्थानीकरु नडसुव अभिषेक-पूजे मुंतादवक्कु (।) मीले नडव अङ्गरङ्गवैभवादिकंगळिगू आ **भैररस-वोडेयरु** निज-सन्तोषदि [द] राज्यवनाळुवाग आ **त्रिभुवन-तिलक-जिनचैत्यालय-दल्लि** आ प्रतिष्ठा-समयद पुण्यकालदल्लि तमगे पुण्यार्थवागि मूड **मुक्कडपिन-होळे**। तेङ्क **येम्णेय-होळे**। पडुव **पोळ्ळकळियद-होळे**। बडग **वलिमेय-हो**... । ई नाल्कु-होळेगळनु मीरेयागुळ्ळ। निदि (धि) निक्षेप। अक्षिणि आगा-

२५. म्य। जल पाषाण। सिद्ध साध्यंगळेम्ब (।) अष्ट-भोगंगळिगोळगाद **तेळार**-ग्रामवनू। अदरोळगे अक्कि मूडे ७०० नू। **रंजाळ-नल्लूर** सिद्दायदल्लु ग २३८-

२६. नू धारापूर्व्वकवागि आचन्द्रार्कस्थायियप्पन्ते देवर्गे मा [ड्] ि- कोट्ट धर्म्मक्षेत्रद (द) विवर। आ क्षेत्रद चतुःसीमेयोळगल्ल हरवरि (री)-सुगतादवर-

२७. ल्लि सल्लुव गेणि-सिद्दाय वड्डिय-भट्ट हुरुळिय-अक्कि बोळक्के-कप्पिद-अक्कि होम्न-वड्डियक्कि सह सल्लुव अक्कि हाने ५०२ लेक्कद मूडे ७०० क्कं **नल्लु**-

२८. **रंजाळदल्लि** बोक्कलु-तार्क्क-णेयागि विट्ट सिद्दाय ग २३८ वरहक्कू सहवागि नडव धर्म्म। पडुवण-बागिलल्लि बोक्कलु २ क्के मूड-होत्ति-

२९. न देवपूजगे चरु हाने ६ मीलु-चरु हाने ३ अक्षते-अक्कि हाने १ तोये पायस तुप्प कलसुमीलोगर ताळिल मुंताद पंच-भक्ष्यक्के अक्कि हाने २

३०. कुडुते २ अन्तु अक्कि हाने १५ कुडुते २-र लोकदल्लि वर्ष। इक्के अक्कि मूडे ११० [।] उदयद पञ्चामृतदाभिषेकक्के ग ७ म २ पञ्चखजायक्के ग ७½ सिद्ध-

३१. चक्रद आराधनगे ग १२ प (फ) ल-वस्तुविगे ग १ म २ बैगिन हाल-धारेगे ग ½ म ४ गन्ध-धूपक्के ग ½ म ३ येम्ने हाड १२ क्के ग ८ म ४ अष्टाह्निक ३ क्के ग ३

३२. वर्षाभिषेक इक्के ग ६ अन्तु ग ४७ ॥ @ ॥ बडगण-बागिल वोक्कलु २ क्के मूरु होत्तिन देवपूजगे दिन इक्के चारुविगे अक्कि हाने (।) ६ मीलु [च] रुविगे

३३. अक्कि हाने ३ अक्षतगे अक्कि हाने १ तोये पायस तुप्प कलसुमी लोगर ताळिल मुन्ताद पञ्चभक्ष्यक्के अक्कि हाने २ कुडुते २ अन्तु अक्कि

३४. दिन इक्के हाने १५ कुडुते २ र लेक्कदल्लि वर्ष (।) इक्के मूडे ११० [।] उदयद बैगिन हालधारेगे ग १½ म ३ पञ्चखजायक्के ग ७½ प (फ) ल-वस्तु-

३५. विगे ग १ म २ गन्धधूपक्के म ८ येम्ने हाद १२ क्के ग ८ म ४ अष्टा-ह्निक ३ क्के ग ३ वर्षाभिषेकक्के ग ६ अन्तु ग २८ म ७ ॥ ई लेक्कदल्लि मूड-बागिल वोक्क-

३६. लु २ क्के अक्कि मूडे ११० ग २८ म ७ ॥ आ-तेङ्क-बागिल वोक्कलु २ क्के अक्की (क्कि) मूडे ११० ग [२] ८ म ७ ॥ अन्तु बागिलु ४ क्के वोक्कलु ८ क्के वर्ष (।) इक्के अक्कि मूडे ४४० ग १३३

३७. म १ ॥ @ ॥ पडुव-बागिल येड-बलद गुण्ड २ क्के वोक्कलु इक्के चरु-विगे अक्कि हाने ५ र लेक्कदल्लि मूडे २६ अक्षतगे अक्कि मूडे ४ उभयं मूडे ४० हाल-

३८. घारे ४ क्के ग ३½ म १ फलवस्तुविगें ग १ म २ गन्ध-धूपक्के म ३ येम्ने हाड ५ क्के ग ३½ अष्टाह्निक ३ क्के म ५½ वर्षाभिषेकक्के ग १ अन्तु ग १० म १½ [।] ई लेक्कदल्लि

३९. वडग (।) मूड तेङ्कण गुंदङ्गळिगू । आ पडुवण तीर्थंकर ब्रह्म पद्मावति गळिगू सह वोक्कलु ५ क्के अक्कि मूडे २०० ग ५० म ७½ =[1] उभयं वोक्कलु

४०. ६ क्के अक्कि मूडे २४० ग ६० म ६ [।] ब्रह्म-पद्मावतीय ऐचवगे अक्कि मूडे ४ = अन्त वोक्कलु १४ क्के अक्कि मूडे ६८४ ग १६४ ॥ @ ॥ दोळु-नागलर-कोम्बिनवर वन

४१. ६ क्के ग ३६ अडिपिन मूलितियर वन २ क्के अक्कि मूडे १६ व्रतिय-ल्लिरु तरस्तिगळ् तण्ड ४ क्के शीतनिवारणेय-हुच्छुड ८ क्कं कैय्यक्किय तुम्बुव सुदुव ह-

४२. च्छुड इक्कं सह हुच्छुड ६ क्के ग ५ म २ मण्डेय तोळवरे येण्णेय हाड २ क्के ग २ अडुगन्तु सीगेगे सह म ८ अन्तु ग ८ = अन्तु अक्कि मूडे ७०० ग २३८ [॥]

४३. हिरिय-अरमनेय नाल्कु-चड (वु) कद बोळगण वस्तिय चन्द्रनाथ स्वामिय अमृतपडिगे आरूरलण-ववक्कळदल्लि विळियर-

४४. सर गुत्तु चिम्मप्पनिन्द अक्कि मूडे २० वागिलरसर गुत्तु माण्डप्पं [डि] यिन्द अक्कि मूडे १० उभयं मूडे ३० नल्लूर

४५. त्रिविक्रमपाण्डिय-वाळिनल्लि ग ७½ बत्तिकोटिय-वाळिनल्लि ग ३ पं(जा)-ळदल्लि कन्तुववाळिनल्लि ग ७½ अन्तु ग १८। गोवर्धनगिरिय-वस्तिय

---

१. यह यहाँ और आगे भी जहाँ कहीं आये, विराम का चिह्न समझना चाहिये ।

४६. **पार्श्वनाथ(थ)स्वामिय** अमृतपडिगे **मल्लिलद**-कम्बुळदल्लि अक्किय मूडे ३० आ मीलण दड्डि-मरुगळल्लि मूडे ४ [**नल्लू**] **र** नं० [त्रि] वेट्टि-नारणनल्लि

४७. अ [क्कि] मूडे ६ अं [ड] मू [डे] ४० [**के**] **लवसेय** सेटि-वेट्टिन हित्तिल [फ] लदल्लि [ग] ८ म २१ [॥] [इ] दु पञ्च-संसार-कालोरग-दष्ट-गाढ़-मूर्च्छित-नाना-संसारि-जीव-प्रबोधनक-

४८. र-पञ्च-महा-कल्याण-[बी] जोपम [वाद] जिनमन्त्र-पूतात्मन । श्री वीतराग । येन्व पञ्चाक्षरियनु पञ्चविंशति-मल-विदूर-परम-सम्यग्दृष्टिगळाद-कारण आ **भैरर**-

४९. **स-वोडेयरे** स्व-हस्तदिं वो [प्प कोट्टु] ददक्के इन्द्रवज्रा-[वृत्त] दिन्द [चतुर्विंशत्य] - क्षर-लिखित-पञ्चाक्षररूप-सर्वतोभद्र-चित्र-प्रबन्धदिं [द] रचिसिद चि [त्] र-

५०. श्लोक ॥ श्री-वीत-वीरागत-वीग-वीतं
श्री-राग-वीतं गतराग रागम् ।
श्रीगं ततं रागतरांगरा [ङ्गं]
श्री वीतरागं तत-वी [र]-गं तम् ॥ @ ॥ ८ ॥

[मंगलाचरणके बाद इस लेखमें (श्लो० २ और ३) तीर्थंकरों, दोर्वलि (बाहुबलि) और पोम्बुच्चकी पद्मावती देवीके आशीर्वादका दाता **भैरव** या **भैरवेन्द्र**, जिनको **भैररस-वोडेय** तथा **इम्मडि-भैररस-वोडेय** कर्णाटक गद्यमें कहा गया है, के लिये आह्वान किया गया है। इस सरदारको हम एकदम **भैरव-द्वितीय** कह सकते हैं। इन्हींके मामाको इसी लेखमें (श्लो० ५) भैरव प्रथम कह सकते हैं, जिनका नाम **भैरवराज** दिया है। आगे लेखसे पता चलता है कि **ललितकीर्ति मुनीन्द्र**, जो पनसोगे शाखा (गच्छ) देशीगणके थे, उनके उपदेशसे भैरव द्वि० ने 'रत्नत्रय' (श्लो० ५ तथा ७ वें श्लोक के बादके कन्नड़गद्यमें) मन्दिर, जिससे स्पष्टतः **चतुर्मुख बस्तो** का मतलब है, बनवाया था। श्लोक ६ तथा इसके बादके कन्नड़ गद्यमें

मन्दिरकी नींव रखने और प्रतिष्ठाका दिन दिया है। वह दिन शालि-(या शालिवाहन-) शक वर्ष १५०८, व्यय-संवत्सर, चैत्र शुक्ला षष्ठी, बुधवार था, समय नक्षत्र मृगशीर्ष या मृगशिरा तथा लग्न वृष या वृषभ था। श्लोक ६ के बाद के तथा ७ के बादके कन्नड़ गद्यमें भैरव द्वि० की विरुदावलि दी हुई है तथा मन्दिरका नाम **त्रिभुवनतिलक-जिन-चैत्यालय** (७ वें श्लोक के बादके गद्यमें) दिया है, जिसको 'सर्वतोभद्र' और 'चतुर्मुख' कहा गया है। यह **कारकलमें पाण्ड्यनगरीमें** श्रीगुम्मटेश्वरके सन्निधानवर्ती **चिक्कबेट्ट** टीले-पर बनाया गया था। पाण्ड्यनगरी, वर्तमान हिरियङ्गडिकी तरह, एक दूसरी कारकलकी पार्श्ववर्ती उपनगरी थी जिसमें स्वयं चिक्कबेट्ट टीला, जिसपर चतुर्मुख बस्ती बनी हुई है, [illegible] गोम्मटेश्वरकी मूर्ति और इन दोनोंके बीचमें से जाने वाली वह सड़की गली है जिसमें कुछ जैन गृहस्थोंके गृह तथा मठ अवस्थित हैं। ख्यातनामा गुम्मटेश्वरकी मूर्तिकी प्रतिष्ठा करानेवाले पाण्ड्यराय या पाण्ड्यके नामसे यह नगरी प्रसिद्ध थी। आगे बताया गया है कि भैरव द्वि० ने मन्दिरके चारों ओर मुख्य दरवाजोंकी तरफ **अर, मल्लि** और **मुनि-सुव्रत** इन तीन तीर्थङ्करोंकी मूर्तियोंके विराजमान करवाया, तथा इन्हींके साथ बीचमें २४ चौबीसों तीर्थङ्करोंकी मूर्तियोंकी यक्ष-यक्षिणीके साथ स्थापना की।

आगे पंक्ति २२ से ४२ में **तेळार** ग्रामके दानका उल्लेख है, जिससे लगानके रूपमें ७०० 'मूडे' धान्य (चावल) की प्राप्ति थी। इसके अतिरिक्त **रंजाळ** और **तल्लूर** ग्रामोंके 'सिद्धाय' (अर्थात् चालू लगान) में से २२८ 'गद्याण' (या 'वरह', पं० २८) भी मिलते थे। इस आमदनीसे मन्दिरकी पूजाका प्रबन्ध होता। नित्य पूजन करनेवाले १४ स्थानिकों (पुजारियों) के कुटुम्ब इसी कामके लिये नियत थे। प्रत्येक दरवाजेकी वेदी पर कितना खर्च होता था, वह सिलसिलेवार इस शिलालेखमें दिया हुआ है। उससे पता चलता है कि [illegible]से अधिक खर्च पश्चिम दरवाजेकी वेदी पर होता था, क्योंकि वही मुख्य गिनी जाती थी। दूसरा इस दरवाजेकी प्रधानताका प्रमाण यह है कि उसी दरवाजेकी वेदी पर २४ तीर्थङ्कर विराजमान हैं। इस प्रधानताकी वजह ही

से उस पर ज्यादा खर्च होना भी स्वाभाविक था। माली और गायकोंके (गन्धर्वोंके) लिये भी खर्च इसी आमदनीसे बँधा हुआ था। मन्दिरमें बसनेवाले ब्रह्मचारी इत्यादिंको वर्ष भरमें ८ कम्बल शीतनिवारणके लिये मिलते थे और एक कम्बल दैनिक भात-भिक्षाके संग्रहके लिये। उन्हें आवश्यक चीजें, जैसे, तेल, साबुन- ईन्धन भी मन्दिरसे ही मिलता था। पंक्ति ४३–४७में दो और दानोंका उल्लेख है जो कि उसी भैरव द्वि० के ही किये गये मालूम देते हैं। (१) पहला दान 'हिरियअरमने' (अर्थात् बड़ा महल) के प्रांगणमें स्थित 'बस्ति' के **चन्द्रनाथ** के नित्य पूजनके लिये और (२) **गोवर्धनगिरि**के टीले पर स्थित ' 'बस्ति' के **पार्श्वनाथ** के पूजनके लिये। अन्तिम ८ वें श्लोकमें पञ्चाक्षरी 'श्रीवीतराग' पर चित्रबन्ध शब्दालंकार है। इस लेखके परिचयमें श्री एच. कृष्णशास्त्री, बी. ए. ने अन्तिम चार पक्तियाँ (८ वें श्लोकके बाद) मिटी हुई बताई हैं।

दाता और भैरव द्वितीय सोमकुल, काश्यपगोत्र तथा **जिनदत्त** और **जिनदत्तराय**के वंशका था। वह **गुम्मटाम्बा** और वीरनरसिंह-बंगनरेन्द्रका पुत्र था। गुम्मटाम्बा **भैरव प्रथम**की बहिन थी। भैरव प्र० **बोम्माम्बिका** का पुत्र था। भैरव द्वितीयके विरुद इसी लेखसे जानने चाहिये।]

[EI, VII, No. 10]

६८१

मद्रास;—कन्नड़।

काल–[शक सं० १५१३ (१५९१ ई०]

[साउथ कैनराके Sub-Court में]

खर संवत्सरमें, शक सम्वत् १५१३ (१५९१ ई०) में एक जैन-मन्दिरकी पूजाके प्रबन्धके लिए **किञ्जिग भूपाल** नामके युवराजके द्वारा कन्नड़के प्रान्तमें भूमिदान।

[ASSI, II, p. 14, No. 91, a.]

६८२-६८३

शत्रुञ्जय;—प्राकृत।

[सं० १६५० = १५९३ ई०]

(श्वेताम्बर लेख।)

६८४

अनहिलवाड-पाटन;—प्राकृत।

[सं० १६५१-१६५२ = १५९४-१५९५ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[G. Buhler, EI. I, No. XXXVII, (p. 319-324), t. et. a.]

६८५

शत्रुञ्जय;—प्राकृत।

[सं० १६५२ = १५९५ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

६८६

अनहिलवाड-पाटन;—संस्कृत

[सं० १६५२ = १५९५ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[J. Burgess and H. Consens, Art. of Northern Gujarat (ASI. XXXII) p. 44-45, tr.]

६८७

सिरोही;—संस्कृत।

[सं० १६४३ = १५८६ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[H. H. Wilson, Asiat. Res., XVI, p. 316, No. XLIII, a.]

६८८

कोप्प;— संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक १५२१=१५९९ ई०]

[कोप्प (कोप्प परगनामें) पश्चिमकी तरफ खाली पड़ी हुई जमीनमें एक पाषाणपर]

श्री-वीतरागाय नमः।

श्रीमत्परम-गंभीर-स्याद्वादामोघ-लाञ्छनम्।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम्॥

नमस्तुन्न इत्यादि॥

स्वस्ति श्री जयाभ्युदय-शालिवाहन-शक-वरुष १५२१ सन्द वर्तमान-विळम्बि-संवत्सरद चैत्र ब ७ चन्द्रवारदलु श्रीमतु करिदल-वळिय मयिल-नायकर मदवळिगे तळार-वळिय दुग्गमन मग पांड्य-नायक अवर तम्म देरेनायकर कोप्पदल्लि पलित-साधन चैत्यालयवनु कट्टिसि प्रतिष्ठेय माडिसि अमृतपडिगे बिट्ट स्वास्ति-विवर (यहाँ दानकी विस्तृत चर्चा है) भयिर-रस-वोडेयरु पारिश्वनाथ-देवरिगे आ-कोप्प-आयदलि धारेनेरद क्षेत्रभूमिय विवर (यहाँ विशेष चर्चा आती है) लिंगवन्तनादव अळुदिद्दरे श्रीपर्वतदलि लिङ्ग वनु ... ... पापके होह विभूति-रुद्राक्षिगे होरगु नामधारि

आगि आद्य ई-धर्मके अळुपिद्दे तिरुपति-श्रीरङ्ग-विष्णु-कञ्चिलि स्वामि-सेवे अळिद पापके होहरु इप्पर अळिक अळुपिद्दे एळनेनरककके इळिवरु इदु तप्पदु (शेषमें साक्षियोंके नाम हैं) पाण्ड्यन-चोडेरु कोप्पद-बस्तिगे धारेनेरदु मुदुकदानोळु गद्दे भूमि २ वके गडि ख १० उलिगददेन्दु नरसीपुरद महाजनङ्गळ कय्य क्रयक्के कोण्ड कागलु-गोडलु कले ख १८ कार १२ उन ख ३० ··· ४० मट्ट पार्श्वनाथ-देवर बोळ-मागस्तरादवरिंगे ··· ··· (इमेशाके अन्तिम श्लोक)

[(उक्त मितिको) करिदलके नविल-नायककी पत्नी टळार-कुगम्मके पुत्र पाण्ड्य-नायक और उसके छोटे भाई देरे-नायकने कोप्पमें वाधन-चैत्यालय बनवाकर और उसमें प्रतिमा विराजमान करके, पूजनके लिये निम्नलिखित सम्पत्ति दानमें दी। (जो जमीन दी उसकी यहाँ विस्तृत चर्चा है)।

और भविरस-वोडेदरने पार्श्वनाथ-देवके लिए कोप्पको लगानमेंसे निम्नलिखित जमीन दानमें दी। (यहाँ जमीनकी कीमत दी हुई है)।

लिंगवन्त और नामधारियोंके विरुद्ध भिन्न शाप। साक्षी।

पाण्ड्यप्प-वोडेरने मुदकदानिमें कोप्पकी बस्तिके लिये (उक्त) और भी दान दिया तथा नरसीपुरके ब्राह्मणोंसे खरीदकर कुछ और जमीन भी दानमें दी।]

[EC, VII, koppa tl. No 50]

६८६

वेणूर;—संस्कृत तथा कन्नड।

[शक सं० १५२५ = १६०४ ई०]

[गोमटेश-मूर्तिस्तम्भके ठीक दाहिनी तरफ]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शास[नं] जिनशासनम्॥ [१]

शकवर्षेष्वतीतेषु [पु वि]षयाब्धिशरेंदुषु ।
व [र्तमा]ने शोभकृति वत्सरे फाल्गुना [ख्यके ॥] [२॥]

मासेऽथ शुक्लपक्षेद्धदशम्यां गु [रुपु] ष्यके ।
सुलग्ने मिथुने देशी [गणांब] र दिनेशितुः [॥] [३॥]

बेळगुळाख्यपुरीपट्टची [र] वुधिनिशापतेः ।
चारुकीर्त्ति] मु [ने] र्दिव्यवाक्याद्**वेनूरपत्तने** ॥ [४॥]

श्री **रायकुवर**स्याथ जामाता त [त्सहो] दरी- ।
पाण्ड्यकाख्यमहादेव्याः [सु] पुत्रः **पांड्यभूपतेः** ॥ [५॥]

अ [नु] ज [**स्ति**] **मरा** [**जा**]ख्यश्चा**मुंडा**न्वय[भूप]कः ।
अस्था [प] यत्प्रति [ष्ठाप्य] **भुजबल्य**ाख्यकं जिनं ॥ ६ ॥

शुभमस्तु ॥

[इस लेखमें बताया गया है कि **चामुण्ड** (प्रसिद्ध चामुण्डराज जिन्होंने श्रवण-बेल्गोळामें गोम्मटेशकी मूर्त्ति स्थापित की है) के वंशमें होनेवाले **तिम्मराजने एनूर** (वर्त्तमान वेणूर) में भुजबली (बाहुबली) जिनकी प्रतिमाकी प्रतिष्ठा करके स्थापना की। यह तिम्मराज **पाण्ड्य** नरेशका छोटा भाई, **पाण्ड्यक्क** रानीका पुत्र, तथा रायकुवरका जामाता था। उसने इस मूर्त्तिकी स्थापना बेल्गुळ (वर्त्तमान श्रवण-बेल्गोला) के भट्टारक, जो देशीगणके थे, की आज्ञासे की थी। मूर्त्तिकी स्थापना दिवस शक वर्ष **शोभकृत्** १५२५ के व्यतीत हो जानेपर फाल्गुन शुक्ला १०, पुष्यनक्षत्र, मिथुन लग्न था।]

[EC, VII, No 14, F.]

६९०

वेणूर;— कन्नड़ ।

[शक सं० १५२६ = १६०४ ई०]

[गोम्मटेश-मूर्तिस्तम्भके ठीक बायीं तरफ]

१. श्री शक्व [र्ष] नं गणि [ते स]।सिरदि मि-
२. गुवय्दु लेक्कदु [ल] शतदिप्पता [र] नेय
३. शोभकृद्वत्सर फाल्गुनाख्यमासाग्रि-
४. [त] शुक्लपक्ष दशमी गुरुपुष्यद सु-
५. [ग्न] ल [ग्न] दोळ् देशिगणा [ग्र] गण्यगुरु-
६. पंडितदे [व] न दिव्यवाक्य [दिं] ॥ [१] राय-
७. कुमार [नो] प्पुवरळियं नवि पांड्य-
८. कदेवि [य पुत्रनग्र] सोमायतवं-
९. श [ख] य्नुवलाहसि पांड्यभू-
१०. पानुजनुद्धदानरावेयनुदा-
११. र [पुंजळि] के पट्टवनाळ्व नृपाग्रणि
१२. तिमनृपनुत्तं श्रीवुतनं प्रति [ष्ठि]-
१३. [सि] द [न]।ग्रिदिना [लि] द [नं दि] न गुं [म] टेशनं ॥ [२॥]

[पहले शिलालेखकी तरह, इस लेखमें भी बताया गया है कि मूर्तिकी थापना तिम्मने की थी । इस लेखमें पूर्व सम्बन्धोंके साथ-साथ तिम्मको सोम-वंशका बताया तथा पुंजळिकेका शासक बताया गया है । समय इस लेखमें १५२६ (शब्दोंमें) शक वर्ष है, जबकि पूर्व लेख १५२५ अर्थात वर्षका है । 'गुम्मटेश' बाहुबलीका ही नामान्तर है ।]

[EI, VII, No 14, F.]

६९१

मेलिगे;—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[शक १५३०=१६०८ ई०]

[मेलिगेमें, रङ्ग-मण्डपके दक्षिण-पश्चिमकी ओर आदिनाथ बस्तिमें एक पाषाणपर]

श्रीमदनन्तनाथाय नमः

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

श्रीमद्-गीर्व्वाण-चक्रेट्-फणिपति-मकुटोद्भासि-माणिक्यमाला- ।
रोचिः-प्रक्षाळित-श्री-चरण-सरसिज-द्वन्द्व-त्राभास्यमानः ।
मानस्तम्भाम्बुजाताकर-कलित-लसत्-खातिकाद्युद्घ-शोभोऽ
सौ स्वान्त् सन्तोषयन् श्री-समवसृति-पतिर्भा त्यनन्तो जिनेशः ॥

स्वस्ति श्री जयाभ्युदय-शालिवाहन-शक-वरुष १५३० नेय सौम्य-संवत्सरद माघ-शुद्ध १० आदिवारदलु ॥

वृ ॥ निद्राभूत-महीश-वारिज-ततेः कुर्व्वन् विकास-श्रियम्
सन्मार्गाम्बर-भासमान-विसरत्-तेजो-निधिस्सर्वदा ।
वैरि-क्ष्मापति-भूरि-कैरव-कुलं सङ्कोचयन् सन्ततम्
श्रीमद्-वेङ्कट-देव-राय-तरणिस्तीव्र समुज्जृम्भते ॥

इत्याद्यनेक-विरुदावळि-विराजमानराद श्रीमद्-राजाधिराज राज-परमेश्वर श्री-वीर-प्रताप श्रीमद्-वेङ्कटपति-देव-महारायरु पेनगोण्डे सिंहासनारूढ़रागि प्रति-पालिसुत्तिर्द्द समस्त-राज्यङ्गळोळत्यतिशयमनुळवन्य-देशदोळु ॥

अन्तेसेववन्य-देशदोळ् ।
अन्तातीत-प्रकार-शोभा-रुचियम् ।

तां वळेदारगमेम्व पु- ।
रं तोर्प्पुडु **भुवनगिरिय** मूडण-देसेयोळ् ॥

आत्रेोळसमाळ्वननेक-चातुरी-धुरन्धरनाद **वेङ्कटाद्रि-महीपाल** नातन गुण-
कथनमेन्तेने ॥

मत्तमा-भव्योत्तमन परम-गुरुविन प्रभावमेन्तेने ॥

श्रीमज्जैन-मताब्धिवर्द्धन-सुधासूतिर्म्महीपालक- ।
व्रात-स्तुत्य-पदाम्बुजात-युगलो भव्याब्ज-भानूपमः ।
दुर्व्वार-स्मर-गर्व्व-पर्व्वत-पविर्न्नाना-का(क)ला-कोविदो ।
विद्यानन्द-मुनीश्वरो विजयते वादीभ-पञ्चाननः ॥

तच्छिष्य-परम्परायात-बलात्कार-गणाग्रगण्य श्रीमद्-राय-राजगुरु वसुन्धराचार्य्यवर्य्य महा-वाद-वादीश्वर राय-वादि-पितामह सकल-विद्या ········· माद्यनेकान्वर्थ-विरुदावळि-विराजमान श्रीमद्-**देवेन्द्रकीर्त्ति-भट्टारक**-पदाम्भोज-दिवाकरायमान श्रीमद्**भिनव-विशालकीर्त्ति भट्टारक**-देव-पद-पयोज-मत्त-मधुकरायमान प्रवीण-**बोम्मण-श्रेष्ठिय** तनूजातनेन्तिर्द्दपनेने ॥

तस्यात्मजातो विख्यातस्सुकृती धार्म्मिकाग्रणीः ।
बोम्मणाख्यो वणिग्-मुख्योऽपालयत् तज्जिनालयम् ॥
नेमाम्बा नाम तत्पत्नी व्रत-शील-विभूषिता ।
तयोः पञ्च सुता जातास्स्मराकारा गुणोज्वळाः ॥

आ-कुमारकरय्वरेन्तिदरेने ।

श्रीमज्जिन-पादाम्भोज-युगल-भ्रमरोपमः ।
भाति श्री **बोम्मण**-श्रेष्ठी सत्य-शौच-गुणान्वितः ॥
यस्यानन्त-जिनेश्वरो निज-कुल-स्वामी त्रिलोकी-पतिर्
विद्यानन्द-मुनीश्वरो निज-गुरुर्व्वादीभ-कण्ठीरवः ।
···त्तं परमं जिनेन्द्र-गदितं येनोरु तत्त्वं महान् ·
सोऽयं भाति मही-तले **पदुमण-श्रेष्ठी** गुणानां निधिः ॥
श्रीमान् कुवलयाह्लादी कलानामाश्रयो महान् ।
सद्भिः परिवृतो भाति **चन्दन-श्रेष्ठि-चन्द्रमाः** ॥
सर्व्व-श्रेष्ठिषु रत्नत्वाद् दान-पूजादि-सद्-विधौ ।
राजते **माणिक-श्रेष्ठी** नाम्नान्वर्थेन पुण्य-भाक् ॥

श्री जिनोदित सद्धर्म्म-कार्यणामादिमत्त्वतः ।
आदण्णाख्यो वणिग् भाति नामान्वर्थं दधत् सुधीः ॥

इन्तेसेव सकल-गुण-समन्वितराद मेळिगेय **बोम्मण-सेट्टियर** मक्कळु **बोम्मण-सेट्टियरु** (औरोंके नाम दिये हैं) नाऊ तम्मोळेकस्तरागि नम्म अज बोम्मि-सेट्टियरु कट्टिसिद बस्तियनु सिलामयवागि कट्टिसि ॥

श्री-विश्वावसु-वत्सरे शुभतरे ज्येष्ठे च मासे सिते
पक्षे सद्-दशमी-तिथौ सु-रुचिरे शुक्रे च वारे वरे ।
ऋक्षे चोत्तर-नाम्नि केसरि-महा-लग्ने प्रतिष्ठापितः
पद्म-श्रेष्ठि-वरेण शास्त्र-विधिनानन्ताख्य-तीर्थेश्वरः ॥

आ-श्रीमदनन्तनाथ स्वामिय नित्य-नैमित्तिक-पूजेगे । अमृतपडि । नन्दादीपि । अङ्ग-रङ्ग-वैभव-मुन्ताद समस्त-विनियोग-धर्म्म नडवदक्के बिट्ट भू-दान शासनद क्रम वेन्तेन्दरे (यहाँ दानकी विस्तृत चर्चा तथा वे ही अन्तिम श्लोक आते हैं)।

..लिगे बोम्मण-सेट्टर मक्कळु बोम्मण-सेट्टरु पदुमण-सेट्टरु सि (शि) लामयवागि कट्टिसिद श्रीमदनन्तनाथ-स्वामि-चैत्यालयदल्लि नडव धर्म्मद विनियोगक्के कोट्ट सर्व्वमान्यद स्वास्तेगे वरद शिला-शासन मुत्तूर हेगडेर वोप्पित बोम्मण-मल्लण्ण वोप्प ।

[अनन्तनाथके लिये नमस्कार । जिन शासनकी प्रशंसा ।

अनन्त जिनेशकी स्तुति ।

(उक्त मितिको), वेङ्कट-देव रायको सूर्यकी उपमा । जिस समय वेङ्कटपति-देव-महाराय पेनुगोण्डेकी राजगद्दीपर बैठे थे, उनके सारे राज्यमें अवन्य-देश प्रसिद्ध था । उस देशमें, भुवनगिरिके पूर्वमें, आरग शहर था । उस नगरका शासक वेङ्कटाद्रि-महीपाल था । उसके गुणोंका वर्णन ।

वेङ्कटाद्रि-नायकय्यका आश्रित बोम्मण-हेगडे था । उसकी प्रशंसा । वह मुत्तूर शासक था । इसके एक स्थान मेळिगेमें, जो निड्डुवळ-नाड्के कोट्टूर-पाळ्में था, राज-श्रेष्ठी वर्द्धमान था । उसकी प्रशंसा । उसकी पत्नी नेमाम्बा थी । उसके पुत्र बोम्मण-श्रेष्ठीने एक जिनमन्दिर बनवाकर उसमें अनन्त जिनकी प्रतिष्ठा

की। उसके गुरू विशालकीर्त्ति भट्टारक थे। ये विद्यानन्द-मुनीश्वरके शिष्य, बलात्कारगणके प्रधान, राय-राजगुरु देवेन्द्रकीर्त्ति-भट्टारकके शिष्य थे। बोम्मण-श्रेष्ठीके पुत्र बोम्मणने मन्दिरकी रक्षा की थी। उसके पाँच पुत्र थे।]

[EC, VIII, Tirthahalli tl., No. 166]

६६२-६६६

शत्रुंजय—प्राकृत।

[सं० १६७५ से सं० १६८३ = १६१६ ई० से १६२६ ई० तकके]

श्वेताम्बर लेख।

७००

गिरनार—संस्कृत।

[सं० १६८३=१६२६ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[ASI, XVI, p. 360, No. 31, t. & tr.]

७०१

शत्रुंजय;—प्राकृत।

[सं० १ [६]८४=१६२७ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

७०२

शत्रुंजय;—संस्कृत।

[संवत् १६८६ तथा शाक सं० १५५१]

(बड़े आदीश्वर मन्दिरके उत्तर-पूर्वके छोटे आँगनमें, दिगम्बर जैन मन्दिरका यह शिलालेख है।)

पं० १. संवत् १६८६ वर्षे वैशाख सुदि ५ बुधे शाके १५५१ प्रवर्त्तमाने श्री मूलसङ्घे सरस्वतीगच्छे

२. बला [त्का] रगणे श्री कुंडकुंदाचार्य्यान्वये भट्टारक श्री सकलकीर्त्ति-देवास्तत्पट्टे भ० श्री भुवनकीर्त्तिदेवास्तत्पट्टे भ० श्री ज्ञानभूषणदेवा-

३. स्तत्पट्टे भ० श्री विजयकीर्त्तिदेवास्तत्पट्टे भ० श्री शुभचन्द्रदेवास्तत्पट्टे भ० श्री सुमतिकीर्त्तिदेवास्तत्पट्टे भ० श्री गुणकीर्त्तिदेवास्तत्पट्टे भ० श्री वादिभूषणदेवास्तत्पट्टे भ० श्री रामकीर्त्तिदेवास्तत्पट्टे भ० श्री पद्मनन्दिगुरूपदेशात् पातशाहाश्रीशाहा-

४. ज्याहां विजयराज्ये श्री गुर्ज्जरदेशे श्री अहमदावादवास्तव्य हुंबड-ज्ञातीयवृहच्छा-खीयवाग्वरदेशस्थांतर्गीयनगरनौतनभद्रप्रासादोद्धरणधार साह्रा सं० मोजा भा० सं० लक्ष्मु सु० संवस्ता भा० सं० लक्ष्मण भा० सं० ललतादे तयोः

५. सुत निजकुलकमलविकाशनैकसूर्यावतारः दानगुणेन नृपतिश्रेयांससमः श्री-जिनबिंबप्रति-

६. ष्ठातीर्थयात्रादिधर्म्मकर्म्मकरणोत्सुकचित्तसंघपति श्रीरत्नसी भा० सं० रूपादे द्वितीय भा० सं० मोहणदे तृतीय भा० सं० नं [थ] रंगदे द्वितीयसुत संघवी श्रीरामजी भा० सं० केशरदे तयोः सुत संघवी

७. डुंगरसी भार्या सं० डाडमदे द्वितीयसुत संघवी [रायव] जी भा० सं० गमतादे [एते सर्वे] महासिद्धक्षेत्र श्री श [त्रुंजयनाम्नि] गिरौ श्री जिनप्रासादे श्री शान्तिनाथबिंबं कारयित्वा नित्यं प्रणमंति । शुभं भवतु [।।]

[भावार्थ—यह अभिलेख अहमदाबाद निवासी हुँबड (हूमड़) जातिके किन्हीं सद्गृहस्थोंने, जिनके नाम इस अभिलेखमें दिये हुए हैं, खुदवाया है। इसमें उनके द्वारा इस शत्रुञ्जय पर्वतपर श्री शान्तिनाथकी प्रतिमाके स्थापनकी ख्याति है। यह बिंब प्रतिष्ठा संवत् १६८६, वैशाख सुदि ५, बुधवार, तथा शक सं० १५५१ के समय हुई थी। आम्नाय तथा भट्टारकोंकी परम्परा इस तरह चालु थी :—

मूलसंघ सरस्वतीगच्छ, बलात्कारगण, कुन्दकुन्द अन्वय, इसके बाद भट्टारकों की परम्पराका क्रम सकलकीर्त्ति, भुवनकीर्त्ति, ज्ञानभूषण, विजयकीर्त्ति, शुभचन्द्र, सुमतिकीर्त्ति, गुणकीर्त्ति, वादिभूषण, रामकीर्त्ति, और पद्मनन्दि। इस समय बादशाह श्री शाहाज्याहां (**शाहजहाँ**) का राज्य प्रवर्तमान था।]

[EI, II, p. 72.]

७०३

शत्रुञ्जय;—प्राकृत-खण्डित।

[सं० १६८६=१६२६ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

७०४

लखौर (Bihar Miridional);—संस्कृत।

[सं० १६८६=१६२६ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[H. T. Colebrook, Miscell, Essays, Vol. II (1837), p. 318–319, *t* et, tr; pl. VII, f.-s.]

७०५

मलेयूर;—कन्नड़-भग्न।

[विना काल-निर्देशका; लगभग १६३० ई० (लू० राइस).]

[उसी पर्वतपर, पार्श्वनाथ-बस्तिके प्राङ्गणमें पूर्वकी ओर एक पाषाणपर]

··· ··· जीर्णोद्धारवनु माडि ··· जिन-मुनिगर प्रतिबिं ··· अप्प तोरण-स्तम्भदलि राय-करणिक **देवरसरु** तम्म पितृगळु **चन्दप्पगू** मायि··· निलसि दीप-स्तम्भ ··· तोरण ··· वनु माडिसिद

[तोरणके स्तम्भोंको सुधरवाकर और उनपर जिन-मुनियोंके प्रतिबिम्बोंकी स्थापनाकर राय-करणिक देवरसने, अपने पिता चण्डप्प तथा ··· ··· के नामपर, एक वीर-स्तम्भ बनवाया ।]

[EC, IV, Chamrajnagar tl., No. 156]

७०६-७०८

सरोत्रा;—संस्कृत और गुजराती ।

[सं० १६८६ = १६३२ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

[J. Kristo, EI, II, No. V, Nos. 20-26 (p. 31-33), t. et. a.]

७०९

श्रवणबेलगोला;—कन्नड़ ।

[शक १५५६ = १६३४ ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

७१०

हुल्लेगेरे;—संस्कृत और कन्नड़ ।

[शक १५६० = १६३८ ई०]

[पार्श्वनाथ बस्तिके आँगनमें पाषाणपर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

नमस्तुङ्ग इत्यादि ॥
पांयादाया[स] खेद-क्षुभित-फणि-फणा-रत्न-निर्य्यत्न-निर्य्यच्- ।
छाया-माया-पतङ्ग-द्युति-मुदित-वियद्-वाहिनी-चक्रवाकम् ।
अभ्रान्त-भ्रान्त-चूड़ा-तुहिनकर-करानीक-नाळीक-नाळ- ।
च्छेदामोदानुधाव ··· रथ-खगं धूर्जटेस्ताण्डवं वः ॥

स्वस्ति श्री **जयाभ्युदय-शालिवाहन-शक वर्ष १५६० लेगे सलुव ईश्वर-संवत्सरद फाल्गुन शुद्ध ५ यु गुरुवारदल्लु** श्रीमद्वेलापुरी **चेन्न-वेङ्कटेश्वर**-क्रम-कमल-युगळ ··· स्थिर-राज-हंसराद वैष्णव-मतामृत-वार्धि-प्रवर्द्धमान-पूर्ण्ण सुधासूति-बिम्बायमानराद प्रजा-पालन-मन्त्र-पालन-आत्म-पालन-कुल-पालन-समञ्जसत्व-सप्तांग-राज्य-सम्पन्नराद कोट्टभाषेगे तप्पुव घोरेगळ गण्ड दुष्ट-निग्रह-शिष्ट-प्रतिपालकराद सामादि-चतुरुपाय-संयुतराद । पञ्चाङ्ग-सन्मन्त्र-गुण-समेतराद । रिपु-राय-शरभ-गण्ड-भेरुण्डराद वीर-क्षत्र-चूड़ामणि । शरणागत-वज्र-पञ्जरराद । सिन्धु-गोविन्द धवळांक-भीम मणिनागपुर-वराधीश्वर । वलितु सप्तांग-हरण । **तुरक-दळ-विभाड** इत्याद्यनेक-बिरुदावळी-विराजमानराद **कृष्णप्प-नायक-अय्य-नवरु** कलि-कालाष्टम-चक्रवर्ति वेङ्कटाद्रिनायक-अय्यनवरु **वेळूर**-राज्यवन्नु धर्म्मदिं प्रतिपालिसुतं यिरलु **हळेयबीड विजय-पार्श्वनाथ-स्वामिय** वसदिय कम्भगळिगे **हुच्चप्प-देवरु** लिंग-मुद्रेय हाकलागि आ-लिङ्ग-मुद्रेयनु **विजयप्पनु** तोडेयलागि । सज्जन-शुद्ध-शिवाचार-सम्पन्नराद । **देव-पृथ्वी-महामहत्तिनोळगाद** अतिथिगळु । सूर्य्यन तेज चन्द्रन शान्त समुद्रद गम्भीर । नन्दिकेश्वरन प्रतिज्ञे कल्पवृक्षद फल वलिय वीरते रामन सयिरणे लक्ष्मणन हित-कार हरिश्चन्द्रन सत्य कोट्ट-भाषेगे तप्पुवर मीसेय कोयिववरुं । नरनन्ते तीर्त्थ-सिंह ··· मठ-मने-देवालय-जीर्णोद्धारकरुं क्षमे-दयेवन्तरुं विष्णुविनुपाय, ब्रह्मन चातुर्य्यं हनुमन्तन शक्ति जाम्बवन युक्ति प्रह्लादन भक्ति नित्य-जप-शिव-पूजा-पञ्चाक्षरी-मन्त्रालंकृतराद देव-पृथ्वी-महा-महत्तु यी-स्थळद **हलेबीड बसवप्प-देवरु पुष्पुगिरिय** पट्टद-देवरु-मुन्ताद देशा-भागद महा-महत्तुगळिगे **वेळूर-राज्यद जैन-सेट्टि**-गळु भगवदर्हत्परमेश्वर पांद-पद्माराधकराद स्याद्वाद-मत-गगन-सूर्य्यराद आहा-

रादय-मैत्र्य-शास्त्र-दान-विनोदरुं । खण्ड-स्फुटित-जीर्ण-जिन-चैत्यालयोद्धारकरुं जिन-गन्धोदक-पवित्रीकृतोत्तमाङ्गराद सम्यक्त्वाद्यनेक-गुण-गणालंकृतराद हासनद देवप्प-सेट्टिय हु-कुमार-पद्मण्ण-सेट्टि-मुन्ताद-समस्तरु जिनहं माडिकोळ्ळागि ... नेहा-महत्तु एकस्थरागि वा सिकोण्डु कट्टुनाडिसिद विवर। विभूति-वीळ्य-वन्नु माडिसिकोण्डु श्री-विजय-पार्श्वनाथ-स्वामिगे पूजे-पुनस्कार-अङ्ग-रङ्ग-वैभव-दीपाराधने-अग्रयोदक-प्रभावना-मुख्यवाद जैनागमक्के सलुव धर्म्मंव पूर्व्व-मर्य्यादे-यल्लि आ-चन्द्रार्क्क-स्थायियागि माडिकोळ्ळि येन्दु बेळू वेङ्कटाद्रि-नायक-अय्यन-वरिगे सकल-साम्राज्यामुद्धयार्थ-निमित्तवागि आ-दोरेय दक्षिण-दोर्-दण्डराद प्रधान-वंशोद्धारकराद पद-वाक्य-प्रमाण-पारावार-पारङ्गतराद पर-पुरुषार्थ-परन-पण्डितराद। काळय्य-मंत्रि-प्रिदाम्र-कुमार मंत्रि-कुलाग्र-गण्यराद कृष्णप्पय्यनवरु श्री-धर्म्म-कार्य्य-वनु कयि-विडिदु गुरो-वृत्तिगे नडिसलागि आ-महा-महत्तु करति कोट्ट शील-शासन श्री-जैन-धर्म्मक्के आवनानोब्बनु विरुद्ध माडिदरे आतनु तम्म महा-महत्त पदव कुडिदवनल्ल शिवद्रोहि सङ्गम-द्रोहि विभूति-रुद्राक्षिगे तप्पिदवनु काशि-रामेश्वरादि ... लिङ्गक्के तप्पिदवरु श्री-महा-महत्तिन तप्पित ॥ वर्द्धताम् जिनशासनम्।

[यह लेख शक सं० १५६० के समयमें जैन और शैवोंके ऐक्यका तथा परधर्मसहिष्णुताका एक खासा नमूना है। इसमें मंगलाचरणमें पहले जैनदर्शन की प्रशंसा है, फिर शम्भू (महादेव) को नमस्कार किया है। इसमें बताया गया है कि (उक्त मितिको) जब कृष्णप्प-नामक-अय्यका पुत्र, कलिकालका अष्टम-चक्रवर्ती, वेङ्कटाद्रि-नामक-अय्य वेलूर-राज्यकी न्यायसे रक्षा कर रहा था, तब हुच्चप्प-देवने हलेयबीडुके विजय-पार्श्वनाथ-बसदिके खम्भोंपर लिङ्ग-मुद्रा लगायी और विजयप्पने उसको तोड़ दिया,—तब हलेबीडुके देवप्पा-महामहत्तु, पुष्प-गिरिके पट्टदेव, तथा देशभागके अन्य महा-महत्तुओंने मिलकर यह आज्ञा निकाली कि जैन लोग चन्द्र, सूर्यके स्थायी होनेतक अपनी सब धार्मिक विधि कर सकते हैं।]

[EC, V, Belur tl., No. 128.]

७११

शत्रुञ्जय;—प्राकृत।

[सं० १६८६=१६२९ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

७१२

श्रवणबेलगोला;—संस्कृत।

[शक १५६५=१६४३ ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

७१३

श्रवणबेलगोला;—मराठी।

[शक १५७०=१६४८ ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

७१४-७१५

शत्रुञ्जय;—प्राकृत।

[सं० १७१० = १६५३ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

७१६

सिरोही;—संस्कृत।

[सं० १७१८=१६६१ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[H. H. Wilson, Asiat. Res., XVI, पृष्ठ- p. 316, No. XLIII, a.]

७१७

सिरोही,—संस्कृत।

[सं० १७२१=१६६४ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[H. H. Wilson, Asiat. Res., XVI, p. 316, No. XLIII, a.]

७१८

श्रवणबेलगोला;—कन्नड़।

[वर्ष सौम्य = १६६६ ? . लू. राइस)]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

७१९

मदने;—कन्नड़।

[शक १५६६ = १६७४ ई०]

[मदने ग्राममें, ग्राम-प्रवेशके पासके एक पाषाणपर]

श्री शक-वर्ष १५६५ नेय परिधावि-संवत्सरद ज्येष्ठ शुद्ध १० यल्लि श्रीमद्-मैसूर देव-राज-ओडेयरु बेळुगोळद चारुकीर्त्ति-पण्डिताचार्य्यर दान-शालेय जैन-सन्यासिगळिगे नित्य-अन्न-दानक्के सर्व्वमान्य-वागि धारादत्त-वागि कोट्ट मदणि-ग्रामवु मंगल महा श्री श्री श्री ॥

[(उक्त मितिको) मैसूरके देवराज-ओडेयरने बेळुगोळके चारुकीर्त्ति-पण्डिताचार्यकी दानशालाके जैन-सन्यासियोंको आहार-दान देनेके लिये मदणि गाँव में दिया। महान् सौभाग्य।]

[EC, V, Channarayapatna tl., No. 273.]

७२०

मलेयूर;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[शक सं० १५९६ = १६७४ ई०]

[उसी पहाड़ीपर, बलि-कट्टुके उत्तर-पूर्वकी चट्टानपर]

शाके द्रव्य-पदार्त्थ-भूत-धरणी-संख्या-मिते वत्सरे
चानन्दे वर- पुष्य-मास-सित-पक्षे-पञ्चमी सत्तिथौ ॥
लक्ष्मीसेन-मुनीश्वरेण पर-दुर्व्वादीभ-सिंहेन वै
हेमाद्रौ वर-पार्श्वनाथ-जिनपे दीक्षा श्रिता सत्फला ॥

विजयप्पैय्य पाद वरसिदनु।

[लक्ष्मीसेन-मुनीश्वरने हेमाद्रिमें पार्श्वनाथ जिनालयके अन्दर दीक्षा ली। चरणचिह्न विजयप्पैय्यने स्थापित किये थे।]

[EC, IV, Chamrajnagar tl., No. 149.]

७२१

सिरोही;—संस्कृत।

[सं० १७३६ = १६७९ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[H. H. Wilson, Asiat. Res., XVI, p. 316, No. XLIII, a.]

७२२

श्रवणबेलगोला;—कन्नड़।

[शक १६०२ = १६८० ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

७२३

बेळ्ळूरु—संस्कृत और कन्नड़।

[बिना कालनिर्देशका, पर सम्भवतः लगभग १६८० ई० का]

[बेल्लूर (नेल्लीकेरी परगना) में विमल-तीर्थंकरकी बस्तिमें बरण्डाकी दीवालपर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

श्रीसमन्तभद्रमुनये नमः ॥ श्रीमत्तु-डिल्ली-कोल्लापुर-जिनकञ्चि-पेनुगुण्डे-सिंहासनाधीश्वराद लक्ष्मीसेन-भट्टारक प्रतिबोधदिन्द श्री-मैसूर देवराज-वोडेयरु धारा-दत्तवागि कोट्ट क्षेत्रदल्लि स्व-शिष्यराद हुलिकल्ल पदुमण-सेट्टर सुतराद दो...ण-सेट्टर पुत्रराद सक्करे-सेट्टर अभ्युदय-निश्श्रेयस-निमित्तवागि आ-चन्द्रार्क-वागि निर्म्मापिसिद विमल-नाथन चैत्यालयवु श्री

[जिनशासनकी प्रशंसा। समन्तभद्र-मुनिको नमस्कार। डि (दि) ल्ली, कोल्लापुर, जिनकञ्चि, और पेनुगोण्डेके सिंहासनाधीश लक्ष्मीसेन-भट्टारकके प्रतिबोधन (सम्मति) से मैसूरके देवराज-वोडेयरकी दी हुई जमीनपर हुलिकल पदुमण-सेट्टिके पुत्र दोड्डादण्ण-सेट्टिके पुत्र सक्करे सेट्टि—जो कि लक्ष्मीसेन भट्टारकके शिष्य थे—ने अपने अभ्युदयकी वृद्धिके निमित्त विमलनाथ चैत्यालय बनवाया था और यह कामना की थी कि यह चैत्यालय जबतक सूर्य-चन्द्र हैं तबतक इस पृथ्वीपर रहेगा।]

[EC, IV, Nagamangala, tl. No. 43]

७२४

हागलहल्लि—कन्नड़।

[शक सं० १६२१ = १६९९ ई०]

[हागलहल्लि (कूलगेरी परगना) में, ईश्वर मन्दिरके दक्षिण-पूर्वके तेल-मिल (चक्की) के पासके एक पाषाणपर]

.... श्री-मूलसंघद .... त्रिणक-गच्छद ध्यानधारण-मौनानुष्ठान-जप-समाधि-शील-गुण-सन्दरप्प नियम चन्द्र-सिद्धान्तद अमल-विद्वत्-कुमुद-चन्द्र पण्डित-देव आदिनाथ-पण्डित-देवर गुड्डं चाम-गौण्डं शक-वर्ष-काल साविरद आर-नूरैप्प(रिप्पतो)न्दनेय ईश्वर-संवत्सरद माघ-मासद सुद्ध-पक्षदलु त्रयोदसि-सोमवारद अन्दु श्री-तिप्पूरु तीर्थदहलिन-हादिलवागिल भूमिगारं तेळ्ळर-कुलद परैयङ्ग-गौण्डन मगं देव-गाउण्डमानन मगं कालि-गाउण्डन मगं चाम-गाउण्डनु कल्ल-गाणमं माडिसिदं मङ्गलमहा श्री ॥ तिप्पूर्-तीर्थ-दल्लि मानितद .. ..

[मूलसङ्घ, [तिं] त्रिणक-गच्छके आदिनाथ-पण्डित-देवके श्रावक शिष्य, तेली जातिके, तिप्पूर्-तीर्थके एक गाँव हादिलवागिलुके किसान चाम-गौडने एक पत्थरका तेल निकालनेका कोल्हू बनवाया।]

[EC, III, Malavalli tl., No. 48.]

७२५

सिक्का—प्राकृत

[सं० १७७३ और शक १६३८ = १७१६ ई०, श्वेताम्बर लेख।]

[D. P. Khakhar, Report on remains in kachh (ASWI, selections, No. CLII), p. 84, t.; p. 95 a. (ins. No. 23]

७३४-७३६

शत्रुञ्जय—प्राकृत ।

[सं० १८१० से १८१५ = १७५३ से १७५८ तक]

श्वेताम्बर लेख ।

७३७

गोडि—संस्कृत-ध्वस्त ।

[सं० १८२१ और शक १६८६ = १७६४ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

[D. P. Khakhar, Report on remains in Kachh (ASWI, selectoins, No. CLII), p. 88, t. p. 96 a (ins. No. 41).].

७३८

शत्रुञ्जय— प्राकृत ।

[सं० १८२२ = १७६५ ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

७३६

राजगिरि;—संस्कृत ।

[सं० १८२६ = १७७२ ई०]

[निम्न लेख रत्नागिरि के एक चरण पर है]

"ॐ सिद्धम् । संवत् १८२६के माघ महीनेके कृष्णपक्षकी छठी तिथिक हुगलीके रहनेवाले, ओसवाल और गडिल गोत्रके बुलाकीदासके पुत्र शा मानिक-

चन्द्रने राजगृहमें रत्नगिरि पर्वतके मन्दिरको बनवाते समय श्री पार्श्वनाथ जिनके कमल-सदृश चरणयुगलकी स्थापना की।"

नोट—मूल लेखका पता नहीं है। यह उपर्युक्त अनुवाद अंग्रेजी अनुवादपरसे दिया जा रहा है।

[A. M. Broadlay, JASB, XLI, p. 250, tr.]

७४०

शत्रुञ्जय—प्राकृत।

[सं० १८४३ और शक १७०८ = १७८६ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

७४१

मांडवी—संस्कृत।

[सं० १८४५, शक १७१० = १७८८ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[J. Burgess & H. Cousens, Revised lists ant. rem. Bombay (ASI, XVI), p. 106, No. 2-4, t.]

७४२

पटना—संस्कृत।

[सं० १८४८ = १७९१ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

[L. A. Waddell, Discovery of the exact site of Patliputra (Calcutta, 1892), p. 18, t. et. tr.]

७४३

राजगिरि;—संस्कृत ।

[सं० १८४८ = १७६१ ई०.]

निम्न लेख (अनूदित) विपुलाचलपर मुनिसुव्रतनाथके मन्दिरमें है :—

"संवत् १८४८ के कार्त्तिक महीनेके कृष्णपक्षकी सप्तमी तिथिको श्री अमृत धर्म वाचकने संघसहित विपुलाचलपर मुक्ति लाभ करनेवाले परम निर्वृत्त ऋषि (The supremely liberated sage) की प्रतिमाका निर्माण और संस्थापना की थी।"

नोट :—मूल लेखका पता नहीं है। यह उपर्युक्त अनुवाद अंग्रेजी अनुवाद परसे दिया जा रहा है।

[A. M. Broadley, JASB, XLI, p. 249, tr.]

७४४

मांडवी;—प्राकृत । आदिनाथके मन्दिरमें

[सं० १८५७ = १८०० ई०]

॥ संवत् १८५७ वर्षे वैशाखमासे कृष्णपक्षे दशमीतिथौ शनौ श्री मुत्त संवत् सरस्वतिगच्छे बलात्कारगणे कुंदकुंदा आचार्य्यलये भट्टारक श्री सकलकीर्त्ति तदनुक्रमेण रूप श्रीतीजयकीर्ति तत्पदे भ० श्री नेमाचंद देवा तत्पदे भ० श्री चंद्रकीर्ति देवास्तत्पदे भ० श्री रामकीर्ति देवा तत्पदे भटारक श्री यशकीर्ति पुरुप देशात् मम उशाची वलं पुएम्दयं (?) श्री मांडवी ग्रामे समस्त श्रीसंघ श्री मूलनायक श्री आदिनाथ नित्यं प्रणम्यंति ॥ श्री ॥ श्री शुभं भवतु ॥

[J. Burgess & H. Consens, Revised Lists ant. rem. Bombay (ASI, XVI), p. 106, No. 1. t.]

७४५-७४६

शत्रुंजय—प्राकृत ।

[सं० १८६० और शक १७२६ से सं० १८६१ और शक १७२६ तक
= ई० १८०३ से १८०४ तक]

श्वेताम्बर लेख ।

७५०

श्रवणबेलगोला;—कन्नड़ ।

[शक १७३१=१८०९ ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

७५१

शत्रुञ्जय;—गुजराती ।

[सं० १८६७=१८१० ई०]

श्वेताम्बर लेख ।

७५२

श्रवणबेलगोला;—कन्नड़ ।

[बिना कालनिर्देशका, पर लगभग १८१० ई० (लू. राइस)]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

७५३

मलेयूर—संस्कृत ।

[शक सं० १७३२ = १८१३ ई०]

[मलेयूर (उप्पमवल्लि परगना) में, पहाड़ी पर स्थित गुण्डीन
ब्रह्म-देवरके मार्गमें]

(पहला)

श्रीमद्-देवर-देव-वन्दित-जिनाङ्घ्रि-द्वन्द्व-सन्धारित-
प्रेमं वेट्ट समस्त-भव्य-जन-रिन्दं शोभितं सद्गुणो-
द्दामं **पुस्तक-गच्छ-देशि-गण**दोल् विभ्राजितं सत्कला-
रामं **भट्टाकलङ्क-मुनिपं** त्रैलोक्य-संपूजितम् ॥

[पुस्तकगच्छ और देशी-गणके **भट्टाकलंक-मुनिप** की प्रशंसा]

(दूसरा)

[उसी पहाड़ी पर, पाषाणोंके ढेरके पास, उत्तरकी तरफ दूसरी चट्टान पर]

श्रीमच्छाके शराग्नि-व्यसन-हिमगु-संख्यामिते श्रीमुखाब्दे
पौषे मासे त्रयोदश्यवनिज-दिवसे धातृ-भे चाप-लग्ने
श्रीमद्देशी-गणाग्र्यः कनकगिरि-वरे सिद्ध-सिंहासनेशः प्रापद्
भट्टाकलङ्कस्सुमरणविधिनास्मिन् गिरौ नाकलोकम् ॥

[पहले नं० के लेख का ही विषय इसमें है। देशीगणके अग्र्य (प्रधान), कनकगिरिके प्राप्त-सिंहासनके ईश भट्टाकलंकने इस टीले पर सुमरणपूर्वक स्वर्गलोक को प्राप्त किया, अर्थात् शरीर छोड़ा।]

[EC, IV, Chamrajnagar tl., No. 146 & 150]

७५४

शत्रुंजय;—प्राकृत।

[सं० १८७५=१८१८ ई०]

श्वेताम्बर लेख।

७५५

मसार—संस्कृत ।

[सं० १८७६ = १८१९ ई०]

१. सं ८७६ वैशाख शुक्ले ६ मूले संघे श्रीकुन्दकुन्दाचार्य्यान्वये भट्टारक विश्वभूषणजी भट्टार

२. क श्री जिनेन्द्रभूषणजी भट्टारक महेन्द्रभूषणजी तदाम्नके अग्रोतकान्वये कानिलगोत्रे श्री

३. सह-जी दशनावर सिवस्य पुत्र श्री बाबू संकरलालजी तस्य पुत्र पुत्रश्चत्वारः बाबू श्री रतनचन्दजी

४. श्री बाबू कीर्त्तिचन्द, श्री बाबू गुपालचन्द, श्री बाबू प्यारीलाल अरामनगर वसिभिः मसाढ़नग

५. ... ... जिन मन्दिर बिम्ब प्रतिमाकर ...... अंग्रेजराज्ये वर्त्तमाने कारुपदेशे श्री

[इस लेख में सं० १८७६ की वैशाख शुक्ला ६ को, जब कि 'कारुप-देश' पर अंग्रेजी राज्य प्रवर्त्तमान था, (पार्श्वनाथ की) प्रतिमा मसाढ़ नगरके जैन मन्दिरमें अराम नगर (वर्त्तमान आरा=शाहाबाद) के बाबू शंकरलाल और उनके चार पुत्रोंके द्वारा समर्पित गयी थी। लेखमें आरा नगरके भट्टारकोंकी परम्परा भी वर्णित है। उस समय भट्टारक महेन्द्रभूषण जी विद्यमान थे।

[A. Cunningham Reports, III, P. 70, t. & a.]

७५६

पभोसा—संस्कृत ।

[सं० १८८१ = १८२४ ई०]

१. संवत् १८८१ मिते मार्गशीर्षशुक्लषष्ठ्यां शुक्रवास-

२. रे काष्ठासंघे माथुरगच्छे पुष्करगणे लोहाचार्याम्नाये

३. भट्टारक श्री जगत्कीर्त्तिस्तत्पट्टे भट्टारक श्री ललितकी-
४. र्त्तिजी तदाम्नाये अग्रोतकान्वये गोयलगोत्रे प्रयागन-
५. गरवास्तव्यसाधु श्रीरायजीमल्लस्तदनुजफेरुम-
६. ल्लस्तत्पुत्रसाधु श्री मेहरचन्दस्तद्भ्राता सुमेरचन्द-
७. स्तदनुजसाधु श्रीमाणिक्यचन्द स्तत्पुत्रसाधु श्री ही-
८. रालालेन कौशांबीनगरबाह्य प्रभासपर्वतोपरि श्री-
९. पद्मप्रभजिनदीक्षाह्वान कल्याणकक्षेत्रे श्री जिन-
१०. बिंबप्रतिष्ठा कारिता अंग्रेजबहादुरराज्ये सु [शु] भं [॥]

अनुवाद—शुक्रवार, मार्गशीर्ष शुक्ला षष्ठी, सं० १८८१ के दिन, काष्ठासंघ, माथुरगच्छ, पुष्करगण, लोहाचार्यके अन्वय (परम्परा) में भट्टारक श्री जगत्कीर्त्ति उनके पट्टपर भट्टारक श्री ललितकीर्तिजी इनकी आम्नायमें अग्रोतक अन्वय (जाति) तथा गोयल गोत्रके प्रयाग नगरके रहनेवाले साधु (साहु = सेठ) श्री रायजीमल्ल, उनके अनुज फेरुमल्ल, उनके पुत्र साधु श्री मेहरचंद, उनके भ्राता सुमेरचंद, उनके अनुज साधु श्री माणिकचंद, उनके पुत्र साधु श्री हीरालालने कौशाम्बी नगरके बाहर प्रभास पर्वतके ऊपर श्री पद्मप्रभ (तीर्थङ्कर) के दीक्षा कल्याणक क्षेत्रमें श्री जिन (पार्श्वनाथ) बिंब प्रतिष्ठा कराई। यह काल अंग्रेज लोगोंके शासन का था [१८२४ ई०]।

[EI, II, NoXIX, No3 (P. 244)]

७५७

श्रवणबेलगोला—कन्नड़।

[शक १७४८ = १८२७ ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

७५८

केलसूरु—संस्कृत ।

[काक हुस, (१८२८ ई० १ लू० राइस)]

[केलसूर (केलसूर परगना) में, वस्तिके अन्दरकी दीवालपर]

श्री **चन्द्रप्रभ**जिनेन्द्राय नमः ।

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

स्वस्ति श्री-शकवत्सरे **त्रि......षष्टि-त्रय-संख्ये** स्थिते
वर्षे **सम्प्रति सर्वधारिणि** सिते मासे तपस्ये तिथौ ।
सप्तम्यां गुरुवासरे मृगशिरो-भे योग आयु ··· ···
··· ··· **कर्णाटक**नामदेशविलसन्मध्यस्थिते ··· शुभे ॥

श्रीमान् यो **महिसूरु**नामनगरे सद्रत्नसिंहासना—
सीनः पार्थिव-**चामराज**-तनुभूरात्रेय-गोत्रोदितः ।
कुर्व्वन् सन्निह दुष्ट-निग्रहमतश्शिष्टानुरक्षां च सु-
प्रेक्षावान् पृथुपुण्यराशिरपि सत्पुण्योद्यमादि-क्षमः ॥

नानादेशनृपालमौलिविलसद्रत्नप्रभार्च्यक्रमां-
भोजो राज्यविचारणैकचतुरो भास्वान् वदान्याग्रणीः ।
तेजस्वी विबुधौघरक्षणचणस्सुज्ञानलीलानिधि-
र्नानाशास्त्रविचारणे विजयते श्री **कृष्णराजो** नृपः ॥

तत्पादाश्रित-**शान्त-पण्डित**-सुतश्**श्रीवत्सगोत्रो**द्भवो
··· द्राजयस ··· जः प्रविलसद्विज्ञापनाकर्णनात् ।
दिव्ये हृद्यवधार्य पुण्यपुरुपस्सद्धर्मकृत्यं महान्
सोऽसौ ··· **केलसूरु**-नामनि पुरे चैत्यालयादि-स्थिताम् ॥

श्री-चन्द्रप्रभ-तीत्थकृद्विजयदेवज्वालनीदेविका-
बिम्बानां ··· ··· पुनर्नवलसच्चित्रान्वितां शोभनाम् ।
प्राप्ताश्चर्यरसामकारयदपि श्रेष्ठां प्रतिष्ठां पुनः
··· ··· ··· शुभ ··· ··· नाट-गुरुणा वक्तुं यथैवन्मनः ॥
श्री मङ्गलं भवतु । वर्द्धतां जिन-शासनम् ।

[चन्द्रप्रभ-जिनेन्द्रको नमस्कार । जिन-शासनकी प्रशंसा ।

कर्नाटक देशके **महिसूर** नामक नगरमें राजा चामराजका पुत्र **राजा कृष्णराज** रत्नजटित सिंहासनपर बैठा,। वह दुष्टोंका निग्रह और शिष्टोंका पालन करता था। (उसकी प्रशंसा) उसने शान्त-पण्डितके पुत्र श्रीवत्स-गोत्रीय······जके प्रार्थना-पत्रसे **केलसूर**के चैत्यालयमें फिरसे तीर्थंकर चन्द्रप्रभ, विजय-देव तथा ज्वालिनी-देविकाके बिम्बों (प्रतिमाओं) को स्थापित करवाया। चैत्यालयको भी सुधरवाकर उसको फिरसे चित्रित किया था।]

[EC, IV, Gundlupet tl., No. 18]

७५९–७६३

शत्रुञ्जय—प्राकृत ।

[सं० १८८५ से १८८६ तक= १८२८ से १८२९ तक]

श्वेताम्बर लेख ।

७६४

नरसीपुर;—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[शक १७५१=१८२९ ई०]

[नरसीपुर (नेम्मनहळ्ळि परगना) में, शान्तय्यके खेतमें एक पाषाण पर]

श्री दे

शुभमस्तु ।

श्रीमत्परम-गंभीर-स्याद्वादामोघ-लाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ॥

स्वस्ति श्री विजयाभ्युदय-शालिवाहन-शक-वरुष १७७१ विरोधि सं० कार्तिक-शु ५ भानु ॥ श्रीमद्राजाधिराज महाराज श्री-कृष्ण-राज-वाडेयरय्य-नवरु मैसूर-नगरदल्लि रत्न-सिंहासनारूढरागि पृथ्वी-साम्राज्यं गेय्यन्तु । दळ-वायिकेरेगे बन्दु इद्दु तप्पिसिकोण्डु अडविगे होद आनेयन्नु अप्पणे-मेरेगे गुण्डिनिन्द होडेदु एळुविगे वपिस्त बगे हेग्गडदेवन कोटे अमलुदार शान्तय्यन मग देवचन्द्रैयगे इनामागि अप्पणे कोडिसिद्दु ताळेकु-पैकि सागरद होबळि वळित नरसिंहपुरद ग्रामदल्लि वेद्दलु कं गु १२-० वरहद भूमिगे चतु-र्दिक्कि शीला-प्रतिष्ठे माडिसि कोट्टद्दु ई-शिलेगे पश्चिम होल-दारिगे तुण्डु सद्दा १ यिदके शेरिद अड्डु सह कुळ मोगनु कं० गु० १०-६ ई शिलेगे पूर्व एरि-होल १ कके कुळ मोगनु कं गु १-४ उभयं इन्नेरडु-वरहद बेद्दलु भूमिगे ई-कार्तिक-ब १३ सोमवारदल्लु शिला-प्रतिष्ठे माडि नीत नीतन पुत्र-पौत्र-पारम्पर्यवागि निरुपाधिक-सर्वमान्यवागि अप्पणे कोडिसिद शासना ।

[जिन शासन की प्रशंसा ।

जिस समय मैसूरकी रत्नजटित गद्दीपर बैठकर राजाधिराज महाराज कृष्णराज वोडेयरय्य इस पृथ्वीपर राज्य कर रहे थे:—एक हाथी दळवायिकेरीमें आया और जङ्गलमें भाग गया। हाथीको मारकर राजाके पास लानेका हुक्म हुआ। हेग्गडदेवनकोटेके अमलदार शान्तय्यके पुत्र देवचन्द्रने यह काम सम्पन्न किया, तो उसे इनाम मिलनेका हुक्म हुआ; और इनाम में उसे उपर्युक्त ताल्लुकेके सागर होबलि (प्रदेश) के नरसिंहपुर गाँवमें १२ वरह-जितने मूल्यकी सूखी जमीन दी गयी। इस भूमिको चारों ओर पत्थरोंकी निशानीसे अङ्कित कर दिया गया था। यह भूमि उसके पुत्रों, पौत्रों और सन्तान-दरसन्तानके उपभोगके अर्थ बिना किसी बाधाके, सब करोंसे मुक्त रूपमें दी गयी थी।]

[EC, IV, Heggadadevan-Kote tl., No. 51]

७६५

शत्रुञ्जय—प्राकृत।

[सं० १८८७ = १८३० ई०]

श्वेताम्बर लेख।

७६६

श्रवणबेल्गोला;—संस्कृत।

[सं० १८८८ और शक १७५२ = १८३० ई०]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

७६७-७७७

शत्रुञ्जय—प्राकृत।

[सं० १८८८ से सं० १८९३ तक = ई० १८३१ से १८३६]

श्वेताम्बर लेख।

७७८

मलेयूर;—संस्कृत तथा कन्नड।

[शक सं० १७६० = १८३८ ई०]

[उसी पहाड़ीपर, चन्द्रप्रभ प्रतिमाके पश्चिमकी ओरकी चट्टानपर]

श्री श १७६० । स्वस्ति श्री वर्द्धमानाब्दः २५०१ विळम्बि-सं० वैशाख-शु २ गु । सा । देवचन्द्रनु पितृ-सन्तानमं बरसिदं मङ्गलमहा श्री श्री श्री

[वर्द्धमान सं २५०१, शक १७६०, विळम्बि वर्षमें देवचन्द्रने अपने पूर्व-पुरुषोंकी परम्परा लिखवायी।

[EC, IV, Chamarajnagar tl., No. 154.]

७७६–७९२

शत्रुञ्जय—प्राकृत ।

[सं० १८१७, शक १७६२ से सं० १९१६, शक १७८१ तक = ई० १८४० से ई० १८५९ तक] श्वेताम्बर लेख ।

७९३

कोथरा—संस्कृत ।

[सं० १९१८, शक १७८३ = १८६१ ई०] श्वेताम्बर लेख ।

[D. P. Khakhar, Report on remains in Kachh (ASWI, selectoins, No. CLII), p. 75-76, t.; p. 91 a (ins. No. 1).]

७९४–७९८

शत्रुञ्जय;—प्राकृत ।

[सं० १९२१ से १९३० तक=ई० १८६४ से १८७३ तक] श्वेताम्बर लेख ।

७९९

शालिग्राम;—संस्कृत और कन्नड़ ।

[शक १८०० = १८७८ ई०]

[शालिग्राममें, अनन्तनाथ-बस्तिके सामनेके स्तम्भपर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

स्वस्ति श्री विजयाभ्युदय-शालिवाहन-शकाब्दः १८०० नेय ईश्वर-संवत्सरद माघ-शु ५ लु स्वस्ति श्री पेनगोण्डे-सेनगण-संस्थानद श्रीलक्ष्मी-... भट्टारक-स्वामियवर शिष्यनाद यिद्‌गूरु पट्टण-शेट्टु वीरप्पनवर कुमार अण्णैयनवर कुमार हजूरु-मोतीखाने-वीरप्प तम्म तिम्मप्प सह शालिग्राम-

दल्लि यी-नूतनवाद चैत्यालय कट्टिसि श्री अनन्त-स्वामियन्नु स्वास्त्यक्षेत्र-सहित प्रतिष्ठे माडि यिरुवदक्के भद्रं शुभं मङ्गलं श्री ॥

[जिन शासन की प्रशंसा। सेनगणकी संस्थान पेनगोण्डेके लक्ष्मीसेन भट्टारक-स्वामी के शिष्य यिदगूरके पट्टण-शेट्टिके पुत्र अण्णैय्यके पुत्र **वीरप्प** और **तिम्मप्प** थे। तिम्मप्प छोटा भाई था। वीरप्प मोतीखानेके महलमें काम करता था। वीरप्पने शालिग्राममें इस नवीन चैत्यालय का निर्माण कराकर इसे **अनन्तस्वामी**को सौंप दिया।]

[EC, IV, Yedatore tl., No. 36]

८००–८०३

शत्रुञ्जय—प्राकृत।

[सं० १९३९ से १९४३ तक=ई० १८८२ से १८८६ तक]

श्वेताम्बर लेख।

८०४–८२०

श्रवणबेलगोला;—कन्नड।

[अनिश्चित कालके]

[जै० शि० सं०, प्र० भा०]

८२१

तिरुमलै;—तामिल।

[काल अनिश्चित]

१ स्वस्ति श्री [॥] कडैकोट्-
२ टूर् त्तिरुमलैप्परवादिम-
३ ल्लर् माणाक्कर अरिष्टने-
४ मि आचार्य्यर् शेय्-
५ वित यक्षित्तिरु-
६ मेनि ॥

अनुवाद—स्वस्ति ! श्री ! कडैक्कोट्टूरके अरिष्टनेमि-आचार्यने, जो तिरु-मलैके परवादिमल्लके शिष्य थे, एक यक्षी की प्रतिमा बनवाई ।

[South Indian ins., I, No. 73 (p. 104–105) t. & tr.]

८३२

कलुगुमलै;—तामिल ।

[अनिश्चित काल]

१ श्री [॥] [आ] णनूर् सिंगणं-
२ दिक्कुरवडिगळ् मा-
३ णाकर् नागणन्दि-क्कुरव-
४ [डि] गळ् शे [य्] वित्त ति [रु] मेणि [॥]

अनुवाद—(यह) प्रतिमा आणनूरके पूज्य गुरु सिंहनन्दिके शिष्य पूज्य गुरु नागनन्दिने बनवायी थी ।

[EI, IV, p. 136, No. 6.]

८३३

बस्तीपुर;—कन्नड़-भग्न ।

[काल निश्चित नहीं]

[बस्तीपुरके उत्तरमें एक पाषाणपर]

क ॥ अकलङ्क ··· ··· ··· ··· ··· ।
वाक्-चन्द्रकीर्त्तियं धवळिसे दिगम्बर ।
··· ··· ··· भव्य-प्रकार-चकोरं नलेय ।
··· ··· ··· य कुटिल-वाइकन्य पदाम्भोजम् ॥

[अकलङ्ककी प्रशंसामें]

[EC, III, Seringapatam tl,. No. 145.]

८३४

चिद्रवल्लि;—कन्नड़।

[विना काल-उल्लेखका]

[चिद्रवल्लि (सोसले परगना) में, गाँवके पश्चिम वलगै रावळके खेतकी एक चट्टानपर]

अय-महित-कोण्डकुन्दा- । न्वय-सम्भव-देशिकाख्य-गणदोल् गुणिगळु ।
प्रिय-धर्म्मर् ऎनेगळदरुपा- । त्त-यशर् ··· नन्दि-देवरी-वसुमतियोळ् ॥
आ-गुणिगळ शिष्यन्तियर् । आगमदिष्टदोळे नेगळ्दु तपदोळ् चलेका-
लागमनरिदात्तति सन्द- । ओगडिळदे नागि यब्बे-कान्तियरागळु ॥
तोरि ··· तप परि-ग्रहमं नेरे नोन्ताराधनातीत ··· मनदोळ् पडङ्गल-नरिदोप्पु-
तमध्दमसमान ग ··· ··· भक्तियिन्दमरल्य-श्रीकारियमनात्माम्बिकेगे प्रत्यक्ष-परोक्ष-
विनयमं मान्य-न्दरित ··· ··· ···

[देशिक-गण और कोण्डकुन्दान्वयके ··· नन्दि-देवकी शिष्या नागियब्बे-कन्ति अपनी श्रद्धा और पवित्रताके लिये विख्यात थी। गृहीत व्रतोंकी परिपूर्णता-पूर्वक स्वर्गवास हो जानेसे, मातृक प्रेमके कारण, ··· माँकी स्मृतिमें ···]

[EC, III, Tirum Kudlunarasipur, tl., No. 133]

८३५

वेरम्बाडि;—संस्कृत-भग्न।

[विना काल निर्देशका]

[वेरम्बाडिमें (कुवलूरु परगना) मारी मन्दिरके पास एक पाषाणपर]

ओं नमोऽर्हते भगवते चण्डोग्र-पारिश्वं (पार्श्व) नाथाय धर्म्मेन्द्र-पद्मावती-सहिताय सर्व्वव्याधिहरं अळवुमोगे ··· ··· ··· नाना ··· श्री-पञ्च-परमेष्ठी ··· ··· ···

[ॐ। भगवान् अर्हत् चण्डोग्र-पार्श्वनाथको नमस्कार हो। वे धरणेन्द्र-पद्मावती सहित हैं। वे सब व्याधियोंको दूर करनेवाले हैं ... ... पाँच परमेष्ठी ... ...]

[EC, IV, Gundlupet tl., No. 96]

८३६

जवगल्लु;—कन्नड़-भग्न।

[अनिश्चित कालका]

[जगवल्लु (जगवल्लु परगने) में, जैन-बस्तिके पासके पाषाणपर]

स्वस्ति श्री कोण्डकुन्दान्वय देशी गणद् अमरचर-भटारर शिष्यन्तिय अष्टो-पवासदर कियागुणचन्द्र-भटारर सधर्म्मगळु तोम्मचेळ वरिसा त ... बळ्दुन ब्रि ... ... निशिधिय कल्लनिरिसिद

[कोण्डकुन्दान्वय तथा देशी-गणके अमरचर-भट्टारकी शिष्या, जो (महीनेमें) आठ दिनका उपवास करती थी और गुणचन्द्र-भट्टारकी साधिन थी, ६७ वर्षतक जीयी। उसके बहनोई या सालेने यह स्मारक खड़ा किया।]

[EC, V, Arsikere tl., No. 3.]

८३७

कोलूरु;—संस्कृत तथा कन्नड़।

[वर्ष विरोधिकृत्]

[कोलूरमें, कुमरि-हक्कलुमें पाषाणपर]

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।

जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम्॥

स्वस्ति श्रीमतु आदिनाथ-देव-पादाराधक सम्यक्त्व-रत्नाकर जिन-गन्धोदक-पवित्रीकृतोत्तमाङ्गेयप्प राजियव्वे-हेग्गडिति ४५ नेय विरोधिकृतु-

संवत्सरद माघ-सुध(द्ध)-पञ्चमी-बृहवारदन्दु कोळूरोळ् सुर-लोक प्राप्ते-यादळ् ॥ सरस्वतिगण-पुत्र-सुमति-पण्डित-शिष्य रूवारि सोमोजन पुत्र दुगायन बेस

[इस लेखमें किसी भी सुरलोक प्राप्तिका दिन दिया है और कोई विशेषता नहीं है ।]

[EC, VIII, Sagar tl., No. 106]

८३८

हले-सोरब;—संस्कृत तथा कन्नड़ ।

[काल निश्चित नहीं]

[हले-सोरबमें, उसी स्थानपर एक दूसरे समाधि-पाषाणपर]

श्रीमत्परमगंभीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥ [१]

श्री हेमचन्द्र-देवर गुड्डनु दम गौडन निषिधि श्री-वीतरागाय श्रीमतु यी-कल माडिदनु सोरबद बयिरोजनु ॥

लेख स्पष्ट है ।

[EC, VIII, Sorab tl., No. 53.]

८३९

गिरनार;—संस्कृत-भग्न ।

श्वेताम्बर लेख ।

[ASI, XVI, P. 356, No. 15, t. & tr.]

८४०

गिरनार;—संस्कृत-भग्न ।

श्वेताम्बर लेख ।

[ASI, XVI, p. 356, No. 17, t. & tr.]

८४१

गिरनार;—संस्कृत।

[दक्षिणी प्रवेश-द्वारके पासके गिरिनारी मन्दिरके मण्डपमें भूमि-मञ्जिलके एक पाषाण-तलपर]

श्री शुभकीर्तिदेव साहुजानासुत साहु तेजकीर्ति देव।

अनुवाद:—श्री शुभकीर्तिदेव और साहु जानाके पुत्र साहु तेजकीर्तिदेव।

[ASI, XVI, p. 356-357, No. 18.]

८४२

भोलरी;—संस्कृत और गुजराती।

[काल अनिश्चित] श्वेताम्बर लेख।

[J. Kirste, EI, II, No. V, No. 3 (p. 25-26) t. & tr.]

८४३

रामनगर (अहिच्छत्र);—संस्कृत।

[काल अनिश्चित]

रामनगरके पुराने किलेसे उत्तरकी ओर कुछ १०० गज दूरीपर और नसरतगञ्जके पूर्वमें 'कतारि खेरा' नामकी एक बहुत छोटी पहाड़ी है। यह 'कतारि-खेरा' 'कोत्तरि खेरा'का अपभ्रंश (बिगड़ा हुआ रूप) मालूम पड़ता है। 'कोत्तरि खेरा'का अर्थ होता है 'मन्दिरका ढेर'। यहाँ जनरल कनिंघमने खम्भेका कङ्कडका चोखूँटा पाया और एक छोटे मन्दिरकी करीब-करीब लुप्तप्राय दीवालें खोज निकाली थीं। उसने पहिले इसे कोई बौद्ध-मन्दिर समझा, परन्तु पीछेसे वहाँ सिवा एक बुद्ध-मूर्तिके और कुछ न होनेसे, यह खयाल छोड़ दिया। लेकिन वहाँपर कुछ नग्न मूर्तियाँ निकलीं जोकि दिगम्बर जैन सम्प्रदायकी थीं। इससे उसने जैन मन्दिर समझा। पत्थरके एक परिवेषक (Railing) स्तम्भपर, जिसमें ऐसी मूर्तियोंकी ६ कतारें थीं, निम्नलिखित समर्थक लेख मिला:—

महाचार्य इन्द्रनन्दि शिष्य महादरि पार्श्वपतिस्य कोत्तरि।

"इन्द्रनन्दिके शिष्य महादरि, पार्श्वपतिके मन्दिरको ॥"

यहाँ 'पार्श्वपति'से मतलब २३वें तीर्थंकर पार्श्वनाथसे ही है। एक दूसरी नग्न प्रतिमाके पाषाणपर 'नवग्रह' ये शब्द खुदे हुए थे, एक विशाल स्तम्भके खण्डपर उसके चारों ओर शेरके आकार बने हुए थे, जो कि महावीर स्वामीका चिह्न है। जैनोंमें 'अहिच्छत्र' अब भी एक पवित्र स्थान माना जाता है। इन लेखोंके अक्षरोंसे जनरल कनिंघम अनुमान करते हैं कि यह मन्दिर गुप्तकालकी अवनतिसे पहले बना था।

[Art, Ins. N-W-P-O (ASI, II), p. 28, t. & tr.]

८४४

खजुराहो;—संस्कृत।

[काल अनिश्चित]

[२१ नं०के जिन-मन्दिरके द्वारके स्तम्भपर]

आचार्य स्त्री (श्री)-देवचन्द्रः (न्द्र) सिस्य (शिष्य) कुमुदचन्द्र (न्द्रः) ॥

[देवचन्द्रके शिष्य कुमुदचन्द्रका उल्लेख।]

[ASWI, Progress Reports 1903-1904, 48, t.]

८४५-८४६

जैसलमेर;—संस्कृत।

[सं० १४७३=१४१६ ई०] श्वेताम्बर लेख।

शि० ले० ८४७—संवत् १४९३ = १४३६ ई०

" " ८४८— " १४९७ = १४४० ई०

" " ८४९— " १५०५ = १४४८ ई०

" " ८५०— " १५३६ = १४७९ ई०

समाप्त

अनुक्रमणिका (१)

जैन-शिला लेख संग्रह भाग १-२ में संग्रहीत शिला लेखों के स्थानों की अकारादि क्रम से नाम सूची। नाम के पश्चात् लेख नम्बर समझना चाहिये।

अनुक्रमणिका २

[विशेष नाम सूची]

इस अनुक्रमणिका में जैन मुनि, आर्यिका, कवि, संघ, गण, गच्छ, ग्रन्थ तथा राजा, रानी, गृहस्थों और सब प्रकार के नाम समाविष्ट किये गये हैं। नाम के पश्चात् अंक, लेख नम्बर समझने चाहिये।

अ

आ

ख

ग

च

द

प

ब

य

र

ल